

चौखम्बा संस्कृत सीरीज १२९

श्रीव्यासमहर्षिप्रोत्तं

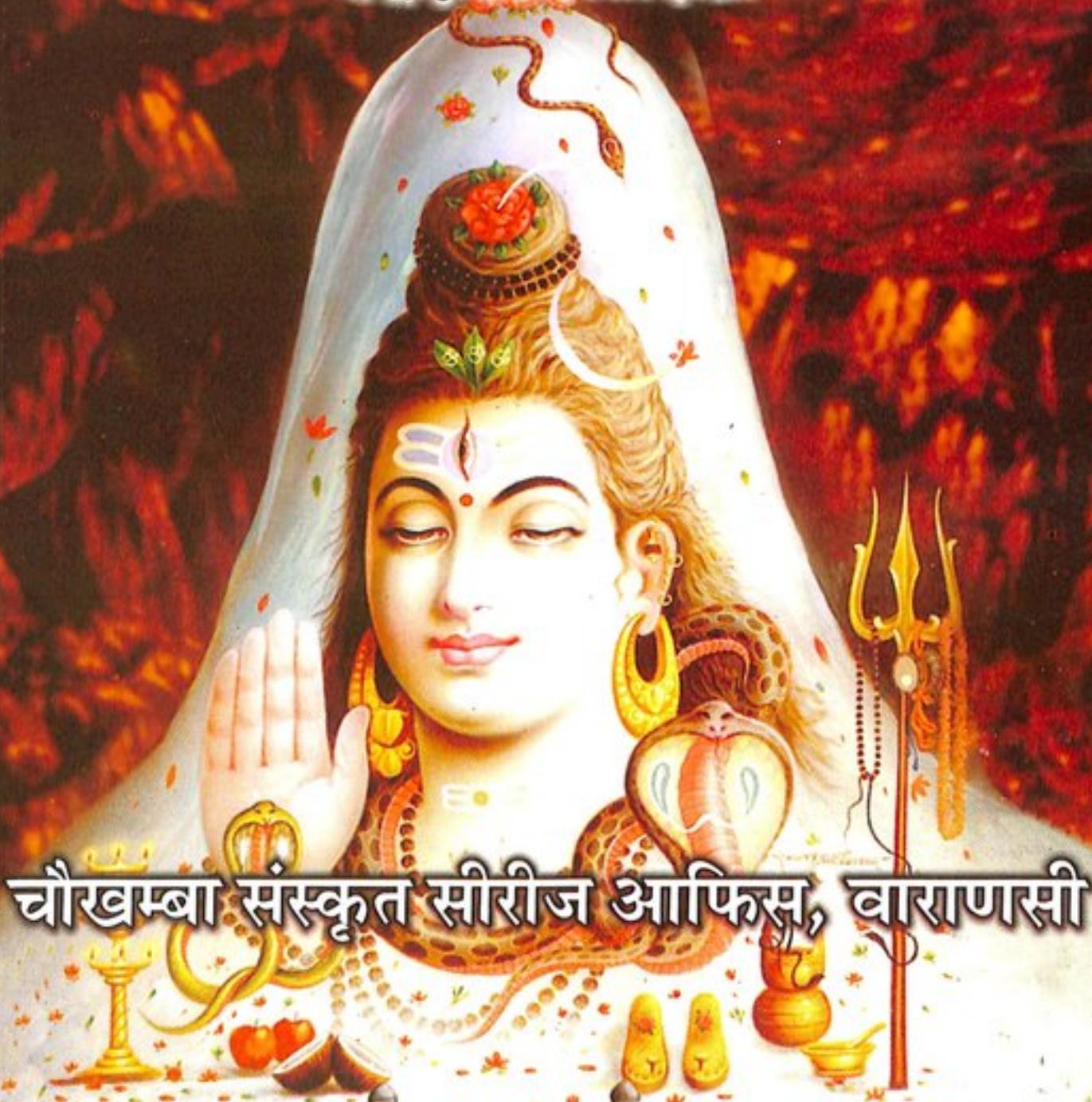
# लिङ्ग महापुराणम्

परिचय, विषय-सूची, संस्कृत मूल, हिन्दी अनुवाद, कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ, श्लोकानुक्रमणी एवं विषयानुक्रमणिका सहित

अनुवादक एवं सम्पादक

पुरस्कृत लेखक

पं. छावुकाप्रभाद मिश्र शास्त्री





## COLLECTION OF VARIOUS

- HINDUISM SCRIPTURES
- HINDU COMICS
- AYURVEDA
- MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

[creator of  
hinduism  
server]



## COLLECTION OF VARIOUS

- HINDUISM SCRIPTURES
- HINDU COMICS
- AYURVEDA
- MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

[creator of  
hinduism  
server]

1180/1609-09

मुद्रित दाता २१/८२६

चौखम्बा संस्कृत सीरीज

१२९

\*\*\*\*\*

— चौखम्बा —

ग्रन्थालय  
२-५-०९

श्रीब्यासमहर्षिप्रोत्तं

# लिङ्ग महापुराणम्

परिचय, विषय-सूची, संस्कृत मूल, हिन्दी अनुवाद, कुछ विशेष शब्दों के  
अर्थ और टिप्पणियाँ, श्लोकानुक्रमणी एवं विषयानुक्रमणिका सहित

अनुवादक एवं सम्पादक

पुरस्कृत लेखक

पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र शास्त्री

पूर्व संग्रहाध्यक्ष

हिन्दी संग्रहालय

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

पूर्व अनुवादक

पुराण विभाग

मानद पुस्तकालय अधिकारी

अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् पुस्तकालय, लखनऊ

**Forwarded Free of Cost with  
the compliments of Rashtriya  
Sanskrit Sanshodhan, New Delhi**



चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी  
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी  
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०६५, सन् २००८

ISBN : 978-81-7080-288-1

## © चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन  
गोलघर (मैदागिन) के पास  
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)  
फोन : { (आफिस) (०५४२) २३३३४५८  
          { (आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२  
Fax : ०५४२ - २३३३४५८  
e-mail : cssoffice@satyam.net.in

Digitized by srujanika@gmail.com  
Digitized by srujanika@gmail.com  
Digitized by srujanika@gmail.com

अपरं च प्राप्तिस्थानम्  
**चौखम्बा कृष्णदास अकादमी**  
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन  
गोलघर (मैदागिन) के पास  
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)  
फोन : (०५४२) २३३५०२०

५९०

□ एक सौ तीसरा अध्याय  
पार्वती के विवाह का वर्णन

बहुत धूमधाम से सम्पादित उमा महेश्वर के विवाह का विस्तार से वर्णन तथा विवाह करके शिव का काशी में निवास और उस स्थान के माहात्म्य का वर्णन।

५९७

□ एक सौ चौथा अध्याय  
देव की स्तुति

गणेश की उत्पत्ति, काम और देवों द्वारा कृत परम शक्तिदायक शिवस्तव राज का वर्णन।

६००

□ एक सौ पाँचवाँ अध्याय  
विनायक का जन्म

गजानन विघ्नेश का शिव के शरीर से उद्भव तथा शिव से विघ्नेश्वर गणेश को वर प्राप्ति।

६०३

□ एक सौ छठवाँ अध्याय  
शिव ताण्डव कथन

दारुक असुर के विनाश के लिये देवों द्वारा प्रार्थित शिव के शरीर से काशी के क्षेत्रपाल की उत्पत्ति तथा शिव के ताण्डव से अभिन्न नृत्य प्रसंग का वर्णन।

६०६

□ एक सौ सातवाँ अध्याय  
उपमन्यु चरित

दूध के लिये माता के कहने से हिमवान पर तप करने वाले द्विज कुमार उपमन्यु की परीक्षा के लिये शिव का इन्द्र रूप धर आना, इन्द्र के मुख से शिव की निन्दा सुनकर अर्थव अस्त्र से शिव निन्दक का वध करने के लिये उद्यत मुनि कुमार को शिव का दर्शन और उपमन्यु को शिव से वर प्राप्ति का कथन।

६१२

□ एक सौ आठवाँ अध्याय  
पाशुपत व्रत माहात्म्य

वसुदेव के पुत्र श्री कृष्ण का उपमन्यु से दीक्षा ग्रहण करना तथा पाशुपत ज्ञान आदि का वर्णन।

६१४-८३७

● लिंगमहापुराण ( उत्तर भाग )

६१५

□ पहिला अध्याय  
कौशिक वृत्त कथन

सांब प्रिय विष्णु के गान से पर प्रीति कथन तथा भगवत के गुरुगान में रत कौशिक के इतिहास का वर्णन।

६२२

□ दूसरा अध्याय  
विष्णु माहात्म्य

नारद द्वारा संगीत विद्या की प्राप्ति, नारद का तुम्बुरु के साथ भगवत्कृत समता का वर्णन, भगवत्गुण के माहात्म्य का वर्णन।

<b>□ तीसरा अध्याय</b>	६२३
<b>वैष्णव गीत कथन</b>	
श्रीकृष्ण की कृपा से बहुत प्रयास से गान बन्धु, सत्या और जाम्बवती आदि से बहुत काल में नारद को गान प्राप्ति का वर्णन।	
<b>□ चौथा अध्याय</b>	६३३
<b>विष्णु भक्त कथन</b>	
वैष्णव लक्षण, वैष्णव माहात्म्य, वैष्णवों से रुद्र भक्तों की श्रेष्ठता का वर्णन।	
<b>□ पाँचवाँ अध्याय</b>	६३५
<b>श्रीमती की कथा</b>	
परम अद्भुत अम्बरीष के चरित में विष्णु की माया के प्रदर्शन से रामावतार के ग्रहण के कारण का कथन।	
<b>□ छठवाँ अध्याय</b>	६४८
<b>अलक्ष्मी का कथानक</b>	
विष के बाद समुद्र से अलक्ष्मी की उत्पत्ति, अलक्ष्मी के वास योग्य स्थान का कथन तथा उसके आवास स्थान का कथन।	
<b>□ सातवाँ अध्याय</b>	६५६
<b>द्वादशाक्षर मन्त्र की प्रशंसा</b>	
विष्णु के अष्टाक्षर, द्वादशाक्षर मन्त्र के जप का माहात्म्य वर्णन के प्रसंग में ऐतरेय द्विज के इतिहास का कथन।	
<b>□ आठवाँ अध्याय</b>	६५९
<b>अष्टाक्षर मन्त्र</b>	
विष्णु मन्त्र की अपेक्षा शिव के मन्त्र की श्रेष्ठता का वर्णन तथा शिव मन्त्र के जप से धुंधमूक ब्राह्मण के पुत्र को गाणपत्य पद के लाभ का कथन।	
<b>□ नौवाँ अध्याय</b>	६६२
<b>पाशुपत संस्कार</b>	
शिव के पशुपतित्व का कथन, तथा पशुपाश मोक्ष का विवरण।	
<b>□ दसवाँ अध्याय</b>	६६७
<b>उमापति का माहात्म्य</b>	
शिव का प्रकृति, पुरुष अहंकार आदि से बंधन के अभाव का वर्णन तथा शिव की आज्ञा से ही सर्ग (सृष्टि) आदि सब कार्यों का प्रवर्तन।	
<b>□ ग्यारहवाँ अध्याय</b>	६७१
<b>शिव की विभूतियों का वर्णन</b>	
उमा महेश्वर की श्रेष्ठ विभूतियों का वर्णन। भक्तिवर्द्धक शिव लिंग की पूजा के माहात्म्य का वर्णन।	

<input type="checkbox"/> बारहवाँ अध्याय	६७५
शिव की आठ मूर्तियाँ	
शिव की अलग-अलग मूर्ति की संज्ञा (नाम) का वर्णन। उनकी स्त्रियों और पुरुषों का वर्णन।	
<input type="checkbox"/> तेरहवाँ अध्याय	६७९
शिव की अष्टमूर्ति की महिमा	
शिव की अलग-अलग मूर्ति की संज्ञा (नाम) का वर्णन।	
<input type="checkbox"/> चौदहवाँ अध्याय	६८२
पंच ब्रह्म कथन	
पंच ब्रह्मात्मक शिव के सर्वतत्त्वात्मक स्वरूप का वर्णन।	
<input type="checkbox"/> पंद्रहवाँ अध्याय	६८५
शिव का माहात्म्य	
ऋषियों द्वारा बहुधा कहे गये उन-उन संज्ञाओं का निरूपण।	
<input type="checkbox"/> सोलहवाँ अध्याय	६८८
शिव के रूप	
सर्व रूप शिव के बहुत मुनियों द्वारा अलग-अलग कहे गये नामों और रूपों का वर्णन।	
<input type="checkbox"/> सत्तरहवाँ अध्याय	६९१
शिव की महत्ता	
सत्त्व गुण रुद्र के विग्रह से विश्व के उद्धव का वर्णन, तथा रुद्र कृत देवों को उपदेश (शिक्षण)।	
<input type="checkbox"/> अद्वारहवाँ अध्याय	६९४
पवित्र पाशुपत व्रत	
ब्रह्मा आदि देवों द्वारा कृत महेश की स्तुति का वर्णन, देवताओं द्वारा महेश को प्रसन्न करने वाले पाशुपत व्रत के करने से शिव की कृपा के लाभ का वर्णन।	
<input type="checkbox"/> उत्तीर्णवाँ अध्याय	७००
शिव की पूजा विधि	
मुनियों द्वारा पूछे गये महेश द्वारा रचित रवि मण्डल में स्थित उमा सहित मण्डल देवता से आवृत शिव की पूजा विधि का वर्णन।	
<input type="checkbox"/> बीसवाँ अध्याय	७०५
शिव पूजा के साधन	
मण्डल में स्थित उमा महेश्वर पूजा में शिव द्वारा प्रोक्त अधिकारी का निरूपण, आग्रेय विधान से शिव दीक्षा का निरूपण।	

□ इक्कीसवाँ अध्याय दीक्षा विधि	तंत्रोक्त दीक्षा विधि का वर्णन, शुभ नियम कथनपूर्वक शिव की पूजा के फल का निरूपण।	७१०
□ बाईसवाँ अध्याय तत्त्वों का समर्पण	सौर स्नान विधि का निरूपण, वाष्कल आदि मुनि द्वारा निरूपित भास्कर की अर्चन विधि का निरूपण।	७१७
□ तेझीसवाँ अध्याय शिव की पूजा विधि	अंग मंत्र मूर्ति विद्या सहित मानस श्री शंकर की अर्चन विधि का निरूपण।	७२५
□ चौबीसवाँ अध्याय शिव की पूजा की विधि	तंत्रोक्त विधि से शंकर की अर्चना का निरूपण।	७२९
□ पच्चीसवाँ अध्याय शिव से सम्बन्धित पवित्र अग्निहोत्र	शिव प्रोक्त परम शोभन विविध अग्नि कार्य का विस्तार से प्रतिपादन।	७३६
□ छब्बीसवाँ अध्याय अघोर पूजा की विधि	शिव के लिंग में ध्यान आदि सहित अघोर के अर्चन के फल का निरूपण।	७४६
□ सत्ताईसवाँ अध्याय अभिषेक विधि	स्वयंभुव मनु के तप से सन्तुष्ट शिव द्वारा प्रतिपादित रूप सहस्र परिवार देवता युक्त श्री जयअभिषेक का विस्तार से प्रतिपादन।	७४९
□ अट्ठाईसवाँ अध्याय तुला पुरुषदान विधि	स्वयंभुव नामक मनु को सनत्कुमार प्रोक्त राजाओं का धर्म, अर्थ, काम और मोक्षदायक तुला पुरुष दान विधि का निरूपण।	७७०
□ उन्तीसवाँ अध्याय हिरण्यगर्भ की दान विधि	महादानों में दूसरा हिरण्यगर्भ नामक दान-जो कि शिव को प्रसन्नता दायक है— उसके दान का निरूपण और उसके फल का कथन।	७७९
□ तीसवाँ अध्याय तिल पर्वत का दान	महादानों में तीसरे तिल पर्वत दान विधि का निरूपण।	७८१

□ इकतीसवाँ अध्याय सूक्ष्म पर्वत की दान विधि स्वल्प द्रव्य से अन्य सूक्ष्म तिल पर्वत दान विधि का निरूपण।	७८३
□ बत्तीसवाँ अध्याय सुवर्णमेदिनी का दान महादानों के मध्य चौथा सुवर्णमेदिनी दान विधि का निरूपण।	७८४
□ तैतीसवाँ अध्याय कल्पपादप दान विधि महादानों में पाँचवाँ कल्पपादप की दान विधि का निरूपण।	७८५
□ चौतीसवाँ अध्याय गणेशोश दान विधि महादानों में छठवें पुण्यदायक गणेशोश की दान विधि का निरूपण।	७८६
□ पैंतीसवाँ अध्याय सुवर्णधेनु दान विधि महादानों में सातवें सुवर्ण धेनु दान की विधि का निरूपण।	७८७
□ छत्तीसवाँ अध्याय लक्ष्मीदान विधि महादानों में आठवें महान ऐश्वर्यदायक लक्ष्मी दान की विधि का निरूपण।	७८९
□ सैतीसवाँ अध्याय तिलधेनु दान विधि महादानों में नवें तिलधेनु की विधि का संक्षेप में निरूपण।	७९०
□ अड़तीसवाँ अध्याय सहस्र धेनु दान विधि महादानों में दसवें परम शोभन गो सहस्रदान की विधि का संक्षेप में निरूपण।	७९२
□ उन्तालीसवाँ अध्याय स्वर्ण अश्व दान विधि महादानों में ग्यारहवाँ विजय प्रदायक हिरण्य अश्व दान का निरूपण।	७९३
□ चालीसवाँ अध्याय कन्या दान विधि महादानों में अति उत्तम बारहवाँ कन्यादान की विधि का निरूपण।	७९४
□ इकतालीसवाँ अध्याय स्वर्ण वृषभ दान महादानों में तेरहवाँ हिरण्यवृषभदान विधि का निरूपण।	७९५

<input type="checkbox"/> बयालीसवाँ अध्याय <i>गजदान विधि</i> महादानों में चौदहवाँ गजदान विधि का निरूपण।	७९७
<input type="checkbox"/> तिरालीसवाँ अध्याय <i>आठ लोकपालों की दान विधि</i> महादानों में पन्द्रहवाँ आठ लोकपालों की दान विधि का निरूपण।	७९८
<input type="checkbox"/> चौआलीसवाँ अध्याय <i>विष्णु दान विधि</i> महादानों में सोलहवें ब्रह्मा, विष्णु महेश की मूर्ति की दान विधि का निरूपण।	८००
<input type="checkbox"/> पैंतालीसवाँ अध्याय <i>जीवत्थाद्व संस्कार की विधि</i> ब्रह्मा द्वारा मनु आदि के लिये प्रोक्त जीवत्थाद्व की शुभ विधि का निरूपण।	८०१
<input type="checkbox"/> छियालीसवाँ अध्याय <i>लिंग का स्थापन</i> शौनक आदि का रुद्र आदि देवता के स्थापन की विधि के विषय में प्रश्न तथा सूत जी द्वारा उसकी प्रशंसापूर्वक लिंग की श्रेष्ठता का वर्णन।	८०७
<input type="checkbox"/> सैतालीसवाँ अध्याय <i>लिंग का संस्थापन</i> लिंग संस्थापन विधि और उसके फल का संक्षिप्त वर्णन।	८०९
<input type="checkbox"/> अड़तालीसवाँ अध्याय <i>गायत्री के विभिन्न प्रकार</i> याग कुण्ड के विन्यासपूर्वक सब देवताओं की स्थापन विधि का निरूपण, शिव आदि देवताओं के गायत्री मन्त्रों का निरूपण तथा संक्षेप में प्रासाद अर्चन निरूपण।	८१४
<input type="checkbox"/> उन्चासवाँ अध्याय <i>अघोरेश की प्रतिष्ठा (स्थापना)</i> अघोर रूप शिव की प्रतिष्ठा जप और होम के विधान का निरूपण।	८१८
<input type="checkbox"/> पचासवाँ अध्याय <i>अघोर मन्त्र की विशेषता</i> शुक्राचार्य प्रणीत अघोरेश आराधन से निग्रह विधि का स्पष्ट प्रतिपादन।	८२०
<input type="checkbox"/> इक्यावनवाँ अध्याय <i>वज्रवाहनिका विद्या (वज्रेश्वरी विद्या)</i> ऋषि के प्रश्न के अनुरोध से शुक्राचार्य द्वारा प्रणीत इतिहास सहित वज्रवाहनिका नाम विद्या का निरूपण।	८२५

<b>□ बावनवाँ अध्याय</b>	८२७
<b>वज्रवाहनिका विद्या का विनियोग</b>	
गायत्री मन्त्र पूर्विका वज्रेश्वरी विद्या का विधान सहित विनियोग का निरूपण।	
<b>□ तिरपनवाँ अध्याय</b>	८२९
<b>मृत्युंजय अनुष्ठान विधि</b>	
रुद्राध्याय से घृत आदि द्रव्यों द्वारा होम से कालमृत्यु महामृत्यु के प्रतीकार का निरूपण तथा मृत्युंजय निरूपण।	
<b>□ चौवनवाँ अध्याय</b>	८३०
<b>त्रिअंबक मन्त्र से पूजा</b>	
पशुपाश मोक्षण तथा मृत्युहर त्रिअंबक महा मन्त्र की विधि का निरूपण।	
<b>□ पचपनवाँ अध्याय</b>	८३३
<b>शिव के ध्यान की विधि</b>	
योगमार्ग से त्रियंबक के ध्यान के प्रकार का निरूपण, लिंगपुराण सुनने के फल का निरूपण।	
<b>● कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ</b>	८३९
<b>● श्रीलिङ्गमहापुराण के श्लोकों की अनुक्रमणी</b>	८४५
(अनुक्रमणी की उपयोग की विधि)	
<b>● विषयानुक्रमणिका</b>	९३१
(श्रीलिङ्गमहापुराण में वर्णित विषयों की अनुक्रमणिका पृष्ठ संख्या निर्देश सहित)	

---

# श्रीलिङ्गमहापुराणम्

## ठबरुभागः

श्री गणेशाय नमः।



प्रथमोऽध्यायः

### कौशिकवृत्तकथनम्

ऋषय ऊचुः

कृष्णस्तुष्यति केनेह सर्वदेवेश्वरेश्वरः। वक्तुमर्हसि चास्माकं सूत सर्वार्थविद्वान्॥१॥

सूत उवाच

पुरा पृष्ठो महातेजा मार्कंडेयो महामुनिः। अंबरीषेण विप्रेंद्रास्तद्वदामि यथातथम्॥२॥

अंबरीष उवाच

मुने! समस्तधर्माणां पारगस्त्वं महामते। मार्कंडेय पुराणोऽसि पुराणार्थविशारदः॥३॥

पहिला अध्याय

### कौशिकवृत्त कथन

ऋषिगण बोले

सूत जी! देवताओं के देव श्रीकृष्ण कैसे सन्तुष्ट होते हैं? यह आप हम सब को बतावें क्योंकि आप सब विषयों के अर्थ के ज्ञाता हैं॥१॥

सूत बोले

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! अम्बरीष ने महान तेजस्वी महामुनि मार्कण्डेय से यही प्रश्न पूछा था। उसका जो उत्तर मार्कण्डेय जी ने दिया वह मैं ज्यो-का-त्यों तुम सब से कहता हूँ॥२॥

अम्बरीष बोले

हे महर्षि मार्कण्डेय! आप प्राचीन ऋषि हैं। आप पुराणों के अर्थ के ज्ञाता हैं॥३॥ हे महाबुद्धिमान सुनत! पवित्र दिव्य धर्मों में कौन-सा धर्म भक्तों के लिए सबसे उत्तम है?

नारायणनां दिव्यानां धर्माणां श्रेष्ठमुत्तमम्। तत्किं ब्रूहि महाप्राज्ञ भक्तानामिह सुब्रत!॥४॥  
सूत उवाच

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा समुत्थाय कृतांजलिः। स्मरन्नारायणं देवं कृष्णमच्युतमव्ययम्॥५॥  
मार्कण्डेय उवाच

शृणु भूप यथान्वायं पुण्यं नारायणात्मकम्। स्मरणं पूजनं चैव प्रणामो भक्तिपूर्वकम्॥६॥  
प्रत्येकमश्वमेधस्य यज्ञस्य सममुच्यते। य एकः पुरुषः श्रेष्ठः परमात्मा जनार्दनः॥७॥  
यस्माद्ब्रह्मा ततः सर्वं समाश्रित्यैव मुच्यते। धर्ममेकं प्रवक्ष्यामि यद्दृष्टं विदितं मया॥८॥  
पुरा त्रेतायुगे कश्चित् कौशिको नाम वै द्विजः। वासुदेवपरो नित्यं सामगानरतः सदा॥९॥  
भोजनासनशश्यासु सदा तद्गतमानसः। उदारचरितं विष्णोर्गायिमानः पुनः पुनः॥१०॥  
विष्णोः स्थलं समासाद्य हरेः क्षेत्रमनुत्तमम्। अगायत हरिं तत्र तालवर्णलयान्वितम्॥११॥  
मूर्छ्नास्वरयोगेन श्रुतिभेदेन भेदितम्। भक्तियोगं समापन्नो भिक्षामात्रं हि तत्र वै॥१२॥  
तत्रैनं गायमानं च दृष्ट्वा कश्चिद्दिव्वजस्तदा। पद्माख्य इति विख्यातस्तस्मै चान्नं ददौ तदा॥१३॥  
सकुटुंबो महातेजा हृष्णमन्नं हि तत्र वै। कौशिको हि तदा हृष्टो गायन्नास्ते हरिं प्रभुम्॥१४॥  
शृणवन्नास्ते स पद्माख्यः काले काले विनिर्गतिः। कालयोगेन संप्राप्ताः शिष्या वै कौशिकस्य च॥१५॥  
सप्त राजन्यवैश्यानां विप्राणां कुलसंभवाः। ज्ञानविद्याधिकाः शुद्धा वासुदेवपरायणाः॥१६॥

### सूत बोले

उनकी यह बात सुनकर मार्कण्डेय ऋषि उठकर खड़े हो गये। उन्होंने हाथ जोड़कर अच्युत नारायण श्री कृष्ण का स्मरण कहते हुए कहा। ४-५।।

### मार्कण्डेय बोले

हे राजन्! भक्तिपूर्वक नारायण का स्मरण, भजन और प्रशंसा करना पुण्यात्मक है। यह प्रत्येक अश्वमेष्य के समान फलदायक है। श्री कृष्ण जी परमात्मा पुरुषोत्तम हैं। उन्होंने ही ब्रह्मा और सब प्राणियों को उत्पन्न किया है। एक ही धर्म को—जो मैंने देखा और जाना है—वह मैं तुम सब से कहता हूँ। ६-८।। प्राचीन काल में कौशिक नाम का एक श्रेष्ठ ब्राह्मण था। वह सामवेद का ज्ञाता था और श्रीकृष्ण का भक्त था। वह उठते-बैठते, खाते-पीते और विस्तर पर लेटे हुए भी नारायण का नाम जपता रहता था। वह नारायण श्रीकृष्ण के उदार चरित्र को बार-बार जपता था। विष्णु के क्षेत्र में जाकर ताल, वर्ण, लय, मूर्छ्ना एवं स्वर के भेदों के योग से भक्तिपूर्वक भगवान का भजन गाता था। वह भिक्षा माँगकर अपना गुजारा करता था। ९-१२।। उसको इस प्रकार गाते हुये देख पद्माक्ष नामक एक व्यक्ति ने उसको भोजन दिया। भोजन करके प्रसन्न आत्मा कौशिक भगवान विष्णु के भजन गाता रहा। १३-१४।। पद्माक्ष भी उसको सुनता रहता था। कभी-कभी वह घर से बाहर जाकर उसके भजन सुना करता था। कुछ काल बीतने पर कौशिक के सात शिष्य वहाँ आये। १५-१६।। वे ब्राह्मणों, राजाओं

तेषामपितथान्नाद्यं पद्माक्षः प्रददौ स्वयम्। शिष्यैश्च सहितो नित्यं कौशिका हृष्टमानसः॥१७॥  
 विष्णुस्थले हरिं तत्र आस्ते गायन्यथाविधि। तत्रैव मालवो नाम वैश्यो विष्णुपरायणः॥१८॥  
 दीपमालां हरेन्नित्यं करोति प्रीतिमानसः। मालवी नाम भार्या च तस्य नित्यं पतिव्रता॥१९॥  
 गोमयेन समालिप्य हरेः क्षेत्रं समंततः। भर्ता सहास्ते सुप्रीतो शृणवती गानमुत्तमम्॥२०॥  
 कुशस्थलात्समापन्ना ब्राह्मणाः शंसितव्रताः। पंचाशद्वै समापन्ना हरेगानार्थमुत्तमाः॥२१॥  
 साधयन्तो हि कार्याणि कौशिकस्य महात्मनः। ज्ञानविद्यार्थतत्त्वज्ञाः शृणवंतो हृष्वसंस्तुते॥२२॥  
 ख्यातमासीन्नदा तस्य गानं वै कौशिकस्य तत्। श्रुत्वा राजा समभ्येत्य कलिंगो वाक्यमब्रवीत्॥२३॥  
 कौशिकाद्य गणैः सार्धं गायस्वेह च मां पुनः। शृणुध्वं च तथा यूयं कुशस्थलजना अपि॥२४॥  
 तच्छ्रुत्वा कौशिकः प्राह राजानं सांत्वया गिरा। न जिह्वा मे महाराजन् वाणी च मम सर्वदा॥२५॥  
 हरेन्न्यमपीद्रिं वा स्तौति नैव च वक्ष्यति। एवमुक्ते तु तच्छिष्यो वासिष्ठो गौतमो हरिः॥२६॥  
 सारस्वतस्तथा चित्रश्चित्रमाल्यस्तथा शिशुः। ऊद्युस्ते पार्थिवं तद्वद्यथा प्राह च कौशिकः॥२७॥  
 श्रावकास्ते तथा प्रोचुः पार्थिवं विष्णुतत्पराः। श्रोत्राणीमानि शृणवंति हरेन्न्यं न पार्थिव॥२८॥  
 गानकीर्ति वयं तस्य शृणुमोन्यां न च स्तुतिम्। तच्छ्रुत्वा पार्थिवो रुष्टो गायतामिति चाब्रवीत्॥२९॥  
 स्वभृत्यान्ब्राह्मणा होते कीर्ति शृणवंति मे यथा। न शृणवंति कथं तस्मात् गायमाने समंततः॥३०॥

और वैश्यों के परिवार के थे। वे सब शुद्ध और गानविद्या में दक्ष और भगवान के भक्त थे। पद्माक्ष ने उनको भी भोजन दिया। अपने शिष्यों सहित कौशिक भी बहुत प्रसन्न थे। विष्णु के एक पवित्र क्षेत्र में कौशिक ने विष्णु की प्रशंसा में भजन गये और वहीं ठहर गये। वहाँ एक मालव नामक वैश्य था। वह विष्णु भक्त था। प्रसन्नतापूर्वक वह दीपों की माला उनको निरन्तर भेंट करता था। आरती करता था। उसकी पतिव्रता पत्नी मालवी उस विष्णु क्षेत्र को गाय के गोबर से लीपकर पति के साथ भजन सुना करती थी॥१७-२०॥ वहाँ पर कुशस्थल नामक स्थान से पचास पवित्र धार्मिक ब्राह्मण विष्णु की प्रशंसा के भजनों को सुनने के लिए आये॥२१॥ वे बुद्धिमान और सुशिक्षित थे। वे ज्ञानविद्या के अर्थ के ज्ञाता थे। वे महात्मा कौशिक के मिशन के प्रशंसक और प्रचारक थे। वे वहीं आकर रहने लगे॥२२॥ कौशिक के मधुर भजन की चारों ओर प्रसिद्धि हो गई। उसको सुनकर कलिंग नामक उस देश का राजा वहाँ आया॥२३॥ उसने कहा, ‘हे कौशिक! अपने शिष्यों के साथ तुम मेरी प्रशंसा में गीत गाओ। उसको कुशस्थल से आये लोग भी सुनें।’ राजा की इस आज्ञा को सुनकर कौशिक ने शान्तिपूर्वक कहा ‘हे महाराज!’ मेरी जीभ और वाणी विष्णु के अतिरिक्त अन्य किसी की प्रशंसा यहाँ तक कि इन्द्र की भी प्रशंसा में नहीं गाती।’ कौशिक के इस प्रकार कहने पर उनके शिष्य वाशिष्ठ, गौतम, हरि, सारस्वत और चित्र, चित्रमाल्य तथा शिशु ने भी वैसा ही कहा॥२४॥ तथा कुशस्थल से आये हुए विष्णु के भक्तों ने भी उसी प्रकार राजा से कहा, “हे राजा! हम लोगों के कान विष्णु के अतिरिक्त किसी की प्रशंसा में कुछ नहीं सुनने की इच्छा करते हैं। हम उन्हीं की प्रशंसा के भजनों को सुनेंगे और किसी अन्य की स्तुति नहीं सुनेंगे।” इस बात को सुनकर राजा नाराज हो गया और अपने नौकरों से कहा, ‘गाओ, जिससे ये ब्राह्मण मेरी कीर्ति को सुनें जबकि मेरी कीर्ति

एव मुक्तास्तदा भृत्या जगुः पर्थिवमुक्तमम्। निरुद्धमार्गा विप्रास्ते गाने वृत्ते तु दुःखिताः॥३१॥  
 काष्ठशंक्रुभिरन्योन्यं श्रोत्राणि विदधु द्विजाः। कौशिकाद्याश्च तां ज्ञात्वा मनोवृत्तिं नृपस्य वै॥३२॥  
 प्रसह्यस्मांस्तु गायेत स्वगानेसो नृपः स्थितः। इति विप्राः सुनियता जिह्वाग्रं चिच्छिदुः करेः॥३३॥  
 ततो राजा सुसंक्रुद्धः स्वदेशात्तात्यवासयत्। आदाय सर्वं वित्तं च ततस्ते जग्मुरुत्तराम्॥३४॥  
 दिशमासाद्य कालेन कालधर्मेण योजिताः। तानागतान्यमो दृष्टा किं कर्तव्यमिति स्म ह॥३५॥  
 चेष्टिं तत्क्षणे राजन् ब्रह्मा प्राह सुराधिपान्। कौशिकादीन् द्विजानद्य वासयध्वं यथासुखम्॥३६॥  
 गानयोगेन ये नित्यं पूजयन्ति जनार्दनम्। तानानयत भद्रं वो यदि देवत्वमिच्छथ॥३७॥  
 इत्युक्ता लोकपालास्ते कौशिकेति पुनःपुनः। मालवेति तथा केचित् पद्माक्षेति तथा परे॥३८॥  
 क्रोशमानाः समभ्येत्य तानादाय विहायसा। ब्रह्मलोकं गताः शीघ्रं मुहूर्तेनैव ते सुराः॥३९॥  
 कौशिकादीस्ततो दृष्टा ब्रह्मा लोकपितामहः। प्रत्युद्गम्य यथान्यायं स्वागतेनाभ्यपूजयत्॥४०॥  
 ततः कोलाहलमभूदतिगौरवमुल्बणम्। ब्रह्मणा चरितं दृष्टा देवानां नृपसत्तम॥४१॥  
 हिरण्यगर्भो भगवांस्तात्रिवार्यं सुरोत्तमान्। कौशिकादीन्समादाय मुनीन् देवैः समावृतः॥४२॥

चारों ओर गायी जाती है। तो ये लोग उसको क्यों नहीं सुनेंगे'॥२५-३०॥ यह आदेश सुनकर नौकरों ने राजा के विषय में उत्तम प्रशंसात्मक गीत गाये। राजा की स्तुति को न सुनते हुए कौशिक और अन्य ब्राह्मणों ने आपस में एक दूसरे के कानों में लकड़ी की छोटी खूंटी से कानों को बन्द कर दिया। “इस राजा ने यहाँ उपस्थित होकर अपने निजी प्रशंसा के गीतों को सुनने के लिए हमें बाध्य किया” ऐसा कहते हुए उन ब्राह्मणों ने अपनी जीभ के सिरों को अपने ही हाथों से काट दिया। तब उस दुष्ट राजा ने उस श्रेष्ठ ब्राह्मण को फटकार कर उसका सब धन आदि लेकर उसको राज्य से निकाल दिया। तब म्लेच्छ लोग भगवान की मूर्ति का हरण करके चले गये। उसके बाद राजा की मृत्यु हो गयी॥३१-३३॥ क्रोधित राजा ने अपने राज्य से उन सबका धन अपहरण करके उन सबको अपने राज्य से निकाल दिया। तब वे लोग उत्तर को चले गये। उनको देखकर मृत्यु के देवता यम ने सोचा कि क्या करना चाहिए? उस समय ब्रह्मा ने देवताओं के स्वामियों से कहा, “कौशिक आदि ब्राह्मणों को सुखपूर्वक ठहरावो॥३४-३६॥ सबका कल्याण हो। अगर तुम देवत्व चाहते हो तो उन कौशिक आदि को यहाँ ले आओ जो संगीत के द्वारा विष्णु की नित्य पूजा करते रहे”॥३७॥ इस प्रकार की आज्ञा पाने पर दिग्पालों ने चिल्ला कर कहा। हे कौशिक! ‘हे कौशिक! उनमें से कुछ ने चिल्लाकर कहा हे मालव! हे मालव! अन्यों ने चिल्लाकर कहा हे पद्माक्ष! हे पद्माक्ष! वे उनके पास पहुँचे और उसको पकड़ लिया तथा विमान मार्ग से ब्रह्मलोक को ले आये। वे लोग वहाँ एक मुहूर्त के भीतर पहुँच गये॥३८-३९॥ कौशिक तथा अन्य लोगों को देखकर तीनों लोकों के पितामह ब्रह्मा ने उनका स्वागत किया और उनको सम्मानित किया॥४०॥ हे श्रेष्ठ राजा! ब्रह्मा ने जो कुछ किया उसको देखकर देवता बहुत गम्भीर हो गये॥४१॥ उनमें आपस में कोलाहल हुआ। उन श्रेष्ठ देवताओं को ब्रह्मा ने रोका और शान्त किया। कौशिक तथा अन्य ऋषियों को देवताओं के साथ विष्णुलोक ले गये। स्वामी नारायण ज्ञान के मार्ग के स्वामी श्वेत द्वीप निवासियों सिद्धों विष्णु-भक्तों से शुद्धता

विष्णुलोकं ययौ शीघ्रं वासुदेवपरायणः। तत्र नारायणो देवः श्वेतद्वीपनिवासिभिः॥४३॥  
ज्ञानयोगेश्वरैः सिद्धैर्विष्णुभक्तैः समाहितैः। नारायणसमैर्दिव्यैश्चतुर्बाहुधरैः शुभैः॥४४॥  
विष्णुचिह्नसमापन्नैर्दीप्यमानैरकल्मषैः । अष्टाशीतिसहस्रैश्च सेव्यमानो महाजनैः॥४५॥  
अस्माभिनर्दाद्यैश्च सनकाद्यैरकल्मषैः। भूतैर्नानाविधैश्चैव दिव्यस्त्रीभिः समंततः॥४६॥  
सेव्यमानोथ मध्ये वै सहस्रद्वारसंवृते। सहस्रयोजनायामे दिव्ये मणिमये शुभे॥४७॥  
विमाने विमले चित्रे भद्रपीठासने हरिः। लोककार्ये प्रसक्तानां दत्तदृष्टिश्च माधवः॥४८॥  
तस्मिन्कालेऽथ भगवान् कौशिकाद्यैश्च संवृत्तः। आगम्य प्रणिपत्याग्रे तृष्णाव गरुडध्वजम्॥४९॥  
ततो विलोक्य भगवान् हरिनारायणः प्रभुः। कौशिकेत्याह संप्रीत्या तान्सर्वाश्च यथाक्रमम्॥५०॥  
जयघोषो महानासीन्महाश्चर्ये समागते। ब्रह्मणमाह विश्वात्मा शृणु ब्रह्मन् मयोदितम्॥५१॥  
कौशिकस्य इमे विप्राः साध्यसाधनतत्पराः। हिताय संप्रवृत्ता वै कुशस्थलनिवासिनः॥५२॥  
मत्कीर्तिश्रवणे युक्ता ज्ञानतत्त्वार्थकोविदाः। अनन्यदेवताभक्ताः साध्या देवा भवन्त्विमे॥५३॥  
मत्समीपे तथान्यत्र प्रवेशं देहि सर्वदा। एवमुक्त्वा पुनर्देवः कौशिकं प्राह माधवः॥५४॥  
स्वशिष्यैस्त्वं महाप्राज्ञ दिग्बन्धो भव मे सदा। गणाधिपत्यमापन्नो यत्राहं त्वं समास्व वै॥५५॥  
मालवं मालवीं चैवं प्राह दामोदरो हरिः। मम लोके यथाकामं भार्या सह मालव॥५६॥

और मानसिक शुद्धि के साथ सेवित थे। विष्णु के चार दिव्य भुजाएँ थी। वे नारायण से भी परे थे। वे विष्णु के चिह्नों से युक्त थे। वे दीप्तमान थे और पाप रहित थे। वह विष्णु अस्सी हजार बड़े लोगों द्वारा सेवित थे और हम जैसे लोगों और नारद सनक और अन्य शुद्ध पाप रहित आत्माओं से भी सेवित थे। अनेक प्रकार के प्राणियों और दिव्य स्त्रियों से चारों ओर से सेवित थे। वह एक उत्तम आसन पर एक विमान में बैठे थे। वह विमान लम्बाई में हजार योजन था। वह चमक रहा था। वह मणिमय था। उस विमान में हजार दरवाजे थे। भगवान विष्णु संसारिक कार्यों की ओर ध्यान दिये थे। उन्होंने कौशिक और अन्य लोगों से घिरे ब्रह्मा को देखा। उन्होंने गरुणध्वज विष्णु को प्रणाम करके उनकी स्तुति की। तब भगवान नारायण विष्णु ने कौशिक तथा उन सबको ध्यान से प्रेमपूर्वक देखा। कौशिक कहकर सबको क्रमशः प्रसन्नतापूर्वक सम्बोधित किया। ॥४२-५०॥ जब यह आश्चर्यजनक घटना घटी वहाँ पर महान जय-जयकार घोष हुआ ‘ब्रह्मा जो कुछ मैं कहता हूँ उसको सुनो। ये ब्राह्मण जो कुशस्थल के निवासी हैं। इनमें से हर एक कल्याण का अधिकारी है। ये लोग कौशिक द्वारा जो कुछ इष्ट या उसकी प्राप्ति में लगे हुए थे। ॥५१-५२॥ ये ज्ञान के तत्त्व के अर्थ को जानने वाले अन्य देवताओं के नहीं, केवल मेरे भक्त और मेरी कीर्ति को सुनने में तल्लीन रहे हैं। ये सब लोग देवताओं और ‘साध्य’ नाम से प्रतिष्ठित हैं। मेरे पास इनको स्थान दो। मेरे पास प्रवेश की अनुमति इनको रहे तथा अन्य पवित्र स्थानों में भी इनको प्रवेश करने की अनुमति सदा रहे।’ यह कहकर विष्णु भगवान ने कौशिक से कहा। ॥५३-५४॥ ‘हे महाबुद्धिमान कौशिक! अपने शिष्यों के साथ सब मेरे अनुचर रहो और हमारे मणों के अधिपति पद को प्राप्त करो। जहाँ मैं रहूँ वहाँ तुम भी रहो।’ ॥५५॥ भगवान विष्णु ने मालव और मालवी से कहा ‘हे मालव! अपनी

दिव्यरूपधरः श्रीमान् शृणवन्नानमिहाधिपः। आस्व नित्यं यथाकामं यावल्लोका भवन्ति वै॥५७॥  
 पद्माक्षमाह भगवान् धनदो भव माधवः। धनानामीश्वरो भूत्वा यथाकालं हि मां पुनः॥५८॥  
 आगम्य दृष्ट्वा मां नित्यं कुरु राज्यं यथासुखम्। एवमुक्त्वा हरिर्विष्णुर्ब्रह्माणमिदमब्रवीत्॥५९॥  
 कौशिकस्यास्य गानेन योगनिद्रा च मे गता। विष्णुस्थले च मां स्तौति शिष्यैरेष समन्ततः॥६०॥  
 राजा निरस्तः क्रूरेण कलिंगेन महीयसा। स जिह्वाच्छेदनं कृत्वा हरेरन्यं कथंचन॥६१॥  
 न स्तोष्यामीति नियतः प्राप्तोसौ मम लोकताम्। एते च विप्रा नियता मम भक्ता यशस्विनः॥६२॥  
 श्रोत्रच्छ्रद्रमथाहत्य शंकुभिर्वै परस्परम्। श्रोष्यामो नैव चान्यद्वै हरेः कीर्तिमिति स्म ह॥६३॥  
 एते विप्राश्च देवत्वं मम सान्निध्यमेव च। मालवो भार्यया सार्थं मत्क्षेत्रं परिमृज्य वै॥६४॥  
 दीपमालादिभिर्नित्यमध्यर्थ्य सततं हि माम्। गानं शृणोति नियतो मत्कीर्तिचरितान्वितम्॥६५॥  
 तेनासौ प्राप्तवाँल्लोकं मम ब्रह्म सनातनम्। पद्माक्षोसौ ददौ भोज्यं कौशिकस्य महात्मनः॥६६॥  
 धनेशत्वमवाप्तोसौ मम सान्निध्यमेव च। एवमुक्त्वा हरिस्तत्र समाजे लोकपूजितः॥६७॥  
 तस्मिन् क्षणे समापन्ना मधुराक्षरपेशलैः। विपंचीगुणतत्त्वज्ञैर्वाद्यविद्याविशारदैः॥६८॥  
 मंदं मंदस्मिता देवी विचित्राभरणान्विता। गायमाना समायाता लक्ष्मीर्विष्णुपरिग्रहा॥६९॥  
 वृता सहस्रकोटिभिरंगनाभिः समन्ततः। ततो गणाधिपा दृष्ट्वा भुशुण्डीपरिघायुधाः॥७०॥

स्त्री के साथ मेरे लोक में इच्छानुसार जब तक यह जगत् रहे तब तक तुम रहो। दिव्य रूप धारण करो। यहाँ मेरी प्रशंसा में गये गये भजनों को सुनते हुए रहो'।।५६-५७।। विष्णु भगवान ने पद्माक्ष से कहा, 'तुम धन को देने वाले होवो। धन के स्वामी होकर फिर उचित समय पर आकर मुझको देखो और सुखपूर्वक राज्य करो।' यह कहकर भगवान विष्णु ने ब्रह्मा से कहा।।५८-५९।। 'कौशिक के गान से मेरी योगनिद्रा चली गयी। यह अपनी शिष्य मण्डली के साथ विष्णुलोक में मेरी स्तुति करते रहें।।६०।। उन्होंने क्रूर राजा कलिंग ने राजधानी से निकाल दिया। उन्होंने उसकी जीभ को काट दिया। यह विष्णु से अन्य किसी की स्तुति न करूँगा यह संकल्प किया। अतः यह मेरे विष्णुलोक को प्राप्त हो। वे ब्राह्मण जो कि नियमित रूप से अभ्यास करते रहे। जो मेरे भक्त हैं और जिन्होंने अपने कानों के छिद्रों को आपस में शंकुओं से बन्द कर दिया था और कहा था कि विष्णु की कीर्ति के अतिरिक्त अन्य किसी की प्रशंसा नहीं सुनूँगा। ये सब ब्राह्मण देवत्व को और मेरे सानिध्य को प्राप्त करें। मालव ने अपनी स्त्री के साथ मेरे पवित्र केन्द्र को साफ करके दीपमाला आदि से नित्य मेरी पूजा करके और मेरे चरित्र की प्रशंसा को सुना था। इससे उसने मेरे लोक को प्राप्त किया। पद्माक्ष ने कौशिक को भोजन दिया था। इसलिए यह धन का स्वामी हो और मेरा सानिध्य प्राप्त करे और समाज में लोगों द्वारा पूजित हो'।।६१-६७।। उसी क्षण विष्णु की पत्नी रमा धीरे-धीरे मुस्कुराती हुई वहाँ आई। वह विभिन्न प्रकार के विचित्र आभूषणों से विभूषित थीं। वहाँ संगीत विद्या में विशेषज्ञों के मधुर और आकर्षक शब्दों के उपयोग में दक्ष थे। वे लक्ष्मी की प्रशंसा में गते थे। लक्ष्मी हजारों और करोड़ों नारियों से चारों ओर से धिरी थीं। उसके बाद उनको आया हुआ देखकर गणों के स्वामी जो पहाड़ों के समान थे और भुशुण्डी के समान गदाधारी थे और परिघों (एक प्रकार की गदा) को धारण किये हुए थे, लक्ष्मी को रास्ता देने के लिए ब्रह्मा और अन्य देवताओं तथा मुनियों को हटा रहे

ब्रह्मादींस्तर्जयंतस्ते मुनीन्देवान्समंततः। उत्सारयंतः संहष्टा धिष्ठिताः पर्वतोपमाः॥७ १॥  
 सर्वे वयं हि निर्याताः सार्थं वै ब्रह्मणा सुरैः। तस्मिन् क्षणे समाहूतस्तुंबरुमुनिसत्तमः॥७ २॥  
 प्रविवेश समीपं वै देव्या देवस्य चैवहि। तत्रासीनो यथायोगं नानामूर्च्छासमन्वितम्॥७ ३॥  
 जगौ कलपदं हृष्टो विपंचीं चाभ्यवादयत्। नानारत्नसमायुत्तैर्दिव्यैराभरणोत्तमैः॥७ ४॥  
 दिव्यमाल्यैस्तथा शुभ्रैः पूजितो मुनिसत्तमः। निर्गतस्तुंबरुहृष्टो अन्ये च त्रहृषयः सुराः॥७ ५॥  
 दृष्टा संपूजितं यांतं यथायोगमरिंदमा। नारदोथ मुनिर्दृष्टा तुंबरोः सत्क्रियां हरेः॥७ ६॥  
 शोकाविष्टेन मनसा संतप्तहृदयेक्षणः। चिंतामापेदिवांस्तत्र शोकमूर्च्छाकुलात्मक॥७ ७॥  
 केनाहं हि हरेयास्ये योगं देवीसमीपतः। अहो तुंबरुणा प्राप्तं धिङ्मां मूढं विचेतसम्॥७ ८॥  
 योहं हरेः सञ्चिकाशं भूतैर्निर्यातितः कथम्। जीवन्यास्यामि कुत्राहमहो तुंबरुणा कृतम्॥७ ९॥  
 इति संचिंतयन् विप्रस्तप आस्थितवान्मुनिः। दिव्यं वर्षसहस्रं तु निरुच्छासमन्वितः॥८ ०॥  
 ध्यायन्विष्णुमथाध्यास्ते तुंबरोः सत्क्रियां स्मरन्। रोदमानो मुहुर्विद्वान् धिङ्मामिति च चिंतयन्॥८ १॥  
 तत्र यत्कृतवान्विष्णुस्तच्छृणुष्व नराधिप॥८ २॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे  
कौशिकवृत्तकथनं नाम प्रथमोऽध्यायः॥९॥

थे। वे अपने कर्तव्य पालन में प्रसिद्ध थे॥६८-६९॥ हम सब मार्कण्डेय और अन्य लोग ब्रह्मा और देवताओं के साथ बाहर चले गये। उसी समय श्रेष्ठ तुंबरु नामक मुनि बुलाये गये। वह देवी लक्ष्मी और विष्णु के पास खड़े हो गये॥७०-७२॥ आराम से वहाँ बैठकर उन्होंने प्रसन्नता के साथ अनेक मूर्च्छाओं से युक्त वीणा पर सुन्दर भजन गाये तथा मुनि को दिव्य रत्न जड़ित आभूषणों और शानदार मालाओं से सम्मानित किया गया। वे तथा अन्य मुनि और देवगण बहुत प्रसन्न थे॥७३-७५॥ हे शत्रुओं के नाशक राजा!, उच्च सम्मान प्राप्त करके तुंबरु के जाने के बाद विष्णु द्वारा तुंबरु को अतिथिवत् सम्मानित देखकर नारद दुःखी हो गये। उनके आँखों और हृदय पर शोक का प्रभाव पड़ा। शोक और मूर्च्छा से व्याकुल नारद चिन्ता में ढूब गये। शोक की तीव्रता से वह सोचने लगे। देवी की उपस्थिति में विष्णु के पास कैसे पहुँचूँ। हाय! हाय! यह अवसर तो तुंबरु को प्राप्त हुआ। मुझको धिक्कार है। मुझ मूढ़ और चेतनारहित को धिक्कार है। विष्णु के गणों द्वारा उन्हीं के सामने मुझको बाहर कर दिया गया। मैं कहाँ जाऊँ। मैं कैसे जिन्दा रहूँ। ऐसा तुंबरु ने किया। ऐसा विचार करते हुए नारद मुनि ने एक हजार दिव्य वर्ष तपस्या की। यहाँ तक कि उन्होंने तप काल में श्वास तक को रोक लिया। तुंबरु की सत्कार क्रिया को स्मरण करते हुए 'मुझको धिक्कार है' ऐसा सोचते हुए, रोते हुए उन्होंने विष्णु का ध्यान किया। हे राजन्! उसके बाद विष्णु ने जो किया उसको सुनो॥७६-८२॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में कौशिकवृत्तकथन नामक  
पहला अध्याय समाप्त॥१॥

## द्वितीयोऽध्यायः विष्णुमाहात्म्यम्

मार्कंडेय उवाच

ततो नारायणो देवस्तस्मै सर्वप्रदाय वै। कालयोगेन विश्वात्मा समं चक्रेऽथ तुंबरोः॥१॥  
नारदं मुनिशार्दूलमेवं वृत्तमभूत्पुरा। नारायणस्य गीतानां गानं श्रेष्ठं पुनः पुनः॥२॥  
गानेनाराधितो विष्णुः सत्कीर्तिं ज्ञानवर्चसी। ददाति तुष्टिं स्थानं च यथाऽसौ कौशिकस्य वै॥३॥  
पद्माक्षप्रभृतीनां च संसिद्धिं प्रददौ हरिः। तस्मात्त्वया महाराज विष्णुक्षेत्रे विशेषतः॥४॥  
अर्चनं गाननृत्याद्यं वाद्योत्सवसमन्वितम्। कर्तव्यं विष्णुभक्तैर्हि पुरुषैरनिशं नृप॥५॥  
श्रोतव्यं च सदा नित्यं श्रोतव्योसौहरिस्तथा। विष्णुक्षेत्रे तु यो विद्वान् कारयेद्भक्तिसंयुतः॥६॥  
गाननृत्यादिकं चैव विष्णवाख्यानं कथां तथा। जातिस्मृतिं च मेधां च तथैवोपरमे स्मृतिम्॥७॥  
प्राप्नोति विष्णुसायुज्यं सत्यमेतन्नपाधिप। एतत्ते कथितं राजन् यन्मां त्वं परिपृच्छसि॥८॥  
किं वदामि च ते भूयो वद धर्मभृतांवर॥९॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे विष्णुमाहात्म्यं नाम द्वितीयोऽध्यायः॥१॥

दूसरा अध्याय

## विष्णु माहात्म्य

मार्कण्डेय बोले

इसके बाद विश्वात्मा महाकाल विष्णु ने नारद को सब-कुछ देकर तुंबरु के समान बना दिया॥१॥ इस प्रकार नारद को मुनियों में श्रेष्ठ बना दिया। यह घटना पहिले हुई। नारद द्वारा गीतों का गान पुनः-पुनः श्रेष्ठ बस्तु हो गई॥२॥ गान से आराधित भगवान विष्णु उत्तम कीर्ति, बुद्धि, ज्ञान, वर्चस्व, सन्तोष और स्थान देते हैं, जैसा कि कौशिक के साथ हुआ॥३॥ विष्णु ने पद्माक्ष और अन्य लोगों को उत्तम सिद्धि दिया। इसलिए हे महाराज! आपको विशेष रूप से विष्णु के पवित्र क्षेत्र में गान, नृत्य और वाद्य यन्मों द्वारा संगीत और अन्य उत्सव पूजा करना चाहिए। हे राजन्! यह सदा आपको अकेले या विष्णु के भक्तों के साथ पूर्ण करना चाहिए॥४-५॥ यह सदा सुनना चाहिए। विष्णु की सदा प्रशंसा की जानी चाहिए। विष्णु क्षेत्र में जो विद्वान् भक्तिपूर्वक गान और नृत्य आदि तथा विष्णु के आख्यान कथा कराता है उसको पूर्व जन्म का ऐश्वर्य और मरण काल में जागरुकता प्राप्त होती है। मृत्यु के बाद वह विष्णु का सायुज्य प्राप्त करता है। हे राजन्! इसमें सन्देह नहीं।

हे राजन्! जो कुछ तुमने पूछा है वह मैंने तुमसे कह दिया। इससे अधिक अब मैं क्या कहूँ? हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ! तुमसे मैं क्या कहूँ? पवित्र कृत्यों को कौन प्राप्त करता है, यह मुझसे कहो॥६-९॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में विष्णुमाहात्म्य नामक दूसरा अध्याय समाप्त॥२॥

—३४३—

## तृतीयोऽध्यायः वैष्णवगीतकथनम्

अम्बरीष उवाच

मार्कण्डेय महाप्राज्ञ केन योगेन लब्धवान्। गानविद्यां महाभाग नारदो भगवान्मुनिः॥१॥  
तुंबरोश्च समानत्वं कस्मिन्काल उपेयिवान्। एतदाचक्ष्य मे सर्वं सर्वज्ञोसि महामते॥२॥

मार्कण्डेय उवाच

श्रुतो मयायमर्थो वै नारदादेवदर्शनात्। स्वयमाह महातेजा नारदोऽसौ महामतिः॥३॥  
संतप्यमानो भगवान् दिव्यं वर्षसहस्रकम्। निरुच्छासेन संयुक्तस्तुंबरोर्गैरिवं स्मरन्॥४॥  
तताप च महाघोरं तपोराशिस्तपः परम्। अथांतरिक्षे शुश्राव नारदोऽसौ महामुनिः॥५॥  
वाणीं दिव्यां महाघोषामद्भुतामशरीरिणीम्। किमर्थं मुनिशार्दूल तपस्तपसि दुश्शरम्॥६॥  
उलूकं पश्य गत्वा त्वं यदि गाने रता मतिः। मानसोत्तरशैले तु गानबंधुरिति स्मृतः॥७॥  
गच्छ शीघ्रं च पश्यैनं गानवित्त्वं भविष्यसि। इत्युक्तो विस्मयाविष्टो नारदो वाग्विदां वरः॥८॥  
मानसोत्तरशैले तु गानबंधुं जगाम वै। गंधर्वाः किन्नरा यक्षास्तथा चाप्सरसां गणाः॥९॥  
समासीनास्तु परितो गानबंधुं ततस्ततः। गानविद्यां समापन्नः शिक्षितास्तेन पक्षिणा॥१०॥

### तीसरा अध्याय वैष्णवगीत कथन

अम्बरीष बोले

हे महा बुद्धिमान मार्कण्डेय! किस योग से महाभाग नारद मुनि ने गानविद्या प्राप्त की। यह सब मुझको बताइये। हे महामति! तुम सर्वज्ञ हो। इसलिए मुझसे सब कुछ कहो॥१-२॥

मार्कण्डेय बोले

नारद के दिव्य दर्शन से मैंने यह सुना। महामति, महातेजस्वी नारद ने मुझसे स्वयं बताया॥३॥ दुःखित भगवान नारद ने तुंबरु के गौरव को स्मरण करते हुए बिना सांस लिए एक हजार दिव्य वर्षों तक तपस्या की। उसके बाद तपस्याओं को समाप्त कर एक परम कठोर तपस्या की। तब महामुनि नारद ने अन्तरिक्ष में दिव्य ऊँचे स्वर वाली अद्भुत आकाशवाणी को सुना॥४-६अ॥ ‘मुनियों में श्रेष्ठ किस लिए यह कठिन तपस्या कर रहे हो। यदि तुम्हारी बुद्धि गान विद्या में रत है तो मानस के ऊपर पर्वत पर उलूक को जाकर देखो। वह ज्ञानबंधु के नाम से प्रसिद्ध है। जल्दी जाकर उनको देखो। तुम गान विद्या के जाता हो जाओगे।’ बुद्धिमानों में श्रेष्ठ नारद इस आकाशवाणी को सुनकर आश्चर्यचकित हो गये। उसके बाद वह मानसरोवर झील के ऊपर पर्वत के पास गये। वहाँ उन्होंने देखा कि गन्धर्व, किन्नर, यक्ष तथा अप्सरा गानबन्धु के चारों ओर बैठे हुए हैं। उस पक्षी उलूक

स्त्रिग्धकंठस्वरास्तत्र समासीना मुदान्विताः। ततो नारदमालोक्य गानबंधुरुवाच ह ॥११॥  
प्रणिपत्य यथान्यायं स्वागतेनाभ्यपूजयत्। किमर्थं भगवानत्र चागतोऽसि महामते ॥१२॥  
किं कार्यं हि मया ब्रह्मन् बूहि किं करवाणि ते॥

नारद उवाच ।

उलकेंद्र महाप्राज्ञ शृणु सर्वं यथातथम् ॥१३॥

मम वृत्तं प्रवक्ष्यामि पुरा भूतं महाद्भुतम्। अतीते हि युगे विद्वन्नारायणसमीपगम् ॥१४॥  
मां विनिर्धूय संहष्टः समाहूय च तुंबरुम्। लक्ष्मीसमन्वितो विष्णुरशृणोद्गानमुत्तमम् ॥१५॥  
ब्रह्मादयः सुराः सर्वे निरस्ताः स्थानतोऽच्युताः। कौशिकाद्या समासीना गानयोगेन वै हरिम् ॥१६॥  
एवमाराध्य संप्राप्ता गाणपत्यं यथासुखम्। तेनाहमतिदुःखार्तस्तपस्तप्तुमिहागतः ॥१७॥  
यदत्तं यद्भुतं चैव यथा वा श्रुतमेव च। यदधीतं मया सर्वं कलां नार्हति घोडशीम् ॥१८॥  
विष्णोर्महात्म्ययुक्तस्य गानयोगस्य वै ततः। संचिन्त्याहं तपो घोरं तदर्थं तप्तवान् द्विज ॥१९॥  
दिव्यवर्षसहस्रं वै ततो ह्यशृणुवं पुनः। वाणीमाकाशसंभूतां त्वामुद्दिश्य विहंगम ॥२०॥  
उलूकं गच्छ देवर्षे गानबंधुं मतिर्यदि। गाने चेद्वर्तते ब्रह्मन् तत्र त्वं वेत्स्यसे चिरात् ॥२१॥  
इत्यहं प्रेरितस्तेन त्वत्समीपमिहागतः। किं करिष्यामि शिष्योहंतव मां पालयाव्यय ॥२२॥

से वे सदा (उसी ज्ञानबन्धु के द्वारा) गान विद्या में शिक्षित थे। वे लोग प्रसन्न होकर प्रसन्नचित्त मधुर कण्ठ से युक्त बैठे हुए थे। गानबन्धु नारद को देखकर प्रणाम करके उचित स्वागत से पुलकित हुए । ६ब-११अ । ‘हे महामति! भगवान! आप क्यों यहाँ आये हुए हैं। बोलें। मैं आपका क्या कार्य करूँ?’

नारद बोले

‘हे महाबुद्धिमान! मेरी सब बातों को आप यथावत् सुनिए। मैं अपनी सब घटना को सुनाऊँगा। भूतकाल में जो आश्चर्यजनक घटनाएँ मेरे साथ घटी थीं। हे विद्वान्! पूर्व युग में लक्ष्मी सहित विष्णु के पास मैं गया था। उन्होंने मुझको एक बगल कर दिया और तुंबरु को बुलाया और उसके उत्तम गीतों को सुना और अन्य देवता उस स्थान से चले गये। कौशिक तथा अन्य गान योग से विष्णु के पास बैठे रहे। मैं दुःखित हुआ। उससे मैं बहुत दुःखी होकर तपस्या करने के लिए यहाँ आया। दान के रूप को मैंने जो कुछ दिया, होम के द्वारा जो कुछ भेंट किया, जो कुछ मैंने सुना पढ़ा, ये सब यह विष्णु के माहात्म्य के साथ सम्बद्ध संगीत के मार्ग की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं है। ऐसा विचार करके हे द्विज। मैंने इसके लिए घोर तपस्या की। एक हजार दिव्य वर्ष तक इसी गान विद्या के उद्देश्य के लिए तप किया। उसके बाद हे उलूक! मैंने आपके पास पहुँचने के लिए आकाशवाणी सुना “हे देवर्षि यदि तुम संगीत में रुचि रखते हो तो उलूक के पास जाओ। हे देवर्षि वहाँ तुम शीघ्र ही गान विद्या जान लोगे ।” इससे प्रेरित होकर मैं तुम्हारे पास आया। मैं क्या करूँगा? हे अव्यय! मैं तुम्हारा शिष्य हूँ। मेरी रक्षा करें” ॥१२-२२॥

## गानबन्धुरुवाच ।

शृणु नारद यद्वत्तं पुरा मम महामते । अत्याश्र्वर्यसमायुक्तं सर्वपापहरं शुभम् ॥२३॥  
 भुवनेश इति ख्यातो राजाभूद्वार्मिकः पुरा । अश्वमेघसहस्रैश्च वाजपेयायुतेन च ॥२४॥  
 गवां कोट्यर्बुदे चैव सुवर्णस्य तथैव च । वाससां रथहस्तीनां कन्याश्वानां तथैव च ॥२५॥  
 दत्वा स राजा विप्रेभ्यो मेदिनीं प्रतिपालयन् । निवारयन् स्वके राज्ये गेययोगेन केशवम् ॥२६॥  
 अन्यं वा गेययोगेन गायन्यदि स मे भवेत् । वध्यः सर्वात्मना तस्माद्वैरीड्यः परः पुमान् ॥२७॥  
 गानयोगेन सर्वत्र स्त्रियो गायन्तु नित्यशः । सूतमागधसंघाश्च गीतं ते कारयन्तु वै ॥२८॥  
 इत्याज्ञाप्य महातेजा राज्यं वै पर्यपालयत् । तस्य राज्ञः पुराभ्याशे हरिमित्र इति श्रुतः ॥२९॥  
 ब्राह्मणो विष्णुभक्तश्च सर्वद्विविवर्जितः । नदीपुलिनमासाद्य प्रतिमां च हरेः शुभाम् ॥३०॥  
 अभ्यर्थ्य च यथान्यायं धृतदध्युत्तरं बहु । मिष्टान्नं पायसं दत्त्वा हरेरावेद्य पूपकम् ॥३१॥  
 प्रणिपत्य यथान्यायं तत्र विन्यस्तमानसः । अगायत हरिं तत्र तालवर्णलयान्वितम् ॥३२॥  
 अतीव स्नेहसंयुक्तस्तद्रतेनांतरात्मना । ततो राज्ञः समादेशाच्चारास्तत्र समागताः ॥३३॥  
 तदर्चनादि सकलं निर्धूय च समंततः । ब्राह्मणं तं गृहीत्वा ते राजे सम्यडन्यवेदयन् ॥३४॥  
 ततो राजा द्विजश्रेष्ठं परिभृत्य सुदुर्मतिः । राज्यान्निर्यातयामास हृत्वा सर्वं धनादिकम् ॥३५॥

## गानबन्धु बोले

‘हे महामति नारद! सुनो, जो कुछ पहले मेरे साथ हुआ ॥२३॥ पहले एक राजा भुवनेश के नाम से प्रसिद्ध था। उसने एक हजार घोड़ों का अश्वमेघ यज्ञ और दस हजार वाजपेय यज्ञों को किया। उस राजा ने लाखों और करोड़ों गायों और सोने के सिक्के, वस्त्र, रथ, हाथी, घोड़े और कन्याओं को ब्राह्मणों को दान दिया। उसने पृथ्वी का पालन करते हुए अपने राज्य में विष्णु की प्रशंसा और अन्य की प्रशंसा में गाना गाने को रोक दिया। उसने घोषणा की—‘अगर कोई विष्णु की प्रशंसा में या किसी अन्य की प्रशंसा में भी गाता है, वह मेरे द्वारा मार दिया जायेगा। वेदों द्वारा ही महान् व्यक्ति पूजा के योग्य होते हैं। स्त्रियाँ सदा मेरे विषय में गा सकती हैं और सूत और मागध केवल मेरा गीत गाएँ ॥२४-२८॥’ ऐसी आज्ञा देकर महा तेजस्वी राजा ने राज्य में प्रजा का पालन किया। राजा की राजधानी के पास हरिमित्र नाम से प्रसिद्ध एक ब्राह्मण रहता था। वह विष्णु का भक्ता और सर्वद्वन्द्वों (राग द्वेष आदि) से रहित था। वह नदियों के किनारे पहुँचकर भगवान् विष्णु की पूजा करता था। वह मिठाई, खीर, धी, दही, मालपुआ आदि नैवेद्य देकर सुचित होकर प्रतिमा को प्रणाम करके विष्णु की प्रशंसा में ताल और वर्ण से युक्त भजन गाया करता था। वह अत्यन्त भक्तिभाव से युक्त अन्तःकरण से भजन गाता था। इस प्रकार वह अपना समय बिताता था। एक बार राजा के आदेश से गुप्तचर लोग वहाँ आये ॥२९-३३॥ उन्होंने पूर्ण रूप से पूजा आदि की सामग्री को नष्ट करके उस ब्राह्मण को पकड़कर राजा के सामने पेश किया ॥३४॥ तब उस दुर्बुद्धि राजा ने ब्राह्मण को फटकार कर उसका सब धन आदि लेकर अपने राज्य से बाहर कर दिया ॥३५॥ म्लेच्छों ने भगवान् विष्णु की प्रतिमा को वहाँ आकर ले लिया और चले गये। समय बीतने

प्रतिमां च हरेश्वैव म्लेच्छा हृत्वा ययुः पुनः। ततः कालेन महता कालधर्ममुपेयिवान्॥३६॥  
स राजा सर्वलोकेषु पूज्यमानः समंततः। क्षुधार्तश्च तथा खिन्नो यममाह सुदुःखितः॥३७॥  
क्षुत्तृद् च वर्तते देव स्वर्गतस्यापि मे सदा। मया पापं कृतं किं वा किं करिष्यामि वै यम॥३८॥

### यम उवाच

त्वया हि सुमहत्पापं कृतमज्ञानमोहतः। हरिमित्रं प्रति तदा वासुदेवपरायणम्॥३९॥  
हरिमित्रे कृतं पापं वासुदेवार्चनादिषु। तेन पापेन संप्राप्तः क्षुद्रोगस्त्वां सदा नृप॥४०॥  
दानयज्ञादिकं सर्वं प्रनष्टं ते नराधिप। गीतवाद्यसमोपेतं गायमानं महामतिम्॥४१॥  
हरिमित्रं समाहृय हृतवानसि तद्भनम्। उपहारादिकं सर्वं वासुदेवस्य सन्निधौ॥४२॥  
तव भृत्यैसदा लुप्तं पापं चक्रुस्त्वदाज्ञया। हरेः कीर्तिं विना चान्यद्ब्राह्मणेन नृपोत्तम॥४३॥  
न गेययोगे गातव्यं तस्मात्पापं कृतं त्वया। नष्टस्ते सर्वलोकोद्य गच्छ पर्वतकोटरम्॥४४॥

पूर्वोत्सृष्टं स्वदेहं तं खादन्नित्यं निकृत्य वै।

तस्मिन् कोणे त्विमं देहं खादन्नित्यं क्षुधान्वितः॥४५॥  
महानिरयसंस्थस्त्वं यावन्मन्वंतरं भवेत्। मन्वंतरे ततोऽतीते भूम्यां त्वं च भविष्यसि॥४६॥  
ततः कालेन संप्राप्य मानुष्यमवगच्छसि॥

पर विश्व में पूजित वह राजा मृत्यु को प्राप्त हुआ। वह भूख से पीड़ित था और दुःखी था। उसने यम से कहा। ३६-३७। ‘हे यमराज! यद्यपि मैं स्वर्ग में आ गया हूँ। मुझे सदा भूख और प्यास सताती है। मैंने क्या पाप किया है? मैं क्या करूँ?’ ३८।।

### यम बोले

‘तुमने हरिमित्र और विष्णु की पूजा के सम्बन्ध में पाप किया है। हे राजा! उस पाप के कारण तुमको क्षुधा रोग प्राप्त हुआ है। यह अज्ञान और मोह वश तुमसे हुआ है। वह महान पाप तुमने भगवान विष्णु भक्त हरिमित्र के साथ किया। ३९-४०।। हे राजा! उस पाप से तुम्हारा दान और यज्ञादि सब नष्ट हो गया। गीत वाद्य सहित भजन करते हुए बुद्धिमान ब्राह्मण हरिमित्र को पकड़वाकर तुमने उसका धन भी अपहरण कर लिया और विष्णु की पूजा में भेंट चढ़ाये गये सब उपहारों को ले लिया। तुम्हारे सिपाहियों द्वारा वे सब वस्तुएँ लूट ली गयीं। तुम्हारी आज्ञा से उन्होंने इन सब पापों को किया। हे राजा! विष्णु की प्रशंसा को छोड़कर एक ब्राह्मण के द्वारा अपने संगीत क्रियाकलाप के दौरान और कुछ नहीं गाना चाहिए। अतः तुम्हारे द्वारा इस बहुत बड़े पाप कर्म से तुम्हारा सब लोक स्वर्ग आदि नष्ट हो गया। अब तुम पहाड़ की गुफा में जाओ। ४१-४४।। तुम निरन्तर अपने शरीर को काटो और काट के खाते हुए अपनी भूख को शान्त करो, जैसा कि पहले तुमने किया था। अपनी भूख मिटाने में तुम अपने शरीर को खाते हुए ऐसा अनुभव करो जैसा कि महानरक में पड़े हो। ऐसा तब तक करो जब तक

### गानबंधुरुवाच

एवमुक्त्वा यमो विद्वांस्तत्रैवांतरधीयत॥४७॥

हरिमित्रो विमानेन स्तूयमानो गणाधिष्ठैः। विष्णुलोकं गतः श्रीमान् संगृह्य गणबांधवान्॥४८॥  
 भुवनेशो नृपो ह्यस्मिन् कोटे पर्वतस्य वै। खादमानः शब्दं नित्यमास्ते क्षुत्तद्समन्वितः॥४९॥  
 अद्राक्षं तं नृपं सर्वमेतन्ममोक्तवान्। समालोक्याहमाज्ञाय हरिमित्रं समेविवान्॥५०॥  
 विमानेनार्कवर्णेन गच्छत्तममरैर्वृतम्। इन्द्रद्युम्नप्रसादेन प्राप्तं मे ह्यायुरुक्तमम्॥५१॥  
 तेनाहं हरिमित्रं वै दृष्टवानस्मि सुव्रत। तदैश्वर्यप्रभावेन मनो मे समुपागतम्॥५२॥  
 गानविद्यां प्रति तदा किन्नरैः समुपाविशम्। षष्ठिं वर्षसहस्राणां गानयोगेन मे मुने॥५३॥  
 जिह्वा प्रसादिता स्पष्टा ततो गानमशिक्षयम्। ततस्तु द्विगुणेनैव कालेनाभूदियं पम्॥५४॥  
 गानयोगसमायुक्ता गता मन्वंतरा दश। गानाचार्योऽभवं तत्र गंधर्वाद्याः समागताः॥५५॥  
 एते किन्नरसंघा वै मामाचार्यमुपागताः। तपसा नैव शक्या वै गानविद्या तपोधन॥५६॥  
 तस्माच्छुतेन संयुक्तो मत्तस्त्वं गानमाप्नुहि। एवमुक्तो मुनिस्तं वै प्रणिष्ठत्य जगौ तदा॥५७॥  
 तच्छृणुष्व मुनिश्रेष्ठ वासुदेवं नमस्य तु॥

यह मन्वन्तर समाप्त न हो जाय। जब मन्वन्तर अपने समय पर समाप्त हो तुम पृथ्वी पर फिर मनुष्य शरीर में जन्म लोगे'॥४५-४७॥

### गानबंधु बोले

इस तरह कहकर विद्वान यमराज वहीं पर अन्तर्धानि हो गये। हरिमित्र गण के स्वामियों द्वारा स्तुति किये जाते हुए एक विमान द्वारा अपने बान्धवों सहित विष्णु लोक को गये॥४८॥ राजा भुवनेश पहाड़ की गुफा में अपने शरीर को खाते हुए टिके रहे। फिर भी वे भूख-प्यास से पीड़ित रहे॥४९॥ मैंने वहाँ राजा को देखा। उसने सब कुछ मुझको बताया। उनको देखकर और सब समझकर मैं हरिमित्र के पास गया। मैंने सूर्य के कृपा से उत्तम आयु प्राप्त की। हे सुव्रत! उन्हीं की कृपा से मैं हरिमित्र को देख सका। उनकी शक्ति के प्रभाव से मेरा मन संगीत की ओर झुका। हे मुनि! मैं संगीत कला का अध्यास करते हुए साठ हजार वर्ष किन्नरों के बीच बैठा। मेरी जीभ को आशीर्वाद मिला और वह बहुत स्पष्ट हो गयी। तब मैंने संगीत को सीखा। उसके बाद दुगुने समय में मैंने संगीत कला में पूर्णता प्राप्त की। उस समय तक दस मन्वन्तर बीत गये। मैं संगीत का गुरु हो गया। गन्धर्व और अन्य वहीं किन्नर लोग अपने गुरु के रूप में मेरे पास पहुँचे थे। हे तपोधन! महान तपस्या के बिना संगीत केवल विद्या के बल से गान विद्या नहीं प्राप्त हो सकती॥५०-५६॥ अतः आप मुझसे भलीभांति सुनकर संगीत का शान प्राप्त करोगे।" उलूक के ऐसा कहने पर मुनियों में श्रेष्ठ नारद ने उसको नवाजा॥५७॥

## मार्कंडेय उवाच

उलूकेनैवमुक्तस्तु

नारदो

मुनिसत्तमः॥५८॥

शिक्षाक्रमेण संयुक्तस्तत्र गानमशिक्षयत्। गानबंधुस्तदाहेदं त्यक्तलज्जो भवाधुना॥५९॥  
उलूक उवाच

स्त्रीसंगमे तथा गीते द्यूते व्याख्यानसंगमे। व्यवहारे तथाहारे त्वर्थानां च समागमे ॥६०॥  
आये व्यये तथा नित्यं त्यक्तलज्जस्तु वै भवेत्। न कुंचितेन गूढेन नित्यं प्रावरणादिभिः॥६१॥  
हस्तविक्षेपभावेन व्यादितास्येन चैव हि। निर्यातिजिह्वायोगेन न गेयं हि कथंचन॥६२॥  
न गायेदूर्ध्वबाहुश्च नोर्ध्वदृष्टिः कथंचन। स्वांगं निरीक्षमाणेन परं संप्रेक्षता तथा॥६३॥  
संघट्टे च तथोत्थाने कटिस्थानं न शस्यते। हासो रोषस्तथा कंपस्तथान्यत्र स्मृतिः पुनः॥६४॥  
नैतानि शस्तरूपाणि गानयोगे महामते। नैकहस्तेन शक्यं स्यात्तालसंघट्टनं मुने॥६५॥  
क्षुधार्त्तेन भयार्तेन तृष्णार्तेन तथैव च। गानयोगो न कर्तव्यो नांधकारे कथंचन॥६६॥

एवमादीनि चान्यानि न कर्तव्यानि गायता।

## मार्कंडेय उवाच

एवमुक्तः स भगवांस्तेनोक्तैर्विधिलक्षणैः। अशिक्षयत्तथा गीतं दिव्यं वर्षसहस्रकम्॥६७॥

## मार्कण्डेय बोले

उलूक की सलाह सुनकर नारद मुनि ने शिक्षा की प्रक्रिया के अनुसार संगीत कला को सीखा। उस समय उलूक ने कहा—‘अब लज्जा को छोड़ दो’॥५८-५९॥

## उलूक बोले

‘स्त्री के साथ संगम (सम्बोग) करते समय, गाते समय, जुआ खेलते समय, सभा में व्याख्यान देते समय, व्यापार करते समय और भोजन करते समय, धन संचय करते समय तथा आय-व्यय का हिसाब करते समय व्यक्ति को लज्जा छोड़ देनी चाहिये। शरीर को झुका कर कभी गाना नहीं चाहिये। न तो लिहाफ आदि को ओढ़कर, हाथ आदि से इशारा करके, मुँह से खूब चिल्लाकर, जीभ को निकालकर, कभी भी नहीं गाना चाहिए। हाथों को ऊपर उठाकर, ऊपर की ओर दृष्टि करके, अपने शरीर के अंगों को देखते हुये और न तो दूसरे आदमी की ओर देखते हुए गाना चाहिये॥६०-६३॥ ऊपर उठते समय कमर पर हाथ से पीटना न चाहिये और न तो हँसी, क्रोध और अंगों का हिलना (कंपन) होना चाहिये। ध्यान भी कहीं दूसरी ओर न होना चाहिये॥६४॥ हे महामति! संगीत (गान विद्या) के अभ्यास में ये सब प्रवृत्तियाँ उचित नहीं मानी जाती हैं। हे मुनि! एक हाथ से ताल बजाना भी सम्भव नहीं है॥६५॥ भूखे, प्यासे, भयभीत व्यक्ति को गाना न चाहिये और न तो अँधेरे में ही गाना चाहिये। संगीत के अभ्यास में ये और इससे मिलती-जुलती गलती गाने वाले को न करनी चाहिये’॥६६॥

## मार्कण्डेय बोले

उलूक द्वारा इतना सब कहने पर नारद मुनि ने अपने गुरु द्वारा बतायी विधि से एक हजार दिव्य वर्षों तक संगीत विद्या सीखा और अभ्यास किया॥६७॥ उसके बाद वह गीत प्रस्तार आदि में तथा वीणा वादन में निपुण

ततः समस्तसंपन्नो गीतप्रस्तारकादिषु। विपञ्च्यादिषु संपन्नः सर्वस्वरविभागवित्॥६८॥  
 अयुतानि च षट्ट्रिंशत्सहस्राणि शतानि च। स्वराणां भेदयोगेन ज्ञातवान्मुनिसत्तमः॥६९॥  
 ततो गंधर्वसंघाश्च किन्नराणां तथैव च। मुनिना सह संयुक्ताः प्रीतियुक्ता भवन्ति ते॥७०॥  
 गानबन्धुं प्राह प्राप्य गानमनुज्ञम्। त्वां समासाद्य संपन्नस्त्वं हि गीतविशारदः॥७१॥  
 ध्वांक्षशत्रो महाप्राज्ञ किमाचार्य करोमि ते।

## गानबन्धुरुवाच

ब्रह्मणो दिवसे ब्रह्मन् मनवस्तु चतुर्दशा॥७२॥

ततस्त्रैलोक्यसंप्लावो भविष्यति महामुने। तावन्मे त्वायुषो भावस्तावन्मे परमं शुभम्॥७३॥  
 मनसाध्याहितं मे स्यादक्षिणा मुनिसत्तम॥

## नारद उवाच

अतीतकल्पसंयोगे गरुडस्त्वं भविष्यसि॥७४॥

स्वस्ति तेऽस्तु महाप्राज्ञ गमिष्यामि प्रसीद माम्॥

## मार्कंडेय उवाच

एवमुक्त्वा जगामाथ नार्दोपि जनार्दनम्॥७५॥

श्वेतद्वीपे हृषीकेशं गापयामास गीतकान्। तत्र श्रुत्वा तु भगवान्नारदं प्राह माधवः॥७६॥

होकर सब स्वरों के विभागों के ज्ञाता हो गये। मुनियों में श्रेष्ठ नारदजी स्वरों के और छत्तीस हजार स्वरों के प्रभेदों के विशेषज्ञ हो गये॥६८-६९॥ गंधर्व और किन्नर जो मुनि के साथ संयुक्त थे वे नारद के गायन से बहुत खूब प्रसन्न हुये॥७०॥ संगीत कला की शिक्षा के बाद मुनि ने गानबन्धु से कहा है ‘आप ज्ञान विशारद हैं। आप के पास आकर मैं संगीत विद्या से सम्पन्न हो गया। हे अज्ञान के नाशक आचार्य! मैं आपके लिये क्या करूँ?’

## गानबन्धु बोले

‘हे ब्राह्मण! ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मनु होते हैं। उनके शासन के बाद तीनों लोकों का विनाश होता है। प्रलय होती है। तब तक मेरी आयु है। तब तक मेरा परम शुभ है। हे मुनिश्रेष्ठ! जो कुछ आप ने मन में निश्चय किया हो वही मेरी गुरुदक्षिणा होगी।’

## नारद बोले

‘हे महाबुद्धिमान गुरु! तुम्हारा कल्याण हो। जब यह कल्प समाप्त होगा और अगला कल्प प्रारम्भ होगा तब तुम गरुड़ होगे। मुझ पर गासन होओ। अब मैं जाऊँगा।’॥७१-७४॥

## मार्कंडेय बोले

ऐसा कहकर नारद विष्णु भगवान के पास गये॥७५॥ श्वेत द्वीप में जाकर उन्होंने विष्णु भगवान की प्रशंसा में भजन गाया। उसको सुनकर विष्णु ने कहा। ‘अब भी गाने में तुम तुंबुरु से अच्छे गायक नहीं हो॥

तुंबरोर्न विशिष्टोसि गीतैरद्यापि नारद। यदा विशिष्टो भविता तं कालं प्रवदाप्यहम्॥७७॥  
 गानबन्धुं समासाद्य गानार्थज्ञो भवानसि। मनोर्वेवस्वतस्याहमष्टाविंशतिमे युगे॥७८॥  
 द्वांपरांते भविष्यामि यदुवंशकुलोद्धवः। देवक्यां वसुदेवस्य कृष्णो नामा महामते॥७९॥  
 तदानीं मां समासाद्य स्मारयेथा यथातथम्। तत्र त्वां गीतसंपन्नं करिष्यामि महाब्रतम्॥८०॥  
 तुंबरोश्च समं चैव तथातिशयसंयुतम्। तावत्कालं यथायोगं देवगंधर्वयोनिषु॥८१॥  
 शिक्षयस्व यथान्यायमित्युक्त्वांतरधीयत। ततो मुनिः प्रणम्यैनं वीणावादनतत्परः॥८२॥  
 देवर्षिर्देवसंकाशः सर्वाभरणभूषितः। तपसां निधिरत्यंतं वासुदेवपरायणः॥८३॥  
 स्कंधं विपंचीमासाद्य सर्वलोकांश्चार सः। वारुणं याम्यमाग्नेयमैङ्गं कौबेरमेव च॥८४॥  
 वायव्यं च तथेशानं संसदं प्राप्य धर्मवित्। गायमानो हरिं समयग्वीणावादविचक्षणः॥८५॥  
 गंधर्वाप्सरसां संघैः पूज्यमानस्ततस्ततः। ब्रह्मलोकं समासाद्य कस्मिंश्चित्कालपर्यये॥८६॥  
 हाहाहृहृश्च गंधर्वौ गीतवाद्यविशारदौ। ब्रह्मणो गायकौ दिव्यौ नित्यौ गंधर्वसत्तमौ॥८७॥  
 तत्र ताभ्यां समासाद्य गायमानो हरिं प्रभुम्। ब्रह्मणा च महातेजाः पूजितो मुनिसत्तमः॥८८॥  
 तं प्रणम्य महात्मानं सर्वलोकपितामहम्। चचार च यथाकामं सर्वलोकेषु नारदः॥८९॥  
 ततः कालेन महता गृहं प्राप्य च तुंबरोः। वीणामादाय तत्रस्थे ह्यगायत महामुनिः॥९०॥  
 स्वरकल्पास्तु तत्रस्थाः षड्जाद्याः सप्त वै मताः। क्रीडतो भगवान्दृष्टा निर्गतश्च सुसत्वरम्॥९१॥

अब तुम तुंबरु से विशिष्ट होने वाले काल को मैं तुमसे कहता हूँ। गानबन्धु के पास जाकर तुम संगीत की विद्या से परिचित (ज्ञाता) हो गये हो। हे मुनि वैवस्वत मनु के अठारहवें युग के द्वापर के अन्त में मैं यदुवंश में देवकी के गर्भ में वसुदेव का पुत्र कृष्ण नाम से पैदा हुँगा। ॥७६-७९॥ उस समय मेरे पास आकर मुझको याद दिलाना। तब मैं तुमको संगीत की कला का विशेषज्ञ बना दूँगा। ॥८०॥ तब मैं तुमको तुंबरु के बराबर नहीं बल्कि उससे बढ़कर बनाऊँगा। तब तक गन्धर्वों और देवताओं से इस कला को सीखो और सिखाओ।' यह कहने के बाद विष्णु वहाँ अन्तर्धान हो गये। उसके बाद मुनि उनको प्रणाम करके वीणा बजाने में तत्पर, सब आभूषणों से भूषित देवर्षि और देवताओं के समान विष्णु के भक्त हो गये। ॥८१-८३॥ तप के भण्डार नारद मुनि काँधे पर वीणा रखकर सब लोकों में विचरण करने लगे। वह धर्मवेत्ता वीणा बजाने में दक्ष, नारद जी, वरुण, यम, अग्नि, इन्द्र, कुबेर, वायु और ईशान के लोकों की सभाओं में जाकर विष्णु की प्रशंसा के भजन गाने लगे। ॥८४-८५॥ गन्धर्वों और अप्सराओं के संघों द्वारा पूजित नारद जी किसी समय ब्रह्मलोक पहुँचे। वहाँ ब्रह्मा के दो गन्धर्व हाँ-हा, हूँहू नाम के गायक थे जो कि गान विद्या में विशारद थे। वहाँ पहुँचकर उनके साथ में महामुनि नारद ने विष्णु की प्रशंसा में भजन गाये। तेजस्वी ब्रह्मा ने मुनिश्रेष्ठ नारद की प्रशंसा की। ॥८६-८८॥ सब लोकों के पितामह ब्रह्मा को प्रणाम करके नारद अपनी इच्छानुसार सब लोकों में घूमने लगे। ॥८९॥ बहुत समय के बाद अपनी वीणा को लिए हुए तुंबरु के निवास में पहुँचे। वहाँ बैठे और गाना प्रारम्भ किया। ॥९०॥ षड्ज आदि सात सुरों को वहाँ पर बैठे हुए देखकर नारद मुनि वहाँ से तेजी से बाहर निकल गये। ॥९१॥ महामति ने अलग-अलग

शिक्षयामास बहुशस्त्र तत्र महामतिः। श्रमयोगेन संयुक्तो नारदोपि महामुनिः॥९२॥  
 सप्तस्वरांगनाः पश्यन् गानविद्याविशारदः। आसीद्वीणा समायोगे न तास्तंत्र्यः प्रपेदिरे॥९३॥  
 ततो रैवतके कृष्णं प्रणिपत्य महामुनिः। विज्ञापयदशेषं तु श्वेतद्वीपे तु यत् पुरा॥९४॥  
 नारायणेन कथितं गानयोगमनुज्ञम्। तच्छ्रुत्वा प्रहसन्कृष्णः प्राह जांबवतीं मुदा॥९५॥  
 एतं मुनिवरं भद्रे शिक्षयस्व यथाविधि। वीणागानसमायोगे तथेत्युक्त्वा च सा हरिम्॥९६॥  
 प्रहसंती यथायोगं शिक्षयामास तं मुनिम्। ततः संवत्सरे पूर्णे पुनरागम्य माधवम्॥९७॥  
 प्रणिपत्याग्रतस्तस्थौ पुनराह स केशवः। सत्यां समीपमागच्छ शिक्षयस्व यथाविधि॥९८॥  
 तथेयुक्त्वा सत्यभामां प्रणिपत्य जगौ मुनिः। तया स शिक्षितो विद्वान् पूर्णे संवत्सरे पुनः॥९९॥  
 वासुदेवनियुक्तोऽसौ रुक्मिणीसदनं गतः। अंगनाभिस्ततस्ताभिर्दासीभिर्मुनिसत्तमः ॥१००॥  
 उक्तोऽसौ गायमानोपि न स्वरं वेत्सि वै मुने। ततः श्रमेण महता वत्सरत्रयसंयुतम्॥१०१॥  
 शिक्षितोसौ तदा देव्या रुक्मिण्यापि जगौ मुनिः। ततः स्वरांगनाः प्राप्य तंत्रीयोगं महामुनेः॥१०२॥  
 आहूय कृष्णो भगवान् स्वयमेव महामुनिम्। अशिक्षयदमेयात्मा गानयोगमनुज्ञम्॥१०३॥  
 ततोऽतिशयमापन्नस्तुंबरोर्मुनिसत्तमः ।  
 ततो ननर्त देवर्षिः प्रणिपत्य जनार्दनम्॥१०४॥  
 उवाच च हृषीकेशः सर्वज्ञस्त्वं महामुने।  
 प्रहस्य गानयोगेन गायस्व मम सन्निधौ॥१०५॥

स्थानों पर संगीत को सीखा और सिखाया तो नारद मुनि भी बहुत थक गये॥९२॥ यद्यपि वह गान विद्या में विशेषज्ञ थे, वह भजन को आदि सात स्वरों की देवियों को देखते हुए वहाँ बैठ गये। लेकिन जब वह वीणा के साथ गते रहे वे वीणा के तार तक नहीं उतरे॥९३॥ उसके बाद रैवतक पर्वत पर जाकर महामुनि नारद ने कृष्ण को प्रणाम किया और उनको बताया जो श्वेत द्वीप में नारायण ने गान विद्या देने के सम्बन्ध में पहले कहा था। यह सुनकर कृष्ण मुस्कुराते हुए और प्रसन्न मुद्रा में जाम्बवती से कहा॥९४-९५॥ “हे भद्र महिला! इन श्रेष्ठ मुनि नारद को वीणा पर गाना सिखाओ।” ऐसा कहने पर हँसती हुई जाम्बवती ने नारद मुनि को सिखाया। जब एक वर्ष बीत गये तब फिर नारद मुनि विष्णु के पास गये। उनको प्रणाम करके उनके सामने खड़े हो गये। विष्णु ने कहा। सत्यभामा के पास जाओ और उनसे उचित प्रशिक्षण प्राप्त करो॥९६-९८॥ ऐसा कहने पर विष्णु को प्रणाम करके मुनि सत्यभामा के पास गये। सत्यभामा ने पूरे एक साल विद्वान नारद को फिर शिक्षा दी। श्री कृष्ण की प्रेरणा से रुक्मिणी के घर गये। वहाँ महिलाओं और दासियों से धिरी हुई रुक्मिणी ने नारद से कहा। ‘आप दीर्घकाल से गते रहे हैं। लेकिन आप सही तौर से स्वरों को नहीं जानते हैं।’ उसके बाद बहुत परिश्रम से रुक्मिणी देवी द्वारा शिक्षित होकर तब मुनि ने गाया। स्वरों की देवियों ने वीणा के तारों पर गानों को सुना॥९९-१०२॥ भगवान् कृष्ण ने स्वयं महामुनि नारद को बुलाकर गान योग को सिखाया॥१०३॥ तब मुनिश्रेष्ठ नारद तुंबरु से बढ़कर हो गये। तब देवर्षि कृष्ण को प्रणाम करके नाचने लगे॥१०४॥ विष्णु जी हँसे

एतते प्रार्थितं प्राप्तं मम लोके तथैव च।  
 नित्यं तुंबरुणा सार्धं गायस्व च यथातथम्॥१०६॥  
 एवमुक्तो मुनिस्तत्र यथायोगं चचार सः।  
 यदा संपूजयन् कृष्णो रुद्रं भुवननायकम्॥१०७॥  
 तदा जगौ हरेस्तस्य नियोगाच्छंकराय वै।  
 रुक्मिण्या सह सत्या च जांबवत्या महामुनिः॥१०८॥  
 कृष्णोन च नृपश्रेष्ठ श्रुतिजातिविशारदः।  
 एष वो मुनिशार्दूलाः प्रोक्तो गीतक्रमो मुनेः॥१०९॥  
 ब्राह्मणो वासुदेवाख्यां गायमानो भृशं नृप।  
 हरेः सालोक्यमान्नोति रुद्रगानोऽधिको भवेत्॥११०॥  
 अन्यथा नरकं गच्छेद्वायमानोन्यदेव हि।  
 कर्मणा मनसा वाचा वासुदेवपरायणः॥१११॥  
 गायन् शृण्वस्तमान्नोति तस्माद्वेयं परं विदुः॥११२॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे  
 वैष्णवगीतकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः॥३॥

और कहा, “हे महामुनि! अब तुम सर्वज्ञ हो। मेरे सामने पुनः गान गाओ॥१०५॥ जो तुम खोज रहे थे वह अभीष्ट ज्ञान तुमको प्राप्त हो गया। इसलिए मेरी प्रशंसा में तुंबरु के साथ गाओ”॥१०६॥ ऐसा कहने पर उन्होंने तदनुसार वैसा ही किया। जब कृष्ण ने लोकों के स्वामी शिव की पूजा की, तब विष्णु की आज्ञा से उन्होंने शिव की प्रशंसा में भजन गये। उन्होंने रुक्मिणी, सत्या और जांबवती तथा कृष्ण के साथ में गाना गाया। हे श्रेष्ठ राजा! इस प्रकार काल क्रम से नारद मुनि सातों स्वरों में विशेषज्ञ हो गये। हे श्रेष्ठ मुनियों! इस प्रकार संगीत विद्या की प्राप्ति धीरे-धीरे नारद को हुई और मैंने तुमको बताया॥१०७-१०९॥ हे राजन्! वह ब्राह्मण जो कि विष्णु देव की प्रशंसा में गाता है वह विष्णुलोक को प्राप्त करता है। जो रुद्र की प्रशंसा में गाता है वह इसकी अपेक्षा अधिक होगा। विष्णु और शिव के अतिरिक्त अन्य किसी की भी प्रशंसा में गायेगा वह नरक में जायेगा। जो कोई मन से, वाणी से और शरीर से विष्णु का भक्त है, जो उनके विषय में गाता है और जो विष्णु के माहात्म्य को सुनता है वह उनको प्राप्त होता है। अतः वे लोग जानते हैं कि विष्णु सबसे बड़े स्वामी हैं। अतः उनकी प्रशंसा गेय है॥११०-११२॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में वैष्णव गीत कथन  
 (नारद द्वारा संगीत विद्या की प्राप्ति) नामक तीसरा अध्याय समाप्त॥३॥

## चतुर्थोऽध्यायः विष्णुभक्तकथनम्

ऋषय ऊचुः

वैष्णवा इति ये प्रोक्ता वासुदेवपरायणाः। कानि चिह्नानि तेषां वै तत्रो ब्रूहि महामते॥१॥  
तेषा वा किं करोत्येष भगवान् भूतभावनः। एतन्मे सर्वमाचक्षव सूत सर्वार्थवित्तम्॥२॥

सूत उवाच

अंबरीषेण वै पृष्ठो मार्कंडेयः पुरा मुनिः। युष्माभिरद्य यत् प्रोक्तं तद्वदामि यथातथम्॥३॥

मार्कंडेय उवाच

शृणु राजन्यथान्यायं यन्मां त्वं परिपृच्छसि। यत्रास्ते विष्णुभक्तस्तु तत्र नारायणः स्थितिः॥४॥  
विष्णुरेव हि सर्वत्र येषां वै देवता स्मृता। कीर्त्यमाने हरौ नित्यं रोमांचो यस्य वर्तते॥५॥  
कंपः स्वेदस्तथाक्षेषु दृश्यते जलबिंदवः। विष्णुभक्तिसमायुक्तान् श्रौतस्मार्तप्रवर्तकान्॥६॥  
प्रीतो भवति यो दृष्ट्वा वैष्णवोऽसौप्रकीर्तिः। नान्यदाच्छादयेद्वस्त्रं वैष्णवो जगतोऽरणे॥७॥  
विष्णुभक्तमथायांतं यो दृष्ट्वा सन्मुखस्थितः। प्रणामादि करोत्येवं वासुदेवे यथा तथा॥८॥  
स वै भक्त इति ज्ञेयः स जयी स्याज्जगत्रये। रुक्षाक्षराणि शृण्वन्वै तथा भागवतेरितः॥९॥

चौथा अध्याय

## विष्णु भक्त कथन

ऋषि बोले

हे महामति! जो वासुदेव को समर्पित भक्त हैं और वैष्णव कहे जाते हैं उन वैष्णव भक्तों के कौन चिह्न हैं?॥१॥  
सब अर्थों को जानने वालों में श्रेष्ठ। हे सूत! सब प्राणियों के स्वष्टा और रक्षक भगवान उन भक्तों के लिए क्या  
करते हैं॥२॥

सूत बोले

पहले इसी विषय पर अम्बरीष ने मार्कंडेय से पूछा था। उन्होंने अम्बरीष को जैसा बताया था वही अब  
मैं तुमसे कहता हूँ॥३॥

मार्कंडेय बोले

हे राजा! सुनो। जो तुम मुझसे पूछते हो यह न्यास संगत है। नारायण वहाँ उपस्थित हैं जहाँ कि विष्णु भक्त  
रहता है॥४॥ जहाँ उनकी मूर्ति स्थित है सर्वत्र विष्णु ही हैं। उनकी स्तुति और कीर्तन करने पर जिसके रोमांच हो  
जाते हैं॥५॥ शरीर कंपता है। पसीना निकलता है और आँखों में जल की बिन्दु दिखायी देते हैं। जो विष्णु के  
भक्त को देखकर प्रसन्न होता है और वे जो श्रुति और स्मृति में विष्णु के भक्तों के लिए कहे गये आचरणों से युक्त  
लोगों को देखकर प्रसन्न होता है उसको वैष्णव कहा जाता है। एक वैष्णव अपनी शरीर की रक्षा के लिए आवश्यक  
वस्त्रों से अधिक वस्त्र नहीं पहनता है॥६-७॥ विष्णु के भक्त को आता देखकर, वैष्णव आमने-सामने खड़ा होकर  
उसको प्रणाम करता है तो वह स्वयं वैष्णव है। वह प्रणाम, विष्णु को प्रणाम करने के बराबर है॥८॥ उसको भक्त  
लिंगं पूर्णं - 42

प्रणामपूर्वं क्षांत्या वै यो वदेद्वैष्णवो हि सः। गंधपुष्पादिकं सर्वं शिरसा यो हि धारयेत्॥१०॥  
 हरे: सर्वमितीत्येवं मत्त्वासौ वैष्णवः स्मृतः। विष्णुक्षेत्रे शुभान्येव करोति स्नेहसंयुतः॥११॥  
 प्रतिमां च हरेनित्यं पूजयेत्प्रथतात्मवान्। विष्णुभक्तः स विज्ञेयः कर्मणा मनसा गिरा॥१२॥  
 नारायणपरो नित्यं महाभागवतो हि सः। भोजनाराधनं सर्वं यथाशक्त्या करोति यः॥१३॥  
 विष्णुभक्तस्य च सदा यथान्यायं हि कथ्यते। नारायणपरो विद्वान्यस्यान्नं प्रीतमानसः॥१४॥  
 अश्वाति तद्वरेरास्यं गतमन्नं न संशयः। स्वार्चनादपि विश्वात्मा प्रीतो भवति माधवः॥१५॥  
 महाभागवते तच्च दृष्ट्वासौ भक्तत्सलः। वासुदेवपरं दृष्ट्वा वैष्णवं दग्धकिल्बिषम्॥१६॥  
 देवापि भीतास्तं यांति प्रणिपत्य यथागतम्। श्रूयतां हि पुरावृत्तं विष्णुभक्तस्य वैभवम्॥१७॥  
 दृष्ट्वा यमोऽपि वै भक्तं वैष्णवं दग्धकिल्बिषम्। उत्थाय प्रांजलिर्भूत्वा ननाम भृगुनंदनम्॥१८॥  
 तस्मात्संपूजयेद्वत्त्या वैष्णवान्विष्णुवन्नरः। स याति विष्णुसामीप्यं नात्र कार्या विचारणा॥१९॥

अन्यभक्तसहस्रेभ्यो विष्णुभक्तो विशिष्यते॥

विष्णुभक्तसहस्रेभ्यो रुद्रभक्तो विशिष्यते। रुद्रभक्तात्परतरो नास्ति लोके न संशयः॥२०॥  
 तस्मात्तु वैष्णवं चापि रुद्रभक्तमथापि वा। पूजयेत्सर्वयत्ने धर्मकामार्थमुक्त्ये॥२१॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे विष्णुभक्तकथनं  
 नाम चतुर्थोऽध्यायः॥४॥

के रूप में जानना चाहिए। वह तीनों लोकों में विजयी होता है। जो कठोर शब्दों को सुनकर भी सहनशीलता के साथ बोलता है। जो गन्ध, सुगन्धित पुष्प, आदि यह समझकर धारण करता है कि यह सब विष्णु ही है उसको वैष्णव समझना चाहिए॥१९-२०॥ विष्णु के पवित्र क्षेत्र में जो शुभ कार्यों को प्रेमपूर्वक करता है, वह वैष्णव है। जो पवित्र आत्मा के साथ विष्णु की प्रतिमा का पूजन करेगा वह विष्णु के भक्त के रूप में प्रसिद्ध होगा॥२१-२३॥ जो यथाशक्ति भोजन देता है और दूसरे विष्णु भक्त की आराधना अपनी योग्यता के अनुसार करता है वह वास्तव में वैष्णव है॥२४॥ अगर विष्णु का विद्वान भक्त प्रसन्नचित्त होकर किसी का भोजन स्वीकार करता है, वह भोजन निःसन्देह विष्णु के मुख में जाता है। विष्णु विश्वात्मा हैं। अपने भक्तों के प्रिय हैं॥२५॥ वे अपनी पूजा से अधिक प्रसन्न होते हैं जब कि वह देखते हैं कि उनके भक्त की पूजा उसी प्रकार होती है॥२६॥ विष्णु को समर्पित वैष्णव को देखकर और जिसने अपने पापों को जला दिया है उससे देवता तक डरते हैं। वे अपने ढंग से उसको प्रणाम करके चले जाते हैं। विष्णु के भक्त का प्रभाव दिखाने वाली एक पुरानी घटना को सुनो। भृगु का पुत्र जो विष्णु का भक्त था और अपने पापों को जला दिया था—उसको देखकर यम ने उठकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह वैष्णवों की विष्णुवत् पूजा करे। वह व्यक्ति विष्णु के समीप जाता है। इसमें विचार करने की बात नहीं है। अन्य हजारों भक्तों से विष्णु भक्त विशिष्ट होता है। विष्णु के हजारों भक्तों से रुद्र का भक्त विशिष्ट होता है। संसार में रुद्र भक्त से बढ़कर कोई दूसरा नहीं है। इसलिए वैष्णव को और विष्णु भक्त को सब प्रयत्नों से धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति के लिए पूजा करनी चाहिए॥२६-२१॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में विष्णु भक्त कथन  
 नामक चौथा अध्याय समाप्त॥४॥

## पंचमोऽध्यायः श्रीमत्याख्यानम्

ऋषय ऊचुः

ऐक्षवाकुरंबरीषो वै वासुदेवपरायणः। पालयामास पृथिवीं विष्णोराज्ञापुरःसरः॥१॥  
श्रुतमेतन्महाबुद्धे तत्सर्वं वक्तुमर्हसि। नित्यं तस्य हरेश्चक्रं शत्रुरोगभयादिकम्॥२॥  
हंतीति श्रूयते लोके धार्मिकस्य महात्मनः। अंबरीषस्य चरितं तत्सर्वं ब्रूहि सत्तमा॥३॥  
माहात्म्यमनुभावं च भक्तियोगमनुत्तमम्। यथावच्छ्रोतुमिच्छामः सूत वक्तुं त्वमर्हसि॥४॥

सूत उवाच

श्रूयतां मुनिशार्दूलाश्चरितं तस्य धीमतः। अंबरीषस्य माहात्म्यं सर्वपापहरं परम्॥५॥  
त्रिशंकोर्दयिता भार्या सर्वलक्षणशोभिता। अंबरीषस्य जननी नित्यं शौचसमन्विता॥६॥  
योगनिद्रासमारुद्धं शेषपर्यकशायिनम्। नारायणं महात्मानं ब्रह्मांडकमलोद्धवम्॥७॥  
तमसा कालरुद्राख्यं रजसा कनकांडजम्। सत्त्वेन सर्वगं विष्णुं सर्वदेवनमस्कृतम्॥८॥  
अर्चयामाम सततं वाङ्मनःकायकर्मभिः। माल्यदानादिकं सर्वं स्वयमेवमचीकरत्॥९॥  
गंधादिपेषणं चैव धूपद्रव्यादिकं तथा। भूमेरालेपनादीनि हविषां पचनं तथा॥१०॥

### पांचवां अध्याय श्रीमती की कथा

ऋषिगण बोले

इदवाकु वंशीय राजा अम्बरीष पृथ्वी पर राज्य करते थे। वह वासुदेव के समर्पित भक्त थे॥१॥। वह सदा विष्णु की आज्ञा का अनुसरण करते थे। हे महा बुद्धिमान सूत जी! हम लोगों ने उनके विषय में संक्षेप में सुना है किन्तु विस्तार से अब आप हम लोगों को बताइए। जगत् में ऐसा सुना जाता है कि विष्णु का चक्र शत्रु, रोग और भय आदि को नित्य दूर करता है। धार्मिक राजा अम्बरीष के सब चरित को आप कहिए। हे सूत! हम लोग उनकी महानता, उनकी योग्यता और उत्तम भक्ति को सुनना चाहते हैं। आप इसको सुनाइए॥२-४॥

सूत बोले

हे श्रेष्ठ मुनियों! उस बुद्धिमान राजा अम्बरीष के सब पाणीं को हरने वाले चरित और माहात्म्य को सुनिए। त्रिशंकु की प्यारी पत्नी अम्बरीष की माता स्वब उत्तम लक्षणों से युक्त सदा शुद्धता से समन्वित थी॥५॥। उसका नाम पद्मावती था। वह योग निद्रा में विराजमान तमस् से काल रुद्र और रजस् से हिरण्य अण्ड से उत्पन्न सब देवताओं द्वारा नमस्कृत, सत्त्व से सर्वव्यापी भगवान विष्णु की वाणी, मन, शरीर और कर्म से पूजा करती थी। वह स्वयं माला गन्ध आदि पेषण, धूप, द्रव्य आदि, भूमि का लेपन होम, आदि स्वयं करती थी। इन सब कार्यों

तत्कौतुकसमाविष्टा स्वयमेव चकार सा। शुभा पद्मावती नित्यं वाचा नारायणेति वै॥११॥  
 अनन्तेत्येव सा नित्यं भाषमाणा पतिव्रता। दशवर्षसहस्राणि तत्परेणांतरात्मना॥१२॥  
 अर्चयामास गोविंदं गंधपुष्पादिभिः शुचिः। विष्णुभक्तान्महाभागान् सर्वपापविवर्जितान्॥१३॥  
 दानमानार्चनैर्नित्यं धनरत्नैरतोषयत्। ततः कदाचित्सा देवी द्वादशीं समुपोष्य वै॥१४॥  
 हरेरग्ने महाभागा सुष्वाप पतिना सह। तत्र नारायणो देवस्तामाह पुरुषोत्तमः॥१५॥  
 किमिच्छसि वरं भद्रे मत्तस्त्वं द्वूहि भामिनि। सा दृष्टा तु वरं वन्रे पुत्रो मे वैष्णवो भवेत्॥१६॥  
 सार्वभौमो महातेजाः स्वकर्मनिरतः शुचिः। तथेत्युक्ता ददौ तस्यै फलमेकं जनार्दनः॥१७॥  
 सा प्रबुद्धा फलं दृष्टा भर्त्रे सर्वं न्यवेदयत्। भक्षयामास संहष्टा फलं तद्रमानसा॥१८॥  
 ततः कालेन सा देवी पुत्रं कुलविवर्धनम्। असूत सा सदाचारं वासुदेवपरायणम्॥१९॥  
 शुभलक्षणसंपन्नं चक्रांकिततनूरुहम्। जातं दृष्टा पिता पुत्रं क्रियाः सर्वाश्रुकार वै॥२०॥  
 अंबरीप इति ख्यातो लोके समभवत्प्रभुः। पितर्युपरते श्रीमानभिषित्तो महामुनिः॥२१॥  
 मंत्रिष्वाधाय राज्यं च तप उग्रं चकार सः। संवत्सरसहस्रं वै जपन्नारायणं प्रभुम्॥२२॥  
 हत्पुंडरीकमध्यस्थं सूर्यमंडलमध्यतः। शंखचक्रगदापद्माधारयंतं चतुर्भुजम्॥२३॥  
 शुद्धजांबूनदनिभं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्। सर्वाभरणसंयुक्तं पीतांबरधरं प्रभुम्॥२४॥

के करने में वह उत्साह और इच्छा से भरी रहती थी। वह शुभा पतिव्रता पद्मावती नित्य अपनी जिहा से सदा नारायण, अनन्त आदि उच्चारण करती रहती थी। वह शुद्ध अन्तरात्मा से विष्णु को समर्पित थी। उसने दस हजार वर्षों तक गन्ध पुष्प आदि से विष्णु की पूजा की। १६-१२। वह सदा सब पापों से रहित विष्णु भक्त महात्माओं को नित्य दान-मान और पूजा धन और रत्नों को देकर सन्तुष्ट करती थी। इसके बाद वह देवी द्वादशी का व्रत करके पति के साथ सोयी हुई थी। वहाँ पुरुषोत्तम नारायण भगवान ने उससे कहा। १३-१५। ‘हे भद्र महिला! हे रानी! तुम क्या चाहती हो? मुझसे बर माँगो।’ उसने नारायण को देखकर यह वरदान माँगा कि मेरा पुत्र वैष्णव हो। वह सप्तांष्ट्र हो, तेजस्वी हो, शुद्ध और अपने कर्तव्य पालन में सदा लगा रहने वाला हो। विष्णु ने कहा, ‘ऐसा ही होगा।’ और उसको एक फल दिया। १६-१७। जागने पर उसने फल को देखा और प्रत्येक वात को अपने पति से कहा। उसने अपना मन विष्णु की ओर लगाकर प्रसन्न होकर उस फल को खा लिया। १८। तब उचित समय आने पर रानी ने अपने कुल को बढ़ाने वाले भगवान विष्णु के भक्त सदाचारी शुभ लक्षणों से युक्त शरीर पर चक्र चिह्नों से अंकित पुत्र को जन्म दिया। पिता ने पुत्र को देखकर उसका यथोचित सब संस्कारों को कराया। १९-२०। जगत में वह पुत्र अम्बरीष नाम से प्रसिद्ध हुआ। पिता के मरने के बाद उस श्रीमान् अम्बरीष का अभिषेक किया गया और वह राजा बनाया गया। उसने अपने राज्य को मन्त्रियों की देखभाल में सौंपकर उग्र तपस्या की। वह साधु हो गया। एक हजार वर्ष तक भगवान् नारायण का नाम जपते हुए उग्र तपस्या की। २१-२२। उसने हृदय कमल के मध्य में स्थित, सूर्य मण्डल के मध्य से आगत शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये चार भुजा वाले शुद्ध सोने की तरह चमकने वाले, ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक, सब आभरणों से संयुक्त

श्रीवत्सवक्षसं देवं पुरुषं पुरुषोत्तमम्। ततो गरुडमारुह्य सर्वदेवैरभिष्टुतः॥२५॥  
 आजगाम स विश्वात्मा सर्वलोकनमस्कृतः। ऐरावतमिवाचिंत्यं कृत्वा वै गरुडं हरिः॥२६॥  
 स्वयं शक्र इवासीनस्तमाह नृपसत्तमम्। इंद्रोऽहमस्मि भद्रं ते किं ददामि वरं च ते॥२७॥  
 सर्वलोकेश्वरोऽहं त्वां रक्षितुं समुपागतः॥  
 अंबरीष उवाच

नाहं त्वामभिसंधाय तप आस्थितवानिह॥२८॥

त्वया दत्तं च नेष्यामि गच्छ शक्र यथासुखम्। मम नारायणो नाथस्तं नमामि जगत्पतिम्॥२९॥  
 गच्छेन्द्र माकृथास्त्वत्र मम बुद्धिविलोपनम्। ततः प्रहस्य भगवान् स्वरूपमकरोद्धरिः॥३०॥  
 शार्ङ्गचक्रगदापाणिः खड्गहस्तो जनार्दनः। गरुडोपरि सर्वात्मा नीलाचल इवापरः॥३१॥  
 देवगंधर्वसंघैश्च स्तूयमानः समंततः। प्रणम्य स च संतुष्टस्तुष्टाव गरुडध्वजम्॥३२॥  
 प्रसीद लोकनाथेश मम नाथ जनार्दन। कृष्ण विष्णो जगन्नाथ सर्वलोकनमस्कृत॥३३॥  
 त्वमादिस्त्वमनादिस्त्वमनन्तः पुरुषः प्रभुः। अप्रमेयो विभुर्विष्णुर्गोविंदः कमलेक्षणः॥३४॥  
 महेश्वरांगजो मध्ये पुष्करः खगमः खगः। कव्यवाहः कपाली त्वं हव्यवाहः प्रभंजनः॥३५॥

पीताम्बरधारी, छाती पर श्री वस्त्र चिह्न से युक्त पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु का ध्यान किया। उसके बाद विश्वात्मा, देवताओं द्वारा नमस्कृत सब लोकों से पूजित अप्रतिम ऐरावत की पीठ पर इन्द्र की तरह बैठे हुए भगवान् विष्णु स्वयं वहाँ इन्द्र के वेष में आये और श्रेष्ठ राजा अम्बरीष से कहा। २३-२६॥

“तुम्हारा कल्याण हो, मैं इन्द्र हूँ। मैं तुम्हें क्या वरदान दूँ? मैं त्रिलोक का स्वामी हूँ। मैं तुम्हारी सहायता के लिए आया हूँ।”

### अम्बरीष बोले

“मैंने तपस्या करते हुए आपका ध्यान नहीं किया। आपके द्वारा दी गयी किसी वस्तु की मैं कामना नहीं करता हूँ। हे इन्द्र! आप आराम से वापस चले जायें। मेरे स्वामी तो नारायण हैं। मैं उस विश्वात्मा के सामने न तमस्तक हूँ। मेरी बुद्धि को नष्ट करने वाली किसी वस्तु को न दो” इसके बाद भगवान् विष्णु ने हँसकर अपना विष्णुरूप धारण कर लिया। २७-३०॥

शंख, चक्र, गदा और खड्ग हाथ में लिए गरुड़ पर सवार सब की आत्मा, दूसरे नील पर्वत के तुल्य, देवता गन्धर्व के संघों द्वारा स्तुति किये जाते हुए भगवान् विष्णु को प्रणाम करके राजा अम्बरीष सन्तुष्ट हुये और गरुडध्वज भगवान् विष्णु की स्तुति की। ३१-३२॥

हे लोकनाथ, मेरे स्वामी, जनार्दन, हे कृष्ण, हे विष्णु, हे जगन्नाथ, हे सब लोकों में नमस्कृत! तुम आदि हो, तुम अनादि हो, तुम अनन्त हो। तुम पुरुष हो। तुम प्रभु हो। तुम अतुलनीय हो। तुम व्यापक हो। तुम विष्णु हो। तुम गोविन्द हो। तुम कमलनयन हो। तुम महेश्वर के शरीर से उत्पन्न हो। आप की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ है। तुम आकाश में व्याप्त हो। तुम हृदय वाहक हो। तुम वायु हो। तुम पवित्र कृत्यों में आनन्दित होने वाले हुआ है।

आदिदेवः क्रियानन्दः परमात्मात्मनि स्थितः।  
त्वां प्रपन्नोस्मि गोविंदं जय देवकिनन्दन। जय देव जगन्नाथं पाहि मां पुष्करेक्षण॥३६॥  
नान्या गतिस्त्वदन्या मे त्वमेव शरणं मम॥

## सूत उवाच

तमाह भगवान्विष्णुः किं ते हृदि चिकीर्षितम्॥३७॥  
तत्सर्वं ते प्रदास्यामि भक्तोसि मम सुव्रत। भक्तिप्रियोऽहं सततं तस्माद्वातुमिहागतः॥३८॥

## अंबरीष उवाच

लोकनाथं परानन्दं नित्यं मे वर्तते मतिः। वासुदेवपरो नित्यं वाड्मनःकायकर्मभिः॥३९॥  
यथा त्वं देवदेवस्य भवस्य परमात्मनः। तथा भवाम्यहं विष्णो तव देव जनार्दन॥४०॥  
पालयिष्यामि पृथिवीं कृत्वा वै वैष्णवं जगत्। यज्ञहोमार्चनैश्चैव तर्पयामि सुरोत्तमान्॥४१॥  
वैष्णवान्यालयिष्यामि निहनिष्यामि शात्रवान्। लोकतापभये भीत इति मे धीयते मतिः॥४२॥

## श्रीभगवानुवाच

एवमस्तु यथेच्छं वै चक्रमेत्सुदर्शनम्। पुरा रुद्रप्रसादेन लब्धं वै दुर्लभं मया॥४३॥  
ऋषिशापादिकं दुःखं शत्रुरोगादिकं तथा। निहनिष्यति ते नित्यमित्युक्त्वांतरधीयत॥४४॥

हो। तुम आत्मा स्थित परमात्मा हो। तुम गोविन्द हो। हे देवकी नन्दन! हे जगन्नाथ! हे कमलनयन! आप की जय हो। मुझ पर प्रसन्न हो जाओ। मैं तुम्हारी शरण में हूँ। मेरी रक्षा करो। आपसे अन्य मेरी कोई गति नहीं है। तुम्हीं मेरी शरण हो॥३३-३८॥

## सूत बोले

तब भगवान् विष्णु ने राजा अम्बरीष से कहा “तुम्हारे हृदय में क्या करने की इच्छा है। हे सुव्रत! तुम मेरे भक्त हो। वह सब मैं तुमको दूँगा। मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूँ। तुम मेरे भक्त हो। मैं भक्तिप्रिय हूँ। अतः मैं यहाँ जो कुछ तुम चाहो उसको देने के लिये आया हूँ।”

## अम्बरीष बोले

“हे लोकनाथ! हे परानन्द! मेरे मन में नित्य सतत यह विचार है कि तुम महान् आत्मा देवेश शिव को समर्पित हो, उसी प्रकार मैं भी सदा वाणी, शरीर और कर्म से तुमको समर्पित हो जाऊँ। हे भगवान्! मैं जगत् को आप का भक्त वैष्णव बना-बनाकर पृथ्वी का पालन करूँगा। यज्ञ होम और अर्चना आदि से उत्तम देवताओं को तृप्त करूँगा। वैष्णवों का पालन करूँगा और शत्रुओं का नाश करूँगा। मैं सांसारिक दुष्कर्मों के ताप से भयभीत हूँ। अतः मेरा मन आप में ही निवास करता है”॥३९-४२॥

## भगवान् विष्णु बोले

जैसा तुम चाहते हो वैसा ही होगा। पहिले रुद्र की कृपा से यह दुर्लभ सुदर्शन चक्र मैंने प्राप्त किया है। यह निरन्तर ऋषिओं के श्राप आदि दुःख, शत्रु और रोग आदि को नाश करेगा। ऐसा कहकर भगवान् विष्णु अन्तर्धान हो गये॥४३-४४॥

## सूत उवाच

ततः प्रणम्य मुदितो राजा नारायणं प्रभुम्। प्रविश्य नगरीं रम्यामयोध्यां पर्यपालयत्॥४५॥  
 ब्राह्मणादींश्च वर्णाश्च स्वस्वकर्मण्ययोजत्। नारायणपरो नित्यं विष्णुभक्तानकल्मषान्॥४६॥  
 पालयामास हृष्टात्मा विशेषेण जनाधिपः। अश्वमेधशतैरिष्टा वाजपेयशतेन च॥४७॥  
 पालयामास पृथिवीं सागरावरणामिमाम्। गृहेगृहे हरिस्तस्थौ वेदघोषो गृहेगृहे॥४८॥  
 नामघोषो हरेश्वैव यज्ञघोषस्तथैव च। अभवनृपशार्दूले तस्मिन् राज्यं प्रशासति॥४९॥  
 नासस्या नातृणा भूमिर्न दुर्भिक्षादिभिर्युता। रागहीनाः प्रजा नित्यं सर्वोपद्रववर्जिताः॥५०॥  
 अंबरीषो महातेजाः पालयामास मेदिनीम्। तस्यैवंवर्तमानस्य कन्या कमललोचना॥५१॥  
 श्रीमती नाम विख्याता सर्वलक्षणसंयुता। प्रदानसमयं प्राप्ता देवमायेव शोभना॥५२॥  
 तस्मिन्काले मुनिः श्रीमान्नारदोऽभ्यागतश्च वै। अंबरीषस्य राज्ञो वै पर्वतश्च महामतिः॥५३॥  
 तावुभवागतौ दृष्टा प्रणिपत्य यथाविधि। अंबरीषो महातेजाः पूजयामास तावृषी॥५४॥  
 कन्यां तां रममाणां वै मेघमध्ये शतहृदाम्। प्राह तां प्रेक्ष्य भगवान्नारदः सस्मितस्तदा॥५५॥  
 केयं राजन्महाभागा कन्या सुरसुतोपमा। ब्रूहि धर्मभृतां श्रेष्ठ सर्वलक्षणशोभिता॥५६॥

## सूत बोले

तब राजा ने उस दिशा को प्रणाम किया जिधर विष्णु भगवान् गये थे। उसके बाद राजा बहुत प्रसन्न हो अयोध्या नगरी में लौट कर वहाँ पर प्रजा का पालन करने लगे। उन्होंने ब्राह्मणों और अन्य जातियों को उनके अपने-अपने कर्तव्यों में लगाया। राजा विष्णु को समर्पित थे। उसने प्रसन्न हृदय होकर पाप रहित वैष्णवों की रक्षा की। उनका पालन किया। उसने सौ अश्वमेध यज्ञ और सौ वाजपेय यज्ञों को करके सागरों से धिरी पृथ्वी का पालन किया। घर-घर में विष्णु स्थापित हुए। प्रत्येक घर में वेद मन्त्रों की घनि गूँजने लगी। भगवन्नाम का घोष और यज्ञ सम्पन्न हुये। राजाओं में सिंह के समान राजा अंबरीष के शासनकाल में भूमि परती और ऊसर नहीं थी और न तो अकाल आदि से युक्त थी। प्रजा राग-द्वेष से रहित और सब उपद्रवों से वर्जित थी। ४५-५०॥ महातेजस्वी राजा अंबरीष ने इस प्रकार पृथ्वी का पालन किया। ऐसे उस राजा के एक कमल के ५१॥ महातेजस्वी राजा अंबरीष ने इस प्रकार पृथ्वी का पालन किया। ऐसे उस राजा के एक कमल के नेत्र वाली सब लक्षणों से युक्त योगमाया के समान सुन्दर कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम श्रीमती रखा समान नेत्र वाली सब लक्षणों से युक्त योगमाया के समान सुन्दर कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम श्रीमती रखा गया। धीरे-धीरे बढ़कर वह विवाह के योग्य आयु को प्राप्त हुई। ५१-५२॥ उसी समय श्रीमान नारद और महा बुद्धिमान् पर्वत नामक दो ऋषि अंबरीष के राजभवन में पधारे। ५३॥ उन दोनों को आया हुआ महा बुद्धिमान् पर्वत नामक दो ऋषि अंबरीष के राजभवन में पधारे। ५४॥ बादलों के बीच में बिजली के देखकर महा तेजस्वी राजा अंबरीष ने प्रणाम करके उनकी पूजा की। ५५॥ बादलों के बीच में बिजली के देखकर महा तेजस्वी राजा अंबरीष ने प्रणाम करके उनकी पूजा की। ५६॥ बादलों के बीच में बिजली के समान खेलती हुई उस कन्या को देखकर भगवान् नारद ने मुस्कराते हुये पूछा, “हे राजन्! देव कन्याओं से उपमा योग्य यह कौन है? हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ! इस सब लक्षणों से शोभित कन्या के विषय में मुझको बतलाइए”। ५५-५६॥

### राजोवाच

दुहितेयं मम विभो श्रीमती नाम नामतः। प्रदानसमयं प्राप्ता वरमन्वेषते शुभा॥५७॥  
 इत्युक्तो मुनिशार्दूलस्तामैच्छन्नारदो द्विजाः। पर्वतोपि मुनिस्तां वै चकमे मुनिसत्तमाः॥५८॥  
 अनुज्ञाप्य च राजानं नारदो वाक्यमब्रवीत्। रहस्याहूय धर्मात्मा मम देहि सुतामिमाम्॥५९॥  
 पर्वतो हि तथा प्राह राजानं रहसि प्रभुः। तावुभौ सह धर्मात्मा प्रणिपत्य भयादितः॥६०॥  
 उभौ भवंतौ कन्यां मे प्रार्थमानौ कथं त्वहम्। करिष्यामि महाप्राज्ञ शृणु नारद मे वचः॥६१॥  
 त्वं च पर्वत मे वाक्यं शृणु वक्ष्यामि यत्प्रभो। कन्येयं युवयोरेकं वरयिष्यति चेच्छुभा॥६२॥  
 तस्मै कन्यां प्रयच्छामि नान्यथा शक्तिरस्ति मे। तथेत्युक्त्वा ततो भूयः श्वो यास्याव इति स्म ह॥६३॥  
 इत्युक्त्वा मुनिशार्दूलौ जग्मतुः प्रीतिमानसौ। वासुदेवपरौ नित्यमुभौ ज्ञानविदांवरौ॥६४॥  
 विष्णुलोकं ततो गत्वा नारदो मुनिसत्तमः। प्रणिपत्य हृषीकेशं वाक्यमेतदुवाच ह॥६५॥  
 श्रोतव्यमस्ति भगवन्नाथ नारायण प्रभो। रहसि त्वां प्रवक्ष्यामि नमस्ते भुवेनश्वर॥६६॥  
 ततः प्रहस्य गोविंदः सर्वानुत्सार्य तं मुनिम्। बूहीत्याह च विश्वात्मा मुनिराह च केशवम्॥६७॥  
 त्वदीयो नृपतिः श्रीमानंबरीषो महीपतिः। तस्य कन्या विशालाक्षी श्रीमती नाम नामतः॥६८॥  
 परिणेतुमनास्तत्र गतोऽस्मि वचनं शृणु। पर्वतोऽयं मुनिः श्रीमांस्तवभृत्य स्तमोनिधिः॥६९॥  
 तामैच्छत्सोपि भगवन्नावामाह जनाधिपः। अंबरीषो महातेजाः कन्येयं युवयोर्वरम्॥७०॥

### राजा बोले

“हे प्रभो! यह मेरी कन्या श्रीमती है। यह विवाह के आयु को प्राप्त हो गयी है। मैं इसके लिए एक वर की खोज में हूँ।” ऐसा कहने पर नारद मुनि ने उस कन्या को लेने के लिए इच्छा प्रकट की। मुनिवर पर्वत ने भी उसको पाने की इच्छा प्रकट की। ५७-५८। धर्मात्मा नारद ने राजा को एकान्त में बुलाकर उनसे यह कहा, “इस कन्या को मुझको दे दो।” पर्वत ऋषि ने भी एकान्त में राजा से वैसा ही निवेदन किया। तब धर्मिक राजा भयभीत हो गये। उन दोनों को प्रणाम करके राजा ने कहा, “आप दोनों मेरी कन्या को ग्रहण करना चाहते हैं। मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ? हे महाबुद्धिमान नारद! और हे प्रभु पर्वत! यह कन्या तुम दोनों में से एक को वरण करेगी। मैं उसको यह कन्या दूँगा अन्यथा मैं अशक्त हूँ।” “ऐसा कहने पर उन दोनों ने कहा, “यह ऐसा ही होगा। हम लोग कल फिर आयेंगे।” पर्वत ने भी कहा। ऐसा कहकर दोनों ऋषिवर—जो कि विष्णु के भक्त थे और ज्ञानियों में श्रेष्ठ थे—प्रसन्न हो गये। ५९-६४। विष्णु लोक में जाकर ऋषियों में श्रेष्ठ नारद ने विष्णु को प्रणाम करके यह कहा। ६५। “हे जगन्नाथ! नारायण आपसे कुछ कहना है। एकान्त में कहूँगा। हे भुवेनश्वर! पर्वत का मुख बानर के मुँह की तरह लगे। ऐसा आप कर दें।” तब विश्वात्मा भगवान् विष्णु ने मुस्कराते हुए कहा। हे ऋषि कहो! “तब ऋषि ने उनसे कहा। श्रीमान अम्बरीष राजा तुम्हारे भक्त हैं। विशाल नेत्रों वाली उनकी कन्या का नाम श्रीमती है। उससे विवाह करने की इच्छा से मैं उनके पास गया था। अब मेरी बात सुनो। पर्वत ऋषि भी आपके भक्त हैं। वह भी इसको चाहते हैं। महातेजस्वी राजा अम्बरीष ने कहा, “यह कन्या तुम दोनों में जिसको सुन्दर मानकर चुनोगी मैं उसी को यह कन्या दूँगा।” हम दोनों ने राजा से कहा, “ऐसा ही

लावण्ययुक्तं वृणुयाद्यदि तस्मै ददाम्यहम्। इत्याहावां नृपस्तत्र तथेत्युक्ताहमागतः॥७१॥  
 आगमिष्यामि ते राजन् श्वः प्रभाते गृहं त्विति। आगतोहं जगन्नाथ कर्तुमर्हसि मे प्रियम्॥७२॥  
 वानराननवद्वाति पर्वतस्य मुखं यथा। तथ कुरु जगन्नाथ मम चेदिच्छसि प्रियम्॥७३॥  
 तथेत्युक्त्वा स गोविंदः प्रहस्य मधुसूदनः। त्वयोक्तं च करिष्यामि गच्छ सौम्य यथागतम्॥७४॥  
 एवमुक्त्वा मुनिर्हष्टः प्रणिपत्य जनार्दनम्। मन्यमानः कृतात्मानं तथाऽयोध्यां जगाम सः॥७५॥  
 गते मुनिवरे तस्मिन्यर्वतोऽपि महामुनिः। प्रणम्य माधवं हृष्टो रहस्येनमुवाच ह॥७६॥  
 वृत्तं तस्य निवेद्याग्रे नारदस्य जगत्पते:। गोलांगूलमुखं यद्वन्मुखं भाति तथा कुरु॥७७॥  
 तच्छुक्त्वा भगवान्विष्णुस्त्वयोक्तं च करोमिवै। गच्छ शीघ्रमयोध्यां वै मावेदीर्नारदस्य वै॥७८॥  
 त्वया मे संविदं तत्र तथेत्युक्त्वा जगाम सः। ततो राजा समाजाय प्राप्तौ मुनिवरौ तदा॥७९॥  
 मांगल्यैर्विविधैः सर्वामयोध्यां ध्वजमालिनीम्। मंडयामास पुष्टैश्च लाजैश्चैव समंततः॥८०॥  
 अंबुसित्कर्णहृष्टारां सित्कापणमहापथाम्। दिव्यगंधरसोपेतां धूपितां दिव्यधूपकैः॥८१॥  
 कृत्वा च नगरीं राजा मंडयामास तां सभाम्। दिव्येर्गधैस्तथा धूपै रत्नैश्च विविधैस्तथा॥८२॥  
 अलंकृतां मणिस्तं भैर्नानामाल्योपशोभिताम्। पराध्यास्तरणोपेतैर्दिव्यैर्भद्रासनैर्वृताम्॥८३॥  
 कृत्वा नृपेन्द्रस्तां कन्यां ह्यादाय प्रविवेश ह। सर्वाभरणसंपन्नां श्रीरिवायतलोचनाम्॥८४॥  
 करसंमितमध्यांगीं पंचस्निग्धां शुभाननाम्। स्त्रीभिः परिवृतां दिव्यां श्रीमर्तीं संश्रितां तदा॥८५॥

होगा। उसके बाद मैं यहाँ आया हूँ। कल सबेरे मैं यहाँ फिर आऊँगा। हे जगन्नाथ! जो मुझको अभीष्ट है, प्रिय है, वह आप करें।” नारद के ऐसा कहने पर गोविन्द मधुसूदन भगवान् विष्णु ने हँसकर कहा, “तुम्हारा कहना मैं करूँगा। हे सौम्य! अब बापस जाओ।” विष्णु के ऐसा कहने पर नारद प्रसन्न होकर विष्णु को प्रणाम करके अपने को सफल मानते हुये अयोध्या चले गये। ६६-७५। नारद मुनि के जाने के बाद महामुनि पर्वत भी आये। ७६। उन्होंने भगवान् विष्णु को प्रणाम करके प्रसन्न होकर एकान्त में उनसे कान में कहा। “हे विश्व के आत्मा! कृपया नारद का मुँह ऐसा बना दें कि काले मुँह वाले लंगूर की तरह दिखाई दे। ७७।” यह सुनने के बाद भगवान् विष्णु ने कहा। “जैसी तुम्हारी लालसा है मैं वैसा ही करूँगा। जल्दी अयोध्या चले जाओ! तुम्हारे साथ जो मेरी बात हुई है उसको नारद को मत बताना। ऐसा ही होगा।” यह कहकर पर्वत मुनि भी चले गये। यह जानकर कि दोनों महामुनि आ गये हैं। राजा ने अयोध्या को ध्वजाओं, मालाओं, फूलों और लाजाओं से सजवा दिया। ७८-८०। घरों के द्वारों पर जल का छिड़काव किया गया। बाजारों और राजमार्गों (सड़कों) पर भलीभांति जल का छिड़काव किया गया। अयोध्या नगरी को दिव्य धूप और गन्ध रसों से मणित कर दिया गया। ८१। नगरी को सजाने के बाद राजा ने सभागार को दिव्य गन्धों, धूपों और विविध रसों से अलंकृत करवाया। ८२। मणियों के खम्भों, नाना प्रकार के फूल मालाओं से शोभित, दिव्य आसनों (सीटों) से सुसज्जित कराया। ८३। यह सब प्रबन्ध और व्यवस्था करने के बाद सब आभूषणों से भूषित अपने विशाल सुन्दर नेत्रों से लक्ष्मी के समान दिखने वाली, अपनी दिव्य रूपवती, हाथ से नापने योग्य कमरवाली, पाँच अंगों से मनोहर, सुन्दर मुखवाली, सहेलियों से धिरी हुई कन्या को साथ लेकर राजा ने सभागार में प्रवेश

सभा च सा भूपपतेः समृद्धा मणिप्रवेकोत्तमरत्नचित्रा।

न्यस्तासना माल्यवती सुबद्धा तामाययुस्ते नरराजवर्गाः॥८६॥

अथापरो ब्रह्मवरात्मजो हि त्रैविद्यविद्यो भगवान्महात्मा।

सपर्वतो ब्रह्मविदां वरिष्ठो महामुनिनर्द आजगाम॥८७॥

तावागतौ समीक्ष्याथ राजा संध्रांतमानसः। दिव्यमासनमादाय पूजयामास तावुभौ॥८८॥

उभौ देवर्षिसिद्धौ तावुभौ ज्ञानविदांवरौ। समासीनौ महात्मानौ कन्यार्थ मुनिसत्तमौ॥८९॥

तावुभौ प्रणिपत्याग्रे कन्यां तां श्रीमतीं शुभाम्। सुतां कमलपत्राक्षीं प्राह राजा यशस्विनीम्॥९०॥

अनयोर्य वरं भद्रे मनसा त्वमिहेच्छसि। तस्मै मालामिमां देहि प्रणिपत्य यथाविधि॥९१॥

एवमुक्ता तु सा कन्या स्त्रीभिः परिवृता तदा। मालां हिरण्मयीं दिव्यामादाय शुभलोचना॥९२॥

यत्रासीनौ महात्मानौ तत्रागम्य स्थिता तदा। वीक्षमाणा मुनिश्रेष्ठौ नारदं पर्वतं तथा॥९३॥

शाखामृगाननं दृष्ट्वा नारदं पर्वतं तथा। गोलांगूलमुखं कन्या किंचित् त्राससमन्विता॥९४॥

संध्रांतमानसा तत्र प्रवातकदली यथा।

तस्थौ तामाह राजासौ वत्से किं त्वं करिष्यसि॥९५॥

अनयोरेकमुद्दिश्य देहि मालामिमां शुभे। सा प्राह पितरं त्रस्ता इमौ तौ नरवानरौ॥९६॥

मुनिश्रेष्ठं न पश्यामि नारदं पर्वतं तथा। अनयोर्मध्यतस्त्वेकमूनषोडशवार्षिकम्॥९७॥

सर्वाभरणसंपन्नमतसीपुष्पसंनिभम् । दीर्घबाहुं विशालाक्षं तुंगोरस्थलमुक्तमम्॥९८॥

किया॥८४-८५॥ राजा का सभागार विभिन्न प्रकार के रत्नों और हीरे जवाहरात से समृद्ध था। माला फूल और झालरें खूबसूरती से बैंधे थे। राजा लोग उस सभागार में पधारे॥८६॥ ब्रह्मा के सौम्य पुत्र, महात्मा, तीन विद्याओं के ज्ञाता, ब्रह्मियों में वरिष्ठ महामुनि नारद, पर्वत मुनि के साथ सभा में पधारे॥८७॥ यह देखकर दोनों ऋषि आ गये हैं, राजा मन में घबरा गये। उन्होंने मुनियों को दिव्य आसन देकर बैठाया। उनकी पूजा की। कन्या के इच्छुक दोनों श्रेष्ठ ज्ञानी मुनि आसनों पर विराजमान हुये॥८८-९०॥ तब राजा ने अपनी पुत्री से कहा, “हे पुत्री! इन दोनों मुनियों में से जिसको अपना वर मन से चुनो उसको उचित ढंग से प्रणाम करके यह माला दे दो”॥९१॥ इस तरह कहे जाने पर स्त्रियों से धिरी हुई सुन्दर नेत्रों वाली वह राजा कन्या सोने की उस दिव्य माला को लेकर जहाँ दोनों महात्मा मुनि बैठे थे वहाँ आयी और खड़ी हो गयी। नारद और पर्वत मुनियों की ओर देखते हुए उसने उनके चेहरे को बानरों की तरह देखा। लंगूरों के समान चेहरे को देखकर कन्या कुछ डर गयी। मन से घबराकर वह आँधी में केले के पेड़ की तरह काँपने लगी। तब राजा ने उससे कहा “हे पुत्री! तुम क्या करोगी? हे शुभे! इन दोनों में किसी एक को यह माला दे दो”॥९२-९६॥

डरी हुई कन्या ने अपने पिता से कहा, “यह दोनों तो नर वानर हैं। नारद या पर्वत श्रेष्ठ मुनियों को मैं नहीं देखती हूँ लेकिन इनके दोनों के बीच मैं मैं एक सोलह वर्ष से कम, सुन्दर युवक को देखती हूँ। वह सब आभूषणों से भूषित है। वह अलसी के फूल के समान है। उसकी लम्बी भुजाएँ हैं। बड़ी आँखें हैं। चौड़ी छाती है। दो झुकी

रेखांकितकटिग्रीवं रक्षांतायतलोचनम्। नम्रचापानुकरणपदुभूयुगशोभितम्॥१९॥  
 विभक्तत्रिवलीव्यक्तं नाभिव्यक्तशुभोदरम्।  
 हिरण्यांबरसंवीतं तुंगरत्ननखं शुभम्।  
 पद्माकारकरं त्वेनं पद्मास्यं पद्मलोचनम्॥२०॥  
 सुनासं पद्महृदयं पद्मनाभं श्रिया वृत्तम्। दंतपंक्तिभिरत्यर्थं कुंदकुडमलसन्निभैः॥२१॥  
 हसंतं मां समालोक्य दक्षिणं च प्रसार्य वै। पाणिं स्थितममुंतत्र पश्यामि शुभमूर्धजम्॥२२॥  
 संभ्रांतमानसां तत्र वेपतीं कदलीमिव।  
 स्थितां तामाह राजासौ वत्से किं त्वं करिष्यसि॥२३॥  
 एवमुक्ते मुनिः प्राह नारदः संशयं गतः।  
 कियन्तो बाहवस्तस्य कन्ये ब्रूहि यथातथम्॥२४॥

बाहुद्वयं च पश्यामीत्याह कन्या शुचिस्मिता। प्राह तां पर्वतस्तत्र तस्य वक्षःस्थले शुभे॥२५॥  
 किं पश्यसि च मे ब्रूहि करे किं वास्यपश्यसि। कन्या तमाह मालां वै पंचरूपामनुत्तमाम्॥२६॥  
 वक्षःस्थलेऽस्य पश्यामि करे कार्मुकसायकान्। एवमुक्तौ मुनिश्रेष्ठौ परस्परमनुत्तमौ॥२७॥  
 मनसा चिंतयंतौ तौ मायेयं कस्य चिद्दवेत्। मायावी तस्करो नूनं स्वयमेव जनार्दनः॥२८॥  
 आगतो न यथा कुर्यात्कथमस्मन्मुखं त्विदम्। गोलागूलत्वमित्येवं चिंतयामास नारदः॥२९॥  
 पर्वतोपि यथान्यायं वानरत्वं कथं मम। प्राप्तमित्येव मनसा चिंतामापेदिवांस्तथा॥३०॥

हुई धनुष के समान भौंहें हैं। तीन भागों में बैंटी हुई (त्रिवली) नाभि में से युक्त सुन्दर पेट है। वह सुनहरे रंग का वस्त्र धारण किये हुये है। उनके नाखून रत्नों की तरह ऊँचे हैं। कमल के आकार का उनका हाथ है। कमल के समान उनके मुख और नेत्र हैं। सुन्दर नाक है। कमल के समान हृदय है। कमल के समान श्री से युक्त उनकी नाभि है। कुंद की कली के समान दाँतों की पंक्तियाँ हैं। अच्छे सुन्दर बाल सिर पर हैं। वह मेरी ओर अपने दाहिने हाथ को फैलाकर मुझको देखकर मुस्करा रहे हैं। उनको मैं देखती हूँ।” तब राजा ने उससे कहा जो कि केले के पेड़ के तरह घबरायी हुई काँप रही थी। “हे पुत्री! तुम क्या करोगी?” ॥१७-१०३॥ जब ऐसा कहा तो नारद को सन्देह हुआ। उन्होंने पूछा, “हे कन्या उनके कितने हाथ हैं? सही-सही मुझको बताओ” ॥१०४॥ पवित्रता से मुस्कराती हुई कन्या ने कहा। “मैं दो बाहुओं को देखती हूँ।” तब पर्वत ने उससे पूछा, “हे शुभे! उनके वक्षस्थल पर क्या देखती हो? उनके हाथों में तुम क्या देखती हो?” तब उस राज कन्या ने पर्वत से कहा “उनकी छाती पर पाँच पर्त लपेटी हुई अनुपम माला को देखती हूँ। हाथ में धनुष और बाण को देखती हूँ।” इस तरह उत्तर पाने पर दोनों ऋषिवर एक-दूसरे की ओर देखने लगे। उन्होंने अपने मन में सोचा। यह किसी की माया है। निश्चय रूप से विष्णु भगवान् स्वयं मायावी और तस्कर हैं। एक नव आगन्तुक हमारे चेहरों को लंगूर की तरह कैसे बना सकता है?” नारद ने ऐसा सोचा। पर्वत ने भी इस प्रकार मानसिक रूप से सोचा कि मेरा चेहरा वानर की तरह कैसे हुआ?” ॥१०५-११०॥ तब राजा ने नारद और पर्वत को प्रणाम करके कहा, “आप दोनों

ततो राजा प्रणम्यासौ नारदं पर्वतं तथा।

भवद्ध्यां किमिदं तत्र कृतं बुद्धिविमोहजम्॥१११॥

स्वस्थौ भवंतौ तिष्ठेतां यथा कन्यार्थमुद्यतौ। एवमुक्तौ मुनिश्रेष्ठौ नृपमूचतुरुल्बणौ॥११२॥

त्वमेव मोहं कुरुषे नावामिह कथंचन। आवयोरेकमेषा ते वरयत्वेव मा चिरम्॥११३॥

ततः सा कन्यका भूयः प्रणिपत्येष्टदेवताम्। मायामादाय तिष्ठतं तयोर्मध्ये समाहितम्॥११४॥

सर्वाभिरणसंयुक्तमतसीपुष्पसन्निभम् । दीर्घबाहुं सुपुष्टांगं कर्णातायतलोचनम्॥११५॥

पूर्ववत्पुरुषं दृष्टा मालां तस्मै ददौ हि सा। अनंतरं हि सा कन्या न दृष्टा मनुजैः पुनः॥११६॥

ततो नादः समभवत् किमेतदिति विस्मितौ।

तामादाय गतो विष्णुः स्वस्थानं पुरुषोत्तमः॥११७॥

पुरा तदर्थमनिशं तपस्तप्त्वा वरांगना।

श्रीमती सा समुत्पन्ना सा गता च तथा हरिम्॥११८॥

तावुभौ मुनिशार्द्दलौ धिक्कृतावतिदुःखितौ। वासुदेवं प्रति तदा जग्मतुर्भवनं हरेः॥११९॥

तावागतौ समीक्ष्याह श्रीमतीं भगवान्हरिः। मुनिश्रेष्ठौ समायातौ गूहस्वात्मानमत्र वै॥१२०॥

तथेत्युक्त्वा च सा देवी प्रहसंती चकार ह। नारदः प्रणिपत्याग्रे प्राह दामोदरं हरिम्॥१२१॥

प्रियं हि कृतवानाद्य मम त्वं पर्वतस्य हि। त्वमेव नूनं गोविंद कन्यां तां हृतवानसि॥१२२॥

विमोह्यावां स्वयं बुद्ध्या प्रतार्य सुरसत्तमा।

इत्युक्तः पुरुषो विष्णुः पिधाय श्रोत्रमच्युतः।

पाणिभ्यां प्राह भगवान् भवद्भ्यां किमुदीरितम्॥१२३॥

को यह क्या बौद्धिक भ्रम हो गया। आप दोनों शान्तिपूर्वक बैठे रहें जो कन्या का हाथ चाहते हैं।” राजा द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर महामुनियों ने क्रोधित होकर कहा, “यह माया तुम्हीं करते हो। हम दोनों किसी प्रकार नहीं। इस कन्या को हम दोनों में से किसी को चुनने दो। इसमें विलम्ब न हो।” इसके बाद कन्या ने इष्ट देवता को प्रणाम करके उन दोनों के बीच में बैठे हुए सब आभूषणों से युक्त, अलसी के फूल के समान सुन्दर, लम्बी भुजाओं, पुष्ट अंग वाले, कान तक फैले हुए नेत्रों वाले पुरुष को पूर्ववत् देखकर उसने वह माला उनको दे दी। उसके बाद वह राजकन्या किसी भी व्यक्ति द्वारा नहीं देखी गयी। १११-११६।। उसके बाद वहाँ हो हल्ला होने लगा, “कि यह क्या हुआ? दोनों मुनि आश्चर्य से चकित हो गये। विष्णु उस कन्या को लेकर विष्णुलोक को चले गये।” पहले जिसके लिए उसने तपस्या की थी उस श्रीमती ने उनको प्राप्त कर लिया। वह विष्णु के साथ चली गयी। वे दोनों श्रेष्ठ मुनि तिरस्कृत और बेहद दुःखी हुये। दुःखित होकर वे विष्णुलोक को गये। ११७-११९।। उन दोनों को आता हुआ देखकर भगवान विष्णु ने श्रीमती से कहा, “दोनों महामुनि आ गये हैं। तुम अपने को छिपा लो।” १२०।। “ऐसा ही होगा” कहती हुई मुस्कुराते हुए श्रीमती ने वैसा ही किया। नारद ने विष्णु भगवान् के सामने प्रणाम करके उनसे कहा। १२१।। “मेरे और पर्वत के लिए आपने प्रिय कार्य किया है। हे गोविंद! आप ही ने उस कन्या का अपहरण किया है।” १२२।। हम दोनों को मोह में डालकर आपने

कामवानपि भावोयं मुनिवृत्तिरहो किल। एवमुक्तो मुनिः प्राह वासुदेवं स नारदः॥१ २४॥  
कर्णमूले मम कथं गोलांगूलमुखं त्विति। कर्णमूले तमाहेदं वानरत्वं कृतं मया॥१ २५॥  
पर्वतस्य मया विद्धन् गोलांगूलमुखं तव। मया तव कृतं तत्र प्रियार्थं नान्यथा त्विति॥१ २६॥  
पर्वतोऽपि तथा प्राह तस्याप्येवं जगाद् सः। शृणवतोरुभयोस्तत्र प्राह दामोदरो वचः॥१ २७॥

प्रियं भवदभ्यां कृतवान् सत्येनात्मानमालभे।

नारदः प्राह धर्मात्मा आवयोर्मध्यतः स्थितः॥१ २८॥

धनुष्मान्युरुषः कोत्र तां हत्वा गतवान्किल।

तच्छुत्वा वासुदेवोऽसौ प्राह तौ मुनिसत्तमौ॥१ २९॥

मायाविनो महात्मानो बहवः संति सत्तमाः। तत्र सा श्रीमती नूनमद्वा मुनिसत्तमौ॥१ ३०॥

चक्रपाणिरहं नित्यं चतुर्बाहुरिति स्थितः।

तां तथा नाहमैच्छं वै भवभ्यां विदितं हि तत्॥१ ३१॥

इत्युक्तौ प्रणिपत्यैनमूर्धतुः प्रीतिमानसौ। कोऽत्र दोषस्तव विभो नारायण जगत्पते॥१ ३२॥

दौरात्म्यं तत्रृपस्यैव मायां हि कृतवानसौ। इत्युक्त्वा जग्मतुस्तस्मान्मुनी नारदपर्वतौ॥१ ३३॥

अंबरीषं समासाद्य शापेनैनमयोजयत्। नारदः पर्वतश्चैव यस्मादावामिहागतौ॥१ ३४॥

आहूय पश्चादन्यस्मै कन्यां त्वं दत्तवानसि।

मायायोगेन तस्मात्त्वां तमो ह्यभिभविष्यति॥१ ३५॥

स्वयं बुद्धि से हमको ठग लिया।” ऐसा कहने पर विष्णु ने अपने हाथों से अपने कानों को ढँककर कहा, “तुम दोनों ने यह क्या कहा?॥१ २३॥ ओह! क्या यह कामवासना का भाव मुनियों की वृत्ति (आचरण) के अनुकूल है।” ऐसा कहने पर नारद ने विष्णु भगवान् के कान में फुसफुसाते हुए कहा, “मेरा मुँह, चेहरा लंगूर की तरह कैसे हो गया? विष्णु भगवान् ने भी नारद के कान में फुसफुसाते हुए कहा। “हे विद्वान् ऋषि! मैंने तुम्हारे मुँह को वानर की तरह और पर्वत के मुख को लंगूर की तरह कर दिया था”॥१ २४-१ २६॥ पर्वत ने भी उसी तरह कहा और विष्णु ने उसी ढंग से उत्तर दिया। तब विष्णु ने दोनों ऋषियों को सुनाते हुए कहा॥१ २७॥ “वहाँ मैंने तुम दोनों के हित के लिए वैसा किया। मैं यह सत्य कहता हूँ।” तब धर्मात्मा नारद ने कहा, “हम दोनों के बीच में वह धनुर्धारी पुरुष कौन था जो उसको हर कर चला गया?” यह सुनकर भगवान् विष्णु ने उन मुनियों से कहा। “हे मुनियों! मायावी बहुत से महात्मा हैं। मैं सदा चक्र को हाथ में धारण करने वाला चार भुजा वाला हूँ। श्रीमती को वहाँ न देखकर यह निश्चित है कि मैं उसको लेना नहीं चाहता था। वह तुम दोनों को विदित है।” ऐसा कहने पर दोनों मुनि मन से प्रसन्न हो गये। उन्होंने विष्णु को प्रणाम करके कहा, “इस विषय में आपकी क्या गलती है? यह राजा की दुष्टता है कि उसकी आज्ञा से उसको अपहरण कर लिया गया। उसने ही आज्ञा की। यह कहकर नारद और पर्वत ने वह स्थान छोड़ दिया। अम्बरीष के पास पहुँचकर उनको शाप दिया। “हम दोनों को वहाँ बुलाकर तुमने क्यों दूसरे व्यक्ति को कन्या दे दी। इस कारण माया के योग से तुम्हारे ऊपर तम

तेन चात्मानमत्यर्थं यथावत्त्वं न वेत्स्यसि। एवं शापे प्रदत्ते तु तमोराशिरथोत्थितः॥१ ३६॥  
नृपं प्रति ततश्शक्रं विष्णोः प्रादुरभूत् क्षणात्। चक्रवित्रासितं घोरं तावुभौ तम अभ्यगात्॥१ ३७॥  
ततः संत्रस्तसर्वांगौ धावमानौ महामुनी। पृष्ठतश्शक्रमालोक्य तमोराशिं दुरासदम्॥१ ३८॥

कन्यासिद्धिरहो प्राप्ता ह्यावयोरिति वेगितौ।

लोकालोकांतमनिशं धावमानौ भयादितौ॥१ ३९॥

त्राहित्राहीति गोविंदं भाषमाणौ भयादितौ। विष्णुलोकं ततो गत्वा नारायण जगत्पते॥१ ४०॥  
वासुदेव हृषीकेश पद्मनाभं जनार्दन। त्राह्यावां पुङ्डरीकाक्षं नाथोऽसि पुरुषोत्तम॥१ ४१॥  
ततो नारायणश्चित्यं श्रीमाञ्छ्रीवत्सलांछनः। निवार्यचक्रं ध्वांतं च भक्तानुग्रहकाम्यया॥१ ४२॥  
अंबरीषश्च मद्भक्तस्तथैतौ मुनिसत्तमौ। अनयोरस्य च तथा हितं कार्यं मयाऽधुना॥१ ४३॥  
आहूय तत्तमः श्रीमान् गिरा प्रह्लादयन् हरिः। प्रोवाच भगवान् विष्णुः शृणुतां म इदं वचः॥१ ४४॥  
ऋषिशापो न चैवासीदन्यथा च वरोमम। दत्तो नृपाय रक्षार्थं नास्ति तस्यान्यथा पुनः॥१ ४५॥  
अंबरीषस्य पुत्रस्य नप्तुः पुत्रो महावशाः। श्रीमान्दशरथो नाम राजा भवति धार्मिकः॥१ ४६॥  
तस्याहमग्रजः पुत्रो रामनामा भवाम्यहम्। तत्र मे दक्षिणो बाहुर्भरतो नाम वै भवेत्॥१ ४७॥  
शत्रुघ्नो नाम सव्यश्च शेषोऽसौ लक्ष्मणः स्मृतः। तत्र मां समुपागच्छ गच्छेदानीं नृपं विना॥१ ४८॥

(अंधेरा) आक्रमण करेगा॥१ २८-१ ३५॥ इस कारण तुम स्वयं अपने को जान सकोगे। इस प्रकार शाप के कारण जब अंधकार ने उस राजा पर आक्रमण किया तो तुरन्त विष्णु का चक्र राजा के पक्ष में प्रकट हुआ॥१ ३६-१ ३७॥ चक्र के भय से अंधकार ने दोनों मुनियों को डरा दिया। डर से काँपते हुये दोनों मुनियों ने भागना प्रारम्भ किया। चक्र को पीछे आता देखकर और अंधकार के ढेर में अपने को ढकता देखकर अपना कदम आगे बढ़ाते हुये उन्होंने कहा। “हम दोनों को कन्या सिद्ध (प्राप्त) हो गई। हम कन्या पा गये।” भय से त्रस्त दुःखी वे लोग लौटकर समुद्रों से घिरी सम्पूर्ण पृथ्वी, पर्वत पर भागे। वे बेहद भय से डरे हुये, चिल्लाकर मुझको बचाओ। मुझको बचाओ (त्राहिमाम्)। हे गोविंद रक्षा करो” वे विष्णु लोक में गये। उन्होंने कहा। “हे नारायण! हे जगत् के स्वामी! हे वासुदेव! हे जनार्दन! हे हृषीकेश! हे पद्मनाभ! हे पुरुषोत्तम! तुम हमारे स्वामी हो! तब श्रीवत्स चिह्न से युक्त नारायण ने भक्तों के हित के लिये कृपा करके चक्र और अन्धकार को रोक दिया। अम्बरीष मेरा भक्त है। ये दोनों ऋषि भी मेरे भक्त हैं। अब मैं वह करूँगा जो राजा का और इन दोनों ऋषियों के लिए हितकारक हो। श्रीमान् विष्णु ने उनको बुलाकर अपने वचनों से उनको कहते हुये कहा, “तुम दोनों मेरी बातों को सुनो॥१ ३८-१ ४४॥ मुनियों का शाप अन्यथा नहीं होता है और न मेरा वरदान जो राजा अम्बरीष को रक्षा के लिये दिया था। श्रीमान् धार्मिक राजा अम्बरीष के पुत्र के ज्येष्ठ पौत्र के प्रसिद्ध पुत्र राजा दशरथ होंगे। उनका ज्येष्ठ पुत्र ‘राम’ मैं पैदा हूँगा। मेरा दाहिना हाथ भरत होंगे। शत्रुघ्न मेरे बायें हाथ होंगे। शेष, लक्ष्मण के रूप में जन्म लेंगे। वहाँ तुम मेरे पास आओ। अब तुम राजा को अकेला छोड़ दो।” ऐसा भगवान् विष्णु ने कहा। ऐसा कहने पर अन्धकार का समूह नष्ट हो गया। विष्णु का चक्र भी पूर्ववत् विष्णु के पास ठहर गया। तम को

मुनिश्रेष्ठौ च हित्वा त्वमिति स्माह च माधवः। एवमुक्तं तमो नाशं तत्क्षणाच्च जगाम वै॥१४९॥  
 निवारितं हरेश्वकं यथापूर्वमतिष्ठत। मुनिश्रेष्ठौ भयान्मुक्तो प्रणिपत्य जनार्दनम्॥१५०॥  
 निर्गतौ शौकसंतप्तौ ऊचतुस्तौ परस्परम्। अद्यप्रभृति देहांतमावां कन्यापरिग्रहम्॥१५१॥  
 न करिष्याव इत्युक्त्वा प्रतिज्ञाय च तावृषी। योगध्यानपरौ शुद्धौ यथापूर्वं व्यवस्थितौ॥१५२॥  
 अंबरीषश्च राजा सौ परिपाल्य च मेदिनीम्। सभृत्यज्ञातिसंपन्नो विष्णुलोकं जगाम वै॥१५३॥  
 मानार्थमंबरीषस्य तथैव मुनिसिंहयोः। रामोदाशरथिर्भूत्वा नात्मवेदीश्वरोऽभवत्॥१५४॥

मुनयश्च तथा सर्वे भृगवाद्या मुनिसत्तमाः।

माया न कार्या विद्वद्विद्विरित्याहुः प्रेक्ष्य तं हरिम्॥१५५॥

नारदः पर्वतश्चैव चिरं ज्ञात्वा विचेष्टितम्। मायां विष्णोर्विनिंद्यैव रुद्रभक्तौ बभूवतुः॥१५६॥

एतद्विद्विद्विरित्याहुः प्रेक्ष्य तं हरिम्॥१५७॥

यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्वापि मानवः।

मायां विसृज्य पुण्यात्मा रुद्रलोकं स गच्छति॥१५८॥

इदं पवित्रं परमं पुण्यं वेदैरुदीरितम्।

सायं प्रातः पठेन्नित्यं विष्णोः सायुज्यमाप्नुयात्॥१५९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे**

**श्रीमत्याख्यानं नाम पंचमोऽध्यायः॥५॥**

सम्बोधित कर विष्णु ने कहा तब ऐसा हुआ। अन्धकार तुरन्त नष्ट हो गया॥१४५-१४९॥ चक्र को रोकने पर वह पूर्ववत् स्थिर हो गया। दोनों मुनि छुटकारा पा गये। विष्णु को प्रणाम करके शोक से दुःखी आपस में कहने लगे। “अब से मृत्यु तक हम किसी कन्या को ग्रहण (विवाह) नहीं करेंगे।” ऐसी प्रतिज्ञा करके दोनों मुनि शुद्ध मन से पूर्ववत् योग और ध्यान साधना में लग गये॥१५०-१५२॥ पृथ्वी पर शासन करने के बाद राजा अम्बरीष अपने अनुचरों, कुटम्बियों के साथ विष्णु लोक को चले गये। अम्बरीष और दोनों मुनियों के मान के लिये राम अपने को ईश्वर न जानते हुये दशरथ के पुत्र रूप में विष्णु ने जन्म लिया। तब भृगु आदि मुनियों ने विष्णु को देखकर कहा, “विद्वानों को माया न करनी चाहिये।” बहुत समय के बाद नारद और पर्वत ने विष्णु की माया का अनुभव किया और वे शिव के भक्त हो गये। इस प्रकार मैंने सब कुछ अम्बरीष की महानता और विष्णु का मायावीपन अच्छी तरह तुम लोगों के सामने कहा। जो मनुष्य इसको पढ़े, या सुने, या सुनावै वह माया से रहित होकर इन्द्र लोक को जाता है। वह परमपवित्र वेदों द्वारा कथित कथानक को जो प्रातः और सायंकाल पढ़ेगा वह विष्णु का सायुज्य प्राप्त करेगा॥१५३-१५९॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में श्रीमती की कथा**

**नामक पाँचवा अध्याय समाप्ता॥५॥**

## षष्ठोऽध्यायः अलक्ष्मीवृत्तम्

ऋषय ऊचुः

मायावित्यं श्रुतं विष्णोर्देवदेवस्य धीमतः। कथं ज्येष्ठासमुत्पत्तिर्देवदेवाज्जनार्दनात्॥१॥  
वक्तुमर्हसि चास्माकं लोमहर्षण तत्त्वतः।

सूत उवाच

अनादिनिधनः श्रीमान्धाता नारायणः प्रभुः॥२॥

जगदद्वैधमिदं चक्रे मोहनाय जगत्पतिः। विष्णुर्वै ब्राह्मणान्वेदान्वेदधर्मान् सनातनान्॥३॥  
श्रियं पद्मां तथा श्रेष्ठां भागमेकमकारयत्। ज्येष्ठामलक्ष्मीमशुभां वेदबाह्यान्नराधर्मान्॥४॥  
अर्धर्मं च महातेजा भागमेकमकल्पयत्। अलक्ष्मीमग्रतः सृष्टा पश्चात्पद्मां जनार्दनः॥५॥  
ज्येष्ठा तेन समाख्याता अलक्ष्मीर्द्विजसत्तमाः। अमृतोद्दववेलायां विषानंतरमुल्बणात्॥६॥  
अशुभा सा तथोत्पन्ना ज्येष्ठा इति च वै श्रुतम्। ततः श्रीश्च समुत्पन्ना पद्मा विष्णुपरिग्रहः॥७॥  
दुःसहो नाम विप्रर्षिरुपयेमेऽशुभां तदा। ज्येष्ठां तां परिपूर्णोऽसौ मनसा वीक्ष्य धिष्ठिताम्॥८॥  
लोकं चचार हृष्टात्मा तया सह मुनिस्तदा। यस्मिन् घोषो हरेश्वैव हरस्य च महात्मनः॥९॥

छठवाँ अध्याय

## अलक्ष्मी का कथानक

ऋषिगण बोले

हे रोमहर्षण! बुद्धिमान और देवताओं के स्वामी विष्णु की माया को हम लोगों ने सुना। देवेश विष्णु से दुर्भाग्य की देवी ज्येष्ठा कैसे उत्पन्न हुई? यह आप हम लोगों को बताएँ।

सूत बोले

सृष्टि की उत्पत्ति के क्रम में भगवान विष्णु जिनका न आदि है न अन्त और जो विश्व के स्वामी हैं, उन्होंने जगत को दो पर्तों में बनाया। एक सेट में ब्राह्मणों, वेदों, वैदिक गुणों और पद्मा श्री की रचना की। विश्व के शरण दाता विष्णु ने दूसरे सेट में ज्येष्ठा अलक्ष्मी और वैदिक वातावरण से अलग लोगों और पाप को बनाया। अलक्ष्मी की रचना के बाद विष्णु ने पद्मा को बनाया। इसलिए अलक्ष्मी ज्येष्ठा (उससे बड़ी) हैं। भयानक विष के बाद अमृत के निकलने के बाद असुरा ज्येष्ठा पैदा हुई। ऐसा सुना जाता है। उसके बाद श्री पद्मा (लक्ष्मी) उत्पन्न हुई जो बाद में विष्णु की पत्नी बनी। १-७॥ एक ब्राह्मण मुनि दुःसह ने उस अशुभ ज्येष्ठा को मानसिक रूप से अधिष्ठित देखकर उससे विवाह किया। उसके साथ प्रसन्न वह मुनि संसार के चारों ओर घूमने लगा। हे ब्राह्मणों! जहाँ कहीं भी महान् आत्मा विष्णु और शिव के नामों की उच्चस्वर में ध्वनि हो, जहाँ वैदिक मन्त्रों

वेदधोषस्तथा विप्रा होमधूमस्तथैव च। भस्मांगिनो वा यत्रासंस्तत्र तत्र भयादिता॥१०॥  
 पिधाय कर्णौ संवाति धावमाना इतस्ततः। ज्येष्ठामेवंविधां दृष्ट्वा दुःसहो मोहमागतः॥११॥  
 तया सह वनं गत्वा चचार स महामुनिः। तपो महद्वने घोरे याति कन्या प्रतिग्रहम्॥१२॥  
 न करिष्यामि चेत्युक्तवा प्रतिज्ञाय च तामृषिः। योगज्ञानपरः शुद्धो यत्र योगीश्वरो मुनिः॥१३॥  
 तत्रायांतं महात्मानं मार्कंडेयमपश्यत। प्रणिषत्य महात्मानं दुःसहो मुनिमद्वीत्॥१४॥  
 भार्येवं भगवन्महां न स्थास्यति कथंचन। किं करोमीति विप्रर्षे ह्यनया सह भार्याया॥१५॥

प्रविशामि तथा कुत्रुं कुतो न प्रविशाम्यहम्॥

मार्कंडेय उवाच

शृणु दुःसह सर्वत्र अकीर्तिरशुभान्विता॥१६॥

अलक्ष्मीरतुला चेयं ज्येष्ठा इत्यभिशब्दिता। नारायणपरा यत्र वेदमार्गानुसारिणः॥१७॥  
 रुद्रभक्ता महात्मानो भस्मोद्दूलितविग्रहाः। स्थिता यत्र जना नित्यं मा विशेषाः कथंचन॥१८॥  
 नारायण हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष माधव। अच्युतानंतं गोविन्द वासुदेव जनार्दन॥१९॥  
 रुद्र रुद्रेति रुद्रेति शिवाय च नमो नमः। नमः शिवतरायेति शंकरायेति सर्वदा॥२०॥  
 महादेव महादेवेति कीर्तयेत्। उमायाः पतये चैव हिरण्यपतये सदा॥२१॥  
 हिरण्यबाहवे तुभ्यं वृषांकाय नमो नमः। नृसिंह वामनाचिंत्य माधवेति च ये जनाः॥२२॥

वक्ष्यन्ति सततं हृष्टा ब्राह्मणाः क्षत्रियास्तथा।

के उच्च उच्चारण की ध्वनि हो, जहाँ यज्ञों से धुआँ उठ रहा हो और जहाँ लोग अपने शरीर के अंगों पर भस्म चुपड़े हुए हों, वह दुर्भाग्य की देवी हृद से ज्यादा डर जाती थी। वह अपने कानों को मूँद लेती थी और इधर-उधर भागने लगती थी। ज्येष्ठा का इस प्रकार व्यवहार देखकर मुनि दुःसह भ्रम में पड़ गये। उसको साथ लेकर वह वन में चले गये। उस भयानक वन में उन्होंने बड़ी तपस्या की। ज्येष्ठा ने कहा, “मैं तपस्या नहीं करूँगी।” और वह एक घर से दूसरे घर को धूमने भटकने लगी। पवित्र मुनि, अग्रणी योगी योगाभ्यास करने लगे। उन्होंने महात्मा मार्कण्डेय को अपनी ओर आते हुए देखा। महामुनि को प्रणाम करके दुःसह ने कहा। ८-१४॥  
 “हे महामुनि! मेरी यह पत्नी मेरे साथ किसी भी तरह नहीं रहती है। हे ब्राह्मण मुनि! इस स्त्री को लेकर मैं क्या करूँगा? कहाँ मैं प्रवेश करूँगा? और कहाँ प्रवेश नहीं करूँगा?

मार्कण्डेय बोले

हे दुःसह! सुनो, “यह अशुभ स्त्री ऐसी प्रत्येक जगह अकीर्ति (बदनाम), अलक्ष्मी (अभागी), अतुला (न तुलना करने योग्य) और ज्येष्ठा (सबसे बड़ी) कही जाती है। यह किसी भी प्रकार उन स्थानों में प्रवेश नहीं करेगी जहाँ कि उत्तम आत्माओं, विष्णु के भक्त, वैदिक मार्ग के अनुयायी और रुद्र के भक्त जो कि अपने शरीर में भस्म लगाये हुए उपस्थित हों। १५-१८॥ यह किसी प्रकार उद्यानों में, गोशालाओं और प्रसन्न ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों के पास या उनके घरों में प्रवेश नहीं करेगी। जो लोग ओं नारायण, ओं ऋषिकेश, ओं पुण्डरीकाक्ष, ओं माधव, ओं अच्युत, ओं अनन्त, ओं आनन्द, ओं गोविन्द, ओं वासुदेव, ओं जनार्दन, ओं

वैश्या: शूद्राश्च ये नित्यं तेषां धनगृहादिषु। आरामे चैव गोष्ठेषु न विशेषाः कथंचन॥२३॥  
ज्वालामालाकरालं च सहस्रादित्यसन्निभम्। चक्रं विष्णोरतीवोग्रं तेषां हंति सदाशुभम्॥२४॥  
स्वाहाकारो वषट्कारो गृहे यस्मिन् हि वर्तते। तद्वित्वा चान्यमागच्छ सामधोषोथ यत्र वा॥२५॥  
वेदाभ्यासरता नित्यं नित्यकर्मपरायणाः। वासुदेवार्चनरता दूरतस्तान्विसर्जयेत्॥२६॥  
अग्निहोत्रं गृहे येषां लिंगाच्चां वा गृहेषु च। वासुदेवतनुवर्णपि चंडिका यत्र तिष्ठति॥२७॥  
दूरतो ब्रज तान् हित्वा सर्वपापविवर्जितान्। नित्यनैमित्तिकैर्यज्ञैर्यजंति च महेश्वरम्॥२८॥  
तान् हित्वा ब्रज चान्यत्र दुःसह त्वं सहानया। श्रोत्रिया ब्राह्मणा गावो गुरवोऽतिथयः सदा॥२९॥

रुद्रभक्ताश्च पूज्यन्ते यैर्नित्यं तान् विवर्जयेत्॥

दुःसह उवाच

यस्मिन्प्रवेशो योग्यो मे तद्ब्रूहि मुनिसत्तमा॥३०॥  
त्वद्वाक्याद्वयनिर्मुक्तो विशान्मेषां गृहे सदा।

मार्कण्डेय उवाच

न श्रोत्रिया द्विजा गावो गुरवोऽतिथयः सदा। यत्र भर्ता च भार्या च परस्परविरोधिनौ॥३१॥

रुद्र, ओं रुद्र, शिव को नमस्कार, शिवतर को, शंकर को नमस्कार, ओं महादेव, ओं उमापति, ओं सोने की भुजाधारी। ओं वृषध्वज, ओं नृसिंह, ओं वामन, ओं अतुलनीय, ओं माधव इन नामों का उच्चारण करते और इनकी स्तुति कहते हों। १९-२३।। विष्णु का चक्र जो कि ज्वाला की समूह से बहुत काल कराल है और हजारों सूर्य के समान है, ऐसा उग्र चक्र उनके अशुभों को सदा नष्ट करता है। २४।। जिस घर में स्वाहाकार और वषट्कार होता हो, जहाँ शिव के लिंग की पूजा होती हो और जहाँ वासुदेव की पूजा में लोग लीन हों उस घर को छोड़ देना। जहाँ उच्च स्वर से सामवेद के मन्त्रों का उच्चारण होता हो और जहाँ वैदिक प्रार्थनाओं को दोहराने में लोग लगे हों और प्रतिदिन के धार्मिक कृत्य में लीन हों तथा वासुदेव की पूजा में लीन हों, उन घरों को दूर से ही छोड़ देना। २५-२६।। जहाँ पर अग्नि होम कार्य पूरा किया जाता हो, जहाँ लिंग की पूजा होती हो, और जहाँ पर वासुदेव की मूर्ति हो या चण्डिका विराजमान हों, उन घरों को बचा देना। पापों से दूर रहने वाले लोगों को भी तरह दे देना। लोग जो कि नित्य और नैमित्तिक यज्ञ द्वारा महेश्वर की पूजा करते हों। हे दुःसह! इस स्त्री के साथ वहाँ न जाकर कहीं और जगह जाना। जिन लोगों के द्वारा वेद पढ़े जाते हों, गायें, गुरुओं और अतिथियों और रुद्र भक्तों की नित्य पूजा की जाती हो उन लोगों को छोड़ देना चाहिए। २७-२९।।

दुःसह ने कहा

हे मुनिश्रेष्ठ! जहाँ पर मेरा प्रवेश उचित हो और मैं निडर होकर वहाँ प्रवेश कर सकूँ, उन स्थानों को बताइए। ३०।।

मार्कण्डेय ने कहा

अपनी पत्नी के साथ निडर होकर वहाँ प्रवेश कर सकोगे जिस घर में पति और पत्नी आपस में विरोधी हों और जहाँ कि वैदिक गीतों में पारंगत ब्राह्मण, गायें, और अतिथि जहाँ पर कभी भी उपस्थित न होते हों, जहाँ

सभार्यस्त्वं गृहं तस्य विशेषा भयवर्जितः। देवदेवो महादेवो रुद्रस्त्रभुवनेश्वरः॥३२॥  
 विनिंद्यो यत्र भगवान् विशस्व भयवर्जितः। वासुदेवरतिर्नास्ति यत्र नास्ति सदाशिवः॥३३॥  
 जपहोमादिकं नास्ति भस्म नास्ति गृहे नृणाम्। पर्वण्यभयर्चनं नास्ति चतुर्दश्यां विशेषतः॥३४॥  
 कृष्णाष्टम्यां च रुद्रस्य संध्यायां भस्मवर्जिताः। चतुर्दश्यां महादेवं न यजन्ति च यत्र वै॥३५॥  
 विष्णोर्नामविहीनां ये संगताश्च दुरात्मभिः। नमः कृष्णाय शर्वाय शिवाय परमेष्ठिने॥३६॥  
 ब्राह्मणाश्च नरा मूढा न वर्दन्ति दुरात्मकाः। तत्रैव सततं वत्स सभार्यस्त्वं समाविश॥३७॥  
 वेदधोषो न यत्रास्ति गुरुपूजादयो न च। पितृकर्मविहीनांस्तु सभार्यस्त्वं समाविश॥३८॥  
 रात्रौ रात्रौ गृहे यस्मिन् कलहो वर्तते मिथः। अनया सार्धमनिशं विश त्वं भयवर्जितः॥३९॥  
 लिंगार्चनं यस्य नास्ति यस्य नास्ति जपादिकम्। रुद्रभक्तिर्विनिंदा च तत्रैव विश निर्भयः॥४०॥  
 अतिथिः श्रोत्रियो वापि गुरुर्वा वैष्णवोपि वा। न संति यद्गृहे गावः सभार्यस्त्वं समाविश॥४१॥  
 बालानां प्रेक्षमाणानां यत्रादत्त्वा त्वभक्षयन्। भक्ष्याणि तत्र संहृष्टः सभार्यस्त्वं समाविश॥४२॥  
 अनभ्यर्च्य महादेवं वासुदेवमथापि वा। अहुत्वा विधिवद्यत्र तत्र नित्यं समाविश॥४३॥  
 पापकर्मरता मूढा दयाहीनाः परस्परम्। गृहे यस्मिन्स्मासांते देशे वा तत्र संविश॥४४॥

देवताओं के देवता तीनों लोकों के स्वामी महेश्वर की निन्दा होती हो, उस स्थान पर तुम रंच मात्र भय के बिना प्रवेश करना। अपनी पत्नी के साथ उन घरों में बेहिचक प्रवेश करना। जहाँ वासुदेव की भक्ति न हो, जहाँ सदाशिव उपस्थित न हों, जय होम आदि न किये जाते हों, जिस घर में भस्म न रखी जाती हो, पवों पर विशेष रूप से चतुर्दशी और अष्टमी (कृष्ण पक्ष की) में रुद्र की पूजा न की जाती हो, जिन घरों में प्रातः और सायंकाल ब्राह्मण लोग संध्या न करते हों, जहाँ वे चतुर्दशी तिथि को महादेव की पूजा न करते हों। जहाँ पर विष्णु के नामों से लोग रहित हों, जहाँ दुष्ट लोग सम्पर्क रखते हों, वहाँ पर अपनी पत्नी के साथ निरन्तर प्रवेश करो। जहाँ ब्राह्मण लोग दुष्ट हों और कृष्ण को नमस्कार, शिव को नमस्कार, सर्व को नमस्कार, परमेष्ठी को नमस्कार ये मन्त्र न दोहराते हों॥३१-३७॥ अपनी पत्नी के पास तुम उन स्थानों में प्रवेश करो जहाँ वेद मन्त्रों का उच्च स्वर से पाठ न होता हो, जहाँ गुरुओं की पूजा न होती हो, और जहाँ लोग पितृकर्म न करते हों॥३८॥ इस महिला के साथ निडर होकर सदा प्रवेश करना जिन घरों में हर रात आपस में लोगों में कलह होता हो॥३९॥ जहाँ पर लिंग की पूजा न होती हो, जहाँ जप न किया जाता हो और रुद्र की भक्ति जहाँ निन्दित हो, वहाँ निर्भीकता से प्रवेश करना॥४०॥ वहाँ अपनी पत्नी के साथ उस घर में प्रवेश करना जहाँ पर अतिथि, श्रोत्रिय ब्राह्मण, गुरु, वैष्णव और गायें उपस्थित न हो॥४१॥ तुम प्रसन्नतापूर्वक अपनी पत्नी के साथ उस स्थान में प्रवेश करना जहाँ खाने पीने की चीजों को लोग पाने के लिए निहारते हुए बच्चों को न देकर स्वयं खाते हों॥४२॥ जहाँ पर महादेव की पूजा न करके, विधिपूर्वक हवन न करके, लोग रहते हों, वहाँ पर तुम प्रवेश करना॥४३॥ जहाँ लोग पापमय क्रिया-कलापों में लगे हुए हों, लोग निर्दयी हों, आपस में सदभावना न रखते हों, उस घर और देश में तुम प्रवेश करना॥४४॥ उस घर में पहुँचना जहाँ घरवालियाँ

प्राकारागारविध्वंसा न चैवेड्या कुदुंबिनी। तदगृहं तु समासाद्य वस नित्यं हि हृष्टधीः॥४५॥  
 यत्र कंटकिनो वृक्षा यत्र निष्पाववल्लरी। ब्रह्मवृक्षश्च यत्रास्ति सभार्यस्त्वं समा विश॥४६॥  
 अगस्त्याकार्दयो वापि बन्धुजीवो गृहेषु वै। करवीरो विशेषेण नन्द्यावर्तमथापि वा॥४७॥  
 मल्लिका वा गृहे येषां सभार्यस्त्वं समाविश। कन्या च यत्र वै वल्ली द्रोही वा च जटी गृहे॥४८॥  
 बहुला कदली यत्र सभार्यस्त्वं समाविश। तालं तमालं भल्लातं तितिडीखण्डमेव च॥४९॥  
 कदंबः खादिरं वापि सभार्यस्त्वं समाविश। न्यग्रोर्धं वा गृहे येषामश्वत्थं चूतमेव वा॥५०॥  
 उदुंबरं वा पनसं सभार्यस्त्वं समाविश। यस्य काकगृहं निंबे आरामे वा गृहेषि वा॥५१॥  
 दंडिनी मुंडिनी वापि सभार्यस्त्वं समाविश। एका दासी गृहे यत्र त्रिगवं पञ्चमाहिषम्॥५२॥  
 षडश्वं सप्तमातंगं सभार्यस्त्वं समाविश। यस्य काली गृहे देवी प्रेतरूपा च डाकिनी॥५३॥  
 क्षेत्रपालोथवा यत्र सभार्यस्त्वं समाविश। भिक्षुबिंबं च वै यस्य गृहे क्षपणकं तथा॥५४॥  
 बौद्धं वा बिंबमासाद्य तत्र पूर्णं समाविश। शयनासनकालेषु भोजनाटनवृत्तिषु॥५५॥  
 येषां वदति नो वाणी नामानि च हरेः सदा। तदगृहं ते समाख्यातं सभार्यस्य निवेशितुम्॥५६॥  
 पाषंडाचारनिरताः श्रोतस्मार्तबहिष्कृताः। विष्णुभक्तिविनिर्मुक्ता महादेवविनिंदकाः॥५७॥  
 नास्तिकाश्च शठा यत्र सभार्यस्त्वं समाविश। सर्वस्मादधिकत्वं ये न वदंति पिनाकिनः॥५८॥  
 साधारणं स्मरन्त्येनं सभार्यस्त्वं समाविश। ब्रह्मा च भगवान्विष्णुः शक्रः सर्वसुरेश्वरः॥५९॥  
 रुद्रप्रसादजाश्वेति न वदंति दुरात्मकाः। ब्रह्मा च भगवान्विष्णुः शक्रश्च सम एव च॥६०॥  
 वदंति मूढाः खद्योतं भानुं वा मूढचेतसः। तेषां गृहे तथा क्षेत्र आवासे वा सदाऽनया॥६१॥

अपने घरों को साफ-सुथरा न रखती हों, जो घर और जिसकी चाहारदिवारी गिरी हो और जहाँ स्त्रियाँ प्रशंसा की पत्र न हों, वहाँ सदा प्रसन्न मन से ठहरना॥४५॥ जहाँ पर काँटेदार पेड़ हों, जहाँ पावटा नामक लता हो, जहाँ ब्रह्म वृक्ष (पलाश) हो। अगर घर के भीतर अगस्त्य, मदार, बन्धुजीव, मल्लिका, कन्या लता, तगर, द्रोही (नीम की एक जाति), जटामासी, नील, काला केला, ताल, तमाल, भेल, तितिडीखण्ड, करवीर, कदंब, रवादिर, बरगद, पीपल, आम, गूलर, कटहल, नीम में कौओं के घोंसले, नीम का पेड़ घर में या पार्क में, दण्डिनी और मुण्डिनी हों।॥४६-५१॥ जिस घर में अकेली एक दासी (नौकरानी) हो, जहाँ पर तीन गायें, पाँच घोड़े, पाँच हाथियाँ हो, वहाँ तुम अपनी पत्नी के साथ प्रवेश करो। जिस घर में काली देवी के रूप में हो, डाकिनी प्रेत के रूप में हो और जहाँ क्षेत्रपाल (पवित्र केन्द्रों के अभिभावक) जिस घर में बौद्ध भिक्षुओं की मूर्ति या बुद्ध की मूर्ति हो, वहाँ पर बेखटके प्रवेश करो। जिन घरों में सोने के लिए जाते समय, आसन पर बैठते समय, इधर-उधर अपने कामों में लगे रहते समय, जैसे—भोजन करते समय विष्णु का नाम न लिया जाय, वे घर तुम्हारे ही हैं। उनमें तुम सप्तनीक प्रवेश करो।॥५२-५६॥ जहाँ लोग पाखण्ड आचार में लगे हों और श्रौत और स्मार्त कार्यों को छोड़ दिये हों, विष्णु की भक्ति न करते हों और महादेव के निंदक हों, जहाँ पर नास्तिक और मूर्ख हों, वहाँ पर अपनी पत्नी सहित प्रवेश करो। जो लोग पिनाकधारी शिव को सब से अधिक न मानते हीं और उनको साधारण मूर्ति की तरह समझते हों। वहाँ पर सप्तनीक प्रवेश करो। वे जो केवल ब्रह्म को, विष्णु

विश भुंक्ष्व गृहं तेषां अपि पूर्णमनन्यधीः। येऽश्रंति केवलं मूढाः पक्वमन्नं विचेतसः॥६ २॥  
 स्नानमंगलहीनाश्च तेषां त्वं गृहमाविशा। या नारी शौचविभ्रष्टा देहसंस्कारवर्जिता॥६ ३॥  
 सर्वभक्षरता नित्यं तस्याः स्थाने समाविशा। मलिनास्याः स्वयं मत्या मलिनांबरधारिणः॥६ ४॥  
 मलदंता गृहस्थाश्च गृहे तेषां समाविशा। पादशौचविनिर्मुक्ताः संध्याकाले च शायिनः॥६ ५॥  
 संध्यायामश्च ते ये वै गृहं तेषां समाविशा। अत्याशनरता मत्या अतिपानरता नराः॥६ ६॥  
 द्यूतवादक्रियामूढाः गृहे तेषां समाविशा। ब्रह्मस्वहारिणो ये चायोग्यांश्चैव यजंति वा॥६ ७॥  
 शूद्रान्नभोजिनो वापि गृहं तेषां समाविशा। मद्यपानरताः पापा मांसभक्षणतत्पराः॥६ ८॥  
 परदाररता मत्या गृहं तेषां समाविशा। पर्वण्यनचाभिरता मैथुने वा दिवा रताः॥६ ९॥  
 संध्यायां मैथुनं येषां गृहे तेषां समाविशा। पृष्ठतो मैथुनं येषां श्वानवन्मृगवच्च वा॥७ ०॥  
 जले वा मैथुनं कुर्यात्सभार्यस्त्वं समाविशा। रजस्वलां स्त्रियं गच्छेच्चांडालीं वा नराधमः॥७ १॥  
 कन्यां वा गोगृहे वापि गृहं तेषां समाविशा। बहुना किं प्रलापेन नित्यकर्मबहिष्कृताः॥७ २॥  
 रुद्रभक्तिविहीना ये गृहं तेषां समाविशा। शृंगैर्दिव्यौषधैः क्षुद्रैः शेफ आलिष्य गच्छति॥७ ३॥

और देवताओं के शासक इन्द्र को यह न मानते हो कि ये रुद्र की कृपा से उत्पन्न हुए हों, मूँढ लोग ये कहते हैं कि भगवान् विष्णु, इन्द्र, शिव के बराबर हैं, जो जुगुनू और सूर्य दोनों बराबर मानते हों। यहाँ तक कि उनके घर सब प्रकार से समृद्ध भी हैं, तब भी वहाँ बिना डर के अपनी पत्नी के साथ प्रवेश करो और मौज करो। ५७-६ १ ।। उन मूर्ख लोगों के आवास में प्रवेश करो जो पकाये गये भोजन को स्वयं खाते हों तथा जो स्नान और मंगल कार्य से रहित हैं। उनके घरों में प्रवेश करो। उस घर में प्रवेश करो जहाँ स्त्री स्वच्छता की आदतों और देह के संस्कार से रहित हो या जो सब प्रकार अभक्ष्य प्रदार्थ को खाने में लगी हो। उसके घर में प्रवेश करो जिसके मुँह गन्दे हों, जो गन्दे वस्त्र पहनते हों, जिनके दाँत गन्दे हों, ऐसे गृहस्थों के घर में प्रवेश करो। जो अपने घरों को भलीभाँति न धोते हों, संध्याकाल में सोते हों और संध्या के समय भोजन करते हों, इनके घरों में प्रवेश करो। ६ २-६ ५ ।।

जो लोग बहुत आहारी हों, अधिक पियक्कड़ हों, जो मूर्खता से जुआ खेलने में लगे हों और बकवासी हों, व्यर्थ वाद-विवाद करते हों, उनके घरों में प्रवेश करो। उन लोगों के घरों में प्रवेश करो जो ब्राह्मणों के धन का अपहरण करते हों। जो शूदों द्वारा बनाये भोजन को खाते हों, उनके घरों में प्रवेश करो। जो मद्यपान में रत हों, जो मांस भक्षी हों, जो दूसरों की स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करने में लगे हों, उनके घरों में प्रवेश करो। ६ ६-६ ८ ।। उन लोगों के घरों में प्रवेश करो जो दिन में मैथुन (स्त्री से भोग) करते हों। जो पर्वों पर भी पूजापाठ न करते हों, संध्या काल में अपनी पत्नी से मैथुन करते हों। जो कुत्तों की तरह और पशुओं की भाँति पीठ पर से मैथुन करते हों, या जल में मैथुन करते हों, उनके घरों में पत्नी सहित प्रवेश करो। जो अधम पुरुष रजस्वला स्त्री से, चाण्डाली से मैथुन करता हो, जो कन्या के साथ मैथुन करे या गोशाला में मैथुन करे उसके घर में प्रवेश करो। अधिक कहने का क्या प्रयोजन? उनके घरों में प्रवेश करो जो नित्य कर्म (संध्या पूजा आदि) न करते हों या रुद्र

भगद्रावं करोत्यस्मात्सभार्यस्त्वं समाविश॥  
सूत उवाच

इत्युक्त्वा स मुनिः श्रीमान्निर्माज्य नयने तदा॥७४॥

ब्रह्मिर्ब्रह्मसंकाशस्तत्रैवांतर्द्धमातनोत् । दुःसहश्च तथोक्तानि स्थानानि च समीयिवान्॥७५॥

विशेषादेवदेवस्य विष्णोर्निर्दारतात्मनाम्।

सभार्यो मुनिशार्दूलः सैषा ज्येष्ठा इति स्मृता॥७६॥

दुःसहस्तामुवाचेदं तडागाश्रममंतरे। आस्व त्वमत्र चाहं वै प्रवेक्ष्यामि रसातलम्॥७७॥

आवयोः स्थानमालोक्य निवासार्थं ततः पुनः। आगमिष्यामि ते पार्श्वमित्युक्ता तमुवाच सा॥७९॥

किमश्चामि महाभाग को मे दास्यति वै बलिम्।

इत्युक्तस्तां मुनिः प्राह याः स्त्रियस्त्वां यजंति वै॥७९॥

बलिभिः पुष्पधूपैश्च न तासां च गृहं विश। इत्युक्त्वा त्वाविशत्तत्र पातालं बिलयोगतः॥८०॥

अद्यापि च विनिर्मग्नो मुनिः स जलसंस्तरे। ग्रामपर्वतबाहोषु नित्यमास्तेऽशुभा पुनः॥८१॥

प्रसंगादेवदेवेशो विष्णुस्त्रिभुवनेश्वरः। लक्ष्म्या दृष्टस्तया लक्ष्मीः सा तमाह जनार्दनम्॥८२॥

भर्ता गतो महाबाहो बिलं त्यक्त्वा स मां प्रभो। अनाथाहं जगन्नाथ वृत्तिं देहि नमोस्तु ते॥८३॥

की भक्ति से विहीन हैं, उनके घरों में प्रवेश करो। जो बनावटी (कृत्रिम) लिंग से, साधारण या दिव्य औषधियों को अप्रेने लिंग पर चुपड़कर मैथुन करते हों, उनके घरों में प्रवेश करो। ६९-७५॥

### सूत बोले

ऐसा कहकर श्रीमान मुनि ब्रह्मिं अपने नेत्रों को पोंछकर वहीं अन्तर्ध्यान हो गये। दुःसह भी उपरोक्त स्थानों को चले गये। श्रेष्ठ मुनि ज्येष्ठा के साथ विशेष रूप से उन घरों को गये जहाँ पर भगवान विष्णु की निन्दा में लोग लगे हुये थे। यह वह देवी है जिसको ज्येष्ठा के नाम से जाना जाता है। ७६॥ एक बार दुःसह ने उससे कहा। तुम इस तालाब के किनारे इस कुटी में रहो। मैं पाताल लोक में प्रवेश करूँगा। वहाँ दोनों के रहने योग्य निवास की तलाश करके फिर तुम्हारे पास लौटूँगा। ऐसा कहने पर ज्येष्ठा ने कहा, “मैं यहाँ क्या खाऊँगी? मुझको यहाँ कौन भोजन देगा?” उसके वैसा कहने पर मुनि ने कहा। ७७-७८॥ उन स्त्रियों के घरों में तुम मत प्रवेश करना जो तुमको भोजन के साथ धूप, पुष्प और सुगंधित धूप से पूजा करती हैं। इतना कहकर मुनि एक बिल के रास्ते से पाताल लोक में चले गये। वहाँ पर मुनि आज भी जल के स्तर में रहते हैं। अशुभता की देवी ज्येष्ठा गाँवों और पर्वतों के बाहर नित्य रहती हैं। ७९-८१॥ प्रसंग वश अकस्मात् देवेश त्रिलोकीनाथ भगवान् विष्णु लक्ष्मी के साथ थे। उनको उसने (अलक्ष्मी ने) देखा और भगवान् जनार्दन विष्णु से कहा, “हे महाबाहु! मेरे पति मुझको छोड़कर बिल मार्ग से पाताल चले गये। मैं अनाथ हूँ। हे विश्वेश्वर! आप को प्रणाम। आप मुझको वृत्ति (भोजन आदि का साधन) दीजिये”। ८२-८३॥

सूत उवाच

इत्युक्तो भगवान्विष्णुः प्रहस्याह जनार्दनः। ज्येष्ठामलक्ष्मीं देवेशो माधवो मधुसूदनः॥८४॥  
श्रीविष्णुरुवाच

ये रुद्रमनघं शर्वं शंकरं नीललोहितम्। अंबां हैमवतीं वापि जनित्रीं जगतामपि॥८५॥  
मद्भक्तान्निंद्यन्त्यत्र तेषां वित्तं तवैव हि। येषि चैव महादेवं विनिंद्यैव यजंति माम्॥८६॥  
मूढा ह्यभाग्या मद्भक्ता अपि तेषां धनं तव। यस्याज्ञया ह्यहं ब्रह्मा प्रसादाद्वर्तते सदा॥८७॥  
ये यजंति विनिंद्यैव मम विद्वेषकारकाः। मद्भक्ता नैव ते भक्ता इव वर्तीति दुर्मदाः॥८८॥  
तेषां गृहं धनं क्षेत्रमिष्टापूर्तं तवैव हि॥

सूत उवाच

इत्युक्त्वा तां परित्यज्य लक्ष्म्याऽलक्ष्मीं जनार्दनः॥८९॥

जजाप भगवान्रुद्रमलक्ष्मीक्षयसिद्धये। तस्यात्प्रदेयस्तस्यै च बलिर्नित्यं मुनीश्वराः॥९०॥  
विष्णुभक्तैर्न संदेहः सर्वयत्नेन सर्वदा। अंगनाभिः सदा पूज्या बलिभिर्विधीद्विजाः॥९१॥  
यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्वा द्विजोत्तमान्। अलक्ष्मीवृत्तमनघो लक्ष्मीवाल्लभते गतिम्॥९२॥  
इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अलक्ष्मीवृत्तं नाम षष्ठोऽध्यायाय॥६॥

विष्णु बोले

“जो निष्पाप रुद्र शर्व, शंकर, नीललोहित, शिव और जगत की माता हैमवती (पर्वती) और मेरे भक्तों की चिन्ता न करते हैं, जो महादेव की निन्दा करके मेरी पूजा करते हैं उनका वित्त तो तुम्हारा ही है। जिसकी पूजा से मैं और ब्रह्मा सदा अस्तित्व में हैं। ऐसे अभागे, मूढ़ मेरे भक्तों का धन भी तुम्हारा है। जो मुझसे विद्वेष करके मेरी निन्दा करते हों, मेरी भक्ति न करते हों, मेरी पूजा भक्त की तरह न करते हों वे मेरे भक्त नहीं हैं। उनका धन-धान, खेत-बारी, उनके द्वारा किये गये शुभ कार्य भी तुम्हारा ही है। कूप, तालाब आदि का खनन भी तुम्हारा ही है”॥८४-८८॥

सूत बोले

ऐसा कहकर भगवान विष्णु लक्ष्मी सहित वहाँ से चले गये। तब विष्णु ने अलक्ष्मी के नाश के लिए भगवान रुद्र का जाप किया। तब से विष्णु भक्तों के द्वारा सदा उस अलक्ष्मी को बलि दी जाती है। हे ब्राह्मणों! स्वियों द्वारा अनेक प्रकार की बलि देकर अलक्ष्मी की पूजा करनी चाहिये। वह जो कि इस अलक्ष्मी कथानक को पढ़ता है, सुनता है या उत्तम ब्राह्मणों को सुनाता है वह पाप से निष्पाप होकर लक्ष्मीवान होता है और मोक्ष को प्राप्त करता है॥९१-९२॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अलक्ष्मी का कथानक  
( उत्पत्ति और क्रियाकलाप ) नामक छठवाँ अध्याय समाप्त॥६॥

## सप्तमोऽध्यायः द्वादशाक्षरप्रशंसा

ऋषय ऊचुः

किंजपान्मुच्यते जंतुः सर्वलोकभयादिभिः। सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति परमां गतिम्॥१॥  
अलक्ष्मीं वाथ संत्यज्य गमिष्यति जपेन वै। लक्ष्मीवासो भवेन्मत्यः सूत वक्तमिहार्हसि॥२॥

सूत उवाच

पुरा पितामहेनोक्तं वसिष्ठाय महात्मने। वक्ष्ये संक्षेपतः सर्वं सर्वलोकहिताय वै॥३॥  
शृण्वन्तु वचनं सर्वे प्रणिपत्य जनार्दनम्। देवदेवमजं विष्णुं कृष्णमच्युतमव्ययम्॥४॥  
सर्वपापहरं शुद्धं मोक्षदं ब्रह्मवादिनम्। मनसा कर्मणा वाचा यो विद्वान्पुण्यकर्मकृत्॥५॥  
नारायणं जपेन्नित्यं प्रणम्य पुरुषोत्तमम्। स्वपन्नारायणं देवं गच्छन्नारायणं तथा॥६॥  
भुंजन्नारायणं विप्रास्तिष्ठञ्चाग्रत्सनातनम्। उन्मिष्टन्निमिष्टन्वापि नमो नारायणेति वै॥७॥  
भोज्यं पेयं च लेह्णं च नमो नारायणेति च। अभिमंत्र्य सृशन्भुक्ते स याति परमां गतिम्॥८॥  
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति च सतां गतिम्। अलक्ष्मीश्च मया प्रोक्ता पत्नी या दुःसहस्र्य च॥९॥

## सातवाँ अध्याय द्वादशाक्षर मंत्र की प्रशंसा

ऋषिगण बोले

प्राणी लोग किस मन्त्र के जपने से सांसारिक भयों से मुक्त हो जाते हैं। वे कैसे पापों से मुक्त होते हैं और मोक्ष प्राप्त करते हैं। किस जप से वह अलक्ष्मी से बच सकता है और कैसे व्यक्ति लक्ष्मी का वास (सौभाग्य) प्राप्त कर सकता है। हे सूत! आप इसको कहने के योग्य हैं।।१-२।।

सूत बोले

सब लोकों के कल्याण के लिए मैं संक्षेप में कहूँगा जो कि पहले ब्रह्मा ने महात्मा वसिष्ठ से इस विषय में कहा था।।३।। विष्णु जो देवताओं के स्वामी हैं, अज हैं, जो कि कृष्ण हैं, अच्युत और सब पापों के हरने वाले, सब ब्रह्मवादियों के मोक्ष देने वाले हैं। सब लोग उनको प्रणाम करके मेरी बातों को सुनो! वह जो कि विद्वान् है, वह जो पुण्य कर्म करता और नारायण के नामों को जपता और मन से उनको प्रणाम करके जाते हुए मन से वाणी से और शरीर से उनको स्मरण करता है सोते हुए, चलते हुए, भोजन करते हुए, खड़े हुए, जागते हुए, आँख खोले हुए, नारायण का नाम लेता है। हे ब्राह्मणों, नमो नारायण इस शब्दों को जो दोहराता है, जो अन्तरात्मा विष्णु को याद करता है। भोज्य पेय और लेह्ण पदार्थों का उपयोग करता है, इस मन्त्र से अभिमन्त्रित उन वस्तुओं को छूते हुए खाता है। वह मोक्ष को प्राप्त करता है।।४-८।। वह सब इन बातों से छुटकारा पाता है और उत्तम

नारायणपदं श्रुत्वा गच्छत्येव न संशयः। या लक्ष्मीर्देवदेवस्य हरेः कृष्णास्य वल्लभा॥१०॥

गृहे क्षेत्रे तथावासे तनौ वसति सुव्रताः।

आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः॥११॥

इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा। किं तस्य बहुभिर्मत्रैः किं तस्य बहुभिर्वैः॥१२॥

नमो नारायणायेति मंत्रः सर्वार्थसाधकः। तस्मात्सर्वेषु कालेषु नमो नारायणेति च॥१३॥

जपेत्स याति विप्रेंद्रा विष्णुलोकं सबांधवः। अन्यच्च देवदेवस्य शृण्वन्तु मुनिसत्तमाः॥१४॥

मंत्रो मया पुराभ्यस्तः सर्ववेदार्थसाधकः। द्वादशाक्षरसंयुक्तो द्वादशात्मा पुरातनः॥१५॥

तस्यैवेह च माहात्म्यं संक्षेपात्प्रवदामि वः। कश्चिद्दिद्वजो महाप्राज्ञस्तपस्तप्त्वा कथंचन॥१६॥

पुत्रमेकं तयोत्पाद्य संस्कारैश्च यथाक्रमम्। योजयित्वा यथाकालं कृतोपनयनं पुनः॥१७॥

अध्यापयामास तदा स च नोवाच किंचन।

न जिह्वा स्पन्दते तस्य दुःखितोऽभूदिद्वजोत्तमः॥१८॥

वासुदेवेति नियतमैतरेयो बदत्यसौ। पिता तस्य तथा चान्यां परिणीय यथाविधि॥१९॥

पुत्रानुत्पादयामास तथैव विधिपूर्वकम्। वेदानधीत्य संपन्ना बभूवुः सर्वसंमताः॥२०॥

ऐतरेयस्य सा माता दुःखिता शोकमूर्छिता। उवाच पुत्राः संपन्ना वेदवेदांगपारगाः॥२१॥

ब्राह्मणौ पूज्यमाना वै मोदयन्ति च मातरम्। मम त्वं भाग्यहीनायाः पुत्रो जातो निराकृतिः॥२२॥

ममात्र निधनं श्रेयो न कथंचन जीवितम्। इत्युक्तः स च निर्गम्य यज्ञावाटं जगाम वै॥२३॥

गति को प्राप्त करता है। दुःसह की पत्नी अलक्ष्मी जिसके विषय में मैंने कहा, वह 'नारायण' शब्द को सुनने पर निसन्देह दूर भाग जाती है। हे सुव्रत लोगों! लक्ष्मी, जो विष्णु, कृष्ण और देवेश की प्रिय पत्नी है। वह व्यक्ति के शरीर, आवास, घर तथा क्षेत्र में वास करती है। सब शास्त्रों का मन्त्रन करके और बार-बार विचार करके यह सारांश निकला है कि सदा नारायण का ध्यान करना चाहिए। बहुत से मन्त्रों के जाने और बहुत से ब्रतों के करने से क्या लाभ? ॥१९-२०॥ 'नमो नारायणाय' यह मन्त्र सब अर्थों का साधक है। इसलिए सब अवसर पर नमो नारायणाय मन्त्र को जपना चाहिए। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! ऐसा जप करने वाले अपने बान्धवों सहित विष्णु लोक को जाते हैं। देवेश विष्णु का दूसरा मन्त्र सुनो। पहले मैंने इस मन्त्र का अभ्यास किया है। ये वेदों के तत्त्व को प्राप्त करने का साधन है। यह बारह अक्षरों से युक्त है और बहुत प्राचीन है। संक्षेप में तुम लोगों को उसी मन्त्र का माहात्म्य (महत्त्व) बतलाता हूँ। ॥२३-२६॥ कोई महान् बुद्धिमान ब्राह्मण था। उसने तपस्या की और उसने एक पुत्र प्राप्त करके क्रमशः संस्कारों का उचित समय पर करके उसने उस पुत्र का उपनयन संस्कार किया। उसने उसको पढ़ाना प्रारम्भ किया किन्तु वह अपने मुँह से कोई शब्द उच्चारण नहीं कर सका। उसकी जीभ बोलने में हिलती भी नहीं थी। तब वह श्रेष्ठ ब्राह्मण बहुत दुःखी हुआ। ॥२६-२८॥ उस ब्राह्मण के पुत्र का नाम ऐतरेय था। वह सदा वासुदेव कहता था। उसके पिता ने विधिपूर्वक दूसरा विवाह कर लिया तथा विधिपूर्वक कई पुत्रों को पैदा किया। उन सबने वेदों को पढ़ा और अपनी विद्या के बल से धनी हो गये। ॥२९-२०॥ ऐतरेय की माता ने दुःखित और शोक से मूर्छित होकर कहा, "मेरी सौत से पैदा हुए पुत्र वेद और वेदांग में पारंगत विद्वान्

तस्मिन्याते द्विजानां तु न मंत्राः प्रतिपेदिरे। ऐतरेये स्थिते तत्र ब्राह्मणा मोहितास्तदा॥२४॥  
 ततो वाणी समुद्भूता वासुदेवेति कीर्तनात्। ऐतरेयस्य ते विप्राः प्रणिपत्य यथातथम्॥२५॥  
 पूजां चक्रुस्ततो यज्ञं स्वयमेव समागतम्। ततः समाप्य तं यज्ञमैतरेयो धनादिभिः॥२६॥  
 सर्ववेदान्सदस्याह स षडंगान् समाहिताः। तुष्टुवुश्च तथा विप्रा ब्रह्माद्याश्च तथा द्विजाः॥२७॥  
 सप्तर्जुः पुष्पवर्षाणि खेचराः सिद्धचारणाः। एवं समाप्य वे यज्ञमैतरेयो द्विजोत्तमाः॥२८॥  
 मातरं पूजयित्वा तु विष्णोः स्थानं जगाम ह। एतद्वै कथितं सर्वं द्वादशाक्षरवैभवम्॥२९॥  
 पठतां शृणवतां नित्यं महापातकनाशनम्। जपेद्यः पुरुषो नित्यं द्वादशाक्षरमव्ययम्॥३०॥  
 स याति दिव्यमतुलं विष्णोस्तत्परमं पदम्। अपि पापसमाचारो द्वादशाक्षरतत्परः॥३१॥  
 प्राप्नोति परमं स्थानं नात्र कार्या विचारणा। किं पुनर्ये स्वधर्मस्था वासुदेवपरायणाः॥३२॥  
 दिव्यं स्थानं महात्मानः प्राप्नुवंतीति सुब्रताः॥३३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे  
द्वादशाक्षरप्रशंसानाम सप्तमीडृष्ट्यायः॥३७॥**

हैं। वे ब्राह्मणों द्वारा पूजित हैं और अपनी माता को सब प्रकार से प्रसन्न रखते हैं। मुझ अभागी के तुम ऐसे पुनर्पैदा हुए जो कि शून्य हो। (किसी काम के योग्य नहीं हो)। किसी प्रकार जीवित रहना उचित नहीं है।” माता द्वारा ऐसा कहने पर वह पुत्र यज्ञ स्थल को चला गया। २१-२३।। जब उसने यज्ञशाला में प्रवेश किया तो वहाँ स्थित ब्राह्मणों के मुँह से कोई मन्त्र ही नहीं निकल सके। वे ब्राह्मण ऐतरेय के वहाँ पहुँचने पर मोहित हुए, तो ऐतरेय के मुँह से जबतक ऐतरेय वहाँ रहा ब्राह्मण लोगों का गला बन्द रहा। २४।। किन्तु जब ऐतरेय ने ‘वासुदेव’ अपने मुँह से कहा तो उन ब्राह्मणों की वाणी खुल गयी। वे मन्त्रों का उच्चारण करने लगे। तब वे ब्राह्मण ऐतरेय के आगे उसको प्रणाम करके स्वयं आये हुए ऐतरेय की पूजा की। तब यज्ञ कार्य चलता रहा और ऐतरेय को धन तथा अन्न तथा वस्त्रों को देकर सम्मानित किया गया। अन्त में उसने छः अंगों सहित सब वेदों का उस यज्ञ कर्ता ब्राह्मणों की सभा में उच्चारण किया तो वहाँ स्थित है ब्राह्मणों! ब्रह्मा और अन्य ब्राह्मणों ने ऐतरेय की स्तुति की। २५-२७।। सिद्धों और चारणों ने आकाश से फूलों की वर्षा की। हे उत्तम ब्राह्मणों! इस प्रकार यज्ञ की समाप्ति हुई। ऐतरेय अपने घर आया। उसने अपनी माता की पूजा करके विष्णु लोक को प्रस्थान किया। यह द्वादशाक्षर मन्त्र के माहात्म्य को मैंने पूर्ण रूप से कह सुनाया। जो इसको पढ़ता और सुनता है उसके महापाप नष्ट हो जाते हैं। जो पुरुष इस द्वादशाक्षर मन्त्र को जपता है उसका जीवन चाहे पापपूर्ण ही रहा हो वह दिव्य और अतुल विष्णु के परमधाम को प्राप्त करता है। वह जो द्वादशाक्षर मन्त्र में अभिरुचि रखता है वह परम स्थान को प्राप्त करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। हे सुब्रतो! जो अपने धर्म में स्थित हैं, और वासुदेव की भक्ति में लीन हैं, वे महात्मा लोग दिव्य स्थान को प्राप्त करते हैं। २८-३३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में द्वादशाक्षर मन्त्र की प्रशंसा  
नामक सातवाँ अध्याय समाप्त॥३७॥**

## अष्टमोऽध्यायः अष्टाक्षरमन्त्रः

सूत उवाच

अष्टाक्षरो द्विजश्रेष्ठा नमो नारायणेति च। द्वादशाक्षरमंत्रश्च परमः परमात्मनः॥१॥  
 मंत्रः षडक्षरो विप्राः सर्ववेदार्थसंचयः। यश्चोनमः शिवायेति मंत्रः सर्वार्थसाधकः॥२॥  
 तथा शिवतरायेति दिव्यः पंचाक्षरः शुभः। मयस्कराय चेत्येवं नमस्ते शंकराय च॥३॥  
 सप्ताक्षरोयं रुद्रस्य प्रधानपुरुषस्य वै। ब्रह्मा च भगवान्विष्णुः सर्वेदेवाः सवासवाः॥४॥  
 मंत्रैरेतैर्द्विजश्रेष्ठा मुनयश्च यजन्ति तम्। शंकरं देवदेवेशं मयस्करमजोद्द्वयम्॥५॥  
 शिवं च शंकरं रुद्रं देवदेवमुमापतिम्। प्राहुर्नमः शिवायेति नमस्ते शंकराय च॥६॥  
 मयस्कराय रुद्राय तथा शिवतराय च। जप्त्वा मुच्येत वै विप्रो ब्रह्महत्यादिभिः क्षणात्॥७॥  
 पुरा कश्चिदिद्व्यजः शक्तो धुंधुमूक इति श्रुतः। आसीचृतीये त्रेतायामावर्त्ते च मनोः प्रभोः॥८॥  
 मेघवाहनकल्पे वै ब्रह्मणः परमात्मनः। मेघो भूत्वा महादेवं कृत्तिवासमीश्वरम्॥९॥  
 बहुमानेन वै रुद्रं देवदेवो जनार्दनः। खिन्नोऽतिभाराद्ग्रस्य निःश्वासवर्जितः॥१०॥

## आठवाँ अध्याय अष्टाक्षर मन्त्र

सूत बोले

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! अष्टाक्षर मन्त्र ‘ॐ नमो नरायणाय’ और द्वादशाक्षर मन्त्र ‘ॐ नमो भगवते वासुदेवाय’ ये दोनो मन्त्र परमात्मा के सबसे बड़े मन्त्र हैं। हे ब्राह्मणों! षडक्षर मन्त्र ‘ॐ नमः शिवाय’ सब अर्थों का साधक है। दिव्य पंचाक्षर मन्त्र शिवतराय बहुत शुभ है। ‘मयस्कराय’ भी ऐसा ही मन्त्र है। सप्ताक्षर मन्त्र ‘नमो शंकराय’ प्रधान पुरुष रुद्र का मन्त्र है। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! इन मन्त्रों द्वारा ब्रह्मण, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र सहित सब देवता और ऋषिगण शंकर की पूजा करते हैं। वे शिव, ब्रह्मा के उद्द्वय के कारण, उमा के पति और देवेश की पूजा इन मन्त्रों से करते हैं। वे निरन्तर नमः शिवाय, नमस्ते शंकराय, मयस्कराय, रुद्राय और शिवतराय इन मन्त्रों के जप से ब्राह्मण ब्रह्महत्या आदि पापों से मुक्त हो जाता है॥१-७॥ प्राचीन काल में ब्रह्मा के मेघवाहन कल्प में पहिले तीसरे मन्वन्तर में त्रेता में महान् आत्मा एक शक्तिशाली ब्राह्मण धुंधुमूक ने जन्म लिया। वह कल्प मेघवाहन कहलाता था क्योंकि देवेश विष्णु ने मेघ का रूप धारण किया था। उन्होंने मेघ होकर बहुत श्रद्धा से भगवान महादेव को प्रसन्न करने के लिये यहाँ तक कि श्वास और निःश्वास को भी त्यागकर धोर तपस्या की। वह रुद्र के अतिभार से दुःखी था। उसने नीलकंठ से अपनी समस्या जताकर तपस्या की थी। तब ईशान भगवान शंकर

विज्ञाप्य शितिकंठाय तपश्चक्रेबुजेक्षणः। तपसा परमैश्वर्यं बलं चैव तथाद्भुतम्॥११॥  
 लब्धवान्परमेशानाच्छंकरात्परमात्मनः। तस्मात्कल्पस्तदा चासीन्मेघवाहनसंज्ञयो॥१२॥  
 तस्मिन्कल्पे मुनेः शापाद्बुधुमूकसमुद्भवः। धुंधुमूकात्मजस्तेन दुरात्मा च बभूव सः॥१३॥  
 धुंधुमूकः पुरासत्तो भार्यया सह मोहितः। तस्यां वै स्थापितो गर्भः कामासत्तेन चेतसा॥१४॥  
 अमावास्यामहन्येव मुहूर्ते रुद्रदेवते। अंतर्वल्नी तदा भार्या भुक्ता तेन यथासुखम्॥१५॥  
 असूत सा च तनयं विशल्याख्या प्रयत्नतः। रुद्रे मुहूर्ते मंदेन वीक्षिते मुनिसत्तमाः॥१६॥  
 मातुः पितुस्तथारिष्टं संजात स्तथात्मनः। ऋषी तमूचतुर्विंश्रा धुंधुमूकं मिथस्तदा॥१७॥  
 मित्रावरुणनामानौ दुष्युत्र इति सत्तमौ। वसिष्ठः प्राह नीचोऽपि प्रभावाद्वै बृहस्पतेः॥१८॥  
 पुत्रस्तवासौ दुर्बुद्धिरपि मुच्यति किल्बिषात्। दुःखितो धुंधुमूकोऽसौ दृष्ट्वा पुत्रमवस्थितम्॥१९॥  
 जातकर्मादिकं कृत्वा विधिवत्स्वयमेव च। अध्यापयामास च तं विधिनैव द्विजोत्तमाः॥२०॥  
 तेनाधीतं यथान्यायं धौंधुमूकेन सुव्रताः। कृतोद्वाहस्तदा गत्वा गुरुशुश्रुषणे रतः॥२१॥  
 अनेनैव मुनिश्रेष्ठा धौंधुमूकेन दुर्मदात्। भुक्त्वान्यां वृषलीं दृष्ट्वा स्वभार्यविद्वानिशम्॥२२॥  
 एकशत्यासनगतो धौंधुमूको द्विजाधमः। तथा चचार दुर्बुद्धिस्त्यकृत्वा धर्मगतिं पराम्॥२३॥  
 माध्वी पीता तथा सार्धं तेन रागविवृद्धये। केनापि कारणेनैव तामुद्दिश्य द्विजोत्तमाः॥२४॥  
 निहता सा च पापेन वृषली गतमंगला। ततस्तस्यास्तदा तस्य भ्रातृभिर्निहतः पिता॥२५॥

से अपने तम से उसको ऐश्वर्य और अद्भुत बल प्राप्त किया। इसी कारण उस कल्प का नाम मेघवहन कल्प हुआ। ८-१२।। मेघवहन कल्प में एक ऋषि के शाप से धुंधुमूक दुरात्मा दुष्ट हो गया। धुंधुमूक अपनी पत्नी के ऊपर मोहित था। उसने कामासत्त हो उस पत्नी में गर्भ स्थापित किया। १३-१४।। अमावस्या तिथि में रुद्र देवता के मुहूर्त में दिन के समय उसने अपनी गर्भवती पत्नी से सुखपूर्वक सम्भोग किया। १५।। उसका नाम विशल्या था। उसने बहुत कष्ट से एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम विशाल रखा गया। शनि ग्रह द्वारा दृष्ट रुद्र मुहूर्त में जन्म लेने के कारण वह अपने माता-पिता का तथा अपना भी अरिष्ट हो गया। मित्र और वरुण नामक दो ऋषियों ने धुंधुमूक से गुप्त रूप से कहा कि ‘विशाल एक दुष्ट पुत्र है।’ वसिष्ठ ने कहा “यद्यपि तुम्हारा पुत्र नीच और दुष्ट है फिर भी बृहस्पति के प्रभाव से वह दुर्बुद्धि अपने पापों से मुक्त हो जायगा।” दुःखी धुंधुमूक ने पुत्र का जातकर्म आदि संस्कार करके उसको स्वयं विधिपूर्वक पढ़ाया। हे सुव्रत! उसने भी धुंधुमूक से सब पूर्ण रीति से पढ़ा। उसका विवाह हुआ और वह पिता की सेवा करने लगा। १६-२१।। हे श्रेष्ठ मुनियों! इसके बाद उस दुष्ट विशाल ने उदंडता वश एक शूद्र की पत्नी को पटाकर अपनी स्त्री के समान उस शूद्रा के साथ दिन-रात एक ही आसन और एक ही विस्तर पर मौज-मस्ती करने लगा। धुंधुमूक के पुत्र उस नीच और दुष्ट ब्राह्मण ने उच्च आचार-विचार छोड़ दिया। २२-२३।।

उसके साथ अपने काम वासना को बढ़ाने के लिए शराब भी पीता था किन्तु हे उत्तम ब्राह्मणों! किसी कारण से उस पापी ने उस शूद्रा स्त्री को मार डाला। तब उसके सालों ने विशाल के माता-पिता और उसकी वैध

माता च तस्य दुर्बुद्धेऽधौंधुमूकस्य शोभना।

भार्या च तस्य दुर्बुद्धे: श्यालास्ते चापि सुब्रताः॥२६॥

राजा क्षणादहो नष्टं कुलं तस्याश्च तस्य च। गत्वासौ धौंधुमूकश्च येन केनापि लीलया॥२७॥

दृष्ट्वा तु तं मुनिश्रेष्ठं रुद्रजाप्यपरायणम्। लब्ध्वा पाशुपतं तद्वै पुरा देवान्महेश्वरात्॥२८॥

लब्ध्वा पंचाक्षरं चैव षडक्षरमनुज्ञमम्। पुनः पंचाक्षरं चैव जप्त्वा लक्षं पृथक् पृथक्॥२९॥

ब्रतं कृत्वा च विधिना दिव्यं द्वादशमासिकम्। कालधर्मं गतः कल्पे पूजितश्च यमेन वै॥३०॥

उद्धृता च तथा माता पिता श्यालाश्च सुब्रताः। पत्नी च सुभगा जाता सुस्मिता च पतिव्रता॥३१॥

ताभिर्विमानमारुद्धा देवैः सेंद्रैरभिष्टुतः। गाणपत्यमनुप्राप्य रुद्रस्य दयितोऽभवत्॥३२॥

तस्मादष्टाक्षरान्मन्त्रात्तथा वै द्वादशाक्षरात्। भवेत्कोटिगुणं पुण्यं नात्र कार्या विचारणा॥३३॥

तस्माज्जपेद्विद्व यो नित्यं प्रागुयक्तेनविधानतः। शक्तिबीजसमायुक्तं स याति परमां गतिम्॥३४॥

एतद्वः कथितं सर्वं कथासर्वस्वमुज्जमम्। यः पठेच्छुणुयाद्वापि श्रावयेद्वा द्विजोत्तमान्॥३५॥

स याति ब्रह्मलोकं तु रुद्रजाप्यमनुज्ञमम्॥३६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अष्टमोऽध्यायः॥८॥**

पत्नी को मार डाला। हे सुब्रत! वे साले भी राजा के द्वारा मार दिये गये। इस प्रकार उसका और उसके परिवार का नाश हो गया। धुंधुमूक का पुत्र इधर-उधर किसी-न-किसी क्रिया-कलाप में घूमता रहा। किसी तरह उसने एक श्रेष्ठ मुनि को रुद्र जाप में लगे हुए देखा। उस मुनि ने भगवान् महेश्वर से पाशुपत मन्त्र को प्राप्त किया था। पंचाक्षर और षडक्षर मन्त्र को सौ हजार बार अर्थात् एक-एक लाख बार अलग-अलग जप किया उसने बारह मास तक विधिपूर्वक दिव्य ब्रत किया। मृत्यु को प्राप्त होने पर यम ने उसकी पूजा की॥२४-३०॥ हे सुब्रत! उसने अपने माता-पिता साले प्रथमा पत्नी का उद्धार किया। वह सती पत्नी मुस्कराती रही। वह उन लोगों के साथ विमान पर चढ़कर स्वर्गलोक को गया। वहाँ इन्द्र सहित देवताओं ने उसकी स्तुति की। वह गणों के स्वामी का पद प्राप्त किया और भगवान् रुद्र का प्रिय हो गया। अतः अष्टाक्षर मन्त्र से तथा द्वादशाक्षर मन्त्र से कोटि गुना पुण्य प्राप्त होता है। इसमें कोई संशय नहीं है। अतः पहले कहे गये विधान के साथ जो कोई निरन्तर इन मन्त्रों का जप करता है और शक्ति मन्त्रों के साथ, शक्ति बीज मन्त्रों के साथ मिलाकर जप करता है वह परम गति को प्राप्त होता है। यह सबसे उत्तम कथा मैंने तुम लोगों से कहा जो इसको पढ़े और सुने और उत्तम ब्राह्मणों को सुनाए वह ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है॥३१-३६॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अष्टाक्षर मन्त्र नामक

आठवाँ अध्याय समाप्त॥८॥

## नवमोऽध्यायः पाशुपतसंस्कारः

ऋषय ऊचुः

देवैः पुरा कृतं दिव्यं ब्रतं पाशुपतं शुभम्। ब्रह्मणा च स्वयं सूत कृष्णेनाविलष्टकर्मणा॥१॥  
पतितेन च विप्रेण धौंधुमूकेन वै तथा। कृत्वा जप्त्वा गतिः प्राप्ता कथं पाशुपतं ब्रतम्॥२॥  
कथं पशुपतिर्देवः शंकरः परमेश्वरः। वक्तुमर्हसि चास्माकं परं कौतूहलं हि नः॥३॥

सूत उवाच

पुरा शापाद्विनिर्मुक्तो ब्रह्मपुत्रो महायशाः। रुद्रस्य देवदेवस्य मरुदेशादिहागतः॥४॥  
त्यक्त्वा प्रसादाद्बुद्रस्य उष्ट्रदेहमजाज्ञया। शिलादपुत्रमासाद्य नमस्कृत्य विधानतः॥५॥  
मेरुपृष्ठे मुनिवरः श्रुत्वा धर्ममनुत्तमम्। माहेश्वरं मुनिश्रेष्ठां ह्यपृच्छच्च पुनः पुनः॥६॥  
नन्दिनं प्रणिपत्यैनं कथं पशुपतिः प्रभुः। वक्तुमर्हसि चास्माकं तत्सर्वं च तदाह सः॥७॥  
तत्सर्वं श्रुतवान् व्यासः कृष्णद्वैपायनः प्रभुः। तस्मादहमनुश्रुत्य युष्माकं प्रवदामि वै॥८॥

सर्वे शृण्वन्तु वचनं नमस्कृत्वा महेश्वरम्।

सनत्कुमार उवाच

कथं पशुपतिर्देवः पशवः के प्रकीर्तिताः॥९॥

नौवाँ अध्याय

## पाशुपत संस्कार

ऋषिगण बोले

हे सूत! दिव्य और पाशुपत संस्कार पहले देवताओं द्वारा किया गया था। यह स्वयं ब्रह्मा द्वारा किया गया और अनुपमकर्मी कृष्ण द्वारा उसी प्रकार किया गया। पतित ब्राह्मण धुंधुमूक के पुत्र द्वारा भी किया गया था। पाशुपत संस्कार करने के बाद कैसे वे लोग मोक्ष प्राप्त कर सके? किस प्रकार पशुपति पूजा की गयी? यह आप हम लोगों को बताएँ। यह सुनने के लिए हम लोगों को बहुत कौतूहल है। १-३॥

सूत बोले

पहले ब्रह्मा के पुत्र महायशस्वी देवताओं के स्वामी रुद्र के श्राप से मुक्त हुए वह मरुस्थल से यहाँ आये थे। ऊंट के शरीर को रुद्र की कृपा से और ब्रह्मा की आज्ञा से त्यागकर शिलादि के पुत्र नन्दी के पास पहुँचकर विधान के अनुसार नमस्कार किया। हे महर्षियों! मेरु की पीठ पर श्रेष्ठ ऋषि उत्तम धर्म की वार्ता को सुना। नन्दी को नमस्कार करने के बाद शिव से सम्बन्धित पवित्र पाशुपत संस्कार के विषय में उसने नन्दी से बार-बार पूछा। पशुपति स्वामी की पूजा का ब्रत कैसे किया जाता है? आप हमको ये सब बताएँ? उस समय उन्होंने सब कुछ बताया। कृष्ण द्वैपायन व्यास ने सनत् कुमार से सुना। व्यास से सुनकर मैं तुम लोगों से कहता हूँ। महेश्वर को नमस्कार करके तुम सब सुनो।

कैः पाशैस्ते निबध्यन्ते विमुच्यन्ते च ते कथम्॥

शैलादिरुवाच

सनत्कुमार वक्ष्यामि सर्वमेतद्यथातथम्॥१०॥

रुद्रभक्तस्य शांतस्य तब कल्याणचेतसः। ब्रह्माद्याः स्थावरांताश्च देवदेवस्य धीमतः॥११॥  
 पशवः परिकीर्त्यते संसारवशवर्तिनः। तेषां पतित्वाद्गवान् रुद्रः पशुपतिः स्मृतः॥१२॥  
 अनादिनिधनो धाता भगवान्विष्णुरव्ययः। मायापाशेन बध्नाति पशुवत्परमेश्वरः॥१३॥  
 स एव मोचकस्तेषां ज्ञानयोगेन सेवितः। अविद्यापाशुबद्धानां नान्यो मोचक इष्यते॥१४॥  
 तमृते परमात्मानं शंकरं परमेश्वरम्। चतुर्विंशतितत्त्वानि पाशा हि परमेष्ठिनः॥१५॥  
 तैः पाशैन्नेचयत्येकः शिवो जीवैरुपासितः। निबध्नाति पशुनेकश्चतुर्विंशतिपाशकैः॥१६॥  
 स एव भगवान्नुद्ग्रो मोचयत्यपि सेवितः। दशेंद्रियमयैः पाशैरंतःकरणसंभवैः॥१७॥  
 भूततन्मात्रपाशैश्च पशून्मोचयति प्रभुः। इन्द्रियार्थमयैः पाशैर्बद्धा विषयिणः प्रभुः॥१८॥  
 आशु भक्ता भवन्त्येव परमेश्वरसेवया। भज इत्येष धातुर्वै सेवायां परिकीर्तितः॥१९॥  
 तस्मात्सेवा बुधैः प्रोक्तां भक्तिशब्देन भूयसी। ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतं पशून्बद्ध्वा महेश्वरः॥२०॥  
 त्रिभिर्गुणमयैः पाशैः कार्यं कारयति स्वयम्। दृढेन भक्तियोगेन पशुमिः समुपासितः॥२१॥  
 मोचयेत्येव तान्सद्याः शंकरः परमेश्वरः। भजनं भक्तिरित्युक्ता वाङ्मनःकायकर्मभिः॥२२॥

### सनत्कुमार बोले

पशुपति देव कैसे हैं? पशु कौन है? किस बन्धनों (पाश) से वे बंधे हुए हैं? वे कैसे मुक्त होते हैं? ॥४-१०॥

शैलादि बोले

हे सनत्कुमार! यह सब ज्यों-का-त्यों मैं रुद्र का भक्त शान्त और शुद्ध आपसे कहता हूँ। ब्रह्मा से लेकर के स्थावर तक बुद्धिमान देवताओं के देवता पशु कहलाते हैं। वे संसार के वश में रहने वाले हैं। उनके स्वामी होने के कारण वह पशुपति रूप में प्रसिद्ध हैं। अनादि अव्यय और सबके स्तूप परमेश्वर पशु की तरह माया के पाश बन्धन में बाँधते हैं। पूर्ण ज्ञान के मार्ग द्वारा सेवा किये जाने पर वे ही मुक्त करने वाले हैं। अविद्या, अज्ञान के पाश से बंधने से बंधे हुए लोगों का दूसरा कोई मुक्त करने वाला नहीं है॥१०ब-१५॥ परमेश्वर के चौबीस (२४) तत्त्व पाश (बन्धन) हैं। इन चौबीस पाशों से शिव ही पशुओं को बाँधते हैं। जीवों द्वारा पूजित होने पर केवल शिव ही उस बन्धन से उनको मुक्त करते हैं। अन्तःकरण से उसका दस इन्द्रियों रूपी पाशों से और भूत तन्मात्रा आदि पाशों से शिव ही मुक्त करते हैं। परमेश्वर की सेवा से आत्मायें (जीव) तुरन्त मुक्त हो जाते हैं। 'भज' धातु का अर्थ ही सेवा करना है॥१६-१९॥ इसमें भक्ति शब्द द्वारा सबसे बड़ी सेवा के विचार को विद्वानों ने भक्ति कहा है। प्रत्येक जीव को ब्रह्मा से लेकर स्तम्भ के अग्र भाग तक गुणों के रूप के तीन गुण रूपी पाशों के द्वारा बाँधते हैं। और स्वयं कार्य को कराते हैं। पशुओं द्वारा विनम्र भक्ति मार्ग से उपासना किये जाने पर परमेश्वर शंकर तुरन्त उनको पाप से मुक्त कर देते हैं। वाणी, मन और कर्मों से भजन करने को भक्ति कहते हैं। यह भक्ति सब कार्य के कारण होने से पाश को काटने में पूर्णरूप से समर्थ है॥२०-२२॥ शिव के गुण

सर्वकार्येण हेतुत्वात्पाशच्छेदपटीयसी । सत्यः सर्वग इत्यादि शिवस्य गुणचिंतना॥२३॥  
 रूपोपादानचिंता च मानसं भजनं विदुः। वाचिकं भजनं धीरा: प्रणवादिजपं विदुः॥२४॥  
 कायिकं भजनं सद्भिः प्राणायामादि कथ्यते। धर्माधर्ममयैः पाशै वैधनं देहिनामिदम्॥२५॥  
 मोचकः शिव एवैको भगवान्परमेश्वरः। चतुर्विशतितत्वानि मायाकर्मगुणा इति॥२६॥  
 कीर्त्यते विषयाश्वेति पाशा जीवनिबंधनात्। तैर्बद्धाः शिवभत्तयैव मुच्यन्ते सर्वदेहिनः॥२७॥  
 पञ्चक्लेशमयैः पाशैः पशून्बन्धनाति शंकरः। स एव मोचकस्तेषां भत्तया सम्यगुपासितः॥२८॥  
 अविद्यामस्मितां रागं द्वेषं च द्विपदां वराः। वदंत्यभिनिवेशं च क्लेशान्याशत्वमागतान्॥२९॥  
 तमो मोहो महामोहस्तामिस्त्र इति पंडिताः। अंधतामिस्त्र इत्याहुरविद्यां पञ्चधा स्थिताम्॥३०॥  
 ताञ्जीवान्मुनिशार्दूलाः सर्वाश्वेताप्यविद्यया। शिवो मोचयति श्रीमान्नान्यः कश्चिद्विमोचकः॥३१॥  
 अविद्यां तम इत्याहुरस्मितां मोह इत्यपि। महामोह इति प्राज्ञा रागं योगपरायणाः॥३२॥  
 द्वेषं तामिस्त्र इत्याहुरंधतामिस्त्र इत्यपि। तथैवाभिनिवेशं च मिथ्याज्ञानं विवेकिनः॥३३॥  
 तमसोऽष्टविधा भेदा मोहश्चाष्टविधः स्मृतः। महामोहप्रभेदाश्च बुधैर्दश विचिंतिताः॥३४॥  
 अष्टादशविधं चाहुस्तामिस्त्रं च विचक्षणाः। अंधतामिस्त्रभेदाश्च तथाष्टादशधा स्मृताः॥३५॥  
 अविद्ययास्य संबंधो नातीतो नास्त्यनागतः। भवेद्रागेण देवस्य शंभोरंगनिवासिनः॥३६॥  
 कालेषु त्रिषु संबंधस्तस्य द्वेषेण नो भवेत्। मायातीतस्यदेवस्य स्थाणोः पशुपतेर्विभोः॥३७॥  
 तथैवाभिनिवेशेन संबंधो न कदाचन। शंकरस्य शरण्यस्य शिवस्य परमात्मनः॥३८॥

का विनान जैसे—“वह सत्य है, वह सर्वव्यापी है” आदि और उनके रूपों और उपादान का विचार मानसिक भजन हैं। विद्वान लोग प्रणव आदि जप को मौखिक भजन कहते हैं। सज्जनों ने प्राणायाम आदि को शारीरिक (कायिक) भजन कहा है। इस प्रकार धर्म और अधर्म में पाशों द्वारा वह धर्मों का बन्धन है। केवल परमेश्वर ही उनको बन्धन से मुक्त करता है। चौबीस तत्त्व माया के कर्म और गुण हैं। वे विषय कहलाते हैं। उनसे बाँधे गये सब शरीरधारी शिव भक्ति से ही मुक्त होते हैं॥२३-२७॥ पंचपर्त पाश बन्धन जिनको क्लेश कहते हैं उन क्लेश रूपी पाशों से शंकर पशुओं को बाँधते हैं। भक्ति से भलीभाँति सेवा किये जाने पर वह ही उनके छोड़ने वाले (मोचक) हैं॥२८॥ पंचक्लेश जो कि बन्धन है वे अविद्या (अज्ञान), अस्मिता (अहंकार), राग (लगाव), द्वेष (घृणा), अभिनिवेश संसारिक सुख में लिप्तता है। विद्वान लोग कहते हैं कि अविद्या पाँच रूपों में होती है। उनके नाम क्रमशः तमस्, मोह, महामोह, तामिस्त्र, अंध्रतामिस्त्र हैं॥२९-३०॥ हे श्रेष्ठ मुनियो! उन सब जीवों को अविद्या से शिव ही मुक्त करते हैं। दूसरा कोई मोचक नहीं है॥३१॥ यौगिक क्रिया में लगे विद्वान लोग अविद्या को तम (अन्धकार), अस्मिता को मोह (माया), राग (लगाव) जैसे—महामोह (महामाया), द्वेष (घृणा), तामिस्त्र (अन्धकार), अभिनिवेश और मिथ्याज्ञान अन्ध्रतामिस्त्र॥३२-३३॥ तमस् आठ प्रकार का होता है। मोह भी आठ प्रकार का होता है। माया मोह के दस विभाग होते हैं॥३४॥ विद्वानों ने कहा है कि, तामिस्त्र और अंध्रतामिस्त्र के अट्ठारह विभाग होते हैं॥३५॥ शिव का अविद्या से सम्बन्ध न कोई अतीत है न भविष्य से हैं। शिव से राग का भी सम्बन्ध नहीं है। उनका द्वेष से तीनों कालों में सम्बन्ध नहीं है क्योंकि वे मायातीत (माया

कुशलाकुशलैस्तस्य संबंधो नैव कर्मभिः। भवेत्कालत्रये शंभोरविद्यामतिवर्तिनः॥३९॥  
 विपाकैः कर्मणां वापि न भवेदेव संगमः। कालेषु त्रिषु सर्वस्य शिवस्य शिवदायिनः॥४०॥  
 सुखदुखैरसंस्पृश्यः कालत्रितयवर्तिभिः। स तैर्विनश्वरैः शंभुर्बोधानन्दात्मकः परः॥४१॥  
 आशयैरपरामृष्टः कालत्रितयगोचरैः। धियां पतिः स्वभूरेष महादेवो महेश्वरः॥४२॥  
 अस्पृश्यः कर्मसंस्कारैः कालत्रितयवर्तिभिः। तथैव भोगसंकारैर्भगवानंतकांतकः॥४३॥  
 पुंविशेषपरो देवो भगवान्परमेश्वरः। चेतनाचेतानयुक्तप्रपञ्चादखिलात्परः॥४४॥  
 लोके सातिशयत्वेन ज्ञानैश्वर्य विलोक्यते। शिवेनातिशयत्वेन शिवं प्राहुर्मनीषिणः॥४५॥  
 प्रतिसर्गं प्रसूतानां ब्रह्मणां शास्त्रविस्तरम्। उपदेष्टा स एवादौ कालावच्छेदवर्तिनाम्॥४६॥  
 कालावच्छेदयुक्तानां गुरुणामप्यसौ गुरुः। सर्वेषामेव सर्वेशः कालावच्छेदवर्जितः॥४७॥  
 अनादिरेष संबंधो विज्ञानोत्कर्षयोः परः। स्थितयोरीदृशः सर्वः परिशुद्धः स्वभावतः॥४८॥  
 आत्मप्रयोजनाभावे परानुग्रह एव हि। प्रयोजनं समस्तानां कार्याणां परमेश्वरः॥४९॥  
 प्रणवो वाचकस्तस्य शिवस्य परमात्मनः। शिवरुद्रादिशब्दानां प्रणवोपि परः स्मृतः॥५०॥  
 शंभोः प्रणववाच्यस्य भावना तज्जपादपि। या सिद्धिः स्वपराप्राप्या भवत्येव न संशयः॥५१॥  
 ज्ञानतत्त्वं प्रयत्नेन योगः पाशुपतः परः। उक्तस्तु देवदेवेन सर्वेषामनुकंपया॥५२॥

से परे) हैं। उसी प्रकार शरण लेने के योग्य परमात्मा शंकर का कभी भी अभिनिवेश (संसारिक सुख में लिप्तता) का सम्बन्ध नहीं है। ॥३६-३८॥ त्रिकाल में शम्भु का अविद्या से और कोई सम्बन्ध नहीं है। और कर्म के चाहे वह अच्छा हो या बुरा उनका सम्बन्ध नहीं है। ॥३९॥ शिवदायक शिव का माया से भी कोई सम्पर्क नहीं है क्योंकि माया द्वारा किये गये कर्मों के विपाक से वे सर्वथा अलग हैं। ॥४०॥ तीनों कालों में होने वाले सुखों और दुःखों से वे अछूते हैं क्योंकि वे सुख और दुःख से परे हैं। क्योंकि शिव बोध और आनन्द स्वरूप हैं अतः वे सुख और दुःख से अप्रभावित हैं। ॥४१॥ बुद्धि के स्वयम् स्वामी महेश्वर तीनों कालों में दिखायी देने वाले भाग्यों और सुखों से अप्रभावित रहते हैं। ॥४२॥ मृत्यु के देवता यमराज को मारने वाले भगवान् शिव तीनों कालों को संस्कारों के भोग से भी अछूते हैं, अर्थात् उन पर कर्म और उसके फल के भोग का स्पर्श नहीं होता है। ॥४३॥ भगवान् परमेश्वर विशेष पुरुष से भी बड़े हैं। वह चेतन और अचेतन से युक्त समकोण प्रपञ्च से परे हैं। वह सम्पूर्ण विश्व से परे हैं। (बाहर) हैं। ॥४४॥ जगत में ज्ञान और ऐश्वर्य दिखायी देते हैं जो एक दूसरे से अतिशय आगे होना चाहते हैं। विद्वान् लोग कहते हैं कि दूसरे से आगे बढ़ने वाले में शिव सबसे आगे हैं। ॥४५॥ वे प्रत्येक सृष्टि में उत्पन्न होने वाले ब्रह्माओं और पूरे काल तक रहने वाले ब्रह्माओं को शास्त्रों के उपदेश देने वाले हैं। ॥४६॥ जो काल द्वारा सीमित और वे धिरे हुए हैं, वे उन सब गुरुओं के भी गुरु हैं। वे काल की सीमा से बाहर और सबके स्वामी हैं। ॥४७॥ यह सम्बन्ध अनादि है। वह पूर्ण ज्ञान और उत्कर्ष से ऊपर हैं। वह स्वभावतः पूर्ण रूप से शुद्ध है। ॥४८॥ क्योंकि उनका अपना कोई प्रयोजन नहीं है, परमेश्वर के सब क्रिया-कलापों का सही प्रयोजन दूसरों के ऊपर अनुग्रह करना ही है। परमात्मा शिव प्रणव शब्द, परमात्मा शिव का वाचक है अर्थात् शिव को प्रगट करता है। शिव और रुद्र आदि शब्दों से प्रणव शब्द उच्चतर है। ॥४९-५०॥ इसमें कोई सन्देह

स होवाचैव याज्ञवल्क्यो यदक्षरं गार्द्ययोगिनः।  
 अभिवदंति स्थूलमनन्तं महाश्रृण्यमदीर्धमलोहितममस्तकमा-  
 सायमत एवो पुनारसमसंमगंधमरसमचक्षुष्कम-  
 श्रोत्रमवाङ्मनोतेजस्कमप्रमाणमनुसुखमनामगोत्र-  
 ममरमजरमनामयममृतमोशब्दममृतमसंवृतमपूर्वमन  
 परमनन्तमबाह्यं तदश्वाति किंचन न तदाश्वाति किंचन॥५३॥

एतत्कालव्यये ज्ञात्वा परं पाशुपतं प्रभुम्। योगे पाशुपते चास्मिन् यस्यार्थः किल उत्तमे॥५४॥

कृत्वोंकारं प्रदीपं मृगय गृहपतिं सूक्ष्ममाद्यंतरस्थं  
 संयम्य द्वारवासं पवनपटुतरं नायकं चेंद्रियाणाम्।  
 वाग्जालैः कस्य हेतोर्विभटसि तु भयं दृश्यते नैवकिंचिद्  
 देहस्थं पश्य शंभुं भ्रमसि किमु परे शास्त्रजालेन्थकारे॥५५॥

एवं सम्यग्बुधैर्जात्वा मुनीनामथ चोक्तं शिवेन। असमरसं पंचधा कृत्वाभयं चात्मनि योजयेत्॥५६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे नवमोऽध्यायः॥१॥**

नहीं कि प्रणव शब्द से वाच्य शिव की भावना प्रगट होती है और प्रणव के जप से भी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पूर्णतः यह सिद्धि प्राप्त होती है। वही पूर्णता शब्द सिद्धि प्राप्त होती है जबकि लोग प्रणव को दोहराते हैं। यहाँ तक कि जब वे प्रणव मन्त्र का और उस पर ध्यान लगाते हैं जो प्रणव मन्त्र द्वारा व्यक्त किया हुआ है। देवताओं के देवता पशुपति ने सब लोगों पर अनुग्रह करके श्रेष्ठ पूर्ण ज्ञान के आधार महान् पशुपति योग को बताया है॥५१-५२॥ याज्ञवल्क्य हे गार्गी! यह सर्वोच्च है जिसको योगियों ने गार्द्य कहा है। वास्तव में वह स्थूल अनन्त महा आशचर्य, जो लम्बा नहीं है, लाल नहीं है, जो मस्तक हीन है, जो बैठा हुआ नहीं है। अतएव जो रसहीन है, जो सम्पर्क हीन है, जिसमें गंध नहीं, रस नहीं, नेत्र नहीं, कान नहीं, जिह्वा नहीं, मन नहीं, वाणी नहीं, तेज नहीं, कोई प्रमाण नहीं, सुख नहीं, अनाम गोत्रं, अजर, अमर, जाति नहीं, मृत्यु नहीं, जो अमृतमय है वह ओम् शब्द द्वारा व्यक्त किया गया है, वह अमर है। जिसका न कोई पूर्ववर्ती है, न परवर्ती है, वह अन्तहीन वह बाहर भी नहीं यह कुछ खाता है और कोई वस्तु नहीं खाता है। कोई भी व्यक्ति पशुपति योग द्वारा ही पशुपति को प्राप्त करता है। पशुपति को उत्तम अवसर अनुभव करने के लिए है॥५३-५४॥ ओंकार द्वीप को जलाकर गृहपति पशुपति को ढूँढ़ो जो सूक्ष्म हैं भीतर बाहर स्थित हैं। जो इन्द्रियों का स्वामी है। इन्द्रियों के द्वार की वायु को रोको। शास्त्रों के जाल रूपी अँधेरे में क्यों भटकते हो? किस लिए भ्रम में पड़ते हो। कोई भय नहीं है। अपने देह के भीतर विरजमान सिन्धु को देखो॥५५॥ यह विद्वानों के द्वारा पूर्णरूप से यह जानकर उन पंचाकृति को असम रस को फाइकर आत्मा में निर्भीकिता प्राप्त होगी॥५६॥

**श्रीलिंगमहापुराण उत्तर भाग में पाशुपत संस्कार  
 नामक नौवां अध्याय समाप्त॥१॥**



## दसमोऽध्यायः उमापतिमाहात्म्यम्

सनत्कुमार उवाच

भूय एव ममाचक्षव महिमानमुमापतेः। भवभक्त महाप्राज्ञ भगवन्नंदिकेश्वरा॥१॥  
शैलादिरुवाच

सनत्कुमार! संक्षेपात्तव वक्ष्याम्यशेषतः। महिमानं महेशस्य भवस्य परमेष्ठिनः॥२॥  
नास्य प्रकृतिबन्धोऽभूद्बुद्धिबन्धो न कश्चन। न चाहंकारबन्धश्च मनोबन्धश्च नोऽभवत्॥३॥  
चित्तबन्धो न तस्याभूच्छ्रोत्रबन्धो न चाभवत्। न त्वचां चक्षुषां वापि बन्धो जज्ञे कदाचन॥४॥  
जिह्वाबन्धो न तस्याभूदद्वाणबन्धो न कश्चन। पादबन्धः पाणिबन्धो वाग्बन्धश्चैव सुव्रता॥५॥  
उपस्थेंद्रियबन्धश्च भूततन्मात्रबन्धनम्। नित्यशुद्धस्वभावेन नित्यबुद्धो निसर्गतः॥६॥  
नित्यमुक्त इति प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्ववेदिभिः। अनादिमध्यनिष्ठस्य शिवस्य परमेष्ठिनः॥७॥  
बुद्धिं सूते नियोगेन प्रकृतिः पुरुषस्य च। अहंकारं प्रसूतेऽस्या बुद्धिस्तस्य नियोगतः॥८॥  
अंतर्यामीति देहेषु प्रसिद्धस्य स्वयंभुवः। इंद्रियाणि दशैकं च तन्मात्राणि च शासनात्॥९॥  
अहंकारोऽतिसंसूते शिवस्य परमेष्ठिनः। तन्मात्राणि नियोगेन तस्य संसुवते प्रभो॥१०॥  
महाभूतान्यशेषेण महादेवस्य धीमतः। ब्रह्मादीनां तृणांतं हि देहिनां देवसंगतिम्॥११॥

## दसवाँ अध्याय उमापति का माहात्म्य

सनत्कुमार बोले-

हे शिवजी के भक्त! महान् बुद्धिमान् भगवन् नन्दिकेश्वर! आप फिर उमापति की महिमा मुझसे कहो॥१॥

शैलादि बोले

हे सनत्कुमार! मैं महेश, भव, परमेष्ठी की सम्पूर्ण महिमा को तुमसे संक्षेप में कहता हूँ॥२॥ उमापति शिव को प्रकृति से कोई लगाव नहीं है। न बुद्धि से, अहंकार, मन, चित्त, कान, नेत्र, जीभ, नाक, पैर, हाथ, वाणी, जननेंद्रिय और पंचमहाभूतों से भी कोई बन्धन नहीं है। उमापति स्वभाव से नित्य शुद्ध हैं, और अन्तःकरण से नित्य प्रबुद्ध हैं॥३-६॥ तत्त्वज्ञानियों ने उनको नित्य मुक्त कहा है। शिव परमेष्ठी का आदि मध्य और अन्त नहीं है। उनके आदेश से पुरुष की प्रकृति बुद्धि को उत्पन्न करती है। उनकी आज्ञा से बुद्धि अहंकार को उत्पन्न करती है। शिव स्वयम्भू हैं। वे सब की देहों में अन्तर्यामी हैं। इनकी आज्ञा से बुद्धि अहंकार को जन्म देती है। उनकी आज्ञा से अहंकार ग्यारह ज्ञानेन्द्रिय और तन्मात्राओं को जन्म देता है। बुद्धिमान् महादेव की आज्ञा से सम्पूर्ण महाभूत और ब्रह्मा आदि से लेकर तृण के अन्त भाग तक शरीर धारण करते हैं। उन्हीं की आज्ञा से बुद्धि सब-

महाभूतान्यशेषाणि जनयंति शिवाज्ञया।

अध्यवस्थति सर्वार्थान्बुद्धिस्तस्याज्ञया विभोः॥१२॥

अंतर्यामीति देहेषु प्रसिद्धस्य स्वयंभुवः। स्वभावसिद्धमैश्वर्यं स्वभावादेव भूतयः॥१३॥  
तस्याज्ञया समस्तार्थान्हंकारोऽतिमन्यते। चित्तं चेतयते चापि मनः संकल्पयत्यपि॥१४॥

श्रोत्रं शृणोति तच्छत्त्या शब्दस्पर्शादिकं च यत्।

शंभोराज्ञाबलेनैव भवस्य परमेष्ठिनः॥१५॥

वचनं कुरुते वाक्यं नादानादि कदाचन। शरीराणामशेषाणां तस्य देवस्य शासनात्॥१६॥

करोति पाणिरादानं न गत्यादि कदाचन। सर्वेषामेव जंतूनां नियमादेव वेधसः॥१७॥

विहारं कुरुते पादो नोत्सर्गादि कदाचन। समस्तदेहिवृदानां शिवस्यैव नियोगतः॥१८॥

उत्सर्गं कुरुते पायुर्न वदेत कदाचन। जंतोजर्जितस्य सर्वस्वं परमेश्वरशासनात्॥१९॥

आनन्दं कुरुते शश्वदुपस्थं वचनाद्विभोः। सर्वेषामेव भूतानामीश्वरस्यैव शासनात्॥२०॥

अवकाशमशेषाणां भूतानां संप्रयच्छति। आकाशं सर्वदा तस्य परमस्यैव शासनात्॥२१॥

निर्देशेन शिवस्यैव भेदैः प्राणदिभिर्निर्जैः। बिभर्ति सर्वभूतानां शरीराणि प्रभंजनः॥२२॥

निर्देशादेवदेवस्य सप्तस्कंधगतो मरुत्। लोकयात्रां वहत्येव भेदैः स्वैरावहादिभिः॥२३॥

नागाद्यैः पंचभिर्भेदैः शरीरेषु प्रवर्तते। अपदेशेन देवस्य परमस्य समीरणः॥२४॥

हव्यं वहति देवानां कव्यं कव्याशिनामपि। पाकं च कुरुते वह्निः शंकरस्यैव शासनात्॥२५॥

अर्थों को निश्चित करती है। अर्थात् व्यवस्थित करती है। ।१७-१२।। समृद्धि शक्ति और धन दौलत आदि शिव द्वारा ही प्राप्त होती है। शिव की आज्ञा से ही अहंकार सब पदार्थों में आत्मसम्मान पैदा करता है। उन्हीं के आदेश से चित्त चेतता है। मन संकल्प करता है। मस्तिष्क सब पदार्थों और वस्तुओं में चेतना (जागृति) पैदा करता है। उन्हीं उमापति शिव की शक्ति से कान ध्वनि को सुनता है। शरीर स्पर्श का अनुभव करता है। उन्हीं भव परमेष्ठी की आज्ञा से कुछ वस्तुओं को ग्रहण नहीं करती हैं। उसी स्थष्टा के शासन से हाथ वस्तुओं को ग्रहण करता है। गति आदि नहीं करता। शिव के आदेश से ही पैर चलता है उत्सर्ग (मलादि त्याग) नहीं करता है। गुदा (मल रूप) उत्सर्ग करती है किन्तु बोलती नहीं है अर्थात् उसका काम नहीं करती। शिव की प्रेरणा से सब प्राणियों में जननेन्द्रियाँ सन्तान उत्पन्न करती हैं। शिव के निर्देश से आकाश सब प्राणियों के लिए पर्याप्त अवकाश देता है। ।१३-२१।। शरीरों को शिव के निर्देश से आकाश सब प्राणियों के लिए पर्याप्त अवकाश देता है। ।२२।। शरीरों को शिव के निर्देश से ही वायु सब प्राणियों को अपने प्राणवायु आदि सात भेदों से धारण पोषण करता है और लोक यात्रा में सहायक होता है। शिव के निर्देश से वायु नाग आदि पाँच भेदों से हमारे शरीर के भीतर कार्य करती है। ।२३।। शंकर के ही आज्ञा से अग्नि देवताओं के हव्य और पितरों के लिए कव्य तथा अन्यपाक कर्म करती है। शरीरधारियों के शरीर में स्थित अग्नि चबाये हुए भेजन को पचाती हैं। शिव की आज्ञा से प्राणियों के भीतर जल विद्यमान रहकर उन सब को जीवित रखता है। शिव की आज्ञा से अन्न पचता है। देवताओं के देव

भुक्तमाहारजातं यत्पचते देहिनां तथा। उदरस्थः सदा बहिर्विश्वेश्वरनियोगतः॥२६॥  
 संजीवयन्त्यशेषाणि भूतान्यापस्तदाज्ञया। अविलंघ्या हि सर्वेषामाज्ञा तस्य गरीयसी॥२७॥  
 चराचराणि भूतानि बिभत्येव तदाज्ञया। आज्ञया तस्य देवस्य देवदेवः पुरंदरः॥२८॥  
 जीवतां व्याधिमिः पीडां मृतानां यातनाशतैः। विश्वंभरः सदाकालं लोकैः सर्वैरलंघ्यया॥२९॥  
 देवान्यात्यसुरान् हंति त्रैलोक्यमखिलं स्थितः। अधार्मिकाणां वै नाशं करोति शिवशासनात्॥३०॥  
 वरुणः सलिलैर्लोकान्संभावयति शासनात्। मज्जयत्याज्ञया तस्य पाशैर्वध्नाति चासुरान्॥३१॥  
 पुण्यानुरूपं सर्वेषां प्राणिनां संप्रयच्छति। वित्तं वित्तेश्वरस्तस्य शासनात्परमेष्ठिनः॥३२॥  
 उदयास्तमये कुर्वन्कुरुते कालमाज्ञया। आदित्यस्तस्य नित्यस्य सत्यस्य परमात्मनः॥३३॥  
 पुष्पाण्यौषधिजातानि प्रह्लादयति च प्रजाः।

अमृतांशुः कलाधारः कालकालस्य शासनात्॥३४॥

आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ मरुतस्तथा। अन्याश्च देवताः सर्वास्तच्छासनविनिर्मिताः॥३५॥  
 गंधर्वा देवसंघाश्च सिद्धाः साध्याश्च चारणाः। यक्षरक्षःपिशाचाश्च स्थिताः शास्त्रेषु वेधसः॥३६॥  
 ग्रहनक्षत्रताराश्च यज्ञा वेदास्तपांसि च। ऋषीणां च गणाः सर्वे शासनं तस्य धिष्ठिताः॥३७॥  
 कव्याशिनां गणाः सप्तसमुद्रा गिरिसिंधवः। शासने तस्य वर्तन्ते काननानि सरांसि च॥३८॥  
 कलाः काष्ठा निमेषाश्च मुहूर्ता दिवसाः क्षपाः। ऋत्वब्दपक्षमासाश्च नियोगात्स्य धिष्ठिताः॥३९॥

इन्द्र, शिव की आज्ञा का तथा सभी चर और अचर का पालन करता है। शिव के आदेश से विस्तृत जीवित प्राणियों की व्याधि आदि से उत्पन्न पीड़ा को और नरक में पड़े पापों को सहने वाले मृत जीवों के पापों को दूर करते हैं। इनकी आज्ञा अलंघ्य है॥२४-२९॥ शिव की आज्ञा से विष्णु देवताओं की रक्षा करते हैं और असुरों का संहार करते हैं। वह तीनों लोकों में स्थित (व्याप्त) हैं। वे पापियों (अभागियों) का नाश करते हैं॥३०॥ शिव के आदेश से वरुण जल के द्वारा सब का पालन करते हैं। उन्हीं की आज्ञा से सब को जलमग्न कर देते हैं और असुरों को अपने पाश से बाँधते हैं॥३१॥ उन्हीं परमेष्ठी शिव के आदेश से कुबेर सब प्राणियों को उनके गुणकर्म के अनुसार धन देते हैं॥३२॥

आन्तरिक सत्यपूर्ण महान् उस आत्मा के आदेश से सूर्य सूर्योदय और सूर्यास्त करके समय (काल) करता है॥३३॥ काल के काल (महाकाल) की आज्ञा से चन्द्रमा अपने अमृतमयी किरणों से सम्पूर्ण औषधियों को प्रफुल्लित करता है और सम्पूर्ण इकाइयों को फूलों और लताओं को खिलाता है॥३४॥ आदित्य, वसुगण, रुद्रगण, अश्विन, मरुतगण, सब अन्य देवता उन्हीं शिव के शासन से निर्मित हुए हैं॥३५॥ गन्धर्व, देव, सिद्ध, साध्य, चारण, यक्ष, रक्ष, पिशाच गण उन्हीं शिव के शासन में स्थित हैं॥३६॥ ग्रह, नक्षत्र, तारा, यज्ञ, वेद, तत्त्व तथा ऋषिगण सब उन्हीं शिव के शासन में स्थित हैं॥३७॥ पितृगण, सातों समुद्र, सातों पहाड़, सातों नदियाँ, वन और तालाब सब उन्हीं शिव के शासन में रहते हैं॥३८॥ काल की अनेक इकाइयाँ कला, काष्ठा, निमेष, मूहूर्त, दिन-रात्रि, ऋतुएँ, वर्ष, पक्ष और महीने ये सब उन्हीं शिव की आज्ञा से अधिष्ठित हैं॥३९॥ उन्हीं शिव

युगमन्वंतराण्यस्य शंभोस्तिष्ठंति शासनात्। पराश्रैव परार्थाश्च कालभेदास्तथापरे॥४०॥  
देवानां जातयश्चाष्टौ तिरश्चां पंच जातयः। मनुष्याश्च प्रवर्तते देवदेवस्य धीमतः॥४१॥  
जातानि भूतवृद्धानि चतुर्दशसु योनिषु। सर्वलोकनिषण्णानि तिष्ठन्त्यस्यैव शासनात्॥४२॥  
चतुर्दशसु लोकेषु स्थिता जाताः प्रजाः प्रभोः। सर्वेश्वरस्य तस्यैव नियोगवशवर्तिनः ॥४३॥  
पातालानि समस्तानि भुवानन्यस्य शासनात्। ब्रह्मांडानि च शेषाणि तथा सावरणानि च॥४४॥  
वर्तमानानि सर्वाणि ब्रह्मांडानि तदाज्ञया। वर्तते सर्वभूताद्यैः समेतानि समंततः॥४५॥  
अतीतान्यप्यसंख्यानि ब्रह्मांडानि तदाज्ञया। प्रवृत्तानि पदार्थैः सहितानि समंततः॥४६॥  
ब्रह्मांडानि भविष्यन्ति सह वस्तुभिरात्मकैः। करिष्यन्ति शिवस्याज्ञां सर्वैरावरणैः सह॥४७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे दशमोऽध्यायः॥१०॥**

के शासन से मन्वन्तर, पर, परार्थ तथा अन्य काल भेद की इकाइयाँ, देवताओं की आठ जातियाँ, पशु-पक्षियों की पाँच जातियाँ तथा मनुष्य गण उन्हीं देवताओं के स्वामी के शासन में रहते हैं। ॥४०॥ चौदह योनियों में पैदा हुए सब प्राणी और सब लोक में रहने वाले उन्हीं शिव के शासन में रहते हैं। ॥४१॥ चौदह लोकों में जन्म लिए हुए और रहने वाले सब प्रजा उन्हीं सर्वेश्वर प्रभु की आज्ञा के वश में रहते हैं। पाताल और सब भुवन उन्हीं के अन्तर्गत हैं। ॥४२॥ सब ब्रह्माण्ड और शेष सब उन्हीं शिव के आवरण के अन्तर्गत हैं। वर्तमान सब ब्रह्माण्ड सम्पूर्ण जीव गण सहित उन्हीं के द्वारा चारों ओर से घिरे हुए हैं। असंख्य अतीत ब्रह्माण्ड अपने में स्थित सब भूतों सहित उन्हीं की आज्ञा में स्थित हैं। भविष्य के ब्रह्माण्ड अपने में स्थित वस्तुओं के साथ सब आवरणों के सहित शिव की आज्ञा का पालन करेंगे। ॥४३-४७॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में उमापति का माहात्म्य

नामक दसवाँ अध्याय समाप्त। ॥१०॥



## एकादशोऽध्यायः शिवरथ्य विभूतयः

सनत्कुमार उवाच

विभूतीः शिवयोर्मह्यमाचक्ष्व त्वं गणाधिपा परापरविदां श्रेष्ठ परमेश्वरभावित॥१॥  
नंदिकेश्वर उवाच

हंत ते कथयिष्यामि विभूतीः शिवयोरहम्। सनत्कुमार योगींद्र ब्रह्मणस्तनयोत्तम॥२॥  
परमात्मा शिवः प्रोक्तः शिवा सा च प्रकीर्तिता। शिवमेवेश्वरं प्राहुर्मायां गौरीं विदुर्बुधाः॥३॥  
पुरुषं शंकरं प्राहुर्गौरीं च प्रकृतिं द्विजाः। अर्थः शंभुः शिवा वाणी दिवसोऽजः शिवा निशा॥४॥  
सप्ततंतुर्महादेवो रुद्राणी दक्षिणा स्मृता। आकाशं शंकरो देवः पृथिवी शंकरप्रिया॥५॥  
समुद्रो भगवान् रुद्रो वेला शैलेन्द्रकन्यका। वृक्षः शूलायुधो देवः शूलप्राणिप्रिया लता॥६॥  
ब्रह्मा हरोपि सावित्री शंकरार्धशरीरिणी। विष्णु महेश्वरो लक्ष्मीर्भवानी परमेश्वरी॥७॥  
वज्रपाणिर्महादेवः शची शैलेन्द्रकन्यका। जातवेदाः स्वयं रुद्रः स्वाहा शर्वार्धकायिनी॥८॥  
यमस्त्रियं बको देवस्तत्प्रिया गिरिकन्यका। वरुणो भगवान् रुद्रो गौरी सर्वार्थदायिनी॥९॥

### ग्यारहवाँ अध्याय शिव की विभूतियों का वर्णन

सनत्कुमार बोले

हे गणों के स्वामी! पर और अपर को जानने वालों में श्रेष्ठ महादेव के भक्त! मुझसे शिव और शिवा के विभूतियों को कहो॥१॥

नन्दकेश्वर बोले

हे सनत्कुमार योगियों में श्रेष्ठ, ब्रह्मा के पुत्रों में उत्तम! मैं तुमसे शिव और शिवा की विभूतियों को कहता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनो॥२॥

परमात्मा शिव कहा गया है और शिवा भी शिव ही है। बुद्धिमानों ने शिव को ईश्वर और शिवा को माया कहा है। (परमात्मा) पुरुष और स्त्री के दो रूपों में एक ही शरीर में अर्धनारीश्वर रूप में हैं। ब्राह्मण लोग शंकर को पुरुष और शिवा को प्रकृति कहते हैं। शिवा वाणी और शिव अर्थ है। शिव दिन है और शिवा रात्रि है॥३॥ यज्ञ श्राद्ध के देवता शिव हैं और शिवा उस यज्ञ कि दक्षिणा हैं। शिवजी आकाश हैं और उनकी प्रिया पृथ्वी है॥४-५॥ भगवान् रुद्र समुद्र हैं और पार्वती उस समुद्र की बेला है॥६॥ शूलपाणि शिव वृक्ष और उनकी अधारिनी लता हैं। शिव विष्णु हैं और शिवा भवानी लक्ष्मी हैं॥७॥ शिव वज्रपाणि इन्द्र हैं और पर्वतराज की कन्या पार्वती शची हैं, शिवजी अग्नि हैं। उनकी अधारिनी शिवा अग्नि की पत्नी स्वाहा हैं॥८॥ शिवजी यम हैं और पार्वती यमी हैं, शिव वरुण हैं और शिवा उनकी पत्नी वरुणानी, सब अर्थ को देने वाली हैं॥९॥

बालेंदुशेखरो वायुः शिवा शिवमनोरमा। चंद्रार्थमौलिर्यक्षेऽद्रः स्वयमृद्धिः शिवा स्मृता॥१०॥  
चंद्रार्थशेखरश्चंद्रो रोहिणी रुद्रवल्लभा। सप्तसप्तिः शिवः कांता उमादेवी सुवर्चला॥११॥  
पण्मुखस्त्रिपुरध्वंसी देवसेना हरप्रिया। उमा प्रसूतीर्वै ज्ञेया दक्षो देवो महेश्वरः॥१२॥  
पुरुषाख्यो मनुः शंभुः शतरूपा शिवप्रिया। विदुर्भवानीमाकृतिं रुचिं च परमेश्वरम्॥१३॥  
भृगुर्भगाक्षिहा देवः ख्यातिस्त्रिनयनप्रियः। मरीचिर्भगवान्कद्रः संभूतिर्वल्लभा विभोः॥१४॥  
विदुर्भवानीं रुचिरां कविं च परमेश्वरम्। गंगाधरोंगिरा ज्ञेयः स्मृतिः साक्षादुमा स्मृता॥१५॥

पुलस्त्यः शशभृन्मौलिः प्रीतिः कांता पिनाकिनः।

पुलहस्त्रिपुरध्वंसी दया कालरिपुप्रिया॥१६॥

क्रतुर्दक्षक्रतुध्वंसी संनतिर्दयिता विभोः। त्रिनेत्रोऽत्रिरुमा साक्षादनसूया स्मृता बुधैः॥१७॥  
ऊर्जामाहुरुमां वृद्धां वसिष्ठं च महेश्वरम्। शंकरः पुरुषाः सर्वे स्त्रियः सर्वा महेश्वरी॥१८॥

पुलिंगशब्दवाच्या ये ते च रुद्राः प्रकीर्तिताः।

स्त्रीलिंगशब्दवाच्या याः सर्वा गौर्या विभूतयः॥१९॥

सर्वे स्त्रीपुरुषाः प्रोक्तास्तयोरेव विभूतयः। पदार्थशक्तयो यायास्ता गौरीति विदुर्बुधाः॥२०॥  
सासा विश्वेश्वरी देवी स च सर्वोमहेश्वरः। शक्तिमंतः पदार्था ये स च सर्वो महेश्वरः॥२१॥  
अष्टौ प्रकृतयो देव्या मूर्तयः परिकीर्तिताः। तथा विकृतयस्तस्या देहबद्धविभूतयः॥२२॥

शिव वायु हैं और शिवा वायु की पत्नी हैं, बालेन्दु शिव यक्ष हैं शिवा ऋद्धि हैं॥१०॥ चन्द्रशेखर शिव चन्द्र हैं तो उनकी प्रिया रोहिणी हैं। शिव सूर्य हैं तो उनकी प्रिया उमा देवी वर्चला हैं॥११॥ त्रिपुर को ध्वंस करने वाले शिव आदि कातिकिय हैं तो उनकी प्रिया शिवा देवसेना हैं। शिव दक्ष हैं तो उनकी प्रिया उमा प्रसूति हैं॥१२॥ शिव मनु (पुरुष) हैं तो उनकी प्रिया शिवा शतरूपा हैं, शिव जी रुचि हैं तो भवानी आकृति हैं॥१३॥ भगाक्षि के हन्ता शिव ये जो भृगु हैं तो त्रिनयन प्रिय शिव की पत्नी ख्याति हैं। भगवान् रुद्र मरीच हैं तो उनकी प्रिया शिवा संभूति हैं॥१४॥ शिव जी कवि हैं तो पत्नी भवानी को लोग रुचिरा जानते हैं। गंगाधर शिव अंगिरा है तो उनकी प्रिया उमा स्मृति हैं॥१५॥ शशिधारी शिव पुलस्त्य हैं तो पिनाकधारी शिव की प्रिया प्रीति हैं। त्रिपुरारि पुलह है तो काल के हन्ता शिव की प्रिया शिवा दया है॥१६॥ दक्ष यज्ञ के विध्वंस करने वाले शिव क्रतु हैं तो उनकी प्रिया शिवा संनति हैं। त्रिनेत्रधारी शिव अत्रि हैं तो उनकी पत्नी उमा स्वयं अनुसूया हैं॥१७॥ महेश्वर शिव वसिष्ठ हैं तो उनकी पत्नी उमा वृद्धा ऊर्जा हैं। सब मनुष्य शिव और सब स्त्रियाँ शिवाँ हैं॥१८॥ पुलिंग शब्द से जो वाच्य हैं वे शिव के रूप हैं, स्त्रीलिंग शब्दों से जो वाच्य हैं वे सब शिवा की विभूतियाँ हैं॥१९॥ सब स्त्रियाँ और सब पुरुष उन्हीं शिव और शिवा की विभूतियाँ हैं। विद्वान् लोग जानते हैं कि गौरी पदार्थों की शक्ति है॥२०॥ वह विश्व की देवी हैं और वह सब के स्वामी (सर्वेश्वर) हैं। शक्तिमान् जितने भी पदार्थ हैं वह सब महेश्वर हैं॥२१॥ अतः प्रकृतियाँ देवी की मूर्तियाँ, शारीरिक रूप हैं। विकृतियाँ देवी की देहबद्ध विभूतियाँ हैं॥२२॥ जैसे आग से अनेक प्रकार की चिनगारी निकलती है उसी प्रकार शिव से

विस्फुलिंगा यथा तावदग्नौ च बहुधा स्मृताः। जीवाः सर्वे तथा शर्वो छंदसत्त्वमुपागतः॥२३॥  
 गौरीरूपाणि सर्वाणि शरीराणि शरीरिणाम्। शरीरिणस्तथा सर्वे शंकरांशा व्यवस्थितः॥२४॥  
 श्राव्यं सर्वमुमारूपं श्रोता देवो महेश्वरः। विषयित्वं विभुर्धत्ते विषयात्मकतामुमा॥२५॥  
 स्त्रष्टव्यं वस्तुजातं तु धत्ते शंकरवल्लभा। स्त्रष्टा स एव विश्वात्मा बालचन्द्रार्धशेखरः॥२६॥  
 दृश्यवस्तु प्रजारूपं विभर्ति भुवनेश्वरी। द्रष्टा विश्वेश्वरो देवः शशिखंडशिखामणिः॥२७॥  
 रसजातमुमारूपं प्रेयजातं च सर्वशः। देवो रसयिता शंभु घ्राता च भुवनेश्वरः॥२८॥  
 मंतव्यवस्तुतां धत्ते महादेवी महेश्वरी। मंता स एव विश्वात्मा महादेवो महेश्वरः॥२९॥  
 बोद्धव्यं वस्तु रूपं च विभर्ति भववल्लभा। देवः स एव भगवान् बोद्धा बालेन्दुशेखरः॥३०॥  
 पीठाकृतिरुमा देवी लिंगरूपश्च शंकरः। प्रतिष्ठाप्य प्रयत्नेन पूजयन्ति सुरासुराः॥३१॥  
 येये पदार्था लिंगांकास्तेते शर्वविभूतयः। अर्था भगांकिता येये तेते गौर्या विभूतयः॥३२॥  
 स्वर्गपाताललोकांतब्रह्मांडावरणाष्टकम् । ज्ञेयं सर्वमुमारूपं ज्ञाता देवो महेश्वरः॥३३॥  
 विभर्ति क्षेत्रतां देवी त्रिपुरांतकवल्लभां। क्षेत्रज्ञत्वमथो धत्ते भगवान्धकांतकः॥३४॥  
 शिवलिंगं समुत्सुज्य यजन्ते चान्यदेवताः। स नृपः सह देशेन रौरवं नरकं व्रजेत्॥३५॥  
 शिवभक्तो न यो राजा भक्तोऽन्येषु सुरेषु यः। स्वपतिं युवतिस्त्यक्त्वा यथा जारेषु राजते॥३६॥  
 ब्रह्मादयः सुराः सर्वे राजानश्च महर्द्धिकाः। मानवा मुनयश्चैव सर्वे लिंगं यजन्ति च॥३७॥

सब जीव उत्पन्न होते हैं। शरीरधारियों के सब शरीर गौरी रूप हैं या सब शरीर शंकर के अंश से व्यवस्थित हुये हैं। सब श्रव्य (सुनने योग्य) उमा का रूप है और श्रोता भगवान शिव हैं। उमा स्वयं विषय है और शिव विषय का आस्वाद करने वाले हैं। २३-२५।। शंकरप्रिया पार्वती सब स्त्रष्टव्य पदार्थ वस्तु समूह को धारण करती हैं। बालचन्द्रधारी विश्वात्मा शिव स्वयं स्त्रष्टा हैं। २६।। दृश्य (दिखाई देने योग्य) वस्तुओं को भुवनेश्वरी शिवा धारण करती हैं। चन्द्रशेखर स्वयं द्रष्टा (दर्शक) हैं। २७।। सब रस (स्वाद) और गंध उमा का रूप है। उस रस के भोक्ता (आस्वादक) और ग्राता भुवनेश्वर शिव हैं। २८।। महादेवी शिवा सब मन्तव्य (विचार योग्य विषय) को धारण करती हैं तो विश्व के आत्मा महादेव मंता (विचारक) हैं। शिव शिवा बोधक वस्तु के स्वरूप हैं तो बालचन्द्रधारी शिव बोद्धा (समझने वाले) हैं। २९-३०।। उमा देवी वेदी रूप हैं। शिव जी लिंग रूप हैं। अग्रि यत्नपूर्वक स्थापित करके देवता और राक्षस पूजा करते हैं। ३१।। लिंग के आकार की जो-जो वस्तुएँ हैं वे सब शिव की विभूतियाँ हैं तथा भग के आकार की जितनी वस्तुएँ या पदार्थ हैं वे सब शिवा की विभूतियाँ हैं। ३२-३३।। स्वर्ग और पाताल के अन्त तक ब्रह्माण्ड को आच्छादित करने वाले आठ आवरण ज्ञेय (जानने योग्य) उमा के रूप हैं तो उसके ज्ञाता महेश्वर शिव हैं। यदि लोग शिव की लिंग पूजा को छोड़कर अन्य देवताओं (मूर्तियों) की पूजा करते हैं तो वे लोग अपने राजा सहित रौरव नरक में जाते हैं। ३४-३५।। जो राजा शिव का भक्त नहीं है, अन्य देवताओं का भक्त होता है। वह उस युवती के समान है जो अपने पति को छोड़कर जारों (अन्य पुरुषों) के साथ रमण करती है। ३६।। ब्रह्मा आदि सब देवता, धनपति राजा, प्रजा और मुनिगण सब

विष्णुना रावणं हत्वा ससैन्यं ब्रह्मणः सुतम्। स्थापितं विधिवद्भूत्या लिंगं तीरे नदीपतेः॥३८॥  
 कृत्वा पापसहस्राणि हत्वा विप्रशतं तथा। भावात्समाश्रितो रुद्रं मुच्यते नात्र संशयः॥३९॥  
 सर्वे लिंगमया लोकाः सर्वे लिंगे प्रतिष्ठिताः। तस्मादभ्यर्चयेलिंगे यदीच्छेच्छाश्वतं पदम्॥४०॥  
 सर्वाकारौ स्थितावेतौ नरैः श्रेयोऽर्थिभिः शिवौ। पूजनीयौ नमस्कार्यौ चिन्तनीयौ च सर्वदा॥४१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्वुकादशीऽध्यायः॥१९९॥**

लिंग की पूजा करते हैं॥३७॥ रावण का वध करने के पश्चात् राम ने ब्रह्मा के पुत्र विष्णु द्वारा समुद्र तट पर स्थापित शिव लिंग की विधिवत् पूजा सेना सहित पहले की थी॥३८॥ हजारों पाप करके और सैकड़ों ब्राह्मणों की हत्या करके जो व्यक्ति लगनपूर्वक शिव की भक्ति करता है निःसन्देह मोक्ष को प्राप्त होता है॥३९॥ सब लोक लिंगमय हैं। वे सब लिंग में प्रतिष्ठित हैं। इसलिये यदि कोई शाश्वत पद (अन्तःकरण की स्थायी शान्ति या मोक्ष) चाहे तो उसको लिंग की पूजा करनी चाहिये॥४०॥ शिव और शिवा सब में विराजमान हैं। अपने कल्याण चाहने वालों को सदा शिव और शिवा पूजनीय, नमस्कार्य और चिन्तनीय हैं॥४१॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की विभूतियों का वर्णन  
नामक ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त॥१९॥**



## द्वादशोऽध्यायः शिवरत्याष्टमूर्त्यः

सनत्कुमार उवाच

मूर्तयोऽष्टौ ममाचक्ष्व शंकरस्य महात्मनः। विश्वरूपस्य देवस्य गणेश्वर महापते॥१॥  
नंदिकेश्वर उवाच

हंत ते कथयिष्यामि महिमानमुमापतेः। विश्वरूपस्य देवस्य सरोजभवसंभव॥२॥  
भूरापोग्निर्मरुदव्योम भास्करो दीक्षितः शशी। भवस्य मूर्तयः प्रोत्ता: शिवस्य परमेष्ठिनः॥३॥  
खात्मेदुवह्निसूर्याभिर्थराः पवन इत्यपि। तस्याष्ट मूर्तयः प्रोत्ता देवदेवस्य धीमतः॥४॥  
अग्निहोत्रेष्ठिते तेन सूर्यात्मनि महात्मनि। तद्विभूतीस्तथा सर्वे देवास्तुप्यन्ति सर्वदाः॥५॥  
वृक्षस्य मूलसेकेन यथा शाखोपशाखिकाः। तथा तस्यार्चया देवास्तथा स्युस्तद्विभूतयः॥६॥  
तस्य द्वादशधा भिन्नं रूपं सूर्यात्मकं प्रभोः। सर्वदेवात्मकं याज्यं यजन्ति मुनिपुंगवाः॥७॥  
अमृताख्या कला तस्य सर्वस्यादित्यरूपिणः। भूतसंजीवनी चेष्टा लोकोस्मिन् पीयते सदा॥८॥  
चंद्राख्यकिरणास्तस्य धूर्जटेर्भास्करात्मनः। ओषधीनां विवृद्ध्यर्थं हिमवृष्टिं वितन्वते॥९॥

## बारहवाँ अध्याय शिव की आठ मूर्तियाँ

सनत्कुमार बोले

हे गणों के नेता! महाबुद्धिमान् नंदिकेश्वर! मुझसे महान् आत्मा शंकर के आठ ब्रह्माण्ड स्वरूप कहो॥१॥

नंदिकेश्वर बोले

हे ब्रह्मा के पुत्र! मैं तुमसे विश्वरूप शिवजी के महिमा को कहूँगा॥२॥ भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, दीक्षित (आत्मा) ये परमेष्ठी शिव की आठ मूर्तियाँ हैं॥३॥ आकाश, आत्मा, चन्द्रमा, अग्नि, सूर्य जल, भूमि और वायु ये भी बुद्धिमान् देवताओं के देवता शिव की आठ मूर्तियाँ कही गयी हैं॥४॥ इसलिए सूर्य के प्रकृति के महान् आत्मा को अग्निहोत्र अर्पित किये जाने पर तो उनकी विभूतियों और सब देवता सर्वदा तृप्त होते हैं॥५॥ जैसे वृक्ष की जड़ सींचने से उसकी शाखाएँ और उपशाखाएँ सन्तुष्ट होती हैं। उसी प्रकार देवगण और शिव की विभूतियाँ भी शिव की पूजा और अर्चना से तृप्त होती हैं॥६॥ श्रेष्ठ मुनि लोग बारह प्रकार सूर्यात्मक प्रभु शिव के पूज्य रूप की पूजा करते हैं॥७॥ सब सूर्यरूपी उनकी अमृत रूप में प्रसिद्ध कला—जो इस लोक में सम्पूर्ण प्राणियों की संजीवनी है लोक के लिए लाभकारी है—उसको लोग हमेशा पीते हैं॥८॥ भास्करात्मा उन शिव की चन्द्र नामक किरणें औषधियों के बढ़ने के लिए हिम की वृष्टि करती हैं॥९॥

शुक्लाख्या रश्मयस्तस्य शंभोर्मार्तिङ्गरूपिणः। धर्मवितन्वते लोके सस्यपाकादिकारणम्॥१०॥  
 दिवाकरात्मनस्तस्य हरिकेशाह्न्यः करः। नक्षत्रपोषकश्चैव प्रसिद्धः परमेष्ठिनः॥११॥  
 विश्वकर्माह्न्यस्तस्य किरणो बुधपोषकः। सर्वेश्वरस्य देवस्य सप्तसप्तिस्वरूपिणः॥१२॥  
 विश्वव्यच इति ख्यातः किरणस्तस्य शूलिनः। शुक्रपोषकभावेन प्रतीतः सूर्यरूपिणः॥१३॥  
 संयद्वसुरिति ख्यातो यस्य रश्मस्त्रिशूलिनः। लोहितांगं प्रपुष्णाति सहस्रकिरणात्मनः॥१४॥  
 अर्वावसुरिति ख्यातो रश्मस्तस्य पिनाकिनः। बृहस्पतिं प्रपुष्णाति सर्वदा तपनात्मनः॥१५॥  
 स्वराडिति समाख्यातः शिवस्यांशुः शनैश्चरम्। हरिदश्वात्मनस्तस्य प्रपुष्णाति दिवानिशम्॥१६॥

सूर्यात्मकस्य देवस्य विश्वयोनेरुमापतेः।

सुषुम्णाख्यः सदा रश्मः पुष्णाति शिशिरद्युतिम्॥१७॥

सौम्यानां वसुजातानां प्रकृतित्वमुपागता। तस्य सोमाह्न्या मूर्तिः शंकरस्य जगद्गुरोः॥१८॥  
 तस्य सोमात्मक रूप शुक्रत्वेनव्यवस्थितम्। शरीरभाजां सर्वेषां देवस्यांतकशासिनः॥१९॥  
 शरीरिणामशेषाणां मनस्येव व्यवस्थितम्। वपुः सोमात्मकं शंभोस्तस्य सर्वजगद्गुरोः॥२०॥  
 शंभोः षोडशधा भिन्ना स्थितामृतकलात्मनः। सर्वभूतशरीरेषु सोमाख्या मूर्तिरुत्तमा॥२१॥  
 देवान्यितृश्च पुष्णाति सुधयामृतया सदा। मूर्तिः सोमाह्न्या तस्य देवदेवस्य शासितुः॥२२॥  
 पुष्णात्योषधिजातानि देहिनामात्मशुद्धये। सोमाह्न्या तनुस्तस्य भवानीमिति निर्दिशेत्॥२३॥

शिव की सूर्यात्मक शुक्ल किरणें गर्मी (धूप) पैदा करती हैं जिनसे पीछे और अन्त पकते हैं॥१०॥ प्रसिद्ध परमेष्ठी के सूर्यात्मक रूप से हरिकेश नामक किरण ऐसी है जो नक्षत्रों की पोषक है॥११॥ शिव के सूर्यात्मक रूप के सम्बन्ध रखने वाली विश्वकर्मा नामक किरण बुध की पोषक है॥१२॥ शिव की सूर्य रूपी विश्वव्यच नाम की किरण शुक्र की पोषक है॥१३॥ सूर्यात्मक शिव की संयतवसु नाम से प्रसिद्ध लोहितांग को पोषित करती है॥१४॥ उन पिनाकी शिव की सूर्यात्मक अर्वावसु नाम की किरण सदा बृहस्पति को विकसित करती है॥१५॥ शिव की सूर्यात्मक स्वराट् नामक किरण रात और दिन के द्वारा शनिश्चर को पुष्ट करती है॥१६॥ उमापति विश्व की उत्पत्ति के स्रोत की सूर्यात्मक सुषुम्ना नाम से प्रसिद्ध किरण शिशिर को पुष्ट करती है॥१७॥ शिव से सम्बन्ध रखने वाली सोम नामक मूर्ति विश्व के भौतिक पदार्थों की पोषक है॥१८॥ अन्तकहन्ता उन शिवजी का सोमात्मक रूप सब शरीरधारियों में शुक्र (वीर्य) रूप में रहता है॥१९॥ जगदगुरु उन शिव का सोमात्मक शरीर सब शरीरधारियों के मन में विराजमान है॥२०॥ शिव का भौतिक रूप सोम नाम है जो सब प्राणियों के शरीर में स्थित है। यह अमृत कलात्मक के सोलह रूप में विभक्त सब प्राणियों के शरीर में उत्तम मूर्ति रूप में स्थित रहता है॥२१॥ चन्द्र की सोलह कलाएँ शिव के सोलह शरीर के रूप में कही गयी हैं॥२२॥ देवताओं के देवता शंकर का सोमरूप अमृत के द्वारा देवताओं और पितरों को तृप्त करता है। शिव का भौतिक रूप सोम सब शरीरधारियों के आत्मा की शुद्धि के लिए औषधियों के पादपों का पोषण करता है। शिव के इस रूप को भवानी कहा जाता है॥२३॥ शिव जी का प्रसिद्ध सोमात्मक रूप जीवों और यज्ञों के पति रूप में प्रसिद्ध

यज्ञानां पतिभावेन जीवानां तपसामपि। प्रसिद्धरूपमेतद्वै सोमात्मकमुमापते:॥२४॥  
जलानामोषधीनां च पतिभावेन विश्रुतम्। सोमात्मकं वपुस्तस्य शंभोर्भगवतः प्रभोः॥२५॥  
देवो हिरण्यमयो मृष्टः परस्परविवेकिनः। करणानामशेषाणां देवतानां निराकृतिः॥२६॥  
जीवत्वेन स्थिते तस्मिज्ज्ञवे सोमात्मके प्रभौ। मधुरा विलयं याति सर्वलोकैकरक्षिणी॥२७॥  
यजमानाह्वया मूर्तिः शैवी हव्यैरहर्निशम्। पुष्णाति देवताः सर्वाः कव्यैः पितृगणानपि॥२८॥  
यजमानाह्वया या सा तनुश्चाहुतिजा तया। वृष्ट्या भावयति स्पष्टं सर्वमेव परापरम्॥२९॥

अंतःस्थं च बहिःस्थं च ब्रह्मांडानां स्थितं जलम्।

भूतानां च शरीरस्थं शंभोर्मूर्तिर्गरीयसी॥३०॥

नदीनाममृतं साक्षान्नदानामपि सर्वदा। समुद्राणां च सर्वत्र व्यापी सर्वमुमापतिः॥३१॥  
संजीविनी समस्तानां भूतानामेव पाविनी। अंबिका प्राणसंस्था या मूर्तिरंखुमयी परा॥३२॥  
अंतःस्थश्च बहिःस्थश्च ब्रह्मांडानां विभावसुः। यज्ञानां च शरीरस्थः शंभोर्मूर्तिर्गरीयसी॥३३॥  
शरीरस्था च भूतानां श्रेयसी मूर्तिरैश्वरी। मूर्तिः पावकसंस्था या शंभोरत्यंतपूजिता॥३४॥  
भेदा एकोनपंचाशद्वेदविद्विरुदाहताः। हव्यं वहति देवानां शंभोर्यज्ञात्मकं वपुः॥३५॥  
कव्यं पितृगणानां च हूयमानं द्विजातिभिः। सर्वदेवमयं शंभोः श्रेष्ठमग्न्यात्मकं वपुः॥३६॥  
वदंति वेदशास्त्रज्ञा यजंति च यथाविद्य। अंतःस्थो जगदंडानां बहिःस्थश्च समीरणः॥३७॥

है॥२४॥ शिव जी का सोमात्मक रूप जलों का और औषधियों के पति रूप में जाना जाता है॥२५॥  
हिरण्यमय देवता शिवजी विचारशील पुरुषों की सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियों की पहुँच से बाहर हैं और उन सब देवताओं  
के साधन पहुँच से भी बाहर हैं। वह प्रत्येक आत्मा में जीव रूप में स्थित है। सब जगत की रक्षा करने वाली मधुर  
माया (प्रकृति) स्वयं दूर हट जाती है॥२६-२७॥

शिवजी की यजमान नामक मूर्ति सब देवताओं को दिन-रात सब हव्य और सब पितरों को कव्य के द्वारा  
पोषण करती है। यजमान रूपी वह मूर्ति सम्पूर्ण चर और अचर को अपने आहुति से उत्पन्न वृष्टि से पुष्ट करती  
है॥२८-२९॥

जल जो ब्रह्माण्ड के भीतर और बाहर स्थित है, और जल जो कि सब प्राणियों के भीतर स्थित है। यह जल  
शिव जी की ही मूर्ति है॥३०॥

नदियों और नदी का अमृतमय जल तथा समुद्रों का जल उमापति शिव का भौतिक रूप है॥३१॥ सब  
प्राणियों को पवित्र करने वाली जो संजीविनी है वह प्राणवायु में स्थित है वह सोम का रूप (मूर्ति) है॥३२॥  
विश्व के भीतर-बाहर स्थित अग्नि और यज्ञों में स्थित अग्नि उन्हीं शिव की श्रेष्ठ मूर्ति है॥३३॥

शिव का भौतिक रूप, वह जो अत्यन्त सम्पत्त और पूजित है, वह प्राणियों के कल्याण के लिए उनके देह  
में स्थित है॥३४॥ वेदज्ञों द्वारा उनचास (४९) भेदों में कही गई सबसे श्रेष्ठ अग्नि शंभु का रूप है। जिस अग्नि  
से ब्राह्मणों द्वारा हवा से देवताओं को हव्य और पितरों को कव्य प्राप्त होता है॥३५-३६॥ वेदों और शास्त्रों

शरीरस्थश्च भूतानां शैवी मूर्तिः पटीयसी। प्राणाद्या नागकूर्मद्या आवहाद्याश्च वायवः॥३८॥  
 ईशानमूर्तेरिकस्य भेदाः सर्वे प्रकीर्तिताः। अंतःस्थं जगदंडानां बहिःस्थं च विद्विभोः॥३९॥  
 शरीरस्थं च भूतानां शंभोमूर्तिरीयसी। शंभोर्विश्वंभरा मूर्तिः सर्वब्रह्माधिदेवता॥४०॥  
 चराचराणां भूतानां सर्वेषां धारणे मता। चराचराणां भूतानां शरीराणि विदुर्बुधाः॥४१॥  
 पञ्चकेनेशमूर्तीनां समारब्धानि सर्वथा। पञ्चभूतानि चंद्राकारावात्मेति मुनिपुंगवाः॥४२॥  
 मूर्तयोऽष्टौ शिवस्याहुर्देवदेवस्य धीमतः। आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिर्यजमानाह्वया परा॥४३॥  
 चराचरशरीरेषु सर्वेष्वेव स्थिता तदा। दीक्षितं ब्राह्मणं प्राहुरात्मानं च मुनीश्वराः॥४४॥  
 यजमानाह्वया मूर्तिःशिवस्य शिवदायिनः। मूर्तयोष्टौ शिवस्यैता वंदनीयाः प्रवत्सरः॥४५॥  
 श्रेयोर्धिभिन्नैर्नित्यं श्रेयसामेकहेतवः॥४६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्वादशोऽध्यायः॥१२॥**

के ज्ञाता यथाविहित जिसको पूजते हैं वह जगत के बाहर और भीतर स्थित है और प्राणियों के शरीर में स्थित है। वह वायु शिव का शक्तिमान रूप है। वह वायु अनेक प्रकार की है जैसे प्राण आदि, नाग, कूर्म आदि, आवह आदि ये सब ईशान (शिव) के विभिन्न रूप हैं। ये सब ईशान मूर्ति के भेद कहे गये हैं। ३७-३८।। जगत के भीतर और बाहर जो आकाश स्थित है और प्राणियों के शरीर में स्थित है वह सब शिव की शान्त मूर्ति है। सब ब्रह्मा और देवता शिव की दिशामय मूर्ति हैं। सब चर और अचर को धारण करने में सक्षम विद्वान लोग कहते हैं कि ये सब चर और अचर शरीर शिव के रूप हैं। हे श्रेष्ठ मुनियों! ईश के पाँच भक्ति के रूप मूर्ति से पाँच भूत विकसित हुये हैं। चन्द्र, सूर्य और आत्मा शिव के आठ ब्रह्माण्ड रूप कहे जाते हैं। उनकी आठवीं मूर्ति आत्मा है। इसका दूसरा नाम यजमान है। ३९-४३।। यह आत्मा सब चर और अचर में विद्यमान है। मुनीश्वर लोग आत्मा को दीक्षित कहते हैं। यह शिवदायक शरीर है। इसको यजमान भी कहते हैं। ये आठों शिव की मूर्तियाँ यत्नपूर्वक वन्दनीय हैं। जो लोग अपना कल्याण चाहते हैं उनको सदैव यत्नपूर्वक इनकी पूजा करनी चाहिए। ४४-४६।।

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की आठ मूर्तियाँ  
 नामक बारहवाँ अध्याय समाप्त। १२॥



## त्रयोदशोऽध्यायः शिवरूपाष्टमूर्त्तेः महिमा

सनत्कुमार उवाच

भूयोऽपि वद मे नंदिन् महिमानमुमापते। अष्टमूर्त्तेर्महेशस्य शिवस्य परमेष्ठिनः॥१॥

नंदिकेश्वर उवाच

वक्ष्यामि ते महेशस्य महिमानमुमापते:। अष्टमूर्त्तेर्जगद्व्याप्य स्थितस्य परमेष्ठिनः॥२॥

चराचराणां भूतानां धाता विश्वंभरात्मकः। शर्व इत्युच्यते देवः सर्वशास्त्रार्थपारगैः॥३॥

विश्वंभरात्मनस्तस्य सर्वस्य परमेष्ठिनः। विकेशी कथ्यते पत्नी तनयोंगारकः स्मृतः॥४॥

भव इत्युच्यते देवो भगवान्वेदवादिभिः। संजीवनस्य लोकानां भवस्य परमात्मनः॥५॥

उमा संकीर्तिता देवी सुतः शुक्रश्च सूरिभिः। सप्तलोकांडकव्यापी सर्वलोकैकरक्षिता॥६॥

वह्न्यात्मा भगवान्देवः स्मृतः पशुपतिर्बुधैः। स्वाहा पत्न्यात्मनस्तस्य प्रोक्ता पशुपतेः प्रिया॥७॥

षण्मुखो भगवान्देवो बुधैः पुत्र उदाहृतः। समस्तभुवनव्यापी भर्ता सर्वशरीरिणाम्॥८॥

पवनात्मा बुधैर्देव ईशान इति कीर्त्यते। ईशानस्य जगत्कर्तुर्देवस्य पवनात्मनः॥९॥

तेरहवाँ अध्याय

## शिव की अष्टमूर्ति की महिमा

सनत्कुमार बोले

हे नन्दीश्वर! इसके आगे उमापति शिव जी की महानता को कहो, उस शिव के जिनकी आठ मूर्तियाँ हैं॥१॥

नन्दिकेश्वर बोले

मैं जगत् में व्याप्त परमेष्ठी की अष्टमूर्ति उमापति की महिमा को कहूँगा॥२॥ सब चर प्राणियों के स्थान (उत्पन्न करने वाले) तथा विश्व के पालक को सब शास्त्रों के अर्थ परगामी विद्वान जिनको शर्व कहते हैं॥३॥ सर्व की पत्नी विकेशी हैं। शिव परमेष्ठी विश्वम्भर के रूप में हैं। अंगारक उनका पुत्र है॥४॥ वेदवादियों द्वारा भगवान् शिव भव कहे जाते हैं। महान् आत्मा जो विश्व का पालन करती है। उनकी पत्नी उमा देवी और पुत्र शुक्र विद्वानों द्वारा कहा गया है। वह शिव सातों लोकों में व्यापक हैं और सब लोकों के एक मात्र रक्षक हैं। विद्वानों द्वारा वे अग्नि के रूप में, पशुपति के रूप में स्मरण किये गये हैं। उस अग्नि रूप पशुपति की पत्नी स्वाहा है, विद्वानों ने षड्मुख (षडानन) पुत्र कहा है। वह सब लोकों में व्याप्त हैं और सब शरीरधारियों के भरण पोषण करने वाले हैं। पण्डित लोग वायु रूप में (पवनात्मा) शिव ईशान कहे जाते हैं। वे सब जगत् के कर्ता हैं। उनकी पत्नी शिवा है और पुत्र कामदेव हैं। वह चर अचर सब की कामना को पूरा करते हैं॥५-९॥

शिवा देवी बुधैरुक्ता पुत्रश्चास्य मनोजवः। चराचराणां भूतानां सर्वेषां सर्वकामदः॥१०॥  
 व्योमात्मा भगवान्देवो भीम इत्युच्यते बुधैः। महामहिम्नो देवस्य भीमस्य गगनात्मनः॥११॥  
 दिशा दश स्मृता देव्यः सुतः सर्गश्चसूरिभिः। सूर्यात्मा भगवान्देवः सर्वेषां च विभूतिदः॥१२॥  
 रुद्र इत्युच्यते देवैर्भगवान् भुक्तिमुक्तिदः। सूर्यात्मकस्य रुद्रस्य भक्तानां भक्तिदायिनः॥१३॥  
 सुवर्चला स्मृता देवी सुतश्चास्य शनैश्चरः। समस्तसौम्यवस्तूनां प्रकृतित्वेन विश्रुतः॥१४॥  
 सोमात्मको बुधैर्देवो महादेव इति स्मृतः। सोमात्मकस्य देवस्य महादेवस्य सूरिभिः॥१५॥  
 दयिता रोहिणी प्रोक्ता बुधश्चैव शरीरजः।

हव्यकव्यस्थितिं कुर्वन् हव्यकव्याशिनां तदा॥१६॥

यजमानात्मको देवो महोदेवो बुधैः प्रभुः। उग्र इत्युच्यते सद्ब्रीशानश्चेति चापरैः॥१७॥  
 उग्राह्वयस्य देवस्य यजमानात्मनः प्रभोः। दीक्षा पत्नी बुधैरुक्ता संतानाख्यः सुतस्तथा॥१८॥  
 शरीरिणां शरीरेषु कठिनं कोंकणादिवत्। पार्थिवं तद्वपुर्ज्ञेयं शर्वतत्त्वं बुभुत्सुभिः॥१९॥  
 देहेदेहे तु देवेशो देहभाजां यदव्ययम्। वस्तुद्रव्यात्मकं तस्य भवस्य परमात्मनः॥२०॥  
 ज्ञेयं च तत्त्वविद्धिर्वै सर्ववेदार्थपारगैः। आग्नेयः परिणामो यो विग्रहेषु शरीरिणाम्॥२१॥  
 मूर्तिः पशुपतिर्ज्ञेया सा तत्त्वं वेत्तुमिच्छुभिः। वायव्यः परिणामो यः शरीरेषु शरीरिणाम्॥२२॥  
 बुधैरीशेति सा तस्य तनुर्ज्ञेया न संशयः। सुषिरं यच्छरीरस्थमशेषाणां शरीरिणाम्॥२३॥  
 भीमस्य सा तनुर्ज्ञेया तत्त्वविज्ञानकांक्षिभिः। चक्षुरादिगतं तेजो यच्छरीरस्थमंगिनाम्॥२४॥

आकाश के रूप में भगवान् शिव विद्वानों द्वारा भीम कहे गये हैं। वे सब प्राणियों की कामनाओं की पूर्ति कर्ता हैं। विद्वानों द्वारा दस दिशा उनकी देवियाँ हैं। सर्ग उनके पुत्र हैं। भगवान् शिव सूर्य के रूप में सब को विभूति देने वाले और भुक्ति मुक्ति देने वाले हैं, जो देवताओं द्वारा रुद्र कहे जाते हैं। सूर्यात्मा रुद्र भक्तों को भक्ति और मुक्ति देते हैं। रुद्र की पत्नी सर्वर्चला देवी है और शनैश्चर उनका पुत्र है। चन्द्रमा की पत्नी रोहिणी है और उनका पुत्र बुध है। भगवान् महादेव यजमान के रूप में विद्वानों द्वारा उग्र कहे गये हैं। अन्य लोगों द्वारा वे ईशान भी कहे जाते हैं। वह देवताओं को देय हव्य और पितरों को देय कव्य देते हैं। ।१०-१७।। यजमान आत्मा उग्र की पत्नी दीक्षा और पुत्र संतान कहा गया है।।१८।। आत्माओं का शरीर के कठिन भाग कोंकण आदि शिव का पार्थिव शरीर है।।१९।।

प्रत्येक शरीर में देवताओं के स्वामी शिव विद्यमान हैं। जो विद्वान् सब वेदों के अर्थों के विशेषज्ञ हैं और तत्त्वों के ज्ञाता हैं, वे कहते हैं कि आत्माओं के शरीर में जो अपरिवर्तनीय (अव्यय) ठोस द्रव्य हैं वह उस महान् आत्मा भव का अंश हैं। शरीरधारियों के शरीर में जो आग्नेय तत्त्व है वह पशुपति के भौतिक रूप में जाना जाता है। ऐसा तत्त्ववेत्ता कहते हैं। शरीरधारियों के शरीर में जो वायव्य परिमाण है निःसन्देह वह ईश का शरीर है, ऐसा विद्वानों का कथन है। तत्त्व के खोजों में इच्छुक लोगों का मानना है कि सब शरीरधारियों के शरीर में जो तेज स्थित है वह भीम का तनु है। शरीरधारियों के नेत्रों आदि में विद्यमान जो चन्द्रात्मक मन है वह विद्वानों द्वारा रुद्र का बहुरूप मान्य है।

रुद्रस्यापि तनुज्ञेया परमार्थं बुभुत्सुभिः। सर्वभूतशरीरेषु मनश्चंद्रात्मकं हि यत्॥२५॥  
महादेवस्य सा मूर्ति बोद्धव्या तत्त्वचिंतकैः। आत्मा यो यजमानाख्यः सर्वभूतशरीरगः॥२६॥  
मूर्तिरुग्रस्य सा ज्ञेया परमात्मबुभुत्सुभिः। जातानां सर्वभूतानां चतुर्दशसु योनिषु॥२७॥  
अष्टमूर्तेरनन्यत्वं वदंति परमर्षयः। सप्तमूर्तिमयान्याहुरीशस्यांगानि देहिनाम्॥२८॥  
आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिः सर्वभूतशरीरगा। अष्टमूर्तिममुं देवं सर्वलोकात्मकं विभुम्॥२९॥  
भजस्व सर्वभावेन श्रेयः प्राप्नुं यदीच्छसि। प्राणिनो यस्य कस्यापि क्रियते यद्यनुग्रहः॥३०॥

अष्टमूर्तेर्महेशस्य कृतमाराधनं भवेत्।

निग्रहश्चेत् कृतो लोके देहिनो यस्य कस्यचित्॥३१॥

अष्टमूर्तेर्महेशस्य स एव विहितो भवेत्। यद्यवज्ञा कृता लोके यस्य कस्यचिदंगिनः॥३२॥  
अष्टमूर्तेर्महेशस्य विहिता सा भवेद्विभेः। अभयं यत् प्रदत्तं स्यादंगिनो यस्य कस्यचित्॥३३॥  
आराधनं कृतं तस्मादष्टमूर्तेन संशयः। सर्वोपकारकरणं प्रदानमभयस्य च॥३४॥  
आराधनं तु देवस्य अष्टमूर्तेन संशयः। सर्वोपकारकरणं सर्वानुग्रह एव च॥३५॥  
तदर्चनं परं प्राहुरष्टमूर्तेर्मुनीश्वराः। अनुग्रहणमन्येषां विधातव्यं त्वयांगिनाम्॥३६॥  
सर्वाभयप्रदानं च शिवाराधनमिच्छता॥३७॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रयोदशोऽध्यायः॥१९३॥

शरीरधरियों के शरीर का जो वायव्य परिमाण है वह निःसन्देह ईश का शरीर है। ऐसा विद्वानों का कथन है। तत्त्व की खोज में इच्छुक लोगों का मानना है कि सब शरीरधारियों के शरीर में जो सुविर स्थित है, वह भीम का तनु है। शरीरधारियों के नेत्रों आदि में विद्यमान जो तेज है तत्त्वज्ञानियों के द्वारा रुद्र का एक रूप मान्य है। सब शरीरधारियों में सब प्राणियों के शरीर में स्थित मन जो चन्द्रमा रूप में स्थित है वह महादेव की मूर्ति है। सब प्राणियों के शरीर में जो यजमान नामक आत्मा विद्यमान है। वह आत्मतत्त्वविदों द्वारा शिव की मूर्ति कहा जाता है॥२०-२६॥ महान् ऋषिगण कहते हैं कि चौदहों योनियों में उत्पन्न सब प्राणियों में अष्टमूर्ति से पृथक् नहीं है। अर्थात् सब प्राणी अष्टमूर्ति में ही समाहित हैं। वे कहते हैं कि देहधरियों के अंग ईश के अष्टमूर्तिमय हैं। सब प्राणियों के शरीर में आत्मा आठवीं मूर्ति है। यदि तुम कल्याण चाहते हो तो सब लोक में व्याप्त विभु शिव की अष्टमूर्ति की सेवा करो॥२७-२९॥ अष्टमूर्ति शिव की आराधना यदि की जाय तो जिस किसी भी व्यक्ति पर उनकी कृपा हो सकती है। यदि लोक में कोई शिव की अष्टमूर्तियों में किसी एक मूर्ति का निग्रह, विघ्न या उपेक्षा करता है तो वह शिव का ही अनादर होगा। जिस किसी भी अंगी (देही) की जोखिम या भय से रक्षा की जाय निश्चित रूप से वह अष्टमूर्ति शिव की ही रक्षा के समान है॥३०-३३॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की अष्टमूर्ति की महिमा  
नामक तेरहाँ अध्याय समाप्ता॥१३॥



## चतुर्दशोऽध्यायः पंचब्रह्मकथनम्

सनत्कुमार उवाच

पंच ब्रह्माणि मे नन्दिन्नाचक्षव गणसत्तमा। श्रेयः करणभूतानि पवित्राणि शरीरिणाम्॥१॥  
नन्दिकेश्वर उवाच

शिवस्यैव स्वरूपाणि पंच ब्रह्माह्यानि ते। कथयामि यथातत्त्वं पद्मयोनेः सुतोत्तमा॥२॥  
सर्वलोकैकसंहर्ता सर्वलोकैकरक्षिता। सर्वलोकैकनिर्माता पंचब्रह्मात्मकः शिवः॥३॥  
सर्वेषामेव लोकानां यदुपादानकारणम्। निमित्तकारणं चाहुस्स शिवः पंचधा स्मृतः॥४॥  
मूर्तयः पंच विख्याताः पंच ब्रह्माह्याः पराः। सर्वलोकशरण्यस्य शिवस्य परमात्मनः॥५॥  
क्षेत्रज्ञः प्रथमा मूर्तिः शिवस्य परमेष्ठिनः। भोक्ता प्रकृतिवर्गस्य भोग्यस्येशानसंज्ञितः॥६॥  
स्थाणोस्तत्पुरुषाख्या च द्वितीयामूर्तिरुच्यते। प्रकृतिः सा हि विज्ञेया परमात्मगुहात्मिका॥७॥  
अघोराख्या तृतीया च शंभोमूर्तिरीयसी। बुद्धेः सा मूर्तिरित्युक्ता धर्माद्यष्टांगसंयुता॥८॥  
चतुर्थी वामदेवाख्या मूर्तिः शंभोर्गरीयसी। अहंकारात्मकत्वेन व्याप्य सर्वं व्यवस्थिता॥९॥  
सद्योजाताह्याशंभोः पंचमी मूर्तिरुच्यते। मनस्तत्त्वात्मकत्वेन स्थिता सर्वशरीरिषु॥१०॥

### चौदहवाँ अध्याय पंच ब्रह्म कथन

सनत्कुमार बोले

हे गणों में श्रेष्ठ, हे नन्दिकेश्वर! मुझसे पंचब्रह्मों के विषय में कहो जो कि शरीरधारियों को पवित्र करने वाले और कल्याण करने वाले हैं॥१॥

नन्दिकेश्वर बोले

पंचब्रह्म कहे जाने वाले वे शिव के ही स्वरूप हैं। हे ब्रह्मा के उत्तम पुत्र! मैं तुमसे उनके विषय में कहता हूँ। शिव स्वयं ही पंच ब्रह्म हैं॥२॥ पंच ब्रह्म के रूप में शिव सब संसार के निर्माता, संहर्ता और एक मात्र रक्षक हैं। शिव लोकों के उपादान कारण और निमित्त कारण दोनों हैं। वह शिव पंचब्रह्म कहे जाते हैं॥३-४॥ सब लोक को शरण देने के योग्य परमात्मा शिव की पाँच मूर्तियाँ हैं। वह क्षेत्र के ज्ञाता क्षेत्रज्ञ हैं और प्रकृति के भोग करने वाले (भोक्ता) हैं॥५-६॥ शिव की द्वितीय मूर्ति तत्पुरुष कहलाती है। वह परमात्मा में स्थित प्रकृति है॥७॥ शिव की तृतीय उत्तम मूर्ति अघोर नाम से प्रसिद्ध है। यह बुद्धिरूपा मूर्ति है जो कि धर्म आदि आठ अंगों से युक्त है॥८॥ शिव की चौथी मूर्ति वामदेव है। यह अहंकार के रूप में सबकुछ प्रदान करती है॥९॥ शिव की पाँचवीं मूर्ति का नाम सद्योजात है। वह सब शरीरधारियों में मन के रूप में स्थित है॥१०॥ परमेष्ठी महान्

ईशानः परमो देवः परमेष्ठी सनातनः। श्रोत्रेद्रियात्मकत्वेन सर्वभूतेष्ववस्थितः॥११॥  
 स्थितस्तत्पुरुषो देवः शरीरेषु शरीरिणाम्। त्वगिंद्रियात्मकत्वेन तत्त्वविद्धिरुदाहृतः॥१२॥  
 अघोरोपि महादेवश्चक्षुरात्मतया बुधैः। कीर्तिः सर्वभूतानां शरीरेषु व्यवस्थितः॥१३॥  
 जिह्वेद्रियात्मकत्वेन वामदेवोपि विश्रुतः। अंगभाजामशेषाणामंगेषु परिधिष्ठितः॥१४॥  
 घ्राणेद्रियात्मकत्वेन सद्योजातः स्मृतो बुधैः। प्राणभाजां समस्तानां विग्रहेषु व्यवस्थितः॥१५॥  
 सर्वेष्वेव शरीरेषु प्राणभाजां प्रतिष्ठितः। वागिंद्रियात्मकत्वेन बुधैरीशान उच्यते॥१६॥  
 पाणींद्रियात्मकत्वेन स्थितस्तत्पुरुषो बुधैः। उच्यते विग्रहेष्वेव सर्वविग्रहधारिणाम्॥१७॥  
 सर्वविग्रहिणां देहे ह्यघोरोपि व्यवस्थितः। पादेद्रियात्मकत्वेन कीर्तिस्तत्त्ववेदिभिः॥१८॥  
 पाञ्चिंद्रियात्मकत्वेन वामदेवो व्यवस्थितः। सर्वभूतानिकायानां कायेषु मुनिभिः स्मृतः॥१९॥  
 उपस्थात्मतया देवः सद्योजातः स्थितः प्रभुः। इच्यते वेदशास्त्रज्ञदेहेषु प्राणधारिणाम्॥२०॥  
 ईशानं प्राणिनां देवं शब्दतन्मात्ररूपिणम्। आकाशजनकं प्राहुर्मुनिवृद्धारकप्रजाः॥२१॥  
 प्राहुस्तत्पुरुषं देवं स्पर्शतन्मात्रकात्मकम्। समीरजनकं प्राहुर्भगवंतं मुनीश्वराः॥२२॥  
 रूपतन्मात्रं देवमधोरमपि घोरकम्। प्राहुर्वेदविदो मुख्या जनकं जातवेदसः॥२३॥  
 रसतन्मात्ररूपत्वात् प्रथितं तत्त्ववेदिनः। वामदेवमपां प्राहुर्जनकत्वेन संस्थितम्॥२४॥  
 सद्योजातं महादेवं गंधतन्मात्ररूपिणम्। भूम्यात्मानं प्रशंसंति सर्वतत्त्वार्थवेदिनः॥२५॥  
 आकाशात्मानमीशानमादिदेवं मुनीश्वराः। परमेण महत्त्वेन संभूतं प्राहुरद्धुतम्॥२६॥

देव शिव ईशान, वह सब प्राणियों में श्रोत इन्द्रिय (कान) के रूप में स्थित हैं॥११॥ शरीरधारियों के शरीर में तत्पुरुष नाम से स्थित स्पर्श रूप ज्ञानेन्द्रिय है॥१२॥ सब प्राणियों के शरीर में आँखों के भीतर विराजमान शिव के रूप को विद्वानों ने अघोर नाम दिया है॥१३॥ शरीरधारियों के अंग में जिह्वा ज्ञानेन्द्रिय के रूप में वामदेव नाम से प्रसिद्ध है॥१४॥ सब प्राणधारियों के शरीर में घ्राणेन्द्रिय (नाक) ज्ञानेन्द्रिय सद्योजात नाम से स्थित है॥१५॥ सब प्रणधारियों के शरीर में वाक्य रूप ज्ञानेन्द्रिय स्थित है इसको ईशान कहा गया है॥१६॥ सब शरीरधारियों के शरीर में हाथ के रूप में स्थित कर्मेन्द्रिय को विद्वानों ने तत्पुरुष कहा है॥१७॥ तत्त्व वेत्ताओं सब शरीरधारियों के देह में पैर के रूप में स्थित कर्मेन्द्रिय को अघोर कहा है॥१८॥ मुनियों ने सब शरीरधारियों के शरीर में गुदा नामक इन्द्रिय के रूप में स्थित को वामदेव कहा है॥१९॥ सद्योजात रूप में प्राणधारियों के जननेन्द्रिय को वेद शास्त्रज्ञों ने सद्योजात नाम दिया है॥२०॥ देवता और ऋषि कहते हैं कि देव ईशान प्राणियों के स्वामी हैं, आकाश के जनक हैं और शब्द तन्मात्र रूप हैं॥२१॥ स्पर्श तन्मात्र को तत्पुरुष कहा गया है। मुनीश्वर लोग उनको वायु का जनक कहते हैं॥२२॥ वेदज्ञ लोग कहते हैं, भयानक अघोर देव का तन्मात्र रूप में स्थित है जो कि अग्नि का जनक (उत्पादक) है॥२३॥ तत्त्ववेदी लोगों द्वारा रस के रूप में वामदेव कहे जाते हैं जो कि जल के जनक हैं॥२४॥ वे लोग जो मूल तत्त्वों के ज्ञाता हैं। वे गन्ध तन्मात्र रूप सद्योजात को पृथ्वी का स्वामी कहते हैं॥२५॥ मुनीश्वर लोग कहते हैं कि ईशान परमात्मा से युक्त आकाशात्मा हैं॥२६॥ विद्वान्

प्रभुं तत्पुरुषं देवं पवनं पवनात्मकम्। समस्तलोकव्यापित्वात्प्रथितं सूरयो विदुः॥२७॥  
 अथार्चिततया ख्यातमधोरं दहनात्मकम्। कथयन्ति महात्मानं वेदवाक्यार्थवेदिनः॥२८॥  
 तोयात्मकं महादेवं वामदेवं मनोरमम्। जगत्संजीवनत्वेन कथितं मुनयो विदुः॥२९॥  
 विश्वंभरात्मकं देवं सद्योजातं जगद्गुरुम्। चराचरैकभर्तारं परं कविवरा विदुः॥३०॥  
 पंचब्रह्मात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्। शिवानंदं तदित्याहुमुनयस्तत्त्वदर्शिनः॥३१॥  
 पंचविंशतितत्त्वात्मा प्रपञ्चे यः प्रदृश्यते। पंचब्रह्मात्मकत्वेन स शिवो नान्यतां गतः॥३२॥  
 पंचविंशतितत्त्वात्मा पंचब्रह्मात्मकः शिवः। श्रेयोर्धिभिरतो नित्यं चिंतनीयः प्रयत्नतः॥३३॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचब्रह्मकथनं  
 नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥१४॥

लोग समस्त लोकों में व्याप्त होने के कारण प्रसिद्ध पवनात्मा को तत्पुरुष कहते हैं॥२७॥ वे जो लोग वेदों के अर्थ को जानते हैं वे उत्तमात्मा अधोर को अग्नि का रूप कहते हैं, जो कि सब लोगों द्वारा पूज्य हैं॥२८॥ मुनि लोग सारे संसार को जीवन देने वाले सुन्दर देवता वामदेव को जल का रूप मानते हैं। वे मन को प्रसन्न करने वाले हैं॥२९॥ बुद्धिमान लोग जानते हैं कि सद्योजात देव जगत गुरु, चर-अचर के स्वामी पृथ्वी के रूप में हैं। वे विश्व के रक्षक हैं। सम्पूर्ण चर और अचर संसार पंचब्रह्मात्मक हैं। तत्त्व के ज्ञाता मुनियों ने इसको शिव का प्रसाद कहा है। विश्व में पच्चीस तत्त्वों के रूप में केवल शिव हैं और कोई नहीं; वह यह अनुभव करता है, कि शिव ही पंच ब्रह्मात्मक रूप में व्याप्त हैं। अतः जो लोग कल्याण की खोज करते हैं, उनको पच्चीस तत्त्वों के आत्मा और पंच ब्रह्मात्म शिव के विषय में सदा प्रयत्नपूर्वक चिन्तन करना चाहिए॥३०-३३॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में पंचब्रह्म कथन

नामक चौदहवाँ अध्याय समाप्त॥१४॥

—ॐ शङ्करे शङ्करे—

## पंचदशोऽध्यायः शिवमाहात्म्यम्

सनत्कुमार उवाच

भूयोऽपि शिवमाहात्म्यं समाचक्ष्व महामते। सर्वज्ञो ह्यसि भूतानामधिनाथ महागुण॥१॥  
शैलादिरुवाच

शिवमाहात्म्यमेकाग्रः शृणु वक्ष्यामि ते मुने। बहुभिर्बहुधा शब्दैः कीर्तिं मुनिसत्तमैः॥२॥  
सदसद्वूपमित्याहुः सदसत्पतिरित्यपि। तं शिवं मुनयः केचित्प्रवदंति च सूरयः॥३॥  
भूतभावविकारेण द्वितीयेन स उच्यते। व्यक्तं तेन विहीनत्वादव्यक्तमसदित्यपि॥४॥  
उभे ते शिवरूपे हि शिवादन्यं न विद्यते। तयोः पतित्वाच्च शिवः सदसत्पतिरुच्यते॥५॥  
क्षराक्षरात्मकं प्राहुः क्षराक्षरपरं तथा। शिवं महेश्वरं केचिन्मुनयस्तत्त्वचिंतकाः॥६॥  
उक्तमक्षरमव्यक्तं व्यक्तं क्षरमुदाहृतम्। रूपे ते शंकरस्यैव तस्मान्न पर उच्यते॥७॥  
तयोः परः शिवः शांतः क्षराक्षरपरो बुधैः। उच्यते परमार्थेन महादेवो महेश्वरः॥८॥  
समस्तव्यक्तरूपं तु ततः स्मृत्वा स मुच्यते। समष्टिव्यष्टिरूपं तु समष्टिव्यष्टिकारणम्॥९॥

## पन्द्रहवाँ अध्याय शिव का माहात्म्य

सनत्कुमार बोले

हे शैलादि! तुम महान् गुणी और सर्वज्ञ हो, तुम मुझसे शिवजी के माहात्म्य को फिर कहो॥१॥

शैलादि बोले

हे मुनि! मैं तुमसे शिवजी के माहात्म्य को कहूँगा जिस माहात्म्य को मुझसे पहले भी अनेक उत्तम मुनियों ने विभिन्न प्रकार से वर्णन किया है। तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो॥२॥ कुछ बुद्धिमान ऋषि शिव को “सत्” और “असत्” और उनको सत्-असत् पति भी कहते हैं॥३॥ भूत भाव के विकार से उनको व्यक्त कहा जाता है, और भूत भाव के हीन होने से अव्यक्त और असत् भी कहा जाता है॥४॥

इस प्रकार शिव के व्यक्त और अव्यक्त दोनों रूप हैं। शिव के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। चूंकि सत् और असत् दोनों के शिव स्वामी हैं, इसीलिए ये सत् असत् पति कहलाते हैं॥५॥ कुछ तत्त्वचिंतक मुनि लोग शिव को क्षर और अक्षर कहते हैं। उनको क्षर और अक्षर से परे (बाहर) कहते हैं॥६॥ अव्यक्त को अक्षर (अनश्वर) और व्यक्त को क्षर (नश्वर) कहते हैं। ये दोनों शिव के ही रूप हैं। उनसे आगे कोई नहीं है॥७॥ शिव क्षर और अक्षर दोनों से बड़े (बृहत्तर) हैं। इसलिए वे महादेव महेश्वर हैं। विद्वानों द्वारा वे क्षर अक्षर पर कहे जाते हैं॥८॥ समस्त व्यक्त रूप शिव का समष्टि और व्यष्टि दो रूप हैं। शिव समष्टि और व्यष्टि के कारण भी

वदंति केचिदाचार्याः शिवं परमकारणम्। समष्टिं विदुरव्यक्तं व्यष्टिं व्यक्तं मुनीश्वराः॥१०॥  
रूपे ते गदिते शंभोर्नास्त्यन्यद्वस्तुसंभवम्। तयोः कारणभावेन शिवो हि परमेश्वरः॥११॥  
उच्यते योगशास्त्रज्ञैः समष्टिव्यष्टिकारणम्। क्षेत्रक्षेत्रज्ञरूपी च शिवः कैश्चिदुदाहृतः॥१२॥  
परमात्मा परं ज्योति भगवान्परमेश्वरः। चतुर्विशतितत्वानि क्षेत्रशब्देन सूरयः॥१३॥  
प्राहुः क्षेत्रज्ञशब्देन भोक्तारं पुरुषं तथा। क्षेत्रक्षेत्रविदावेते रूपे तस्य स्वयंभुवः॥१४॥  
न किंचिच्च शिवादन्यदिति प्राहुर्मनीषिणः। अपरब्रह्मरूपं तं परब्रह्मात्मकं शिवम्॥१५॥  
केचिदाहुर्महादेवमनादिनिधनं प्रभुम्। भूतेंद्रियांतःकरणप्रधानविषयात्मकम्॥१६॥  
अपरं ब्रह्म निर्दिष्टं परं ब्रह्म चिदात्मकम्। ब्रह्मणी ते महेशस्य शिवस्यास्य स्वयंभुवः॥१७॥  
शंकरस्य परस्यैव शिवादन्यन्न विद्यते। विद्याविद्यास्वरूपी च शंकरः कैश्चिदुच्यते॥१८॥  
धाता विधाता लोकानामादिदेवो महेश्वरः। विद्येति च तमेवाहुरविद्येति मुनीश्वरा॥१९॥  
प्रपञ्चजातमखिलं ते स्वरूपे स्वयंभुवः। भ्रांतिविद्या परं चेति शिवरूपमनुत्तमम्॥२०॥  
अवापुर्मुनयो योगात्केचिदागमवेदिनः। अर्थेषु बहुरूपेषु विज्ञानं भ्रांतिरुच्यते॥२१॥  
आत्माकारेण संवित्तिर्बुधौविद्येति कीर्त्यते। विकल्परहितं तत्त्वं परमित्यभिधीयते॥२२॥  
तृतीयरूपमीशस्य नान्यतिंक्चन सर्वतः। व्यक्ताव्यक्तज्ञरूपीति शिवः कैश्चिन्निगद्यते॥२३॥

हैं॥१९॥ मुनीश्वर लोग समष्टि को अव्यक्त व्यष्टि को व्यक्त कहते हैं। कुछ आचार्य लोग शिव को परम कारण भी कहते हैं॥२०॥ शिव के ये दो रूप कहे गये हैं। उन दोनों का उद्गम किसी दूसरे स्रोत से सम्भव नहीं है। उन दोनों के समष्टि और व्यष्टि कारण भाव होने से शिव परमेश्वर रूप में कहे जाते हैं॥२१॥ शिव समष्टि और व्यष्टि दोनों के कारण हैं, ऐसा योग दर्शन के ज्ञाताओं द्वारा कहा गया है। कुछ मुनियों ने शिव को क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ (शरीर और आत्मा) के रूप में भी कहा है॥२२॥ शिव, परमेश्वर, महत्तम आत्मा, और महत्तम ज्योति हैं। विद्वान लोग कहते हैं कि शरीर चौबीस तत्त्वों से बना है और क्षेत्रज्ञ शब्द के द्वारा भोक्ता को पुरुष कहते हैं। उस स्वयं शिव के क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ ये दोनों रूप हैं॥२३-२४॥ शिव के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ऐसा विद्वान लोग कहते हैं। शिव ब्रह्म परब्रह्म महादेव अनादि हैं। भूत, सांसारिक पदार्थ, ज्ञानेन्द्रिय और आन्तरिक इन्द्रिय अन्तःकरण (इच्छा आदि) को प्रधान आदि कहते हैं। यह अपर ब्रह्म का रूप है, शब्द ब्रह्मादि रूप हैं—कुछ लोग कहते हैं कि शिव परमब्रह्म हैं। परमब्रह्म चित् रूप हैं। वस्तुतः महेश, स्वयं शिव ब्रह्म हैं। शंकर के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। कुछ विद्वान कहते हैं कि शंकर के विद्या और अविद्या दो रूप हैं॥२५-२८॥

आदि देव महेश्वर जगत के उत्पन्नकर्ता और पालनकर्ता हैं। उन्हीं शिव को मुनीश्वर लोग विद्या और अविद्या भी कहते हैं॥२९॥ उस अज शिव को सम्पूर्ण जगत इन दोनों कारणों विद्या और अविद्या से बना हुआ है। विश्व का उत्तम रूप भ्रान्ति विद्या और प्राण है। पवित्र वेदों के ज्ञाता विज्ञान योग द्वारा शिव के उत्तम रूप को प्राप्त करते हैं। सब रूपों में विज्ञान को भ्रान्ति कहते हैं। अविद्या के रूप में संवित्ति (संज्ञाबोध) को विद्वान लोग विद्या कहते हैं। विकल्प रहित (असंदिग्ध) तत्त्व को 'परम' कहते हैं। वह ईश का तीसरा रूप है।

विधाता सर्वलोकानां धाता च परमेश्वरः। त्रयोविंशतितत्त्वानि व्यक्तशब्देन सूरयः॥२४॥  
 वदंत्यव्यक्तशब्देन प्रकृतिं च परां तथा। कथयन्ति ज्ञशब्देन पुरुषं गुणभोगिनम्॥२५॥  
 तत्रयं शांकरं रूपं नान्यत्किंचिदशांकरम्॥२६॥  
**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचदशोऽध्यायः॥१५॥**

इन तीनों रूपों के परे (अतिरिक्त) कुछ भी नहीं है। कुछ विद्वान शिव जी को व्यक्ताव्यक्तज्ञ (व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ) रूप कहते हैं। परमेश्वर सब लोगों का रचयिता और पालनकर्ता है। विद्वान लोग व्यक्त शब्द से तीनों तत्त्व सोचते हैं और अव्यक्त शब्द से परा प्रकृति को मानते हैं। गुण के भोक्ता पुरुष का ज्ञ शब्द से ग्रहण करते हैं। शिव के ये तीन रूप व्यक्त, अव्यक्त (प्रकृति) और ज्ञ हैं। इस प्रकार शिव के परे कुछ नहीं है॥२०-२६॥

**श्रीलिङ्गमहापुराण के उत्तर भाग में शिव का माहात्म्य  
नामक पञ्चहवाँ अध्याय समाप्त॥१५॥**



## षोडशोऽध्यायः शिवरूपरूपाणि

सनत्कुमार उवाच

पुनरेव महाबुद्धे श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः। बहुभिर्बहुधा शब्दैः शब्दितानि मुनीश्वरैः॥१॥  
शैलादिरुवाच

पुनः पुनः प्रवक्ष्यामि शिवरूपाणि ते मुने।

बहुभिर्बहुधा शब्दैः शब्दितानि मुनीश्वरैः॥२॥

क्षेत्रज्ञः प्रकृतिव्यक्तं कालात्मेति मुनीश्वरैः। उच्यते कैश्चिदाचार्यैरागमार्णवपारगैः॥३॥  
क्षेत्रज्ञं पुरुषं प्राहुः प्रधानं प्रकृतिं बुधाः। विकारजातं निःशेषं प्रकृतेव्यक्तमित्यपि॥४॥  
प्रधानव्यक्तयोः कालः परिणामैककारणम्। तच्चतुष्टयमीशस्य रूपाणां हि चतुष्टयम्॥५॥  
हिरण्यगर्भं पुरुषं प्रधानं व्यक्तरूपिणम्। कथयन्ति शिवं केचिदाचार्याः परमेश्वरम्॥६॥  
हिरण्यगर्भः कर्तास्य भोक्ता विश्वस्य पूरुषः। विकारजातं व्यक्ताख्यं प्रधानं कारणं परम्॥७॥  
तेषां चतुष्टयं बुद्धेः शिवरूपचतुष्टयम्। प्रोच्यते शंकरादन्यदस्ति वस्तु न किंचन॥८॥  
पिंडजातिस्वरूपी तु कथ्यते कैश्चिदीश्वरः। चराचरशरीराणि पिंडाख्यान्यखिलान्यपि॥९॥

## सोलहवाँ अध्याय शिव के रूप

सनत्कुमार बोले

हे महान्, बुद्धिमान् शैलादि! मुनीश्वरों द्वारा अनेक प्रकार से वर्णित शिव के रूप को सत्य रूप में पुनः सुनना चाहता है॥१॥

शैलादि बोले

महर्षियों द्वारा विभिन्न शब्दों द्वारा वर्णित शिव के रूप को पुनः-पुनः कहना चाहता है॥२॥ आगमरूपी समुद्र के पारगामी विद्वानों द्वारा शिव को क्षेत्रज्ञ, प्रकृति, व्यक्त, और कालात्मा (काल की आत्मा) कहा गया है॥३॥ वे विद्वान् पुरुष को क्षेत्रज्ञ शब्द से प्रधान को प्रकृति शब्द से पुकारते हैं। प्रकृति के सम्पूर्ण विकार से उत्पन्न को व्यक्त काल प्रधान और व्यक्त दोनों का मुख्य कारण है। ये चारों के सेट से ईश (शिव) के चार रूप बने हैं॥४-५॥ कुछ आचार्य परमेश्वर शिव को हिरण्यगर्भ, पुरुष, प्रधान और व्यक्त कहते हैं॥६॥ हिरण्यगर्भ जगत का रचयिता (स्वष्टा) है। प्रणव भोक्ता है। प्रधान का विकार व्यक्त है और प्रधान महत्तम कारण है॥७॥ इन चारों को शिव रूप जानो। शिव के परे कोई भी वस्तु नहीं है॥८॥ कुछ विद्वान् शिव को पिण्ड और जाति के रूप में कहते हैं। चर और अचर के भौतिक शरीर पिण्ड हैं। समस्त सामान्य और असामान्य जाति है। वे पिण्ड और

सामान्यानि समस्तानि महासामान्यमेव च। कथंते जातिशब्देन तानि रूपाणि धीमतः॥१०॥  
 विराट् हिरण्यगर्भात्मा कैश्चिदीशो निगद्यते। हिरण्यगर्भो लोकानां हेतुलोकात्मको विराट्॥११॥  
 सूत्राव्याकृतरूपं तं शिवं शंसन्ति केचन। अव्याकृतं प्रधानं हि तद्वूपं परमेष्ठिनः॥१२॥  
 लोका येनैव तिष्ठन्ति सूत्रे मणिगणा इव। तत्सूत्रमिति विज्ञेयं रूपमद्भुतविक्रमम्॥१३॥  
 अंतर्यामी परः कैश्चित्कैश्चिदीशः प्रकीर्त्यते। स्वयंज्योतिः स्वयंवेद्यः शिवः शंभुमहेश्वरः॥१४॥  
 सर्वेषामेव भूतानामंतर्यामी शिवः स्मृतः। सर्वेषामेव भूतानां परत्वात्पर उच्यते॥१५॥  
 परमात्मा शिवः शंभुः शंकरः परमेश्वरः। प्राज्ञतैजसविश्वाख्यं तस्य रूपत्रयं विदुः॥१६॥  
 सुषुप्तिस्वप्नजाग्रंतमवस्थात्रयमेव तत्। विराट् हिरण्यगर्भाख्यमव्याकृतपदाह्वयम्॥१७॥  
 तुरीयस्य शिवस्यास्य अवस्थात्रयगामिनः। हिरण्यगर्भः पुरुषः काल इत्येव कीर्तितः॥१८॥  
 तिस्त्रोऽवस्था जगत्सृष्टिस्थितिसंहारहेतवः। भवविष्णुविरिंचाख्यमवस्थात्रयमीशितुः॥१९॥  
 आराध्य भत्त्या मुक्तिं च प्राप्नुवन्ति शरीरिणः। कर्ता क्रिया च कार्यं च करणं चेति सूरिभिः॥२०॥  
 शंभोश्वत्वारि रूपाणि कीर्त्यते परमेष्ठिनः। प्रमाता च प्रमाणं च प्रमेयं प्रमितिस्तथा॥२१॥  
 चत्वार्येतानि रूपाणि शिवस्यैव न संशयः। ईश्वराव्याकृतप्राणविराट् भूतेन्द्रियात्मकम्॥२२॥  
 शिवस्यैव विकारोऽयं समुद्रस्यैव वीचयः। ईश्वरं जगतामाहुर्निमित्तं कारणं तथा॥२३॥

जाति भी शिव के रूप हैं। १९-१०।। कुछ विद्वान शिव को विराट् हिरण्यगर्भ रूप में कहते हैं। हिरण्यगर्भ जगत का हेतु (कारण) है और जगत (लोक) की आत्मा है। लोक के साथ मय है। कुछ विद्वान शिव को सूत्र और अव्यक्त कहते हैं। वास्तव में अव्यक्त प्रधान है और परमेष्ठी का रूप है जिससे जैसे एक सूत्र में मणियाँ गुँथी रहती है उसी प्रकार परमेष्ठी रूप सूत्र में सब लोक गुँथे हुए (नत्यी) हैं। शिव के उस अद्भूत विषम रूप को सूत्र समझना चाहिए। शिव को कोई अन्तर्यामी और कोई ईश कहते हैं। शिव स्वयं वेद्य और स्वयं ज्योति परमेश्वर है। १९-१३।। शिव सब प्राणियों के अन्तर्यामी हैं, सब के भीतर विराजमान हैं। वह प्राणियों के यंता हैं। अतः वह सब प्राणियों के ऊपर (पर) हैं। अतः उनको परात्पर कहा जाता है। वे परमात्मा, शिव, शंकर और परमेश्वर हैं। उनको विद्वान लोग प्राज्ञ, तैजस् और विश्वरूप रूपत्रय (तिहरे रूप) में मानते हैं। १४-१६।। प्रज्ञान आदि में सुषुप्ति, स्वप्न और जाग्रत ये तीन अवस्थाएँ होती हैं। विराट् और हिरण्यगर्भ ये अव्याकृत पद से वाच्य हैं।

ये तीनों अवस्थाओं से गुजरते हुये शिव की अवस्था बतलाते हैं। हिरण्यगर्भ और विराट् के काल के तौर पर वर्णित है। उक्त तीनों अवस्थायें जगत की सृष्टि और संहार की कारण हैं। शिव की इन अवस्थाओं को जो विष्णु और बिरिच पद वाच्य है, भव कहते हैं। ये शरीरधारी लोग भक्तिपूर्वक उनकी आराधना करके मुक्ति प्राप्त करते हैं। विद्वान लोग परमेश्वर शिव के कर्ता, क्रिया, कर्म और कारण ये चार रूप कहते हैं। १७-२०।। परमेश्वर शिव के चार अन्य रूप प्रमाता, प्राण, प्रमेय और प्रमिति होते हैं। २१-२२(अ)।। समुद्र की लहरों की तरह चार अन्य रूप भी शिव के होते हैं। वे रूप हैं—ईश्वर, अव्याकृत, प्राण और भूत और ज्ञानेन्द्रियाँ। ये शिव के विकार हैं। इस जगत का कारण है। वेदज्ञों द्वारा स्वयं प्रधान, अव्याकृत कहा गया है। हिरण्यगर्भ को प्राण नाम दिया गया है और विराट् लोकात्मा है। लोकों से एकाकार है।

अव्याकृतं प्रधानं हि तदुक्तं वेदवादिभिः। हिरण्यगर्भः प्राणाख्यो विराट् लोकात्मकः स्मृतः॥२४॥  
महाभूतानि भूतानि कार्याणि इन्द्रियाणि च। शिवस्यैतानि रूपाणि शंसंति मुनिसत्तमाः॥२५॥  
परमात्मा शिवादन्यो नास्तीति कवयो विदुः। शिवजातानि तत्त्वानि पंचविंशत्पदार्थेभ्यः शिवतत्त्वं परं विदुः॥२६॥  
उत्कानि न तदन्यानि सलिलादूर्मिवृद्वत्। पंचविंशत्पदार्थेभ्यः शिवतत्त्वं परं विदुः॥२७॥  
तानि तस्मादनन्यानि सुवर्णकटकादिवत्। सदाशिवेशवराद्यानि तत्त्वानि शिवतत्त्वतः॥२८॥

जातानि न तदन्यानि मृद्रव्यं कुंभभेदवत्।

माया विद्या क्रिया शक्तिर्ज्ञानशक्तिः क्रियामयी॥२९॥

जाताः शिवान्न संदेहः किरणा इव सूर्यतः। सर्वात्मकं शिवं देवं सर्वाश्रयविधायिनम्॥३०॥

भजस्व सर्वभावेन श्रेयश्वेत्प्राप्नुभिच्छसि॥३१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षोडशोऽध्यायः॥१६॥**

भूत शब्द महाभूतों को बताता है ज्ञानेन्द्रियाँ उसके प्रभाव हैं। उस पर मुनीश्वर लोग इसको शिव का रूप बताते हैं॥२२(ब)-२५॥ बुद्धिमान लोग कहते हैं कि सर्वोच्च आत्मा शिव से अलग दूसरा कोई नहीं है। चौबीस सिद्धान्त (तत्त्व) शिव द्वारा ही उद्भूत हुए हैं। वे शिव से अलग नहीं हैं। जैसे कि तरंगों की शृंखलाएँ जलों से अलग नहीं हैं। बुद्धिमान लोग जानते हैं कि शिव का तत्त्व पच्चीस श्रेणियों से महत्तर है। अतः ये सिद्धान्त (तत्त्व) भी उसी तरह शिव से पृथक् नहीं हैं। जैसे कि हाथ का कंगन स्वर्ण से पृथक् नहीं है।

सब तत्त्व सदाशिव, ईश्वर आदि शिव तत्त्व से उत्पन्न हुए हैं। इसलिए ये उससे पृथक् नहीं हैं। जैसे कि विभिन्न प्रकार के घट गीली मिट्ठी से पृथक् नहीं हैं जिससे ये बनाए जाते हैं।

माया, अविद्या, क्रियाशक्ति, ज्ञानशक्ति और क्रियामयी ये पाँचों शिव से असंदिग्ध रूप में पैदा हुईं जो कि सब की आत्मा हैं और एक-दूसरे को आश्रय प्रदान करती हैं, सहारा देती हैं॥२६-३१॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव के रूप

नामक सोलहवाँ अध्याय समाप्त॥१६॥

—\*\*\*—

## सप्तदशोऽध्यायः शिवर्च्य महता

सनत्कुमार उवाच

भूयो देवगणश्रेष्ठ शिवमाहात्म्यमुत्तमम्। शृण्वतो नास्ति मे तृप्तिस्त्वद्वाक्यामृतपानतः॥१॥  
कथं शरीरी भगवान् कस्माद्गुद्रः प्रतापवान्। सर्वात्मा च कथं शम्भुः कथं पाशुपतं ब्रतम्॥२॥  
कथं वा देवमुख्यैश्च श्रुतो दृष्टश्च शंकरः।

शैलादिरुवाच

अव्यक्तादभवत्स्थाणुः शिवः परमकारणम्॥३॥

स सर्वकारणोपेत ऋषिर्विश्वाधिकः प्रभुः। देवानां प्रथमं देवं जायमानं मुखाम्बुजात्॥४॥  
ददर्श चाग्रे ब्रह्माणं चाज्ञया तमवैक्षता। दृष्टो रुद्रेण देवेशः ससर्ज सकलं च सः॥५॥  
वर्णाश्रिमव्यवस्थाश्च स्थापयामास वै विराट्। सोमं ससर्ज यज्ञार्थं सोमादिदमजायत॥६॥  
चरुश्च वह्निर्यज्ञश्च वज्रपाणिः शचीपतिः। विष्णुर्नारायणः श्रीमान् सर्वं सोममयं जगत्॥७॥  
रुद्राध्यायेन ते देवा रुद्रं तुष्टुवुरीश्वरम्। प्रसन्नवदनस्तस्थौ देवानां मध्यतः प्रभुः॥८॥

## सतरहवाँ अध्याय शिव की महता

सनत्कुमार बोले

हे गणों में श्रेष्ठ शैलादि! आप के अमृत तुल्य मधुर वचन सुनकर मुझको तृप्ति नहीं हुई। अतः उत्तम शिव के माहात्म्य को पुनः आगे कहो।

शिव जी कैसे शरीरधारी हुये? कैसे रुद्र प्रतापवान और शक्ति सम्पन्न हैं? शिव कैसे सब की आत्मा है, पवित्र पाशुपत ब्रत किस प्रकार किया जाय; प्रमुख देवताओं द्वारा कैसे देखे गये? वे शिव कैसे प्रसन्न हुये?

शैलादि बोले

स्थाणु, शिव जो महान आत्मा हैं वे अव्यक्त से उत्पन्न हुये॥१-३॥ वह विश्व के आदि ऋषि में सब कारणों से युक्त हैं। उनके मुख कमल से पूर्व में प्रधान देव ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई उनको उन्होंने देखा। उन देवों के स्वामी, ब्रह्मा को देखने के बाद उनकी आज्ञा से उन्होंने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की। विराट् ने वर्णाश्रिम व्यवस्था को स्थापित किया। यज्ञ के लिए उन्होंने सोम रस को उत्पन्न किया। चरु, अग्नि, यज्ञ हाथ में वज्रधारी शचीपति इन्द्र, विष्णु और नारायण और स्वर्ग और सम्पूर्ण सोममय जगत् ये सब सोम रस से उत्पन्न हुये॥४-७॥ देवताओं ने रुद्राध्याय द्वारा रुद्र की (रुद्र देवता की) स्तुति की। तब प्रभु रुद्र (शिव) प्रसन्न मुख हो देवताओं के मध्य में विराजमान हुये। तब महेश्वर शिव जी ने सब देवताओं के अज्ञान को दूर कर बुद्धि को जागृत किया।

अपहृत्य च विज्ञानमेषामेव महेश्वरः। देवा ह्यपृच्छंसं देवं को भवानिति शंकरम्॥१॥  
अब्रवीद्गवान् रुद्रो ह्यहमेकः पुरातनः। आसं प्रथम एवाहं वर्तामि च सुरोत्तमाः॥१०॥  
भविष्यामि च लोकेऽस्मिन्मत्तो नान्यः कुतश्चन।

व्यतिरिक्तं न मत्तोऽस्ति नान्यत्किंचित्सुरोत्तमाः॥११॥

नित्योऽनित्योऽहमनद्यो ब्रह्माहं ब्रह्मणस्पतिः। दिशश्च विदिशश्चाहं प्रकृतिश्च पुमानहम्॥१२॥  
त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप् च च्छंदोहं तन्मयः शिवः। सत्योहं सर्वगः शांतस्त्रेताग्निर्गौरवं गुरुः॥१३॥  
गौरहं गह्यरश्चाहं नित्यं गहनगोचरः। ज्येष्ठोहं सर्वतत्त्वानां वरिष्ठोहमपांपतिः॥१४॥  
आपोहं भगवानीशस्तेजोहं वेदिरप्यहम्। ऋग्वेदोहं यजुर्वेदः सामवेदोहमात्मभूः॥१५॥  
अथर्वणोहं मंत्रोहं तथा चांगिरसां वरः। इतिहासपुराणानि कल्पोहं कल्पनाप्यहम्॥१६॥

अक्षरं च क्षरं चाहं क्षांतिः शांतिरहं क्षमा।

गुह्योहं सर्ववेदेषु वरेण्योहमजोप्यहम्॥१६॥

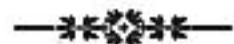
अक्षरं च क्षरं चाहं क्षांतिः शांतिरहं क्षमा। गुह्योहं सर्ववेदेषु वरेण्योहमजोप्यहम्॥१७॥  
पुष्करं च पवित्रं च मध्यं चाहं ततः परम्। बहिश्चाहं तथा चांतः पुरस्तादहमव्ययः॥१८॥  
ज्योतिश्चाहं तमश्चाहं ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरः। बुद्धिश्चामहंकारस्तन्मात्राणींद्रियाणि च॥१९॥  
एवं सर्वं च मामेव यो वेद सुरसत्तमाः। स एव सर्ववित्सर्वं सर्वात्मा परमेश्वरः॥२०॥  
गां गोभिब्रह्मणान्सर्वान्ब्राह्मण्येन हवींषि च। आयुषायुस्तथा सत्यं सत्येन सुरसत्तमाः॥२१॥

तब देवताओं ने भगवान शिव से पूछा। आप कौन हैं? ॥८-९॥ रुद्र देव ने कहा, “हे उत्तम देवताओं! मैं एक आदि पुरातन पहिले भी था और अब भी हूँ। मैं भविष्य में भी रहूँगा। मुझसे भिन्न (अलग) कुछ भी नहीं है। ॥१०-११॥ मैं नित्य हूँ अनित्य हूँ। मैं अनध (पाप रहित) ब्रह्म हूँ और ब्रह्म का स्वामी भी हूँ। मैं दिशा हूँ। विदिशा (दिशाओं के कोण) हूँ। मैं प्रकृति हूँ। मैं पुरुष हूँ। ॥१२॥ छन्द शास्त्र का अनुष्टुप्, जगती और अनुष्टुप् हूँ। छन्द हूँ। मैं सर्व व्यापक सत्य हूँ। त्रेताग्नि (त्रयाग्नि) हूँ। मैं गरिमा हूँ, मैं गुरु हूँ। ॥१३॥ मैं गौ हूँ, मैं गुफा हूँ, मैं गहन गोचर हूँ। मैं सब तत्त्वों में ज्येष्ठ (सब से बड़ा) हूँ और उत्तम हूँ। मैं जल का स्वामी हूँ। ॥१४॥ मैं जल हूँ, भगवान ईश हूँ। मैं तेज अग्नि हूँ। मैं यज्ञ की वेदी भी हूँ। मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद हूँ। मैं जल हूँ, शान्ति और क्षमा हूँ। सब वेदों में गुह्य (गुप्त) हूँ। उत्तम (श्रेष्ठ) और अज हूँ। ॥१७॥ मैं पवित्र पुष्कर क्षान्ति, शान्ति और क्षमा हूँ। मैं बाहर और भीतर हूँ। सामने मैं अपरिवर्तनीय हूँ। ॥१८॥ मैं ज्योति हूँ। मैं मध्य हूँ और उससे परे भी हूँ। मैं बाहर और भीतर हूँ। सामने मैं अपरिवर्तनीय हूँ। ॥१९॥ हे श्रेष्ठ मैं अन्धकार हूँ। मैं ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर हूँ। मैं बुद्धि, अहंकार, तन्मात्राएं और ज्ञानेन्द्रिय हूँ। ॥२०॥ हे श्रेष्ठ देवतागण! जो मुझको सब कुछ समझता है वही सर्वविद है। वह ब्रह्मविद है। वह सब की आत्मा और परमेश्वर है। ॥२१॥ हे श्रेष्ठ देवगण! मैं अपने तेज से गायों द्वारा गायों को, ब्राह्मणीय तेज से ब्राह्मणों को, आयु को

धर्मं धर्मेण सर्वाश्च तर्पयामि स्वतेजसा। इत्यादौ भगवानुकूला तत्रैवांतरधीयत॥२२॥  
 नापश्यन्त ततो देवं रुद्रं परमकारणम्। ते देवाः परमात्मानं रुद्रं ध्यायन्ति शंकरम्॥२३॥  
 सनारायणका देवाः सेंद्राश्च मुनयस्तथा। तथोर्ध्वबाहवो देवा रुद्रं स्तुन्वन्ति शंकरम्॥२४॥  
**इति श्रीलिंगमहापुराणे उत्तरभागे सप्तदशोऽध्यायः॥१७॥**

आयुष द्वारा तथा सत्य से तथा धर्म से धर्म को इस प्रकार अपने तेज से सब को तृष्ण करता हूँ।” ऐसा कहकर भगवान रुद्र वहीं पर स्वयं अन्तर्ध्यान (अलक्षित अदृश्य) हो गये॥२१॥ देवगण परम कारण भगवान रुद्र को न देखने पर नारायण और इन्द्र सहित सब देवगण तथा मुनिगण ध्यान करने लगे। अपने हाथों को ऊपर की ओर उठा भगवान शंकर की स्तुति करने लगे॥२२-२४॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की महत्ता  
 नामक सतरहबाँ अध्याय समाप्त॥१७॥



## अष्टादशोऽध्यायः पवित्रपाशुपतव्रतम्

देवा ऊचः

य एष भगवान् रुद्रो ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।

स्कंदश्चापि तथा चेंद्रो भुवनानि चतुर्दशा। अश्विनौ ग्रहताराश्च नक्षत्राणि च खं दिशः॥१॥  
भूतानि च तथा सूर्यः सोमश्चाष्टौ ग्रहास्तथा। प्राणः कालो यमो मृत्युरमृतः परमेश्वरः॥२॥  
भूतं भव्यं भविष्यच्च वर्तमानं महेश्वरः। विश्वं कृत्स्नं जगत्सर्वं सत्यं तस्मै नमोनमः॥३॥  
त्वमादौ च तथा भूतो भूर्भुवः स्वस्तथैव च। अंते त्वं विश्वरूपोऽसि शीर्षं तु जगतः सदा॥४॥  
ब्रह्मैकस्त्वं द्वित्रिधार्थमधश्च त्वं सुरेश्वरः। शांतिश्च त्वं तथा पुष्टिस्तुष्टिशाप्यहुतं हुतम्॥५॥

विश्वं चैव तथाविश्वं दत्तं वादत्तमीश्वरम्॥

कृतं चाप्यकृतं देवं परमप्यपरं ध्रुवम्। परायणं सतां चैव ह्यसतामपि शंकरम्॥६॥

अपामसोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान्।

कि नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य॥७॥

एतज्जगद्वितं दिव्यमक्षरं सूक्ष्ममव्ययम्॥८॥

अठारहवाँ अध्याय

## पवित्र पाशुपत व्रत

देवगण बोले

भगवान रुद्र ही अकेले ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं। वह स्कन्ध हैं, वह इन्द्र हैं, वह चौदहों लोक, अश्विनी, ग्रह और तारा, नक्षत्र, आकाश, दशों दिशाएँ, भूत गण, सूर्य, चन्द्रमा, और आठों ग्रह हैं। वह प्राण, काल और मृत्यु हैं। वे भूत वर्तमान और भविष्य का निर्माण करते हैं। वह विश्व और सत्य हैं, उनको नमस्कार है। ॥१-३॥ हे भगवान! तुम विश्व के आदि, तुम भूर्भुवः और स्वः हो। अन्त में तुम विश्वरूप हो और जगत के सदा शीर्ष स्थान हो। ॥४॥ तुम पूर्ण ब्रह्म हो, तुम दो रूपों में हो और तीन रूपों में हो। तुम नीचे हो, तुम देवताओं के स्वामी हो, तुम शान्ति पुष्टि और तुष्टि हो, अग्नि में किये गये होम में जो हवन किया गया है और नहीं किया गया है वह भी तुम हो, तुम दृश्य हो और अदृश्य हो। तुम दत्त भी हो अदत्त भी हो, तुम ईश्वर हो तुम जो कृत है वह भी हो और अकृत भी हो। तुम निश्चित रूप से पर भी हो, अपर भी हो अर्थात् देवों से महान् और छोटे भी हो। तुम अच्छों और बुरों के अन्तिम लक्ष्य हो। तुम शंकर हो। ॥५-६॥ हम लोग सोम रस पीते हैं और अमर हो सकते हैं। हम लोग ज्योति तक पहुँच सकते हैं। देवताओं तक नहीं पहुँच सकते। वास्तव में शत्रु हमारा क्या कर सकेंगे? क्या मृत्यु अमरता का पर्याय है। शिव का यह रूप विश्व के लिए हितकर है। यह दिव्य अनश्वर

प्राजापत्यं पवित्रं च सौम्यमग्राहामव्ययम्। अग्राहणापि वा ग्राहां वायव्येन समीरणः॥१॥  
सौम्येन सौम्यं ग्रसति तेजसा स्वेन लीलया। तस्मै नमोऽपसंहर्त्रे महाग्रासाय शूलिने॥१०॥

हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणे प्रतिष्ठिताः।

हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः॥११॥

शिरश्चोत्तरतश्चैव पादौ दक्षिणतस्था। यो वै चोत्तरतः साक्षात्स ओंकारः सनातनः॥१२॥  
ओंकारो यः स एवेह प्रणवो व्याप्य तिष्ठति। अनंतस्तारसूक्ष्मं च शुक्लं वैद्युतमेव च॥१३॥  
परं ब्रह्म स ईशान एको रुद्रः स एव च। भवान्महेश्वरः साक्षान्महादेवो न संशयः॥१४॥  
ऊर्ध्वमुन्नामयत्येव स ओंकारः प्रकीर्तिः। प्राणानवति यस्तस्मात् प्रणवः परिकीर्तिः॥१५॥  
सर्वं व्याप्नोति यस्तस्मात्सर्वव्यापी सनातनः। ब्रह्मा हरिश्च भगवानाद्यांतं नोपालब्धवान्॥१६॥  
तथान्ये च ततोऽनन्तो रुद्रः परमकारणम्। यस्तारयति संसारात्तार इत्यभिधीयते॥१७॥  
सूक्ष्मो भूत्वा शरीराणि सर्वदा ह्यधितिष्ठति। तस्मात्सूक्ष्मः समाख्यातो भगवान्नीललोहितः॥१८॥  
नीलश्च लोहितश्चैव प्रधानपुरुषान्वयात्। स्कंदतेऽस्य यतः शुक्रं तथा शुक्रमपैति च॥१९॥  
विद्योतयति यस्तस्माद्वैद्युतः परिगीयते। बृहत्त्वादबृंहणत्वाच्च बृहते च परापरे॥२०॥  
तस्माद्बृंहति यस्माद्ब्रह्म परं ब्रह्मेतिकीर्तितम्। अद्वितीयोऽथ भगवांस्तुरीयः परमेश्वरः॥२१॥  
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशां चक्षुरीश्वरम्। ईशानमिंद्रसूरयः सर्वेषामपि सर्वदा॥२२॥

सूक्ष्म और अपरिवर्तनीय अव्यय है। ॥७-८॥ यह पवित्र है। यह सौम्य है। यह ग्राह नहीं है जैसे कि वायु किसी वस्तु के पकड़ के बाहर है। सौम्य के द्वारा सौम्य को अपनी लीला से पकड़ लेता है। उस महान् ग्रहण करने वाले और अपसंहार करने वाले रुद्र को नमस्कार है। ॥९-१०॥ देवता गण हृदय में स्थित हैं, वे प्राण में प्रतिष्ठित हैं। तुम तीन मात्रा के रूप में हृदय में सदा विराजमान हो। तुम उनसे परे हो, तुम्हारे सिर उत्तर की ओर हैं और पैर दक्षिण की ओर हैं। तुम उत्तर से साक्षात् संलग्न हो। तुम अन्तस्थ ऊँकार हो। ॥११-१२॥ जो ऊँकार है वह प्रणव है, वह प्रत्येक वस्तु में विराजमान है। अनन्त (तार) सूक्ष्म और शुक्ल वैद्युत (प्रकाश) परब्रह्म है, वही एक ईशान वही रुद्र है। आप साक्षात् महेश्वर और महादेव हैं। इसमें सन्देह नहीं। ॥१३-१४॥ वह जो ऊपर को उठाता है, वह ऊँकार है। प्रणव ऊँकार है, क्योंकि वह प्राणों की रक्षा करता है इसीलिए उसको प्रणव कहा गया है। ॥१५॥ जो सब में व्याप्त है वह सर्वव्यापी सनातन रुद्र है। उसका आदि अन्त ब्रह्मा हरि और भगवान भी नहीं पा सके। अनन्त रुद्र संसार के परम कारण हैं। जो संसार से तारता है, इसीलिए उस रुद्र को 'तार' कहा जाता है। ॥१६-१७॥ नीललोहित भगवान सूक्ष्म होकर सब शरीरों में सदा विद्यमान रहते हैं। इसीलिए उनको 'सूक्ष्म' कहा जाता है। ॥१८॥ वह नील और लोहित दोनों हैं, इसीलिए प्रधान और पुरुष दोनों उसमें लीन हो जाते हैं। शुक्र उसमें से बहता है। इसीलिए उसको शुक्र नाम दिया गया है। जो प्रकाश (विद्युत) देता है। इसीलिए उसको वैद्युत कहा गया है। वह परम ब्रह्म हैं क्योंकि वह बृहत तत्त्व है। भगवान अद्वितीय हैं, यह चतुर्थ अवस्था है। वह परमेश्वर हैं। ॥१९-२१॥ विद्वान लोग उनको ईशान कहते हैं क्योंकि वह विश्व के दिव्य चक्षु हैं। इन्द्र आदि

ईशानः सर्वविद्यानां यत्तदीशान उच्यते। यदीक्षते च भगवान्निरीक्ष्यमिति चाज्ञया॥२३॥  
आत्मज्ञानं महोदेवो योगं गमयति स्वयम्। भगवांश्चोच्यते देवो देवदेवो महेश्वरः॥२४॥  
सर्वाल्लोकान्क्रमेणैव यो गृह्णाति महेश्वरः। विसृजत्येप देवेशो वासयत्यपि लीलया॥२५॥

एषो हि देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अंतः।

स एव जातः स जनिष्वमाणः प्रत्यङ्गमुखास्तिष्ठति सर्वतोमुखः॥२६॥

उपासितव्यं यत्नेन तदेतत्सद्भिर्ख्ययम्। यतो वाचो निवर्तते ह्यप्राप्य मनसा सहा॥२७॥

तदग्रहणमेवेह यद्वाग्वदति यत्नतः। अपरं च परं वेति परायणमिति स्वयम्॥२८॥

वदंति वाचः सर्वज्ञं शंकरं नीललोहितम्। एष सर्वो नमस्तस्मै पुरुषः पिंगलः शिवः॥२९॥

स एष स महारुद्रो विश्वं भूतं भविष्यति। भुवनं बहुधा जातं जायमानमितस्ततः॥३०॥

हिरण्यबाहुभगवान् हिरण्यपतिरीश्वरः। अंबिकापतिरीशानो हेमरेता वृषध्वजः॥३१॥

उमापतिर्विरूपाक्षो विश्वसृग्विश्ववाहनः। ब्रह्माणं विदधे योऽसौ पुत्रमग्रे सनातनम्॥३२॥

प्रहिणोति स्म तस्यैव ज्ञानमात्मप्रकाशकम्। तमेकं पुरुषं रुद्रं पुरुहूतं पुरुष्टुतम्॥३३॥

बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं वहिरूपं वरेण्यम्।

तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शांतिः शाश्वती नेतरेषाम्॥३४॥

तथा अन्य विद्वान् सब अवसरों पर ईशान की पूजा करते हैं। सब विद्वानों का ईशान होने से उनको ईशान कहा जाता है। भगवान् जो देखता है और अपनी आज्ञा से दूसरों को देखने को प्रेरित करता है, और देखने पर वह आत्मज्ञान है। महादेव स्वयं योग को प्राप्त करने को प्रेरित करते हैं। देवताओं के देवता इसीलिए ‘भगवान्’ कहे जाते हैं। २२-२४।। यह महेश्वर हैं जो सम्पूर्ण जगत् को क्रम से ग्रहण करते हैं और सब प्रत्येक वस्तु की रक्षा करते हैं, तथा उसमें विकास करते हैं। यह वह है जो सब विदिशाओं में विद्यमान हैं। वह सबसे प्रथम उत्पन्न हुये और गर्भ में प्रविष्ट हुये। वह उत्पन्न हुये और वह उत्पन्न होंगे। वह प्रत्यङ्गमुख हैं फिरसर्वत्र मुख हैं अर्थात् चारों ओर मुख किये हुए हैं। २५।। वह महेश्वर सज्जनों द्वारा यत्नपूर्वक उपासना के योग्य हैं, जिनको मन सहित वाणी बिना कुछ प्राप्त किये वापस लौट आती है। अर्थात् वे मन और वाणी की पहुँच से परे हैं। २६-२७।। वाणी उनको अग्रहण, अपने द्वारा कुछ कहने के अयोग्य कहती है। वह स्वयं पर हैं या अपर किन्तु सबसे बड़े शरणदाता हैं। २८।। वाणी (वाक्) उनको सर्वज्ञ, नीललोहित और शंकर कहती है। वह पुरुष, सर्व, पिंगल, शिव हैं। उनको नमस्कार। २९।। वह महान् रुद्र हैं। वह सम्पूर्ण जगत् (विश्व) हैं। वह अनेक प्रकार से यहाँ-वहाँ और सर्वत्र हैं। ३०।। वह भगवान् स्वर्ण की भुजावाले हैं। स्वर्ण के स्वामी हैं। वे उनके ईश्वर हैं। वे वृषभध्वज (जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है) और स्वर्ण वीर्य है (जिनका वीर्य स्वर्ण के रूप में है)। ३१।। वे विरुपाक्ष हैं। वह उमापति विश्व के सृष्टिकर्ता हैं। विश्व उनका वाहन है। उन्होंने सबसे प्रथम पुत्र ब्रह्मा को उत्पन्न किया। उनको ही शिव ने आत्मा को प्रकाशित करने वाला ज्ञान प्रदान किया। उस पुरुष को पुरुहूत पुरुष्टुत पुरा काल के अग्रभाग में उत्तम अग्नि रूप में आत्मा में स्थित को जो धीर लोग देखते हैं, अनुभव करते हैं उन्हीं को स्थायी

महतो यो महीयांश्च ह्यणोरप्यणुरख्ययः। गुहायां निहितश्शात्मा जंतोरस्य महेश्वरः॥३५॥

वेश्मभूतोऽस्य विश्वस्य कमलस्थो हृदि स्वयम्। गह्यं गहनं तत्स्थं तस्यांतश्शोर्ध्वतः स्थितः॥३६॥

तत्रापि दहं गगनमोक्तारं परमेश्वरम्। बालाग्रमात्रं तन्मध्ये ऋतं परमकारणम्॥३७॥

सत्यं ब्रह्म महादेवं पुरुषं कृष्णपिंगलम्। ऊर्ध्वरितसमीशानं विरूपाक्षमजोद्भवम्॥३८॥

अधितिष्ठति योनिं यो योनिं वाचैक ईश्वरः। देहं पंचविधं येन तमीशानं पुरातनम्॥३९॥

प्राणोष्वंतर्मनसो लिंगमाहुर्यस्मिन्क्रोधो या च तृष्णा क्षमा च।

तृष्णां छित्त्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्याचिंत्यं स्थापयित्वा च रुद्रे॥४०॥

एकं तमाहुर्वै रुद्रं शाश्वतं परमेश्वरम्। परात्परतरं वापि परात्परतरं धुवम्॥४१॥

ब्रह्मणो जनकं विष्णो र्वहेवायोः सदाशिवम्।

ध्यात्वाग्निना च शोध्यांगं विशोध्य च पृथक्पृथक्॥४२॥

पंचभूतानि संयम्य मात्राविधिगुणक्रमात्। मात्राः पंच चतस्रश्च त्रिमात्रादिस्ततः परम्॥४३॥

एकमात्रममात्रं हि द्वादशांते व्यवस्थितम्।

स्थित्वा स्थाप्यामृतो भूत्वा व्रतं पाशुपतं चरेत्॥४४॥

एतद्व्रतं पाशुपतं चरिष्यामि समासतः। अग्निमाधाय विधिवद्युजः सामसंभवैः॥४५॥

शान्ति प्राप्त होती है अन्य को नहीं। ॥३२-३४॥ वह महीयान (सबसे बड़े) से भी बड़े महत्तर हैं। वह सबसे छोटे अणु से भी सूक्ष्म अणु हैं। जो अव्यय हैं प्राणधारियों के हृदय की गुफा में स्थित आत्मा हैं। ॥३५॥ अँकार, परमेश्वर बालों के अग्रभाग के आकार में हैं। हृदय की गुफा के मध्य में स्थित है। यह शक्त हैं यह परम कारण है। ॥३६-३७॥ वह शत ब्रह्म हैं, वह काले और पिंगल वर्ण (कृष्ण पिंगल) हैं। वह विरूपाक्ष हैं, वह ईशान उर्ध्वरिता, वह महादेव और वह ब्रह्मा की उत्पत्ति के स्रोत हैं। ॥३८॥ वह पुरातन ईशान हैं जो कि पाँच पर्त वाले भौतिक शरीर में विराजमान हैं। वह पूर्ण ईश्वर हैं जो कि योनि में स्थित हैं। ॥३९॥ वह प्राणों में हैं, उसको मन का लिंग (चिह्न) कहते हैं जिसमें क्रोध, तृष्णा, क्षमा विद्यमान रहती है। तृष्णा को काटकर, जो कि संसारिक लगाव की जड़ है, और उसको रुद्र में स्थापित करके बुद्धि से उसका ध्यान करना चाहिए। ॥४०॥ विद्वान लोग उसको रुद्र कहते हैं वे उसको स्थायी (शाश्वत) परमेश्वर कहते हैं वह निश्चित रूप से महत्तम से भी महत्तर हैं। अर्थात् सबसे बड़े से भी बड़े हैं। ॥४१॥ ब्रह्मा को विष्णु, अग्निदेवता और वायु देवता उत्पन्न करने वाले उस पशुपति का ध्यान करना चाहिए। साधक को स्वयं अपने को अग्नि से शुद्ध करना चाहिए। उसको अपने अंगों को अलग से शुद्ध करना चाहिए। पंचभूतों को संयम में लेकर उनके मात्रा विधि और गुण के क्रम से पाँच मात्राओं, चार, त्रिमात्रा आदि को उसके बाद एक मात्रा और आदि मात्रा को क्रमशः संयमित करना चाहिए। तब स्थापित देव का ध्यान बिना मात्रा के करना चाहिए। इस प्रकार अमृत (अमर) होकर पाशुपत करना चाहिए। ॥४२-४४॥ अब मैं पाशुपत व्रत को संक्षेप में कहूँगा। साधक ऋक्, यजुः और साम मंत्रों को पढ़ते हुये पवित्र अग्नि स्थापित करे। ॥४५॥ साधक व्रत करे। स्नान करके शुद्ध हो जाय। सफेद वस्त्र, सफेद जनेऊ पहने। सफेद माला पहने और सफेद चन्दन लगा ले। ॥४६॥ रजोगुण से मुक्त होकर साधक होम करे। इस प्रकार वह पापों से मुक्त होगा तब भक्त नीचे लिखे

उपोषितः शुचितः स्नातः शुक्लांबरधरः स्वयम्।  
शुक्लवज्जोपवीती च शुक्लमाल्यानुलेपनः॥४६॥

जुहुयाद्विरजो विद्वान् विरजाश्च भविष्यति। वायवः पंच शुद्ध्यंतां वाङ्मनश्चरणादयः॥४७॥  
श्रोत्रं जिह्वा ततः प्राणस्तथा बुद्धिस्तथैव च। शिरः पणिस्तथा पार्श्वं पृष्ठोदरमनन्तरम्॥४८॥  
जंघे शिश्रमुपस्थं च पायुर्मेद्रं तथैव च। त्वचा मांसं च रुधिरं मेदोऽस्थीनि तथैव च॥४९॥  
शब्दः स्पर्शं च रूपं च रसो गंधस्तथैव च। भूतानि चैव शुद्ध्यंतां देहे मेदादयस्तथा॥५०॥  
अन्नं प्राणे मनो ज्ञानं शुद्ध्यंतां वै शिवेच्छया। हुत्वाज्येन समिद्धिश्च चरुणा च यथाक्रमम्॥५१॥

उपसंहृत्य रुद्राग्निं गृहीत्वा भस्म यत्नतः।  
अग्निरित्यादिना धीमान् विमृज्यांगानि संस्पृशेत्॥५२॥

एतत्पाशुपतं दिव्यं ब्रतं पाशविमोचनम्। ब्राह्मणानां हितं प्रोक्तं क्षत्रियाणां तथैव च॥५३॥  
वैश्यानामपि योग्यानां यतीनां तु विशेषतः। वानप्रस्थाश्रमस्थानां गृहस्थानां सतामपि॥५४॥  
विमुक्तिर्विधिनानेन दृष्ट्वा वै ब्रह्मचारिणाम्। अग्निरित्यादिना भस्म गृहीत्वा ह्याग्निहोत्रजम्॥५५॥  
सोऽपि पाशुपतो विप्रा विमृज्यांगानि संस्पृशेत्।

भस्मच्छन्नो द्विजो विद्वान् महापातकसंभवैः॥५६॥

पार्यविमुच्यते सद्यो मुच्यते च न संशयः। वीर्यमग्नेर्यतो भस्म वीर्यवान्भस्मसंयुतः॥५७॥  
भस्मस्नानरतो विप्रो भस्मशायी जितेन्द्रियः। सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवसायुज्यमाप्नुयात्॥५८॥

मन्त्रों को पढ़े। पाँचों वायु शुद्ध हो। वाणी मन चरण आदि शुद्ध हो, यह सब शुद्ध हो। कान, जिह्वा, प्राण, बुद्धि, सिर, हाथ, बगल, पीठ, पेट, जाँघें, लिंग, गुदा, मांस, रुधिर मेद (चर्बी), अस्थि, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध तथा देह में विद्यमान मेद आदि ये सब शुद्ध हो। शिव की आज्ञा से अन्न, प्राण, मन और ज्ञान शुद्ध हो। क्रमशः धी समिधा और चरु हवन करके तब उस रुद्र अग्नि को बुझाकर भस्म लेकर यत्नपूर्वक अग्नि इत्यादि मन्त्र को पढ़ते हुए बुद्धिमान भक्त अपने अंगों पर भस्म लगावे और सब अंगों का स्पर्श करे। ४७-५२॥

यह पाशुपत ब्रत दिव्य है और बंधन से मुक्त करने वाला (मोक्ष) है। यह ब्राह्मणों और क्षत्रियों के लिए हितकारी कहा गया है। ५३॥ यह योग्य वैश्यों के लिए तथा विशेष रूप से यतियों (ऋषियों) के लिए, वानप्रस्थ आश्रम और गृहस्थ आश्रम में स्थित भले लोगों के लिए हितकारी है। ५४॥ ब्रह्मचारियों की इस पवित्र विधि से मुक्ति होती है। अग्नि इत्यादि मन्त्र पढ़कर यज्ञ कुण्ड से अग्निहोत्र की भस्म लगाकर लोगों को छूना चाहिये। वह ब्राह्मण भी पशुपति का भक्त हो जाता है। एक विद्वान ब्राह्मण भक्त भस्म से पुते शरीर वाला महान पातकों से उत्पन्न पापों से तुरन्त मुक्त हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं है। भस्म अग्नि का वीर्य है। अतः जो भस्म को शरीर में चुपड़ता है वह वीर्यवान होता है। ५५-५७॥ भस्म से स्नान किये पूरे शरीर में भस्म लगाये, भस्मशायी जितेन्द्रिय ब्राह्मण सब पापों से मुक्त हो कर शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। ५८॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन भूत्यंगं पूजयेद्गुद्धः। रेरेकारो न कर्तव्यस्तुंतुंकारस्तथैव च॥५९॥  
न तत्क्षमति देवेशो ब्रह्मा वा यदि केशवः। मम पुत्रो भस्मधारी गणेशश्च वरानने॥६०॥  
तेषां विरुद्धं यत्त्याज्यं स याति नरकार्णवम्। गृहस्थो ब्रह्महीनोपि त्रिपुण्ड्रं यो न कारयेत्॥६१॥  
पूजा कर्म क्रिया तस्य दानं स्नानं तथैव च। निष्फलं जायते सर्वं यथा भस्मनि वै हुतम्॥६२॥

तस्माच्च सर्वकार्येषु त्रिपुण्ड्रं धारयेद्गुद्धः।

इत्युक्त्वा भगवानन्ब्रह्मा स्तुत्वा देवैः समं प्रभुः॥६३॥

भस्मच्छन्नैः स्वयं छन्नो विराम विशांपते। अथ तेषां प्रसादार्थं पशूनां पतिरीश्वरः॥६४॥  
सगणश्चांबया सार्थं सान्निध्यमकरोत्प्रभुः। अथ संनिहितं रुद्रं तुष्टुवुः सुरपुंगवम्॥६५॥  
रुद्राध्यायेन सर्वेशं देवदेवमुमापतिम्। देवोपि देवानालोक्य घृणया वृषभध्वजः॥६६॥

तुष्टोस्मीत्याह देवेभ्यो वरं दातुं सुरारिहा॥६७॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अष्टादशोऽध्यायः॥१८॥

इसलिए सब प्रकार से विद्वान् व्यक्ति को अपने शरीर को भस्म से पवित्र करना चाहिए। 'रे' शब्द को या तू तू शब्द को नहीं बोलना चाहिए। बोलने में व्यक्ति को कठोर या कर्कश नहीं होना चाहिए॥५९॥ महादेव चाहे ब्रह्मा हों या विष्णु हों, उसको क्षमा नहीं करते हैं। सुमुख कोई व्यक्ति जो भस्म को धारण करता है वो मेरे पुत्र गणेश के समान है। उसके विरुद्ध जो होता है वह त्याज्य है। गृहस्थ जो कि वैदिक ज्ञान से शुन्य है और त्रिपुण्ड को नहीं धारण करता है। वह नरक की गहराई (सागर) में गिरता है। उसके द्वारा किया गया पूजा कर्म क्रिया दान और स्नान इसी तरह विफल हो जाता है, जैसे कि राख में किया गया होम॥६०-६२॥ इसलिए सब पवित्र व्रतों में विद्वानों को त्रिपुण्ड धारण करना चाहिए। ऐसा कहकर भगवान ब्रह्मा ने भस्म लगाए हुए देवों के साथ शिव, जो स्वयं भस्म लगाये थे, उनकी स्तुति करके अपने वक्तव्य को समाप्त किया। हे राजन! उसके बाद उनको प्रसन्न करने के लिए भगवान पशुपति अपने गणों और उमा के साथ उस स्थान को शोभित किया। इसके बाद उनके देवों ने देवताओं के देवता, सबके स्वामी रुद्र उमापति को रुद्राध्याय द्वारा स्तुति की। भगवान उमापति ने देवताओं को कृपापूर्ण दृष्टि से देखकर वरदान देने के लिए देखा। देवताओं के शत्रुओं को नाश करने वाले रुद्र ने देवताओं से कहा, 'मैं प्रसन्न हूँ'॥६३-६७॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में पवित्र पाशुपात ब्रत

नामक अठारहवाँ अध्याय समाप्त॥१८॥

## एकोनावंशोऽध्यायः शिवरथ्य पूजाविधिः

शैलादिरुचाच

तं प्रभु प्रीतमनसं प्रणिपत्य वृषध्वजम्। अपृच्छन्मुनयो देवाः प्रीतिकंटकितत्वचः॥१॥  
देवा ऊचुः

भगवन् केन मार्गेण पूजनीयो द्विजातिभिः। कुत्र वा केन रूपेण वक्तुमर्हसि शंकर॥२॥  
कस्याधिकारः पूजायां ब्राह्मणस्य कथं प्रभो। क्षत्रियाणां कथं देव वैश्यानां वृषभध्वज॥३॥  
स्त्रीशूद्राणां कथं वापि कुंडगोलादिनां तु वा। हिताय जगतां सर्वमस्माकं वक्तुमर्हसि॥४॥

सूत उचाच

तेषां भावं समालोक्य मुनीनां नीललोहितः। प्राह गंभीरया वाचा मंडलस्थः सदाशिवः॥५॥  
मंडले चाग्रतो पश्यन्देवदेवं सहोमया। देवाश्च मुनयः सर्वे विद्युत्कोटिसमप्रभम्॥६॥  
अष्टबाहुं चतुर्वक्त्रं द्वादशाक्षं महाभुजम्। अर्धनारीश्वरं देवं जटामुकुटधारिणम्॥७॥  
सर्वभरणसंयुक्तं रक्तमाल्यानुलेपनम्। रक्तांबरधरं सृष्टिस्थितिसंहारकारकम्॥८॥  
तस्य पूर्वमुखं पीतं प्रसन्नं पुरुषात्मकम्। अघोरं दक्षिणं वक्त्रं नीलांजनचयोपमम्॥९॥

उन्नीसवाँ अध्याय

## शिव की पूजा विधि

शैलादि बोले

प्रेम से रोमांचित मुनियों और देवताओं ने प्रसन्न मन वाले वृषध्वज शिव को प्रणाम करके कहा॥१॥

देवगण बोले

हे भगवान शंकर! आप हम लोगों को यह बताएँ द्विजों द्वारा किस विधि से आप की पूजा की जाय? कब? और किस रूप में॥२॥ आप की पूजा में किस ब्राह्मण का अधिकार है? हे भगवन क्षत्रिय लोग और वैश्य लोग कैसे आपकी पूजा के लिए अधिकृत हैं॥३॥ स्त्री, शूद्र, कुंड, गोल आदि कैसे अधिकृत हैं? संसार के कल्याण के हेतु हम लोगों को प्रत्येक बात आप बताएँ॥४॥

सूत बोले

सूत ने उन मुनियों के भाव को समझकर नील मण्डल घेरे में स्थित हुए जादुई वाणी में कहा। उमा के साथ देवताओं के देवता को देव और मुनियों ने अपने सम्मुख देखा, जो बिजली की करोड़ों किरणों की प्रभा के समान उनकी आठ भुजाएँ थी, उनका आधा शरीर नारी रूप में था। वे जटा मुकुट धारण किये हुए थे। सब प्रकार के आभूषण पहने हुए लाल माला और लाल चन्दन लगाए लाल वस्त्र धारण किये सृष्टि, स्थिति और संहार (विश्व के रचयिता, पालक और विनाशक) थे॥५-८॥ उनका पूर्व की ओर मुख देखने में प्रसन्न और

दंष्ट्राकरालमत्युग्रं ज्वालामालासमावृतम्। रक्तश्मश्रुं जटायुक्तं चोत्तरे विद्वुमप्रभुम्॥१०॥  
प्रसन्नं वामदेवाख्यं वरदं विश्वरूपिणम्। पश्चिमं वदनं तस्य गोक्षीरधवलं शुभम्॥११॥  
मुक्ताफलमयैहरैर्भूषितं तिलकोज्जवलम्। सद्योजातमुखं दिव्यं भास्करस्य स्मरारिणः॥१२॥  
आदित्यमग्रतो पश्यन्पूर्ववच्चतुराननम्। भास्करं पुरतो देवं चतुर्वक्त्रं च पूर्ववत्॥१३॥

भानुं दक्षिणतो देवं चतुर्वक्त्रं च पूर्ववत्।

रविमुत्तरतोऽपश्यन्पूर्ववच्चतुराननम् ॥१४॥

विस्तारां मंडले पूर्वे उत्तरां दक्षिणे स्थिताम्। बोधनीं पश्चिमे भागे मंडलस्य प्रजापतेः॥१५॥  
अध्यायनीं च कौबेर्यमिकवक्त्रां चतुर्भुजाम्। सर्वाभरणसंपन्नाः शक्तयः सर्वसंमताः॥१६॥  
ब्रह्माणं दक्षिणे भागे विष्णुं वामे जनार्दनम्। ऋग्यजुःसाममार्गेण मूर्तित्रयमयं शिवम्॥१७॥  
ईशानं वरदं देवमीशानं परमेश्वरम्। ब्रह्मासनस्थं वरदं धर्मज्ञानासनोपरि॥१८॥  
वैराग्यैश्वर्यसंयुक्ते प्रभूते विमले तथा। सारं सर्वेश्वरं देवमाराध्यं परमं सुखम्॥१९॥

सितपंकजमध्यस्थं दीप्ताद्यैरभिसंवृतम्।

दीप्तां दीपशिखाकारां सूक्ष्मां विद्युत्प्रभां शुभाम्॥२०॥

जयामग्निशिखाकारां प्रभां कनकसप्रभाम्। विभूतिं विद्वुमप्रख्यां विमलां पद्मसन्निभाम्॥२१॥  
अमोघां कर्णिकाकारां विद्युतं विश्ववर्णिनीम्। चतुर्वक्त्रां चतुर्वर्णां देवीं वै सर्वतोमुखीम्॥२२॥

रंग में पीला था वह तत्पुरुष के रूप में था। उनका दाहिने ओर का दक्षिण मुख अघोर रूप में नीले अंजन के समान था॥१९॥ उनका उत्तर मुख वामदेव नामक लाल रंग की दाढ़ी, ज्वाला माला युक्त कराल दाँतों वाला विद्वुम मणि की प्रभायुक्त था। यह मुख इस रूप में विश्व को प्रसन्न करने वाला था और वरदान देने वाला था॥१०-१२॥ वामदेव का उनका पश्चिम मुख शानदार और श्वेत था जैसे की गाय का दूध। उनका सद्योजात नामक दिव्य मुख सूर्य की शानदार किरणों से चमक रहा था, जैसे मस्तक पर लगा हुआ त्रिपुण्ड। वह मोतियों की मालाओं से भूषित था॥। उन्होंने मण्डल के पूर्व में आदित्य को, पश्चिम में भास्कर को, दक्षिण में भानु को और उत्तर में रवि को पूर्ववत् चार मुखों को देखा (ये सब सूर्य अलग-अलग रूप थे)॥१३-१४॥ उन्होंने मण्डल में पूर्व शक्ति विस्तारा, दक्षिण में उत्तरा, पश्चिम में बोधिनी और उत्तर में अध्यायनी को देखा। ये सब शक्तियाँ एक मुख और चार भुजाओं वाली थीं। ये सब प्रकार के आभूषणों से युक्त और देवताओं द्वारा सम्मत थीं॥१५-१६॥ उन्होंने दक्षिण भाग में ब्रह्मा, वाम भाग में विष्णु और ऋग्, यजु और साममय तीन मूर्तियों सहित शिव को देखा है॥१७॥ उन्होंने वर देने वाले परमेश्वर ईशान को देखा जो ब्रह्मा के आसन के ऊपर बैठे थे॥१८॥ उन्होंने सर्वेश्वर को एक आसन पर बैठे देखा जो कि वैराग्य और ऐश्वर्य से संयुक्त शुद्ध और उनके लिए सर्वथा सुखदायक था॥१९॥ शिव सफेद कमल के मध्य में बैठे थे वो दीप्ता आदि देवियों से घिरे थे। दीप्ता दीप की शिखा के आकार वाली सूक्ष्म विद्युत की प्रभा के समान, जया अग्नि शिखा के आकार वाली सोने की प्रभा के समान, विभूति विद्वुम मणि के समान, विमला कमल के समान अमोघ अमिलतास के फल के समान, विद्युत विश्व के वर्ण के समान और सर्वतोमुखी चार मुखों वाली और चार रंगों वाली थी॥२०-२२॥

सोममंगारकं देवं बुधं बुद्धिमतां वरम्। बृहस्पतिं बृहद्बृद्धिं भार्गवं तेजसां निधिम्॥२३॥  
मंदं मंदगतिं चैव समंतात्तस्य ते सदा। सूर्यः शिवो जगन्नाथः सोमः साक्षातुमा स्वयम्॥२४॥  
पञ्चभूतानि शेषाणि तन्मयं च चराचरम्। दृष्टैव मुनयः सर्वे देवदेवमुमापतिम्॥२५॥  
कुतांजलिपुटाः सर्वे मुनयो देवतास्तथा। अस्तुवन्वाग्निभिरष्टाभिर्वरदं नीललोहितम्॥२६॥

### ऋषयः ऊचुः

नमः शिवाय रुद्राय कद्मुद्राय प्रचेतसे। मीढुष्टमाय सर्वाय शिपिविष्टाय रंहसे॥२७॥  
प्रभूते विमले सारे ह्यधारे परमे सुखे। नवशत्त्यावृतं देवं पद्मास्थं भास्करं प्रभुम्॥२८॥  
आदित्यं भास्करं भानुं रविं देवं दिवाकरम्। उमां प्रभां तथा प्रज्ञां संध्यां सावित्रिकामणि॥२९॥  
विस्तारामुत्तरां देवीं बोधनीं प्रणमाम्यहम्। आप्यायनीं च वरदां ब्रह्माणं केशवं हरम्॥३०॥

सोमादिवृदं च यथाक्रमेण संपूज्य मंत्रैर्विहितक्रमेण।  
स्मरामि देवं रविमंडलस्थं सदाशिवं शंकरमादिदेवम्॥३१॥  
इंद्रादिदेवांश्च तथेश्वरांश्च नारायणं पद्मजमादिदेवम्।  
प्रागाद्यधोर्ध्वं च यथाक्रमेण वज्रादिपद्मं च तथा स्मरामि॥३२॥  
सिंदूरवर्णाय समंडलाय सुवर्णवज्राभरणाय तुभ्यम्।  
पद्माभनेत्राय सपंकजाय ब्रह्मेन्द्रनारायणकारणाय॥३३॥

उन्होंने ग्रहों को शिव के चारों ओर बैठे देखा। चन्द्रमा, मंगल, बुध, बुद्धिमानों में सर्वश्रेष्ठ बृहस्पति, तेज के भंडार शुक्र, बुद्धिवाले सूक्ष्म महान तम के भण्डार और मंदगति शनि को देखा। जगत् के स्वामी शिव, सूर्य और स्वयं साक्षात् चन्द्रमा के समान हो॥२३-२४॥

पाँचों भूत उनके साथ विश्व के सब चर-अचर देखे गये। देवों के देव उमापति को देखकर मुनियों और देवताओं ने दोनों हाथ जोड़कर वरदायक भगवान नीललोहित की स्तुति की॥२५-२६॥

### ऋषिगण बोले

शिव, रुद्र कद्मुद्र, प्रचेतस, मीढुष्टम, सर्व, शिपिविष्ट और वेग को नमस्कार। मैं शक्तियों से धिरे हुये कमल पर बैठे हुये भगवान भास्कर को प्रणाम करता हूँ। आधार पर स्थित नव विमल परम सुखदायक आदित्य, भास्कर, भानु, रवि और भगवान दिवाकर को प्रणाम करता हूँ। मैं उमा, प्रभा, प्रज्ञा, संध्या, सावित्री, विस्तारा, उत्तरा और बोधिनी तथा वरदायिनी आप्यायनी को प्रणाम करता हूँ। मैं ब्रह्मा, विष्णु और शिव को प्रणाम करता हूँ। सोम आदि समूह को विहित मन्त्रों द्वारा पूजा करके रवि मण्डल में स्थित आदि देव शंकर सदाशिव का स्मरण करता हूँ।

मैं इन्द्र और अन्य देवों, ईश्वर नारायण एवं पद्मज आदि देव ब्रह्मा को यथाक्रम (पूर्व आदि अधः ऊर्द्ध्व से) स्मरण करता हूँ। सिन्दूरवर्ण वाले आपको नमस्कार। स्वर्ण और हीरे आभूषणधारी आप को नमस्कार। कमल की आभा के समान वाले आप को नमस्कार। कमलधारण करने वाले आपको नमस्कार। ब्रह्मा, इन्द्र और नारायण के कारण (उत्पन्न करने वाले को) को नमस्कार। सात घोड़ों वाले अनूरु सारथी वाले रथ को नमस्कार॥२७-३३॥

रथं च सप्ताश्रमनूरुवीरं गणं तथा सप्तविधं क्रमेण।  
 ऋतुप्रवाहेण च वालखिल्यान्स्मरामि मंदेहगणक्षयं च॥३४॥  
 हुत्वा तिलाद्यौर्विविधैस्तथाग्नौ पुनः समाप्यैव तथैव सर्वम्।  
 उद्घास्य हृत्पंकजमध्यसंस्थं स्मरामि बिंबं तव देवदेव॥३५॥  
 स्मरामि बिंबानि यथाक्रमेण रक्तानि पद्मामललोचनानि।  
 पद्मं च सव्ये वरदं च वामे करे तथा भूषितभूषणानि॥३६॥  
 दंष्ट्राकरालं तव दिव्यवक्त्रं विद्युत्प्रभं दैत्यभयंकरं च।  
 स्मरामि रक्षाभिरतं द्विजानां मंदेहरक्षोगणभर्त्सनं च॥३७॥  
 सोमं सितं भूमिजमग्निवर्णं चामीकराभं बुधमिंदुसुनूम्।  
 बृहस्पतिं कांचनसन्निकाशं शुक्रं सितं कृष्णतरं च मंदम्॥३८॥  
 स्मरामि सव्यमभयं वाममूरुगतं वरम्।  
 सर्वेषां मंदपर्यंतं महादेवं च भास्करम्॥३९॥  
 पूर्णेदुवर्णेन च पुष्पगंधप्रस्थेन तोयेन शुभेन पूर्णम्।  
 पात्रं दृढं ताम्रमयं प्रकल्प्य दास्ये तवार्ध्यं भगवन्प्रसीद॥४०॥  
 नमः शिवाय देवाय ईश्वराय कपदिने।  
 रुद्राय विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मणे सूर्यमूर्तये॥४१॥

मैं उचित निरन्तर प्रवाह के बहने वाली ऋतुएँ सहित सात गणों आदित्य नाग गन्धर्व आदि को नमस्कार करता हूँ। मैं वालखिल्य ब्रह्मा के पुत्र ऋषियों को नमस्कार करता हूँ, मन्देह राक्षसों के समूह को नष्ट करने वाले स्वामी को नमस्कार करता हूँ॥३४॥ हे देवगणों के देवता! तिल आदि विभिन्न सामग्री का हवन करके हृदय कमल के मध्य में स्थित तुम्हारे बिम्ब को मैं स्मरण करता हूँ॥३५॥ मैं उचित क्रम में स्मरण करता हूँ, मैं लाल रंग के शुद्ध कमल समान नेत्रों को स्मरण करता हूँ। मैं दाहिने हाथ में वरदायक कमल बाएँ हाथ में वरदान को स्मरण करता हूँ। आपने जो आभूषणों को धारण किया उसको मैं नमस्कार करता हूँ॥३६॥ मैं आपके दिव्य मुख का स्मरण करता हूँ। कराल दाँतों युक्त बिजली की तरह चमकने वाले, दैत्यों को भय देने वाले, द्विजों की रक्षा करने वाले और राक्षसों के दल को डराने वाले मुख को स्मरण करता हूँ॥३७॥ मैं सफेद रंग से चन्द्रमा का स्मरण करता हूँ, और अग्नि के समान रंग वाले मंगल को, और चन्द्र के पुत्र सुनहरे रंग वाले बुध को, सोने के समान चमकने वाले बृहस्पति को, सफेद रंग वाले शुक्र को, और अति काले रंग वाले शनिश्चर को स्मरण करता हूँ। मैं शनि से अन्त होने वाले सब ग्रहों को स्मरण करता हूँ। मैं भास्कर और महादेव को स्मरण करता हूँ। हे भगवान! आप प्रसन्न हो जाएँ, मैं ताँबे से बने हुए शुद्ध जल से भरे हुए पूर्ण चन्द्रमा के समान सफेद रंग पुष्प, फूल और गंध से युक्त जल से आपको अर्ध्य दूँगा। शिव, ईश्वर, कपर्दी, रुद्र, विष्णु को नमस्कार। सूर्य की मूर्ति स्वरूप ब्रह्मा को नमस्कार॥३८-४१॥

## सूत उवाच

यः शिवं मंडले देवं संपूज्यैवं समाहितः। प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने पठेत्स्तवमनुत्तमम्॥४२॥  
 इत्थं शिवेन सायुज्यं लभते नात्र संशयः॥४३॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकोनविंशोऽध्यायः॥१९॥

## सूत बोले

जो मानसिक शुद्ध और एकाग्रचित्त होकर मण्डल में स्थित शिव की पूजा करके इस उत्तम स्तुति को सुबह, दोपहर और सायंकाल पढ़ता है वह शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं॥४२-४३॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा विधि

नामक उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त॥१९॥



## विंशोऽध्यायः शिवरत्य पूजायाः साधनानि

सूत उवाच।

अथ रुद्रो महादेवो मण्डलस्थः पितामहः। पूज्यो वै ब्राह्मणानां च क्षत्रियाणां विशेषतः॥१॥  
वैश्यानां नैव शूद्राणां शुश्रूषां पूजकस्य च। स्त्रीणां नैवाधिकारोऽस्ति पूजादिषु न संशयः॥२॥  
स्त्रीशूद्राणां द्विजेन्द्रैश्च पूजया तत्फलं भवेत्। नृपाणामुपकरार्थं ब्राह्मणद्वैर्विशेषतः॥३॥  
एवं संपूजयेयुर्वै ब्राह्मणाद्याः सदाशिवम्। इत्युक्त्वा भगवान् रुद्रस्तत्रैवांतरधात्स्वयम्॥४॥  
ते देवा मुनयः सर्वे शिवमुद्दिश्य शंकरम्। प्रणेमुश्च महात्मानो रुद्रध्यानेन विहृलाः॥५॥  
जगमुर्यथागतं देवा मुनयश्च तपोधनाः। तस्मादभ्यर्चयेन्नित्यमादित्यं शिवरूपिणम्॥६॥  
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं मनसा कर्मणा गिरा।

ऋषय ऊचुः।

रोमहर्षण सर्वज्ञ सर्वशास्त्रभूतां वरा॥७॥

व्यासशिष्य महाभाग वाहेयं वद सांप्रतम्। शिवेन देवदेवेन भक्तानां हितकाम्यया॥८॥  
वेदात् षडंगादुदधृत्य सांख्ययोगाच्च सर्वतः। तपश्च विपुलं तप्त्वा देवदानवदुश्चरम्॥९॥

### बीसवाँ अध्याय शिव की पूजा के साधन

सूत बोले

रुद्र, महादेव, पितामह मण्डल में स्थित हैं, वे ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों द्वारा पूज्य हैं॥१॥ शूद्रों के लिए केवल पुजारी के द्वारा ही सेवा प्रयाप्त है। स्त्रियाँ शिव की पूजा करने के लिए अधिकृत नहीं हैं इसमें सन्देह नहीं॥२॥ श्रेष्ठ ब्राह्मणों द्वारा करायी गयी पूजा से वही स्त्रियों और शूद्रों को फल प्राप्त होता है। ब्राह्मणों तथा अन्य द्वारा राजाओं के उपकार के लिए विशेष पूजा करायी जानी चाहिए॥३॥ इस प्रकार ब्राह्मण आदि द्वारा सदा शिव की पूजा की जानी चाहिए। ऐसा कहकर भगवान रुद्र वहीं पर अन्तर्धान हो गये॥४॥ उन सब देवताओं और मुनियों ने भगवान रुद्र को ध्यान से विहृल होकर उनको प्रणाम किया॥५॥ उसके बाद देवता और तपोधन मुनि लोग जैसे आये थे और वैसे ही वापस चले गये। इसलिए शिव के स्वरूप आदित्य देवता की धन, धर्म, काम और मुक्ति के लिए निरन्तर पूजा करनी चाहिए॥६॥

ऋषिगण बोले

हे रोम हर्षण सब शास्त्रधारियों में श्रेष्ठ और सर्वज्ञ वेदव्यास शिष्य! अब अग्नि के पवित्र सिद्धान्त को और शिव के द्वारा भक्तों के हित की कामना से छः अंगों वाले वेदों और सांख्य दर्शन से योग से उद्घृत करके और

अर्थदेशादिसंयुक्तं गूढमज्ञाननिंदितम्। वर्णश्रिमकृतैर्धर्मविपरीतं क्वचित्समम्॥१०॥  
शिवेन कथितं शास्त्रं धर्मकामार्थमुक्तये। शतकोटिप्रमाणेन तत्र पूजा कथं विभोः॥११॥  
स्नानयोगादयो वापि श्रोतुं कौतूहलं हि नः।

सूत उवाच

पुरा सनत्कुमारेण मेरुपृष्ठे सुशोभने॥१२॥

पृष्ठो नंदीश्वरो देवः शैलादिः शिवसंमतः। पृष्ठोयं प्रणिपत्यैवं मुनिमुख्यैश्च सर्वतः॥१३॥  
तस्मै सनत्कुमाराय नंदिना कुलनंदिना। कथितं यच्छ्वज्ञानं शृणवंतु मुनिपुंगवाः॥१४॥  
शैवं संक्षिप्य वेदोक्तं शिवेन परिभाषितम्। स्तुतिनिन्दादिरहितं सद्यः प्रत्ययकारकम्॥१५॥

गुरुप्रसादजं दिव्यमनायासेन मुक्तिदम्।

सनत्कुमार उवाच

भगवन्सर्वभूतेश नंदीश्वर महेश्वर॥१६॥

कथं पूजादयः शंभोर्धर्मकामार्थमुक्तये। वक्तुमर्हसि शैलादे विनयेनागताय मे॥१७॥

सूत उवाच

संप्रेक्ष्य भगवान्नंदी निशम्य वचनं पुनः। कालबेलाधिकाराद्यवद्वदतां वरः॥१८॥

देवता और राक्षसों द्वारा दुश्चर, विपुल तप करके प्राप्त जो महान् गूढ रहस्य हैं वे अज्ञान को दूर करते हैं। यह चारों वर्ण और आश्रम के लिए कथित सिद्धान्तों के कहीं सम्मत और कहीं विपरीत, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए शिव द्वारा कथित शास्त्र कथन जो शत कोटि प्रमाणों से युक्त हैं। उस सिद्धान्त में शिव की पूजा विधि किस प्रकार बताई गई है। स्नान और योग कैसे हैं? हम लोग उसको सुनने को उत्सुक हैं। १७-१२॥

सूत बोले

पूर्वकाल में शिलाद के पुत्र गणों के स्वामी और शिव के प्रिय नन्दिकेश्वर से सनत्कुमार ने मेरुगिरि की चोटी पर यह प्रश्न पूछा था। उसके बाद श्रेष्ठ मुनियों ने प्रणाम करके यही प्रश्न पूछा। हे श्रेष्ठ मुनियों! अपने कुल के दीपक नन्दीश्वर ने जो कुछ सनत्कुमार से कहा था, वह मुझसे तुम सब ध्यानपूर्वक सुनो॥१३-१४॥। शिव सम्बन्धी यह सिद्धान्त (ज्ञान) शिव द्वारा भाषित है। वेदों में वर्णित ज्ञान का सारा संक्षेप है। यह स्तुति और निन्दा से रहित है। यह तुरन्त विश्वास कराने वाला है। गुरुओं की कृपा से यह अनायास अल्प प्रयास से मुक्ति देने लायक है॥१५-१६॥।

सनत्कुमार बोले

हे शैलादि! धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति को पाने के लिए शिव की पूजा कैसे की जाय? आप के सामने विनयपूर्वक आये हुये मुझसे यह आप कहने के योग्य हैं॥१७॥।

सूत बोले

उनके विनम्र वचन को सुनकर भगवान वक्ताओं में श्रेष्ठ नन्दीश्वर ने शिव पूजा की काल बेला और अधिकार आदि को कहना प्रारम्भ किया॥१८॥।

### शैलादिरुवाच

गुरुतः शास्त्रश्वेवमधिकारं ब्रवीम्यहम्। गौरवादेव संज्ञैषा शिवाचार्यस्य नान्यथा॥१९॥  
 स्वयमाचरते यस्तु आचारे स्थापयत्यापि। आचिनोति च शास्त्रार्थानाचार्यस्तेन चोच्यते॥२०॥  
 तस्माद्वेदार्थतत्त्वज्ञमाचार्यं भस्मशायिनम्। गुरुमन्वेषयेद्भक्तः सुभगं प्रियदर्शनम्॥२१॥  
 प्रतिपन्नं जनानन्दं श्रुतिस्मृतिपथानुगम्। विद्ययाभयदातारं लौल्यचापल्यवर्जितम्॥२२॥  
 आचारपालकं धीरं समयेषु कृतास्पदम्। तं दृष्ट्वा सर्वभावेन पूजयेच्छिववद्वुरुम्॥२३॥  
 आत्मना च धनेनैव श्रद्धावित्तानुसारतः। तावदाराधयेच्छिष्वः प्रसन्नोऽसौयथा भवेत्॥२४॥  
 सुप्रसन्ने महाभागे सद्यः पाशक्षयो भवेत्। गुरुर्मान्यो गुरुः पूज्यो गुरुरेव सदाशिवः॥२५॥  
 संवत्सरत्रयं वाथ शिष्यान्विप्रान्परीक्षयेत्। प्राणद्रव्यप्रदानेन आदेशैश्च इतस्ततः॥२६॥  
 उत्तमश्चाधमे योज्यो नीच उत्तमवस्तुषु। आकृष्टास्ताडिता वापि ये विषादं न यांति वै॥२७॥  
 ते योग्याः शिवधर्मिष्ठाः शिवधर्मपरायणाः। संयता धर्मसंपन्नाः श्रुतिस्मृतिपथानुगाः॥२८॥  
 सर्वद्वंद्वसहा धीरा नित्यमुद्युतचेतसः। परोपकारनिरता गुरुशुश्रूषेण रताः॥२९॥

### शैलादि बोले

मैं गुरु से प्राप्त और शास्त्र द्वारा प्रतिपादित शिव पूजन की विधि को गौरव से बताता हूँ॥१९॥ शिव आचार्य का नाम उनके गम्भीरता पर आधारित है, अन्य किसी पर नहीं जो स्वयं आचरण करता और दूसरे को उस आचरण में स्थापित करता है। इसलिए उसको आचार्य कहा जाता है। जो शास्त्र के अर्थों को समझता और दूसरों से उसकी व्याख्या करता है। इस कारण उसको आचार्य कहते हैं॥२०॥

एक निष्ठ भक्त को ऐसे आचार्य की खोज करनी चाहिए जिसमें निम्नलिखित गुण हों। जो वेदों के अर्थों के तत्त्व को जानता हो, जो भस्म पर लेटने वाला हो, वह वेद तथा स्मृति के मार्ग का अनुयायी हो, जो अपनी विद्या से अभय करने वाला हो, जो चंचलता और चपलता से रहित हो; जो आचार को पालन करने वाला धैर्यवान सदाचारी और शैव रीति, रिवाज (प्रथा) का जानकार हो, ऐसे गुरु को देखकर पूर्ण भक्ति-भाव के साथ शिव के समान उसकी पूजा करनी चाहिए॥२१॥ भक्त द्वारा अपने वित्तीय सामर्थ्य और श्रद्धा के अनुसार उतनी उसकी आराधना करनी चाहिए, जितने से वह प्रसन्न हो जाय॥२२॥ ऐसे महाभाग गुरु के प्रसन्न हो जाने पर शिष्य के बन्धन का नाश हो जाता है। गुरु मान्य हैं, गुरु पूज्य हैं और गुरु ही सदाशिव हैं॥२३॥

गुरु ब्राह्मण शिष्यों के प्राण रक्षक वस्तु द्रव्य देने और आज्ञाओं से इधर-उधर तीन वर्ष तक भेजकर उसकी परीक्षा करे॥२४॥ उत्तम पुरुषों को निकृष्ट कामों में लगाएँ और नीच को उत्तम वस्तुओं में। यदि वे उनकी ओर आकृष्ट न हो तो उनको प्रताडित करे। इस पर भी वे विचलित न हो तो उनको योग्य शिष्य समझे। योग्य ब्राह्मण भक्तों में निम्नलिखित गुण होते हैं॥२५-२६॥ वे जो शैव धर्म में पूर्ण आस्थावान हों, जो अपने में धर्म से संयत हों, श्रुति और स्मृति के मार्ग के अनुयायी हों, सब प्रकार के द्वन्द्व (सुख, दुःख) आदि सहने में धैर्यवान हों, सदैव प्रसन्न चित्त हों, परोपकार में लगे हों, गुरु की सेवा में तल्लीन हों, जो कोमल हृदय वाले, स्वस्थ सीधे-सीधे,

आर्जवा मार्दवाः स्वस्था अनुकूलाः प्रियंवदाः।

अमानिनो बुद्धिमंतस्त्यक्तस्पर्धा गतस्पृहाः॥३०॥

शौचाचारगुणोपेता दम्भमात्सर्ववर्जिताः। योग्या एवं द्विजाः सर्वे शिवभक्तिपरायणाः॥३१॥

एवंवृत्तसमोपेता वाङ्मनःकायकर्मभिः। शोध्या एवंविधाश्वैव तत्त्वानां च विशुद्धये॥३२॥

शुद्धो विनयसंपन्नो मिथ्याकटुकवर्जितः। गुर्वाज्ञापालकश्वैव शिष्योऽनुग्रहमर्हति॥३३॥

गुरुश्च शास्त्रवित्प्राज्ञस्तपस्वी जनवत्सलः। लोकाचाररतो ह्येवं तत्त्वविन्मोक्षदः स्मृतः॥३४॥

सर्वलक्षणसंपन्नः सर्वशास्त्रविशारदः। सर्वोपायविधानज्ञस्त्वहीनस्य निष्फलम्॥३५॥

स्वसंवेद्ये परे तत्त्वे निश्चयो यस्य नात्मनि। आत्मनोऽनुग्रहो नास्ति परस्यानुग्रहः कथम्॥३६॥

प्रबद्धस्तु द्विजो यस्तु स शुद्ध साधयत्यपि। तत्त्वहीने कुतो बोधः कुतो ह्यात्मपरिग्रहः॥३७॥

परिग्रहविनिर्मुक्तास्ते सर्वे पश्वोदिताः। पशुभिः प्रेरिता ये तु सर्वे ते पशवः स्मृताः॥३८॥

तस्मात्तत्त्वविदो ये तु ते मुक्ता मोचयत्यपि। संवित्तिजननं तत्त्वं परानन्दसमुद्भवम्॥३९॥

तत्त्वं तु विदितं येन स एवानन्ददर्शकः। न पुनर्नाममात्रेण संवित्तिरहितस्तु यः॥४०॥

अन्योऽन्यं तारयेन्नैव किं शिला तारयेच्छिलाम्। येषां तन्नाममात्रेण मुक्तिर्वै नाममात्रिका॥४१॥

योगिनां दर्शनाद्वापि स्पर्शनाद्वाषणादपि। सद्याः संजायते चाज्ञा पाशोपक्षयकारिणी॥४२॥

वफादार मृदुभाषी हों जो अहंकारी न हों, बुद्धिमान हों। उनमें स्पर्धा और कपट भाव न हो, शुद्ध आचार-विचार और गुणों से युक्त हों। जिनमें ईर्ष्या द्वेष और पाखण्ड न हों। ऐसे द्विज योग्य शिव भक्त परायण होते हैं। ऐसे वाणी, मन और कर्म से शुद्ध आचरण वाले शिष्यों को आगे पुनः तत्त्वों की शुद्धता के लिए शोधन करना चाहिए॥२७-३२॥ शुद्ध, विनयी, मिथ्या और कटु व्यवहार से दूर गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला शिष्य गुरु की कृपा का पात्र होता है॥३३॥ गुरु शास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान, तपस्वी, जनसाधारण को प्रेमी, लोक व्यवहार में तल्लीन तत्त्वों का ज्ञाता हो, वह मोक्ष देने वाला होता है॥३४॥ सब लक्षणों से युक्त, सब शास्त्रों में परंगत, सब उपाय और विधान को जानने वाला होने पर भी यदि वास्तविक तत्त्व से रहित हो, तो उसके अन्य गुण निष्फल हो जाते हैं॥३५॥ अगर ऐसे गुरु में स्वयं अनुभूति तत्त्व आत्मा में जिसका निश्चय नहीं है, जिसमें स्वयं आत्मज्ञान नहीं है, वह दूसरों को आत्मज्ञान कैसे दे सकता है॥३६॥ वह ब्राह्मण जो कि स्वयं प्रबुद्ध है, शुद्ध है वह स्वयं साधना में समर्थ होता है। लेकिन जो स्वयं तत्त्व का ज्ञाता नहीं है उसको आत्मज्ञान कहाँ से होगा॥३७॥ वे सब आत्म परिग्रह से रहित हैं। वे सब पशु हैं, और वे जो पशु से प्रेरित हैं वे सब पशु कहे गये हैं॥३८॥ इसलिए जो तत्त्वविद मुक्त हैं वे दूसरों को मुक्त कर सकते हैं, तत्त्व जो कि संविति (ज्ञान) का जनक है वह पर आनन्द से उत्पन्न है॥३९॥ केवल वह जिसने तत्त्व सत्य को समझ लिया है वही आनन्द को दिखाने वाला है जो कि संविति रहित है वह तो नाम मात्र का तत्त्वज्ञानी है॥४०॥ क्या एक शिला दूसरे शिला को तार सकती है? जिनको कि पूर्ण ज्ञान केवल नाम मात्र में है, उनकी मुक्ति भी नाम मात्र में है॥४१॥ योगियों के दर्शन से स्पर्श और भाषण से भी पाप क्षय करने वाली आज्ञा उत्पन्न होती है॥४२॥ अथवा योग मार्ग से

अथवा योगमार्गेण शिष्यदेहं प्रविश्य च। बोधयेदेव योगेन सर्वतत्त्वानि शोध्य च॥४३॥  
 षडर्धशुद्धिर्विहिता ज्ञानयोगेन योगिनाम्। शिष्यं परीक्ष्य धर्मज्ञं धार्मिकं वेदपारगम्॥४४॥  
 ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं बहुदोषविवर्जितम्। ज्ञानेन ज्ञेयमालोक्य कर्णात् कर्णागतेन तु॥४५॥  
 दीपादीपो यथा चान्यः संचरेद्विधिवद्वुरुः। भौवनं च पदं चैव वर्णाख्यं मात्रमुत्तमम्॥४६॥  
 कालाध्वरं महाभाग तत्त्वाख्यं सर्वसंमतम्। भिद्यते यस्य सामर्थ्यादाज्ञामात्रेण सर्वतः॥४७॥  
 तस्य सिद्धिश्च मुक्तिश्च गुरुकारुण्यसंभवा। पृथिव्यादीनि भूतानि आविशंति च भौवने॥४८॥  
 शब्दः स्पर्शस्तथा रूपं रसो गंधश्च भावतः। पदं वर्णाख्यं विप्र बुद्धींद्रियविकल्पनम्॥४९॥  
 कर्मेन्द्रियाणि मात्रं हि मनो बुद्धिरतः परम्। अहंकारमथाव्यक्तं कालाध्वरमिति स्मृतम्॥५०॥  
 पुरुषादिविरिच्यन्तमुन्मनत्वं परात्परम्। तथेशत्वमिति प्रोक्तं सर्वतत्त्वार्थबोधकम्॥५१॥

अयोगी नैव जानाति तत्त्वशुद्धिं शिवात्मिकाम्॥५२॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे विंशोऽध्यायः॥२०॥**

शिष्य के शरीर में प्रवेश करके योग से सब तत्त्वों का शोधन करके अपने योगिक पावर से अपने शिष्य को तत्त्व ज्ञान का बोध कराते हैं। ॥४३॥ योगियों के ज्ञानयोग से मानसिक, वाचिक और कायिक शुद्धि ज्ञानमार्ग से मिलती है। गुरु को धर्मज्ञ, धार्मिक, वेदज्ञ, निर्दोष, शिष्य की परीक्षा करके ज्ञान से ज्ञान को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य गुरु शिष्य के गुणधर्म और ज्ञान की परीक्षा करे, वह इस बात की जाँच करे कि शिष्य में दोष तो नहीं है। वह ब्राह्मण है, क्षत्रिय है या वैश्य है गुरु कान से कान में और वह ज्ञान दे जो कि उसको स्वयं प्राप्त है। जैसे एक दीपक से दूसरा दीपक प्रज्वलित होता है उसी तरह गुरु भी शिष्य को अपने स्वयं प्राप्त ज्ञान से ज्ञानबोध कराए। जिसको तत्त्व कहते हैं वह ज्ञान से बना है। महाभाग, भौवन, पद, वर्णाख्य, तत्त्व मात्रम्, कालाध्वर यह सर्व सम्मत तत्त्व है। गुरु की दया (अनुग्रह) से शिष्य अपनी ज्ञान शक्ति के द्वारा ज्ञान मात्र से सिद्धि और मुक्ति प्राप्त कर लेता है। ॥४४-४७॥ पृथ्वी आदि पंचभूत भौवनम् में सम्मिलित हैं। शब्द, स्पर्श, रंग, रस और गंध ये पद हैं। अपने सामान्य गुणों के कारण। हे ब्राह्मण! ज्ञानेन्द्रियों के विभिन्नता वर्णाख्यम कहे जाते हैं। मात्रम् कर्मेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहंकार अव्यक्त को कालाध्वर कहा गया है। पुरुष से लेकर और ब्रह्म सहित तत्त्व उन्मन कहा गया है। सब तत्त्व के अर्थ को बोध करने वाले को ईश कहा गया है। ईश महत्तम से भी महत्तर है। सब तत्त्वों का यही अर्थ है। जो योगी नहीं है वह तत्त्वों के असली प्रकृति की शुद्धि को नहीं जानता है जो स्वयं शिव की प्रकृति है। ॥४८-५२॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा के साधन  
 नामक बीसवाँ अध्याय समाप्त। २०॥

## एकविंशतितमोऽध्यायः दीक्षाविधिः

सूत उवाच

परीक्ष्य भूमिं विधिवद्वंधवर्णरसादिभिः। अलंकृत्य वितानाद्वैरीश्वरावाहनक्षमाम्॥१॥  
एकहस्तप्रमाणेन मण्डलं परिकल्पयेत्। आलिखेत्कमलं मध्ये पंचरत्नसमन्वितम्॥२॥  
चूर्णेरष्टदलं वृत्तं सितं वा रक्तमेव च। परिवारेण संयुक्तं बहुशोभासमन्वितम्॥३॥  
आवाह्य कर्णिकायां तु शिवं परमकारणम्। अर्चयेत्सर्वयत्नेन यथाविभवविस्तरम्॥४॥  
दलेषु सिद्धयः प्रोक्ताः कर्णिकायां महामुने। वैराग्यज्ञाननालं च धर्मकंदं मनोरमम्॥५॥  
वामा ज्येष्ठा च रौद्री च काली विकरणी तथा। बलविकरणी चैव बलप्रमथिनी क्रमात्॥६॥  
सर्वभूतस्य दमनी केसरेषु च शक्तयः। मनोन्मनी महामाया कर्णिकायां शिवासने॥७॥  
वामदेवादिभिः सार्थं द्वन्द्वन्यायेन विन्यसेत्। मनोन्मनं महादेवं मनोन्मन्याथ मध्यतः॥८॥  
सूर्यसोमाग्निसंबंधात्प्रणवाख्यंशिवात्मकम्। पुरुषं विन्यसेद्वक्त्रं पूर्वे पत्रे रविप्रभम्॥९॥  
अघोरं दक्षिणे पत्रे नीलांजनचयोपमम्। उत्तरे वामदेवाख्यं जपाकुसुमसन्निभम्॥१०॥  
सद्यं पश्चिमपत्रे तु गोक्षीरधवलं न्यसेत्। ईशानं कर्णिकायां तु शुद्धस्फटिकसन्निभम्॥११॥

## इककीसवाँ अध्याय दीक्षाविधि

सूत बोले

दीक्षा के लिए चुनी हुई भूमि की परीक्षा करके विधिवत् गंध, रंग, रस आदि से सजाएँ। वितान (चाँदनी) आदि से शिव को आह्वान के योग्य एक हाथ का मण्डल बनाएँ। पंच रत्नों से युक्त कमल को बीच में चूर्ण (आटा) से बनाएँ। सफेद और लाल अष्टगन्ध घेरा (वृत्त) यह सफेद या लाल रंग में हो। यह चमकीला और भव्य हो। यह शिव और उनके अनुचरों से संयुक्त हो। सृष्टि के परम कारण शिव का कर्णिका में आह्वान करके अपने समृद्धि की सीमा के अनुसार भक्त पूजा करे। १-४। हे महामुनि! दलों में सिद्धियाँ कही गयी हैं। इसकी नाल में वैराग्य और ज्ञान और सुन्दर धर्म कंद में कहे गये हैं, केसरों में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, विकरणी, बलविकरणी, बल प्रमथिनी सब भूतों की दमनी शक्तियाँ केसरों में और शिव के आसन में कर्णिका में मनोन्मनी महामाया इन शक्तियों की वामदेव और अन्य के साथ जोड़ो में स्थापित करे। महादेव जो मनोन्मन हैं उनको मनोन्मनी के साथ मध्य में स्थापित करें। ५-८। पूर्व दल (पत्र) में पुरुष को स्थापित करे। सूर्य के समान तेज मुख वाले सूर्य, सोम, अग्नि के सम्बन्ध से प्रणव नामक शिवात्मा पुरुष को स्थापित करे। दक्षिण पत्र पर नीलांजन के समान अघोर को उत्तर में जपा के फूल के समान वामदेव को स्थापित करे। ९-१०। पश्चिम दल

चंद्रमंडलसंकाशं हृदययायेति मंत्रतः। वाह्नेये रुद्रदिग्भागे शिरसे धूम्रवर्चसे॥१२॥  
 शिखायै च नमश्वेति रक्ताभे नैऋते दले। कवचायांजनाभाय इति वायुदले न्यसेत्॥१३॥  
 अस्त्रायाग्निशिखाभाय इति दिक्षु प्रविन्यसेत्। नेत्रेभ्यश्वेति चैशान्यां पिंगलेभ्यः प्रविन्येसत्॥१४॥  
 शिवं सदाशिवं देवं महेश्वरमतः परम्। रुद्रं विष्णुं विरिचिं च सृष्टिन्यायेन भावयेत्॥१५॥  
 शिवाय रुद्ररूपाय शांत्यतीताय शंभवे। शांताय शांतदैत्याय नमश्वंद्रमसे तथा॥१६॥  
 वेद्याय विद्याधराय वह्नये वह्निवर्चसे। कालायै च प्रतिष्ठायै तारकायांतकाय च॥१७॥  
 निवृत्त्यै धनदेवाय धारायै धारणाय च। मंत्रैरेतैर्महाभूतविग्रहं च सदाशिवम्॥१८॥  
 ईशानमुकुटं देवं पुरुषास्यं पुरातनम्। अघोरहृदयं हृष्टं वामगुह्यं महेश्वरम्॥१९॥  
 सद्यमूर्ति स्मरदेवं सदसद्यत्तिकारणम्। पंचवक्त्रं दशभुजमष्टत्रिंशत्कलामयम्॥२०॥  
 सद्यमष्टप्रकारेण प्रभिद्य च कलामयम्। वामं त्रयोदशविद्यैर्विभिद्य विततं प्रभुम्॥२१॥  
 अघोरमष्ठधा कृत्वा कलारूपेण संस्थितम्। पुरुषं च चतुर्धा वै विभज्य च कलामयम्॥२२॥  
 ईशानं पंचधा कृत्वा पंचमूर्त्याव्यवस्थितम्। हंसहंसेति मंत्रेण शिवभत्त्या समन्वितम्॥२३॥

पर भक्त सद्य को स्थापित करे जो कि गाय के दूध के समान है। शुद्ध स्फटिक के समान ईशान को कर्णिका में स्थापित करे। 'हृदयाय' शब्द से प्रारम्भ होने वाले मन्त्र को पढ़ते हुए दक्षिण-पूर्व कोण में देव को स्थापित करे जो कि शुद्ध स्फटिक के समान हैं। धुएँ के समान रंग वाले देव को 'शिरसे' शब्द से प्रारम्भ होने वाले मन्त्र को पढ़ते हुए उत्तर-पूर्व में स्थापित करें। दक्षिण पश्चिम कोण में लाल रंग के साथ 'शिखायै च नमः' शब्द को पढ़ते हुए मूर्ति स्थापित करें। अङ्जन के समान आभा वाले 'कवचाय' शब्द को पढ़ते हुए उत्तर-पूर्व कोण में स्थापित करें। अग्निशिखा की आभा वाले मूर्ति को अस्त्र को नमः पढ़ते हुए सब दिशा में स्थापित करें। उत्तर-पूर्व कोण में पिंगल वर्ण के नेत्रों को नमः कहकर स्थापित करें। भक्त शिव, सदाशिव और महेश्वर का स्मरण करे उसके बाद वह रुद्र विष्णु और विरिचि को सृष्टि के क्रम में ध्यान करें। ११-१५। रुद्र के रूप में शिव को नमः शंभु को नमस्कार जो शान्ति से बाहर है। चन्द्र को नमस्कार, चन्द्रमा जिन्होंने दैत्यों का नाश किया। १६। विद्या के धारण करने वाले विद्याधर को नमस्कार, तेज के देव उस अग्नि को नमस्कार, काल को नमस्कार और प्रतिष्ठा को नमस्कार, तारक और यम को नमस्कार। १७। निवृत्ति को नमस्कार, धन देव को नमस्कार, धारा को नमस्कार, धारण को नमस्कार इन मन्त्रों के द्वारा भक्त निम्नलिखित देवताओं को स्मरण करे। महाभूत शरीरधारी सदाशिव को, पुरातन देव पुरुष देव को, मुकुटधारी ईशान को, उनके हृदय के लिए अघोर को, अपने गुप्त अंगों के लिए वामदेव महेश्वर को, 'सत्' और 'असत्' के व्यक्ति के कारण शब्द की मूर्ति को और पाँच मुखों, दस भुजाओं और अड़तीस कलाओं वाले महादेव का स्मरण करें। १८-२०। तब कलामय सद्य को आठ भाग में बाँटकर, व्यापक वाम को १३ भाग, कलारूप में स्थित अघोर को आठ प्रकार, कलामय पुरुष को चार प्रकार, पंचमूर्ति रूप स्थित ईशान को पाँच प्रकार विभक्त करके हंस हंस इस मन्त्र से एक मंत्र ओम् का, समान रूप में 'अ' अक्षर को दोहराते हुए आ, ई, ऊ, ए और अंबा उचित क्रम से आत्मा के रूप भगवान् शिव का स्मरण

ओंकारमात्रमोंकारमकारं समरूपिणम्। आईऊ एतथा अंबानुक्रमेणात्मरूपिणम्॥२४॥  
 प्रधानसहितं देवं प्रलयोत्पत्तिवर्जितम्। अणोरणीयांसमजं महतोऽपि महत्तमम्॥२५॥  
 उध्वरीतसमीशानं विरूपाक्षमुमापतिम्। सहस्रशिरसं देवं सहस्राक्षं सनातनम्॥२६॥  
 सहस्रहस्तचरणं नादांतं नादविग्रहम्। खद्योतसदृशाकारं चंद्रेरेखाकृतिं प्रभुम्॥२७॥  
 द्वादशांते भ्रुवोर्मध्ये तालुमध्ये गले क्रमात्। हृदेशेऽवस्थितं देवं स्वानंदममृतं शिवम्॥२८॥  
 विद्युद्गुलयसंकाशं विद्युत्कोटिसमप्रभम्। श्यामं रक्तं कलाकारं शक्तित्रयकृतासनम्॥२९॥  
 सदाशिवं स्मरेदेवं तत्त्वत्रयसमन्वितम्। विद्यामूर्तिमयं देवं पूजयेद्व यथाक्रमात्॥३०॥  
 लोकपालांस्तथास्त्रेण पूर्वाद्यान्पूजयेत् पृथक्। चरुं च विधिनासाद्य शिवाय विनिवेदयेत्॥३१॥  
 अर्धं शिवाय दत्त्वैव शेषार्थेन तु होमयेत्। अघोरेणाथ शिव्याय दापयेद्दोक्तुमुत्तमम्॥३२॥  
 उपस्पृश्य शुचिर्भूत्वा पुरुषं विधिना यजेत्। पंचगव्यं ततः प्राश्य ईशानेनाभिमंत्रितम्॥३३॥  
 वामदेवेन भस्मांगी भस्मनोद्गुलयेत्क्रमात्। कर्णयोश्च जपेदेवीं गायत्रीं रुद्रदेवताम्॥३४॥  
 ससूत्रं सपिधानं च वस्त्रयुग्मेन वेष्टितम्। तत्पूर्वं हेमरत्नौर्धैर्वासितं वै हिरण्मयम्॥३५॥  
 कलशान्विन्यसेत्पंच पंचभिर्ब्रह्मणैस्ततः। होमं च चरुणा कुर्याद्यथाविभवविस्तरम्॥३६॥  
 शिव्यं च वासयेद्दत्तं दक्षिणे मंडलस्य तु। दर्भशश्व्यासमारुदं शिवध्यानपरायणम्॥३७॥

करे। उनका निम्नलिखित रूप में स्मरण करे, वह प्रलय और उत्पत्ति से वर्जित (रहित) प्रधान सहित हैं। वह अन्न हैं, वह महत्तम से महत्तर और सूक्ष्मतम से भी सूक्ष्मतर हैं। वह ब्रह्मचारी ईशान हैं। वह विरूपाक्ष हैं। उमा के पति हैं। वह हजार शिर वाले, हजार नेत्र वाले, हजार हाथ और पैर वाले हैं। वह अन्तिम नाद (ध्वनि) और भौतिक रूप में नाद हैं। उनका रूप जुगनू के समान है। वह चन्द्र की रेखा के समान है। वह बारह नाड़ियों में, भौंहों के मध्य में, तालु, गला और हृदय में यथाक्रम से स्थित हैं। वह स्वयं आनन्द अमृत हैं, शिव हैं। वह विद्युत वलय के समान और कोटि विद्युत की प्रभा के समान हैं। वह श्याम रंग के और लाल रंग के हैं। वह कला के रूप हैं। वह तीन शक्तियों के साथ बैठे हुए हैं। वह सदाशिव हैं। वह तीन तत्त्वों से युक्त हैं। ऐसे विद्यामूर्ति सदाशिव की यथाविधि पूजा करनी चाहिये। २१-३०।। पूर्व से प्रारम्भ करके आठों दिशाओं की उनके अस्त्रों सहित पूजा करनी चाहिये। ३१।। शिव को अर्घ्य देकर शेष अर्घ्य से अघोर मन्त्र पढ़ते हुये होम करना चाहिये। शिव्य को उनके लिए उत्तम भोजन देना चाहिये। ३२।। तब उसे आचमन करके शुद्ध कर विधिपूर्वक पूजन करना चाहिये। ईशान कोण से अभिमन्त्रित पंचगव्य को रखाकर वामदेव के मन्त्रों का स्मरण करते हुए शरीर में भस्म लगावे तथा गुरु शिव्य के कान में गायत्री मन्त्र का ज्ञप करे जिसके देवता रुद्र हैं। ३३-३४।। तब सोने के पाँच कलश ढक्कन से ढके दो धागों से बैंधे हुए पात्र को रखना चाहिये। सोने के टुकड़े और रत्नद्रव्य घड़ों में पहिले ही डाल देना चाहिये। तब उसके बाद पाँच ब्राह्मणों द्वारा अपनी सामर्थ्य के अनुसार धन से होम करना चाहिये। शिव्य को दक्षिण में कुशासन पर बैठाये। शिव के ध्यान में लीन हो मण्डल के दक्षिण भाग में शिव्य

अघोरेण यथान्यायमष्टोत्तरशतं पुनः।  
घृतेन हुत्वा दुःस्वप्नं प्रभाते शोधयेन्मलम्॥३८॥

एवं चोपोषितं शिष्यं स्नातं भूषितविग्रहम्। नववस्त्रोत्तरीयं च सोष्णीयं कृतमंगलम्॥३९॥  
दुकूलाद्येन वस्त्रेण नेत्रं बद्ध्वा प्रवेशयेत्। सुवर्णपुष्पसंमिश्रं यथाविभवविस्तरम्॥४०॥  
ईशानेन च मंत्रेण कुर्यात्पुष्पांजलिं प्रभोः। प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा रुद्राध्यायेन वा पुनः॥४१॥  
केवलं प्रणवेनाथ शिवध्यानपरायणः। ध्यात्वा तु देवदेवेशमीशाने संक्षिपेत्स्वयम्॥४२॥  
यस्मिन्मंत्रे पतेत्पुष्पं तन्मंत्रस्तस्य सिध्यति। शिवांभसा तु संस्पृश्य अघोरेण च भस्मना॥४३॥  
शिष्यमूर्धनि विन्यस्य गंधाद्यैःशिष्यमर्चयेत्। वारुणं परमं श्रेष्ठं द्वारं वै सर्ववर्णिनाम्॥४४॥  
क्षत्रियाणां विशेषेण द्वारं वै पश्चिमं स्मृतम्। नेत्रावरणमुन्मुच्य मंडलं दर्शयेत्ततः॥४५॥  
कुशासने तु संस्थाप्य दक्षिणामूर्तिमास्थितः। तत्त्वशुद्धिं ततः कुर्यात्पंचतत्त्वप्रकारतः॥४६॥  
निवृत्त्या रुद्रपर्यंतमंडमंडोद्भवात्मज। प्रतिष्ठया तदूर्ध्वं च यावदव्यक्तगोचरम्॥४७॥  
विश्वेश्वरांतं वै विद्या कलामात्रेण सुब्रत। तदूर्ध्वमार्गं संशोध्य शिवभत्त्या शिवं नयेत्॥४८॥  
समर्चनाय तत्त्वस्य तस्य भोगेश्वरस्य वै। तत्त्वत्रयप्रभेदेन चतुर्भिरुत वा तथा॥४९॥  
होमयेदंगमंत्रेण शांत्यतीतं सदाशिवम्। सद्यादिभिस्तु शांत्यंतं चतुर्भिः कलया पृथक्॥५०॥

भक्तों को बैठाना चाहिये। भक्त प्रातःकाल अघोर मन्त्र से १०८ बाद घी से होम करके बुरे सपनों (दुःस्वप्न) के दोष को नष्ट करे। ३५-३८।। उसके बाद स्नान किये हुए अलंकृत शरीर नये अघोवस्त्र (धोती) ऊपरी वस्त्र (कुर्ता) उत्तरीय (चादर), शिर पर पगड़ी या गमछा लपेटे भक्त की आँखों को रेशमी वस्त्र से ढककर भीतर लिवा लावे। भक्त अपनी सामर्थ्य के अनुसार स्वर्ण निर्मित फल और फूलों को ईशान मन्त्र पढ़ते हुए शिवजी को झेट करे। भक्त तीन प्रदक्षिणा करके रुद्राध्याय को पढ़ते हुए केवल प्रणव का उच्चरण करते हुए शिव के ध्यान में लीन हो जाय। देवों के देवेश को ध्यान करके भक्त स्वयं ईशान पर फूलों को चढ़ा दे। ३९-४२।। ईशान पर जिस मन्त्र से पढ़ते हुए भक्त फूल चढ़ाता है उसको वह मन्त्र सिद्ध होता है। उसके बाद गुरु शिव के शिर पर भस्म लगाते हुए पवित्र जल से अघोर मन्त्र से भक्त को सर्पा करता है। उसके बाद सुगन्ध द्रव्य से शिष्य की अर्चना करे। सब वर्णों (जातियों) के शिष्यों के प्रवेश के लिए पश्चिम का द्वार सबसे श्रेष्ठ होता है। यह क्षत्रिय के लिए विशेष रूप से श्रेष्ठ है। उसके बाद आँखों पर ढके कपड़े को हटाकर भक्त को मण्डल दिखावे। ४३-४५।। तब भक्त को कुशासन पर दक्षिण की ओर मुख करके बैठावे। उसके बाद पंच तत्त्व प्रकार से तत्त्व शुद्धि करना चाहिये। ४६।। हे ब्रह्मा के पुत्र! प्रतिष्ठा के द्वारा अव्यक्त जब तक न हो, हे शुभ पवित्र व्रत (सुब्रत)! विश्वेश्वर के अन्त तक कलाओं के द्वारा उसके ऊपरी भाग को संशोधित करके शिव भक्त गुरु शिष्य को शिव तत्त्व (शान्ति) की ओर ले जाये। ४७-४८।। तब उस भोगेश्वर की पूजा के लिए तीनों तत्त्वों अथवा चारों तत्त्व का शान्ति को शामिल करते हुए या छोड़ते हुए तत्त्व की पूजा के लिए ले जाए। ४९।। वह सदाशिव के

शान्त्यतीतं मुनिश्रेष्ठ ईशानेनाथवा पुनः। प्रत्येकमष्टोत्तरशतं दिशाहोमं तु कारयेत्॥५१॥  
 ईशान्यां पंचमेनाथ प्रधानं परिगीयते। समिदाज्यचरुल्लाजान्सर्वपांशु यवांस्तिलान्॥५२॥  
 द्रव्याणि सप्त होतव्यं स्वाहांतं प्रणवादिकम्। तेषां पूर्णाहुतिर्विप्र ईशानेन विधीयते॥५३॥  
 सहसेन यथान्यायं प्रणवाद्येन सुब्रत। अघोरेण च मंत्रेण प्रायश्चित्तं विधीयते॥५४॥  
 जयादिस्विष्टपर्यंतमग्निकार्यं क्रमेण तु। गुणसंख्याप्रकारेण प्रधानेन च योजयेत्॥५५॥  
 भूतानि ब्रह्मभिर्वापि मौनीबीजादिभिस्तथा। अथ प्रधानमात्रेण प्राणापानौ नियम्य च॥५६॥  
 पष्ठेन भेदयेदात्मप्रणवांतं कुलाकुलम्। अन्योऽन्यमुपसंहृत्य ब्रह्माणं केशवं हरम्॥५७॥  
 रुद्रे रुद्रं तमीशाने शिवे देवं महेश्वरम्। तस्मात्सृष्टिप्रकारेण भावयेद्द्वनाशनम्॥५८॥  
 स्थाप्यात्मानममुं जीवं ताडनं द्वारदर्शनम्। दीपनं ग्रहणं चैव बन्धनं पूजया सह॥५९॥  
 अमृतीकरणं चैव कारयोद्विधिपूर्वकम्। षष्ठांतं सद्यसंयुक्तं तृतीयेन समन्वितम्॥६०॥  
 फडंतं संहृतिः प्रोक्ता पंचभूतप्रकारतः। सद्याद्यपष्ठसहितं शिखांतं सफडंतकम्॥६१॥  
 ताडनं कथितं द्वारं तत्त्वानामपि योगिनः। प्रधानं संपुटीकृत्य तृतीयेन च दीपनम्॥६२॥

लिए जो कि शान्त से अतीत कला अंग मन्त्र के द्वारा और पहले के चार तत्त्वों शान्ति के साथ, कला से अलग से, सद्य मन्त्र के द्वारा होम करेगा। हे महामुनि! शान्त्यातीत कला ईशान मन्त्र के द्वारा होम करे॥५०-५१॥ ईशान कोण में प्रधान पंचम स्वर से गाया गया है। इसके बाद समिधा धी, चरु, लाजा, सरसों, जौ, तिल ये सात चीजों द्वारा अग्नि में ओम् को उच्चारण करते हुए और अग्नि में स्वाहा शब्द बोलते हुए होम करे। हे ब्रह्मण! उनकी ईशान मन्त्र से पूर्णाहुति की जाय॥५२-५३॥ हे सुब्रत! तब प्रायश्चित्त होम ओम् हंस से प्रारम्भ करके अघोर मन्त्र के द्वारा किया जाना चाहिये॥५४॥ तब पवित्र अग्नि में ‘जया’ में प्रारम्भ करते हुए और स्विष्ट अन्त में ‘स्वाहा’ से होम को पूर्ण करना चाहिए। प्रधान से तीन बार उनको जोड़ देना चाहिए॥५५॥ ब्रह्मनिर्वापि और मौनीबीज आदि के द्वारा प्रधान से संयुक्त भूतों को प्रधान मन्त्र मात्र द्वारा प्राण और अपान वायु को वश में करके छठवें बीज से आत्मा और प्रणव के साथ कुलाकुल से अन्त करते हुए भेदन करे। ब्रह्म केशव और रुद्र इनको आपस में मिला कर रुद्र में रखें। रुद्र में ईशान को और महेश्वर (ईशान) को शिव में रखें। तब सृष्टि के विनाशक सृष्टि प्रकार के क्रम में सृष्टि संहारक शिव का ध्यान करे॥५६-५८॥ आत्मा (जीव) को स्थापित करके, तांडन, द्वार दर्शन, दीपन, ग्रहण और बन्धन, पूजा के साथ अमृतीकरण विधि को करे। तीसरे के सहित छठवाँ सद्य के साथ होगा। संहृति प्रकार (संहार का क्रम) पंचभूत के क्रम में और छठवें के अन्त में होगा। ‘फट’ के साथ शिखा सहित अन्त होने वाले को तांडन कहा जाता है। द्वार दर्शन योगी के तत्त्वों का सूचक है। दीपन विधि तृतीय बीज द्वारा प्रधान का संपुष्टिकरण है। बन्धनम् विधि प्रथम पूर्ण बीज द्वारा प्रधान का संपुटीकरण अमृत से परिपूर्ण कर देना है। संहार के क्रम में कलाओं का संक्रमण शान्त्यातीत, शान्ति, विद्या, अमला, प्रतिष्ठा और निवृत्ति है। कलाओं का यह संक्रमण तत्त्व, वर्ण, कला और भुवन से है। यथाविधि संक्षिप्त मन्त्रों और पादों, छन्दों के पादों द्वारा प्रथम योनि बीज मंत्र से स्तुति की जानी चाहिये।

आद्येन संपुटीकृत्य प्रधानं ग्रहणं स्मृतम्। प्रधानं प्रथमेनैव संपुटीकृत्य पूर्ववत्॥६३॥  
 बंधनं परिपूर्णेन प्लावनं चामृतेन च। शांत्यतीता ततः शांतिर्विद्या नाम कलामला॥६४॥  
 प्रतिष्ठा च निवृत्तिश्च कलासंक्रमणं स्मृता। तत्त्ववर्णकलाग्रुक्तं भुवनेन यथाक्रमम्॥६५॥  
 मंत्रैः पादैः स्तवं कुर्याद्विशोध्य च यथाविधि। आद्येन योनिबीजेन कल्पयित्वा च पूर्ववत्॥६६॥  
 पूजासंप्रोक्षणं विद्धि ताडनं हरणं तथा। संहतस्य च संयोगं विक्षेपं च यथाक्रमम्॥६७॥  
 अर्चना च तथा गर्भधारणं जननं पुनः। अधिकारो भवेद्धानोर्लयश्चैव विशेषतः॥६८॥  
 उत्तमाद्यं तथांत्येन योनिबीजेन सुब्रता। उद्धारे प्रोक्षणे चैव ताडने च महामुने॥६९॥  
 अघोरेण फडंतेन संसृतिश्च न संशयः। प्रतितत्त्वं क्रमो ह्येष योगमार्गेण सुब्रता॥७०॥  
 मुष्टिनां चैव यावच्च तावत्कालं नयेत्क्रमात्। विषुवेण तु योगेन निवृत्यादि शिवांतिकम्॥७१॥  
 एकत्र समतां याति नान्यथा तु पृथक्पृथक्। नासाग्रे द्वादशांतेन पृष्ठेन सह योगिनाम्॥७२॥  
 क्षंतव्यमिति विप्रेंद्र देवदेवस्य शासनम्। हेमराजतताम्राद्यर्विधिना कल्पितेन च॥७३॥  
 सकूर्चेन सवस्त्रेण तंतुना वेष्टितेन च। तीर्थबुपूरितेनैव रत्नगर्भेण सुब्रता॥७४॥  
 संहितामंत्रितेनैव रुद्राध्यायस्तुतेन च।  
 सेचयेच्च ततः शिष्यं शिवभक्तं च धार्मिकम्॥७५॥

बन्धनम् विधि प्रथमपूर्ण मंत्र द्वारा प्रधान का संपुटीकरण से अमृतीकरण अमृत के परिपूर्ण कर देना है। संहार के क्रम में कलाओं का वैभव से शान्त्यातीत शान्ति विद्या, अमला, प्रतिष्ठा और निवृत्ति है। कलाओं का यह संक्रमण तत्त्व, वर्ण, कला और मौन का अंग है। यथानिधि शंधि मंत्रों और पादों छन्दों के पादों द्वारा योनि बीज के द्वारा से पूर्ववत् विकसित करते हुये स्तुति की जानी चाहिये॥५९-६६॥ पूजा और संप्रोक्षण ताडन, हरण, संहत का संयोग, विक्षेप, क्रम के अनुसार किया जाना चाहिये। अर्चना, गर्भधारण और जनन और अभिचार की विधियों का विधान है। तत्पश्चात् भानु ज्ञान और उसका लय विशेष रूप से पूर्ण करना चाहिये। हे सुब्रत! योनि बीज के साथ प्रथम मंत्र ईशान का वर्णन पहले किया गया है। हे महामुनि! निःसन्देह उद्धार, प्रोक्षण और ताडन, अघोर मंत्र से आरम्भ करके फट् से अंत से किया जाना चाहिये। हे सुब्रत! प्रत्येक तत्त्व के सम्बन्ध में सब शेष मार्ग में यही प्रक्रिया होती है॥६७-७०॥ गुरु अपने भक्त को अपनी मुष्टि (मुट्ठी) तब तक उसकी मुष्टि से पकड़े हुये क्रिया करावे जब तक कि विषय तक पूरा न हो। यह निवृत्ति से विषय कलाओं तक की क्रिया शिव के पास एक ही स्थान पर हो। अन्यथा पृथक्-पृथक् स्थान पर होने से सम्पन्न नहीं होती है। हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! नाक के अग्रभाग में शिव के ऊपरी स्थान और पीठ पर योगी को दीक्षित भक्त को सुख-दुःख आदि द्वन्द्व को क्षमा करना चाहिये। ऐसी शिव की आज्ञा है॥७१-७२॥ संपत्र धार्मिक शिव भक्त शिष्य के ऊपर गुरु सोना, चाँदी ताँबे तथा अन्य तीर्थजल से भरे रल पड़े हुये बर्तन वस्त्र से ढके तागे से बंधे कुश से जल छिड़के अभिसिंचित करे। वह पवित्र जल संहिता मंत्र और रुद्राध्याय की स्तुति से प्रेरित हो। हे सुब्रत! दीक्षित शिवभक्त शिव के गुरु और अग्नि के आगे (उपस्थिति में) दीक्षा ग्रहण करे। गुरु की आज्ञा के साथ विधिपूर्वक दीक्षा ग्रहण

सोऽपि शिष्यः शिवस्याग्रे गुरोरग्रे च सादरम्। वह्नेश्च दीक्षां कुर्वति दीक्षितश्च तथाचरेत्॥७६॥  
वरं प्राणपरित्यागश्छेदनं शिरसोऽपि वा।  
न त्वनभ्यर्च्य भुंजीयाद्गवंतं सदाशिवम्॥७७॥

एवं दीक्षा प्रकर्तव्या पूजा चैव यथाक्रमम्। त्रिकालमेककालं वा पूजयेत्परमेश्वरम्॥७८॥  
अग्निहोत्रं च वेदाश्च यज्ञाश्च बहुदक्षिणाः। शिवलिंगार्चनस्यैते कलांशेनापि नो समाः॥७९॥  
सदा यजति यज्ञेन सदा दानं प्रयच्छति। सदा च वायुभक्षश्च सकृद्योऽभ्यर्चयेच्छिवम्॥८०॥  
एककालं द्विकालं वा त्रिकालं नित्यमेव वा। येऽर्चयंति महादेवं ते रुद्रा नात्र संशयः॥८१॥  
नारुद्रस्तु स्पृशेद्वुद्रं नारुद्रो रुद्रमर्चयेत्। नारुद्रः कीर्तयेद्वुद्रं नारुद्रो रुद्रमाप्नुयात्॥८२॥  
एवं संक्षेपतः प्रोक्तो ह्याधिकारिविधिक्रमः। शिवार्चनार्थं धर्मार्थकाममोक्षफलप्रदः॥८३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे दीक्षाविधिनामैक**

**विंशतितमोऽध्यायः॥२१॥**

करने के बाद भगवान् सदाशिव की पूजा अर्चना के बिना चाहे प्राण चला जाये, या सिर कट जाय भक्त को भोजन न करना चाहिये। इस प्रकार दीक्षा विधि और पूजा करनी चाहिये। परमेश्वर पूजा प्रत्येक दिन तीन बार, दो बार या कम से कम एक बार करनी चाहिये। ॥७३-७८॥ अभिषेक वैदिक मंत्रों का पाठ और बहुत धन की दान-दक्षिणा ये सब शिवलिंग की पूजा अर्चना के आधे भाग के बराबर नहीं हैं। ॥७९॥ यदि कोई एक बार भी शिव की पूजा करता है वह उस व्यक्ति के बराबर है जो कि सदा यज्ञ करता है। सदा दान देता है। सदा शुभ यज्ञ करता है। ॥८०॥ वे जो महेश्वर के एक बार, दो बार, तीन बार या निरन्तर से महादेव की पूजा करते हैं वे रुद्र हैं। इसमें सन्देह नहीं। ॥८१॥ रुद्र न तो अरुद्र को छुये, न उसकी पूजा करे और न तो उसका गुणगान करे। न अरुद्र के सम्पर्क में रहे। ॥८२॥

इस प्रकार शिव की पूजा के लिये जो व्यक्ति योग्य है और संबंधित दीक्षा विधि को संक्षेप में मैंने आपको बताया। यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को फलदायक है। ॥८३॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में दीक्षाविधि  
नामक इककीसवाँ अध्याय समाप्ता॥२१॥**



# द्वाविंशतितमोऽध्यायः

## तटवानाम् समर्पणम्

### शैलादिरुचाच

स्नानयागादिकर्मणि कृत्वा वै भास्करस्य च। शिवस्नानं ततः कुर्याद्दस्पस्नानं शिवार्चनम्॥१॥  
षष्ठेन मृदमादाय भत्त्या भूमौ न्यसेन्मृदम्। द्वितीयेन तथाभ्युक्ष्य तृतीयेन च शोधयेत्॥२॥  
चतुर्थेनैव विभजेन्मलमेकेन शोधयेत्। स्नात्वा पष्ठेन तच्छेषां मृदं हस्तगतां पुनः॥३॥

त्रिधा विभज्य सर्वं च चतुर्भिर्मध्यमं पुनः।

षष्ठेन सप्तवाराणि वामं मूलेन चालभेत्। दशवारं च पष्ठेन दिशो बंधः प्रकीर्तिः॥४॥  
वामेन तीर्थं सव्येन शरीरमनुलिप्य च। स्नात्वा सर्वैः स्मरन् भानुमभिषेकं समाचरेत्॥५॥  
शृंगेण पर्णपुटकैः पालाशेन दलेन वा। सौरैरेभिश्च विविधैः सर्वैसिद्धिकैः शुभैः॥६॥  
सौराणि च प्रवक्ष्यामि बाष्कलाद्यानि सुव्रता। अंगानि सर्वदेवेषु सारभूतानि सर्वतः॥७॥  
ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म।

नवाक्षरमयं मंत्रं बाष्कलं परिकीर्तितम्।

न क्षरतीति लोकानि ऋतमक्षरमुच्यते। सत्यमक्षरमित्युक्तं प्रणवादिनमोत्तकम्॥८॥

### बाईसवाँ अध्याय

## तटवों का समर्पण

शैलादि बोले

स्नान, यज्ञ आदि कर्मों को करके तथा सूर्य के अन्य पवित्र धर्मिक कृत्य को करके शिव स्नान और भस्म स्नान तथा शिव की पूजा करे॥१॥ छठवाँ बीज मन्त्र पढ़ते हुए कुछ मिट्टी लें और उसको भक्तिपूर्वक पृथ्वी पर रख दे॥२॥ द्वितीय बीज मन्त्र द्वारा उस मिट्टी पर जल छिड़के और तीसरे बीज मन्त्र को पढ़ते हुए उससे इसको पवित्र करे॥३॥ चौथे बीज मन्त्र को पढ़ते हुए उस मिट्टी को दो भागों में बाँटे। एक भाग का मल दूर करे। उसके बाद वह स्नान करे। छठवें बीज मन्त्र को पढ़ते हुए वह मिट्टी के बचे हुए भाग को हाथ में ले ले। उसको तीन भागों में बाँटकर बीच वाले भाग मिट्टी को चौथा बीज मन्त्र पढ़ते हुए मिट्टी को शरीर के मध्य भाग के ऊपर सात बार लगावे। मूल मन्त्र पढ़ते हुए बाँए बगल को छुए। षष्ठ बीज मन्त्र को दस बार पढ़ते हुए दिशाबन्ध करे॥४॥ मिट्टी को पवित्र जल से गीला करके शरीर के बाँए या दाहिने भाग पर चुपड़े। इस प्रकार करने के बाद सब बीज मन्त्रों को पढ़ते हुए सूर्य का स्मरण करते हुए स्नान करे। उसके बाद वह सींग से पत्तों के दोनों से या पलाश (छियूल) के दलों से शिव सम्बन्धी मन्त्रों को पूरा करे। वे मन्त्र सिद्धि देने वाले हैं॥५-६॥ हे सुव्रत! मैं सूर्य सम्बन्धी मन्त्रों को बताता हूँ। वे भास्कर और अन्य हैं जो कि सब वेदांगों से बने हैं। ॐ भूः

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ नमः सूर्याय खखोल्काय नमः॥१॥  
मूलमंत्रमिदं प्रोक्तं भास्करस्य महात्मनः। नवाक्षरेण दीप्तास्यं मूलमंत्रेण भास्करम्॥१०॥  
पूजयेदंगमंत्राणि कथयामि यथाक्रमम्। वेदादिभिः प्रभूताद्यां प्रणवेन च मध्यमम्॥११॥

ॐ भूः ब्रह्म हृदयाय ॐ भुवः विष्णुशिरसे ॐ स्वः रुद्रशिखायै

ॐ भूर्भुवः स्वः ज्वालामालिनीशिखायै ॐ महः महेश्वराय कवचाय

ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यः ॐ तपः तापकाय अस्त्राय फट्।

मंत्राणि कथितान्येवं सौराणि विविधानि च। एतैः शृंगादिभिः पात्रैः स्वात्मानमभिषेचयेत्॥१२॥  
ताप्रकुंभेन वा विप्रः क्षत्रियो वैश्य एव च। सकुशेन सपुष्येण मंत्रैः सर्वैः समाहितः॥१३॥  
रक्तवस्त्रपरीधानः स्वाचामेद्विधिपूर्वकम्। सूर्यश्चेति दिवा रात्रौ चामिनश्चेति द्विजोत्तमः॥१४॥  
आपः पुनंतु मध्याह्ने मंत्राचमनमुच्यते। षष्ठेन शुद्धिं कृत्वैव जपेदाद्यमनुत्तमम्॥१५॥  
वौषट्ठं तथा मूलं नवाक्षरमनुत्तमम्। करशाखां तथांगुष्ठमध्यमानामिकां न्यसेत्॥१६॥  
तले च तर्जन्यंगुष्ठं मुष्टिभागानि विन्यसेत्। नवाक्षरमयं देहं कृत्वांगैरपि पावितम्॥१७॥  
सूर्योऽहमिति संचिन्त्य मंत्रैरेतैर्यथाक्रमम्। वामहस्तगतैरद्विर्गाधसिद्धार्थकान्वितैः॥१८॥  
कुशपुंजेन चाभ्युक्ष्य मूलाग्रैरष्ट्था स्थितैः। आपो हिष्ठादिभिश्चैव शेषमाघ्राय वै जलम्॥१९॥

ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म। इस नौ अक्षरमय को बाष्कल कहते हैं। ऋत् शब्द का अर्थ अक्षर है। अक्षर का अर्थ नष्ट न होने वाला (अविनाशी)। ॐ आदि में और अन्त में नमः लगता है। महान् आत्मा सूर्य का मूल मन्त्र इस प्रकार है ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। हम सूर्य के उस श्रेष्ठ तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को शुद्ध करे। भक्त नौ मूल मन्त्रों के द्वारा दिव्य मुख वाले सूर्य की पूजा करे। मैं क्रम से कहता हूँ। ॐ लगाकर इनको पढ़ा जाता है। ॐ भूः ब्रह्म हृदयाय, ॐ भुवः विष्णुशिरसे ॐ स्वः रुद्रशिखायै ॐ भूर्भुवः स्वः ज्वालामालिनी शिखायै ॐ महः महेश्वराय कवचाय ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यः ॐ तपः तापकाय अस्त्राय फट्। सूर्य सम्बन्धी इन विविध मन्त्रों को मैंने कहा। इनको शृंग आदि पात्रों से इन मन्त्रों द्वारा अपने ऊपर जल छिड़के (अभिषेचन करे)॥१७-१२॥। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को ताँबे के पात्र में रक्खे जल—जिसमें फूल पड़े हों—इन मन्त्रों को पढ़ते हुए कुश से अपने शरीर पर जल छिड़के॥१३॥। हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! भक्त तब लाल वस्त्र धारण करके आचमन करे। दिन में ‘सूर्यश्च’ और रात में ‘अग्निश्च’ और दोपहर में ‘आपः पुनंतु’ मन्त्रों को पढ़ते हुए आचमन करें। इसको मन्त्र आचमन कहा जाता है। छठवें बीज मन्त्र से शुद्धि करके प्रथम बीज मन्त्र पढ़े॥१४-१५॥। तब उत्तम मूल मन्त्रों को वौषट् से अन्त करके पढ़े। तब वह अँगूठा सहित अँगुलियों से अंगन्यास करें॥१६॥। तब वह हथेली, तर्जनी, अँगूठा, करतल और करपृष्ठ का न्यास करे। उसके बाद नवाक्षर मन्त्रों और अंग मन्त्रों से देह को पवित्र करे। ‘मैं सूर्य हूँ’ ऐसा विचार करते हुए तब वह गंध, चन्दन और सफेद सरसों

वामनासापुटेनैव देहे संभावयेच्छिवम्। अर्ध्यमादाय देहस्थं सव्यनासापुटेन च॥२०॥  
कृष्णवर्णेन बाह्यस्थं भावयेच्च शिलागतम्। तर्पयेत्सर्वदेवेभ्य ऋषिभ्यश्च विशेषतः॥२१॥

भूतेभ्यश्च पितृभ्यश्च विधिनार्थं च दापयेत्।

व्यापिनीं च परां ज्योत्स्नां संध्यां सम्यगुपासयेत्॥२२॥

प्रातर्मध्याह्नसायाहे अर्ध्यं चैव निवेदयेत्। रक्तचंदनतोयेन हस्तमात्रेण मंडलम्॥२३॥  
सुवृत्तं कल्पयेद्दूमौ प्रार्थयेत द्विजोत्तमाः। प्राङ्मुखस्ताम्रपात्रं च सगंधं प्रस्थपूरितम्॥२४॥  
पूरयेदगंधतोयेन रक्तचंदनकेन च। रक्तपुष्पैस्तिलैश्चैव कुशाक्षतसमन्वितैः॥२५॥

दूर्वापामार्गगव्येन केवलेन घृतेन च।

आपूर्यं मूलमंत्रेण नवाक्षरमयेन च। जानुभ्यां धरणीं गत्वा देवदेवं नमस्य च॥२६॥  
कृत्वा शिरसि तत्पात्रमध्यं मूलेन दापयेत्। अश्वमेधायुतं कृत्वा यत्फलं परिकीर्तितम्॥२७॥  
तत्फलं लभते दत्त्वा सौराध्यं सर्वसंमतम्। दत्त्वैवाध्यं यजेद्दत्त्या देवदेवं त्रियंबकम्॥२८॥  
अथवा भास्करं चेष्टा आग्नेयं स्नानमाचरेत्। पूर्ववद्वै शिवस्नानं मंत्रमात्रेण भेदितम्॥२९॥  
दंतधावनपूर्वं च स्नानं सौरं च शांकरम्। विघ्नेशं वरुणं चैव गुरुं तीर्थं समर्चयेत्॥३०॥  
बद्ध्वा पद्मासनं तीर्थं तथा तीर्थं समर्चयेत्। तीर्थं संगृह्य विधिना पूजास्थानं प्रविश्य च॥३१॥  
मार्गेणाध्यपवित्रेण तदाक्रम्य च पादुकम्। पूर्ववत्करविन्यासं देहविन्यासमाचरेत्॥३२॥

पढ़े हुए जल को अपने बायें हाथ की हथेली में भरकर कुश के बंडल से यथाक्रम मंत्र पढ़ते हुए अपने शरीर पर जल छिड़कें ‘आपो हिष्ठा’ मंत्र को आठ बार पढ़ते हुए वैसा करे। बचे हुए जल को नाक के बायें छेद से सूंघे। तब वह ऐसी धारणा करे कि शिव बाहर शिला पर काले रंग में विराजमान हैं। उसके बाद देवों और ऋषिओं का तर्पण करे। १७-२१।। वह मण्डल में लाल चन्दन मिले हुए जल से अँजुली में भरकर सवेरे, दोपहर और सायंकाल अर्ध्य दे। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! वह पृथ्वी पर पूर्व की ओर एक गोल वृत्त खींचे और पूर्व की ओर मुख करके प्रार्थना करे। एक ताँबे के बर्तन में एक प्रस्थ सुगंधित जल, लाल चन्दन और सुगन्ध से लाल फूलों और तिलों, कुश और अक्षत से मिलाकर जल से भर दे। २२।। इसमें गोमूत्र, दूब, अपामार्ग या केवल धी मिला दे। भक्त घुटनों के बल जमीन पर बैठ कर देवताओं को नमस्कार करे। उस बक्त अपने सिर पर रख कर देवताओं को नमस्कार करे। उस पात्र को अपने सिर पर रख कर मूल मन्त्र को पढ़ते हुए अर्ध्य दे। उस भक्त को दश अश्वमेघ यज्ञ करके प्राप्त होने वाला जो फल है उसके बराबर फल प्राप्त होगा। अर्ध्य देने के बाद देवताओं के देवता त्रिनेत्रधारी शिव की भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। २३-२८।। सूर्य की पूजा करने के बाद अपने शरीर पर भस्म लगानी चाहिए। पहले कहे हुए मन्त्र से भिन्न मन्त्र द्वारा पूर्ववत् स्नान करना चाहिए। २९।। दातून करके सूर्य और शंकर स्नान करने के बाद भक्त गणेश वरुण और गुरु की पवित्र जल में पूजा करे। वह तीर्थ के किनारे पद्मासन में बैठे और तीर्थ की पूजा करे। वह एक पात्र में पवित्र जल ले ले और पूजा स्थल की ओर प्रवेश करे। वह पूजा स्थल में जाकर अपने पैर में खड़ाऊँ पहनकर अर्ध्य के जल से मार्ग को पवित्र करे।

अर्ध्यस्य सादनं चैव समासात्परिकीर्तितम्। बद्ध्वा पद्मासनं योगी प्राणायामं समभ्यसेत्॥३३॥  
रक्तपुष्पाणि संगृह्य कमलाद्यानि भावयेत्। आत्मनो दक्षिणे स्थाप्य जलभांडं च वामतः॥३४॥  
ताम्रपात्राणि सौराणि सर्वकामार्थसिद्ध्ये। अर्ध्यपात्रं समादाय प्रक्षाल्य च यथाविधि॥३५॥  
पूर्वोक्तेनांबुना सार्धं जलभांडे तथैव च। अस्त्रोदकेन चैवार्ध्यमध्यद्रव्यसमन्वितम्॥३६॥  
संहितामन्त्रितं कृत्वा संपूज्य प्रथमेन च। तुरीयेणावगुण्ठैव स्थापयेदात्मनोपरि॥३७॥

पाद्यमाचमनीयं च गंधपुष्पसमन्वितम्।

अंभसा शोधिते पात्रे स्थापयेत्पूर्ववत्पृथक्। संहितां चैव विन्यस्य कवचेनावगुण्ठ्य च॥३८॥  
अर्ध्याबुना समभ्युक्ष्य द्रव्याणि च विशेषतः। आदित्यं च जपेदेवं सर्वदेवनमस्कृतम्॥३९॥  
आदित्यो वै तेज ऊर्जा बलं यशो विवर्धति। इत्यादिना नमस्कृत्य कल्पयेदासनं प्रभोः॥४०॥  
प्रभूतं विमलं सारमाराध्यं परमं सुखम्। आग्नेय्यादिषु कोणेषु मध्यमांतं हृदा न्यसेत्॥४१॥  
अंगं प्रविन्यसेच्चैव बीजमंकुरमेव च। नालं सुषिरसंयुक्तं सूत्रकंटकसंयुतम्॥४२॥  
दलं दलाग्रं सुश्वेतं हेमाभं रक्तमेव च। कर्णिकाकेसरोपेतं दीपाद्यैः शक्तिभिर्वृतम्॥४३॥  
दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला क्रमात्। अघोरा विकृता चैव दीप्ताद्याश्वाष्टशक्तयः॥४४॥

वह पूर्ववत् करन्यास और अंगन्यास करे। ॥३०-३२॥ इस प्रकार अर्ध्य की सामग्री और विधि संक्षेप में कही है। इसके बाद योगी पद्मासन में बैठे और प्राणायाम करे। ॥३३॥ वह कमल तथा अन्य लाल फूलों को एकत्र करे और अपने दाहिनी ओर रखे। वह जल पात्र को अपने बायीं ओर रखे। ताँबे के पात्र सूर्य की पूजा के लिए पवित्र माने जाते हैं। वे सब कामनाओं की सिद्धिदायक हैं, इस अर्ध्य के पात्र को लेकर विधिपूर्वक माँज-धोकर रखना चाहिये। उसे बड़े बर्तन में जल को भर ले। अर्ध्य जल में अर्ध्य के लिए अपेक्षित सामग्री को डाल दे। अष्ट मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके रखे जल के साथ इस अर्ध्य पात्र को रख लेना चाहिये। यह संहिता मन्त्र से मन्त्रित करके और प्रथम बीज मन्त्र से युक्त हो। चतुर्थ बीज मन्त्र को पढ़ते हुए भक्त पात्र के मुख को ढक दे और वहाँ रख दे। ॥४४-४७॥ जल से शोभित पात्र में पूर्ववत् पाद्य और आचमनीय (पैर धोने और आचमन करने के लिए) जल से शुद्ध किये हुए अलग-अलग पात्रों में रख देना चाहिए। पात्र और आचमनीय जल में सुगम्भित पुष्प पड़े हों। संहिता मन्त्रों से न्यस करके और कवच मन्त्र से इसको सम्पुट करके अर्ध्य जल के साथ पूजा की सामग्री को जल छिड़ककर सब देवताओं द्वारा नमस्कृत सूर्य देव का जप करना चाहिये। ॥४८-४९॥ सूर्य देवता तेज, ऊर्जा, बल और यश को बढ़ाते हैं। इस मन्त्र को दोहराते हुए सूर्य की ओर उनको नमस्कार करके एकासन दे। ॥४०॥ सूर्य को दिया गया आसन उत्तम हो, स्वच्छ हो, सुदृढ़ हो और सुखदायक तथा आराध्य देव के लिए सर्वथा उपयुक्त हो। अग्नि आदि कोणों में बीच की उँगली से हृदयन्यास करे और करन्यास, अंगन्यास करे। ॥४१॥ कमल के भागों को (बीज अंकुर नाल आदि) काँटों सहित सूत्र सुषिर जो रंग में बहुत सफेद, सुनहरे, या लाल हो कर्णिका के केसर से युक्त हो। वह दीप्त हो और शक्ति से युक्त, दीपा और अन्य शक्तियों से घिरा हुआ हो। ॥४२-४३॥ दीप्ता, सुषमा, जया, भद्रा, विभूति विमला, अघोरा और विकृता ये आठ शक्तियाँ

भास्कराभिमुखाः सर्वाः कृतांजलिपुटाः शुभाः।

अथवा पद्महस्ता वा सर्वाभरणभूषिताः॥४५॥

मध्यतो वरदां देवीं स्थापयेत्सर्वतोमुखीम्। आवाहयेत्ततो देवीं भास्करं परमेश्वरम्॥४६॥  
नवाक्षरेण मंत्रेण बाष्कलोक्तेन भास्करम्। आवाहने च सान्त्रिध्यमनेनैव विधीयते॥४७॥  
मुद्रा च पद्ममुद्राख्या भास्करस्य महात्मनः। मूलेनार्घ्यं ततो दद्यात्पाद्यमाचमनं पृथक्॥४८॥  
पुनरर्घ्यप्रदानेन बाष्कलेन यथाविधि। रक्तपद्मानि पुष्पाणि रक्तचंदनमेव च॥४९॥  
दीपधूपादिनैवेद्यं मुखवासादिरेव च। तांबूलवर्तिदीपाद्यं बाष्कलेन विधीयते॥५०॥  
आग्नेय्यां च तथैशान्यां नैऋत्यं वायुगोचरे। पूर्वस्यां पश्चिमे चैव पट्प्रकारं विधीयते॥५१॥  
नेत्रांतं विधिनाऽभ्यर्घ्यं प्रणवादिनमोत्कम्। कर्णिकायां प्रविन्यस्य रूपकध्यानमचारेत्॥५२॥  
सर्वे विद्युत्प्रभाः शांता रौद्रमस्त्रं प्रकीर्तितम्। दंष्ट्राकरालवदनं ह्यष्टमूर्ति भयंकरम्॥५३॥  
वरदं दक्षिणं हस्तं वामं पद्मविभूषितम्। सर्वाभरणसंपन्ना रक्तस्वगनुलेपनाः॥५४॥  
रक्तांबरधराः सर्वा मूर्तयस्तस्य संस्थिताः। समंडलो महादेवः सिंदूरारुणविग्रहः॥५५॥  
पद्महस्तोऽमृतास्यश्च द्विहस्तनयनः प्रभुः। रक्ताभरणसंयुक्तो रक्तस्वगनुलेपनः॥५६॥  
इत्थरूपधरं ध्यायेद्वास्करं भुवनेश्वरम्। पद्मबाह्ये शुभं चात्र मंडलेषु समंततः॥५७॥

होती हैं॥४४॥ हाथ जोड़े हुए ये सब शक्तियाँ सूर्य की ओर मुख किये हों अथवा हाथ में कमल लिए सब आभूषणों से विभूषित हों॥४५॥ वर देने वाली सर्वतोमुखी देवी को मध्य में स्थापित करे। उसके बाद परमेश्वर भास्कर को तथा देवी का आवाहन करे॥४६॥ नवाक्षर मन्त्र (बाष्कल के रूप में कथित) को दोहराते हुए सूर्य का आहान करे। केवल इसी मन्त्र के द्वारा आहान और सान्त्रिध्य होता है॥४७॥ महान् आत्मा शिव की मुद्रा पद्म मुद्रा कहलाती है। उसके बाद अर्घ्य, पाद्य और आचमन मूल मन्त्र को पढ़ते हुए देना चाहिये॥४८॥ भास्कर मन्त्र को पढ़ते हुए पुनः अर्घ्य यथाविधि द्वारा देना चाहिये। लाल फूलों और लाल चन्दन भी भेंट किया जाय। दीप, धूप, नैवेद्य, मुखवास, ताम्बूल, बत्ती का दीपक आदि बाष्कल (भास्कर) मन्त्र को पढ़ते हुए दी जाय। अग्नि कोण, ईशान कोण, नैऋत्य, वायव्य कोण पूर्व और पश्चिम ये छः ओर धूप दीप आदि किया जाय॥४९-५०॥ प्रणव (ओम्) लगाकर और नमः अन्त में बोलकर मन्त्रों को पढ़ते हुए अंगन्यास और करन्यास करके और कर्णिका में (आँख, पुतली में) सूर्य के रूप का ध्यान करे॥५१-५२॥ सब मूर्तियाँ विद्युत की प्रभा वाली और शान्त हैं। सब मूर्ति भयंकर हैं यह टेढ़े दाँतों वाली अतः भयंकर मुख वाली हैं॥५३॥ दाहिना हाथ वरदान देने का प्रतीक दिखलाता है। बाएँ हाथ कमल से सुशोभित हैं। सब मूर्तियाँ सब प्रकार के आभूषणों से सजी हुई लाल मालाएँ और लाल वस्त्र पहने हुए और अपने शरीर पर लाल चन्दन लपेटे हुए हैं। इस प्रकार रूप धारण किये हुए भुवनेश्वर सूर्य का ध्यान करना चाहिये। महादेव अपने अनुचरों की मण्डली के साथ हैं। उनका शरीर सिन्दूर के समान रंग में है। वह अपने हाथ में कमल लिए हुये हैं। उनके मुख से अमृत निकल रहा है। उनके दो हाथ और दो नेत्र हैं। वे लाल आभूषण को धारण किये हैं। वे लाल मालाएँ पहने हैं

सोममंगारकं चैव बुधं बुद्धिमतांवरम्। बृहस्पतिं महाबुद्धिं रुद्रपुत्रं च भार्गवम्॥५८॥  
शनैश्चरं तथा राहुं केतुं धूमं प्रकीर्तितम्। सर्वे द्विनेत्रा द्विभुजा राहुश्चोर्ध्वशरीरधृक्॥५९॥  
विवृत्तास्योंजलिं कृत्वा भृकुटीकुटिलेक्षणः। शनैश्चरश्च दंष्ट्रास्यो वरदाभयहस्तधृक्॥६०॥  
स्वैःस्वैर्भावैः स्वनाम्ना च प्रणवादिनमोत्कम्। पूजनीयाः प्रयत्नेन धर्मकामार्थसिद्धये॥६१॥  
सप्तसप्तगणांश्चैव बहिर्देवस्य पूजयेत्। ऋषयो देवगंधर्वाः पञ्चगाप्सरसां गणाः॥६२॥

ग्रामण्यो यातुधानाश्च तथा यक्षाश्च मुख्यतः।

सप्ताश्वान् पूजयेदग्रे सप्तच्छंदोमयान् विभोः॥६३॥

बालखिल्यगणं चैव निर्माल्यग्रहणं विभोः। पूजयेदासनं मूर्तेदिवतामपि पूजयेत्॥६४॥  
अर्ध्यं च दापयेत्तेषां पृथगेव विधानतः। आवाहने च पूजांते तेषामुद्घासने तथा॥६५॥  
सहस्रं वा तदर्थं वा शतमष्टोत्तरं तु वा। बाष्कलं च जपेदग्रे दशांशेन च योजयेत्॥६६॥  
कुंडं च पश्चिमे कुर्याद्विरुद्धुलं चैव मेखलम्। चतुर्गुलमानेन चोत्सेधाद्विस्तरादपि॥६७॥  
एकहस्तप्रमाणेन नित्ये नैमित्तिके तथा। कृत्वाशृत्यदलाकारं नाभिं कुंडे दशांगुलम्॥६८॥  
तदर्थेन पुरस्तात्तु गजोष्ठसदृशं स्मृतम्। गलमेकांगुलं चैव शेषं द्विगुणविस्तरम्॥६९॥  
तत्प्रमाणेन कुंडस्य त्यक्त्वा कुर्वीत मेखलाम्। यत्नेन साधयित्वैव पश्चाद्दोमं च कारयेत्॥७०॥

और लाल चन्दन लगाए हैं॥५४-५६॥ लोकों के स्वामी सूर्य का ध्यान इस रूप में करें। मण्डल में कमल के बाहर की ओर वह चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु के साथ विराजमान हैं। इन सबके दो नेत्र और दो हाथ हैं किन्तु राहु केवल शरीर के ऊपरी भाग धड़ को धारण किए हैं। उसका चेहरा गोला है। मुँह खुला हुआ है। अँजुली बाँधे हुये हैं। शनिश्चर दृष्टि वाले के मुख में वक्र दन्तावली है। टेढ़ी भृकुटि और कुटिल दृष्टि वाले शनिदेव के हाथ भय से मुक्त और वरदान देने का संकेत करते हैं। धर्म, काम और अर्थ की सिद्धि के लिए इनके स्वभाव उनके नामों के अनुसार ओम् आदि में नमः अन्त में लगाकर यत्नपूर्वक उनकी पूजा की जानी चाहिये। उनकी पूजा उनके स्वभाव के अनुसार की जाय॥५७-६१॥ भक्त को मण्डल के बाहर गणों के सात समूह (गणों), मुनियों, देवताओं, गन्धर्वों, सर्पों, अप्सराओं, ग्रामणियों, यातुधानों और प्रधान यक्षों की पूजा करनी चाहिए। भक्त को वेद के सात छन्दों द्वारा सूर्य के सात घोड़ों की पूजा करनी चाहिए॥६२-६३॥ बालखिल्य गण की पूजा की जाय। तब विभु का निर्माल्य ग्रहण करे। उसके बाद मूर्ति के आसन को और देवता की भी पूजा करे॥६४॥ देवताओं के आह्वान, पूजा के अन्त में धार्मिक कृत्य के विसर्जन के समय विधान के अनुसार उनको अर्ध्य दिया जाना चाहिए॥६५॥ तत्पश्चात् भास्कर मन्त्रों का हजार बार जप करे या पाँच सौ बार या एक सौ आठ बार। उसके बाद जप की संख्या का दसवाँ भाग से हवन करे॥६६॥ गोलाकार हवन कुंड पश्चिम दिशा में खोदना चाहिए। उसके चारों ओर मेखला भी हो। कुंड की लम्बाई और चौड़ाई चार अंगुल हो॥६७॥ नित्य और नैमित्तिक कृत्यों में कुंड का बाहरी ढाई मीटर एक हाथ विस्तार में हो। कुंड में पीपल के पत्ते के आकार की दश अंगुल की नाभि करे॥६८॥ गला की लम्बाई पाँच अंगुल और चौड़ाई एक अंगुल हो।

षष्ठेनोल्लेखनं कुर्यात्प्रोक्षयेद्वारिणा पुनः। आसनं कल्पयेन्मध्ये प्रथमेन समाहितः॥७१॥  
 प्रभावतीं ततः शक्तिमाद्येनैव तु विन्यसेत्। बाष्कलेनैव संपूज्य गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥७२॥  
 बाष्कलेनैव मंत्रेण क्रियां प्रति यजेत्पृथक्। मूलमंत्रेण विधिना पश्चात्पूर्णाहुतिर्भवेत्॥७३॥  
 क्रमादेवं विधानेन सूर्याग्निर्जनितो भवेत्। पूर्वोक्तेन विधानेन प्रागुक्तं कमलं न्यसेत्॥७४॥  
 मुखोपरि समभ्यर्च्य पूर्ववद्वास्करं प्रभुम्। दशैवाहुतयो देया बाष्कलेन महामुने॥७५॥  
 अंगानां च तथैकैकं संहिताभिः पृथक्पुनः। जयादिस्विष्टपर्यतमिध्मप्रक्षेपमेव च॥७६॥  
 सामान्यं सर्वमार्गेषु पारंपर्यक्रमेण च। निवेद्य देवदेवाय भास्करायामितात्मने॥७७॥  
 पूजाहोमादिकं सर्वं दत्त्वाध्यं च प्रदक्षिणम्। अंगैः संपूज्य संक्षिप्य हृद्युद्वास्य नमस्य च॥७८॥  
 शिवपूजां ततः कुर्याद्वर्मकामार्थसिद्धये। एवं संक्षेपतः प्रोक्तं यजनं भास्करस्य च॥७९॥  
 यः सकृद्वा यजेदेवं देवदेवं जगद्गुरुम्। भास्करं परमात्मानं स याति परमां गतिम्॥८०॥  
 सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वपापविवर्जितः। सर्वैश्वर्यसमोपेतस्तेजसाप्रतिमश्च सः॥८१॥  
 पुत्रपौत्रादिमित्रैश्च बांधवैश्च समंततः।  
 भुक्त्वैव विपुलान् भोगानिहैव धनधान्यवान्॥८२॥

यह हाथी के ओठ के आकार का हो। शेष भाग चौड़ाई में दो अंगुल हो॥६९॥ कुंड की मेखला (बाहरी घेरा) दो अंगुल का हाशिया (मार्जिन) छोड़कर बनाया जाय। यह सब यत्नपूर्वक पूरा करके उसके बाद हवन करना चाहिये॥७०॥ भक्त को उल्लेख कृत्य पूरा करना चाहिये। छठवाँ बीज मन्त्र पढ़ते हुए इसको जल से छिड़कना (सीचना) चाहिये। एकाग्रचित्त होकर प्रथम बीज मन्त्र पढ़ते हुए मध्य में आसन देना चाहिये॥७१-७२॥ उसके बाद प्रथम बीज मन्त्र को पढ़ते हुऐ प्रभावती नामक शक्ति का न्यास करना चाहिये। उसके बाद बाष्कल (भास्कर) मन्त्र को पढ़ते हुए गंध, पुष्प आदि से पूजा करके फिर भास्कर मन्त्र को पढ़ते हुए क्रिया यज्ञ को पूरा करे। उसके बाद केवल मूल मन्त्र से पूर्णाहुति करे॥७३-७४॥ इस प्रकार विधि विधान के क्रम से होमादि करने के बाद सूर्याग्नि उत्पादित हो। भक्त न्यास करके पूर्वोक्त (पहले कही गई) विधान से पूर्वोक्त विधि से कमल को स्थापित करे। मुख के ऊपर सूर्य की पूर्ववत् पूजा करने के बाद भास्कर मन्त्रों से दस आहुति दी जाय॥७५-७६॥ सब होमों में ‘जया’ होम से प्रारम्भ करते हुए तथा ‘स्विष्ट’ होम पर्यन्त प्रत्येक के लिए अलग अंगन्यास संहिता मन्त्रों द्वारा करे। पूजा करने वालों के सब सम्प्रदायों ‘मार्गे’ के लिए परम्परा के रूप में अर्घ्य देना सामान्य नियम है। अमित आत्मा देवों के स्वामी भगवान् सूर्य को अन्त में नैवेद्य (भोजन) देना चाहिए। पूज, होम, अर्घ्य, अंगों की पूजा, विसर्जन और नमस्कार ये सब करने के बाद धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि के लिए शिव की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार सूर्य देव की पूजा विधि संक्षेप में कही गयी है॥७७-७९॥ वह जो कि एक बार भी पूजा करता है वह परमगति (मुक्ति) को प्राप्त करता है॥८०॥ वह पापों से मुक्त हो जाता है, सब पापों से रहित होता है, वह सब ऐश्वर्य से युक्त होता है, वह अनुपम तेजस्वी होता है। वह इस संसार में अपने पुत्रों, पौत्रों और प्रपात्रों और बान्धवों सहित विपुल भोगों को भोग करता है। वह धनवान्, धान्यवान् होता है॥८१-८२॥ यान

यानवाहनसंपन्नो भूषणैर्विविधैरपि। कालं गतोपि सूर्येण मोदते कालमक्षयम्॥८३॥  
 पुनस्तस्मादिहागत्य राजा भवति धार्मिकः। वेदवेदांगसम्पन्नो ब्राह्मणो वात्र जायते॥८४॥  
 पुनः प्राग्वासनायोगाद्वार्मिको वेदपारगः। सूर्यमेव समभ्यच्च सूर्यसायुज्यमाप्नुयात्॥८५॥  
**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्वाविंशतिमोडध्यायः॥२२॥**

और वाहन से और अनेक प्रकार के आभूषणों से युक्त होगा। वह मरने पर सूर्य के साथ अक्षय काल तक वास करेगा॥८३॥ फिर वह इस लोक में जन्म लेकर धर्मिक राजा होगा। वह वेदों और वेदांगों से सम्पन्न ब्राह्मण का जन्म पायेगा। वह अपने पूर्व जन्म के वासना के योग से धार्मिक और वेदों का महान् विद्वान् होगा। सूर्य देव की पूजा करके वह सूर्य का सायुज्य प्राप्त करेगा॥८४-८५॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तत्त्वों का समर्पण  
 नामक बाईसवाँ अध्याय समाप्त॥२२॥



## त्रयोविंशतिमोऽध्यायः शिवस्त्य पूजाविधिः शैलादिरुवाच

अथ ते संप्रवक्ष्यामि शिवार्चनमनुत्तमम्। त्रिसंध्यमर्चयेदीशमग्निकार्यं च शक्तिः॥१॥  
शिवस्नानं पुरा कृत्वा तत्त्वशुद्धिं च पूर्ववत्। पुष्पहस्तः प्रविश्याथ पूजास्थानं समाहितः॥२॥  
प्राणायामत्रयं कृत्वा दाहनाप्लावनानि च। गंधादिवासितकरो महामुद्रां प्रविन्यसेत्॥३॥  
विज्ञानेन तनुं कृत्वा ब्रह्माग्नेरपि यत्नतः। अव्यक्तबुद्ध्यहंकारतन्मात्रासंभवां तनुम्॥४॥  
शिवामृतेन संपूतं शिवस्य च यथातथम्। अधोनिष्ठ्या वितस्त्यां तु नाभ्यामुपरि तिष्ठति॥५॥  
हृदयं तद्विजानीयाद्विश्वस्यायतनं महत्। हृत्पद्मकण्ठिकायां तु देवं साक्षात्सदाशिवम्॥६॥  
पंचवक्त्रं दशभुजं सर्वाभरणभूषितम्। प्रतिवक्त्रं त्रिनेत्रं च शशांककृतशेखरम्॥७॥  
बद्धपद्मासनासीनं शुद्धस्फटिकसन्निभम्। ऊर्ध्ववक्त्रं सितं ध्यायेत्पूर्वं कुंकुमसन्निभम्॥८॥  
नीलाभं दक्षिणं वक्त्रमतिरक्तं तथोत्तरम्। गोक्षीरधवलं दिव्यं पश्चिमं परमेष्ठिनः॥९॥  
शूलं परशुखङ्गं च वज्रं शक्तिं च दक्षिणो। वामे पाशांकुशं घंटां नागं नाराचमुत्तमम्॥१०॥

## तईसवाँ अध्याय शिव की पूजा की विधि

शैलादि बोले

अब आगे मैं शिव की अनुपम पूजा विधि (शिवार्चन) को कहता हूँ। अपनी शक्ति के अनुसार त्रिकाल संध्या और अग्नि कार्य करके इश शिव की पूजा करनी चाहिए॥१॥ भक्त शिव स्नान को और तत्त्व सिद्धि को करे। वह एकाग्रचित्त और शुद्ध मन से हाथ में फूलों को लेकर पूजा स्थल में प्रवेश करे। वह तीन बार प्राणायाम करे और दाहन और आप्लावन कृत्य करे। गन्थ से सुगन्थित हाथ से वह महामुद्रा का न्यास कृत्य पूरा करे॥२-३॥ ब्रह्म अग्नि, शिव ज्ञान और तन्मात्रा से उत्पन्न अपने शरीर अव्यक्त, बुद्धि, अहंकार और तन्मात्रा से उत्पन्न अपने शरीर को पूर्ण ज्ञान द्वारा शुद्ध करे। नाभि के नीचे बारह अंगुल पर स्थित है, यह विश्व का महान् आयतन है। भक्त इसको बड़ा निवास के रूप में पहचाने, वह हृदय कमल में स्थित सदाशिव का निम्नलिखित रूप में ध्यान करे। उनके पाँच मुख, दस भुजाएँ, प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं। वे सब आभूषणों से युक्त हैं। उनके मस्तक पर अर्धचन्द्र विराजमान है, वे कमलासन पर पद्मासन बाँधकर बैठे हैं। वे शुद्ध स्फटिक के समान हैं उनका ऊपरी मुख श्वेत है। वह कुमकुम के समान है और पूर्वामुख नीलाभ है॥४-८॥ दाहिना मुख नीले रंग का है, उनका मुख बहुत लाल है और पश्चिम मुख गाय के दूध के समान सफेद है॥९॥ उनके दाहिने त्रिशूल, फरसा, ब्रज

वरदाभयहस्तं वा शेषं पूर्ववदेव तु। सर्वाभरणसंयुक्तं चित्रांबरधरं शिवम्॥११॥  
ब्रह्मांगविग्रहं देवं सर्वदेवोत्तमोत्तमम्। पूजयेत्सर्वभावेन ब्रह्मांगैर्ब्रह्मणः पतिम्॥१२॥  
उत्तानि पञ्च ब्रह्माणि शिवांगानि शृणुष्व मे। शक्ति भूतानि च तथा हृदयादीनि सुव्रता॥१३॥

ॐ ईशानः सर्वविद्यानां हृदयाय शक्तिर्बीजाय नमः।

ॐ ईश्वरः सर्वभूतानामपृताय शिरसे नमः॥१४॥

ॐ ब्रह्माधिपतये कालाग्निरूपाय शिखायै नमः।

ॐ ब्रह्मणोधिपतये कालचंडमारुताय कवचाय नमः॥१५॥

ॐ ब्रह्मणे बृहणाय ज्ञानमूर्तये नेत्राय नमः।

ॐ शिवाय सदाशिवाय पाशुपतास्त्राय अप्रतिहताय फट्-फट्॥१६॥

ॐ सद्योजाताय भवेभवेनातिभवे भवस्य मां भवोद्भवाय शिवमूर्तये नमः।

ॐ हंसशिखाय विद्यादेहाय आत्मस्वरूपाय परापराय शिवाय शिवतमाय नमः॥१७॥

कथितानि शिवांगानि मूर्तिविद्या च तस्य वै। ब्रह्मांगमूर्तिं विद्यांगसहितां शिवशासने॥१८॥

सौराणि च प्रवक्ष्यामि बाष्कलाद्यानि सुव्रता। अंगानि सर्ववेदेषु सारभूतानि सुव्रता॥१९॥

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म।

और शक्ति है। बाँए हाथ में पाश, अंकुश, धण्टा और बाण है। उनके हाथ भय से मुक्त और वर देने का संकेत करते हैं। शेष पूर्ववत् है। वह विविध प्रकार के आभूषणों को धारण किये हुए हैं। विविध रंग की पोशाक को पहने हुए हैं। वह भक्त उस शिव की पूजा करे जिसका रूप वेदांग है, वह सब उत्तम देवों में उत्तम हैं जो ब्रह्मा के भी स्वामी हैं। ऐसे शिव की सब भाव से पूजा करनी चाहिए॥१०-१२॥ पञ्च ब्रह्म को मैंने पहले ही कहा था। अब शिवांगों को मुझसे सुनिए। हृदय आदि को भी सुनो जो कि शक्तियाँ हैं॥ ओम् सब विद्याओं का स्वामी ईशान है। शक्ति बीज को नमस्कार, सब प्राणियों का स्वामी ओम् ईश्वर है उनको नमस्कार। अमृत को धारण किये हुए, ब्रह्मा के अधिपति कालाग्नि रूप शिखा के लिए नमस्कार, ओम् कवच ब्रह्मा के अधिपति के लिए नमस्कार, काल वायु के लिए नमस्कार, ओम् नेत्र को नमस्कार, ब्रह्मा को नमस्कार, बृहण ज्ञान मूर्ति नेत्र के लिए नमस्कार, ओम् शिव, सदाशिव, पाशुपत अस्त्रधारी, अप्रतिहत के लिए फट्-फट्। सद्योजात ओम् भव, भवेन, अतिभव मुझको भवोद्भव शिवमूर्ति को नमस्कार, हंसशिख को, विद्या देह को नमस्कार। आत्मास्वरूप पर, अपर शिव, शिवतम के लिए नमस्कार, जब मुझपर कोई सांसारिक आक्रमण हो तो मेरी रक्षा करो। शिव के उस रूप को नमस्कार जो पूर्ण सृष्टि के उत्पत्ति का स्रोत है। शिव के अंगों का वर्णन मैंने किया। उनकी मूर्तिं विद्या जो कि वेदों के अंग हैं, वह भी शिव के शासन में है। हे सुव्रत! बाष्कल आदि सम्बन्धित मन्त्रों को कहूँगा। अंगों को जो सब वेदों के सार रूप हैं। ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म। इस नवाक्षर मन्त्र को बाष्कल कहते हैं। यह अक्षर कहा जाता है क्योंकि जगत में यह नष्ट नहीं होता। सत्यम् को अक्षर कहा गया है। इसके पहिले प्रणव (ॐ) लगता है। (ॐ सत्यम्) और अन्त में नमः लगता

नवाक्षरमयं मंत्रं बाष्कलं परिकीर्तितम्।

न क्षरतीति लोकेऽस्मिंस्ततो ह्यक्षरमुच्यते। सत्यमक्षरमित्युक्तं प्रणवादिनमोत्तकम्॥२०॥

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरीण्यं भर्गो देवस्य धीमहिः॥

थियो यो नः प्रयोदयात् नमः सूर्याय खखोल्काय नमः॥२१॥  
मूलमंत्रमिति प्रोक्तं भास्करस्य महात्मनः। नवाक्षरेण दीप्ताद्या मूलमंत्रेण भास्करम्॥२२॥  
पूजयेदंगमंत्राणि कथयामि समासतः। वेदादिभिः प्रभूताद्यं प्रणवेन तु मध्यमम्॥२३॥

ॐ महः महेश्वराय कवचाय नमः। ॐ भुवः विष्णवे शिरसे नमः॥

ॐ स्वः रुद्राय शिखायै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः

ज्वालामालिन्यै देवाय नमः ॐ महः महेश्वराय कवचाय नमः।

ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यो नमः। ॐ तपस्तापनाय अस्त्राय नमः॥

एवं प्रसंगादेवेह सौराणि कथितानि ह। शैवानि च समासेन न्यासयोगेन सुब्रता॥२४॥  
इत्थं मंत्रमयं देवं पूजयेद्ददयांबुजे। नाभौ होमं तु कर्तव्यं जनयित्वा यथाक्रमम्॥२५॥  
मनसा सर्वकार्याणि शिवाग्नौ देवमीश्वरम्। पञ्चब्रह्मांगसंभूतं शिवमूर्ति सदाशिवम्॥२६॥  
रक्तपद्मासनासीनं सकलीकृत्य यत्नतः। मूलेन मूर्तिमंत्रेण ब्रह्मांगाद्यैस्तु सुब्रता॥२७॥  
समिदाज्याहुतीर्हुत्वा मनसा चंद्रमंडलात्। चंद्रस्थानात्समुत्पन्नां पूर्णधारामनुस्मरेत्॥२८॥

है। ॐ सत्यम् नमः॥१३-२०॥ ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरीण्यं भर्गो देवस्य धीमहि थियो यो नः प्रचोदयात्। हम सूर्य के उस उत्तम तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को (सन्मार्ग की ओर जाने को) प्रेरित करे। आकाश में महत्तम ग्रह सूर्य को नमस्कार। २१। इस प्रकार महान् आत्मा भास्कर के मूल मन्त्र को मैंने कहा। भक्त मूल मन्त्र के साथ नवाक्षर मन्त्र सहित दीप्ता आदि तथा अन्य शक्तियों की पूजा नवाक्षर मंत्रों से और सूर्य की पूजा मूल मंत्रों से करे। अब मैं संक्षेप में अङ्ग मन्त्रों को कहता हूँ। उनमें का प्रथम अधिकांश वैदिक मन्त्रों से आवृत है और मध्यम (बीच का) प्रणव से युक्त है। ॐ भूः नमः हृदय को, ब्रह्मा को, ॐ भुवः नमः शिर को, विष्णु को ॐ स्वः नमः शिखा को, रुद्र को, ॐ भूर्भुवः स्वः नमः ज्वालामाला को, ॐ महः कवच को, महेश्वर को, ॐ जनः नमः नेत्रों को, शिव को, ॐ तपः नमः तापन को, अस्त्र को। इस प्रकार प्रसंग वश यहाँ सूर्य से सम्बन्धित मन्त्रों को मैंने बताया। हे सुब्रत! शिव के सम्बन्धित न्यास विधि के संक्षेप में वर्णन किया गया है। २२-२४। इस प्रकार हृदय कमल में स्थित सूर्य देव की मन्त्रों से पूजा करे। यथाक्रम मन से शिवाग्नि में होम करना चाहिये। सब पवित्र कृत्य शिवाग्नि से पूर्ण किया जाय। शिव का ध्यान करें। वह पञ्च ब्रह्म के अंगों से उत्पन्न लाल कमल शिव की मूर्ति विराजमान है। वह सकल के रूप में परिवर्तित है। हे सुब्रत! मूल मन्त्रों और वेदांग मन्त्रों से मूर्ति पर ध्यान केन्द्रित किया जाय। समिधा और धी से मनसा होम किया जाय। तब भक्त चन्द्र मण्डल से चन्द्र स्थल उत्पन्न पूर्णधारा (अमृत धारा) का स्मरण करे। शिवासन में पूर्णाहुति के बाद शिव को प्राण रक्षक के रूप में मानकर शिव शंकर का ध्यान करे। उसके बाद वह ललाट में या भौंहों के बीच में भक्त पुनः

पूर्णाहुतिविधानेन ज्ञानिनां शिवशासने। शिवं वक्त्रगतं ध्यायेत्तेजोमात्रं च शांकरम्॥२९॥  
ललाटे देवदैवेशं भूमध्ये वा स्मरेत्पुनः। यच्च हृत्कमले सर्वं समाप्य विधिविस्तरम्॥३०॥  
शुद्धदीपशिखाकारं भावयेदभवनाशनम्। लिंगे च पूजयेद्देवं स्थांडिले वा सदाशिवम्॥३१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे ब्रयोविंशतितमोऽध्यायः॥२३॥**

शिव का ध्यान करे। इस प्रकार हृदय कमल में विधिपूर्वक विस्तृत पूजा को समाप्त करके शुद्ध दीप की शिखा के आकार (रूप) जगत् के संहर्ता शिव का ध्यान करे। वह लिंग पर या भूमि पर शिव की पूजा करे॥२५-३१॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा की विधि  
नामक तेर्झसवाँ अध्याय समाप्त॥२३॥



# चतुर्विंशोऽध्यायः

## शिवरूप पूजाविधिः

### शैलादिरुवाच

व्याख्यां पूजाविधानस्य प्रबदामि समाप्तः।  
 शिवशास्त्रोक्तमार्गेण शिवेन कथितं पुरा॥१॥  
 अथोभौ चंदनचर्चितौ हस्तौ वौषट्ठंतेनाद्यंजलिं कृत्वा  
 मूर्तिविद्याशिवादीनि जप्त्वा अंगुष्ठादिकनिष्ठिकांतं ईशानाद्यं  
 कनिष्ठिकादिमध्यमांतं हृदयादितृतीयांतं तुरीयमंगुष्ठेनानामिकया  
 पंचमं तलद्वयेन षष्ठं तर्जन्यंगुष्ठाभ्यां नाराचास्त्रप्रयोगेण  
 पुनरपि मूलं जप्त्वा तुरीयेनावगुण्ठ्य शिवहस्तमित्युच्यते॥२॥  
 शिवार्चना तेन हस्तेन कार्या॥३॥  
 तत्त्वगतमात्मानं व्यवस्थाप्य तत्त्वशुद्धिं पूर्ववत्॥४॥  
 क्षमाम्भोग्निवायुव्योमांतं पंचतुः शुद्धकोट्यंते।  
 धारासहितेन व्यवस्थाप्य तत्त्वशुद्धिं पूर्व कुर्यात्॥५॥

### चौबीसवाँ अध्याय

## शिव की पूजा की विधि

शैलादि बोले

शिव द्वारा पहिले कही गई और शिवसंहिता में वर्णन की गई शिव की पूजा की विधि को संक्षिप्त में कहता है॥१॥ दोनों हाथ धिसे हुए चन्दन के लेप से चुपड़े हों। वौषट् से अन्त होने वाले मन्त्र से पुष्पों से भरी अंजलि से भेट क्रिया को करे। वह मूर्तिविद्या और शिव के मन्त्रों को जपे। अङ्गूठे से लेकर कनिष्ठिका अङ्गुली तक जपे। ईशान आदि अन्य मूर्तियों को कनिष्ठा से प्रारम्भ करके मध्यमा अङ्गुली से कहते हुए इनके द्वारा हृदय आदि को स्थापित करे। चौथी अङ्गुली को अङ्गूठे के साथ लगाकर और कनिष्ठिका से मध्यमा अङ्गुली लगावे। दोनों हाथों की हथेलियाँ छठवीं को खड़ी करे। तर्जनी और अङ्गूठा से नाराच अस्त्र का प्रयोग करे। तब वह फिर मूल मन्त्र का जप करे और चतुर्थ बीज से प्रत्येक वस्तु को ढक दे। इसको शिवहस्त (शिव का हाथ) कहते हैं॥२॥ इसी शिवहस्त से शिव की पूजा की जानी चाहिये। भक्त तत्त्वों में आत्मा को स्थापित करके तत्त्वों की पूर्ववत् शुद्धि करे। इस प्रकार भूमि, जल, वायु, अग्नि और आकाश इन पाँच तत्त्व की स्थापना के बाद अहंकार, बुद्धि, प्रकृति और ब्रह्म पाँच तत्त्व में केवल ब्रह्म धारा के साथ शुद्ध हैं। भक्त तत्त्वों की शुद्धि पूर्व कथित विधि से करे। भूमि तत्त्व की शुद्धि सद्य से तथा तृतीय बीज मन्त्र से होती है। जिसके अन्त में फट् लगे। वारि तत्त्व

तत्त्वशुद्धिः षष्ठेन सद्येन तृतीयेन फडंताद्वराशुद्धिः॥६॥  
 षष्ठसहितेन सद्येन तृतीयेन फडन्तेन वारितत्त्वशुद्धिः॥७॥  
 वाह्नेयतृतीयेन फडंतेनाग्निशुद्धिः॥८॥  
 वायव्यचतुर्थेन षष्ठसहितेन फडंतेन वायुशुद्धिः॥९॥  
 षष्ठेन ससद्येन तृतीयेन फडंतेनाकाशशुद्धिः॥१०॥  
 उपसंहृत्यैवं सद्याषष्ठेन तृतीयेन मूलेन फडंतेन ताडनं तृतीयेन  
 संपुटीकृत्य ग्रहणं मूलमेव योनिबीजेन संपुटीकृत्वा बंधनं बंधः॥११॥

एवं क्षांतातीतादिनिवृत्तिपर्यंतं पूर्ववत्कुत्वा प्रणवेन तत्त्वत्रयकमनुध्याय आत्मानं  
 दीपशिखाकारं पुर्यष्टकसहितं त्रयातीतं शक्तिक्षोभेणामृतधारां सुषुम्णायां ध्यात्वा॥१२॥  
 शान्त्यतीतादिनिवृत्तिपर्यंतानां चांतनांदबिंद्वकारोकारमकारांतं शिवं सदाशिवं  
 रुद्रविष्णुब्रह्मांतं सृष्टिक्रमेणामृतीकरणं ब्रह्मन्यासं कृत्वा पंचवक्त्रेषु पंचदशनयनं  
 विन्यस्य मूलेन पादादिकेशांतं महामुद्रामपि बद्धवा शिवोहमिति ध्यात्वा शत्त्यादीनि  
 विन्यस्य हृदि शत्त्याबीजांकुरानंतरात्सुषिरसूत्रकंटकपत्रकेसरधर्मज्ञान-  
 वैराग्यैश्वर्यसूर्यसोमाग्निवामाज्येष्ठारौद्रीकालीकलविकरणीबलविकरणीबल-  
 प्रथमनीसर्वभूतदमनीः केसरेषु कर्णिकायां मनोन्मनीमपि ध्यात्वा॥१३॥

की शुद्धि सद्य और छठवें बीज मन्त्र के साथ फट् को अन्त में लगाकर होती है। अग्नि तत्त्व की शुद्धि तृतीय बीज मन्त्र अग्नि से सम्बन्धित और फट् अन्त में लगाकर होती है। वायु तत्त्व की शुद्धि चतुर्थ बीज मन्त्र वायु से सम्बन्धित, छठवें बीज मन्त्र के साथ और अन्त में फट् शब्द से होती है। आकाश तत्त्व की शुद्धि सद्य के साथ छठवें बीज मन्त्र और तृतीय बीज मन्त्र से फट् शब्द अन्त में लगाने से होती है॥३-१०॥ यह सब करने के बाद ताडन कृत्य को छठवें बीज मन्त्र सद्य के साथ, तृतीय बीज मन्त्र और मूल मन्त्र फट् शब्द के अन्त लगाने से होती है। ग्रहण कृत्य तृतीय बीज मन्त्र सम्पुटीकरण बीज मन्त्र द्वारा होता है। बन्धन कृत्य योनि बीज द्वारा मूल मन्त्र से सम्पुटीकरण होता है॥११॥ इसके बाद एक के बाद दूसरे निम्नलिखित कृत्य किये जाते हैं। कलाएँ शान्त्यतीत आदि और निवृत्ति से अन्त होने वाली को पूर्ववत् करके, प्रणव के द्वारा तीन तत्त्वों का ध्यान करे। आठ पुरियों के साथ आत्मा का दीपशिखा के आकार तीनों से बाहर स्थित रूप में ध्यान करना चाहिए। सुषुम्णा में शक्ति के छोर से अमृत धारा बहती है॥१२॥ शान्त्यतीत निवृत्ति पर्यन्त, नाद, बिन्दु, अकार, उकार, मकार (अ उ म) शिव, सदाशिव, त्रिमूर्ति, रुद्र, विष्णु और ब्रह्मा का सृष्टि क्रम में ध्यान किया जाय। इस कृत्य को ब्रह्मन्यासं कहते हैं जो अमृतीकरण सृष्टि के क्रम है। तब पाँच मुख और पन्द्रह नेत्र वाले शिव को स्थापित करके मूल मन्त्र को दोहराते हुए पाद आदि केश अन्त महामुद्रा को बाँधकर ‘मैं शिव हूँ’ ऐसा ध्यान करें। शक्तियों को हृदय में स्थापित करके शक्ति के साथ निम्नलिखित पर ध्यान करे—बीज, अंकुर, कमल नाल सहित, कंटक, सूत्र, पत्र, केसर, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि, शक्तियाँ—वामा ज्येष्ठा, रौद्री, काली,

आसनं परिकल्पयैवं सर्वोपचारसहितं बहिर्योगोपचारेणांतःकरणं कृत्वा ज्ञाभौ वह्निकुंडे  
पूर्ववदासनं परिकल्प्य सदाशिवं ध्यात्वा बिंदुतोऽमृतधारां शिवमंडले निपतितां ध्यात्वा  
ललाटे महेश्वरं दीपशिखाकारं ध्यात्वा आत्मशुद्धिरित्यं प्राणापानौ संयम्य सुषुम्णाया  
वायुं व्यवस्थाप्य षष्ठेन तालुमुद्रां कृत्वा दिग्बन्धं कृत्वा षष्ठेन स्थानशुद्धिर्वस्त्रादि  
पूतांतरधर्यपात्रादिषु प्रणवेन तत्त्वत्रयं विन्यस्य तदुपरि बिंदुं ध्यात्वा त्वंभसा विपूर्य  
द्रव्याणि च विधाय अमृतप्लावनं कृत्वा पाद्यपात्रादिषु तेषामधर्यवदासनं परिकल्प्य  
संहितयाभिमंत्र्याद्येनाभ्यर्थ्य द्वितीयेनामृतीकृत्वा तृतीयेन विशोध्यचतुर्थेनावगुञ्य  
पंचमेनावलोक्य षष्ठेन रक्षां विधाय चतुर्थेन कुशपुंजेनाधर्यभसाभ्युक्ष्य आत्मानमपि  
द्रव्याणि पुनरधर्यभसाभ्युक्ष्य सपुष्येण सर्वद्रव्याणि पृथक्पृथक् शोधयेत्॥१४॥

सद्येन गंधं वामेन वस्त्रम्।

अघोरेण आभरणं पुरुषेण नैवेद्यम्। ईशानेन पुष्याणि अथाभिमंत्रयेत्॥१५॥  
शिवगायत्र्या शेषं प्रोक्षयेत्॥१६॥  
पंचामृतपंचगव्यादीनि ब्रह्मांगमूलाद्यैरभिमंत्रयेत्॥१७॥

कालविकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथनी सर्वभूतदमनी केसर में, कर्णिका में मनोन्मनी को ध्यान करे॥१३॥  
आत्मशुद्धि, स्थान शुद्धि, द्रव्य शुद्धि कृत्य निम्नलिखित रूप में करे। आसन रखकर यौगिक उपचार के द्वारा  
बाहर की चीजों से इच्छा शक्ति को अन्दर की ओर लगावे। शिव का आसन अग्नि कुंड के नाभि में सामने  
पूर्ववत् कल्पना करके बिंदु से शिव मण्डल पर गिरती हुई अमृत धारा को ध्यान करते हुए सदाशिव का ध्यान  
करे। ललाट पर दीपशिखा के आकार वाले शिव का ध्यान करे यह आत्मशुद्धि है। स्थान शुद्धि इस प्रकार है।  
भक्त प्राण और अपान वायु का संयम करके सुषुम्णा द्वारा वायु को रोके, तब छठवें ताल मुद्रा और दिग्बन्ध  
छठवाँ बीज से मन्त्र से पूरा किया जाय। दिग्बन्ध कृत्य पूजा की सामग्री द्रव्यशुद्धि कहलाती है। वह इस प्रकार  
है। अर्घ्य पात्र आदि में ओम् के द्वारा तीन तत्त्वों को रखकर उसके बिंदु का ध्यान करके उनके ऊपर बिंदु का  
ध्यान करे कि वे जल से पूर्ण है, तब पूजा सामग्री को क्रम से रखकर पाद्य के लिए रखे गये पात्रों में  
अमृतप्लावन के सामने (जल छिङ्ककर) अर्घ्य पात्रवत् आसन की कल्पना करके संहिता मन्त्रों से अभिमन्त्रित  
करके प्रथम बीज मन्त्र द्वारा पूजा की जाय। द्वितीय बीज मन्त्र द्वारा उसको अमृत रूप में करे, तृतीय बीज मन्त्र  
द्वारा यह शुद्ध की जाय, चतुर्थ बीज मन्त्र द्वारा ढककर पंचम बीज द्वारा इसका अवलोकन करे। छठवें बीज मन्त्र  
द्वारा रक्षा करके चौथे बीज मन्त्र को पढ़ते हुए कुश के पुंज से अर्घ्य जल पूजा सामग्री पर छिङ्के। उसके बाद  
फूल के साथ अर्घ्य जल से भक्त अपने ऊपर और पूजा सामग्री पर पुनः जल छिङ्के॥१४॥। तब भक्त  
निम्नलिखित मन्त्रों से वस्तुओं को अभिमन्त्रित करे—सद्य मन्त्र से गंध को, वाम मन्त्र से वस्त्र को अघोर मन्त्र  
से आभूषण को, तत्पुरुष मन्त्र से नैवेद्य को और ईशान मन्त्र से पुष्यों को अभिमन्त्रित करे। शिव सामग्री मन्त्र को  
दोहराते हुए शेष सामग्री पर जल छिङ्के। वह वेदांगों मूल मन्त्रों और अन्य मन्त्रों द्वारा पंचामृत पंचगव्य और  
अन्य वस्तुओं को अभिमन्त्रित करे। तब वह मूल मन्त्र को दोहराते हुए अर्घ्य धूप और आचमनीय देते हुए

पृथकपृथड्मूलेनार्थ्यं धूपं दत्त्वाचमनीयं च तेषामपि धेनुमुद्रा  
 च दर्शयित्वा कवचेनावगुंठ्यास्त्रेण रक्षां च विधाय द्रव्यशुद्धिं कुर्यात्॥१८॥  
 अर्थोदकमग्रे हृदा गंधमादाय द्रव्याणि विशोध्य पूजाप्रभृतिकरणं रक्षांतं  
 कृत्वैवं द्रव्यशुद्धिं पूजासमर्पणांतं मौनमास्थाय पुष्ट्यांजलिं दत्त्वा सर्वमंत्राणि  
 प्रणवादिनमोत्तराज्जपित्वा पुष्ट्यांजलिं त्यजेन्मंत्रशुद्धिरित्थम्॥१९॥  
 अग्रे सामान्यार्थ्यपात्रं पयसापूर्यं गंधपुष्ट्यादिना संहितयाभिमंत्र्य धेनुमुद्रां  
 दत्त्वां कवचेनावगुंठ्यास्त्रेण रक्षयेत्। पूजां पर्युषितां गायत्र्या समध्यर्च्य  
 सामान्यार्थ्यं दत्त्वां गंधपुष्ट्यधूपाचमनीयं स्वधांतं नमोत्तं वा दत्त्वा  
 ब्रह्मभिः पृथक्पृथक्पुष्ट्यांजलिं दत्त्वा फडंतास्त्रेण निर्मल्यं व्यपेह्य  
 ईशान्यां चंडमध्यासनमूर्तिं चंडं सामान्यास्त्रेण लिंगपीठं शिवं  
 पाशुपतास्त्रेण विशोध्य मूर्ध्नि पुष्ट्यं निधाय पूजयेल्लंगशुद्धिः॥२०॥  
 आसनं कूर्मशिलायां बीजांकुरं तदुपरि ब्रह्मशिलायामनंतनालसुषिरे  
 सूत्रपत्रकंटककर्णिकाकेसरधर्मज्ञानवैराग्यैश्वर्यसूर्यसोमाग्निकेसरशक्तिं  
 मनोन्मनीं कर्णिकायां मनोन्मनेनानंतासनायेति समासेनासनं परिकल्प्य  
 तदुपरि निवृत्यादिकलामयं षड्विधसहितं कर्मकलांगदेहं सदाशिवं भावयेत्॥२१॥

सामग्री को शुद्ध करे। उनको धेनुमुद्रा दिखावे। कवच मन्त्र के द्वारा वस्तुओं को ढककर अस्त्र मन्त्र से उनकी रक्षा करके द्रव्य शुद्धि करना चाहिए॥१५-१८॥ मन्त्र शुद्धि इस प्रकार है—आगे अर्थं जल दिया जाय हृदय द्वारा गंध लेकर, अस्त्र मन्त्र द्वारा शुद्ध करके, पूजा आदि रक्षा पर्यन्त करके, पूजा द्रव्य की शुद्धि समर्पण के अन्त तक मौन रूप से पुष्ट्यांजलि देकर, सब मन्त्रों प्रणव आदि में और नमः अन्त में लगाकर दोहराते हुए, और पुष्ट्यांजलि दी जाय।॥१९॥ लिंग शुद्धि इस प्रकार है—सामान्य अर्थ्य पात्र जल से भरकर सामने रखें, गंध और सुगन्धित फूल आदि इसको संहिता मन्त्रों से अभिमन्त्रित करे। धेनुमुद्रा दिखाये, कवच मन्त्र से उसको ढके और अस्त्र मन्त्र द्वारा उसकी रक्षा की जाय। पूजा जो पहले की गयी है पुनः गायत्री मन्त्र द्वारा की जाय। सामान्य अर्थ्य देकर गंध पुष्ट्य आचमनीय स्वाहा या नमः अन्त में लगे मन्त्रों से दी जाय। वैदिक मन्त्रों द्वारा पुष्ट्यांजलि दी जाय। फट् अन्त में लगाकर अस्त्र मन्त्र द्वारा निर्मल्य को हटा दिया जाय। उत्तर पूर्व में चन्द्रमा की पूजा की जाय। सामान्य अस्त्र मन्त्र द्वारा चन्द्र की पूजा की जाय। पाशुपत अस्त्र द्वारा लिंग पीठ और शिव को शुद्ध करके उनके सिर पर पुष्ट्य रखकर उसकी पूजा की जानी चाहिये॥२०॥

भक्त सदाशिव का ध्यान करे जो निवृत्ति के साथ कलामय है। जो कि छः कलाओं सहित है, और जिनका भौतिक शरीर कर्म कला का अंग है। कूर्म शिला पर उनका आसन है। उस पर बीज और अंकुर है। ब्रह्म शिला पर अनन्त नाल कमल, सूत्र, पत्र, कटक, कर्णिका, केसर, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, सूर्य, सोम, अग्नि, केसर, शक्ति, मनोन्मनी की मनोन्मन के साथ अनन्त आसन के लिए कहते हुए कल्पना करके उस पर पूर्व कथित

उभाभ्यां सपुष्पाभ्यां हस्ताभ्यामंगुष्ठेन पुष्पमापीड्य  
आवाहनमुद्रया शनैःशनैः हृदयादिमस्तकांतमारोप्य हृदा सह  
मूलं प्लुतमुच्चार्य सद्येन बिंदुस्थानादभ्यधिकं दीपशिखाकारं  
सर्वतोमुखहस्तं व्याप्यव्यापकमावाह्य स्थापयेत्॥२२॥

पूर्वहृदा शिवशक्तिसमवायेन परमीकरणममृतीकरणं हृदयादिमूलेन  
सद्येनावाहनं हृदा मूलोपरि वामेन स्थापनं हृदा मूलोपरि अघोरेण सन्निरोधं हृदा  
मूलोपरि पुरुषेण सान्निध्यं हृदा मूलेन ईशानेन पूजयेदिति उपदेशः॥२३॥  
पंचमंत्रसहितेन यथापूर्वमात्मनो देहनिर्माणं तथा देवस्यापि वह्नेश्वैवमुपदेशः॥२४॥  
रूपकध्यानं कृत्वा मूलेन नमस्कारांतमापाद्य स्वधांतमाचमनीयं सर्वं  
नमस्कारांतं वा स्वाहाकारांतमध्यं मूलेन पुष्पांजलिं वौषट्ठेन सर्वं नमस्कारांतं  
हृदा वा ईशानेन वा रुद्रगायत्र्या ॐ नमः शिवायेति मूलमंत्रेण वा पूजयेत्॥२५॥  
पुष्पांजलिं दत्त्वा पुनर्धूपाचमनीयं षष्ठेन पुष्पावसारणं विसर्जनं मंत्रोदकेन मूलेन  
संस्नाप्य सर्वद्रव्याभिषेकमीशानेन प्रतिद्रव्यमष्टपुष्पं दत्त्वैवमध्यं च गथं  
पुष्पधूपाचमनीयं फडंतास्त्रेण पूजापसरणं शुद्धोदकेन मूलेन संस्नाप्य पिण्डामलकादिभिः॥२६॥

विधि से सदाशिव का ध्यान करना चाहिये॥२१॥ दोनों हाथों में पुष्पों को ले ले। उनको दबा दें। आह्वान मुद्रा से, उनको धीरे-धीरे हृदय से सिर तक ले जाय। हृदय मंत्र के साथ मूल मंत्र को प्लुत स्वर में उच्चारण करके बिन्दु स्थान से ऊपर मूर्ति दीप शिखा के आकार के और जिसके मुख और हाथ चारों ओर फैले हैं और व्याप्त व्यापक भाव में है, उनका आह्वान करके स्थापित करना चाहिये॥२२॥ परमीकरण कृत्य हृदय मन्त्र से और अविभाज्य शिव और शक्ति, अमृतीकरण कृत्य हृदय मन्त्र से प्रारम्भ करके मूल मन्त्र द्वारा किया जाय। सद्य मन्त्र द्वारा आह्वान कृत्य, स्थापन कृत्य हृदय मन्त्र से तथा अन्त में मूल मन्त्र से तथा वाम मन्त्र से, सन्निरोध हृदय मन्त्र अघोर मन्त्र और मूल मन्त्र से, सान्निध्य कृत्य तत्पुरुष मन्त्र, मूल मन्त्र और हृदय मन्त्र द्वारा, भक्ति को मूर्ति की पूजा हृदय मन्त्र, मूल मन्त्र और ईशान मन्त्र से करनी चाहिये, ऐसा उपदेश है॥२३॥ तब भक्त को देह निर्माण कृत्य अपने लिए पूर्ववत् तथा शिव के लिए अग्नि पंच मन्त्र चहित बीज मन्त्र द्वारा करना चाहिये॥२४॥ मूल मन्त्र से रूपक ध्यान करके नमस्कार के अन्त, और आचमनीय स्वधा बोलकर भेंट कर दे। उसके बाद भक्त अर्घ्य तथा अन्य वस्तुएँ मन्त्र पर स्वाहा बोलते हुए दे। वौषट् से अन्त होने वाले मूल मन्त्र द्वारा भेंट करे। हृदय मन्त्र या मूल मन्त्र रुद्र गायत्री मन्त्र से प्रत्येक कृत्य किया जाना चाहिये। या वह मूल मन्त्र ‘ॐ नमः शिवाय’ से पूजा करे॥२५॥ भक्त पुनः पुष्पांजलि देकर धूप आचमनीय दे। छठवें बीज मन्त्र से पुष्पों को हटाये और विसर्जन करे। मूल मन्त्र को दोहराते हुए मन्त्रों से अभिमंत्रित पूजा की सब सामग्री को शुद्ध करे। ईशान मन्त्र से अभिषेक कृत्य किया जाय। प्रत्येक वस्तु के लिए आठ फूल भेंट किये जायें। उसके बाद उसी भाँति अर्घ्य दिया जाय। गंध, सुगन्धित पुष्प, आचमनीय फट् के अन्त होने वाले अस्त्र से भेंट कर दे। पूजा की समाप्ति इसी प्रकार

उष्णोदकेन हरिद्राद्येन लिंगमूर्ति पीठसहितां विशोध्य  
गंधोदकहिण्योदकमंत्रोदकेन रुद्राध्यायं पठमानः नीलरुद्र-  
त्वरितरुद्रपंचब्रह्मादिभिः नमः शिवायोति स्नापयेत्॥२७॥  
मूर्धिन पुष्ट्यं निधायैवं न शून्यं लिंगमस्तकं कुर्यादत्र श्लोकः॥२८॥

यस्य राष्ट्रे तु लिंगस्य मस्तकं शून्यलक्षणम्। तस्यालक्ष्मीर्महारोगो दुर्भिक्षं वाहनक्षयः॥२९॥  
तस्मात्परिहरेद्राजा धर्मकामार्थमुक्तये। शून्यं लिंगे स्वयं राजा राष्ट्रं चैव प्रणश्यति॥३०॥  
एवं सुस्नाप्याद्य च दत्त्वा संमृज्य वस्त्रेण गंधपुष्ट्यवस्त्रालंकारादींश्च मूलेन दद्यात्॥३१॥  
धूपाचमनीयदीपनैवेद्यादींश्च मूलेन प्रधानेनोपरि पूजनं पवित्रीकरणमित्युक्तम्॥३२॥  
आरातिदीपादींश्चैव धेनुमुद्रामुद्रितानि कवचेनावगुंठिनानि पष्ठेन  
रक्षितानि लिंगोपरि लिंगे च लिंगास्याधः साधारणं च दर्शयेत्॥३३॥  
मूलेन नमस्कारं विज्ञाप्यावाहनस्थापनसन्निराधसान्निध्यपाद्याचमनीयाद्यगंधपुष्ट्य-  
धूपनैवेद्याचमनीयहस्तोद्वत्तनमुखवासाद्युपचारयुक्तं ब्रह्मांगभोगमार्गेण पूजयेत्॥३४॥

की जानी चाहिए। लिंग पीठ सहित मूर्ति को मूल मन्त्र को दोहराते हुए शुद्ध जल से स्नान कराना चाहिये। इसमें हल्दी आँवले आदि पढ़े हुए हों। या तेल हल्दी आदि मिश्रित गरम जल से स्नान कराकर शुद्ध करें। भक्त तब रुद्राध्याय पढ़ते हुये स्वर्ण पढ़े हुये शुद्ध मन्त्रोक्त अभिमन्त्रित जल से लिंग मूर्ति का स्नान नमः शिवाय के साथ नील रुद्र, त्वरित रुद्र, पंच ब्रह्म और अन्य मन्त्रों को सस्वर पढ़े॥२६-२७॥ लिंग को स्नान कराते समय उसके शिर पर एक फूल रखें। लिंग का शिर नंगा न रखा जाय। इस सम्बन्ध में एक श्लोक है। जिस राजा के राज्य में शिवलिंग का मस्तक नंगा रहता है उस राज्य में दरिद्रिता, महारोग, अकाल और वाहनों का क्षय होता है॥२८-२९॥ इसलिए राजा इससे बचे और धर्म, अर्थ, काम और मुक्ति के लिए इसका ध्यान रखें। जिस राजा के राज्य में शिवलिंग नंगा रहता है, उस राजा और राज्य का नाश हो जाता है॥३०॥ स्नान करने के बाद भक्त अर्घ्य दे और कपड़े से लिंग को पोंछें। मूल मन्त्र से गंध, पुष्ट्य, वस्त्र, अलंकार आदि भेंट करके भक्त मूल मन्त्र पढ़ते हुए धूप, आचमनीय, दीप, नैवेद्य आदि भेंट करें। मूल मन्त्र से उक्त कृत्य को पवित्रीकरण कहते हैं॥३१-३२॥ भक्त आरती दीप दिखावे। लिंग के ऊपर, लिंग पर, लिंग के निचले भाग पर और सामान्य रूप से चारों ओर घूमकर आरती करें। वह आरती दीप धेनुमुद्रा से (अभिमन्त्रित) कवच मुद्रा से अवगुंठित (ढका हुआ) और छठवें बीज मन्त्र से रक्षित होना चाहिये॥३३॥ इसके बाद भक्त मूल मन्त्र से नमस्कार करके ब्रह्मा की पूजा के लिए निधारित विधि ब्रह्मगिन भोग मार्ग से सेवा के निम्नलिखित कार्यों को करें। आह्वान, स्थापन, संनिरोध, पाद्य, आचमनीय, अर्घ्य, गंध पुष्ट्य, नैवेद्य, द्वितीय आचमनीय, हस्तोद्वर्तन (हाथ धोना), मुखवास आदि उपचार से युक्त क्रियाओं को करें॥३४॥ विधि पूर्वक निम्नलिखित कृत्य को करें। सकल में शिव का ध्यान तब निष्कल रूप में स्मरण, पर और अपर देवताओं का ध्यान मूल मन्त्र का जप और ब्रह्मांग मन्त्रों का जप आत्म समर्पण का

सकलध्यानं निष्कलस्मरणं परावरध्यानं मूलमंत्रजपः।

दशांशं ब्रह्मांगजपसमर्पणमात्मनिवेदनस्तुतिनमस्कारादयश्च

गुरुपूजा च पूर्वतो दक्षिणे विनायकस्य॥३५॥

आदौ चांते च संपूज्यो विघ्नेशो जगदीश्वरः। दैवतैश्च द्विजैश्चैव सर्वकर्मार्थासिद्धये॥३६॥  
यः शिवं पूजयेदेवं लिंगे वा स्थंडिलेपि वा। स याति शिवसायुज्यं वर्पमात्रेण कर्मणा॥३७॥

लिंगार्चकश्च पण्मासान्नात्र कार्या विचारणा॥

लिंगार्चकश्च पण्मासान्नात्र कर्मया विचारणा। सप्त प्रदक्षिणाः कृत्वा दंडवत्प्रणमेद्बुधः॥३८॥  
प्रदक्षिणक्रमपादेन अश्वमेधफलं शतम्। तस्मात्संपूजयेन्नित्यं सर्वकर्मार्थासिद्धये॥३९॥

भोगार्थी भोगमाप्नोति राज्यार्थी राज्यमाप्नुयात्।

पुत्रार्थी तनयं श्रेष्ठं रोगी रोगात्ममुच्यते॥४०॥

यान्यांश्चिंतयते कामांस्तास्तांन्ग्राप्नोति मानवः॥४१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे चतुर्विंशतीऽध्यायः॥२४॥**

दशमांश पूर्व समर्पण, स्तुति, नमस्कार आदि पूर्व में गुरु की पूजा और दक्षिण में विनायक की पूजा करनी चाहिए। ३५।। सब कामना की सिद्धि के लिए गणेश जगदीश्वर की पूजा ब्राह्मणों और देवताओं द्वारा आदि और अन्त में करनी चाहिए। ३६।। जो व्यक्ति लिंग या भूमि पर शिव की इस विधि से एक वर्ष मात्र पूजा करता है वह शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। ३७।। लिंग की अर्चना करने वाला छः मास में शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। इससे सन्देह नहीं। विद्वान भक्त सात प्रदक्षिणा करके साष्टांग प्रणाम करे। ३८।। प्रदक्षिणा में प्रत्येक पद के लिए सौ अश्वमेघ का फल प्राप्त करता है, अतः धर्म, अर्थ और मोक्ष की प्राप्ति के लिए नित्य शिव की पूजा करनी चाहिए। भोग चाहने वाला भोग (आनन्द) को प्राप्त करेगा। राज्य चाहने वाले को राज्य मिलता है। पुत्रार्थी को पुत्र प्राप्त होता है। रोगी रोग मुक्त हो जाता है। भक्त मनुष्य अपनी चाही हुई सब कामनाओं को प्राप्त कर लेता है। ३९-४१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा की विधि  
नामक चौबीसवाँ अध्याय समाप्त॥२४॥**

पंचविंशतितमोऽध्यायः

## शिवसर्म्बन्धिनः पवित्रमरिनहोत्रम्

शैलादिरुवाच

शिवाग्निकार्यं वक्ष्यामि शिवेन परिभाषितम्। जनयित्वाग्रतः प्राचीं शुभे देशे सुसंस्कृते॥१॥  
पूर्वाग्रमुत्तराग्रं च कुर्यात्सूत्रत्रयं शुभम्। चतुस्त्रीकृते क्षेत्रे कुर्यात्कुंडानि यत्नतः॥२॥  
नित्यहोमाग्निकुंडं च त्रिमेखलसमायुतम्। चतुस्त्रीव्यंगुलायामा मेखला हस्तमात्रतः॥३॥  
हस्तमात्रं भवेत्कुंडं योनिः प्रादेशमात्रतः। अश्वत्थपत्रवद्योनिं मेखलोपरि कल्पयेत्॥४॥  
कुंडमध्ये तु नाभिः स्यादष्टपत्रं सकर्णिकम्। प्रादेशमात्रं विधिना कारयेद्वद्व्यणः सुत॥५॥  
षष्ठेनोल्लेखनं प्रोक्तं प्रोक्षणं वर्मणा स्मृतम्। नेत्रेणालोक्य वै कुंडं षड्रेखाः कारयेद्वुधः॥६॥  
प्रागायतेन विप्रेन्द्र ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। उत्तराग्राः शिवा रेखाः प्रोक्षयेद्वर्मणा पुनः॥७॥  
शमीपिप्पलसंभूतामरणीं षोडशांगुलाम्। मथित्वा वह्निबीजेन शक्तिन्यासं हृदैव तु॥८॥  
प्रक्षिपेद्विधिना वह्निमन्वाधाय यथाविधि। तूष्णीं प्रादेशमात्रैस्तु याज्ञिकैः शकलैः शुभैः॥९॥  
परिसंमोहनं कुर्याज्जलेनाष्टसु दिक्षु वै। परिस्तीर्य विधानेन प्रागाद्वेवमनुक्रमात्॥१०॥

पच्चीसवाँ अध्याय

## शिव से सर्म्बन्धित पवित्र अरिनहोत्र

शैलादि बोले

मैं शिव द्वारा कहे गये शिवाग्नि कार्य को कहूँगा। प्रार्थी सुन्दर साफ सुथरे स्थान पर चौकोर रूप में शुभ मुहूर्त में खोदकर गड़ा करे। तब वह पूर्व की ओर संकेत करती हुई तीन रेखाएँ और उत्तर की ओर तीन रेखाएँ बनावे। १-२।। वह यज्ञ की पवित्र अग्नि की वेदी के चारों ओर तीन मेखला हों। बाहिरी मेखला में चार अंगुल, मध्य में तीन अंगुल, भीतर में दो अंगुल हो। कुंड की चौड़ाई दो हाथ मात्र हो। मध्य भाग जहाँ हवन सामग्री रखी जाय, लगभग नौ इंच हो, योनि पीपल के पत्ते के समान रूप में मेखला के ऊपर बनाई जाय। ३-४।। कुंड के मध्य में नाभि कमल के रूप में बनाई जाय, यह आठ पत्र और कर्णिका से युक्त हो और चौड़ाई एक प्रादेश<sup>१</sup> हो। ५।। छठवे अस्त्र मन्त्र से उल्लेखन कृत्य किया जाय और कवच मन्त्र से प्रोक्षण (जल से सिंचन) किया जाय। कुंड को नेत्रों से देखते हुए छः रेखा खीचे। हे विप्रेन्द्र! पूर्व की ओर तीन रेखाएँ ब्रह्मा, विष्णु और महेश का प्रतिनिधित्व करती हैं। भक्त उत्तर की ओर शिव रेखाओं पर वर्मन मन्त्र के द्वारा जल को छिड़के। ६-७।। होम में लगायी जाने वाली लकड़ी शमी या पीपल की हो। १६ अंगुल लम्बी हो। इसको साफ करके रखे उसके बाद हृदय मन्त्र से शक्ति न्यास कृत्य पूरा करते हुए और वह्नि बीज मन्त्र को दोहराते हुए अग्नि उत्पन्न की जाय। यज्ञ की लकड़ियों के टुकड़े लम्बाई में प्रावेश मात्र हो। उनको अग्नि में मौन होकर रखे। क्रम से पूर्व दिशा

१. प्रादेश = अंगूठे और तर्जनी के बीच के बराबर स्थान।

उत्तराग्रं पुरस्ताद्धि प्रागग्रं दक्षिणे पुनः। पश्चिमे चोत्तराग्रं तु सौम्यं पूर्वाग्रमेव तु॥११॥  
 ऐन्द्रे चैन्द्राग्नमावाह्य याम्य एवं विधीयते। सौम्यस्योपरि चांद्राग्नं वारुणाग्नमधस्ततः॥१२॥  
 द्वंद्वरूपेण पात्राणि बर्हिःष्वासाद्य सुब्रता। अधोमुखानि सर्वाणि द्रव्याणि च तथोत्तरे॥१३॥  
 तस्योपरि न्यसेद्वर्भाज्ञिवं दक्षिणतोन्यसेत्। पूजयेन्मूलमंत्रेण पश्चाद्वोमं समाचरेत्॥१४॥  
 प्रोक्षणीपात्रमादाय पूरयेदंबुना पुनः। प्रादेशमात्रौ तु कुशौ स्थापयेदुदकोपरि॥१५॥  
 प्लावयेच्च कुशाग्रं तु वसोः सूर्यस्य रश्मिभिः। विकीर्यं सर्वपात्राणि सुसंप्रोक्ष्य विधानतः॥१६॥  
 प्रणीतापात्रमादाय पूरयेदंबुना पुनः। अन्योदककुशाग्रैस्तु सम्यगाच्छाद्य सुब्रता॥१७॥  
 हस्ताभ्यां नासिकं पात्रमैशान्यां दिशि विन्यसेत्। आज्याधिश्रवणं कुर्यात्पश्चिमोत्तरतः शुभम्॥१८॥  
 भस्ममिश्रांस्तथांगारान् ग्राहयेत्सकलेन वै। पश्चिमोत्तरतो नीत्वा तत्र चाज्यं प्रतापयेत्॥१९॥  
 कुशानग्नौ तु प्रज्वाल्य पर्यग्निं त्रिभिराचरेत्। तान्सर्वास्तत्र निःक्षिप्य चाग्रे चाज्यं निधापयेत्॥२०॥  
 अंगुष्ठमात्रौ तु कुशौ प्रक्षाल्य विधिनैव तु। पर्यग्निं च ततः कुर्यात्तैरेव नवभिः पुनः॥२१॥  
 पर्यग्निं च पुनः कुर्यात्तदाज्यमवरोपयेत्। अथापकर्पयेत् पात्रं क्रमेणोत्तरपश्चिमे॥२२॥  
 संयुज्य चाग्निं काष्ठेन प्रक्षाल्यारोप्य पश्चिमे। आज्यस्योत्पवनं कुर्यात्पवित्राभ्यां सहैव तु॥२३॥

से प्रारम्भ करके आठों दिशाओं में जल के छिड़काव के द्वारा परिसम्मोहन कृत्य किया जाय॥८-१०॥ पवित्र यज्ञ के कुश को उसके अग्रभाग सहित पूर्व दिशा में रखे। उसी प्रकार कुशाग्र को पूर्व की ओर करके दक्षिण दिशा में रखे, उसी प्रकार कुशाग्र उत्तर की ओर करके पश्चिम दिशा में रखे और उसी तरह कुशाग्र को पूर्व की ओर करके उत्तर दिशा में रखे॥११॥

इन्द्र के पात्र में दो देवताओं इन्द्र और अग्नि को स्थापित करे। अग्नि के पात्र में यम और अग्नि को, सोम के पात्र में सोम और अग्नि देवता को स्थापित करे। इसके नीचे दो देवता वरुण और अग्नि को स्थापित करके आहान करे। हे सुब्रत! पात्रों को दो कुशों पर नीचे की ओर मुँह करके उल्टा करके कुण्ड की ऊपर की ओर उत्तर की दिशा में रखे। उन पर पुष्प फैला दे। शिव के पात्र को दक्षिण में रखे। भक्त मूल से उनकी पूजा करे। उसके बाद होम करे॥१२-१४॥ तब प्रोक्षणी पात्र लेकर जल भर दे। उस जल के ऊपर प्रादेश लम्बे दो कुश रख दे॥१५॥ ‘वसोः सूर्यस्य’ मंत्र पढ़ते हुये कुश के अग्र भाग के जल में रखे। विधान के अनुसार सब पात्रों का मुख ऊपर की ओर कर ऊपर जल छिड़के। उसके बाद प्रणीता पात्र को जल से उसको भर दे। हे सुब्रत! अन्य जल को कुश से ढक दे। हाथों और नाक में पात्रों को उठाकर ईशान कोण में रख दे॥१६-१८॥ फिर राख सहित कुछ जलते हुये कोयले के अंगारों को पश्चिम से पात्र लेकर उत्तर की ओर लाकर धी को गरम करे॥१९-२०॥

तब वह कुश के दो टुकड़े ले। उसको धोकर फिर उनको घुमाते हुए उनके अग्र भाग को अग्नि में जला दे। नौ कुश के टुकड़ों से अग्नि को प्रज्ज्वलित करे। तब धी के पात्र को अग्नि पर से हटा ले। अग्नि को उत्तर से दक्षिण की ओर रख दे॥२१-२२॥

तब भक्त समिधा की एक टहनी आग पर छुआ कर पश्चिम में रख दे। फिर धी आग पर डालकर उसको उत्पवन कृत्य करे। कुश का छल्ला-सा बनाकर अंगूठा और अनामिका में पहिन ले। दोनों हाथ से धी का पात्र

पृथगादाय हस्ताभ्यां प्रवाहेण यथाक्रमम्। अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु उभाभ्यां मूलविद्यया॥२४॥  
 अभ्युक्ष्य दापयेदग्नौ पवित्रे घृतपंक्तिते। सौवर्ण स्तुकस्तुवं कुर्याद्रित्विमात्रेण सुन्नता॥२५॥  
 राजतं वा यथान्यायं सर्वलक्षणसंयुतम्। अथवा याज्ञिकैर्वृक्षैः कर्तव्यौ स्तुकस्तुवावुभौ॥२६॥  
 अरत्विमात्रमायामं तत्पात्रे तु बिलं भवेत्। षडंगुलपरीणाहं दंडमूलं महामुने॥२७॥  
 तदर्थं कंठनालं स्यात्पुष्करं मूलवद्धवेत्। गोवालसदृशं दंडं स्तुवाग्रं नासिकासमम्॥२८॥  
 पुटद्वयसमायुक्तं मुक्ताद्येन प्रपूरितम्। षट्त्रिंशदंगुलायाममष्टांगुलसविस्तरम्॥२९॥  
 उत्सेधस्तु तदर्थं स्यात्सूत्रेण समितं ततः। सप्तांगुलं भवेदास्यं विस्तरायामतः पुनः॥३०॥  
 त्रिभागैकं भवेदग्रं कृत्वा शेषं परित्यजेत्। कंठं च द्वयंगुलायामं विस्तरं चतुरंगुलम्॥३१॥  
 वेदिरष्टांगुलायामा विस्तारस्तत्प्रमाणतः। तस्य मध्ये बिलं कुर्याच्यतुरंगुलमानतः॥३२॥  
 बिलं सुवर्तितं कुर्यादष्टपत्रं सुकर्णिकम्। परितो बिलबाह्ये तु पट्टिकार्थांगुलेन तु॥३३॥  
 तद्वाह्ये च विनिद्रं तु पद्मपत्रविचित्रितम्। यवद्वयप्रमाणेन तद्वाह्ये पट्टिका भवेत्॥३४॥  
 वेदिकामध्यतो रंधं कनिष्ठांगुलमानतः। खातं यावन्मुखांतः स्याद्विलमानं तु निमग्नम्॥३५॥  
 दंडं षडंगुलं नालं दंडाग्रे दंडिकात्रयम्। अर्धांगुलविवृद्ध्या तु कर्तव्यं चतुरंगुलम्॥३६॥  
 त्रयोदशांगुलायामं दंडमूले घटं भवेत्। व्यंगुलस्तु भवेत्कुंभो नाभिं विद्याद्वशांगुलम्॥३७॥  
 वेदिमध्ये तथा कृत्वा पादं कुर्याच्च द्वयंगुलम्। पद्मपृष्ठसमाकारं पादं वै कर्णिकाकृतिम्॥३८॥

ले ले। कुश की छल्लानुमा अंगूठी (पवित्री) को धी में डुबा ले। तब उसको आग पर डाल दे। हे सुन्नत! एक हाथ लम्बा सोने, चाँदी या यज्ञ में प्रयोग किये जाने वाले पेड़ की लकड़ी का बना हुआ स्तुवा होना चाहिए॥२३-२६॥ हे महामुनि! स्तुवा की लम्बाई एक हाथ हो और हैंडिल में एक छेद होना चाहिए॥२७॥

उसका गला तीन अंगुल हो, उसकी जीभ मूल (जड़) की तरह हो। स्तुवा दंड गाय की पूँछ-सा हो। स्तुवा का अग्रभाग नाक के समान हो, उसमें मोती जड़े दो छेद हों। अगर लम्बाई ३६ अंगुल हो तो चौड़ाई ८ अंगुल होनी चाहिए। ऊँचाई उसकी आधी हो वह धागे से युक्त हो। मुख की लम्बाई और चौड़ाई ७ अंगुल हो। सिर का एक तिहाई भाग छोड़कर शेष भाग खुला हुआ रहे। गला लम्बाई में २ अंगुल हो और उसका फैलाव ४ अंगुल हो। वेदी लम्बाई और विस्तार में (फैलाव) आठ अंगुल हो। उसके बीच चार अंगुल चौड़ाई में बिल खोद देना चाहिए॥२८-३२॥ बिल पूर्णरूप से गोलाकार हो, वह सुन्दर कर्णिका सहित अष्टदल युक्त हो। बिल के चारों ओर आधा अंगुल की चौड़ाई में बायीं ओर एक पट्टिका होनी चाहिए। उसमें बाहर पद्म पत्र से युक्त खिले हुए कमल हों। उसके बाहर दो जौ बराबर चौड़ाई में पट्टिका होनी चाहिए॥३३-३४॥ वेदिका के मध्य में कनिष्ठा ऊँगली के बराबर एक हाथ मुख के अन्त तक हो। बिल नीचे की ओर ढालदार हो॥३५॥ दण्ड लम्बाई में छः अंगुल हो और खोखला हो। दण्ड के सिरे पर तीन दंडिका वाली लाइन एक सिरीज में बनाई जाय। उनमें से बाद वाली लाइन पहले से आधा अंगुल बड़ी हो और आखिरी लाइन लम्बाई में चार अंगुल हो। दण्ड के मूल में लम्बाई में तेरह अंगुल एक घड़ा हो। वह घड़ा ऊँचाई में दो अंगुल हो और उसकी नाभि दस अंगुल हो॥ वेदी के मध्य बीच में नाभि को इस प्रकार बनाकर दो अंगुल का फैलाव में उसका पैर (पाद) बनावे। कमल के

गजोषसदृशाकारं तस्य पृष्ठाकृतिर्भवेत् अभिचारादिकार्येषु कुर्यात्कृष्णायसेन तु॥३९॥  
पंचविंशत्कुशेनैव स्वुकस्त्रुवौ मार्जयेत्पुनः। अग्रमग्रेण संशोध्य मध्यं मध्येन सुब्रता॥४०॥  
मूलं मूलेन विधिना अग्नौ ताप्य हृदा पुनः। आज्यस्थाली प्रणीता च प्रोक्षणी तिस्र एव च॥४१॥  
सौवर्णी राजती वापि ताम्री वा मृत्युवी तु वा। अन्यथा नैव कर्तव्यं शांतिके पौष्टिके शुभे॥४२॥  
आयसी त्वभिचारे तु शांतिके मृत्युवी तु वा। षडंगुलं सुविस्तीर्ण पात्राणां मुखमुच्यते॥४३॥

प्रोक्षणी द्वयंगुलोत्सेधा प्रणीता द्वयंगुलाधिका।

आज्यस्थाली ततस्तस्या उत्सेधो द्वयंगुलाधिकः॥४४॥

यैः समिद्धिर्हुतं प्रोक्तं तैरेव परिधिर्भवेत्। मध्यांगुलपरीणाहा अवक्रा निर्वणाः समाः॥४५॥  
द्वात्रिंशदंगुलायामास्तिस्त्रः परिधयः स्मृताः। द्वात्रिंशदंगुलायामैस्त्रिशहर्षः परिस्तरेत्॥४६॥  
चतुरंगुलमध्ये तु ग्रथितं तु प्रदक्षिणम्। अभिचारादिकार्येषु शिवान्याधानवर्जितम्॥४७॥

अकोमलाः स्थिरा विप्र संग्राह्यास्त्वाभिचारिके।

समग्राः सुसमाः स्थूलाः कनिष्ठांगुलसंमिताः॥४८॥

अवक्रा निर्वणाः स्निग्धा द्वादशांगुलसंमिताः। समिधस्थं प्रमाणं हि सर्वकार्येषु सुब्रता॥४९॥

गव्यं घृतं ततः श्रेष्ठं कापिलं तु ततोऽधिकम्। आहुतीनां प्रमाणं तु स्वुवं पूर्णं यथा भवेत्॥५०॥

अन्नमक्षप्रमाणं स्याच्छुत्तिमात्रेण वै तिलः। यवानां च तदर्थं स्यात्फलानां स्वप्रमाणतः॥५१॥

पीठ के समान आकार का दो और पद कर्णिका के आकार का हो। पाद के पीठ वाला भाग हाथी के ओठ के समान हो। अभिचार (काला जादू) आदि कृत्य में यह काले लौह दण्ड से बनाया जाय। ३६-३९।। भक्त उसके बाद पच्चीस कुशों के बण्डल से स्वुव, स्वुवा दोनों को पोंछे। हे सुब्रत! कुशों के सिरे से दण्ड के सिर को मध्य भाग को मध्य से और जड़ भाग को कुशे के जड़ भाग से पीछे हृदय मन्त्र पढ़ते हुए अग्नि में उसको तपाया जाय। तीन पात्र, घृत पात्र, प्रणीता और प्रोक्षणी का पात्र सोने, चाँदी, ताँबा या मिट्टी का बना हो। शान्ति और पौष्टिक कार्य में अन्य धातुओं से यह न बनाया जाय। अभिचार कृत्य में वे पात्र लोहे से बनाये जायें। ये मिट्टी से बने हुए हों। इन पात्रों का मुख चौड़ाई में छः अंगुल हो। ४०-४३।। प्रोक्षणी पात्र ऊँचाई में दो अंगुल हो। प्रणीता पात्र की ऊँचाई चार अंगुल हो। घृत पात्र (आज्य स्थाली) की ऊँचाई छः अंगुल हो। ४४।। जिन लकड़ियों से किनारा खींचा गया उन्हीं लकड़ियों का होम में प्रयोग किया जाय। लकड़ी के वे टुकड़े बीच के ऊँगली के बराबर सीधे हों और उनमें छेद न हो। लम्बाई में एक समान हों। ४५-४६।। तीन परिधि वाले प्रत्येक बत्तीस अंगुल लम्बाई में है, तीस कुश प्रत्येक बत्तीस अंगुल नाप में चारों ओर फैलाना चाहिए। ४७।। हे ब्राह्मण! अभिचार कृत्य में कड़ी मजबूत टहनियाँ प्रयोग की जानी चाहिए। वे समूची मुलायम और मजबूत न हो। छोटी ऊँगली के बराबर लम्बाई में टुकड़े इकट्ठा करना चाहिए। हे सुब्रत! अन्य कृत्यों में बारह अंगुल की लम्बाई वाले चिकनी और बिना छिद्र समिधा को इकट्ठा किया जाना चाहिए। ४८-४९।। गाय के दूध का बना हुआ धी शुद्ध होता है। कपिला गाय के दूध का धी उससे भी अच्छा होता है। प्रत्येक आहुति के लिए धी स्वुवा भरकर होना चाहिए। ५०।। अन्न (चावल) अक्ष के बराबर और तिल शुक्ति (सीप) के बराबर हो, जौ के दाने परिमाण

क्षीरस्य मधुनो दध्नः प्रमाणं घृतवद्धवेत्। चतुः स्तुवप्रमाणेन स्तुवा पूर्णाहुतिर्भवेत्॥५३॥  
तदर्थं स्विष्टकृत्प्रोक्तं शेषं सर्वमथापि वा। शांतिकं पौष्टिकं चैव शिवाग्नौ जुहुयात्सदा॥५३॥  
लौकिकाग्नौ महाभाग मोहनोच्चाटनादयः। शिवाग्निं जनयित्वा तु सर्वकर्मणि सुब्रता॥५४॥  
सप्त जिह्वाः प्रकल्प्यैव सर्वकार्याणि कारयेत्। अथवा सर्वकार्याणि जिह्वामात्रेण सिद्ध्यति॥५५॥

शिवाग्निरिति विप्रेंद्रा जिह्वामात्रेण साधकः॥५६॥

ॐ बहुरूपायै मध्यजिह्वायै अनेकवर्णायै दक्षिणोत्तरमध्यगा  
कपौष्टिकमोक्षादिफलप्रदायै स्वाहा॥५७॥

ॐ हिरण्यायै चामीकराभायै ईशानजिह्वायै ज्ञानप्रदायै स्वाहा॥५८॥

ॐ कनकायै कनकनिभायै रम्यायै ऐंद्राजिह्वायै स्वाहा॥५९॥

ॐ रत्नायै रत्नवर्णायै आग्नेयजिह्वायै  
अनेकवर्णायै विद्वेषणमोहनायै स्वाहा॥६०॥

ॐ कृष्णायै नैऋतजिह्वायै मारणायै स्वाहा॥६१॥

ॐ सुप्रभायै पश्चिमजिह्वायै मुक्ताफलायै शांतिकायै पौष्टिकायै स्वाहा॥६२॥

ॐ अभिव्यक्तायै वायव्यजिह्वायै शत्रूच्चाटनायै स्वाहा॥६३॥

ॐ वह्नये तेजस्विने स्वाहा॥६४॥

एतावद्विसंस्कारमथवा वह्निकर्मसु। नैमित्तिके च विधिना शिवाग्निं कारयेत्युनः॥६५॥

निरीक्षणं प्रोक्षणं ताडनं च षष्ठेन फडंतेन अभ्युक्षणं चतुर्थेन

खननोत्किरणं षष्ठेन पूरणं समीकरणमाद्येन सेचनं वौषट्डंतेन कुद्धनं षष्ठेन

संमार्जनोपलेपने तुरीयेण कुंडपरिकल्पनं निवृत्त्या त्रिभिरेव कुंडपरिधानं

में उसके आधे में, फल अपने प्रमाण में हो॥५१॥ दूध का परिमाण, मधु और दही धी के परिमाण के समान हो, चार स्तुवा के नाप के बराबर स्तुवा से पूर्णाहुति दी जाय॥५२॥ उसका आधा शेष स्विष्ट कृत्य कहलाता है जो कि पूर्णाहुति के बाद यज्ञ की अग्निकुंड में डाल दिया जाता है। शान्ति और पौष्टिक कृत्य के निमित्त होम सदा शिवाग्नि में करना चाहिए॥५३॥ हे महाभाग! मोहन उच्चाटन आदि के निमित्त होम लौकिक अग्नि में किया जाना चाहिए। हे सुब्रत! प्रत्येक कृत्य में शिवाग्नि उत्पन्न करनी चाहिए। सात जिह्वाओं को बनाकर सब कृत्यों को पूरा करना चाहिए अथवा एक जिह्वा मात्र वाली अग्नि से सब कार्य सिद्ध होते हैं। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! साधक जिह्वा मात्र के द्वारा शिवाग्नि प्राप्त कर सकता है॥५४-५६॥

इसके बाद मूल संस्कृत में लिखित श्लोक ५७ से ६४ के मंत्रों से हवन करे॥५७-६४॥

यहाँ तक अग्नि के संस्कार (शुद्धि) का वर्णन किया गया। भक्त शिवाग्नि को नैमित्तिक कृत्य के लिए निर्धारित विधि से उत्पन्न करे॥६५॥ प्रोक्षण (जल का छिड़काव) और ताडन छठवें बीज मन्त्र के द्वारा फट् अन्त से समाप्त करते हुए पूरा करे। प्रोक्षण कृत्य चौथे बीज मन्त्र द्वारा, खनन और उत्किरण कृत्य छठवें बीज मन्त्र द्वारा, पूरण (भरना) और समतल करना प्रथम बीज मन्त्र द्वारा, सेचन वौषट् मंत्र के द्वारा, कूटना छठवें बीज मन्त्र

चतुर्थेन कुंडार्चनमाद्येन रेखाचतुष्टयसंपादनं षष्ठेन फट्टेन वज्रीकरणं  
 चतुष्पदापादनमाद्येन एवं कुंडसंस्कारमष्टादशविधम्॥६६॥

कुंडसंस्कारानंतरमक्षपाटनं षष्ठेन विष्टरन्यासमाद्येन वज्रासने वागीश्वर्यावाहनम्॥६७॥

ॐ ह्रीं वागीश्वरीं श्यामवर्णा विशालाक्षीं यौवनोन्मत्तविग्रहाम्।

ऋतुमतीं वागीश्वरशक्तिमावाहयामि॥६८॥

वागीश्वरीं पूजयामि॥६९॥

पुनर्वागीश्वरावाहनम्॥७०॥

एकवक्त्रं चतुर्भुजं शुद्धस्फटिकाभं वरदाभयहस्तं परशुमृगधरं  
 जटामुकुटमंडितं सर्वाभरणभूषितमावाहयामि॥७१॥

ॐ ई वागीश्वराय नमः। आवाहनस्थापनसन्निधानसन्निरोध-

पूजांतं वागीश्वरीं संभाव्य गर्भाधानवह्निसंस्कारम्॥७२॥

अरणीजनितं कांतोद्धवं वा अग्निहोत्रजं वा ताम्रपात्रे शरावे वा आनीय  
 निरीक्षणताडनाभ्युक्षणप्रक्षालनमाद्येनक्रव्यादाशिवपरित्यागोपि प्रथमेन  
 वह्नेस्त्रैकारणं जठरभूमध्यादावाह्याग्निं वैकारणमूर्तवाग्रेयेन  
 उद्दीपनमाद्येन पुरुषेण संहितया धारणा धेनुमुद्रां तुरीयेणावगुंठ्य  
 जानुभ्यामवनिं गत्वा शरावोत्थापनं कुंडोपरि निधाय प्रदक्षिणमावर्त्य  
 तुरीयेणात्मसम्मुखां वागीश्वरीं गर्भनाड्यां गर्भाधानांतरीयेण  
 कमलप्रदानमाद्येन वौषट्टेन कुशाध्यं दत्त्वा इंधनप्रदानमाद्येन प्रज्वालनं

द्वारा, सम्मार्जन (बुहारना) चौथे बीज मन्त्र द्वारा, यज्ञ कुंड का परिकल्पन निवृत्त से प्रारम्भ करते हुए तीन कलाओं के द्वारा, चौथे बीज मन्त्र द्वारा कुंड परिधान, कुंड की अर्चना प्रथम बीज मन्त्र द्वारा, चार रेखाओं का सम्पादन फट् के अन्त सहित छठवें बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। इस प्रकार यज्ञ कुंड का संस्कार अट्ठारह प्रकार से होता है।।६६।। यज्ञ के संस्कार के बाद अक्षपाटन (फाइना) कृत्य छठवे बीज मन्त्र द्वारा, विष्टर (आसन) देना प्रथम बीज मन्त्र द्वारा किया जाय, तब वागीश्वरी देवी का आह्वान वज्र आसन पर किया जाय।।६७।। ओम् ह्रीं वागीश्वराय नमः। बागेश्वरी का ध्यान करते हुए आह्वान, स्थापन, संविधान, संनिरोध संस्कार पूरा किया जाय।।६८-७२।। लकड़ी से या कान्त (एक प्रकार के लोह) से अथवा अग्नि होत्र से अग्नि उत्पन्न करके ताम्र पात्र या मिट्टी के प्याले में ले आवे। इसके बाद प्रथम बीज मन्त्र द्वारा निरीक्षण तांडन अभ्युक्षण और प्रक्षालन कृत्य किया जाय। दैत्य (दानव) और अशिव (असुर) वस्तुओं का दूरीकरण प्रथम बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। अग्नि को तीन भागों में विभक्त करे। जठर (पेट) और भौहों के मध्य से अग्नि का आह्वान करे। विश्व के कारण, लिंग में उद्दीपन कृत्य अग्नि से सम्बन्धित प्रथम बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। धारणा और धेनुमुद्रा कृत्य को पुरुष मन्त्र और संहिता मन्त्र द्वारा पूर्ण किया जाय। पात्र को चौथे बीज मन्त्र द्वारा ढक दिया जाय। भक्त घुटने के बल

गर्भाधानं च सद्योनाद्येन पूजनं पुंसवनं वामेन पूजनं द्वितीयेन  
 सीमंतोन्नयनमधोरेण तृतीयेन पूजनम् ॥७३॥  
 अवयवव्याप्तिवक्त्रोदघाटनं वक्त्रनिष्कृतिरिति तृतीयेन  
 गर्भजातकर्मपुरुषेण पूजनं तुरीयेण षष्ठेन प्रोक्षणं सूतकशुद्धये  
 चाग्निसूनुरक्षाकुशास्त्रेण वक्त्रेणाऽग्नौ मूलमीशाग्रं नैऋतिमूलं वायव्याग्रं  
 वायव्यमूलमीशाग्रमिति कुशास्तरणमितिपूर्वोक्त  
 मिथ्यमग्रमूलघृतात्तं लालापनोदाय षष्ठेन जुहुयात् ॥७४॥  
 पंचपूर्वातिक्रमेण परिधिविष्टरन्यासोऽपि आद्येन  
 विष्टरोपरि हिरण्यगर्भहरनारायणानपि पूजयेत् ॥७५॥  
 इन्द्रादिलोकपालांश्च पूजयेत् ॥७६॥  
 वज्रावर्तपर्यंतानपि पूजयेत् ॥७७॥  
 वागीश्वरवागीश्वरीपूजाद्येनमुद्घास्य हुतं विसर्जयेत् ॥७८॥  
 सुक्खसुवसंस्कारमथो निरीक्षणप्रोक्षणताडनाभ्युक्षणादीनि  
 पूर्ववत् सुक्खसुवं च हस्तद्वये गृहीत्वा संस्थापनमाद्येन ताडनमपि

झुककर शराव (प्याला) को उठाकर यज्ञ कुण्ड पर रखे। उसके बाद चौथे बीज मन्त्र द्वारा, अग्नि के चारों ओर प्रदक्षिणा करे। इसके बाद भक्त स्वयं अपने सामने बागेश्वरी देवी का ध्यान करे। गर्भ नाड़ी में गर्भाधान कृत्य करे। प्रथम बीज मन्त्र वौषट् से अन्त होने वाले के द्वारा कमल भेंट करे। तब भक्त कुश द्वारा अर्घ्य करे। प्रथम बीज मन्त्र द्वारा अग्नि को ईंधन प्रदान करे। अग्नि का प्रज्ज्वलन और गर्भाधान सद्य मन्त्र द्वारा, पूजा कृत्य प्रथम बीज मन्त्र द्वारा, पुंसवन कृत्य वाम मन्त्र द्वारा, पूजा कृत्य द्वितीय बीज मन्त्र द्वारा, सीमंतोन्नयन अघोर मन्त्र द्वारा और पूजा तृतीय मन्त्र द्वारा की जाय। ॥७३॥

अवयवों (अंगों) की व्याप्ति मुख का उद्घाटन और मुख की विकृति (हटाने का) कार्य तृतीय बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। गर्भजात कर्म पुरुष मन्त्र द्वारा, पूजा कृत्य चतुर्थ बीज मन्त्र द्वारा की जाय। सूतक शुद्धि पुष्कर कृत्य छठवें बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। वक्त्र मन्त्र द्वारा कुश मिलाकर रक्षाकृत्य किया जाय। कुशों को इस प्रकार बिछाया जाय। कुश का सिरा उत्तर-पूर्व की ओर, उसकी जड़ दक्षिण-पूर्व, एक कुश की जड़ दक्षिण-पश्चिम और कुश का सिरा उत्तर की ओर हो। एक कुश की जड़ उत्तर-पश्चिम और उसका सिरा उत्तर पूर्व हो। इस प्रकार कुशास्तरण कृत्य किया जाय। कुश के जड़ और सिरे को दही से भर करके छठवें बीज के मन्त्र द्वारा अशुभ दूर करने के लिए पूर्वोक्त विधि से होम करे। ॥७४॥। प्रथम परिधि विष्टर कृत्य पूरा करे। बीज मन्त्र के साथ पंचपूर्वा की अतिक्रम के द्वारा विष्टर पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश की भी पूजा करे। ॥७५॥। भक्त रुद्र से प्रारम्भ करके दिग्पालों और उनके वज्र से आवर्त (त्रिशूल) सहित अस्त्रों का भी पूजन करे। वागीश्वर और वागीश्वरी की पूजा इस प्रकार पूरी करे। इसके बाद उनका विसर्जन करे। ॥७६-७८॥।

स्नुकस्नुवोपरि दर्भानुलेखनमूलमध्यामाऽग्रेण त्रित्वेन स्नुकशर्तिं  
स्नुवमपि शंभुं दक्षिणपार्श्वे कुशोपरि शक्तये नमः शंभवे नमः॥७९॥

ततो ह्यन्तिसूत्रेण स्नुकस्नुवौ तुरीयेण वेष्टयेदर्चयेच्च॥८०॥

धेनुमुद्रां दर्शयित्वा तुरीयेणावगुंठ्य षष्ठेन रक्षां विधाय स्नुकस्नुवसंस्कारः पूर्वमेवोक्तः॥८१॥

पुनराज्यसंस्कारः पूर्वमेवोक्त निरीक्षणप्रोक्षणताडनाभ्युक्षणादीनि पूर्ववत्॥८२॥

आज्यप्रतापनमैशान्यां वा षष्ठेन वेद्युपरि विन्यस्य धृतपात्रं

वितस्तिमात्रं कुशपवित्रं वामहस्तांगुष्ठानामिकाग्रं गृहीत्वा दक्षिणां-

गुष्ठानामिकामूलं गृहीत्वाग्निज्वालोत्पवनं स्वाहांतेन तुरीयेण

पुनः षड् दर्भान् गृहीत्वा पूर्ववत्स्वात्मसंप्लवनं स्वहांतेनाद्येन

कुशद्वयपवित्रबंधनं चाद्येन धृते न्यसेदिति पवित्रीकरणम्॥८३॥

दर्भद्वयं प्रगृह्याग्निप्रज्वालनं धृतं त्रिधा वर्तयेत्। संप्रोक्ष्याग्नौ निधापयेदिति नीराजनम्॥८४॥

पुनर्दर्भान् गृहीत्वा कीटकादि निरीक्ष्याद्येण संप्रोक्ष्य दर्भानिग्नौ निधाय इत्यवद्योतनम्॥८५॥

दर्भद्वयं गृहीत्वाग्निज्वालया धृतं निरीक्षयेत्॥८६॥

दर्भेण गृहीत्वा तेनाग्रद्वयेन शुक्लपक्षद्वयेनाद्येनेति कृष्णपक्ष-

संपातनं धृतं त्रिभागेन विभज्य स्नुवेणैकभागेनाज्येनाग्नये स्वाहा

इसके आगे सूक्त स्नुव संस्कार कृत्य किया जाय। निरीक्षण, प्रोक्षण, ताडन, अभ्युक्षण आदि कृत्य पूर्ववत् किया जाय। स्नुक स्नुवों को हाथों में लेकर पकड़े। प्रथम बीज मंत्र द्वारा संस्थापन और ताडन (कृत्य) किया जाय। स्नुव को कुश की जड़ मध्य और सिरे से तीन बार ताडन करे। उसके बाद शक्तये नमः ओम् शंभवे नमः मंत्र पढ़कर शिव के दाहिनी ओर स्नुव को कुश पर रख दे। उसके बाद भक्त स्नुवों को सूत से अपने हाथ से चतुर्थ बीज मंत्र पढ़कर बाँधे और उनकी पूजा करे। ॥७९-८०॥ तब भक्त धेनुमुद्रा दिखाये। चतुर्थ बीज मंत्र से उसको ढके और छठे बीज मंत्र द्वारा रक्षा कृत्य करे। शुद्धिकरण कृत्य को तुमको पहले ही बताया गया है। पूर्वोक्त है। निरीक्षण प्रोक्षण, ताडन और अभ्युक्षण पूर्ववत् होगा। ॥८१-८२॥

छठवें बीज मंत्र द्वारा उत्तर-पूर्व में धृत के तापन (गर्म करने का संस्कार) धृत के पात्र को वेदी पर रखे। एक लम्बे कुश की गोली अङ्गूठी की तरह कुंडली बनावे। भक्त उसके सिरे को बाये हाथ के अङ्गूठे और अनामिका से पकड़े और उसकी जड़ को दायें हाथ के अङ्गूठे और अनामिका से पकड़े। चतुर्थ बीज मंत्र स्वाहा के मंत्र होने वाले अग्नि की ऊपर ज्वाला (लपक) का उत्पवन (फूँकना) कृत्य पूरा किया जाय। फिर वह छह कुशों को लेकर स्वाहान्त प्रथम बीज मंत्र द्वारा पूर्ववत् आत्म सम्पन्न कृत्य करे। दो कुशों का पवित्र बंधन कृत्य प्रथम बीज मंत्र से किया जाय। दो कुशों के अग्र भाग को आपस में बाँधकर उसकी कुंडली को धी में रख दे। यह पवित्रीकरण है। ॥८३॥ भक्त दो कुशों को लेकर उसके अग्रभाग को जला करके वह वेदी के चारों ओर तीन बार धुमाये। उसके बाद जल छिड़ककर धी से ढूबां कर अग्नि में डाल दे। यह नीराजन कृत्य है। ॥८४॥ अब भक्त कुशों को लेकर उसमें कीड़े आदि न हो, यह देखकर अर्ध्य जल से धोकर उनको अग्नि में डाल दें। यह उद्योतन कृत्य है। तब भक्त

द्वितीयेनाज्येन सोमाय स्वाहा आज्येन ॐ अग्नीसोमाभ्यां  
 स्वाहा आज्येनाग्नये स्विष्टकृते स्वाहा॥८७॥  
 पुनः कुशेन गृहीत्वा संहिताभिमंत्रेण नमोन्तेनाभिमंत्रयेत्॥८८॥  
 अभिमंत्र्य धेनुमुद्राप्रदर्शनकवचावगुंठनास्त्रेण रक्षाम्।  
 अथ संस्कृते निधापयेत् आज्यसंस्कारः॥८९॥  
 आज्येन स्तुगवदनेन चक्राभिधारणं शक्तिबीजादीशानमूर्तये  
 स्वाहा। पूर्ववत्पुरुषवक्त्राय स्वाहा अघोरहृदयाय स्वाहा वामदेवाय  
 गुह्याय स्वाहा सद्योजातमूर्तये स्वाहा। इति वक्त्रोदधाटनम्॥९०॥  
 ईशानमूर्तये तत्पुरुषवक्त्राय स्वाहा तत्पुरुषवक्त्राय अघोरहृदयाय  
 स्वाहा अघोरहृदयाय  
 वामगुह्याय सद्योजातमूर्तये स्वाहा इति वक्त्रसंधानम्॥९१॥  
 ईशानमूर्तये तत्पुरुषाय वक्त्राय अघोरहृदयाय वामदेवाय  
 गुह्याय सद्योजाताय स्वाहा इति वक्त्रैक्यकरणम्॥९२॥  
 शिवाग्निं जनयित्वैवं सर्वकर्माणि कारयेत्। केवलं जिह्वया वापि शांतिकाद्यानि सर्वदा॥९३॥  
 गर्भाधानादिकार्येषु वह्नेःप्रत्येकमव्यया। दश आहुतयो देया योनिबीजेन पंचधा॥९४॥  
 शिवाग्नौ कल्पयेद्विव्यं पूर्ववत्परमासनम्। आवाहनं तथा न्यासं यथा देवे तथार्चनम्॥९५॥

दो कुशों के सिरे को कुछ धी मिलाकर मुख के दो भाग शुक्ल (सफेद) और एक भाग काला (कृष्ण) रूप में स्मरण करे। वह धृत को ३ भागों में विभक्त करें। स्तुवा के एक भाग को धी को लेकर अग्नये स्वाहा पढ़कर अग्नि में डाले। द्वितीय भाग को धृत से सोमाय स्वाहा पढ़कर अग्नि में डाले। धी के तृतीय भाग को ॐ अग्निसोमाभ्याम् स्वाहा अग्नये स्वाहा स्विष्ट कृते स्वाहा मंत्र को पढ़कर अग्नि में डाले (आहुति करे)॥८५-८७॥

भक्त फिर कुश के अग्रभाग से धी लेकर उसको नमः अन्तयुक्त संहिता मंत्र से अभिमंत्रित करे। कवच मुद्रा और धेनुमुद्रा कृत्यों का प्रदर्शन और कवच मुद्रा से ढके और अस्त्र मंत्र से रक्षा को करे। यह पवित्र धी पर रखे। यह आज्य संस्कार है। तब मुख का उदधाटन (वक्त्र उदधाटन) संस्कार करे। स्तुवा के मुख से धी को शक्तिबीज मंत्र से चारों ओर घुमाना (चक्राभिधारण) ईशान मूर्तये स्वाहा, पूर्ववत् पुरुषवक्त्राय स्वाहा, अघोर हृदयाय स्वाहा, वामदेवाय गुह्याय, सद्योजाताय स्वाहा। प्रत्येक स्वाहा मंत्र से धी की आहुति दे। यह तुष्टीकरण या संधान कृत्य है॥८८-९०॥ ईशान मूर्तये तत्पुरुषाय वक्त्राय अघोर हृदयाय वामदेवाय प्रणवाय सद्योजाताय स्वाहा। यह वक्त्रैककरण कृत्य है॥९१-९२॥

भक्त शिवाग्नि उत्पन्न करके इस प्रकार सदा सब कार्यों को करे अथवा केवल एक जिह्वा अग्नि से सब शान्तिपुष्टिक आदि कार्य करे॥९३॥

हे अव्यय! गर्भाधान आदि के संस्कार में प्रत्येक के लिए दस आहुति अग्नि में दी जानी चाहिये। योनि बीज मंत्र से शिवाग्नि में पाँच प्रकार से पूर्ववत् परम दिव्य आशा की कल्पना (धारण) करे। पूजा में कथित पूर्वविधि से देव का आह्वान और उद्वासन करे। भक्त एक बार मूल मंत्र का जाप करके देवों के स्वामी को प्रणाम करे।

मूलमंत्रं सकृज्जप्त्वा देवदेवं प्रणम्य च। प्राणायाम त्रयं कृत्वा सगर्भं सर्वसंमतम्॥१६॥  
 परिषेचनपूर्वं च तदिध्ममाभिधार्य च। जुहुयादग्निमध्ये तु ज्वलितेऽथ महामुने॥१७॥  
 आघारावपि चाधाय चाज्येनैव तु षण्मुखे। आज्यभागौ तु जुहुयाद्विधिनैव घृतेन च॥१८॥  
 चक्षुषी चाज्यभागौ तु चाग्नये च तथोत्तरे। आत्मनो दक्षिणे चैव सोमायेति द्विजोत्तम॥१९॥  
 प्रत्यड्मुखस्य देवस्य शिवाग्नेर्ब्रह्मणः सुत। अक्षिं चैव दक्षिणं चैव चोत्तरं चोत्तरं तथा॥२०॥  
 दक्षिणं तु महाभाग भवत्येव न संशयः। आज्येनाहुतयस्तत्र मूलेनैव तथैव तु॥२१॥  
 चरुणा च यथावद्विस्मितिं ततो दद्यान्मूलमंत्रेण सुव्रता॥२२॥  
 सर्वावरणदेवानां पंचपंचैव पूर्ववत्। ईशानादिक्रमेणैव शक्तिबीजक्रमेण च॥२३॥  
 प्रायश्चित्तमधोरेण स्वेष्टांतं पूर्ववत्समृतम्। त्रिप्रकारं मया प्रोक्तमग्निकार्यं सुशोभनम्॥२४॥  
 यथावसरमेवं हि कुर्यान्नित्यं महामुने। जीवितांते लभेत्स्वर्गं लभते अग्निदीपनम्॥२५॥  
 नरकं चैव नाम्नोति यस्य कस्यापि कर्मणः। अहिंसकं चरेद्वोपं साधको मुक्तिकांक्षकः॥२६॥  
 हृदिस्थं चिंतयेदग्निं ध्यानयज्ञेन होमयेत्। देहस्थं सर्वभूतानां शिवं सर्वजगत्पतिम्॥२७॥  
 तं ज्ञात्वा होमयेद्वत्त्या प्राणायामेन नित्यशः। बाह्यहोमप्रदाता तु पाषाणे दर्दुरो भवेत्॥२८॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचविंशतितमोऽध्यायः॥२५॥**

ओम् को दोहराते हुए सगर्भ प्रकार का तीन प्राणायाम करे जो सब योगियों से सम्मत है। जल छिड़कने के बाद यज्ञ की समिधाओं पर धी डाले। हे महामुनि! तब भक्त प्रज्वलित अग्नि में हवन करे॥१४-१७॥

भक्त पात्रों के साथ धी को ले ले। दो भागों को एक साथ सब छः मुखों में विधान के साथ अग्नि में डाल दे। हे महामुनि! दो भागों को एक साथ दक्षिण-पूर्व में और उत्तर दो आँखें हैं। अपने दक्षिण में सोम के लिए आहुति दे दे॥१८-१९॥ तब हे ब्रह्मा के पुत्र! धी के दो भाग शिवाग्नि के पश्चिम मुख बैठे हुए देवता शिव के दो नेत्र दाहिना और बाँया है। निसन्देह ऐसा है। मूल मन्त्र को पढ़ते हुए दस आहुतियाँ दी जानी चाहिए। चरु और समिधाओं से यथावत् आहुति दी जाने चाहिए। हे सुव्रत! तक भक्त को मूल मन्त्र से पूर्ण आहुति देनी चाहिए। शिव के चारों ओर धिरे हुए देवताओं के ईशान आदि क्रम से शक्ति बीज मन्त्र के क्रम से प्रत्येक के लिए पाँच-पाँच आहुतियाँ दी जानी चाहिये। अधोर मन्त्र द्वारा प्रायश्चित्त किया जाय। इस प्रकार मैंने तीन प्रकार के उत्तम अग्नि कार्यों को बताया। हे महामुनि! जैसा अवसर मिले इनको प्रतिदिन करना चाहिये। मुक्ति की काँक्षा करने वाला साधक भक्त जीवन के अन्त में मुक्ति प्राप्त कर सकता है। वह अग्निदीपन की शक्ति प्राप्त कर सकता है। उसका कर्म कुछ भी हो वह कभी नरक में नहीं जाता है। मुक्ति की काँक्षा करने वाले साधक को अहिंसक होम करना चाहिए। हृदय में स्थित अग्निदेव का ध्यान लगाना चाहिए। ध्यान यज्ञ होम करना चाहिए। सब प्राणियों में विद्यमान शिव का अनुभव करते हुए, विश्व स्वामी को जानकर भक्तिपूर्वक प्रतिदिन प्राणायाम से होम करना चाहिए। वह जो कि बाह्य होम करता है वह पत्थर में मेढ़क होता है॥१००-१०८॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव सम्बन्धित पवित्र अग्निहोत्र  
 नामक पञ्चीसवाँ अध्याय समाप्त॥२५॥**



## षड्ङिंवशतितमोऽध्यायः अघोरस्य पूजाविधिः

शैलादिरुवाच

अथवा देवमीशानं लिंगे संपूजयेच्छिवम्। ब्राह्मणः शिवभक्तश्च शिवध्यानपरायणः॥१॥  
अग्निरित्यादिना भस्म गृहीत्वा ह्यग्निहोत्रजम्। उद्धूलयेद्धि सर्वांगमापादतलमस्तवम्॥२॥  
आचामेदब्रह्मतीर्थेन ब्रह्मसूत्री हुद्दमुखः। अर्थोन्मः शिवायेति तनुं कृत्वात्पनः पुनः॥३॥  
देवं च तेन मंत्रेण पूजयेत्प्रणवेन च। सर्वस्मादधिका पूजा अघोरेशस्य शूलिनः॥४॥  
सामान्यं यजनं सर्वमग्निकार्यं च सुव्रत। मंत्रभेदः प्रभोस्तस्य अघोरध्यानमेव च॥५॥

मंत्रः

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥६॥

अघोरेभ्यः प्रशान्तहृदयाय नमः।

अथ घोरेभ्यः सर्वात्मब्रह्मशिरसे स्वाहा।

घोरघोरतरेभ्यः ज्वालामालिनी शिखायै वषट्।

सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यः पिंगलकवचाय हुम्।

नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः नेत्रत्रयाय वषट्।

सहस्राक्षाय दुर्भेदाय पाशुपतास्त्राय हुं फट्।

स्नात्वाचम्य तनुं कृत्वा समभ्युक्ष्याघमर्षणम्। तर्पणं विधिना चार्यं भानवे भानुपूजनम्॥७॥

---

## छब्बीसवाँ अध्याय अघोर पूजा की विधि

शैलादि बोले

शिव के ध्यान में परायण ब्राह्मण और शिव भक्त लिंग में ईशान भगवान शिव की पूजा करे॥१॥ ‘अग्नि’ इत्यादि मन्त्र को पढ़ते हुए अग्निहोत्र की अग्नि से भस्म को लेकर पैर से लेकर मस्तक तक उस भस्म को लगाये॥२॥ वह यज्ञोपवीत धारण करे। उत्तर की ओर मुख करके ब्रह्म तीर्थ के पवित्र जल से आचमन करे। इसके बाद ओम नमः शिवाय पढ़कर के अपने शरीर को अभिमन्त्रित करे॥३॥ वह उस मन्त्र से और प्रणव से देव शिव की पूजा करे। अघोरेश शिव की पूजा सबसे अधिक महत्व की है॥४॥ हे सुव्रत! सही पूजा और आदि निमित्त पवित्र संस्कार सामान्य है। किन्तु अघोर के ध्यान में मन्त्रों में भेद है॥५॥ ‘अघोरेभ्यः प्रशान्तहृदय नमः’ से आरम्भ करके ‘पाशुपतास्त्राय हुं फट्’ तक मंत्र पढ़ कर ध्यान करे। स्नान के बाद अघमर्षण का संस्कार पूरे शरीर पर जल छिड़कर और आचमन करके तर्पण कृत्य सूर्य को अर्च्य और सूर्य की पूजा करे। अघोर की

समं चाघोरपूजायां मंत्रमात्रेण भेदितम्। मार्गशुद्धिस्तथा द्वारि पूजां वास्त्वधिपस्य च॥८॥  
 कृत्वा करं विशोध्याग्रे सशुभासनमास्थितः। नासाग्रकमले स्थाप्य दग्धाक्षः क्षुभिकाग्निना॥९॥  
 वायुना प्रेर्य तद्दस्म विशोध्य च शुभांभसा। शत्त्यामृतमये ब्रह्मकलां तत्र प्रकल्पयेत्॥१०॥  
 अघोरं पंचधा कृत्वा पंचांगसहितं पुनः। इत्थं ज्ञानक्रियामेवं विन्यस्य च विधानतः॥११॥  
 न्यासस्त्रिनेत्रसहितो हृदि ध्यात्वा वरासने। नाभौ वह्निगतं स्मृत्वा भूमध्ये दीपवत्प्रभुम्॥१२॥  
 शांत्या बीजांकुरानंतर्धर्माद्यैरपि संयुते। सोमसूर्याग्निसंपत्ते मूर्तित्रयसमन्विते॥१३॥  
 वामादिभिश्च सहिते मनोन्मन्याप्यधिष्ठिते। शिवासनेत्प्रमूर्तिस्थमक्षयाकाररूपिणम्॥१४॥  
 अष्टत्रिंशत्कलादेहं त्रितत्त्वसहितं शिवम्। अष्टादशभुजं देवं गजचर्मोत्तरीयकम्॥१५॥  
 सिंहाजिनांबरघरमघोरं परमेश्वरम्। द्वात्रिंशाक्षररूपेण द्वात्रिंशच्छक्तिभिर्वृत्तम्॥१६॥  
 सर्वाभरणसंयुक्तं सर्वदेवनमस्तकृतम्। कपालमालाभरणं सर्पवृक्षिकभूषणम्॥१७॥  
 पूर्णदुवदनं सौम्यं चंद्रकोटिसमप्रभम्। चंद्ररेखाधरं शत्त्या सहितं नीलरूपिणम्॥१८॥  
 हस्ते खड्गं खेटकं पाशमेके रत्नैश्चित्रं चांकुशं नागकक्षाम्।  
 शरासनं पाशुपतं तथास्त्रं दंडं च खट्वांगमथापरे च॥१९॥  
 तंत्रीं च घंटां विपुलं च शूलं तथापरे डामरुकं च दिव्यम्।  
 वज्रं गदां टंकमेकं च दीपं समुद्रं हस्तमथास्य शंभोः॥२०॥

पूजा में सर्व सामान्य है कि केवल पढ़े जाने वाले मन्त्रों में भेद है। मार्ग शुद्धि संस्कार और वास्त्वधिप (निवास के पास रहने वाले देव) की द्वार पूजा को पहले किया जाय। ६-८। यह पूजा करके भक्त अपने हाथ को धो डाले। शिव आसन पर बैठे कमल के समान नाक के ऊपर भस्म लगावे। क्षुभिका अग्नि से दग्धाक्ष हवा से अपनी आँखों पर से उसको उड़ाने दे। उस भस्म को शुद्ध जल से शुद्ध करे। तब शक्ति के द्वारा अमृतमय रस में ब्रह्म कला की कल्पना करे। फिर अघोर मन्त्र को पाँच भागों में विभक्त करके और पाँच अंगों के सहित अंगन्यास करे। इस प्रकार विधान के अनुसार ज्ञान क्रिया को करके इस प्रकार हृदय में स्थित देव को, नाभि पर अग्नि में स्थित और बाहों के बीच में दीप के समान चमकते हुए प्रशु का ध्यान करे। यह त्रिनेत्र न्यास कहलाता है। ९-१२। तब भक्त अघोर पर निम्नलिखित रूप में ध्यान करे। वह शिवासन पर बैठे जो शान्ति, बीज, अंकुर, अनन्त धर्म और अन्य आदि से संयुक्त हैं, जहाँ चन्द्र, सूर्य और अग्नि उपस्थित हैं, जहाँ त्रिमूर्ति विराजमान है जो वामदेव और आदि अन्य के सहित मनोन्मनी भी उपस्थित है। अघोर आत्ममूर्ति में स्थित है, उनका रूप अक्षय है, उनका शरीर अढ़तीस कलाओं का है, वह तीन तत्त्वों के सहित है उनकी अठारह भुजाएँ हैं, वह अपने उत्तरीय के ऊपर गज चर्म ओढ़े हुए हैं, वह सिंह के चर्म को वस्त्र रूप में धारण किये हुए है। अघोर, परमेश्वर बत्तीस शक्तियों से जो कि बत्तीस अक्षर रूप में हैं उनसे धिरे हुए है। वह सब आभूषणों से भूषित हैं। वह सब देवताओं द्वारा नमस्कृत हैं। कपाल माला धारण किये हुए और साँप और बिछुओं को आभूषण रूप में पहने हुए हैं। उनके मुख सौम्य हैं और मुख की प्रभा कोटि चन्द्रमा के समान है वह चन्द्र रेखा को सिर पर धारण किये हुए है। वह नील रूप में है और शक्ति उनके साथ है। अपने दाहिने हाथ में तलवार, खेटक, (ढाल) पाश रत्नों से जड़ा हुआ

वरदाभयहस्तं च वरेण्यं परमेश्वरम्। भावयेत्पूजयेच्चापि वह्नौ होमं च कारयेत्॥२१॥  
होमश्च पूर्ववत्सर्वो मंत्रभेदश्च कीर्तिः। अष्टपुष्पादि गंधादि पूजास्तुतिनिवेदनम्॥२२॥  
अंतर्बलिं च कुंडस्य वाह्नेयेन विधानतः। मंडलं विधिना कृत्वा मंत्रैरतैर्यथाक्रमम्॥२३॥

रुद्रेभ्यो भातृगणेभ्यो यक्षेभ्योऽसुरेभ्यो ग्रहेभ्यो राक्षसेभ्यो नागेभ्यो नक्षत्रेभ्यो

विश्वगणेभ्यः क्षेत्रपालेभ्यः अथ वायुवरुणदिग्भागे क्षेत्रपालबलिं क्षिपेत्॥२४॥

विज्ञाप्यैवं विसृज्याथ अष्ट पुष्पैश्च पूजनम्। सर्वसामान्यमेतद्विषयायां मुनिपुंगवाः॥२५॥

एवं संक्षेपतः प्रोक्तमधोराचार्दि सुव्रता।

अघोराचार्दिविधानं च लिंगे वा स्थंडिलेऽपि वा॥२६॥

स्थंडिलात्कोटिगुणितं लिंगाच्चनमनुत्तमम्। लिंगाच्चनरतो विप्रो महापातकसंभवैः॥२७॥

पापैरपि न लिप्येत पद्मपत्रमिवांभसा। लिंगस्य दर्शनं पुण्यं दर्शनात्स्पर्शनं वरम्॥२८॥

अर्चनादधिकं नास्ति ब्रह्मपुत्र न संशयः। एवं संक्षेपतः प्रोक्तमधोराचार्दनमुत्तमम्॥२९॥

वर्षकोटिशतेनापि विस्तरेण न शक्यते॥३०॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षड्बिंवशतितमोऽध्यायः॥२६॥

अंकुश और नागकक्ष (एक प्रकार की ढाल), एक धनुष, एक पाशुपत अस्त्र, एक दण्ड और एक खट्कांग धारण किये हुए हैं। बाएँ हाथ में वीणा, घणटा, त्रिशूल और दिव्य डमरू, बज्र, गदा, टंक और मुद्रा और लोहे का दंड लिए हुए हैं। उनका हाथ भय से मुक्ति दिलाने और वरदान देने वाला है। भक्त इस रूप में अघोर का ध्यान करे और उनकी पूजा करे। उसके बाद अग्नि में होम करे। १३-२१। पूरा होम कार्य पूर्ववत् किया जाय किन्तु मंत्रों के भेद से जैसा कि पहले बताया गया है। पूजा आठ पुष्पों और गंध आदि से की जाय। स्तुति, निवेदन, कुंड में अग्निपुराण से निर्धारण विधि से होम करे। विधि से मंडल बनाकर पाँच बार मन्त्रों द्वारा होम किया जाय। रुद्र, मातृत्व, यक्ष, असुर, ग्रह, राक्षस, नाग, नक्षत्र, विश्वगण, क्षेत्रपाल के लिये होम करे। उसके बाद पश्चिम उत्तर-पश्चिम दिशाओं के क्षेत्रपालों को भक्त बलि प्रदान करे। अर्ध्य, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य मुखवास ताम्बूल आदि यथाविधि भेंट करे। हे सुव्रत! इस प्रकार निवेदन के बाद भक्त आठ फूलों से निवेदन करके विसर्जन करे। २२-२५। इस प्रकार अघोर की पूजा की विधि का वर्णन किया गया। अघोर की यह पूजा लिंग में या शुद्ध भूमि पर की जाय। भूमि पर अघोर की पूजा, लिंग पर की गई पूजा से हजार गुना अधिक फलदायी है। वह ब्राह्मण जो कि लिंगाच्चन करता है वह महापातकों से उसी तरह अप्रभावित रहता है जैसे कमल का पत्ता जल से। लिंग का दर्शन पुण्य है। लिंग का स्पर्श उससे अधिक श्रेष्ठ है। हे ब्रह्मपुत्र! लिंग के अर्चना पूजा से बढ़कर कुछ नहीं है। हजार करोड़ वर्षों में भी इसका विस्तार में वर्णन नहीं किया जा सकता है। २६-३०।।

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अघोर पूजा की विधि  
नामक छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त॥२६॥

## सप्तविंशोऽध्यायः अभिषेकविधिः

ऋषय ऊँचुः।

प्रभावो नंदिनश्चैव लिंगपूजाफलं श्रुतम्। श्रुतिभिः संमितं सर्वं रोमहर्षणं सुव्रता॥१॥  
जयाभिषेक ईशेन कथितो मनवे पुरा। हिताय मेरुशिखरे क्षत्रियाणां त्रिशूलिना॥२॥  
तत्कथं षोडशविधं महादानं च शोभनम्। वक्तुर्मर्हसि चास्माकं सूत बुद्धिमतांवरा॥३॥  
सूत उवाच

जीवच्छाद्धं पुरा कृत्वा मनुः स्वायंभुवः प्रभुः। मेरुमासाद्य देवेशमस्तवीनीललोहितम्॥४॥  
तपसा च विनीताय प्रहृष्टः प्रददौ भवः। दिव्यं दर्शनमीशानस्तेनापश्यत्तमव्ययम्॥५॥  
नत्वा संपूज्य विधिना कृतांजलिपुटः स्थितः। हर्षगद्रदया वाचा प्रोवाच च ननाम च॥६॥  
देवदेव जगन्नाथ नमस्ते भुवनेश्वरा। जीवच्छाद्धं महादेव प्रसादेन विनिर्मितम्॥७॥  
पूजितश्च ततो देवो दृष्टश्चैव मयाधुना। शक्राय कथितं पूर्वं धर्मकामार्थमोक्षदम्॥८॥  
जयाभिषेकं देवेश वक्तुर्मर्हसि मे प्रभो।

सूत उवाच

तस्मै देवो महादेवो भगवानीललोहितः॥९॥

## सत्ताईसवाँ अध्याय अभिषेक की विधि

ऋषिगण बोले

नन्दी के प्रभाव से हम लोगों ने वेदों से सम्मत लिंग पूजा के फल को आप से सुना। हे लोभहर्षण सुव्रत! पहले ईश शिव जी मेरु के शिखर पर मनु से क्षत्रियों के हित के लिये जय अभिषेक कहा था। वह किस प्रकार है। वह सोलह प्रकार का महादान कैसा है? हे सूत बुद्धिमानों में श्रेष्ठ! वह आप हम लोगों से कहिये॥१-३॥

सूत बोले

स्वयंभू मनु ने जीवितश्राद्ध करके मेरु पर पहुँचकर भगवान नीललोहित शिव की स्तुति की॥४॥ मनु की तपस्या से प्रसन्न भव, ईशान ने विनीतभक्त मनु को दिव्य दर्शन दिया॥५॥ मनु ने शिव को प्रणाम करके विधिपूर्वक पूजा करके हाथ जोड़कर हर्ष से गद्गद वचन से उन्होंने इस प्रकार कहा॥६॥

हे देवताओं के देव, हे जगन्नाथ, हे भुवनेश्वर! आपकी कृपा से मैंने जीवत्श्राद्ध किया। उसके बाद आपकी पूजा की। उसके फलस्वरूप अब आपका दर्शन हुआ। आपने पहले इन्द्र से जयाभिषेक संस्कार को कहा था जो कि धर्म, काम, अर्थ, मोक्ष को देने वाला है। हे प्रभु! वह आप मुझको बताएँ।

सूत बोले

महादेव, नीललोहित, परमेश्वर ने मनु को पूर्ण विस्तार में जयाभिषेक संस्कार को बताया॥७-९॥

जयाभिषेकमखिलमवदत्परमेश्वरः ।

श्रीभगवानुवाच

जयाभिषेकं वक्ष्यामि नृपाणां हितकाम्यया॥१०॥

अपमृत्युजयार्थं च सर्वं शत्रुजयाय च। युद्धकाले तु संप्राप्ते कृत्वैवमभिषेचनम्॥११॥  
स्वपतिं चाभिषिच्यैव गच्छेद्योद्बुद्धुं रणाजिरे। विधिना मण्डपं कृत्वा प्रपां वा कूटमेव वा॥१२॥  
नवधा स्थापयेद्वाहिं ब्राह्मणो वेदपारगः। ततः सर्वाभिषेकार्थं सूत्रपातं च कारयेत्॥१३॥  
प्रागाद्यं वर्णसूत्रं च दक्षिणाद्यं तथा पुनः। सहस्राणां द्वयं तत्र शतानां च चतुष्टयम्॥१४॥  
शेषमेव शुभं कोष्ठं तेषु कोष्ठं तु संहरेत्। बाह्ये वीथ्यां पदं चैकं समंतादुपसंहरेत्॥१५॥  
अंगसूत्राणि संगृह्ण विधिना पृथगेव तु। प्रागाद्य वर्णसूत्रं च दक्षिणाद्यं तथा पुनः॥१६॥  
प्रागाद्यं दक्षिणाद्यं च षट्क्रिंशत्संहरेत्क्रमात्। प्रागाद्याः पंक्तयः सप्त दक्षिणाद्यास्तथा पुनः॥१७॥  
तस्मादेकोनपंचाशत्यंक्तयः परिकीर्तिताः। नवं पंक्तीहरेन्मध्ये गन्धगोमयवारिणा॥१८॥  
कमलं चालिखेत्तत्र हस्तमात्रेण शोभनम्। अष्टपत्रं सितं वृत्तं कर्णिकाकेसरान्वितम्॥१९॥  
अष्टांगुलप्रमाणेन कर्णिका हेमसन्निभा। चतुर्वर्णुलमानेन केसरस्थानमुच्यते॥२०॥  
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च यथाक्रमम्। आग्नेयादिषु कोणेषु स्थापयेत्प्रणवेन तु॥२१॥  
अव्यक्तादीनि वै दिक्षु गात्राकारेण वै न्यसेत्। अव्यक्तं नियतः कालः काली चेति चतुष्टयम्॥२२॥

### भगवान् बोले

राजाओं के कल्याण के लिए शत्रुओं के ऊपर विजय प्राप्त करने और अकाल मृत्यु को जीतने के लिए जयाभिषेक को तुमसे कहूँगा। जब युद्ध का समय आवे, तब अभिषेचन को करे, उसके बाद वह युद्ध क्षेत्र में जाय। विधि से मण्डप करके, एक पानी घर (प्याऊ) या कूट निवास-स्थान (आवास) बनाकर, एक वेदज्ञ ब्राह्मण नौ स्थानों में अग्नि स्थापित करे। वहाँ पर अभिषेक के लिए सूत से लाइने खींच दें। १०-१३।। पहला सूत पूर्व से और पहला सूत दक्षिण से रंग दिया जाय। वहाँ पर दो हजार चार सौ सूत हों। इन सूतों द्वारा चौकोर सीमा बनायी जाय। उनके भीतर चौकोर कोष्ठ (कोठे) बनाया जाय। बाहर की ओर, चारों पूरे गोल, चौड़ाई में एक फुट रास्ता बनाया जाय। अंग सूतों को इकट्ठा करके अलग रख लिया जाय। प्रत्येक लाइन के लिए छत्तीस तारों को इकट्ठा दोहरा लिया जाय। वहाँ पर सात छत्तीस चौकोर कोष्ठ हो जायेंगे जो पूर्व से पश्चिम की ओर और सात पंक्ति दक्षिण से उत्तर की ओर। अतः वहाँ सात पंक्तियाँ हो गयीं। इस प्रकार ४९ पंक्तियाँ होंगी। मध्य में नौ पंक्तियों को गाय के गोबर में पानी मिलाकर लीप दें। १४-१८।। वहाँ चौड़ाई में एक हाथ का सफेद आठ पत्तोंवाला कर्णिका और केसर से युक्त डाइग्राम बनावे। १९।। आठ अंगुल लम्बा सोने के समान चमकदार कर्णिका हो और केसर स्थान चार अंगुल लम्बा हो। २०।। अग्नि आदि कोणों में दक्षिण अग्नि कोण से प्रारम्भ करके ओम् सहित धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य की स्थापना करनी चाहिए। अव्यक्त आदि को पूर्व से प्रारम्भ करके चारों दिशाओं में उनकी देह रूप में स्थापित करें। अव्यक्त नियत काल और काली थे चार हैं। २१-२२।।

सितरक्तहिरण्याभकृष्णा धर्मादयः क्रमात्। हंसाकारेण वै गात्रं हेमाभासेन सुब्रताः॥२३॥  
 आधारशक्तिमध्ये तु कमलं सृष्टिकारणम् बिंदुमात्रं कलामध्ये नादाकारमतः परम्॥२४॥  
 नादोपरि शिवं ध्यायेदोंकाराख्यं जगद्गुरुम्। मनोन्मनीं च पद्माभं महादेवं च भावयेत्॥२५॥  
 वामादयः क्रमेणैव प्रागाद्याः केसरेषु वै। वामा ज्येष्ठा तथा रौद्री काली विकरणी तथा॥२६॥  
 बला प्रमथिनी देवी दमनी च यथाक्रमम्। वामदेवादिभिः सार्थं प्रणवेनैव विन्यसेत्॥२७॥  
 नमोऽस्तु वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय शूलिने॥२८॥

रुद्राय कालरूपाय कलाविकरणाय च। बलाय च तथा सर्वभूतस्य दमनाय च॥२९॥  
 मनोन्मनाय देवाय मनोन्मन्यै नमोनमः। मंत्रैरेतैर्यथान्यायं पूजयेत्परिमंडलम्॥३०॥  
 प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। द्वितीयावरणे चैव शक्तयः षोडशैव तु॥३१॥  
 तृतीयावरणे चैव चतुर्विंशदनुक्रमात्। पिशाचवीथिर्वै मध्ये नाभिवीथिः समंततः॥३२॥  
 मंत्रैरेतैर्यथान्यायं पिशाचानां प्रकीर्तिता। अष्टोत्तरसहस्रं तु पदमष्टारसंयुतम्॥३३॥  
 तेषु तेषु पृथक्त्वेन पदेषु कमलं क्रमात्। कल्पयेच्छालिनीवारगोद्यौश्च यवादिभिः॥३४॥  
 तंडुलैश्च तिलैर्वाथि गौरसर्षपसंयुतैः। अथवा कल्पयेदेतैर्यथाकालं विधानतः॥३५॥  
 अष्टपत्रं लिखेत्तेषु कर्णिकाकेसरान्वितम्। शालीनामाढकं प्रोक्तं कमलानां पृथक् पृथक्॥३६॥  
 तंडुलानां तदर्थं स्यात्तदर्थं च यवादयः। द्रोणं प्रधानकुंभस्य तदर्थं तंडुलाः स्मृताः॥३७॥

धर्म आदि क्रमशः सफेद लाल, सुनहरे और काले रंग में हो। हे सुब्रत! शरीर (गात्र) हंस के आकार का सोने की तरह चमकीला हो॥२३॥ आधार शक्ति के मध्य में कमल हो जो कि सृष्टि का कारण है, काल के बीच में, केवल बिंदु है और उसके बाहर नाद (ध्वनि) का रूप है॥२४॥ नाद के ऊपर जगद्गुरु शिव का ध्यान करना चाहिए जो कि ओंकार कहा जाता है। भक्त मनोन्मनी और महादेव जो कि कमल की आभा वाले हैं उनका ध्यान करें॥२५॥ वामा आदि का पूर्व आदि दिशाओं के क्रम में ध्यान किया जाय। वे वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, विकरणी, बला, प्रमथिनी और दमिनी हैं। वे सब प्रणव द्वारा वामदेव और अन्य के साथ स्थापित की जाय॥२६-२७॥ निम्नलिखित मन्त्रों से विधिपूर्वक परमण्डल की पूजा करे। रुद्राय कालरूपाय, कलाविकरणाय च बलाय च। तथा सर्वभूतस्य दमनाय च। मनोन्मनाय देवाय मनोन्मन्यै नमो मनः॥२८-३०॥ प्रथम आवरण मैंने कहा। अब दूसरा आवरण ध्यानपूर्वक सुनो। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं॥३१॥ तृतीय आवरण में क्रम से चौबीस शक्तियाँ हैं। पिशाच बीथी मध्य में है। नाभि बीथी चारों ओर है इन मन्त्रों द्वारा पिशाचों की पूजा की जानी चाहिए। पद एक हजार आठ है और प्रत्येक पद के आर (कोने) हैं। भक्त इन पदों के प्रत्येक पद में क्रम से कमल की कल्पना शाली चावल, निवार चावल, गेहूं, जौ, तिल में सरसों मिले इन अन्नों के द्वारा कल्पना करे। या विधान के अनुसार इनको बनावे जबकि उचित समय आ जाय॥३२-३५॥ उनमें कर्णिका और केसर से युक्त अष्टदल कमल को बनाये। प्रत्येक कमल के लिए एक आढक शाली धान का प्रयोग करे। चावल उसका आधा हो। जौ आदि उसका आधा हो। बड़े घड़े में एक द्रोण नाप का और उसका आधा चावल

तिलानामाढकं मध्ये यवानां च तदर्थकम्। अथांभसा समभ्युक्ष्य कमलं प्रणवेन तु॥३६॥  
 तेषु सर्वेषु विधिना प्रणवं विन्यसेत्क्रमात्। एवं समाप्य चाभ्युक्ष्य पदसाहस्रमुत्तमम्॥३९॥  
 कलशानां सहस्राणि हैमानि च शुभानि च। उत्कलक्षणयुक्तानि कारयेद्राजतानि वा॥४०॥  
 ताप्तजानि यथान्यायं प्रणवेनार्थवारिणा। द्वादशांगुलविस्तारमुदरे समुदाहृतम्॥४१॥  
 वर्तितं तु तदर्थेन नाभिस्तस्य विधीयते। कंठं तु व्यांगुलोत्सेधं विस्तरं चतुरंगुलम्॥४२॥  
 ओष्ठं च व्यांगुलोत्सेधं निर्गमं द्व्यांगुलं स्मृतम्। तत्तद्वैद्विगुणं दिव्यं शिवकुंभे प्रकीर्तिमम्॥४३॥  
 यवमात्रांतरं सम्यक्तंतुना वेष्टयेद्द्वि वै। अवगुंठ्य तथाभ्युक्ष्य कुशोपरि यथाविधि॥४४॥  
 पूर्ववत्प्रणवैनैव पूरयेद्ग्रन्थवारिणा। स्थापयेच्छिवकुभाढ्यं वर्धनीं च विधानतः॥४५॥  
 मध्यपद्मस्य मध्यं तु सकूर्च साक्षतं क्रमात्। आवेष्ट्य वस्त्रयुग्मेन प्रच्छाद्य कमलेन तु॥४६॥  
 हैमेन चित्ररत्नेन सहस्रकलशं पृथक्। शिवकुंभे शिवं स्थाप्य गायत्र्या प्रणवेन च॥४७॥  
 विद्धहे पुरुषायैव महादेवाय धीमहि। तत्रो रुद्रः प्रचोदयात्॥४८॥  
 मंत्रेणानेन रुद्रस्य सान्निध्यं सर्वदा स्मृतम्। वर्धन्यां देविगायत्र्या देवीं संस्थाप्य पूजयेत्॥४९॥  
 गणांभिकायै विद्धहे महातपायै धीमहि। तत्रो गौरी प्रचोदयात्॥५०॥  
 प्रथमावरणे चैव वामाद्याः परिकीर्तिताः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥५१॥  
 शक्तयः षोडशैवात्र पूर्वाद्यिंतेषु सुब्रता। ऐद्रव्यूहस्य मध्ये तु सुभद्रां स्थाप्य पूजयेत्॥५२॥

(धान) रखे॥३६-३७॥ मध्य में एक आढक तिल रखे। उसका आधा परिमाण में जौ रखे। तब प्रणव को दोहराते हुए जल से कमल को छिड़के और यथाक्रम उन सब में प्रणव को स्थापित करे। ये सब कार्य करके हजार पदों को छिड़कते हुए सोने चाँदी या ताँबे के हजार कलशों को रखें। वे सब लक्षणों से युक्त हों। प्रणव को दोहराते हुए अर्ध जल से उन पर छिड़काव किया जाय। प्रत्येक कलश उदर में बारह अंगुल चौड़ा हो और नीचे की ओर बक्र हो। उसकी नाभि चौड़ाई में छः अंगुल हो। कलश का गला ऊँचाई में दो अंगुल और चौड़ाई में चार अंगुल हो। उसका ओठ ऊँचाई में दो अंगुल हो। उसका निर्गम (टोटी) दो अंगुल हो। शिव कुंभ में इन सबकी दुगुनी माप होनी चाहिए॥३८-४३॥ जौ मात्र का स्थान सूत से अच्छी तरह बाँध-कर पात्र को बन्द कर दिया जाय और जल से छिड़ककर कुश पर रख दिया जाय। पहले की तरह प्रणव को दोहराते हुए इसको सुगन्धित जल से भर दें। शिव कुंभ के साथ वर्धनी पात्र को विधान के साथ स्थापित करें। मध्य कमल के बीच में कुश सहित क्रम से और अक्षत सहित स्थापित करें। हजार कलशों में से प्रत्येक को जोड़े वस्त्र से लपेटकर और कमल से ढककर रखे। कमल सोने के हों और उसमें विभिन्न रंग के रत्न जड़े हों। गायत्री और प्रणव के द्वारा शिव कुंभ स्थापित करे। विद्धहे पुरुषायैव महादेवाय धीमहि तत्रो रुद्र प्रचोदयात् इस मन्त्र से रुद्र की उपस्थिति सदैव होती है। वर्धनी में देवी गायत्री मन्त्र द्वारा देवी को स्थापित करे और ‘गणाम्बिकायै विद्धहे महातपायै धीमहि तत्रो गौरी प्रचोदयात्’ इस मन्त्र से पूजा करे॥४४-५०॥ प्रथम आवरण में वाम आदि कही गयी हैं। प्रथम आवरण का वर्णन किया गया। अब द्वितीय आवरण को ध्यानपूर्वक सुनो। हे सुब्रत! यहाँ सोलह शक्तियाँ हैं। यह पूर्व से

भद्रामाग्नेयचक्रे तु याम्ये तु कनकांडजाम्। अंबिकां नैऋते व्यूहे मध्यकुंभे तु पूजयेत्॥५३॥  
 श्रीदेवीं वारुणे भागे वागीशां वायुगोचरे। गोमुखीं सौम्यभागे तु मध्यकुंभे तु पूजयेत्॥५४॥  
 रुद्रव्यूहस्य मध्ये तु भद्रकर्णा समर्चयेत्। ऐंद्राग्निविदिशोर्मध्ये पूजयेदणिमां शुभाम्॥५५॥  
 याम्यपावकयोर्मध्ये लघिमां कमले न्यसेत्। राक्षसांतकयोर्मध्ये महिमां मध्यतो यजेत्॥५६॥  
 वरुणासुरयोर्मध्ये प्राप्तिं वै मध्यतो यजेत्। वरुणानिलयोर्मध्ये प्राकाम्यं कमले न्यसेत्॥५७॥  
 वित्तेशानिलयोर्मध्ये ईशित्वं स्थाप्य पूजयेत्। वित्तेशेशानयोर्मध्ये वशित्वं स्थाप्य पूजयेत्॥५८॥  
 ऐंद्रेशेशानयोर्मध्ये यजेत्कामावसायकम्। द्वितीयावरणं प्रोक्तं तृतीयावरणं शृणु॥५९॥  
 शक्त्यस्तु चतुर्विंशत्प्रधानकलशेषु च। पूजयेदव्यूहमध्ये तु पूर्ववद्विधिपूर्वकम्॥६०॥  
 दीक्षां दीक्षायिकां चैव चंडांचंडांशुनायिकाम्। सुमतिं सुमत्यायीं च गोपां गोपायिकां तथा॥६१॥  
 अथ नंदं च नंदायीं पितामहमतः परम्। पितामहायीं पूर्वाद्यं विधिना स्थाप्य पूजयेत्॥६२॥  
 एव संपूज्य विधिना तृतीयावरणं शुभम्। सौभद्रं व्यूहमासाद्य प्रथमावरणे क्रमात्॥६३॥  
 प्रागाद्यं विधिना स्थाप्य शक्त्यष्टकमनुक्रमात्। द्वितीयावरणे चैव प्रागाद्यं शृणु शक्त्यः॥६४॥  
 षोडशैव तु अभ्यर्च्य पद्ममुद्रां तु दर्शयेत्। बिंदुका बिंदुगर्भा च नादिनी नादगर्भजा॥६५॥  
 शक्तिका शक्तिगर्भा च परा चैव परापरा। प्रथमावरणेऽष्टौ च शक्त्यः परिकीर्तिताः॥६६॥

आरम्भ करते हुए अंत तक समाप्त होती हुई हैं। पूर्व में व्यूह के मध्य में सुभद्रा को स्थापित करके पूजा करनी चाहिए। ५१-५२।। दक्षिण-पूर्व (अग्नि कोण) के चक्र में भद्रा की पूजा करे। दक्षिण चक्र में कनकांडजा, दक्षिण-पश्चिम कोण के चक्र में मध्य कुंभ में अम्बिका की पूजा करे। पश्चिम भाग में श्री देवी की, उत्तर पश्चिम कोण (वायव्य) में वागीश देवी की पूजा करे। उत्तर में मध्य कुंड गोमुखी की पूजा करनी चाहिए। ५३-५४।। भक्त रुद्र व्यूह के मध्य में भद्रकर्णा की पूजा करे। पूर्व के मध्य में और दक्षिण पूर्व कोण में अणिमा शुभा देवी की पूजा करनी चाहिए। ५५।। दक्षिण के मध्य और दक्षिण-पूर्व दिशा के कमल में लघिमा (प्रकाश हीन) को स्थापित करे। दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम के बीच में महिमा की पूजा करे। ५६।। प्राप्ति की पूजा पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम के बीच में करे। पश्चिम और उत्तर-पश्चिम के कोण पर कमल पर प्राकाम्य को स्थापित करे। ५७।। उत्तर दिशा और उत्तर पश्चिम के कोण में ईशित्व को स्थापित करे और उसकी पूजा करे। उत्तर और उत्तर-पूर्व के कोण में वशित्व को स्थापित करके पूजा करनी चाहिए। ५८।। पूर्व दिशा और उत्तर-पूर्व कोण के मध्य में कामावशायक की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार द्वितीय आवरण का वर्णन किया गया है। अब तृतीय आवरण को ध्यानपूर्वक सुनिए। ५९।। प्रधान कलशों में चौबीस शक्तियाँ हैं। व्यूह के मध्य में पूर्ववत् विधिपूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिए। दीक्षा, दीक्षायिका, चंडा, चण्डाशुनायिका, सुमति, सुमतित्यायी, गोपा और गोपायिका की पूजा करनी चाहिए। ६०-६१।। तब वह नंद, नंदायी, पितामह, पितामहायी, को पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके क्रमशः स्थापित करके उनकी पूजा करके सौभद्र प्रथम आवरण व्यूह तक जाकर आठ शक्तियों की पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके स्थापित करे। सोलह शक्तियों की पूजा करने के बाद वह पद्ममुद्रा को दिखावे। प्रथम

चंडा चंडमुखी चैव चंडवेगा मनोजवा। चंडाक्षी चंडनिर्घोषा भृकुटी चंडनायिका॥६७॥  
मनोत्सेधा मनोध्यक्षा मानसी माननायिका। मनोहरी मनोहादी मनः प्रीतिर्महेश्वरी॥६८॥  
द्वितीयावरणे चैव षोडशैव प्रकीर्तिताः। सौभद्रः कथितो व्यूहो भद्रं व्यूहं शृणुष्व मे॥६९॥  
ऐन्द्री हौताशनी याम्या नैऋती वारुणी तथा। वायव्या चैव कौबेरी ऐशानी चाष्टशक्तयः॥७०॥  
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। हरिणी च सुवर्णा च कांचनी हाटकी तथा॥७१॥  
रुक्मिणी सत्यभामा च सुभगा जंबुनायिका। वागभवा वाक्यथा वाणी भीमा चित्ररथा सुधीः॥७२॥

वेदमाता हरिण्याक्षी द्वितीयावरणे स्मृता।

भद्राख्यः कथितो व्यूहः कनकाख्यं शृणुष्व मे॥७३॥

वज्रं शक्तिं च दंडं च खड्गं पाशं ध्वजं तथा। गदां त्रिशूलं क्रमशः प्रथमावरणे स्मृताः॥७४॥

युद्धा प्रबुद्धा चंडा च मुण्डा चैव कपालिनी।

मृत्युहन्त्री विरूपाक्षी कपर्दा कमलासना॥७५॥

दंष्ट्रिणी रंगिणी चैव लंबाक्षी कंकभूषणी। संभावा भाविनी चैव षोडशैव प्रकीर्तिताः॥७६॥

कथितः कनकव्यूहो ह्यम्बिकाख्यं शृणुष्व मे। खेचरी चात्मना सा च भवानी वह्निरूपिणी॥७७॥

वह्निनी वह्निनाभा च महिमामृतलालसा। प्रथमावरणे चाष्टौ शक्तयः सर्वसंमताः॥७८॥

क्षमा च शिखरा देवी ऋतुरत्ना शिला तथा। छाया भूतपनी धन्या इन्द्रमाता च वैष्णवी॥७९॥

तृष्णा रागवती मोहा कामकोपा महोत्कटा। इन्द्रा च बधिरा देवी षोडशैताः प्रकीर्तिताः॥८०॥

आवरण में ये आठ शक्तियाँ हैं—बिन्दुका, बिन्दुगर्भा, नादिनी, नादगर्भजा, शक्तिका, शक्तिगर्भा, परा, परापरा द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं। चण्डा, चण्डमुखी, चण्डवेगा, मनोजवा, चंडाक्षी, चण्ड-निर्घोषा भृकुटी, चण्डनायिका, मनोत्सेधा, मनोध्यक्षा, मानसी, माननायिका, मनोहरी, मनोहादी मनःप्रीति, महेश्वरी सौभद्र व्यूह का वर्णन इस प्रकार किया गया। अब भद्रव्यूह को ध्यानपूर्वक सुनिये। ६२-६९।। प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ हैं। ऐन्द्री, हौताशनी, याम्या, नैऋती, वारुणी, वायव्या, कौबेरी, ऐशानी। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं। हरिणी, सुवर्णा, कांचनी, हाटकी, रुक्मिणी, सत्यभामा, सुभगा, जंबुनायिका, वाग्मवा, वाक्यथा, वाणी, भीमा, चित्ररथा, सुधी, वेदमाता, हरिण्याक्षी।

इस तरह भद्र व्यूह का वर्णन किया गया। अब कनक व्यूह को मुझसे सुनिये। ७०-७३।।

प्रथम आवरण में ये शक्तियाँ हैं—वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, ध्वज, गदा, त्रिशूल। ७४।।

द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—युद्धा, प्रबुद्धा, चण्डा, मुण्डा, कपालिनी, मृत्यु, हन्त्री, विरूपाक्षी कपर्दा, कमलासना, दंष्ट्रिणी, रंगिणी, लंबाक्षी, कंकभूषणी, सम्भावा, भावनी। ७५-७६।।

कनक व्यूह का वर्णन किया गया। अब अम्बिका व्यूह का परिचय मुझसे सुनिये। प्रथम अवस्था में आठ शक्तियाँ हैं—खेचरी, आत्मना, भवानी, वह्निरूपिणी, वाह्निनी, वाह्निनाभा, महिमा और अमृतलालसा। ७७-७८।। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—क्षमा, शिखरा देवी, ऋतुरत्ना, शिला, छाया, भूतपनी, धन्या, इन्द्रमाता, वैष्णवी, तृष्णा, रागवती, मोहा, कामकोपा, महोत्कटा, इन्द्रा, बधिरादेवी। ७९-८०।। इस प्रकार

कथितश्चांबिकाव्यूहः श्रीव्यूहं शृणु सुव्रता। स्पर्शा स्पर्शवती गंधा प्राणापाना समानिका॥८१॥  
उदाना व्याननामा च प्रथमावरणे स्मृताः। तमोहता प्रभामोघा तेजिनी दहिनी तथा॥८२॥  
भीमास्या जालिनी चोषा शोषिणी रुद्रनायिका। वीरभद्रा गणाध्यक्षा चंद्रहासा च गह्वरा॥८३॥  
गणमातांबिका चैव शक्तयः सर्वसंमताः। द्वितीयावरणे प्रोक्ताः षोडशैव यथाक्रमात्॥८४॥  
श्रीव्यूहः कथितो भद्रं वागीशं शृणु सुव्रता। धारा वारिधरा चैव वह्निकी नाशकी तथा॥८५॥  
मत्यातीता महामाया वज्रिणी कामधेनुका। प्रथमावरणेऽप्येवं शक्तयोऽष्टौ प्रकीर्तिताः॥८६॥  
पयोष्णी वारुणी शांता जयंती च वरप्रदा। प्लाविनी जलमाता च पयोमाता महांबिका॥८७॥

रक्ता कराली चंडाक्षी महोच्छुष्मा पयस्विनी।

माया विद्येश्वरी काली कालिका च यथाक्रमम्॥८८॥

षोडशैव समाख्याताः शक्तयः सर्वसंमताः। व्यूहो वागीश्वरः प्रोक्तो गोमुखो व्यूह उच्यते॥८९॥  
शंकिनी हालिनी चैव लंकावर्णा च कलिकनी। यक्षिणी मालिनी चैव वमनी च रसात्मनी॥९०॥  
प्रथमावरणे चैव शक्तयोऽष्टौ प्रकीर्तिताः। चंडा घंटा महानादा सुमुखी दुर्मुखी बला॥९१॥  
रेवती प्रथमा घोरा सैन्या लीना महाबला। जया च विजया चैव अपरा चापराजिता॥९२॥  
द्वितीयावरणे चैव शक्तयः षोडशैव तु। कथितो गोमुखीव्यूहो भद्रकर्णी शृणुष्व मे॥९३॥  
महाजया विरूपाक्षी शुक्लाभाकाशमातृका। संहारी जातहारी च दंष्ट्राली शुष्करेवती॥९४॥  
प्रथमावरणे चाष्टौ शक्तयः परिकीर्तिताः। पिपीलिका पुण्यहारी अशनी सर्वहारिणी॥९५॥

अभिका व्यूह को बताया गया। हे सुव्रत! श्रीव्यूह को सुनो। प्रथम आवरण में हैं—स्पर्शा, स्पर्शवती, गंधा, प्राणापाना, समानिका:, उदाना, व्याननामा। द्वितीय आवरण में सर्वसम्मत से मान्य सोलह शक्तियाँ हैं—तमोहता, प्रभा, मोघा, तेजिनी, दहिनी, भीमास्या, जालिनी, चोषा, शोषिणी, रुद्रनायिका, वीरभद्रा, गणाध्यक्षा चंद्रहासा, गह्वरा, गणमात, अंबिका॥८१-८४॥। इस प्रकार आप को श्रीव्यूह को बताया। हे सुव्रत! अब वागीश व्यूह को ध्यानपूर्वक सुनो। प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ हैं—धारा, वारिधरा, वह्निकी, नाशकी, मत्यातीता, महामाया, वज्रिणी, कामधेनुका॥८५-८६॥। सर्वसम्मत सोलह शक्तियाँ द्वितीय आवरण में हैं—पयोष्णी, वारुणी शांता, जयंती, वरप्रदा, प्लाविनी, जलमाता, पयोमाता, महांबिका, रक्ता, कराली, चंडाक्षी, महोच्छुष्मा, पयस्विनी, मायाविद्येश्वरी, कालीकालिका॥८७-८९॥। वागीश व्यूह को बताया अब गोमुख व्यूह को कहता हूँ। प्रथम अवरण में आठ शक्तियाँ हैं—शंकिनी, हालिनी, लंकावर्णा, कलिकनी, यक्षिणी, मालिनी, वमनी, रसात्मनी। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—चंडा, घंटा, महानादा, सुमुखी, दुर्मुखी, बला, रेवती, प्रथमा, घोरा, सैन्या, लीना, महाबला, जया, विजया, अपरा, अपराजिता।

गोमुखी व्यूह को कहा! अब मुझसे भद्रकर्णीव्यूह को सुनो॥९०-९३॥। प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ हैं—महाजया, विरूपाक्षी, शुक्लाभा, आकाशमातृका, संहारी, जातहारी, दंष्ट्राली, शुष्करेवती। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—पिपीलिका, पुण्यहारी, अशनी, सर्वहारिणी, भद्रहा, विश्वहारी, हिमा, योगेश्वरी, छिद्रा,

भद्रहा विश्वहारी च हिमा योगेश्वरी तथा। छिद्रा भानुमती छिद्रा सैंहिकी सुरभी समा॥१६॥  
सर्वभव्या च वेगाख्या शक्तयः षोडशैव तु। महाव्यूहाष्टकं प्रोक्तमुपव्यूहाष्टकं शृणु॥१७॥  
अणिमाव्यूहमावेष्य प्रथमावरणे क्रमात्। ऐंद्रा तु चित्रभानुश्च वारुणी दंडिरेव च॥१८॥  
प्राणरूपी तथा हंसः स्वात्मशक्तिः पितामहः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीया वरणं शृणु॥१९॥  
केशवो भगवान् रुद्रशंद्रमा भास्करस्तथा। महात्मा च तथा ह्यन्तरात्मा महेश्वरः॥२००॥  
परमात्मां ह्यणुर्जीविः पिंगलः पुरुषः पशुः। भोक्ता भूतपतिर्भीमो द्वितीयावरणे स्मृताः॥२०१॥

कथितश्चाणिमाव्यूहो लघिमाख्यं वदामि ते।

श्रीकंठोत्तश्च ह्यणुर्जीविः सूक्ष्मश्च त्रिमूर्तिः शशकस्तथा॥२०२॥

अमरेशः स्थितीशश्च दारतश्च तथाष्टमः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२०३॥  
स्थाणुहर्षश्च दंडेशो भौत्तीशः सुरपुंगवः। सद्योजातोऽनुग्रहेशः क्रूरसेनः सुरेश्वरः॥२०४॥  
क्रोधीशश्च तथा चंडः प्रचंडः शिव एव च। एकरुद्रस्तथाकूर्मश्चैकनेत्रश्चतुर्मुखः॥२०५॥  
द्वितीयावरणे रुद्राः षोडशैव प्रकीर्तिताः। कथितो लघिमाव्यूहो महिमां शृणु सुव्रत॥२०६॥  
अजेशः क्षेमरुद्रश्च सोमोऽशो लांगली तथा। दंडारुश्चार्धनारी च एकांतश्चांत एव च॥२०७॥

पाली भुजंगनामा च पिनाकी खङ्गिरेव च।

काम ईशस्तथा श्रेतो भृगुः षोडश वै स्मृताः॥२०८॥

कथितो महिमाव्यूहः प्राप्तिव्यूहं शृणुष्व मे। संवर्तो लकुलीशश्च वाडवो हस्तिरेव च॥२०९॥

भानुमती छिद्रा, सैंहिकी, सुरभी, समा, सर्वभव्या और वेगाख्या। इस प्रकार आठ महाव्यूहों को मैंने कहा! अब आठ उपव्यूहों को सुनो॥१४-१७॥ प्रथम आवरण में अणिमा व्यूह में आवेष्टित आठ शक्तियाँ हैं—ऐंद्रा, चित्रभानु, वारुणी, दंडि, प्राणरूपी, हंस, स्वात्मशक्ति, पितामह। प्रथम आवरण को बताया। अब द्वितीय आवरण को सुनो॥१८-१९॥

द्वितीय आवरण में सोलह हैं—केशव, भगवान रुद्र, चन्द्रमा, भास्कर, महात्मा, अंतरात्मा, महेश्वर, परमात्मा, अणुर्जीव, पिंगल, पुरुष, पशु, भोक्ता, भूतपति, भीम। इस प्रकार अणिमाव्यूह को कहा अब लघिमाव्यूह को कहता हूँ॥२००-२०१॥ प्रथम आवरण में श्रीकण्ठ, अन्त (अनन्त), सूक्ष्म, त्रिमूर्ति, शशक, अमरेश, स्थितीश और दारत वे आठ हैं। इस प्रकार प्रथम आवरण बताया गया। अब द्वितीय आवरण को सुनो॥२०२-२०३॥ द्वितीय आवरण में सोलह रुद्र हैं—स्थाणु, हर, दंडेश, भौत्तीश, सद्योजात, अनुग्रहेश, क्रूरसेन, सुरेश्वर, क्रोधीश, चंड, प्रचंड, शिव, एकरुद्र, कूर्म, एकनेत्र, चतुर्मुख॥२०४-२०५॥ द्वितीय आवरण में सोलह रुद्र कहे गये हैं। इस प्रकार लघिमा व्यूह को कहा। अब महिमा व्यूह को सुनो॥२०६॥ महिमा व्यूह में सोलह हैं—अजेश, क्षेमरुद्र, सोमांश, लांगली, दंडारु, अर्धनारी, एकान्त, अन्त, पाली, भुजंगनामा, पिनाकी, खङ्गि, काम, ईश, श्वेत, भृगु॥२०७-२०८॥ इस प्रकार महिमा व्यूह को बताया गया। अब प्राप्ति व्यूह को ध्यान से सुनो। ये प्रथम आवरण में हैं—संवर्त, लकुलीश, वाडव, हस्ति, चंडयक्ष, गणपति,

चंडयक्षो गणपतिर्महात्मा भृगुजोऽष्टमः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥११०॥  
 त्रिविक्रमो महाजिह्वो ऋक्षः श्रीभद्र एव च। महादेवो दधीचश्च कुमारश्च परावरः॥१११॥  
 महादंष्ट्रः करालश्च सूचकश्च सुवर्धनः। महाध्वांक्षो महानन्दो दंडी गोपालकस्तथा॥११२॥  
 प्राप्तिव्यूहः समाख्यातः प्राकाम्यं शृणु सुव्रत। पुष्पदंतो महानागो विपुलानन्दकारकः॥११३॥  
 शुक्लो विशालः कमलो बिल्वश्चारुण एव च। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥११४॥  
 रतिप्रियः सुरेशानश्चित्रांगश्च सुदुर्जयः। विनायकः क्षेत्रपालो महामोहश्च जंगलः॥११५॥  
 वत्सपुत्रो महापुत्रो ग्रामदेशाधिपस्तथा। सर्वावस्थाधिपो देवो मेघनादः प्रचंडकः॥११६॥  
 कालदूतश्च कथितो द्वितीयावरणं स्मृतम्। प्राकाम्यः कथितो व्यूह ऐश्वर्यं कथयामि ते॥११७॥  
 मंगला चर्चिका चैव योगेशा हरदायिका। भासुरा सुरमाता च सुंदरी मातृकाष्टमी॥११८॥  
 प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणे शृणु। गणाधिपश्च मंत्रज्ञो वरदेवः षडाननः॥११९॥  
 विदग्धश्च विचित्रश्च अमोघो मोघ एव च। अश्वी रुद्रश्च सोमेशश्चोत्तमोदुंबरस्तथा॥१२०॥  
 नारसिंहश्च विजयस्तथा इन्द्रगुहः प्रभुः। अपांपतिश्च विधिना द्वितीयावरणं स्मृतम्॥१२१॥  
 ऐश्वर्यः कथितो व्यूहो वशित्वं पुनरुच्यते। गगनो भवनश्चैव विजयो ह्यजयस्तथा॥१२२॥  
 महाजयस्तथांगारोव्यंगारश्च महायशाः। प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणे शृणु॥१२३॥  
 सुंदरश्च प्रचंडेशो महावर्णो महासुरः। महारोमा महागर्भः प्रथमः कनकस्तथा॥१२४॥  
 खरजो गरुडश्चैव मेघनादोऽथ गर्जकः। गजश्च छेदको बाहुस्त्रिशिखो मारिवेच॥१२५॥

महात्मा और भृगुज। प्रथम आवरण को बताया। अब द्वितीय आवरण को सुनो॥१०९-११०॥ द्वितीय आवरण सोलह से बने हैं—त्रिविक्रम, महाजिह्व, ऋक्ष, श्रीभद्र, महादेव, दधीच, कुमार, परावर, महादंष्ट्र, कराल, सूचक, सुवर्धन, महाध्वांक्ष, महानन्द, दंडी, गोपालक॥१११-११२॥ प्राप्तिव्यूह को कहा गया। हे सुव्रत! प्राकाम्य व्यूह को सुनो—पुष्पदंत, महानाग, विमलानन्दकारक, शुक्ल, विशाल, कमल, बिल्व और अरुण ये आठ प्राकाम्य के प्रथम आवरण होते हैं। अब द्वितीय आवरण को सुनो। रतिप्रिय, सुरेशान, चित्रांग, सुदुर्जय, विनायक, क्षेत्रपाल, महामोह, जंगल, वत्सपुत्र, महापुत्र, ग्रामदेशाधिप, सर्वावस्थाधिप, देव, मेघनाद, प्रचंडक और कालदूत द्वितीय आवरण में कहे गये हैं। इस प्रकार प्राकाम्यव्यूह का वर्णन किया गया है। अब ऐश्वर्य व्यूह को कहता हूँ॥११३-११७॥ ऐश्वर्य व्यूह के प्रथम आवरण में मंगला, चर्चिका, योगेशा, हरदायिका, भासुरा, सुरमाता, सुंदरी, मातृका ये आठ होते हैं। द्वितीय आवरण को सुनो। गणाधिप, मंत्रज्ञ, वरदेव, षडानन, विदग्ध, विचित्र, अमोघ, मोघ, अश्वीरुद्र, सोमेश, उत्तम, उदुम्बर, नारसिंह, विजय, प्रभु इन्द्रगुह, अपांपति। ऐश्वर्य व्यूह का वर्णन किया गया॥११८-१२२॥ अब वशित्व व्यूह को कहता हूँ। वशित्वव्यूह के प्रथम आवरण में गगन, हवन, विजय, अजय, महाजय, अंगार, व्यंगार, महायश प्रथम आवरण में होते हैं। द्वितीय आवरण में सुन्दर, प्रचंडेश, महावर्ण, महासुर, महारोमा, महागर्भ, प्रथम, कनक, खरज, गरुण, मेघनाद, गर्जक, गज, छेदक, बाहु, त्रिशिष, और मारि। वशित्वव्यूह का वर्णन किया गया। अब कामावसायिक व्यूह को ध्यानपूर्वक

वशित्वं कथितो व्यूहः शृणु कामावसायिकम्। विनादो विकटश्चैव वसंतोऽभय एव च॥१ २६॥  
विद्युन्महाबलश्चैव कमलो दमनस्तथा। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१ २७॥  
धर्मश्चातिबलः सर्पे महाकायो महाहनुः। सबलश्चैव भस्मांगी दुर्जयो दुरतिक्रमः॥१ २८॥  
बैतालो रौरवश्चैव दुर्धरो भोग एव च। वज्रः कालाग्निरुद्रश्च सद्योनादो महागुहः॥१ २९॥  
द्वितीयावरणं प्रोक्तं व्यूहश्चैवावसायिकः। कथितः षोडशो व्यूहो द्वितीयावरणं शृणु॥१ ३०॥  
द्वितीयावरणे चैव दक्षव्यूहे च शक्तयः। प्रथमावरणे चाष्टौ बाह्ये षोडश एव च॥१ ३१॥

मनोहरा महानादा चित्रा चित्ररथा तथा।  
रोहिणी चैव चित्रांगी चित्ररेखा विचित्रिका॥१ ३२॥  
प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणं शृणु।  
चित्रा विचित्ररूपा च शुभदा कामदा शुभा॥१ ३३॥  
क्रूरा च पिंगला देवी खण्डिका लंबिकासती।  
दंष्ट्राली राक्षसी ध्वंसी लोलुपा लोहितामुखी॥१ ३४॥

द्वितीयावरणे प्रोक्ताः षोडशैव समासतः। दक्षव्यूहः समाख्यातो दाक्षव्यूहं शृणुष्व मे॥१ ३५॥  
सर्वासती विश्वरूपा लंपटा चामिषप्रिया। दीर्घदंष्ट्रा च वज्रा च लंबोष्ठी प्राणहारिणी॥१ ३६॥  
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। गजकर्णाश्वकर्णा च महाकाली सुभीषणा॥१ ३७॥  
वातवेगरवा घोरा घनाघनरवा तथा। वरघोषा महावर्णा सुघंटा घंटिका तथा॥१ ३८॥  
घंटेश्वरी महाघोरा घोरा चैवातिघोरिका। द्वितीयावरणे चैव षोडशैव प्रकीर्तिताः॥१ ३९॥  
दाक्षव्यूहः समाख्यातश्चंडव्यूहं शृणुष्व मे। अतिघंटा चातिघोरा कराला करभा तथा॥१ ४०॥

सुनो। प्रथम आवरण में विनाद, विकट, वसंत, अभय, विद्युत, महाबल, कमल और दमन होते हैं। अब द्वितीय आवरण को सुनो॥१ २३-१ २७॥। धर्म, अतिबल, सर्प, महाकाय, महाहनु, सबल, भस्मांगी, दुर्जय, दुरतिक्रम, बैताल, रौरव, दुर्धर, भोग, वज्र, कालाग्नि, रुद्र, सद्योनाद, महागुह ये द्वितीय आवरण में हैं। इस प्रकार सोलह व्यूहों का वर्णन किया गया। अब द्वितीय आवरण को ध्यान से सुनो॥१ २८-१ ३०॥। दक्ष व्यूह के प्रथम आवरण में आठ और बाह्य आवरण में सोलह शक्तियाँ ही हैं॥१ ३१॥। प्रथम आवरण में मनोहरा, महानादा, चित्रा, चित्ररथा, रोहिणी, चित्रांगी, चित्ररेखा, विचित्रिका॥१ ३२॥। द्वितीय आवरण में चित्रा, विचित्ररूपा, सुभदा, कामदा, शुभा, क्रूरा, पिंगला, देवी, खण्डिका, लंबिका, सती, दंष्ट्राली, राक्षसी, ध्वंसी, लोलुपा, लोहितामुखी संक्षेप में सोलह ही कही गयी हैं। दक्ष व्यूह को कहा गया अब दाक्षव्यूह को सुनो॥१ ३३-१ ३५॥।

प्रथम आवरण में निम्नलिखित सम्मिलित हैं। सर्वाशती, विश्वरूपा, लम्पटा, आमिषप्रिया, दीर्घदंष्ट्रा, वज्रा, लंबोष्ठी, प्राणहारिणी में यह प्रथम आवरण मैंने कहा। अब द्वितीय आवरण सुनो। गजकर्णा, अश्वकर्णा महाकाली, सुभीषणा, वातवेगरवा, अघोरा, घनाघनरवा, वरघोषा, महावर्णा, सुघंटा, घंटिका, घंटा, ईश्वरी, महाघोरा, घोरा, अतिघोरिका द्वितीय आवरण में ये सोलह कही गयी हैं॥१ ३६-१ ३९॥। इस प्रकार दाक्षव्यूह

विभूतिर्भेगदा कान्तिः शंखिनी चाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणे शृणु॥१४१॥  
 पत्रिणी चैव गांधारी योगमाता सुपीवरा। रक्ता मालांशुका वीरा संहारी मांसहारिणी॥१४२॥  
 फलहारी जीवहारी स्वेच्छाहारी च तुंडिका। रेवती रंगिणी संगा द्वितीये षोडशैव तु॥१४३॥  
 चंडव्यूहः समाख्याश्शंडाव्यूहस्तथोच्यते। चंडी चंडमुखी चंडा चंडवेगा महारवा॥१४४॥  
 भृकुटी चंडभूशैव चंडरूपाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१४५॥  
 चंद्रघ्राणा बला चैव बलजिह्वा बलेश्वरी। बलवेगा महाकाया महाकोपा च विद्युता॥१४६॥  
 कंकाली कलशी चैव विद्युता चंडघोषिका। महाघोषा महारावा चंडभाऽनंगचंडिका॥१४७॥  
 चंडायाः कथितो व्यूहो हरव्यूहं शृणुष्व मे। चंडाक्षी कामदा देवी सूकरी कुकुटानना॥१४८॥  
 गांधारी दंदुभी दुर्गा सौमित्रा चाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१४९॥  
 मृतोद्धवा महालक्ष्मीर्वर्णदा जीवरक्षिणी। हरिणी क्षीणजीवा च दंडवक्त्रा चतुर्भुजा॥१५०॥  
 व्योमचारी व्योमरूपा व्योमव्यापी शुभोदया। गृहचारी सुचारी च विषाहारी विषार्तिहा॥१५१॥  
 हरव्यूहः समाख्यातो हराया व्यूह उच्यते। जंभाच्युता च कंकारी देविका दुर्धरावहा॥१५२॥  
 चंडिका चपला चेति प्रथमावरणे स्मृताः। चंडिका चामरी चैव भंडिका च शुभानना॥१५३॥  
 पिंडिका मुंडिनी मुंडा शाकिनी शाङ्करी तथा। कर्तरी भर्तरी चैव भागिनी यज्ञदायिनी॥१५४॥  
 यमदंष्ट्रा महादंष्ट्रा कराला चेति शक्तयः। हरायाः कथितो व्यूहः शौँडव्यूहं शृणुष्व मे॥१५५॥  
 विकराली कराली च कालजंघा यशस्विनी। वेगा वेगवती यज्ञा वेदांगा चाष्टमी स्मृता॥१५६॥

को मैंने कहा। अब चण्ड व्यूह को सुनो—प्रथम आवरण में अतिधण्टा, अतिधोरा, कराला, करभा, विभूति, भोगदा, कान्ति शंखिनी, ये आठ होती हैं। प्रथम आवरण मैंने कहा, अब द्वितीय आवरण सुनो॥१४०-१४१॥। वे पत्रिणी, गान्धारी, योगमाता सुपीवरा, रक्ता, मालांकुशा, वीरा, संहारी, मांसहारिणी, फलाहारी, जीवहारी, स्वेच्छाहारी, तुंडिका, रेवती, रंगिणी, संगा ये सोलह होती हैं। चंडव्यूह मैंने कहा। इसके बाद चंडाव्यूह कहता हूँ। चण्डी, चण्डमुखी, चण्डा, चण्डवेगा, महारवा, भृकुटी, चण्डभू और चन्डरूपा ये आठ हैं। प्रथम आवरण मैंने कहा। अब द्वितीय आवरण सुनो, चन्द्रघ्राणा, बला, बलजिह्वा, बलेश्वरी, बलवेगा, महाकाया, महाकोपा, विद्युता, कंकाली, कलशी, विद्युता, चण्डघोषिका, महाघोषा, महारावा, चंडभा, अनंगचण्डिका ये चण्डा व्यूह मैंने कहा। अब हर व्यूह सुनो॥१४२-४७॥। प्रथम आवरण में चण्डाक्षी, कामदादेवी, सूकरी, कुकुटानना, गान्धारी, दन्दुभी, दुर्गा, सौमित्रा ये आठ हैं। प्रथम आवरण मैंने कहा, अब द्वितीय आवरण को सुनो॥१४८-१४९॥। मृतोद्धवा, महालक्ष्मी, वर्णदा, जीवरक्षिणी, हरिणी, क्षीणजीवा, दण्डवक्त्रा, चतुर्भुजा, व्योमचारी, व्योमरूपा, व्योमव्यापी, सुभोदया, गृहचारी, सुचारी, विषाहारी, विषार्तिहा। हरव्यूह मैंने कहा, अब हराया व्यूह कहता हूँ। जम्भाच्युता, कंकारी, देविका, दुर्धरावहा, चण्डिका, चपला ये प्रथम आवरण में हैं। चण्डिका, चामरी भंडिका, शुभानना, पिंडिका, मुण्डिनी, मुण्डा, शाकिनी, शांकरी, कर्तरी, भर्तरी, भागिनी, यज्ञदायिनी, यमदंष्ट्रा, महादंष्ट्रा, कराला ये शक्तियाँ हैं॥१५०-१५५॥। हराया व्यूह को कहा, अब मुझसे

प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु।  
वज्ञा शंखातिशंखा वा बला चैवाबला तथा॥१५७॥

अंजनी मोहिनी माया विकटांगी नली तथा।

गंडकी दंडकी घोणा शोणा सत्यवती तथा॥१५८॥

कल्लोला चेति क्रमशः षोडशैव यथाविधि।

शौँडव्यूहः समाख्यातः शौँडाया व्यूह उच्यते॥१५९॥

दंतुरा रौद्रभागा च अमृता सकुला शुभा। चलजिह्वार्यनेत्रा च रूपिणी दारिका तथा॥१६०॥

प्रथमा वरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु।

खादिका रूपनामा च संहारी च क्षमांतका॥१६१॥

कंडिनी पेषिणी चैव महात्रासा कृतांतिका। दंडिनी किंकरी बिंबा वर्णिनी चामलांगिनी॥१६२॥

द्रविणी द्राविणी चैव शत्तयः षोडशैव तु।

कथितो हि मनोरम्यः शौँडाया व्यूह उत्तमः॥१६३॥

प्रथमाख्यं प्रवक्ष्यामि व्यूहं परमशोभनम्।

प्लविनी प्लावनी शोभा मंदा चैव मदोत्कटा॥१६४॥

मंदाऽक्षेपा महादेवी प्रथमावरणे स्मृताः। कामसंदीपिनी देवी अतिरूपा मनोहरा॥१६५॥

महावशा मदग्राहा विह्वला मंदविह्वला। अरुणा शोषणा दिव्या रेवती भांडनायिका॥१६६॥

स्तंभिनी घोररक्ताक्षी स्मररूपा सुघोषणा। व्यूहः प्रथम आख्यातः स्वायंभुव यथा तथा॥१६७॥

कथितं प्रथमव्यूहं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व मे। घोरा घोरतराघोरा अतिघोराधनायिका॥१६८॥

शौँड व्यूह सुनो। प्रथम आवरण में विकराली, कराली, कालजंधा, यशस्विनी, वेगा, वेगवती, यज्ञा, वेदांगा ये आठ प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में वज्ञा, शंखा अतिशंखा, बला, अबला, अंजनी, मोहिनी, माया, विकटांगी, नली, गण्डकी, दण्डकी, घोणा, शोणा, सत्यवती, कल्लोला ये क्रमशः सोलह कही गयी हैं। शौँड व्यूह को मैंने कहा। अब शौँडाया व्यूह कहता हूँ॥१५६-१५९॥ दंतुरा, रौद्रभागा, अमृता, शकुलाशुभा, चलजिह्वा, आर्यनेत्रा, रूपिणी, दारिका ये प्रथम आवरण में हैं। अब द्वितीय आवरण सुनो। खादिका, रूपनामा, संहारी, क्षमा, अंतका, कंडिनी, पेषिणी, महात्रासा, कृतान्तिका, दंडिनी, किंकरी, बिम्बा, वर्णिनी, अम्लांगिनी द्रविणी, द्रावणी ये सोलह शक्तियाँ इस प्रकार शोभन और मनोरम शौँडाया व्यूह का वर्णन किया॥१६०-१६३। अब मैं उत्तम प्रथम व्यूह की शक्तियों का वर्णन करता हूँ। इसके प्रथम आवरण में ये शक्तियाँ हैं। प्लविनी, प्लाविनी, शोभा, मंदा, आक्षेपा, मदोत्कटा, महादेवी ये प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में काम संदीपिनी, देवी अतिरूपा, मनोहरा, महावशा, मदग्राहा, विह्वला, भद्रविह्वला, अरुणा, शोषणा, दिव्या, रेवती, भांडनायिका, स्तंभिनी, घोररक्ताक्षी, स्मररूपा, सुघोषणा है। हे सुन्त्र! इस प्रकार प्रथम व्यूह का वर्णन किया॥१६४-१६७॥ अब मैं प्रथम व्यूह का वर्णन करता हूँ। सुनो—इसके प्रथम आवरण में घोरा, घोरतरा

धावनी क्रोष्टुका मुण्डा चाष्टमी परिकीर्तिता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१६९॥  
भीमा भीमतरा भीमा शास्ता चैव सुवर्तुला। स्तंभिनी रोदनी रौद्रा रुद्रवत्यचला चला॥१७०॥  
महाबला महाशांतिः शाला शांता शिवाशिवा। बृहत्कक्षा महानासा षोडशैव प्रकीर्तिताः॥१७१॥

प्रथमायाः समाख्यातो मन्मथव्यूह उच्यते।  
तालकर्णी च बाला च कल्याणी कपिला शिवा॥१७२॥

इष्टिस्तुष्टिः प्रतिज्ञा च प्रथमावरणे स्मृताः।  
ख्यातिः पुष्टिकरी तुष्टिर्जला चैव श्रुतिर्धृतिः॥१७३॥

कामदा शुभदा सौम्या तेजिनी कामतंत्रिका। धर्मा धर्मवशा शीला पापहा धर्मवर्धिनी॥१७४॥  
मन्मथः कथितो व्यूहो मन्मथायाः शृणुष्व मे। धर्मरक्षा विधाना च धर्मा धर्मवती तथा॥१७५॥  
सुमतिर्दुर्मतिर्मेधा विमला चाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१७६॥

शुद्धिर्बुद्धिर्द्युतिः कांतिर्वर्तुला मोहवर्धिनी।  
बला चातिबला भीमा प्राणवृद्धिकरी तथा॥१७७॥

निर्लज्जा निर्धृणा मंदा सर्वपापक्षयंकरी। कपिला चातिविधुरा षोडशैताः प्रकीर्तिता॥१७८॥  
मन्मथायिक उत्तस्ते भीमव्यूहं वदामि च। रक्ता चैव विरक्ता च उद्वेगा शोकवर्धिनी॥७९॥  
कामा तृष्णा क्षुधा मोहा चाष्टमी परिकीर्तिता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१८०॥

जया निद्रा भयालस्या जलतृष्णोदरी दरा।

कृष्णा कृष्णांगिनी वृद्धा शुद्धोच्छिष्टाशनी वृषा॥१८१॥

अघोरा, अतिघोरा, अघनायिका, धावनी, क्रोष्टुका, मुण्डा, ये आठ कही गयी हैं। मैंने प्रथम आवरण को बताया अब द्वितीय आवरण सुनो॥१६८-१६९॥

भीमा, भीमतरा, भीमा, शास्ता सुवर्तुला, स्तंभिनी, रोदनी, रौद्रा, रुद्रवती, अचलाचला, महाबला, महाशांति, शाला, शांता, शिवाशिवा, बृहत्कक्षा, महानासा ये सोलह हैं। प्रथम आवरण को बताया। अब मन्मथव्यूह को बताता हूँ। तालकर्णी, बाला, कल्याणी, कपिला, शिवा, इष्टि, तुष्टि, प्रतिज्ञा, ये प्रथम आवरण में हैं॥१७०-१७१॥

ख्याति, पुष्टिकरी, तुष्टि, जला, श्रुति धृति, कामदा, शुभदा, सौम्या, तेजिनी, कामतंत्रिका, धर्मा, धर्मवशा, शीला, पापहा, धर्मवर्धिनी, ये मन्मथ, के द्वितीय आवरण में हैं॥१७२-१७४॥ इस प्रकार मन्मथ व्यूह को कहा। अब मन्मथायिक व्यूह को सुनो। धर्मरक्षा, विधाना, धर्मा, अधर्मवती, सुमति, दुर्मति, मेधा, विमला ये आठ प्रथम आवरण में कहे गये हैं। अब दूसरे आवरण में सुनो॥१७५-१७६॥ द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—शुद्धि, बुद्धि, द्युति, कांति, वर्तुला, मोहवर्धिनी, बला, अतिबला, भीमा, प्राणवृद्धिकरी, निर्लज्जा, निर्धृणा, मंदा, सर्वपापक्षयंकरी, कपिला, अतिविधुरा, ये सोलह हैं॥१७७-१७८॥ मन्मथायिक व्यूह मैंने कहा। अब भीम व्यूह को सुनो। रक्ता, विरक्ता, उद्वेगा, शोकवर्धिनी, कामा, तृष्णा, क्षुधा, मोहा, ये आठ प्रथम आवरण में कही गई हैं॥१७९-१८०॥ द्वितीय आवरण में जया, निद्रा, भयालस्या, जलतृष्णोदरी, दरा।

कामना शोभिनी दग्धा दुःखदा सुखदावली।  
भीमव्यूहः समाख्यातो भीमायीव्यूह उच्यते॥१८२॥

आनन्दा च सुनन्दा च महानन्दा शुभंकरी। वीतरागा महोत्साहा जितरागा मनोरथा॥१८३॥  
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। मनोन्मनी मनःक्षेभा मदोन्मत्ता मदाकुला॥१८४॥  
मंदगर्भा महाभासा कामानन्दा सुविह्नला। महावेगा सुवेगा च महाभोगा क्षयावहा॥१८५॥  
क्रमिणी क्रामिणी वक्रा द्वितीयावरणे स्मृताः। कथितं तव भीमायीव्यूहं परमशोभनम्॥१८६॥  
शाकुनं कथयाम्यद्य स्वायंभुव मनोत्सुकम्। योगा वेगा सुवेगा च अतिवेगा सुवासिनी॥१८७॥  
देवी मनोरथा वेगा जलावर्ता च धीमती। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१८८॥  
रोधिनी क्षेभिणी बाला विप्राशेषा सुशोषिणी। विद्युता भासिनी देवी मनोवेगा च चापला॥१८९॥

विद्युजिह्वा महाजिह्वा भृकुटीकुटिलानना।  
फुल्लज्वाला महाज्वाला सुज्वाला च क्षयांतिका॥१९०॥  
शाकुनः कथितो व्यूहः शाकुनायाः शृणुष्व मे।  
ज्वालिनी चैव भस्मांगी तथा भस्मांगता तता॥१९१॥

भाविनी च प्रजा विद्या ख्यातिश्वैवाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१९२॥  
उल्लेखा च पताका च भोगोभोगवती खगा। भोगभोगव्रता योगा भोगाख्या योगपारगा॥१९३॥

ऋद्धिर्बुद्धि धृतिः कांतिः स्मृतिः साक्षाच्छ्रुतिर्धरा।  
शाकुनाया महाव्यूहः कथिताः कामदायकः॥१९४॥

कृष्णा, कृष्णांगिनी, वृद्धा, शुद्धोच्छिष्टाशनी, वृषा, कामना, शोभिनी, दग्धा, दुःखदा, सुखदावली ये द्वितीय आवरण में हैं। इस प्रकार भीमव्यूह को बताया। अब भीमायी व्यूह को सुनो। आनन्दा, सुनन्दा, महानन्दा, शुभंकरी, वीतरागा, महोत्साहा, जितरागा, मनोरथा, ये प्रथम आवरण में हैं। अब द्वितीय आवरण की सुनो। मनोन्मनी, मनःक्षेभा, मदोन्मत्ता, मदाकुला, मंदगर्भा, महाभासा, कामानन्दा, सुविह्नला, महावेगा, सुवेगा, महाभोगा, क्षयावहा, क्रमिणी, क्रामिणी, वक्रा, ये द्वितीय आवरण में हैं। इस प्रकार परम शोभन भीमायीव्यूह को मैंने कहा॥१८१-१८६॥ हे स्वयंभू मनु! अब मैं शाकुन व्यूह को बताता हूँ—योगा, वेगा, सुवेगा, अतिवेगा, सुवासिनी, देवी, मनोरथा, वेगा, जलावर्ता, धीमती ये प्रथम आवरण में हैं। रोधिनी, क्षेभिणी, बाला, विप्राशेषा, सुशोषिणी, विद्युता, भासिनी, देवी, मनोवेगा, चापला, विद्युजिह्वा, महाजिह्वा, भृकुटीकुटिलानना, फुल्लज्वाला, महाज्वाला, सुज्वाला, क्षयांतिका शाकुन व्यूह में ये सब द्वितीय आवरण हैं॥१८७-१९०॥ इस प्रकार व्यूह शाकुन मैंने कहा। अब शाकुन व्यूह को सुनो। ज्वालिनी, भस्मांगी, भस्मांगता, तता, भाविनी, प्रजा, विद्या, ख्याति में आठ प्रथम आवरण में हैं। उल्लेखा, पताका, भोगा, उपभोगवती, खगा, भोगा, भोगव्रता, योगा, भोगाख्या, योगपारगा, ऋद्धि, बुद्धि धृति, कांति, स्मृति, श्रुतिर्धरा ये कामना के पूरा करने वाले शाकुन व्यूह के द्वितीय आवरण में हैं॥१९१-१९४॥ हे स्वयंभू मनु! शोभन सुमति नामक व्यूह को सुनो। परेष्टा, परा, दृष्टा,

स्वायंभुव शृण व्यूहं सुमत्याख्यं सुशोभनम्। परेष्ठा च परा दृष्टा ह्यमृता फलनाशिनी॥१९५॥  
हिरण्याक्षी सुवर्णाक्षी देवी साक्षात्कपिंजला। कामरेखा च कथितं प्रथमावरणं शृणु॥१९६॥

रत्नद्वीपा च सुद्वीपा रत्नदा रत्नमालिनी।

रत्नशोभा सुशोभा च महाशोभा महाद्युतिः॥१९७॥

शांबरी बंधुरा ग्रंथिः पादकर्णा करानना। हयग्रीवा च जिह्वा च सर्वभासेति शक्तयः॥१९८॥  
कथितः सुमतिव्यूहः सुमत्या व्यूह उच्यते। सर्वाशी च महाभक्षा महादंष्ट्रातिरौरवा॥१९९॥  
विस्फालिंगा विलिंगा च कृतांता भास्करानना। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२००॥  
रागा रंगवती श्रेष्ठा महाक्रोधा च रौरवा। क्रोधनी वसनी चैव कलहा च महाबला॥२०१॥  
कलंतिका चतुर्भेदा दुर्गा वै दुर्गमानिनी। नालीसुनालीसौम्या च इत्येव कथितं मया॥२०२॥  
गोपव्यूहं वदाम्यत्र शृणु स्वायंभुवाखिलम्। पाटलीपाटवी चैव पाटी विटिपिटा तथा॥२०३॥  
कंकटा सुपटा चैव प्रघटा च घटोद्धवा। प्रथमावरणं चात्र भाषया कथितं मया॥२०४॥  
नादाक्षी नादरूपा च सर्वकारी गमाऽगमा। अनुचारी सुचारी च चण्डनाडी सुवाहिनी॥२०५॥  
सुयोगा च वियोगा च हंसाख्या च विलासिनी। सर्वगा सुविचारा च वंचनी चेति शक्तयः॥२०६॥  
गोपव्यूह; समाख्यातो गोपायीव्यूह उच्यते। भेदिनी छेदिनी चैव सर्वकारी क्षुधाशनी॥२०७॥  
उच्छुष्मा चैव गांधारी भस्माशी वडवानला। प्रथमावरणं चैव द्वितीयावरणं शृणु॥२०८॥

अमृता, फलनाशिनी, हिरण्याक्षी, सुवर्णाक्षी, कपिंजला, कामरेखा ये प्रथम आवरण में हैं। रत्नद्वीपा, सुद्वीपा, रत्नदा, रत्नमालिनी, रत्नशोभा, सुशोभा, महाशोभा, महाद्युति, शांबरी, बंधुरा, ग्रंथि, पादकर्णा, करानना, हयग्रीवा, जिह्वा, सर्वभासा, ये शक्तियाँ सुमति व्यूह में कही गई हैं। ये द्वितीय आवरण में कही गई हैं। इस प्रकार सुमति (पुलिंग) का वर्णन किया गया। अब सुमत्या (स्त्रीलिंग) को ध्यान सुनो॥१९५-१९६॥ सर्वाशी, महाभक्षा, महादंष्ट्रा अतिरौरवा, विस्फालिंगा, विलिंगा, कृतांता, भास्करानना, ये प्रथम आवरण में कहा। अब द्वितीय आवरण में सुनो। रागा, रंगवती, श्रेष्ठा, महाक्रोधा, रौरवा, क्रोधनी, वसनी, कलहा, महाबला, कलन्तिका, चतुर्भेदा, दुर्गा, दुर्गमानिनी, नाली, सुनाली, सौम्या इस प्रकार ये प्रथम आवरण में हैं। सुमत्या व्यूह का वर्णन कर दिया गया॥१९७-२०२॥

अब मैं तुमसे गोप व्यूह का वर्णन करता हूँ। अब इसको सुनो—पाटली, पाटवी, पाटी, विटिपिटा, कंटका, सुपटा, प्रघटा और घटोद्धवा, ये प्रथम आवरण में हैं। इस प्रकार प्रथम आवरण का वर्णन स्पष्ट रूप में किया गया॥२०३-२०४॥ द्वितीय आवरण में, नादाक्षी, नादरूपा, सर्वकारी, गमा अंगमा, अनुचारी, सुचारी, चण्डनाडी, सुवाहिनी, सुयोगा, वियोगा, हंसाख्या, विलासिनी, सर्वगा, सुविचारा, वंचनी ये शक्तियाँ द्वितीय आवरण में हैं॥२०५-२०६॥ गोपव्यूह का वर्णन किया गया। गोपायी व्यूह का वर्णन सुनो—भेदिनी, छेदिनी, सर्वकारी, सुधासनी, उच्छुष्मा, गान्धारी, भस्माशी, वडवानला, यह प्रथम आवरण में है। द्वितीय आवरण को सुनिए॥२०७-२०८॥ अन्धा, बाह्रांशिनी, बाला, दीक्षपामा, अक्षा, त्र्यक्षा, हल्लेखा, हृदता,

अंधा बाह्यासिनी बाला दीक्षपामा तथैव च। अक्षा त्र्यक्षा च हूल्लेखा हृद्गता मायिकापरा॥२०९॥  
आमयासादिनी मिल्ली सह्यासह्या सरस्वती। रुद्रशक्तिर्महाशक्तिर्महोहा च गोनदी॥२१०॥  
गोपायी कथितो व्यूहो नंदव्यूहं वदामि ते। नंदिनी च निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च यथाक्रमम्॥२११॥  
विद्यानासा खग्रसिनी चामुण्डा प्रियदर्शिनी। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२१२॥

गृह्या नारायणी मोहा प्रजा देवी च चक्रिणी।

कंकटा च तथा काली शिवाद्योषा ततः परम्॥२१३॥

विरामा या च वागीशी वाहिनी भीषणी तथा। सुगमा चैव निर्दिष्टा द्वितीयावरणे स्मृता॥२१४॥  
नंदव्यूहो मया ख्यातो नंदाया व्यूह उच्यते। विनायकी पूर्णिमा च रंकारी कुण्डली तथा॥२१५॥  
इच्छा कपालिनी चैव द्वीपिनी च जयन्तिका। प्रथमावरणे चाष्टौ शक्तयः परिकीर्तिताः॥२१६॥  
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। पावनी चांबिका चैव सर्वात्मा पूतना तथा॥२१७॥  
छगली मोदिनी साक्षादेवी लंबोदरी तथा। संहारी कालिनी चैव कुसुमा च यथाक्रमम्॥२१८॥  
शुक्रा तारा तथा ज्ञाना क्रिया गायत्रिका तथा। सावित्री चेति विधिना द्वितीयावरणं स्मृतम्॥२१९॥  
नंदायाः कथितो व्यूहः पैतामहमतः परम्। नंदिनी चैव फेत्कारी क्रोधा हंसा षडंगुला॥२२०॥  
आनन्दा वसुदुर्गा च संहारा ह्यमृताष्टमी। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२२१॥  
कुलान्तिकानला चैव प्रचण्डा मर्दिनी तथा। सर्वभूताभ्या चैव दया च वडवामुखी॥२२२॥  
लंपटा पन्नगा देवी कुसुमा विपुलांतका। केदारा च तथा कूर्मा दुरिता मंदरोदरी॥२२३॥  
खड्गचक्रेतिविधिना द्वितीयावरणं स्मृतम्। व्यूहः पैतामहः प्रोक्तो धर्मकामार्थमुक्तिदः॥२२४॥

मायिका, परा, आमयासादिनी, मिल्ली, सह्या, असह्या, सरस्वती, रुद्रशक्ति, महाशक्ति, महामोहा, गोनदी॥२०९-२१०॥ गोपायी व्यूह का वर्णन किया गया। अब मैं नन्द व्यूह का वर्णन करता हूँ। नन्दिनी, निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्यानासा, खग्रसिनी, चामुण्डा, प्रियदर्शिनी ये प्रथम आवरण में हैं। अब द्वितीय आवरण को सुनो॥२११-२१२॥ गृह्या, नारायणी, मोहा, प्रजा देवी, चक्रिणी, कंकटा, काली, शिवा, आद्या, उषा, विरामा, वागीशी, वाहिनी, भीषणी, सुगमा, निर्दृष्टा द्वितीय आवरण में हैं॥२१३-२१४॥ नन्दव्यूह का वर्णन मैंने किया, नंदा व्यूह का वर्णन करता हूँ—विनायकी, पूर्णिमा, रंकारी, कुण्डली, इच्छा, कपालिनी, द्वीपिनी, जयन्तिका यह प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ कही गयी हैं। द्वितीय आवरण में पावनी, अम्बिका, सर्वात्मा, पूतना, छगली, मोदिनी, साक्षात् देवी लंबोदरी, संहारी, कालिनी, कुसुमा, शुक्रा, तारा, ज्ञाना, क्रिया, गायत्रिका, सावित्री ये आठ द्वितीय आवरण में हैं॥२१५-२१९॥ इस प्रकार नन्द व्यूह का वर्णन किया गया। अब पितामह व्यूह का वर्णन सुनो। नन्दिनी, फेत्कारी, क्रोधा, हंसा, षडंगुला, आनन्दा, वसुदुर्गा, संहारा, अमृताष्टमी ये प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में सुनो॥२२०-२२१॥ कुलान्तिका, नला, प्रचण्डा, मर्दिनी, सर्वभूताभ्या, दया, वडवामुखी, लंपटा, पन्नगादेवी, कुसुमा, विपुलांतका, केदारा, कूर्मा, दुरिता, मंदरोदरी, खड्गचक्रा ये द्वितीय आवरण में आती हैं। इस प्रकार पितामह व्यूह जो कि धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति को देने वाला है। उसका

पितामहाया व्यूहं च कथयामि शृणुष्व मे। वज्रा च नन्दना शावाराविका रिपुभेदिनी॥२२५॥  
रूपा चतुर्था योगा च प्रथमावरणे स्मृताः। भूता नादा महाबाला खर्परा च तथा परा॥२२६॥  
भस्मा कांता तथा वृष्टिर्द्विभुजा ब्रह्मरूपिणी। सैह्या वैकारिका जाता कर्ममोटी तथापरा॥२२७॥  
महामोहा महामाया गांधारी पुष्पमालिनी। शब्दापी च महाघोषा षोडशैव तथांतिमे॥२२८॥  
सर्वाश्च द्विभुजा देव्यो बालभास्करसन्निभाः। पद्मशंखधराः शांता रक्तस्त्रग्वस्त्रभूषणाः॥२२९॥  
सर्वाभरणसंपूर्णा मुकुटाद्यैरलंकृताः। मुक्ताफलमयैर्दिव्यै रत्नचित्रैर्मनोरमैः॥२३०॥  
विभूषिता गौरवणाध्येया देव्यः पृथक्पृथक्। एवं सहस्रकलशं ताम्रजं मृन्मयं तु वा॥२३१॥  
पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तं रुद्रक्षेत्रे प्रतिष्ठितम्। भवाद्यौर्विष्णुना प्रोक्तैर्नामां चैव सहस्रकैः॥२३२॥  
संपूज्य विन्यसेदग्रे सेचयेद्वाणविग्रहम्।  
अभिषिद्य च विज्ञाप्य सेचयेत्पृथिवीपतिम्॥२३३॥

एवं सहस्रकलशं सर्वसिद्धिफलप्रदम्। चत्वारिंशन्महाव्यूहं सर्वलक्षणलक्षितम्॥२३४॥  
सर्वेषां कलशं प्रोक्तं पूर्ववद्धेमनिर्मितम्। सर्वे गंधांबुसंपूर्णपंचरत्नसमन्विताः॥२३५॥  
तथा कनकसंयुक्ता देवस्य घृतपूरिताः। क्षीरेण वाथ दध्ना वा पंचगव्येन वा पुनः॥२३६॥  
ब्रह्मकूर्चेन वा मध्यमभिषेको विधीयते। रुद्राध्यायेन रुद्रस्य नृपतेः शृणु सत्तमा॥२३७॥

वर्णन किया गया। २२२-२२४।। अब मैं पितामहा व्यूह का वर्णन करता हूँ। इसको सुनिए। वज्रा, नन्दना, शांवाराविका, रिपुभेदिनी, रूपा, चतुर्था योगा ये प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में भूता नादा, महाबाला, खर्परा, परा, भस्मा, कान्ता, वृष्टि, द्विभुजा (दो भुजा वाली), ब्रह्मरूपिणी, सैह्या, वैकारिका, कर्ममोटी, महामोहा, महामाया, गांधारी, पुष्पमालिनी, शब्दापी और महाघोषा ये सोलह द्वितीय आवरण में हैं। २२५-२२८।। ये सभी देवियाँ दो भुजा वाली हैं। ये आभा में प्रातःकालीन सूर्य के समान हैं। ये कमल और शंख हाथों में धारण किये हुए हैं और शान्त हैं और लाल माला पहने हए हैं। वस्त्र आभूषण धारण किये हुए हैं और मुकुट आदि को पहने हुए हैं। ये मोती और दिव्य सुन्दर रत्नों से विभूषित हैं। ये सब गौर वर्ण की हैं। ये सब देवियों का अलग-अलग ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार ताँबे या मिट्टी के बने हुए कलश पूर्वोक्त लक्षण से युक्त को रुद्रक्षेत्र में स्थापित करें। उसके बाद विष्णु, भव आदि द्वारा उच्चारण किये गये, सहस्र नाम से उनकी पूजा करे। उनको कलशों को सामने में रखें, तब भक्त बाणलिंग का अभिषेक करें (जल से सींचे)। अभिषेक करके राजा के ऊपर यह जल उड़ेल दें। २२९-२३३।।

यह सहस्र जल कलश सब सिद्धिदायक है। यह चौसठ महाव्यूह हैं। जिनमें से प्रत्येक अपने अपने विशिष्ट लक्षणों से युक्त हैं। २३४।।

राजा का अभिषेक रुद्र के रुद्राध्याय मन्त्रों को दोहराते हुए किया जाना चाहिये। पात्र स्वर्ण से बने होने चाहिये। वे सुगंधित जल से पूर्ण हों और प्रत्येक पात्र में पाँच रत्न और स्वर्ण के टुकड़े पड़े हों। देव के पात्र धी, दूध, दही या पंचगव्य ब्रह्मकुश से भरे हो। हे सुब्रत! सुनो। राजा का अभिषेक रुद्र से रुद्राध्याय मंत्र दोहराते हुए किया जाय। अघोरेभ्यो अथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः। इन मंत्रों को

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।

सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्रस्तपेभ्यः॥२३८॥

मंत्रेणानेन राजानं सेचयेदभिषेचित्तम्। होमं च मंत्रेणानेन अघोरेणाघहारिणा॥२३९॥  
प्राणाद्यं देवकुण्डे वा स्थंडिले वा धृतादिभिः। समिदाज्यचरुं लाजशालिनीवारतंडुलैः॥२४०॥

अष्टोत्तरशतं हुत्वा राजानमधिवासयेत्।

पुण्याहं स्वस्ति रुद्राय कौतुकं हेमनिर्मितम्॥२४१॥

भसितं च मृणालेन बंधयेद्वक्षिणे करे। त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्धनम्॥२४२॥  
उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। मंत्रेणानेन राजानं सेचयेद्वाथ होमयेत्॥२४३॥

सर्वद्रव्याभिषेकं च होमद्रव्यैर्यथाक्रमम्॥२४४॥

तत्पुरुषाय विद्यहे महादेवाय धीमहि। तत्रो रुद्रः प्रचोदयात्॥२४५॥

स्वाहांतं पुरुषेणैवं प्राक्कुण्डं होमयेदिद्वजः। अघोरेण च याम्ये च होमयेत्कृष्णवाससा॥२४६॥

वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः।

इत्याद्युत्तम्रमेणैव जुहुयात्पश्चिमे नरः॥२४७॥

सद्येन पश्चिमे होमः सर्वद्रव्यैर्यथाक्रमम्। सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः॥२४८॥

भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः।

स्वाहांतं जुहुयादग्नौ मंत्रेणानेन बुद्धिमान्॥२४९॥

दुहराते हुए राजा के ऊपर अभिमंत्रित जल को उड़ेर (डाल) देना चाहिये। अघोर के मंत्रों से—जो कि सब पापों को दूर करता है—हवन भी कराना चाहिये। २३५-२३९।। देवकुण्ड में या भूमि पर धृत आदि से पूर्व से प्रारम्भ करके, समिधा, धी, चरु, लावा, अन्न, या शालि नीवार के चावल होम के लिये प्रयोग में लाया जाय। १०८ बार आहुति देने के बाद राजा को सुगंधित जल से अधिवासित करे। शरीर पर सुगंधित अगरबत्ती आदि से धूप करे। स्वस्ति मंत्र दोहराते हुये पुण्याह जल को राजा के ऊपर छिड़के। सुनहरा तागा (धागा) (कलावा या रक्षासूत्र) बाँध दे और मृणाल (कमल की नाल) से उस पर भस्म छिड़क राजा के दाहिने हाथ में तत्पुरुषाय विद्यहे महादेवाय धीमहि। 'तत्रो रुद्रः प्रचोदयात्' के इस मन्त्र से ब्राह्मण पूर्व कुण्ड में मन्त्र के अन्त में स्वाहा शब्द लगाकर होम करे। २४०-२४६।। भक्त पश्चिम दिशा में वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः इत्यादि इन मन्त्रों को पढ़ते हुए पश्चिमी कुण्ड में हवन करे। २४७।। उसके बाद सद्योजातं प्रपद्यामि 'सद्योजाताय वै नमः', इस सद्य मन्त्र को दोहराते हुए यथा क्रम में सब सामग्री से पश्चिमी कुण्ड में हवन करे। भवे भवेनातिभवे भवस्य मां भवोद्भवाय नमः बुद्धिमान भक्त इस मन्त्र से अन्त में स्वाहा शब्द लगाकर अग्नि में हवन करे। वह दक्षिण पूर्व के कुण्ड में रुद्र सम्बन्धी मन्त्र को पढ़ते हुए होम करे। उसके बाद जातवेदसे सुनवाम सोमम् इत्यादि से होम करे। उसके बाद पूजा की सब सामग्री के साथ यह मन्त्र दोहराते हुए दक्षिण पश्चिम कुण्ड में होम पूरा किया

आग्नेयां च विधानेन ऋचा रौद्रेण होमयेत्।

जातवेदसे सुनवाम सोमभित्यादिना ततः। नेत्रहृते पूर्ववद्ग्रव्यैः सर्वैर्होमो विधीयते॥२५०॥

मंत्रेणानेन दिव्येन सर्वसिद्धिकरेण च।

निमि निशि दिश स्वाहा खड्ग राक्षस भेदन॥२५१॥

रुधिराज्याद्र्द्वै नैत्रहृत्यै स्वाहा नमः स्वधा नमः। यथेष्टु विधिना द्रव्यैर्मत्रेणानेन होमयेत्॥२५२॥

यम्यां हि विविधैर्द्रव्यैरीशानेन द्विजोत्तमाः। ईशान्यामथ पूर्वोक्तैर्द्रव्यैर्होममथाचरेत्॥२५३॥

ईशानाय कद्मुद्राय प्रचेतसे त्र्यंबकाय शर्वाय तत्रो रुद्रः प्रचोदयात्॥२५४॥

प्रधानं पूर्ववद्ग्रव्यैरीशानेन द्विजोत्तमाः। प्रतिद्रव्यं सहस्रेण जुहुयान्वृपसन्निधौ॥२५५॥

स्वयं वा जुहुयादग्नौ भूपतिः शिववत्सलः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां

ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोऽहम्॥२५६॥

प्रायश्चित्तमघोरेण शेषं सामान्यमाचरेत्। कृताधिवासं राजानं शंखभेर्यादिनिस्वनैः॥२५७॥

जयशब्दरवैर्दिव्यैर्वेदघोषैः सुशोभनैः। सेचयेत्कूर्चतोयेन प्रोक्षयेद्वा नृपोत्तमम्॥२५८॥

रुद्राध्यायेन विधिना रुद्रभस्मांगधारिणम्। शंखचामरभेर्याद्यं छत्रं चंद्रसमप्रभम्॥२५९॥

शिविकां वैजयंतीं च साधयेन्वृपतेः शुभाम्। राज्याभिषेकयुक्ताय क्षत्रियायेश्वराय वा॥२६०॥

नृपचिह्नानि नान्येषां क्षत्रियाणां विधीयते।

प्रमाणं चैव सर्वेषां द्वादशांगुलमुच्यते॥२६१॥

जाय॥२४८-२५०॥ 'निमि निशि दिश स्वाहा खड्ग' राक्षस भेदन, सब सिद्ध कर इस दिव्य मन्त्र से राक्षस भेदन कृत्य पूरा किया जाय। रुधिराज्याद्र्द्वै नैत्रहृत्यैस्वाहा नमः स्वधा नमः इस मन्त्र से सब द्रव्यों से होम किया जाय॥२५१॥ हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! दक्षिणी कुण्ड में सब सामग्री से ईशान मन्त्र द्वारा होम किया जाय। उसके बाद पहले कही हुई सब सामग्री से दक्षिण-पूर्व कुण्ड में हवन किया जाय॥२५२-२५३॥ ईशानाय कद्मुद्राय प्रचेतसे त्र्यंबकाय शर्वाय तत्रो रुद्रः प्रचोदयात्॥२५४॥ हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! ईशान मन्त्र को दोहराते हुए पूर्ववत् सामग्री से प्रधान होम पूरा किया जाय। राजा के सामने प्रत्येक सामग्री से एक हजार बार होम किया जाय। शिव का प्रिय भक्त राजा अग्नि में स्वयं होम करे। उसक मन्त्र यह है। ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपति ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोऽहम्॥२५५-२५६॥ अघोर मन्त्र को दोहराते हुए प्रायश्चित्त कृत्य को करे। शेष कृत्य सामान्य विधि से किया जाय। होम के धुएँ से राजा को अधिवास करके शंख भेरी आदि की ध्वनि से जय जयकार की ध्वनि से दिव्य वेदमन्त्रों की ध्वनि करे। अथवा कुश के जल से राजा के शरीर का सिंचन करे या पौछे॥२५७-२५८॥ रुद्राध्याय मंत्र को दोहराते हुए राजा के पूरे शरीर पर भस्म चुपड़ दे। राजा चन्द्रमा के समान प्रभाव वाले छत्र और शंख चामर भेरी आदि, शिविका (पालकी) वैजयंती (राजध्वज) इन सब से युक्त हो जाय। ये सब राजचिह्न राज्याभिषेक युक्त क्षत्रीश्वर—जो अपने राज्य में मुकुटधारी हो—उसको दिये जाते हैं अन्य क्षत्रियों को नहीं॥२५९-२६१॥

पलाशोदुंबराश्वत्यवटा: पूर्वादितः क्रमात्। तोरणाद्यानि वै तत्र पट्टुमात्रेण पट्टिकाः॥२६२॥  
 अष्टमांगुलसंयुक्तदर्भमालासमावृतम् । दिग्ध्वजाष्टकसंयुक्तं द्वारकुंभैः सुशोभनम्॥२६३॥  
 हेमतोरणकुंभैश्च भूषितं स्नापयेन्नपम्। सर्वोपरि समासीनं शिवकुंभेन सेचयेत्॥२६४॥  
 तन्महेशाय विद्यहे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तत्रः शिवः प्रचोदयात्॥२६५॥  
 मंत्रेणानेन विधिना वर्धन्या गौरिगीतया। रुद्राध्यायेन वा सर्वमधोरायाथ वा पुनः॥२६६॥  
 दिव्यैराभरणैः शुक्लैर्मुकुटाद्यैः सुकल्पितैः। क्षौमवस्त्रैश्च राजानं तोषयेन्नियतं शनैः॥२६७॥  
 अष्टष्ठिपलेनैव हेमा कृत्वा सुदर्शनम्। नवरत्नैरलंकृत्य दद्याद्वै दक्षिणां गुरोः॥२६८॥  
 दशधेनु सवस्त्रं च दद्यात्क्षेत्रं सुशोभनम्। शतद्रोणतिलं चैव शतद्रोणांश्च तंडुलान्॥२६९॥  
 शयनं वाहनं शव्यां सोपधानां प्रदापयेत्। योगिनां चैव सर्वेषां त्रिंशत्पलमुदाहृतम्॥२७०॥  
 अशेषांश्च तदर्थेन शिवभक्तांस्तदर्थतः। महापूजां ततः कुर्यान्महादेवस्य वै नृपः॥२७१॥  
 एवं समाप्तः प्रोक्तं जयसेचनमुत्तमम्। एवं पुराभिषिक्तस्तु शक्रः शक्रत्वमागतः॥२७२॥  
 ब्रह्मा ब्रह्मत्वमापन्नो विष्णुर्विष्णुत्वमागतः।  
 अंबिका चांबिकात्वं च सौभाग्यमतुलं तथा॥२७३॥

**सावित्री च तथा लक्ष्मीदेवी कात्यायनी तथा। नन्दिनाथ पुरा मृत्यु रुद्राध्यायेन वै जितः॥२७४॥**

पलास (छिडल) गूलर और पीपल या बरगद की टहनियाँ पूर्व से प्रारंभ करके सब दिशाओं में स्थापित की जायें। उन पर भक्त साधक द्वारा सिल्क के वस्त्रों के टुकड़ों की पट्टिकाएँ लगाई जायें। २६२।। राजा आठ अंगुल की कुश माला से समावृत (धेरे में) हो। आठों दिशाओं में आठ ध्वज (झंडे) लगे हों। प्रवेश द्वारों पर सुन्दर आठ जल पूरित कलश हों। सोने के तोरण और कलश (कुम्भ) से भूषित हों। तब पुरोहित राजा को स्नान करावे। राजा सर्वोपरि आसन (सीट) पर विराजमान हो। राजा के ऊपर शिवकुम्भ के जल से सेचन (छिड़काव) हो। २६३-२६४।। तन्महेशाय विद्यहे वाग्विशुद्धाय धीमहि तत्रः शिवः प्रचोदयात्। इस मंत्र द्वारा राजा का एक वर्धनी के साथ गौरीगीत से छिड़काव करे। फिर रुद्राध्याय मंत्र या अघोर मंत्र से सिंचन करे। २६५-२६६।। तब राजा को सफेद सिल्कन पोशाक, दिव्य आभूषण और राजमुकुट आदि भेट किये जायें। २६७।। अङ्गसठ (६८) पल सोना का दर्शनीय आभूषण बनवाया जाय। वह नवरत्नों से अलंकृत हो। (शोभित हो)। उसको अपने गुरु को राजा दक्षिणा रूप में दे। दस गायें, वस्त्र सहित तथा एक अच्छा क्षेत्र (भूमि का खंड) भी दिया जाय। सौ द्रोण तिल और सौ द्रोण चावल, शयन (बिस्तर), वाहन, चादर, तकिया भी दिया जाय। सब योगियों को भी तीस पल सोना दिया जाना चाहिये। २६८-२७०।। उसका आधा शेष पुरोहितों और उसका आधा शिव भक्तों को दिया जाय। २७१।। इस प्रकार उत्तम जय अभिषेक संस्कार को संक्षेप में मैंने कहा। इस तरह पहले इन्द्र ने अभिषिक्त होकर इन्द्रत्व (इन्द्रपदवी) को प्राप्त किया था। ब्रह्मा जी ब्रह्मत्व को, विष्णु जी विष्णुत्व को अंबिका, अंबिकात्व एवं अतुल सौभाग्य को प्राप्त किया। सावित्री, लक्ष्मी देवी, और कात्यायनी ने भी पहले यही पदवी को प्राप्त किया। नन्दी ने भी पहले रुद्राध्याय द्वारा मृत्यु पर विजय प्राप्त की। पहले यह अभिषेक महाबली तारकासुर ने किया। विष्णु ने अभिषिक्त होकर विद्युन्माली और

अभिषिक्तोऽसुरः पूर्वं तारकाख्यो महाबलः।  
विद्युन्माली हिरण्याक्षो विष्णुना वै विनिर्जितः॥२७५॥

नृसिंहेन पुरा दैत्यो हिरण्यकशिपुर्हतः। स्कंदेन तारकाद्याश्च कौशिक्या च पुरांबया॥२७६॥  
सुंदोपसुंदतनयौ जितौ दैत्येन्द्रपूजितौ। वसुदेवसुदेवौ तु निहतौ कृतकृत्यया॥२७७॥  
स्नानयोगेन विधिना ब्रह्मणा निर्मितेन तु। दैवासुरे दितिसुता जिता देवैरनिंदिताः॥२७८॥

स्नाप्यैव सर्वभूपैश्च तथान्यैरपि भूसुरैः।  
प्राप्ताश्च सिद्धयो दिव्या नात्र कार्या विचारणा॥२७९॥

अहोऽभिषेकमाहात्म्यमहो शुद्धसुभाषितम्। येनैवमभिषिक्तेन सिद्धैर्मृत्युर्जितस्त्वति॥२८०॥  
कल्पकोटिशतेनापि यत्पापं समुपार्जितम्। स्नात्वैवं मुच्यते राजा सर्वपापैर्न संशयः॥२८१॥  
व्याधितो मुच्यते राजा क्षयकुष्ठादिभिः पुनः। स नित्यं विजयी भूत्वा पुत्रपौत्रादिभिर्युतः॥२८२॥  
जनानुरागसंपन्नो देवराज इवापरः। मोदते पापहीनश्च प्रियया धर्मनिष्ठया॥२८३॥  
उद्देशमात्रं कथितं फलं परमशोभनम्। नृपाणामुपकाराय स्वायंभुव मनो मया॥२८४॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अभिषेकविधिर्नाम  
सप्तविंशोऽध्यायः॥२७॥

हिरण्याक्ष को जीता था॥२७२-२७५॥ पहिले नृसिंह ने हिरण्यकशिपु राक्षस का वध किया था। पहिले स्कन्द ने तारक आदि को और भी कौशिकी देवी ने दैत्येन्द्र द्वारा पूजित शुन्द और उपसुन्द के पुत्रों को पराजित किया था। कृतकृत्या द्वारा वसुदेव और सुदेव मारे गये थे। इस अभिषेक संस्कार से अभिषिक्त ब्रह्मा ने दिति के पुत्रों को जीता था एवं विजय प्राप्त की थी। अभिषिक्त राजाओं और ब्राह्मणों ने दिव्य सिद्धि प्राप्त की थी, इसमें कोई संदेह नहीं॥२७६-२७९॥ राजाओं और ब्राह्मणों ने इस अभिषेक संस्कार से अभिषिक्त होकर दिव्य सिद्धि प्राप्त की थी। इस अभिषेक का बहुत माहात्म्य है। इस अभिषेक के करने से सिद्धयोगों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस अभिषेक संस्कार के करने से राजा यहाँ तक कि कल्प के सौ करोड़ वर्षों में भी किये गये पापों से मुक्त हो जाता है। राजा क्षय और कुष आदि व्याधियों से मुक्त हो जाता है। वह नित्य विजयी होकर पुत्र पौत्रादि से युक्त होकर जनता द्वारा प्रिय (लोकप्रिय) होकर दूसरे इन्द्र के समान हो जाता है। वह निष्पाप राजा रानी के साथ सुख भोग करता है। इस दिव्य संस्कार के उद्देश्य और फल को मैंने संक्षेप में बताया जो कि स्वयं ब्रह्मा के पुत्र मनु से मैंने सुना था। ब्राह्मणों के उपकार के लिए यह ब्राह्मणों को बताया गया॥२८०-२८४॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अभिषेक विधि  
नामक सन्नाइसवां अध्याय समाप्त॥२७॥

## अष्टाविंशत्तमोऽध्यायः तुलापुरुषदानविधिः

सूत उवाच

स्नात्वा देवं नमस्कृत्य देवदेवमुमापतिम्। दिव्येन चक्षुषा रुद्रं नीललोहितमीश्वरम्॥१॥  
दृष्टा तुष्टाव वरदं रुद्राध्यायेन शंकरम्। देवोऽपि तुष्ट्या निर्वाणं राज्यांते कर्मणैव तु॥२॥  
तवास्तीति सकृच्छोक्त्वा तत्रैवांतरधीयत। स्वायंभुवो मनुर्देवं नमस्कृत्य वृषध्वजम्॥३॥  
आरुरोह महामेरुं महावृषमिवेश्वरः। तत्र देवं हिरण्याभं योगैश्वर्यसमन्वितम्॥४॥  
सनत्कुमारं वरदमपश्यद्ब्रह्मणः सुतम्। नमश्वकार वरदं ब्रह्मण्यं ब्रह्मस्त्रियम्॥५॥  
कृतांजलिपुटो भूत्वा तुष्टाव च महाद्युतिः। सोऽपि दृष्टा मनुं देवो हृष्टरोमाभवन्मुनिः॥६॥  
सनत्कुमारः प्राहेदं घृणया च घृणानिधे।

सनत्कुमार उवाच

दृष्टा सर्वेश्वराच्छांताच्छंकरान्नीललोहितात्॥७॥  
लब्ध्वाभिषेकं संप्राप्तो विवक्षुर्वद यद्यपि। तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रणिपत्य कृतांजलिः॥८॥

अङ्गार्इसवाँ अध्याय

## तुलापुरुष दान विधि

सूत बोले

ब्रह्मा के पुत्र मनु ने स्नान करके महादेव शिव को नमस्कार किया। उन्होंने दिव्य चक्षु (नेत्रों) से नीललोहित शिव को देखा। उन्होंने रुद्राध्याय मंत्रों से वरदाता शिव की स्तुति की। बहुत प्रसन्नतापूर्वक शिव जी ने कहा “अपने राज्य की अवधि बीतने पर तुम केवल धार्मिक कर्म से मुक्ति प्राप्त करोगे।” ऐसा कह कर शिव वहाँ अन्तर्धान हो गये। वृषध्वज महादेव शिवजी को नमस्कार करके मेरु पर्वत पर उसी तरह चढ़ गये जिस प्रकार शिवजी अपने महान बैल पर चढ़ते हैं। वहाँ पर उन्होंने ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार को देखा जो कि सोने की आभा वाले योगिक ऐश्वर्य से युक्त वरदायक शरणदायक और ब्रह्म स्वरूप हैं। महान तेज वाले मनु ने हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की। मुनि सनत्कुमार भी मनु को देखकर रोमाञ्चित हो गये। तब दयानिधि मनु से बोले॥१-६॥

सनत्कुमार बोले

सर्वेश्वर नीललोहित शान्त भगवान शंकर से प्राप्त अभिषेक को करके यहाँ आए हो। यदि आप कुछ कहने की इच्छा रखते हैं तो कहो। उनकी इस बात को सुनकर मनु हाथ जोड़कर उनके आगे नतमस्तक हो गये और उनसे कहा। हे महाराज! ‘आप कृपया यह बताएँ कि कोई व्यक्ति केवल कर्म (धार्मिक कृत्य) करने से कैसे मुक्ति प्राप्त कर सकता है? हे विभो! मुक्ति तो ज्ञान प्राप्ति से मिलती है या ज्ञान और कर्म दोनों के मिश्रण से कुछ स्थानों में मुक्ति मिलती हैं।’ इन शब्दों को सुनकर सनत्कुमार वेदों के तत्त्व को जानने वालों के भण्डार ने कहा—

विज्ञापयामास कथं कर्मणा निर्वृतिर्विभो। वक्तुर्मर्हसि चास्माकं कर्मणा केवलेन च॥१॥  
ज्ञानेन निर्वृतिः सिद्धा विभो मिश्रेण वा क्वचित्।  
अथ तस्य वचः श्रुत्वा श्रुतिसारविदां निधिः॥१०॥

सनत्कुमारो भगवान्कर्मणा निर्वृतिं क्रमात्। मिश्रेण च क्रमादेव क्षणाज्ञानेन वै मुने॥११॥  
पुराऽमानेन चोष्ट्रत्वमगमं नंदिनः प्रभोः। शापात्पुनः प्रसादाद्विंशिवमश्यच्चर्य शंकरम्॥१२॥  
प्रसादान्नदिनस्तस्य कर्मणैव सुतो ह्यहम्। श्रुत्वोत्तमां गतिं दिव्यामवस्थां प्राप्तवानहम्॥१३॥  
शिवार्चनप्रकारेण शिवधर्मेण नान्यथा। राजां षोडशदानानि नंदिना कथितानि च॥१४॥  
धर्मकामार्थमुक्तव्यर्थं कर्मणैव महात्मना। तुलादिरोहणाद्यानि शृणु तानि यथातथम्॥१५॥  
प्रहणादिषु कालेषु शुभदेशेषु शोभनम्। विंशद्वस्तप्रमाणेन मंडपं कूटमेव च॥१६॥  
यथाष्टादशहस्तेन कलाहस्तेन वा पुनः। कृत्वा वेदिं तथा मध्ये नवहस्तप्रमाणतः॥१७॥  
अष्टहस्तेन वा कार्या सप्तहस्तेन वा पुनः। द्विहस्ता सार्धहस्ता वा वेदिका चातिशोभना॥१८॥  
द्वादशस्तंभसंयुक्ता साधुरम्या भ्रमंतिका। परितो नव कुंडानि चतुरस्त्राणि कारयेत्॥१९॥  
ऐंद्रिकेशानयोर्मध्ये प्रधानं ब्रह्मणः सुत। अथवा चतुरस्त्रं च योन्याकारमतः परम्॥२०॥  
स्त्रीणां कुंडानि विप्रेंद्रा योन्याकाराणि कारयेत्। अर्धचंद्रं त्रिकोणं च वर्तुलं कुंडमेव च॥२१॥  
षडस्त्रं सर्वतो वापि त्रिकोणं पद्मासन्निभम्। अष्टास्त्रं सर्वमाने तु स्थंडिलं केवलं तु वा॥२२॥  
चतुर्द्वारसमोपेतं चतुर्स्तोरणभूषितम्। दिग्गजाष्टकसंयुक्तं दर्भमालासमावृतम्॥२३॥

हे मुनि! कर्म (पवित्र कृत्य) के करने से और ज्ञान से दोनों के संयोग से क्रम से मुक्ति प्राप्त होती है किन्तु यह पूर्ण ज्ञान के द्वारा प्राप्त होती है। १७-११।। पहले की कथा है कि नन्दी भगवान का उचित सम्मान न करने से अनेक साथ के कारण मैं ऊँट की दशा को प्राप्त हो गया। नन्दी की कृपा से मैंने भगवान शिव की पूजा की और कर्म से ही ब्रह्मा का पुत्र हो गया। मैं इस उत्तम दिव्य गति को प्राप्त यह केवल शिव के अनेक प्रकार से पूजा करने से ही प्राप्त हुआ अन्यथा नहीं। नन्दी के द्वारा कहे गये धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति की प्राप्ति के लिए गजाओं से सोलह प्रकार के दातव्य दान बताए गये हैं। महात्मा नन्दी के द्वारा पवित्र कृत्य जैसे तुलाधिरोहण आदि अन्य दान कहे गये हैं। उनको यथावत् सुनो। १२-१५।। शुभ अवसर जैसे ग्रहण आदि के समय उत्तम बीस हाथ लम्बे मण्डप को या कूट को उत्तम स्थान पर खड़ा करे। मण्डप का विस्तार बीस, अट्ठारह, या सोलह हाथ में हो। एक वेदी नौ हाथ, आठ हाथ या सात हाथ की मण्डप के मध्य में बनायी जाय। छोटी वेदी दो या ढोड़ हाथ की ओर सुन्दर हो और बारह जोड़ने वाली रस्सियों से युक्त हो। भक्त नौ चौकोर यज्ञ कुण्ड चारों ओर खोदे। १६-१९।। हे ब्रह्मा के पुत्र! प्रधान कुण्ड पूर्व और उत्तर-पूर्व के मध्य में हो। यज्ञ कुण्ड अर्ध चन्द्र त्रिकोण त्रिकोण के आकार में हो। यज्ञ के कुण्ड स्त्री की योनि के आकार में बनाये जायें। वे कुण्ड अर्ध चन्द्र त्रिकोण होने चाहिये। षडस्त्र या त्रिकोण कुण्ड कमल के आकार में हो। यह अष्टास्त्र भी हो। इसके लिए खाली समतल पूर्ण या स्थंडिल का भी प्रयोग किया जा सकता है। घेरे के बाउन्डी में चार प्रवेश द्वारा हो। वे चार तोरण से

अष्टमंगलसंयुक्तं वितानोपरिशोभितम्। तुलास्तंभद्रुमाश्रात्र बिल्वादीनि विशेषतः॥२४॥  
 बिल्वाश्वत्थपलाशाद्याः केवलं खादिरं तु वा। येन स्तंभः कृतः पूर्वं तेन सर्वं तु कारयेत्॥२५॥  
 अथवा मिश्रमार्गेण वेणुना वा प्रकल्पयेत्। अष्टहस्तप्रमाणं तु हस्तद्वयसमायुतम्॥२६॥  
 तुलास्तंभस्य विष्कंभोऽनाहतस्त्रिगुणोमतः। द्वयगुलेन विहीनं तु सुवृतं निर्वणं तथा॥२७॥  
 उभयरंतरं चैव षड्हस्तं नृपते स्मृतम्। द्वयोश्चतुर्हस्तकृतमंतरं स्तंभयोरपि॥२८॥  
 षड्हस्तमंतरंजेयं स्तंभयोरुपरि स्थितम्। वितस्तिमात्रं विस्तारो विष्कंभस्तावदुत्तरम्॥२९॥  
 स्तंभयोस्तु प्रमाणेन उत्तरद्वारसमितम्। षट्त्रिंशन्मात्रसंयुक्तं व्यायामं तु तुलात्मकम्॥३०॥  
 विष्कंभमष्टमात्रं तु यवपंचकसंयुतम्। षट्त्रिंशन्मात्रनाभं स्यान्निर्माणाद्वर्तुलं शुभम्॥३१॥  
 अग्रे मूले च मध्ये च हेमपट्टेन बंधयेत्। पट्टमध्ये प्रकर्तव्यमवलंबनकत्रयम्॥३२॥  
 ताम्रेण च प्रकर्तव्यमवलंबनकत्रयम्। आरेण वा प्रकर्तव्यमायसं नैव कारयेत्॥३३॥  
 मध्ये चोर्ध्वमुखं कार्यमवलंबः सुशोभनः। रशिमभिस्तोरणाग्रे वा बंधयेच्च विधानतः॥३४॥  
 जिह्वामेकां तुलामध्ये तोरणं तु विधीयते। उत्तरस्य च मध्ये च शंकुं दृढमनुत्तमम्॥३५॥  
 वितानेनोपरि छाद्य दृढं सम्यक्प्रयोजयेत्। शंकोः सुविरसंपन्नं वलयं कारयेन्मुने॥३६॥  
 तुलामध्ये वितानेन तुलयालंबके तथा। वलयेन प्रयोक्तव्यं कुंडले वावलंबनम्॥३७॥

विभूषित हों। आठ दिशाओं में आठ दिग्गज स्थापित करे जो कुश की मालाएँ पहने आठ मंगल वस्तुओं से युक्त हों। ऊपर का भाग वितान से शोभित हो। तुला (तराजू) के खम्भों के लिए विशेष रूप से बेल, पीपल, पलाश या खदिर (खौर) की वृक्षों की लकड़ियों का प्रयोग किया जाय। खम्भे की लकड़ी एक वृक्ष की हो जो सामान्य रूप से प्रयोग की जाय॥२०-२६॥

एक बाँस को अन्य काठ के ढाँचे से मिलाकर निर्माण करें। आठ हाथ लम्बा और दो हाथ चौड़ा तुला को खड़ा करने के लिए स्थान चाहिए। मुख्य स्तम्भ (खम्भा) का निष्कंभ से उसका तीन गुणा घेरा हो। यह दो अंगुल से कम, सुन्दर, गोल और छेद रहित हो। दो खम्भों के बीच की दूरी छः हाथ हो। या चार हाथ हो॥२७-२८॥  
 दोनों स्तम्भों के ऊपरी भागों में छः हाथ का अन्तर हो। इसके ऊपरी भाग की चौड़ाई में एक बीता मात्र विस्तार हो॥२९॥ ऊपर के भाग में तुला की छड़ में दोनों स्तम्भों की लम्बाई के अनुकूल हो। तुला का संतुलन करने वाले छड़ की लम्बाई ३६ अंगुल हो॥३०॥ निष्कंभ आठ अंगुल और पाँच यव मात्र हो। नाभि ३६ अंगुल लम्बी हो और यह सुन्दर और गोल हो॥३१॥ एक सोने की पट्ट (प्लेट) सिरे पर, मध्य में और तल भाग में लगायी जाय। मध्य के पट्ट (प्लेट) में तीन अवलम्बक (पिन) लगाई जाय॥३२॥ ये तीनों पिन ताँबे या पीतल ऊपर (उर्ध्वमुख) की ओर हो। यह डोरे से तोरण के ऊपरी सिरे पर मजबूती से बांधी जाय॥३४॥ तुला के मध्य में तोरण बनाया जाय। इसका आकार जीभ के समान हो। ऊपर ऊपरी स्तम्भ के बीच में मजबूत खूंटी (शंकु) गोला छल्ला (अंगूठीनुमा) से बांध देना चाहिए॥३६॥ तुला के बीच में, वितान में गोल छल्ले के द्वारा लगा

सुदृढं च तुलामध्ये नवमांगुलमानतः। पट्टस्यैव तु विस्तारं पंचमात्रप्रमाणतः॥३६॥

अपरौ सुदृढौ पिंडौ शुभद्रव्येण कारयेत्॥

शिक्याधस्तात्प्रकर्तव्यौ पंचप्रादेशविस्तरौ। सहस्रेण तु कर्तव्यौ पलानां धारकावुभौ॥३९॥

शताष्टकेन वा कुर्यात्पिलैः षट्शतमेववा। चतुस्तालं च कर्तव्यो विस्तारो मध्यमस्तथा॥४०॥

सार्धत्रितालविस्तारः कलशस्य विधीयते। बध्नीयात्पंचपात्रं तु त्रिमात्रं षट्कमुच्यते॥४१॥

चतुर्द्वारसमोपेतं द्वारमांगुलमात्रकम्। कुंडलैश्च समोपेतैः शुक्लशुद्धसमन्वितैः॥४२॥

कुंडलेकुंडले कार्यं शृंखलापरिमंडलम्। शृंखलाधारवलयमवलंबेन योजयेत्॥४३॥

प्रादेशं वा चतुर्मात्रं भूमेस्त्यक्त्वावलंबयेत्। घटौ पुरुषमात्रौ तु कर्तव्यौ शोभनावुभौ॥४४॥

तौ वालुकाभिः संपूर्यं शिवं तत्र विनिःक्षिपेत्। द्विहस्तमात्रमवटे स्थापनीयौ प्रयत्नतः॥४५॥

श्रूयतां परमं गुह्यं वेदिकोपरिमंडलम्। अष्टमांगुलसंयुक्तं मंगलांकुरशोभितम्॥४७॥

फलपुष्पसमाकीर्णं धूपदीपसमन्वितम्। वेदिमध्ये प्रकर्तव्यं दर्पणोदरसन्निभम्॥४८॥

आलिखेन्मंडलं पूर्वं चतुर्द्वारसमन्वितम्। शोभोपशोभासंपन्नं कर्णिकाकेसरान्वितम्॥४९॥

वर्णजातिसमोपेतं पंचवर्णं तु कारयेत्।

वज्रं प्रागंतरे भागे आग्नेयां शक्तिमुज्ज्वलाम्॥५०॥

देना चाहिए॥३७॥ तुला के पट्ट के बीच से नव अंगुल मान में इसको जड़ देना चाहिए। बाँधने वाले प्लेट की चौड़ाई पाँच अंगुल होनी चाहिए॥३८॥

जो किसी मजबूत मेटेरियल के दो कड़े पिण्ड की दो सीट बनायी जाय और सहारा देने वाली डोरियों के

मीचे लटकती हुई एक बीता चौकोर पाँच बीता और एक हजार पल वजन की होनी चाहिए॥३९॥ अथवा

आठ हजार या छः हजार पलों की हो। कलश की चौड़ाई मध्य में चार ताल और मध्य भाग साढ़े तीन ताल का

हो। पंचपात्र उस पर रख दिया जाय। उसमें चार छेद हो। प्रत्येक छेद चौड़ाई में एक अंगुल हो। शुद्ध और

सफेद कुंडलों से युक्त हो॥४०-४२॥ प्रत्येक कुंडल में चारों ओर शृंखला बंधी हुई हो। कुंडल को बाँधने

वाली जंजीर वलय से जोड़ देनी चाहिए॥४३॥ भूमि से चार बीता छोड़ने के बाद लटका देना चाहिए। मनुष्य

के आकार के और देखने में शोभन दो घड़ों को लेना चाहिए॥४४॥ उनको बालू से भर दिया जाय। वहाँ पर

थोड़े खाली स्थान में दो हाथ शिव की मूर्ति को स्थापित करना चाहिए॥४५॥ विद्वान् पुरोहित बालू से पूरी

तरह भर दे। यह ऐसा कर दिया जाय कि आसानी से हिल छुल न सके॥४६॥ एक गुप्त बात को सुनो।

वेदिका पर एक मण्डल खींचा जाय जो कि शुभ सामग्री से खींचा जायें। वह संख्या में आठ हो। मंगल अंकुर

से शोभित हो। उस पर फल और पुष्प बिखेर दिये जाय। धूप और दीप का भी प्रयोग किया जाय। वेदी के

मध्य भाग को दर्पण के पेट के समान स्पष्ट निर्मल करना चाहिए॥४७-४८॥ वेदी के मध्य में एक मण्डल

खींचा जाय। उसमें चार प्रवेश द्वारा हों यह कर्णिका और केसर से युक्त शोभा से सम्पन्न हो अर्थात् सुन्दर

खींचा जाय। उसमें चार प्रवेश द्वारा हों यह कर्णिका और केसर से युक्त शोभा से सम्पन्न हो अर्थात् सुन्दर

आलिखेदक्षिणे दंडं नैऋत्यां खड्गमालिखेत्। पाशश्च वारुणे लेख्यो ध्वजं वै वायुगोचरे॥५१॥  
 कौबेर्या तु गदा लेख्या ऐशान्यां शूलमालिखेत्।  
 शूलस्य वामदेशेन चक्रं पद्मं तु दक्षिणे॥५२॥

एवं लिखित्वा पश्चाच्च होमकर्म समाच्चेरत्। प्रधानहोमं गायत्र्या स्वाहा शक्राय वह्नये॥५३॥  
 यमाय राक्षसेशाय वरुणाय च वायवे। कुबेरायेश्वरायाथ विष्णवे ब्रह्मणे पुनः॥५४॥  
 स्वाहांतं प्रणवेनैव होतव्यं विधिपूर्वकम्। स्वशाखाग्निमुखेनैव जयादिप्रतिसंयुतम्॥५५॥

स्विष्टांतं सर्वकार्याणि कारयेद्विधिवत्तदा॥

सर्वहोमाग्रहोमे च समित्पालाशमुच्यते। एकविंशतिसंख्यातं मंत्रेणानेन होमयेत्॥५६॥  
 अयंतङ्गात्माजातवेदस्तेनेऽथस्ववर्धस्वचेद्ववर्धयचास्मान्प्रजयापशुभिर्ब्रह्म-  
 वर्चसेनान्नांद्येनसमेऽयस्वाहा भूः स्वाहा भुवःस्वाहा भूर्भुवः स्वस्तथैव च।

समिद्धोमश्च चरुणा घृतस्य च यथाक्रमम्। शुक्लान्नपायसं चैव मुद्रान्नं चरवः स्मृताः॥५७॥

सहस्रं वा तदर्थं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥५८॥

अग्न आयूषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः॥  
 आरेबाधस्वदुच्छनाम्॥

अग्नित्र्ष्णिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः॥  
 तमीमहे महागयम्॥

हो॥४९॥ यह विभिन्न रंगों में हो। कम-से-कम पाँच रंग हों। पूर्व दिशा में वज्र का चित्र खीचा हुआ हो। दक्षिण-पूर्व में उज्जवल शक्ति, दक्षिण दिशा में दंड, नैऋत्य दिशा में खड्ग (तलवार) और पश्चिम दिशा में पाश और उत्तर-पश्चिम कोने में ध्वज चित्रित हो॥५०-५१॥ उत्तर में गदा, ईशान कोण में शूल खीचा हुआ हो। शूल के बाम भाग में चक्र दक्षिण में पद्म चित्रित हो॥५२॥ ऐसा सब खीचकर इसके बाद होम कृत्य किया जाय। फिर चक्र के लिए, अग्नि के लिए, यम के लिए, राक्षसेश के लिए, वरुण के लिए, वायु के लिए, कुबेर के लिए, ईशान के लिए, विष्णु और ब्रह्मा के लिए, स्वाहा बोलकर हवन किया जाय। जैसे चक्राय स्वाहा। प्रणव जोड़कर स्वाहा अन्त में लगाकर हवन कार्य किया जाय। होम की अग्नि वेदों के आपनी शाखा के अग्नि मुख से उत्पन्न की जाय जिसमें होम कार्य हो। तब पुरोहित जयादि होम पूर्ण विधि के अनुसार करे। इन सभी होमों और प्रधान होम में यज्ञ की समिधा पलाश वृक्ष की होनी चाहिए। श्लोक ५७-५८ में लिखित मन्त्रों को पढ़ते हुए इक्कीस होम करना चाहिए॥५३-५६॥ यज्ञ की समिधा और चरु और धी से इन्द्र में लिखित मन्त्रों को दोहराते हुए भक्त एक हजार, पाँच सौ या एक सौ आठ बार होम करे॥५७-५९॥ प्रधान होम रुद्र गायत्री मन्त्र को दोहराते हुए किया जाता है। इसमें चरु और धी तथा यज्ञ की समिधाओं का प्रयोग

अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्॥  
दध्द्रयिं मयि पोषम्॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वाजातानि परिता बभूव॥  
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रथीणाम्॥

गायत्र्या च प्रधानस्य समिद्धोमस्तथैव वा। चरुणा च तथाज्यस्य शक्रादीनां च होमयेत्॥५९॥  
वश्रादीनां च होतव्यं सहस्रार्थं ततः क्रमात्। ब्रह्म जज्ञेति मंत्रेण ब्रह्मणे विष्णवे पुनः॥६०॥  
नारायणाय विद्धिहे वासुदेवाय धीमहि॥  
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

अयं विशेषः कथितो होममार्गः सुशोभनः। दूर्वया क्षीरयुक्तेन पंचविंशत्पृथक्पृथक्॥६१॥  
ऋंबकं यजामहे सुगांधिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥६२॥  
दूबहोमः प्रशस्तोऽयं वास्तुहोमश्च सर्वथा। प्रायश्चित्तममघोरेण सर्पिषा च शतंशतम्॥६३॥  
ब्रह्मणं दक्षिणे वामे विष्णुं विश्वगुरुं शिवम्। मध्ये देव्या समं ज्ञेयमिंद्रादिगणसंवृतम्॥६४॥  
आदित्यं भास्करं भानुं रविं देवं दिवाकरम्। उषां प्रभां तथा प्रज्ञां संध्यां सावित्रिमेव च॥६५॥  
पंचप्रकारविधिना खखोल्काय महात्मने। विष्टरां सुभगां चैव वर्धनीं च प्रदक्षिणाम्॥६६॥  
आप्यायनीं च संपूज्य देवीं पद्मासने रविम्। प्रभूतं वाथ कर्तव्यं विमलं दक्षिणे तथा॥६७॥  
सारं पश्चिमभागे च आराध्यं चोत्तरे यजेत्। मध्ये सुखं विजानीयात्केसरेषु यथाक्रमम्॥६८॥  
दीपां सूक्ष्मां जयां भद्रां विभूतिं विमलां क्रमात्। अमोघां विद्युतां चैव मध्यतः सर्वतोमुखीम्॥६९॥

करते हुए इन्द्र और अन्य देवताओं के लिए जैसे वज्र आदि के लिए पाँच सौ बार क्रम से होम किया जाना चाहिए। ब्रह्मा को होम 'ब्रह्म यज्ञ इति' मन्त्र से प्रारम्भ करते हुए ब्रह्मा और विष्णु के लिए नारायणाय विद्धिहे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्। इस मन्त्र से होम किया जाय। होम के शोभन मार्ग की विशेष विधि का वर्णन किया गया है। दूब और दूध को मिलाकर पच्चीस आहुतियाँ अलग-अलग दी जाए। ऋंबकं यजामहे सुगांधि पुष्टिवर्धनम्, उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। दूब का होम और वास्तु होम सब प्रकार से प्रशस्त है। अघोर मन्त्र द्वारा धी से होम कृत्य किया जाय। इन होमों को सौ बार किया जाय। ब्रह्मा बाएँ और विष्णु दाहिने और संसार के गुरु शिव मध्य में उमा देवी के साथ स्थित हों। वह इन्द्र और अन्य तथा अपने गणों से घिरे हुए हों (सम्वृत) हों। ६०-६४। भक्त आदित्य, भास्कर, भानु, रवि, दिवाकर देव को, ऊषा, प्रभा, प्रज्ञा, संध्या और सावित्री के साथ इन सब की पूजा करें। ६५। पंच प्रकार विधि से महात्मा खखोल्क के लिए पूजा की जाय। विष्टरा, शुभगा, वर्धनी, प्रदक्षिणा और आप्यायनी की पूजा के बाद पद्मासन में विराजमान रवि की बहुबार पूजा करे। दक्षिण में विमला, पश्चिम में सार, उत्तर भाग में आराध्य और मध्य में सुख की पूजा की जाय। केसरों में यथा क्रम दीपा, सूक्ष्मा, जया, भद्रा, विभूति, कमला, अमोघा, विद्युता की

सोममंगारकं चैव बुधंगुरुमनुक्रमात्। भार्गवं च तथा मंदं राहुं केतुं तथैव च॥७०॥  
 पूजयेद्धोमयेदेवं दापयेच्च विशेषतः। योगिनो भोजयेत्तत्र शिवतत्त्वैकपारगान्॥७१॥  
 दिव्याध्ययनसंपन्नान्कृत्वैवं विधिविस्तरम्। होमे प्रवर्तमाने च पूर्वदिक्स्थानमध्यमे॥७२॥  
 आरोहयेद्विधानेन रुद्राध्यायेन वै नृपम्। धारयेत्तत्र भूपालं घटिकैकां विधानतः॥७३॥  
 यजमानो जपेन्मंत्रं रुद्रगायत्रिसंज्ञकम्। घटिकार्धं तदर्धं वा तत्रैवासनमारभेत्॥७४॥  
 आलोक्य वारुणं धीमान्कूर्चहस्तः समाहितः। नृपश्च भूषणैर्युक्तः खड़खेटकधारकः॥७५॥  
 स्वस्तिरित्यादिभिश्चादाक्षते चैव विशेषतः। पुण्याहं ब्राह्मणैः कार्यं वेदवेदांगपारगैः॥७६॥  
 जयमंगलशब्दादिब्रह्मघोषैः सुशोभनैः। नृत्यवाद्यादिभिर्गीतैः सर्वशोभासमन्वितैः॥७७॥  
 स्वमेवं चंद्रदिग्भागे सुवर्णं तत्र विक्षिपेत्। तुलाधारौ समौ वृत्तौ तुलाभारः सदा भवेत्॥७८॥  
 शतनिष्काधिकं श्रेष्ठं तदर्धं मध्यमं स्मृतम्। तस्यार्धं च कनिष्ठं स्यात्रिविधं तत्र कल्पितम्॥७९॥  
 वस्त्रयुग्ममथोष्णीषं कुंडलं कंठशोभनम्। अंगुलीभूषणं चैव मणिबंधस्य भूषणम्॥८०॥  
 एतानि चैव सर्वाणि प्रारंभे धर्मकर्मणि। पाशुपतव्रतायाथ भस्मांगाय प्रदापयेत्॥८१॥  
 पूर्वोक्तभूषणं सर्वं सोष्णीषं वस्त्रसंयुतम्। दद्यादेतत्प्रयोक्तुभ्य आच्छादनपटं बुधः॥८२॥

पूजा की जाय। मध्य में सर्वतोमुखी की पूजा की जाय॥६६-६९॥ अनुक्रम से चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु की पूजा की जाय और उनके निमित्त होम भी किया जाय॥७०-७१॥ शिव तत्त्व के ज्ञाता योगियों को समुचित सम्मान दिया जाय। इन कृत्यों को विस्तार में पूरा करके होम किया जाय। राजा को पूर्व की ओर तुला के पलड़े पर रुद्राध्याय मन्त्रों को दोहराते हुए बैठाया जाय। वहाँ पर राजा एक घड़ी (चौबीस मिनट) बैठा रहे॥७२-७३॥ यजमान रुद्र गायत्री मन्त्र को जपे। एक घटिका या इसका भी आधा या उसका भी आधा समय तक वहीं आसन पर बैठा रहे॥७४॥ बुद्धिमान भक्त शुद्ध होकर बैठे। वह हाथ में कुश ले ले और पश्चिम दिशा की ओर मुँह करके हाथ में कुश लेकर बैठे। राजा सब आभूषणों से भूषित हो तलवार ब्राह्मणों द्वारा पुण्याह किया जाय॥७५-७६॥ मंगल शब्द आदि और उत्तम शब्दघोष नृत्य, वाद्य और गीत की जाय। समारोह का अन्त इस प्रकार सुन्दर और शानदार ढंग से हो। वह उत्तर दिशा में सोने के सिक्कों को तब तक डालता रहे जबकि तराजू का बैलेंस (भार) बराबर न हो जाय॥७७-७८॥ अगर सौ सोने के सिक्कों (निष्क) को देने से राशि बढ़ जाय तो यह श्रेष्ठ माना जाता है। उसका आधा मध्यम और उसका भी आधा अर्थात् पच्चीस सिक्के कनिष्ठ कहा जाता है। इस प्रकार यह विविध रूप में विभक्त है॥७९॥

एक जोड़ी वस्त्र, साफा (उष्णीय), कान का कुंडल, गले का हार, अंगुली में पहनने की अंगूठी, कलाई में पहनने का कंगन (कड़ा) ये सब को धर्मकर्म के प्रारम्भ में भक्त पहने रहे। उन सबको पाशुपत व्रत करने वाले और शरीर पर भस्म धारण करने वाले शिव भक्त को दान देवें॥८०-८१॥ ऊपर कहे गये सब आभूषण, साफा

दक्षिणां च शतं सार्धं तदर्थं वा प्रदापयेत्। योगिनां चैव सर्वेषां पृथिव्यनष्कं प्रदापयेत्॥८३॥  
यागोपकरणं दिव्यमाचार्यायि प्रदापयेत्। इतरेषां यतीनां तु पृथिव्यनष्कं प्रदापयेत्॥८४॥  
तुलारोहसुवर्णं च शिवाय विनिवेदयेत्। प्रसादं मंडपं चैव प्राकारं भूषणं तथा॥८५॥

सुवर्णपुष्पं पटहं खङ्गं वै कोशमेव च।

कृत्वा दत्त्वा शिवायाथ किंचिच्छेषं च बुद्धिमान्॥८६॥

आचार्येभ्यः प्रदातव्यं भस्मांगेभ्यो विशेषतः। बंदीकृतान् विसृज्याथ कारागृहनिवासिनः॥८७॥  
सहस्रकलशैस्तत्र सेचयेत्परमेश्वरम्। घृतेन केवलेनापि देवदेवमुमापतिम्॥८८॥  
पयसा वाथ दध्ना वा सर्वद्रव्यैरथापि वा। ब्रह्मकूर्चेन वा देवं पंचगव्येन वा पुनः॥८९॥  
गायत्र्या चैव गोमूत्रं गोमयं प्रणवेन वा। आप्यायस्वेति वै क्षीरं दधिक्राव्येति वै दधि॥९०॥  
तेजोसीत्याज्यमीशानमंत्रेणौवाभिषेचयेत्। देवस्यत्वेति देवेशं कुशांबुकलशेन वै॥९१॥  
रुद्राध्यायेन वा सर्वं स्नापयेत्परमेश्वरम्। सहस्रकलशं शंभोर्नाम्नां चैव सहस्रकैः॥९२॥  
विष्णुना कथितैर्वापि तंडिना कथितैस्तु वा। दक्षेण मुनिमुख्येन कीर्तितैरथ वा पुनः॥९३॥  
महापूजा प्रकर्तव्या महादेवस्य भक्तिः। शिवार्चकाय दातव्या दक्षिणा स्वगुरोः सदा॥९४॥

और वस्त्रों को उनको दे दें जो इस संस्कार (कृत्य) को कराये हों॥८२-८३॥ बुद्धिमान व्यक्ति इन सबको ढकने (बाँधने) के लिए एक वस्त्र अलग से दे। उसके साथ एक-सौ सोने के सिकके या पचास या पचीस सिकके दक्षिणा देनी चाहिए। सब योगियों को अलग से निष्क (सोने का सिकका) दक्षिणा दी जाये। यज्ञ के सब दिव्य उपकरण आचार्य को दान कर दिया जाय। अन्य शेष यतियों को अलग से निष्क (सोने का सिकका) दक्षिणा दी जाय॥८४॥ तुला पर चढ़े सोने को शिव जी को भेट कर दिया जाना चाहिए। प्रासाद (महल), मंडप, प्राकार, आभूषण (सोने के फूल), पटह (ढोल), तलवार और म्यान (तलवार की) को भेट रूप में शिव को समर्पित की जाय। इसके बाद जो कुछ बचे उसको आचार्यों को और विशेष रूप से शरीर पर भस्म लपेटे हुए योगियों को बुद्धिमान भक्त द्वारा दे दी जानी चाहिए। जेल में बन्द सब कैदियों को छोड़ दिया जाना चाहिए। सहस्र कलशों से परमेश्वर शिव का सिंचन करना चाहिए। शिव जी को धी या दूध या दही से अथवा इन सबको मिलाकर उससे या गोमूत्र (ब्रह्मकूर्च) या पंचगव्य से विधिपूर्वक स्नान कराना चाहिए॥८५-८९॥ गायत्री मन्त्र दोहराते हुए गोमूत्र मिलाया जाय। प्रणव द्वारा गोबर को, 'आप्यायस्व' मन्त्र द्वारा दूध को और 'दधिक्राव्य' मन्त्र से दही को मिलाया जाय। आदि मन्त्र से धी को उसमें (पंचगव्य में) छोड़ा जाय। इशान मन्त्र द्वारा पंचगव्य से। देवस्य द्वारा उच्चारित शिव के सहस्र नामों को दोहराते हुए सहस्र कलशों का उपयोग शिव के स्नान में किया जाय। यक्ति से महादेव की महापूजा की जानी चाहिए। अपने गुरु को तथा शिव के पुजारी को सदा द्रव्य दक्षिणा दी जानी चाहिए। नगद दक्षिणा के साथ शरीर को ढकने के लिए सिल्क के वस्त्र या कम्बल भी दिया जाना चाहिए।

देहार्णवं च सर्वेषां दक्षिणा च यथाक्रमम्। दीनांधकृपणानां च बालवृद्धकृशातुरान्॥१५॥  
भोजयेच्च विधानेन दक्षिणामपि दापयेत्॥१६॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे  
तुलापुरुषदानविधावस्ताविंशत्तमोऽध्यायः॥२८॥

गरीबों, अन्धों, उपेक्षितों, बालकों व वृद्धों, दुबले-पतले लोगों और रोगियों को विधिपूर्वक (भर पेट) भोजन कराना चाहिए और दक्षिणा भी दी जानी चाहिए॥१०-१६॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तुला पुरुष दान विधि  
नामक अष्टाईसवाँ अध्याय समाप्त॥२८॥

—\*—

## एकोनत्रिंशोऽध्यायः हिरण्यगर्भदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

तुला ते कथिता ह्येषा आद्या सामान्यरूपिणी। हिरण्यगर्भ वक्ष्यामि द्वितीयं सर्वसिद्धिदम्॥१॥  
अधःपात्रं सहस्रेण हिरण्येन विधीयते। ऊर्ध्वपात्रं तदर्थेन मुखं संवेशमात्रकम्॥२॥  
हैमपेवं शुभं कुर्यात्सर्वालंकारसंयुतम्। अधःपात्रै स्मरेदेवीं गुणत्रयसमन्विताम्॥३॥  
चतुर्विंशतिकां देवीं ब्रह्मविष्वविनिरूपिणीम्। ऊर्ध्वपात्रे गुणातीतं षडिंशकमुमापतिम्॥४॥  
आत्मानं पुरुषं ध्यायेत्पंचविंशकमग्रजम्। पूर्वोक्तस्थानमध्येऽथ वेदिकोपरि मंडले॥५॥  
शालिमध्ये क्षिपेन्नीत्वा नववस्त्रैश्च वेष्टयेत्। माषकल्केन चालिष्य पंचद्रव्येण पूजयेत्॥६॥  
ईशानाद्यैर्यथान्यायं पंचभिः परिपूजयेत्। पूर्ववच्छवपूजा च होमश्वैव यथाक्रमम्॥७॥

देवीं गायत्रिकां जप्त्वा प्रविशेत्प्राङ्मुखः स्वयम्।

विधिनैव तु संपाद्य गर्भाधानादिकां क्रियाम्॥८॥

कृत्वा षोडशमार्गेण विधिना ब्राह्मणोत्तमः। दूर्वाकुरैस्तु कर्तव्या सेचना दक्षिणे पुटे॥९॥

उन्तीसवाँ अध्याय

## हिरण्यगर्भ की दान विधि

सनत्कुमार बोले

प्रथम पवित्र कृत्य तुलारोहण मैंने सामान्य रूप से कहा। इस क्रम में सब सिद्धि का दायक द्वितीय कृत्य को कहूँगा॥१॥ एक हजार सोने के सिक्कों से अधः पात्र बनवाया जाय। उसके आधे अर्थात् पाँच-सौ सोने के सिक्कों से ऊर्ध्व पात्र बनाया जाय। उसका मुख आसानी से भरने योग्य (सुराही के मुख की तरह) काफी चौड़ा हो। इस प्रकार स्वर्ण निर्मित पात्र को सब अलंकार से मुक्त करे। नीचे के पात्र में भक्त तीन गुण वाली माया देवी का स्मरण करे॥२-३॥ वह ऊपरी पात्र में बहा, विष्णु और अग्नि के रूपों के साथ चौबीस तत्त्वों वाली देवी (प्रकृति) को स्मरण करे। ऊपरी पात्र में छब्बीस तत्त्वों के गुणों वाले उमपति शिव का स्मरण करे॥४॥ वह आत्मा पर वेदिका के ऊपर मण्डल में पूर्वोक्त स्थान के मध्य में अग्रज पच्चीस तत्त्वों वाले पुरुष का ध्यान करे॥५॥ पात्र के हाथ में शाली चावल डाल दे और उस पात्र को नये वस्त्र से लपेट दे। उसको उड़द की दाल के आटे से लेप करके पंचद्रव्य से उसको पूरा करे॥६॥ भक्त ईशान आदि मन्त्रों से उसकी पूजा करे। यथाक्रम पूर्ववत् शिव पूजा और होम करे॥७॥ भक्त स्वयं गायत्री मन्त्र का जप करे और पूर्व मुख करके बैठे। इन सब कृत्यों को करने के बाद उत्तम ब्राह्मण पूजा की षोडशोपचार सामग्री से गर्भाधान आदि कृत्य पूरा करे। दूब के अंकुर से, गूलर के फलों के साथ कुशों से इककीस बार दाहिनी नासा पर छिड़काव करे। सीमंत संस्कार में भी

ओदुंबरफलैः सार्थमेकविंशत्कुशोदकम्। इशान्यां तावदेवात्र कुर्यात्सीमंतकर्मणि॥१०॥  
 उद्घोत्कन्यकां कृत्वा त्रिंशन्निष्केण शोभनाम्। अलंकृत्य तथा हुत्वा शिवाय विनिवेदयेत्॥११॥  
 अन्नप्राशनके विद्वान् भोजयेत्पायसादिभिः। एवं विश्वजितांता वै गर्भाधानादिकाः क्रियाः॥१२॥  
 शक्तिबीजेन कर्तव्या ब्राह्मणैर्वेदपारगैः। शेषं सर्वं च विधिवत्तुलाहेमवदाचरेत्॥१३॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकोनत्रिंशोऽध्यायः॥२९॥

उत्तर-पूर्व दिशा में जल का सेवन करे॥८-१०॥ तीस निष्क से एक सुन्दर आकार की कन्या की प्रतिमा बनवाये। उसको सजा बजा कर विवाह संस्कार करे। होम करे। फिर उसको शिव को समर्पित कर देना चाहिए। अन्नप्राशन में भक्त खीर आदि भोजन कराए। इस प्रकार गर्भाधान से प्रारम्भ करके विश्वजित तक का संस्कार समाप्त हुआ। ये सब संस्कार वेदों के पारगामी विद्वान ब्राह्मणों द्वारा करवाना चाहिए। शक्ति बीज मन्त्र को दोहराते हुये ये संस्कार किये जावें। शेष संस्कार तुलापुरुषदान की तरह पूर्ण किया जाना चाहिए॥११-१३॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में हिरण्यगर्भ की दान विधि  
 नामक उन्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥२९॥



## त्रिंशोऽध्यायः तिलपर्वतदानम्

सनत्कुमार उवाच

अथुना संप्रवक्ष्यामि तिलपर्वतमुत्तमम्। पूर्वोक्तस्थानकाले तु कृत्वा संपूज्य यत्नतः॥१॥  
सुसमे भूतले रम्ये वेदिना च विवर्जिते। दशतालप्रमाणेन दंडं संस्थाप्य वै मुने॥२॥

अद्बिद्धः संप्रोक्ष्य पश्चाद्बिद्धि तिलांस्त्वस्मिन्विनिक्षिपेत्।

पंचगव्येन तं देशं प्रोक्षयेद्ब्राह्मणोत्तमः॥३॥

मंडलं कल्पयेद्विद्वान्यूर्ववत्सुसमंततः। नववस्त्रैश्च संस्थाप्य रम्यपुष्पैर्विकीर्य च॥४॥  
तस्मिन्संचयनं कार्यं तिलभारैर्विशेषतः। दंडप्रादेशमुत्सेधमुत्तमं परिकीर्तितम्॥५॥  
चतुरुंगुलहीनं तु मध्यमं मुनिपुंगवाः। दंडतुल्यं कनिष्ठं स्यादंडहीनं न कारयेत्॥६॥  
वेष्टयित्वा नवैर्वस्त्रैः परितः पूजयेत्क्रमात्। सद्यादीनि प्रविन्यस्य पूजयेद्विधिपूर्वकम्॥७॥  
अष्टदिक्षु च कर्तव्याः पूर्वोक्ता मूर्तयः क्रमात्। त्रिनिष्केन सुवर्णेन प्रत्येकं कारयेत्क्रमात्॥८॥  
दक्षिणा विधिना कार्या तुलाभारवदेव तु। होमश्च पूर्ववत्प्रोक्तो यथावन्मुनिसत्तमाः॥९॥  
अर्चयेद्वदेवदेवेशं लोकपालसमावृतम्। तिलपर्वतमध्यस्थं तिलपर्वतरूपिणम्॥१०॥

## तीसवाँ अध्याय तिल पर्वत का दान

सनत्कुमार बोले

अब मैं तिल के पर्वत के दान के विषय में आप से कहूँगा। यत्नपूर्वक पूर्वोक्त स्थान और काल में सुलभ सुन्दर समतल भूमि पर दण्ड की स्थापना करके उसकी समुचित पूजा करके जल छिड़के। वह दण्ड दस ताल हाथ लम्बा हो। जल से उस दण्ड को छिड़कर उत्तम ब्राह्मणभक्त तिल के बीजों को वहाँ रखे। उस स्थान को पञ्चगव्य से जल से छिड़के। ॥१-३॥ विद्वान भक्त उसके चारों ओर गोलमण्डल बनावे। नये वस्त्र को रखकर और सुन्दर पुष्पों को विकीर्ण करके उसपर तिल के बीजों के भार का ढेर लगावे। अगर तिल का भार गाड़े हुए दण्ड से ऊपर हो जाय तो उसको उत्तम कहा जाता है। हे श्रेष्ठ मुनियों! दण्ड से चार अङ्गुल कम रहने पर मध्यम तथा दण्ड के बराबर होने पर कनिष्ठ श्रेणी का होता है। तिल के ढेर को दण्ड से हीन न करना चाहिए। ॥४-६॥ इसको नये वस्त्र से लपेट देना चाहिए। वहाँ सद्य और अन्य को स्थापित करके विधि विधान के अनुसार उनकी पूजा करनी चाहिए। ॥७॥ पूर्व में कहे हुये मूर्तियों को आठों दिशाओं में स्थापित करना चाहिए। प्रत्येक मूर्ति तीन निष्क सुवर्ण से बनवायी जाय। ॥८॥ तुला भार के कृत्य में तद्वत् विधिपूर्वक दक्षिणा दी जाय। हे श्रेष्ठ मुनियों! पूर्वोक्त कथनानुसार होम भी किया जाय। ॥९॥ हजार कलशों के द्वारा शिव की पूजा की जानी चाहिए।

शिवार्चना च कर्तव्या सहस्रकलशादिभिः। दर्शयेत्तिलमध्यस्थं देवदेवमुमापतिम्॥११॥  
पूजयित्वा विधानेन क्रमेण च विसर्जयेत्। श्रोत्रियाय दरिद्राय दापयेत्तिलपर्वतम्॥१२॥

एवं तिलनगः प्रोक्तः सर्वस्मादधिकः परः॥१३॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे तिलपर्वतदानं  
नाम त्रिंशोडध्यायः॥३०॥

तिल पर्वत के मध्य में स्थित तिल पर्वत के स्वरूप में देव देवेश शिव की सहस्र कलशों से अर्चना की जाय। विधान के अनुसार उनकी पूजा करके विसर्जन किया जाय। तिल के पर्वत को वेदों के ज्ञाता श्रोत्रिय ब्राह्मण को जो कि गरीब हों, उसको झेट कर दें। इस प्रकार तिल पर्वत के दान का विधान मैंने तुमसे कहा। इस प्रकार तिल पर्वत का दान सब दानों से अधिक श्रेष्ठ कहा गया है॥१०-१३॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तिल पर्वत का दान  
नामक तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३०॥



## एकत्रिंशोऽध्यायः सूक्ष्मपर्वतदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

अथान्यं पर्वतं सूक्ष्ममल्पद्रव्यं महाफलम्। द्रव्यमात्रोपसंयुक्ते काले मध्यं विधीयते॥१॥  
गोपयालिप्तभूमौ तु ह्यंबराणि प्रकीर्य च। तन्मध्ये निक्षिपेद्धीमांस्तिलभारत्रयं शुभम्॥२॥  
पद्मष्टदलं कुर्यात्कर्णिकाकेसरान्वितम्। दशनिष्केण तत्कार्यं तदर्थार्थेन वा पुनः॥३॥  
तिलमध्ये न्यसेत्पद्मं पद्ममध्ये महेश्वरम्। आराध्य विधिवदेवं वामादीनि प्रपूजयेत्॥४॥  
शक्तिरूपं सुवर्णेन त्रिनिष्केण तु कारयेत्। न्यासं तु परितः कुर्याद्विघ्नेशान्यरिभागतः॥५॥  
पूर्वोक्तहेममानेन विघ्नेशानपि कारयेत्। तानभ्यर्च्यं विधानेन गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥६॥  
इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षुक्त्रिंशोऽध्यायः॥३९॥

## इकतीसवाँ अध्याय सूक्ष्म पर्वत की दान विधि

सनत्कुमार बोले

सूक्ष्म पर्वत के नाम से कथित दान कृत्य का वर्णन करता हूँ। यद्यपि इसमें सामग्री स्वल्प है, लेकिन इसका फल महान् है। इस दान कृत्य को किसी भी समय किया जा सकता है जबकि सामग्री एकत्र हो जाय। सामान्य रूप से यह एक पवित्र धार्मिक कृत्य है॥१॥ गाय के गोबर से भूमि को लीपकर उसको नवीन वस्त्र से ढक देना चाहिए। उस वस्त्र के ऊपर तीन भार तिल को विकीर्ण कर दे॥२॥ भक्त अष्टदल कमल कर्णिका और केसर से युक्त दस निष्क या उसके आधे या उससे भी आधे से बनी तिल के बीच में पद्म और पद्म के बीच में महेश्वर की मूर्ति स्थापित करे। विधिपूर्वक उस महेश्वर मूर्ति की पूजा करके बाम और अन्य की पूजा करे॥३-४॥ तीन निष्क सुवर्ण से शक्ति की मूर्ति बनवायी जाय। न्यास कृत्य किया जाय। चारों ओर विघ्नेशों को स्थापित करें। पूर्वोक्त सुवर्ण के तौल से (तीन निष्क) विघ्नेशों को बनवाकर उनकी गन्ध पुष्पादि से विधिपूर्वक पूजा करें॥५-६॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में सूक्ष्म पर्वत की दान विधि  
नामक इकतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३९॥



## द्वात्रिंशोऽध्यायः सुवर्णमेदिनीदानम्

सनत्कुमार उवाच

जपहोमार्चनादानाभिषेकाद्यं च पूर्ववत्। सुवर्णमेदिनीदानं प्रवक्ष्यामि समाप्तः॥१॥  
 पूर्वोत्तरदेशकाले तु कारयेन्मुनिभिः सह। लक्षणेन यथापूर्वं कुण्डे वा मंडलेऽथ वा॥२॥  
 मेदिनीं कारयेद्विव्यां सहस्रेणापि वा पुनः। एकहस्ता प्रकर्तव्या चतुरस्त्रा सुशोभना॥३॥  
**सप्तद्वीपसमुद्राद्यैः** पर्वतैरभिसंवृता। सर्वतीर्थसमोपेता मध्ये मेरुसमन्विता॥४॥  
 अथवा मध्यतो द्वीपं नवखण्डं प्रकल्पयेत्। पूर्ववन्निखिलं कृत्वा मंडले वेदिमध्यतः॥५॥  
**सप्तभागैकभागेन** सहस्राद्विधिपूर्वकम्। शिवभक्ते प्रदातव्या दक्षिणा पूर्वचोदिता॥६॥  
**सहस्रकलशाद्यैश्च** शंकरं पूजयेच्छिवम्। सूवर्णमेदिनीप्रोक्तं लिंगेस्मिन्दानमुत्तमम्॥७॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे सुवर्णमेदिनीदानं  
 नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः॥३२॥

## बत्तीसवाँ अध्याय स्वर्ण मेदिनी का दान

सनत्कुमार बोले

अब मैं संक्षेप में सुवर्ण मेदिनी दान को कहता हूँ। जप, होम, पूजा, दान और अभिषेक आदि पूर्ववत् कथित विधि से मुनियों के साथ में मुनियों के द्वारा पूर्ण किया जाय। यह कार्य कुण्ड में या मण्डल में किया जाय॥१-२॥ हजार निष्क (सोने के सिक्के) से भूमि का आकार (आकृति) बनाया जाय। यह एक हाथ या चार हाथ में विभाजित सुन्दर और शानदार हो। सात द्वीप, समुद्र आदि पर्वतों से घिरी हुयी हो। सब तीर्थों से युक्त सब कृत्य करके सहस्र स्वर्ण सिक्कों के साथ में बनाया जाय। मण्डल में वेदी के मध्य पूर्ववत् भक्त हजारों कलशों तथा अन्य वस्तुओं से भगवान शिव की पूजा करे। यह सुवर्ण मेदिनी दान सर्वोत्तम दान कहा गया है॥५-७॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में स्वर्णमेदिनी का दान  
नामक बत्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३२॥

## त्रयस्त्रिशोऽध्यायः कल्पपादपदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि कल्पपादपमुत्तमम्। शतनिष्केण कृत्वैवं सर्वशाखासमन्वितम्॥१॥  
शाखानां विविधं कृत्वा मुक्तादामाद्यलंबनम्। दिव्येर्मारकतैश्चैव चांकुराग्रं प्रविन्यसेत्॥२॥  
प्रवालं कारयेद्विद्वान्प्रवालेन द्वुमस्य तु। फलानि पद्मरागैश्च परितोऽस्य सुशोभयेत्॥३॥  
मूलं च नीलरत्नेन वज्रेण स्कंधमुत्तमम्। वैदूर्येण द्वुमाग्रं च पुष्परागेण मस्तकम्॥४॥  
गोमेदकेन वै कंदं सूर्यकान्तेन सुव्रत। चन्द्रकान्तेन वा वेदिं द्वुमस्य स्फटिकेन वा॥५॥  
वितस्तिमात्रमायामं वृक्षस्य परिकीर्तितम्। शाखाष्टकस्य मानं च विस्तारं चोर्ध्वतस्तथा॥६॥  
तन्मूले स्थापयेलिंगं लोकपालैः समावृतम्। पूर्वोक्तवेदिमध्ये तु मण्डले स्थाप्य पादपम्॥७॥  
पूजयेदेवमीशानं लोकपालांश्च यत्ततः। पूर्ववज्जपहोमाद्यं तुलाभारवदाचरेत्॥८॥  
निवेदयेद्द्वुमं शंभोर्योगिनां वाथ वानृप। भस्मांगिभ्योऽथ वा राजा सार्वभामो भविष्यति॥९॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे कल्पपादपदानविधिर्नाम  
त्रयस्त्रिशोऽध्यायः॥३३॥

## तैतीसवाँ अध्याय कल्प पादप दान विधि

सनत्कुमार बोले

अब मैं सौ सोने के सिक्कों से बने हुये कल्प वृक्ष के दान के विषय में कहता हूँ जो कि सब शास्त्रों से सम्मत और उत्तम दान है। कल्प पादप हजार निष्क से बनवाया जाय। इसमें सभी शाखाएँ और डालियाँ मोतियों की बनी हैं। इसमें अंकुर का अग्रभाग दिव्य मरकत से अलंकृत हो॥१-२॥ पादप के प्रवाल को प्रवाल (मोती) से कराया जाय। उसमें चारों ओर पद्मराग से फल बनवाकर सुशोभित करना चाहिए॥३॥ नील रत्न से पादप के मूल को और उसकी शाखाओं को वज्र से और उसके अग्र भाग को वैदूर्य मणि से और मस्तक को पुष्पराग से, जड़ को गोमेद से बनाया जाय। हे सुव्रत! पादप के वेदी चबूतरे को सूर्यकान्त मणि से, चन्द्रकान्त मणि अथवा स्फटिक से बनावे॥४॥ वृक्ष की लम्बाई को एक बीता कहा गया है। आठ शाखाओं के मान विस्तार और ऊँचाई एक होगी॥५-६॥ उसके मूल में लिंग की स्थापना करे। यह लिंग दिक्पालों से घिरा हुआ हो। मण्डल पर पूर्वोक्त विधि से वेदी के बीच में पादप को स्थापित करे। भक्त तब विधिपूर्वक लोकपालों और भगवान शिव की पूजा करे। तुला भारवत् पहले की तरह जप, होमादि करे। हे राजन्! उस पादप को योगी को अथवा ऐसे व्यक्ति को समर्पित करे जो अपने शरीर पर भस्म धारण किये हुये हो। राजा इस कल्प पादप के दान से चक्रवर्ती सम्राट् होगा॥७-९॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में कल्पपादप दानविधि  
नामक तैतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३३॥

# चतुर्स्त्रिंशोऽध्यायः गणेशोशदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

गणेशेण प्रवक्ष्यामि दानं पूर्वोक्तमंडपे। संपूज्य देवदेवेशं लोकपालसमावृतम्॥१॥  
विश्वेश्वरान्यथाशास्त्रं सर्वाभरणसंयुतान्। दशनिष्केण वै कृत्वा संपूज्य च विधानतः॥२॥  
अष्टदिक्षवष्टकुंडेषु पूर्ववद्घोममाचरेत्। पंचावरणमार्गेण पारंपर्यक्रमेण च॥३॥  
सप्तविप्रान्समभ्यर्च्य कन्यामेकां तथोत्तरे। दापयेत्सर्वमंत्राणि स्वैःस्वैर्मूर्त्रैरनुक्रमात्॥४॥  
दत्त्वैवं सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः॥५॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे गणेशोशदानविधिनिरूपणं  
नाम चतुर्स्त्रिंशोऽध्यायः॥३४॥

## चौंतीसवाँ अध्याय गणेशोशदान विधि

सनत्कुमार बोले

इसके बाद मैं पूर्व कथित मण्डप में गणेशेश कृत्य का वर्णन करूँगा। दिक्षपालों से घिरे हुए देवेश शंकर की पूजा करने के बाद विश्वेश्वर की प्रतिमा दस निष्क से बनवाये जो शास्त्रविधि के अनुसार हो और सभी आभूषणों से विभूषित हो। भक्त यथाविधि उनकी पूजा करे। वह पूर्ववत् आठ कुण्डों में आठ दिशाओं में होम करे। यह होम पञ्चावरण मार्ग से और परम्परानुसार किया जाय। भक्त सात ब्राह्मणों और एक कुमारी कन्या को उत्तर दिशा में बैठाकर पूजा करे। सब मंत्रों को दोहरावे और यथाक्रम से अपने-अपने मन्त्रों के द्वारा दान दिया जाय। इस प्रकार दान देकर भक्त निःसन्देह सभी पापों से मुक्त हो जाता है॥१-५॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में गणेशोशदान विधि  
नामक चौंतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३४॥



# पंचत्रिंशोऽध्यायः हेमधेनुदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

अथ ते संप्रवक्ष्यामि हेमधेनुविधिक्रमम्।  
सर्वपापप्रशमनं ग्रहदुर्भिक्षनाशनम्॥१॥

उपसर्गप्रशमनं सर्वव्याधिनिवारणम्। निष्काणां च सहस्रेण सुवर्णेन तु कारयेत्॥२॥

तदर्थेनापि वा सम्यक् तदर्थार्थेन वा पुनः।  
शतेन वा प्रकर्तव्या सर्वरूपगुणान्विता॥३॥

गोरूपं सुखुरं दिव्यं सर्वलक्षणसंयुतम्। खुराग्रे विन्यसेद्वज्रं शृंगे वै पद्मरागकम्॥४॥

भ्रुवोर्मध्ये न्यसेद्विव्यं मौक्तिकं मुनिसत्तमाः। वैदूर्येण स्तनाः कार्या लांगूलं नीलतः शुभम्॥५॥

दंतस्थाने प्रकर्तव्यः पुष्परागः सुशोभनः। पशुवत्कारयित्वा तु वत्सं कुर्यात्सुशोभनम्॥६॥

सुवर्णदशनिष्केण सर्वरत्नसुशोभितम्। पूर्वोक्तवेदिकामध्ये मण्डलं परिकल्प्य तु॥७॥

तन्मध्ये सुरभिं स्थाप्य सवत्सां सर्वतत्त्ववित्। सवत्सां सुरभिं तत्र वस्त्रयुग्मेन वेष्टयेत्॥८॥

संपूजयेद्वां गायत्र्या सवत्सां सुरभिं पुनः। अथैकाग्निविधानेन होमं कुर्याद्यथाविधि॥९॥

## पेंतीसवाँ अध्याय सुवर्ण धेनु दान विधि

सनत्कुमार बोले

अब मैं तुमसे हेमधेनु के दान की प्रक्रिया को कहता हूँ। यह सब पापों का नाश करता है और सब ग्रह दोषों और दुर्भिक्ष का नाशक है॥१॥ यह सब रोगों और विपत्तियों का निवारण करता है। एक हजार और पाँच सौ, दौ सौ पचास या सौ निष्क सोने के सिक्कों से सर्वरूप और गुण से युक्त गाय बनवायी जाय॥२-३॥ गाय का रूप उसका खुर सब लक्षणों से युक्त और दिव्य हो। खुर के अग्रभाग पर वज्र मढ़ा जाय। सींगों पर पद्मराग लगाया जाय॥४॥ हे मुनियो! भौंहों के बीच में दिव्य मोती, वैदूर्य से स्तन और नील से पूँछ बनायी जाय। दाँतों के जाय॥५॥ इस प्रकार गाय को पशु के रूप में बनाकर सुन्दर स्थान पर सुन्दर पुष्पराग से दन्तावली बनायी जाय॥६॥ इस प्रकार गाय को पशु के रूप में बनाकर सुन्दर बछड़ा बनाया जाय॥७॥ बछड़ा सोने के दस सिक्कों द्वारा बनाया जाय। यह रत्नों के द्वारा सुन्दर हो। पूर्वकथित वेदी के मध्य में मण्डल खींचकर (बनाकर) उसके बीच में बछड़े सहित गाय को स्थापित करके दो नवीन वस्त्रों वेदी के मध्य में बैठकर (बनाकर) उसके बीच में बछड़े सहित गाय की गायत्री मन्त्र से पूजा करें और फिर विधिपूर्वक अग्नि स्थापित से ढक दें॥८॥ फिर बछड़े सहित गाय की गायत्री मन्त्र से पूजा करें और फिर विधिपूर्वक अग्नि स्थापित करके होम करना चाहिए। अग्नि में समिधा और धी से पूर्ववत् यथाविधि होम करना चाहिए। शिव के लिंग को

समिदाज्यविधानेन पूर्ववच्छेषमाचरेत्। शिवपूजा प्रकर्तव्या लिंगं स्नाप्य धृतादिभिः॥१०॥  
 गामालभ्य च गायत्र्या शिवायादापयेच्छुभाम्। दक्षिणा च प्रकर्तव्या त्रिंशन्निष्का महामते॥११॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे हेमधेनुदानविधिनिष्क्यणं  
 नाम यंचत्रिंशोऽष्ट्यायः॥३५॥

धृतादि से स्नान कराकर शिव की पूजा की जानी चाहिए। गायत्री मन्त्र से गाय का स्पर्श करके उसको शिव को समर्पित कर देना चाहिए। हे महामते! तीस निष्क दक्षिणा दी जानी चाहिए॥९-११॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में हेमधेनु दानविधि  
 नामक पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३५॥



# षट्क्रिंशमोऽध्यायः लक्ष्मीदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

लक्ष्मीदानं प्रवक्ष्यामि महदैश्वर्यवर्धनम्। पूर्वोक्तमण्डपे कार्यं वेदिकोपरिमण्डले॥१॥  
 श्रीदेवीमतुलां कृत्वा हिरण्येन यथाविधि। सहस्रेण तदर्थेन तदर्थार्थेन वा पुनः॥२॥  
 अष्टोत्तरशतेनापि सर्वलक्षणसंयुताम्। मण्डले विन्यसेल्लक्ष्मीं सर्वालंकारसंयुताम्॥३॥  
 तस्यास्तु दक्षिणे भागे स्थंडिले विष्णुमर्चयेत्। अर्चयित्वा विधानेन श्रीसूक्तेन सुरेश्वरीम्॥४॥  
 अर्चयेद्विष्णुगायत्र्या विष्णुं विश्वगुरुं हरिम्। आराध्य विधिना देवीं पूर्ववद्घोममाचरेत्॥५॥  
 समिद्धुत्वा विधानेन आज्याहुतिमथाचरेत्। पृथगष्टोत्तरशतं होमयेद्ब्राह्मणोत्तमैः॥६॥  
 आहूय यजमानं तु तस्याः पूर्वदिशि स्थले। तस्मै तां दर्शयेद्देवीं दंडवत्प्रणमेत्क्षतौ॥७॥  
 प्रणम्य विष्णुं तत्रस्थं शिवं पूर्ववदर्चयेत्। तस्या विंशतिभागं तु दक्षिणा परिकीर्तिता॥८॥  
 तदर्थाशं तु दातव्यमितरेषां यथार्हतः। ततस्तु होमयेच्छंभुं भक्तो योगी विशेषतः॥९॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे लक्ष्मीदानविधिनिरूपणं  
नाम षट्क्रिंशत्तमोऽध्यायः॥३६॥

## छत्तीसवाँ अध्याय लक्ष्मी दान विधि

सनत्कुमार बोले

अब मैं ऐश्वर्य को बढ़ाने वाले लक्ष्मीदान के बारे में कहता हूँ। पूर्वोक्त मण्डप में वेदी के ऊपर मध्य में लक्ष्मी की स्वर्ण प्रतिमा बनवाये। एक हजार निष्क या पाँच सौ निष्क अथवा उसका आधा या फिर एक सौ आठ निष्क स्वर्ण से सभी लक्षणों से युक्त बनाकर मण्डल में सभी अलंकारों से सुसज्जित कर स्थापित करे और उसके दक्षिण भाग में स्थापित विष्णु की पूजा करे और श्री सूक्त से विधिपूर्वक लक्ष्मी की पूजा करे तथा विश्वगुरु भगवान विष्णु की गायत्री सूक्त से पूजा करे और विधिपूर्वक देवी की पूजा करके पूर्वोक्त विधि से हवन करे॥१-५॥ श्रेष्ठ ब्राह्मणों से विधिपूर्वक समिधा से हवन करे, और यजमान को बुलाकर वेदी के पूर्व में देवी का दर्शन करावे और भूमि पर दण्डवत् प्रणाम करे। विष्णु को प्रणाम करे तथा पूर्ववत् शिव की पूजा करे और उसका आधा दशांश दक्षिणा सुपात्र को दे और भक्त योगी शिव के लिये हवन करे॥६-९॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में लक्ष्मीदान विधि  
नामक छत्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३६॥

## सप्तत्रिंशोऽध्यायः तिलधेनुदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

अथातः संप्रवक्ष्यामि तिलधेनुविधिक्रमम्। पूर्वोक्तमंडपे कुर्याच्छबूजां तु पश्चिमे॥१॥  
 तस्याग्रे मध्यतो भूमौ पद्मालिख्य शोभनम्। वस्त्रैराच्छादितं पद्मं तन्मध्ये विन्यसेच्छुभम्॥२॥  
 तिलपुष्पं तु कृत्वाथ हेमपद्मं विनिक्षिपेत्। त्रिंशत्रिष्केण कर्तव्यं तदर्थार्थेन वा पुनः॥३॥  
 पञ्चनिष्केण कर्तव्यं तदर्थार्थेन वा पुनः। तमाराध्य विधानेन गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥४॥  
 पद्मस्योत्तरदिग्भागे विप्रानेकादश न्यसेत्। तानभ्यर्च्य विधानेन गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥५॥  
 आच्छादनोत्तरासंगं विप्रेभ्यो दापयेत्क्रमात्। उष्णीषं च प्रदातव्यं कुण्डले च विभूषिते॥६॥  
 हेमांगुलीयकं दत्त्वा ब्राह्मणेभ्यो विधानतः। एकं दश च वस्त्राणि तेषामग्रे प्रकीर्य च॥७॥  
 तेषु वस्त्रेषु निःक्षिप्य तिलाद्यानि पृथक्पृथक्। कांस्यपात्रं शतपलं विभिद्यैकादशांशकम्॥८॥  
 इक्षुदंडं च दातव्यं ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः। गोश्रूगे तु हिरण्येन द्विनिष्केण तु कारयेत्॥९॥  
 रजतेन तु कर्तव्याः खुरा निष्कद्वयेन तु। एवं पृथक्पृथग् दत्त्वा तत्तिलेषु विनिक्षिपेत्॥१०॥  
 रुद्रैकादशमंत्रैस्तु रुद्रेभ्यो दापयेत्तदा। पद्मस्य पूर्वदिग्भागे विप्रान्द्वादश पूजितान्॥११॥  
 एतेनैव तु मार्गेण तेषु श्रद्धासमन्वितः। द्वादशादित्यमंत्रैश्च दापयेदेवमेव च॥१२॥

सेतीसवाँ अध्याय

## तिल धेनु दान विधि

सनत्कुमार बोले

अब मैं तिल धेनु दान के बारे में कहता हूँ। पूर्वोक्त मण्डप में पश्चिम में शिव की पूजा करे। उसके आगे और बीच में अष्टदल कमल पुष्प बनावे और उसपर वस्त्रों से ढके पद्म को स्थापित करे। तिल पुष्प करके स्वर्ण कमल स्थापित करे। वह स्वर्ण कमल ३० निष्क अथवा उसके आधे निष्क का बनवावे अथवा पाँच निष्क या उसके आधे का बनाकर विधिपूर्वक क्रम से गन्ध पुष्पादि से पूजा करे। १-४॥ पद्म के उत्तर भाग में ग्यारह ब्राह्मणों को बैठावे। उनकी क्रमशः गन्ध पुष्पादि से विधिपूर्वक पूजा करे और अंग वस्त्र, पगड़ी तथा कुण्डलों से ब्राह्मणों को सुशोभित करे। सभी ब्राह्मणों को सोने की अङ्गूठी देकर उनके सामने एक या दस वस्त्र बिछाकर उन वस्त्रों में अलग-अलग तिल डाले। ५-७॥ उन वस्त्रों पर अलग-अलग तिलादि वस्त्र रखकर एक कांस्य पात्र सौ पल का, ग्यारह भागों में विभक्त करके विशेष रूप से ब्राह्मणों के लिए ईख के दण्डे के साथ देनी चाहिए। भक्त को दो सोने के सिक्कों से गाय की सींग बनवानी चाहिए। दो सोने के सिक्के की कीमत के बराबर चाँदी के खुर बनवावे। इस प्रकार अलग-अलग देकर उन सबको तिलों में रख दे। ८-१०॥ ग्यारह रुद्र मन्त्रों

पूर्ववदक्षिणे भागे विप्रान्बोडश संस्थितान्। मूर्ति विघ्नेशमन्त्रैश्च दापयेत्पूर्ववत्पुनः॥१३॥  
यजमानेन कर्तव्यं सर्वमेतद्यथाक्रमम्। केवलं रुद्रदानं वा अदित्येभ्योऽथ वा पुनः॥१४॥  
मूर्त्यादीनां च वा देयं यथाविभवविस्तरम्। पद्मं विन्यस्य राजासौ शेषं वा कारयेन्वृपः॥१५॥

दक्षिणा च प्रदातव्या पंचनिष्केण भूषणम्॥१६॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे तिलधेनुदानविधिनिष्करणं नाम  
सप्तत्रिंशोऽध्यायः॥३७॥

को पढ़कर उन वस्तुओं को रुद्रों को भेंट कर दे। पूरब की ओर बारह ब्राह्मणों को बिठाकर उनकी पूजा करे। उसी पूर्व वर्णित विधि के अनुसार भक्त सभी संस्कारों को करे। बारह आदित्य मन्त्रों को पढ़कर सामग्री को उनको भेंट कर दे॥११-१२॥ पूर्ववत् दक्षिण भाग में बैठे हुये १६ ब्राह्मणों को विघ्नेश्वर मन्त्रों के द्वारा मूर्ति को समर्पित कर देनी चाहिए॥१३॥ यह सब कार्य यथाक्रम यजमान द्वारा किया जाना चाहिए। रुद्रों अथवा आदित्यों को दान पर्याप्त है। अपने सामर्थ्य के अनुसार मूर्ति आदि को दक्षिणा देनी चाहिए। राजा पाद्य आदि कृत्य को पूरा करे। पाँच निष्क सोने का मूल्य का एक आभूषण राजा द्वारा दक्षिणा के रूप में दिया जाना चाहिए॥१४-१६॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तिलधेनुदान विधि  
नामक सैतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३७॥



## अष्टत्रिंशोऽध्यायः गोसहस्रदानम्

सनत्कुमार उवाच

गोसहस्रप्रदानं च वदामि शृणु सुव्रता। गवां सहस्रमादाय सवत्सं सगुणं शुभम्॥१॥  
 तास्त्वभ्यर्च्य यथाशास्त्रमष्टौ सम्यक्प्रत्नतः। तासां शृंगाणि हेमाथ प्रतिनिष्केण बंधयेत्॥२॥  
 खुरांश्च रजतेनैव बंधयेत्कंठदेशतः। प्रतिनिष्केण कर्तव्यं कर्णे वज्रं च शोभनम्॥३॥  
 शिवाय द्विग्निप्रेभ्यो दक्षिणां च पृथक्पृथक्। दशनिष्कं तदर्धं वा तस्याधर्द्धमथापि वा॥४॥  
 यथाविभवविस्तारं निष्कमात्रमथापि वा। वस्त्रयुग्मं च दातव्यं पृथग्निप्रेषु शोभनम्॥५॥  
 गावश्चाराध्य यत्लेन दातव्याः सुमनोरमाः। एवं दत्त्वा विधानेन शिवमभ्यर्च्य शंकरम्॥६॥  
 जपेदग्ने यथान्यायं गवां स्तवमनुत्तमम्। गावो ममाग्रतो नित्यं गावो नः पृष्ठतस्तथा॥७॥  
 हृदये मे सदा गावो गवां मध्ये वसाम्यहम्। इति कृत्वा द्विजाग्न्येभ्यो दत्त्वा गत्वा प्रदक्षिणम्।  
 तद्रोमवर्षसंख्यानि स्वर्गलोके महीयते॥९॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे गोसहस्रप्रदानं  
 नामाष्टत्रिंशोऽध्यायः॥३८॥

## अङ्गीसवाँ अध्याय सहस्र धेनु दान विधि

सनत्कुमार बोले

हे सुव्रत! अब मैं सहस्र गायों की दान विधि को बताता हूँ। भक्त एक हजार अच्छी गायों को बछड़ों सहित इकट्ठा करे और शास्त्र विधि से उन सब गायों की पूजा करे और उनकी सींगों को एक सोने के सिक्के के मूल्य के सोने से बाँध देना चाहिए॥१-२॥ खुरों को चाँदी से बाँध देना चाहिए। गले को चारों ओर से एक सोने के सिक्के से बाँध देना चाहिए। कानों को सुन्दर हीरे से विभूषित कर देना चाहिए। यह सब शिव को भेंट कर देना चाहिए और ब्राह्मणों को अलग-अलग दक्षिणा दी जानी चाहिए। यह दक्षिणा दस निष्क या उसका आधा वस्त्र ब्राह्मणों में से प्रत्येक को देना चाहिए॥३-५॥ गायों की पूजा करके उनको दान देना चाहिए। गायें देखने में सुन्दर हों। इस प्रकार दान देकर भक्त भगवान शिव की पूजा करे और उसके बाद भक्त गायों की स्तुति करे, “गायें मेरे सामने हैं पीठ पीछे हैं। गायें मेरे हृदय में हैं और मैं गायों के बीच में निवास कर रहा हूँ।” इस प्रकार प्रार्थना करने के बाद सुपात्र ब्राह्मणों को ये गायें दान कर दी जायें। जो भक्त इस प्रकार सहस्र गायों का दान करता है, उन गायों के शरीर में जितने रोम होते हैं, संख्या में उतने वर्ष वह स्वर्ग में पूजित होता है॥६-९॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में सहस्र धेनु दान विधि  
नामक अङ्गीसवाँ अध्याय समाप्त॥३८॥

## एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः हिरण्याश्वदानम्

सनत्कुमार उवाच

हिरण्याश्वप्रदानं च वदामि विजयावहम्। अश्वमेधात्पुनः श्रेष्ठं वदामि शृणु सुब्रता॥१॥  
अष्टोत्तरसहस्रेण अष्टोत्तरशतेन वा। कृत्वाश्वं लक्षणैर्युक्तं सर्वालंकारसंयुतम्॥२॥

पंचकल्याणसंपन्नं दिव्याकारं तु कारयेत्।  
सर्वलक्षणसंयुक्तं सर्वगैश्च समन्वितम्॥३॥

सर्वायुधसमोपेतमिद्रवाहनमुत्तमम् । तन्मध्यदेशे संस्थाप्य तुरंगं स्वगुणान्वितम्॥४॥  
उच्चैः श्रवसकं मत्वा भक्त्या चैव समर्चयेत्। तस्य पूर्वदिशाभागे ब्राह्मणं वेदपारगम्॥५॥  
सुरेन्द्रबुद्ध्या संपूज्य पंचनिष्कं प्रदापयेत्। स चाश्वः शिवभक्ताय दातव्यो विधिनैव तु॥६॥  
सुवर्णाश्वं प्रदत्त्वा तु आचार्यमपि पूजयेत्। यथा विभवविस्तारं पंचनिष्कमथापि वा॥७॥  
दीनांधकृपणानाथबालवृद्धकृशातुरान् । तोषयेदन्नदानेन ब्राह्मणांश्च विशेषतः॥८॥  
एतद्यः कुरुते भक्त्या दानमश्वस्य मानवः। ऐंद्रान्पोगांश्चिरं भुक्त्वा रुचिरैश्वर्यवान्भवेत्॥९॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे हिरण्याश्वदानं  
नामैकोनचत्वारिंशोऽध्याया॥३९॥

## उन्तालीसवाँ अध्याय स्वर्ण अश्वदान विधि

सनत्कुमार बोले

हे सुब्रत! मैं सोने के घोड़े की दान की विधि का वर्णन करूँगा। इससे रण क्षेत्र में विजय प्राप्त होती है। यह अश्वमेघ से भी श्रेष्ठ है॥१॥ एक हजार आठ सोने के सिक्के या १०८ सोने के सिक्के से भक्त घोड़े की एक मूर्ति बनवाये जो सब उत्तम लक्षणों से युक्त और सब अलंकारों से भूषित हो। घोड़े में पाँच कल्याण चिह्न हों और उसका आकार एवं स्वरूप दिव्य हो। यह सब लक्षणों से युक्त और सर्वाङ्ग पूर्ण हो। भक्त इन्द्र के वाहन (उच्चैश्रवा) के समान उसको मानकर भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करे। उसके बाद पूर्व दिशा में वेदों में पारंगत ब्राह्मण (उच्चैश्रवा) को बैठावे। उस ब्राह्मण को इन्द्र के रूप में मानकर उसकी पूजा करके पाँच निष्क दक्षिणा दे। विधिपूर्वक पूजित उस अश्व को शिव भक्त को दे दिया जाय। स्वर्ण अश्व के दान करने के बाद आचार्य की पूजा करे। उनको अपने सामर्थ्य के अनुसार अथवा पाँच निष्क दक्षिणा दे। गरीब, अन्ध, कृपण, अनाथ, बालक, वृद्ध, कृश और रोगियों को अन्न (भोजन) दान करके उनको संतुष्ट करे। विशेष रूप से ब्राह्मणों को भोजन करावे। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक ऐसा स्वर्ण अश्व प्रदान करता है, वह चिरकाल तक इन्द्र के समान भोगों को प्राप्त करता है और वह महान ऐश्वर्यवान होता है॥२-९॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में स्वर्ण अश्वदान विधि  
नामक उन्तालीसवाँ अध्याय समाप्त॥३९॥

—३९—

## चत्वारिंशोऽध्यायः कन्यादानविधिः

सनत्कुमार उवाच

**कन्यादानं प्रवक्ष्यामि सर्वदानोत्तमोत्तमम्। कन्यां लक्षणसंपन्नां सर्वदोषविवर्जिताम्॥१॥**

**मातापित्रोस्तु संबादं कृत्वां दत्त्वां धनं महत्।**

**आत्मीकृत्याथ संस्नाप्य वस्त्रं दत्त्वा शुभं नवम्॥२॥**

**भूषणैर्भूषयित्वाथ गंधमाल्यैरथार्चयेत्। निमित्तानि समीक्ष्याथ गोत्रनक्षत्रकादिकान्॥३॥**

**उभयोश्चित्तमालोक्य उभौ संपूज्य यत्नतः। दातव्या श्रोत्रियादैव ब्राह्मणाय तपस्त्विने॥४॥**

**साक्षादधीतवेदाय विधिना ब्रह्मचारिणे। दासदासीधनाद्वयं च भूषणनि विशेषतः॥५॥**

**क्षेत्राणि च धनं धान्यवासांसि च प्रदापयेत्। यावंति देहे रोमाणि कन्यायाः संततौ पुनः॥६॥**

**तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥७॥**

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे कन्यादानविधिर्नाम**

**चत्वारिंशोऽध्यायः॥४०॥**

**चालीसवाँ अध्याय**

## **कन्यादान विधि**

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं कन्यादान को कहूँगा यह सब दानों में सर्वोत्तम है। सब लक्षणों से युक्त और सभी दोषों से रहित कन्या को उसके माता-पिता से बातचीत करके समुचित धन देकर उसको अपनाकर स्नान कराकर सुन्दर नये वस्त्र और आभूषणों से भूषित करके उसके बाद गन्ध माल्य से उसकी पूजा करनी चाहिए। उसके गोत्र नक्षत्रादि की समीक्षा करके श्रोत्रिय तपस्वी ब्राह्मण, वेद पढ़े हुये ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले ब्रह्मचारी को दोनों की इच्छा को देखकर विधिपूर्वक पूजा करे। उनको दास-दासी आभूषण विशेष रूप से भूमि, धन, धान्य और वस्त्रों को देना चाहिए। उस कन्या के सन्तानि के शरीर में जितने रोम विद्यमान हों उतने वष्टों तक वह भक्त रुद्र लोक में पूजित होता है॥१-७॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में कन्यादान विधि  
नामक चालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४०॥**

—\*—

## एकचत्वारिंशोऽध्यायः

# सुवर्णवृषदानम्

सनत्कुमार उवाच

हिरण्यवृषदानं च कथयामि समासतः। वृषरूपं हिरण्येन सहस्रेणाथ कारयेत्॥१॥  
 तदर्थार्थेन वा धीमांस्तदर्थार्थेन वा पुनः। अष्टोत्तरशतेनापि वृषभं धर्मरूपिणम्॥२॥  
 ललाटे कारयेत्पुंड्रमर्धचंद्रकलाकृतिम्। स्फाटिकेन तु कर्तव्यं खुरं तु रजतेन वै॥३॥  
 ग्रीवा तु पद्मरागेण ककुदगोमेदकेन च। ग्रीवायां घांटवलयं रत्नचित्रं तु कारयेत्॥४॥  
 वृषांकं कारयेत्तत्र किंकिणीवलयावृतम्। पूर्वोक्तदेशकाले तु वेदिकोपरिमंडले॥५॥  
 वृषेन्द्रं स्थापयेत्तत्र पश्चिमामुखमग्रतः। ईश्वरं पूजयेद्भृत्या वृषारूढं वृषध्वजम्॥६॥

वृषेन्द्रं	पूज्य	गायत्रा	नमस्कृत्य	समाहितः।
तीक्ष्णशृंगाय	धर्मपादाय	विद्धहे	धीमहि।	तत्रो वृषः प्रचोदयात्॥७॥
मंत्रेणानेन	संपूज्य	वृषं	धर्मविवृद्धये।	
होमयेच्च		घृतान्नादैर्यथाविभवविस्तरम्॥८॥		

## इकतालीसवाँ अध्याय

# सुवर्ण वृषभ दान

सनत्कुमार बोले

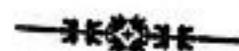
अब मैं सोने के बैल के दान कृत्य का वर्णन संक्षेप में करूँगा। बुद्धिमान भक्त १ हजार या ५ सौ यहाँ तक कि १०८ सोने के सिक्कों द्वारा एक बैल का स्वरूप बनवाये। वह उस बैल को धर्म के रूप में बनवाये॥१-२॥ उसके ललाट पर अर्धचन्द्र के आकार का पुण्ड्र (विशेष चिह्न) कराये। खुर को चाँदी से, गले को पद्मराग से और ककुद (कूबड़ या डील) को गोमेद से बनवाये। गले में गोल रस्सी द्वारा घण्टियाँ बाँधी जायें। किंकिणी और वलय से युक्त तथा रत्नों से सुशोभित करे॥३-४॥ बैल के घण्टियाँ और वलय (कड़ा) चमकदार हों। भक्त उस सुसज्जित बैल को वेदी पर मण्डप में यथोचित समय में खड़ा करे। बैल का मुख पश्चिम की ओर रहे। भक्त श्रद्धापूर्वक बैल की पीठ पर आसीन भगवान शंकर की पूजा करे॥५-६॥ वृष गायत्री मन्त्र के द्वारा उस वृषेन्द्र की पूजा करे और उसको प्रणाम करे। “तीक्ष्णशृंगाय विद्धहे धर्मपादाय धीमहि। तत्रो वृषः प्रचोदयात्।” “तीखे सींग वाले बैल को जानते हैं। हम धर्मपाद से युक्त वृष का ध्यान करते हैं। अतः बैल हम लोगों का मार्ग दर्शन करे।” बैल की फिर पूजा की जाय और उसको ब्राह्मण को या शिव को दान कर दिया जाय। अपने सामर्थ्य के

वृषभः पूज्य दातव्यो ब्राह्मणेभ्यः शिवाय वा। दक्षिणा चैव दातव्या यथावित्तानुसारतः॥९॥  
एतद्यः कुरुते भत्त्या वृषदानमनुत्तमम्। शिवस्यानुचरो भूत्वा तेनैव सह मोदते॥१०॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे सुवर्णवृषदानं  
नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः॥४९॥

अनुसार यजमान दक्षिणा भी दे क्योंकि जो भक्तिपूर्वक इस सर्वोत्तम वृष दान को करता है वह शिव का अनुचर होता है और उनके साथ आनन्द करता है॥७-१०॥

श्रीलिङ्गमहापुराण के उत्तर भाग में स्वर्णवृषभ दान  
नामक इकतालीस अध्याय समाप्त॥४१॥



## द्विचत्वारिंशोऽध्यायः गजदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

गजदानं प्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः। द्विजाय वा शिवायाथ दातव्यः पूज्य पूर्ववत्॥१॥  
गजं सुलक्षणोपेतं हैमं वा राजतं तु वा। सहस्रनिष्कमात्रेण तदर्थेनापि कारयेत्॥२॥  
तदर्थार्थेन वा कुर्यात्सर्वलक्षणभूषितम्। पूर्वोक्तदेशकाले च देवाय विनिवेदयेत्॥३॥  
अष्टम्यां वा प्रदातव्यं शिवाय परमेष्ठिने। ब्राह्मणाय दरिद्राय श्रोत्रियायाहिताग्नये॥४॥  
शिवमुद्दिश्य दातव्यं शिवं संपूज्य पूर्ववत्। एतद्यः कुरुते दानं शिवभक्तिसमाहितम्॥५॥

स्थित्वा स्वर्गे चिरं कालं राजा गजपतिर्भवेत्॥६॥

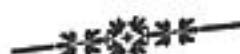
इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः॥४२॥

## बयालीसवाँ अध्याय गज दान विधि

सनत्कुमार बोले

अब मैं पूर्व के क्रम में यथावत् गजदान को कहूँगा। गज की पूजा करके ब्राह्मण या शिव को देना चाहिए।  
भक्त हाथी की एक प्रतिमा सुन्दर लक्षणों से युक्त सोने या चाँदी से बनवाये। यह एक हजार सोने के सिक्के या  
उसके आधे या उससे आधे सिक्कों से बनवायी जाय और वह प्रतिमा सब लक्षणों से युक्त हो। पूर्व कथित स्थान  
और समय पर यह शिव को अष्टमी तिथि को भेंट करना चाहिए। या इस गज प्रतिमा को वेदों में पारंगत गरीब  
ब्राह्मण—जो की पवित्र अग्नि को सर्वदा सुरक्षित रखता है—शिव की पूजा करके और शिव को ध्यान में रखकर  
दान करना चाहिए। जो व्यक्ति पूर्णभक्ति के साथ यह गजदान करता है वह चिरकाल तक स्वर्ग में रहकर बाद  
में एक राजा और गजपति होता है॥१-६॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में गजदान विधि  
नामक बयालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४२॥



# त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः लोकपालाष्टकम् दानम्

सनत्कुमार उवाच

लोकपालाष्टकं दिव्यं साक्षात्परमदुर्लभम्। सर्वसंपत्करं गुह्यं परचक्रविनाशनम्॥१॥  
स्वदेशरक्षणं दिव्यं गजवाजिविवर्धनम्। पुत्रवृद्धिकरं पुण्यं गोब्राह्मणहितावहम्॥२॥  
पूर्वोक्तदेशकाले तु वेदिकोपरिमंडले। मध्ये शिवं समभ्यर्च्य यथान्यायं यथाक्रमम्॥३॥  
दिग्विदिक्षु प्रकर्तव्यं स्थंडिलं बालुकामयम्। अष्टौ विप्रान्समभ्यर्च्य वेदवेदांगपारगान्॥४॥  
जितेन्द्रियान्कुलोद्भूतान्सर्वलक्षणसंयुतान्। शिवाभिमुखमासीनाऽनाहतेष्वंबरेषु च॥५॥  
वस्त्रैराभरणीर्दिव्यैर्लोकपालकमंत्रकः। गंधपुष्पैः सुधूपैश्च ब्राह्मणानर्चयेत्क्रमात्॥६॥  
पूर्वतो होमयेदग्नौ लोकपालकमंत्रकैः। समिद्धृताभ्यां होतव्यमग्निकार्यं क्रमेण वा॥७॥  
एवं हुत्वा विधानेन आचार्यः शिववत्सलः। यजमानं समाहूय सर्वाभरणभूषितान्॥८॥  
तेन तान्पूजयित्वाथ द्विजेभ्यो दापयेद्दनम्। पृथक्पृथक्तन्मंत्रैश्च दशनिष्कं च भूषणम्॥९॥  
दशनिष्केण कर्तव्यमासनं केवलं पृथक्। स्नपनं तत्र कर्तव्यं शिवस्य विधिपूर्वकम्॥१०॥

## तैतालीसवाँ अध्याय आठ लोकपालों की दान विधि

सनत्कुमार बोले

आठ लोकपालों का दान कृत्य दिव्य है जो बहुत दुर्लभ है। यह सब सम्पत्ति को देने वाला और शत्रुओं का नाश करने वाला है। अपने देश की रक्षा करने वाला, हाथी और घोड़ों की वृद्धि करने वाला, पुत्र वृद्धि करने वाला और गो एवं ब्राह्मणों का हित सम्पादन करने वाला है॥१-२॥ भक्त पूर्वोक्त स्थान और समय पर मण्डल में वेदी के ऊपर यथाक्रम विधिपूर्वक शिव की पूजा करके दिशाओं और विदिशाओं की बालू से मूर्ति बनावे। वेद और वेदांग के पारगामी विद्वानों, जितेन्द्रिय, कुलीन और सब लक्षणों से युक्त शिव के सामने बैठे हुये, आठ ब्राह्मणों की भलीभांति पूजा करके नये वस्त्र फैला दे। भक्त गंध, पुष्प, धूप, दीप से दिव्य वस्त्रों और आभूषणों से लोक पालक मन्त्र पढ़ते हुये उन ब्राह्मणों की क्रम से पूजा करे॥३-६॥ लोकपालों के मन्त्रों को पढ़ते हुये पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके भक्त होम करे। होम यज्ञ की समिधाओं और धी द्वारा करे। इस प्रकार विधान से हवन करके शिव का प्रिय भक्त आचार्य होम करके यजमान को बुलाकर और वह ब्राह्मणों को सब आभरणों से भूषित करके उनकी पूजा करके तत्सम्बन्धी मन्त्रों को क्रमशः दोहराते हुये उनको धन दे। दस निष्क के सोने के द्वारा आठों दिगपालों के लिए अलग से आसन बनाया जाय। वहाँ पर शिव का स्नान

दक्षिणा च प्रदातव्या यथाविभवविस्तरम्।  
 एवं यः कुरुते दानं लोकेशानां तु भक्तिः। लोकेशानां चिरं स्थित्वा सार्वभौमो भवेद्बुधः॥११॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः॥४३॥

विधिपूर्वक कराया जाय। इस प्रकार जो भी दिक्पालों की भक्तिपूर्वक पूजा करके इनका दान देता है। वह लोकपालों के लोक में चिरकाल तक रहकर सार्वभौम सम्प्राट होता है॥७-११॥

श्रीलिङ्गमहापुराण के उत्तर भाग में लोकपालों की दान विधि  
 नामक तैत्तालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४३॥



## चतुर्थचत्वारिंशोऽध्यायः विष्णुदानविधि:

सनत्कुमार उवाच

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि सर्वदानोत्तमोत्तमम्। पूर्वोत्तदेशकाले च मंडपे च विधानतः॥१॥  
प्रणयात्कुंडमध्ये च स्थंडिले शिवसन्निधौ। पूर्वं विष्णुं समासाद्य पद्मयोनिमतः परम्॥२॥

मंत्राभ्यां विधिनोत्तकाभ्यां प्रणवादिसमंत्रकम्।

नारायणाय विद्यहे वासुदेवाय धीमहि तत्रो विष्णुः प्रचोदयात्॥३॥

ब्रह्मब्राह्मणवृद्धाय ब्रह्मणे विश्ववेधसे। शिवाय हरये स्वाहा स्वधा वौषट् वौषट् तथा॥४॥  
पूजयित्वा विधानेन पश्चाद्दोमं समाचरेत्। सर्वद्रव्यं हि होतव्यं द्वाभ्यां कुंडविधानतः॥५॥  
ऋत्विजौ द्वौ प्रकर्तव्यौ गुरुणा वेदपारगौ। तानुदिश्य यथान्यायं विप्रेभ्यो दापयेद्धनम्॥६॥  
शतमष्टोत्तरं तेभ्यः पृथक्पृथगनुत्तमम्। वस्त्राभरणसंयुक्तं सर्वालिंकारसंयुतम्॥७॥  
गुरुरेको हि वै श्रीमान् ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरः। तेषां पृथक्पृथगदेयं भोजयेद्वाह्यणानपि॥८॥

शिवार्चना च कर्तव्या स्नपनादि यथाक्रमम्॥९॥  
इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे चतुर्थचत्वारिंशोऽध्यायः॥४४॥

## चौवालीसवाँ अध्याय विष्णुदान विधि

सनत्कुमार बोले

इसके बाद में एक ऐसे दानकृत्य को कहूँगा जो कि सभी उत्तम दानों में श्रेष्ठ है। पूर्वोत्त काल और स्थान पर, मण्डप में कुण्ड के बीच में या खाली भूमि पर शिव के सामने, भक्त भक्तिपूर्वक विष्णु की पूजा करे। कमल से उत्पन्न भगवान विष्णु की पूजा प्रणव सहित निम्नलिखित मन्त्रों द्वारा की जाय। “नारायणाय विद्यहे वासुदेवाय लोगों का मार्गदर्शन करें। ब्राह्मण को स्वाहा। वृद्ध ब्राह्मण, सृष्टि के कर्ता, शिव को हरि को स्वाहा। वौषट् और में सब होम द्रव्यों से हवन करना चाहिए। होम में दो ब्राह्मण होने चाहिए जो आचार्य से विधिपूर्वक वेदों का अध्ययन किये हों। भक्त उनको दृष्टि में रखकर ब्राह्मणों को द्रव्य दक्षिणा दे। १०८ सोने के सिक्के उत्तम वस्त्र, प्रतिनिधित्व करता है। उनको पृथक्-पृथक् दान दिया जाय। ब्राह्मणों को भोजन कराया जाय। अभिषेक से प्रारम्भ करके यथाक्रम शिव की पूजा की जानी चाहिए॥५-९॥

लिंगमहापुराण के उत्तर भाग में विष्णुदान विधि नामक  
चौवालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४४॥



## पंचचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः जीवच्छ्राद्धविधिः

ऋषय ऊचुः

एवं षोडश दानानि कथितानि शुभानि च।  
जीवच्छ्राद्धक्रमोऽस्माकं वक्तुमर्हसि सांप्रतम्॥१॥

सूत उवाच

जीवच्छ्राद्धविधिं वक्ष्ये समासात्सर्वसंमतम्। मनवे देवदेवेन कथितं ब्रह्मणा पुरा॥२॥  
वसिष्ठाय च शिष्टाय भृगवे भार्गवाय च। शृण्वन्तु सर्वभावेन सर्वसिद्धिकरं परम्॥३॥  
श्राद्धमार्गक्रमं साक्षाच्छ्राद्धार्हणामपि क्रमम्। विशेषमपि वक्ष्यामि जीवच्छ्राद्धस्य सुव्रताः॥४॥  
पर्वते वा नदीतीरे वने वायतनेऽपि वा। जीवच्छ्राद्धं प्रकर्तव्यं मृतकाले प्रयत्नतः॥५॥  
जीवच्छ्राद्धे कृते जीवो जीवन्नेव विमुच्यते। कर्म कुर्वन्नकुर्वन्वा ज्ञानी वाज्ञानवानपि॥६॥  
श्रोत्रियोश्रोत्रियो वापि ब्राह्मणः क्षत्रियोऽपि वा। वैश्यो वा नात्र संदेहो योगमार्गगतो यथा॥७॥  
परीक्ष्य भूमिं विधिवद्रंधवर्णरसादिभिः। शल्यमुद्धत्य यत्नेन स्थंडिलं सैकतं भुवि॥८॥  
मध्यतो हस्तमात्रेण कुंडं चैवायतं शुभम्। स्थंडिलं वा प्रकर्तव्यमिषुमात्रं पुनः पुनः॥९॥

पंतालीसवाँ अध्याय

## जीवत् श्राद्ध संस्कार की विधि

ऋषिगण बोले

इस प्रकार सोलह दानों को संक्षेप में कहा। अब आप जीवत्श्राद्ध विधि को हम लोगों को बतायें।

सूत बोले

संक्षेप में सर्वसम्मत जीवत् श्राद्ध विधि को कहता हूँ जिसको देवताओं के देवता ब्रह्मा ने पहले मनु से कहा था। मनु ने वसिष्ठ को, वसिष्ठ ने अनुशासित भृगु और भार्गव को कहा। उस सब प्रकार से सिद्धि देने वाले जीवत् श्राद्ध विधि को पूर्णभाव से सुनिये॥१-३॥ हे सुव्रत! मैं श्राद्ध के क्रम और विधि को कहता हूँ। जो जीवत् श्राद्ध को करने में श्रद्धा रखते हों उनके लिए उस श्राद्ध की विशेषताओं को भी कहता हूँ॥४॥ जीवत् श्राद्ध पर्वत पर, नदी के किनारे, वन में या अपने निवास पर जबकि शरीर वृद्ध हो। तब यह कृत्य किया जाता है, तो उसके करने पर जीव जीते हुये भी मुक्त हो जाता है। कर्म करते हुये अथवा न करते हुये, ज्ञानी हो या अज्ञानी हो, श्रोत्रिय हो या अश्रोत्रिय हो, ब्राह्मण हो, क्षत्रिय हो या वैश्य हो, या योग मार्ग का अनुयायी हो। इसमें कोई सन्देह नहीं है॥५-७॥ श्राद्ध की भूमि को गंध, रंग, स्वाद आदि के द्वारा परीक्षा कर लेनी चाहिए। उस भूमि पर से घास-फूस और काँटे आदि उखाड़ देना चाहिए। इस प्रकार स्वच्छ भूमि पर मध्य में एक हाथ मात्र चौड़ाई में बालू से ढक देना

उपलिष्य विधानेन चालिष्याग्निं विधाय च। अन्वाधाय यथाशास्त्रं परिगृह्य च सर्वतः॥१०॥  
परिस्तीर्य स्वशाखोक्तं पारंपर्यक्रमागतम्। समाप्याग्निमुखं सर्वं मंत्रेरेतैर्यथाक्रमम्॥११॥  
संपूज्य स्थंडिले वह्नौ होमयेत्समिदादिभिः। आदौ कृत्वा समिद्धोमं चरुणा च पृथक्पृथक्॥१२॥  
घृतेन च पृथक्पात्रे शोधितेन पृथक्पृथक्। जुहुयादात्मनोदधृत्य तत्त्वभूतानि सर्वतः॥१३॥

ॐ भूः ब्रह्मणे नमः॥१४॥  
ॐ भूः ब्रह्मणे स्वाहा॥१५॥  
ॐ भुवः विष्णवे नमः॥१६॥  
ॐ भुवः विष्णवे स्वाहा॥१७॥  
ॐ स्वः रुद्राय नमः॥१८॥  
ॐ स्वः रुद्राय स्वाहा॥१९॥  
ॐ महः ईश्वराय नमः॥२०॥  
ॐ महः ईश्वराय स्वाहा॥२१॥  
ॐ जनः प्रकृतये नमः॥२२॥  
ॐ जनः प्रकृत्यै स्वाहा॥२३॥  
ॐ तपः मुद्रलाय नमः॥२४॥  
ॐ तपः मुद्रलाय स्वाहा॥२५॥  
ॐ ऋतं पुरुषाय नमः॥२६॥  
ॐ ऋतं पुरुषाय स्वाहा॥२७॥  
ॐ सत्यं शिवाय नमः॥२८॥  
ॐ सत्यं शिवाय स्वाहा॥२९॥

चाहिए, यदि कुण्ड खोदा जाय तो यह लम्बा और उत्तम हो, या खाली भूमि को एक बाण बढ़ा दिया जाय। भूमि को विधिपूर्वक गाय के गोबर से लीपकर वहाँ वेद मन्त्रों के उच्चारण के साथ अग्नि की स्थापना की जाय। चारों ओर जल का छिड़काव किया जाय। अग्नि स्थापन अपने-अपने वेदों की शाखाओं के परम्परागत मन्त्रों से किया जाय। भूमि पर विधिवत् पूजन करने के बाद यज्ञ के समिधाओं के द्वारा होम किया जाय तथा तब चरु से धी से पृथक्-पृथक् होम किया जाय। अलग पात्र तथा शुद्ध किये हुये धी से तत्त्वों भूतों को मन से विचार करके चारों ओर अलग-अलग होम करना चाहिये॥८-१३॥ ॐ भूः ब्रह्मा को नमस्कार है॥१४॥ ॐ भूः ब्रह्मा को स्वाहा॥१५॥ ॐ भुवः विष्णु को नमस्कार॥१६॥ ॐ भुवः विष्णु को स्वाहा॥१७॥ ॐ स्वः रुद्र को स्वाहा॥१८॥ ॐ स्वः रुद्र को स्वाहा॥१९॥ ॐ महः ईश्वर को नमस्कार॥२०॥ ॐ महः ईश्वर को स्वाहा॥२१॥ ॐ जनः प्रकृति को नमस्कार॥२२॥ ॐ जनः प्रकृति को स्वाहा॥२३॥ ॐ तपः मुद्रगल को नमस्कार॥२४॥ ॐ तपः मुद्रगल को स्वाहा॥२५॥ ॐ ऋतं पुरुष को नमस्कार॥२६॥ ॐ ऋतं पुरुष को नमस्कार॥२७॥ ॐ सत्यं शिव को नमस्कार॥२८॥ ॐ सत्यं शिव को स्वाहा॥२९॥

ॐ शर्व धरां मे गोपाय घाणे गंधं शर्वाय देवाय भूर्नमः॥३०॥  
ॐ शर्व धरां मे गोपाय घाणे गंधं शर्वाय भूः स्वाहा॥३१॥  
ॐ शर्व धरां मे गोपाय घाणे गंधं शर्वस्य पत्न्यै भूर्नमः॥३२॥  
ॐ शर्व धरां मे गोपाय घाणे गंधं शर्वपत्न्यै भूः स्वाहा॥३३॥  
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवाय देवाय भुवो नमः॥३४॥  
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवाय देवाय भुवः स्वाहा॥३५॥  
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवस्य पत्न्यै भुवो नमः॥३६॥  
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवस्य पत्न्यै भुः स्वाहा॥३७॥  
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय देवाय स्वरों नमः॥३८॥  
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय देवाय स्वः स्वाहा॥३९॥  
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य पत्न्यै स्वरों नमः॥४०॥  
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य देवस्य पत्न्यै स्वः स्वाहा॥४१॥  
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शं उग्राय देवाय महर्नमः॥४२॥  
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्राय देवाय महः स्वाहा॥४३॥  
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्रस्य देवस्य पत्न्यै महरों नमः॥४४॥  
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्रस्य देवस्य पत्न्यै महः स्वाहा॥४५॥  
ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनो नमः॥४६॥

ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गंध, शर्व स्वामी को नमस्कार, भूः ॐ शर्व को नमस्कार।  
ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गंध, शर्व को स्वाहा। ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गंध, भूः शर्व की पत्नी की पत्नी को नमस्कार। ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गन्ध, भूः शर्व की पत्नी को स्वाहा।।३०-३३॥ ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव स्वामी को नमस्कार।  
ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव स्वामी को स्वाहा। ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव की पत्नी को नमस्कार। ॐ भव, मेरी अग्नि की रक्षा करे, मेरे नेत्रों में रंग, स्वः, ॐ रुद्र को नमस्कार।  
ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करें, नेत्र में रंग, स्वः स्वाहा, रुद्र स्वामी को नमस्कार। ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करें, नेत्र में रंग, स्वः ॐ, रुद्र स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करे, नेत्र में रंग, स्वः स्वाहा, रुद्र स्वामी की पत्नी को।।३८-४१॥ ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करे, त्वचा में स्पर्श, महः, उग्र स्वामी को नमस्कार। ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करे, त्वचा में स्पर्श, महः ॐ, उग्र स्वामी की पत्नी को नमस्कार।  
ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करे, त्वचा में स्पर्श, महः स्वाहा उग्र स्वामी की पत्नी को।।४२-४५॥ ॐ भीम, मेरी शुष्ठि की रक्षा करे, कानों में ध्वनि, जनः ॐ, भीम स्वामी को नमस्कार। ॐ भीम, मेरी शुष्ठि की रक्षा

ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनः स्वाहा॥४७॥  
 ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य पत्न्यै जनो नमः॥४८॥  
 ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य देवस्य पत्न्यै जनः स्वाहा॥४९॥  
 ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशाय देवाय तपो नमः॥५०॥  
 ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशाय देवाय तपः स्वाहा॥५१॥  
 ॐ रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशस्य पत्न्यै तपो नमः॥५२॥  
 ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशस्य पत्न्यै तपः स्वाहा॥५३॥  
 ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवाय ऋतं नमः॥५४॥  
 ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवाय ऋतं स्वाहा॥५५॥  
 ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवस्य पत्न्यै ऋतं नमः॥५६॥  
 ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवस्य पत्न्यै ऋतं स्वाहा॥५७॥  
 ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतये देवाय सत्यं नमः॥५८॥  
 ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतये देवस्य सत्यं स्वाहा॥५९॥  
 ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपते देवस्य पत्न्यै सत्यं नमः॥६०॥  
 ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतेदेवस्य पत्न्यै सत्यं स्वाहा॥६१॥

ॐ शिवाय नमः॥६२॥

ॐ शिवाय सत्यं स्वाहा॥६३॥

एवं शिवाय होतव्यं विरिच्चाद्यं च पूर्ववत्। विरिच्चाद्यं च पूर्वोक्तं सृष्टिमार्गेषु सुव्रताः॥६४॥

करे, कानों में ध्वनि, जनः स्वाहा, भीम स्वामी को। ॐ भीम, मेरी शुषिर की रक्षा करें, कानों में ध्वनि, जनः ॐ भीम स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ भीम मेरे सुषिर की रक्षा करें, कानों में ध्वनि, जनः स्वाहा भीम स्वामी की पत्नी को॥४६-४९॥ ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः ॐ, ईश स्वामी को नमस्कार। ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः ॐ, ईश स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः स्वाहा ईश स्वामी की पत्नी को॥५०-५३॥ ॐ महादेव, मेरे सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य को। ॐ महादेव मेरे सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य में श्रद्धा, ऋतम्, स्वाहा महादेव सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य में श्रद्धा, महादेव की पत्नी को नमस्कार। ॐ महादेव, मेरे भोक्ता और भोग की स्थिति, सत्यं, पशुपति स्वामी को नमस्कार। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करें, भोक्ता और भोग की स्थिति, पशुपति स्वामी को सत्यं स्वाहा। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करे, भोक्ता और भोग की स्थिति, सत्यं, पशुपति स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करें, भोक्ता और भोग की स्थिति, पशुपति स्वामी की पत्नी को सत्यं स्वाहा। ॐ शिव को नमस्कार। ॐ सत्यं, शिव को स्वाहा॥५८-६३॥ इस प्रकार

पुनः पशुपतेः पत्नीं तथा पशुपतिं क्रमात्। संपूज्य पूर्ववन्मंत्रैर्हेतत्वं च क्रमेण वै॥६५॥  
चर्वतमाज्यपूर्वं च समिदंतं समाहितः॥६६॥

ॐ शर्वं धरां मे छिंधि घाणे गंधं छिंधि मेघं जहि भूः स्वाहा॥६७॥

भुवः स्वाहा॥६८॥

स्वः स्वाहा॥६९॥

भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥७०॥

एवं पृथक्पृथग्धुत्वा केवलेन घृतेन वा। सहस्रं वा तदर्थं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥७१॥  
विरजा च घृतेनैव शतमष्टोत्तरं पृथक्। प्राणादिभिश्च जुहुयाद्धृतेनैव तु केवलम्॥७२॥

ॐ प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि शिवो मा विशाप्रदाहाय प्राणाय स्वाहा॥७३॥

प्राणाधिपतये रुद्राय वृषांतकाय स्वाहा॥७४॥

ॐ भूः स्वाहा॥७५॥

ॐ भुवः स्वाहा॥७६॥

ॐ स्वः स्वाहा॥७७॥

भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥७८॥

एवं क्रमेण जुहुयाच्छाद्कोत्तं च यथाक्रमम्। सप्तमेऽहनि योगींद्राज्ञाद्वार्हानपि भोजयेत्॥७९॥

शर्वादीनां च विप्राणां वस्त्राभरणकंबलान्। वाहनं शयनं यानं कांस्यताम्नादिभाजनम्॥८०॥

हैमं च राजतं धेनुं तिलान् क्षेत्रं च वैभवम्। दासीदासगणश्चैव दातव्यो दक्षिणामपि॥८१॥

पिंडं च पूर्ववद्यात्पृथग्धृप्रकारतः। ब्राह्मणानां सहस्रं च भोजयेच्च सदक्षिणम्॥८२॥

एकं वा योगनिरतं भस्मनिष्ठं जितेंद्रियम्। अयं चैव तु रुद्रस्य महाचरुनिवेदनम्॥८३॥

शिव के होम कृत्य को पूरा किया जाय और विरिचादि के लिये हुये पूर्ववत् विरंचि और अन्न सृष्टि मार्गों में पूर्वोक्त होम करे। इसके बाद भक्त पशुपति और पशुपति की पत्नी की क्रम से पूजा करे, पूजा करने के बाद क्रमशः मन्त्रों के प्रयोग को करते हुये होम करे। हवन सामग्री में धी चरु और यज्ञ समिधा होनी चाहिए। यज्ञ कर्ता को शरीरिक और मानसिक रूप शुद्ध होना चाहिये॥६४-६६॥ ॐ शर्वं, मेरे भूमि को काटो, नाक में गन्ध को घन को नष्ट करो—भूः स्वाहा, भूवः स्वाहा, स्वः स्वाहा। भूर्भुवः स्वः स्वाहा। इस प्रकार भक्त अलग-अलग १ हजार, पाँच सौ या १०८ बार केवल धी से हवन करे। विरजा मन्त्रों को दोहराते हुये केवल धी से १०८ बार अलग होम किया जाय। हे शिव! मुझमें प्रवेश करो। प्राण के जलाने वाला प्राण के अधिपति को स्वाहा, रुद्र को वृष के नाशक के लिए स्वाहा। ॐ भूः स्वाहा ॐ भुवः स्वाहा ॐ स्वः स्वाहा ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥६७-७८॥ इस प्रकार जैसा कि श्राद्ध में होता है। यथाक्रम उसी प्रकार हवन करे। सातवें दिन श्रेष्ठ योगियों और श्राद्ध में भोजन करने योग्य व्यक्तियों को भोजन करावे॥७९॥ शिव के भक्त ब्राह्मणों को वस्त्राभूषण, शाल, कम्बल, वाहन, विस्तर, कांस्य ताम्र आदि के बर्तन, सोने चाँदी के बने बर्तन, गायें, तिल, भूमि तथा अन्य वस्तुएँ दान करे। दास और दासियों को भी दक्षिणा दी जाय॥८०-८१॥ आठ प्रकार के पिण्ड अलग-अलग पूर्ववत् दिया जाय। श्राद्ध कर्ता को चाहिये कि वह हजार ब्राह्मणों को भोजन कराये और उनको दक्षिणा भी दे॥८२॥ या योगाभ्यास में लगे हुये

विशेष एवं कथित अशेषश्वाद्ध चोदितः। मृते कुर्यान्नि कुर्याद्वा जीवन्मुक्तो यतः स्वयम्॥८४॥  
 नित्यनैमित्तिकादीनि कुर्याद्वा संत्यजेत् वा। बांधवेऽपि मृते तस्य शौचाशौचं न विद्यते॥८५॥  
 सूतकं च न संदेहः स्नानमात्रेण शुद्धयति। पश्चाज्जाते कुमारे च स्वे क्षेत्रे चात्मनो यदि॥८६॥  
 तस्य सर्वं प्रकर्तव्यं पुत्रोऽपि ब्रह्मविद्धवेत्। कन्यका यदि संजाता पश्चात्तस्य महात्मनः॥८७॥  
 एकपर्णा इव ज्ञेया अपर्णा इव सुव्रता। भवत्येव न संदेहस्तस्याश्चान्वयजा अपि॥८८॥  
 मुच्यन्ते नात्र संदेहः पितरो नरकादपि। मुच्यन्ते कर्मणानेन मातृतः पितृतस्तथा॥८९॥  
 कालं गते द्विजे भूमौ खनेच्चापि दहेत् वा। पुत्रकृत्यमशेषं च कृत्वा दोषो न विद्यते॥९०॥  
 कर्मणा चोत्तरेणैव गतिरस्य न विद्यते। ब्रह्मणा कथितं सर्वं मुनीनां भावितात्मनाम्॥९१॥  
 पुनः सनत्कुमाराय कथितं तेन धीमता। कृष्णद्वैपायनायैव कथितं ब्रह्मसुनुना॥९२॥  
 प्रसादात्तस्य देवस्य वेदव्यासस्य धीमतः। ज्ञातं मया कृतं चैव नियोगादेव तस्य तु॥९३॥  
 एतद्वः कथितं सर्वं रहस्यं ब्रह्मसिद्धिदम्। मुनिपुत्राय दातव्यं न चाभक्ताय सुव्रताः॥९४॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे जीवत्थाद्धविधिर्नाम  
 पञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥४५॥

किसी एक व्यक्ति को भोजन कराये। वह स्वयं भस्म धारण करे और इन्द्रियों को वश में करके महाचरु तीन दिन के लिए भगवान रुद्र को समर्पित करे॥८३॥ यहाँ पर केवल जीवत् श्राद्ध से सम्बन्धित विशेष चीजों का जिक्र किया गया है। अन्य सब क्रियाएं अन्य श्राद्धों की तरह होती हैं। यदि भक्त मर जाता है, तो उसका मरणोत्तर है॥८४॥ वह नित्य और नैमित्तिक क्रियाओं को करे या छोड़ दे। बान्धवों के मरने पर भी जीवत् श्राद्ध करने वाले व्यक्ति के लिए शौचाशौच नहीं होता है और सूतक भी नहीं मानना चाहिए। स्नान मात्र से उसकी शुद्धि हो जाती है॥८५॥ इसके बाद यदि उसको पुत्र प्राप्त होता है या उसकी पत्नी से पुत्र उत्पन्न होता है, तो वह पुत्र उसके लिए सब पवित्र संस्कार कर सकेगा। उसका पुत्र भी ब्रह्मविद् होता है। यदि कन्या पैदा होती है तो, हे सुव्रत! वह कन्या सन्देह नहीं है। उसके पिता और पितर गण और मातृपक्ष के लोग भी मुक्त हो जाते हैं। इसमें कोई जब मर जाता है, तो भूमि को खोदकर उसके शरीर को गाड़ दिया जाता है। या उसका दाह संस्कार कर दिया जाय, पुत्र द्वारा सम्पूर्ण कृत्य (और्द्धदैहिक क्रिया) किया जाय इसमें कोई दोष नहीं है। मृत्यु के उपरान्त पृथक् मुक्ति के लिए कोई क्रिया आवश्यक नहीं है। यह सब ब्रह्मा द्वारा महात्मा मुनियों को कहा गया है। फिर सनत्कुमार को ब्रह्मा ने कहा। उसे बाद में कृष्ण द्वैपायन (व्यासमुनि) को ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार ने कहा। उन्हीं वेदव्यास की कृपा से सब ऐसे व्यक्ति को बताया जाय जो कि मुनि पुत्र हो। अभक्त को यह ज्ञान नहीं देना चाहिये॥९०-९४॥

श्रीलिङ्गमहापुराण के उत्तरभाग में जीवत् श्राद्ध संस्कार की विधि  
 नामक पैतालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४५॥



# षट्चत्वारिंशोऽध्यायः लिङ्गमूर्तिप्रतिष्ठा

ऋषय ऊचुः

जीवच्छ्राद्धविधिः प्रोक्तस्त्वया सूत महामते। मूर्खाणामपि मोक्षार्थमस्माकं रोमहर्षण॥१॥  
रुद्रादित्यवसूनां च शक्रादीनां च सुब्रता। प्रतिष्ठा कीदृशी शंभोर्लिंगमूर्तेश्च शोभना॥२॥  
विष्णोः शक्रस्य देवस्य ब्रह्मणश्च महात्मनः। अग्नेर्यमस्य निर्ऋतेर्वरुणस्य महाद्युतेः॥३॥  
वायोः सोमस्य यक्षस्य कुबेरस्याभितात्मनः। ईशानस्य धरायाश्च श्रीप्रतिष्ठाथ वा कथम्॥४॥  
दुर्गाशिवाप्रतिष्ठा च हैमवत्याश्च शोभना। स्कंदस्य गणराजस्य नंदिनश्च विशेषतः॥५॥  
तथान्येषां च देवानां गणानामपि वा पुनः। प्रतिष्ठालक्षणं सर्वं विस्ताराद्वक्तुमर्हसि॥६॥  
भवान्सर्वार्थतत्त्वज्ञो रुद्रभक्तश्च सुब्रता। कृष्णद्वैपायनस्यासि साक्षात्त्वमपरा तनुः॥७॥  
सुमंतुर्जैमिनिश्चैच पैलश्च परमर्षयः। गुरुभक्तिं तथा कर्तुं समर्थो रोमहर्षणः॥८॥  
इति व्यासस्य विपुला गाथा भागीरथीतटे। एकः समो वा भिन्नो वा शिष्यस्तस्य महाद्युतेः॥९॥  
वैशंपायनतुल्योऽसि व्यासशिष्येषु भूतले। तस्मादस्माकमखिलं वक्तुमर्हसि सांप्रतम्॥१०॥

## छियालीसवाँ अध्याय लिंग का स्थापन

ऋषिगण बोले

हे महामति, हे रोमों के हर्षित करने वाले सूत जी! हम मूर्खों के मोक्षों के लिए भी आपने जीवत् श्राद्ध विधि को बताया॥१॥ हे सुब्रत! रुद्र, आदित्य, वसुओं, इन्द्र, और अन्य की स्थापना कैसे होती है? लिंग से रूप मूर्ति में शिव की उत्तम प्रतिष्ठा कैसे होती है? तथा विष्णु, इन्द्र, ब्रह्मा, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, यक्ष, कुबेर, ईशान, भूमि, श्री दुर्गा, हिमालय की पुत्री शिवा (पार्वती), स्कन्द, विशेषरूप में नन्दी, गणराज की तथा अन्य देवताओं और गणों की प्रतिष्ठा कैसे होती है? विस्तार से प्रतिष्ठा के लक्षण को वर्णन करें॥२-६॥ हे सुब्रत! आप सब तत्वों के ज्ञाता और रुद्रभक्त हैं। आप कृष्ण द्वैपायन के द्वितीय शरीर हैं॥७॥ “सुमंतु जैमिनि, पैल आदि परम ऋषिगण हैं आप अपने गुरु की भक्ति करने में समर्थ हैं।” इस प्रकार भागीरथी के तट पर व्यास के विषय में यह अनुपम कथा कही गयी है। आप उस महापुरुष के रूप हैं या उनके समान हैं, या उनके प्रधान शिष्य हैं। अथवा उनसे अभिन्न हैं॥८-९॥ इस पृथ्वी पर व्यास के शिष्यों में आप वैशम्पयन के तुल्य हैं। अतः इस समय आप हमको सब कुछ बतायें॥१०॥ इतना कहने के बाद ऋषि लोग वहाँ थोड़ी देर के लिए खड़े हो गये। उस समय उनके (सूत) सामने एक अति विस्मयजनक बात हुयी। अन्तरिक्ष में साक्षात् देवों ने इस प्रकार कहा, “मुनियों का यह प्रश्न यहाँ पर समाप्त हो। सारा जगत् लिंगमय है, और सभी लिंग में

एवमुक्त्वा स्थितेष्वेव तेषु सर्वेषु तत्र च। बभूव विस्मयोऽतीव मुनीनां तस्य चाग्रतः॥११॥  
 अथांतरिक्षे विपुला साक्षादेवी सरस्वती। अलं मुनीनां प्रश्नोऽयमिति वाचा बभूव ह॥१२॥  
 सर्वं लिङ्गमयं लोकं सर्वं लिंगे प्रतिष्ठितम्। तस्मात्सर्वं परित्यज्य स्थापयेत्पूजयेच्च तत्॥१३॥  
 लिंगस्थापनसन्मार्गनिहितस्वायतासिना । आशु ब्रह्मांडमुद्भिद्य निर्गच्छेदविशंकया॥१४॥  
 उपेन्द्रांभोजगर्भेद्रयमांबुधनदेश्वराः । तथान्ये च शिवं स्थाप्य लिंगमूर्तिं महेश्वरम्॥१५॥  
 स्वेषुस्वेषु च पक्षेषु प्रधानास्ते यथा द्विजाः। ब्रह्मा हरश्च भगवान्विष्णुर्देवी रमा धरा॥१६॥  
 लक्ष्मीधृतिः स्मृतिः प्रज्ञा धरा दुर्गा शची तथा। रुद्राश्च वसवः स्कंदो विशाखः शाख एव च॥१७॥  
 नैगमेशश्च भगवाँल्लोकपाला ग्रहास्तथा। सर्वे नंदिपुरोगाश्च गणा गणपतिः प्रभुः॥१८॥  
 पितरो मुनय; सर्वे कुबेराद्याश्च सुप्रभाः। आदित्यावसवः सांख्या अश्विनौ च भिषग्वरौ॥१९॥  
 विश्वेदेवाश्च साध्याश्च पशवः पक्षिणो मृगाः। ब्रह्मादिस्थावरांतं च सर्वं लिंगे प्रतिष्ठितम्॥२०॥  
 तस्मात्सर्वं परित्यज्य स्थापयेलिंगमव्ययम्। यत्नेन स्थापितं सर्वं पूजितं पूजयेद्यदि॥२१॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षट्चत्वारिंशोऽष्ट्याय॥४६॥

प्रतिष्ठित है। इसलिए सब छोड़कर लिंग की स्थापना करनी चाहिये और उसकी पूजा की जानी चाहिये”॥११-१३॥ कोई भी व्यक्ति ब्रह्मांड को तुरन्त भेद करके लिंग की स्थापना संस्कार को पूरा करे। यह कार्य ऐसा है जैसे कि सन्मार्ग में एक लम्बी तलवार कार्य करती है। उसके बाद भक्त ब्रह्माण्ड को भेद कर बेहिचक बाहर हो जाय॥१४॥ उपेन्द्र, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर और ईशान तथा अन्य इन सबको लिंग पर स्थापित करे। महेश्वर शिव जिनका भौतिक रूप लिंग है, उनको स्थापित करे। हे ब्रह्मणो! इस प्रकार शिव की प्रतिष्ठा (स्थापना) के द्वारा वे सब अपने-अपने पक्ष में (परिवारों में) प्रधान हो जाते हैं। ब्रह्मा, हर, रमा, धरा, लक्ष्मी, धृति, स्मृति, प्रज्ञा, धरा, दुर्गा, शची, रुद्र, वसु, स्कन्द, विशाख, साख, नैगमेश दिग्पाल, ग्रहमण्डल, गण, नन्दी, गणपति, पितृगण, ऋषिगण, कुबेर, आदित्य, वसु, सांख्य और वैद्यों में श्रेष्ठ अश्विनी कुमार, विश्वदेव, साध्य, पशु, पक्षी, और मृग, ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक यह सब लिंग में प्रतिष्ठित हैं। इसलिए सबकुछ छोड़कर अव्यय लिंग की स्थापना करे। यत्नपूर्वक स्थापना करके अगर कोई इसकी पूजा करता है, तो सब पूज्य की पूजा के समान यह मान्य है॥१५-२१॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में लिंग का स्थापन  
नामक छियालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४६॥

## सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः लिङ्गस्थापनम्

सूत उवाच

इति निशम्य कृतांजलयस्तदा दिवि महामुनयः कृतनिश्चयाः।  
शिवतरं शिवमीश्वरमव्ययं मनसि लिंगमयं प्रणिपत्य ते॥१॥

सकलदेवपतिर्भगवानजो हरिरशेषपतिर्गुरुणा स्वयम्।

मुनिवराश्च गणाश्च सुरासुरा नरवराः शिवलिंगमयाः पुनः॥२॥

श्रुत्वैवं मुनयः सर्वे षट्कुलीयाः समाहिताः। संत्यज्य सर्वे देवस्य प्रतिष्ठां कर्तुमुद्यताः॥३॥  
अपृच्छन्सूतमनघं हर्षगद्वद्या गिरा। लिंगप्रतिष्ठां विपुलां सर्वे ते शंसितब्रताः॥४॥

सूत उवाच

प्रतिष्ठां लिंगमूर्तेवो यथावदनुपूर्वशः। प्रवक्ष्यामि समासेन धर्मकामार्थमुक्तये॥५॥  
कृत्वैव लिंगं विधिना भुवि लिंगेषु यत्नतः। लिंगमेकतमं शैलं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्॥६॥  
हेमरत्नमयं वापि राजतं ताप्रजं तु वा। सवेदिकं ससूत्रं च सम्यग्विस्तृतमस्तकम्॥७॥

## सेतालीसर्वां अध्याय लिंग का स्थापन

सूत बोले

आकाश से इस वाणी को सुनकर महामुनियों ने उस वाणी के सम्मान में अपने हाथ जोड़ लिए। तत्क्षण निश्चय करके लिंग से अभिन्न अव्यय शिव को नतमस्तक हो मन में ही लिंग की स्थापना करके देवेन्द्र इन्द्र, अज, विष्णु, सर्वेश्वर देवगुरु (वृहस्पति) सहित सब मुनिवर, गण, सुर असुर, और श्रेष्ठ मनुष्य इन सब ने शिवलिंगमय अपने को अनुभव किया। इस आकाशवाणी को सुनकर छः महान् कुलीन सबकुछ छोड़कर शिवलिंग की स्थापना करने को उद्यत हुये। इन लोगों ने प्रसन्नता से गद्गद वाणी से निष्पाप सूत जी से लिंग की प्रतिष्ठा के विषय में पूछा॥१-४॥

सूत बोले

मैं धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति के लिए संक्षेप में यथावत् क्रमशः लिंगमूर्ति की प्रतिष्ठा को कहूँगा॥५॥  
इस प्रकार विधिपूर्वक लिंग बनवाये जो यह लिंग पत्थर का हो। यह ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक हो। यह रत्नजटित सोने का या चाँदी का या ताँबे का भी बनवाया जा सकता है। यह वेदी सहित हो। जल के निकलने का मार्ग भी हो। ऊपरी सिरा पर्याप्त रूप में विस्तृत हो। भक्त लिंग और वेदी को भलीभांति स्वच्छ करके तब उसकी स्थापना करे। लिंग की वेदी देवी उमा है और लिंग स्वयं साक्षात् महेश्वर। इन दोनों की पूजा देव और

विशेष्य स्थापयेद्दत्त्या सवेदिकमनुत्तमम्। लिंगवेदी उमा देवी लिंगं साक्षान्महेश्वरः॥६॥  
तयोः सपूजनादेव देवी देवश्च पूजितौ। प्रतिष्ठया च देवेशो देव्या सार्थं प्रतिष्ठतः॥७॥  
तस्मात्सवेदिकं लिंगं स्थापयेत्स्थापकोत्तमः॥१०॥

मूले ब्रह्मा वसति भगवान्मध्यभागे च विष्णुः सर्वेशानः पशुपतिरजो रुद्रमूर्तिरेण्यः।  
तस्माल्लिंगं गुरुतरतरं पूजयेत्स्थापयेद्वा यस्मात्पूज्यो गणपतिरसौ देवमुख्यैः समस्तैः॥११॥  
गंधैः स्त्रगृधूपदीपैः स्नपनहुतबलिस्तोत्रमंत्रोपहारै-  
नित्यंयेऽभ्यर्चयंति त्रिदशवरतनुं लिंगमूर्तिमहेशम्।  
गर्भाधानादिनाशक्षयभयरहिता देवगंधर्वमुख्यैः  
सिद्धैर्द्वयाश्च पूज्या गणवरनमितास्ते भवन्त्यप्रमेयाः॥१२॥

तस्माद्दत्त्योपचारेण स्थापयेत्परमेश्वरम्। पूजयेच्च विशेषेण लिंगं सर्वार्थसिद्धये॥१३॥  
समर्च्य स्थापयेल्लिंगं तीर्थमध्ये शिवासने। कूर्चवस्त्रादिभिर्लिंगमाच्छाद्य कलशैः पुनः॥१४॥  
लोकपालदिदैवत्यैः सकूर्चैः साक्षतैः शुभ्रैः। उत्कूर्चैः स्वस्तिकाद्यैश्च चित्रतंतुकवेष्टितैः॥१५॥  
वज्रादिकायुधोपेतैः सवस्त्रैः सपिधानकैः। लक्षयेत्परितो लिंगमीशानेन प्रतिष्ठितम्॥१६॥  
धूपदीपसमोपेतं वितानविततांबरम्। लोकपालध्वजैश्चैव गजादिमहिषादिभिः॥१७॥  
चित्रितैः पूजितैश्चैव दर्भमाला च शोभना। सर्वलक्षणसंपूर्णा तया बाह्ये च वेष्टयेत्॥१८॥  
ततोधिवासयेत्तोये धूपदीपसमन्विते। पंचाहं वा त्र्यहंवाथ एकरात्रमथापि वा॥१९॥

देवी की पूजा है। इन दोनों की देवेश और देवी की प्रतिष्ठा की जाय। इसलिए भक्त वेदी सहित लिंग की स्थापना करे। १६-१०।। लिंग के मूल में ब्रह्मा बसते हैं और मध्य भाग में विष्णु अज, रुद्र, पशुपति, सर्वेश्वर, शिर पर वास करते हैं। इस लिए गणों के स्वामी सब देवताओं द्वारा पूजने के योग्य हैं। अतः भक्त को गुरु से गुरुतर लिंगों की स्थापना और पूजा करनी चाहिये। ११।। वे जो सदा महेश की पूजा करते हैं जो कि देवताओं में सर्वोत्तम हैं, उनके लिंग रूपी भौतिक शरीर में वे जो पूजा की शुद्ध वस्तुओं गन्ध, माला, धूप, दीप, स्नान, हवन, स्तोत्र मन्त्र और उपहारों से नित्य देवताओं में श्रेष्ठ शिव के लिंग की पूजा करते हैं, वे लोग जन्म मृत्यु के भय से मुक्त हो जाते हैं। वे सिद्धों, देवताओं और गन्धवैरों द्वारा पूज्य और गणवरों द्वारा प्रणम्य होते हैं। १२।। अतः भक्त को चाहिये कि वह लिंग की भक्तिपूर्वक स्थापना करे और सब कामनाओं की पूर्ति के लिए विशेषरूप से लिंग की पूजा करे। १३।। उसकी पूजा करने के बाद वह लिंग को पवित्र भूमि के मध्य में शिवासन पर स्थापित करे। तब लिंग को कुश और वस्त्र से लपेट देना चाहिये। उसके बाद लोकपाल, दिक्पाल आदि देवताओं अक्षत सहित कुशों स्वस्तिक आदि विभिन्न रंग के धागों से वेष्टित, बज्र आदि आयुध से युक्त वस्त्रों से ढके हुये, लिंग को ईशान मन्त्र पढ़ते हुये एक मण्डल में स्थापित करे। धूप दीप से युक्त वस्त्र का एक वितान (चाँदनी) ऊपर तान दिया जाय। लोकपालों के चित्रों के ऊपर कपड़े फैला दिये जायें और उनके बाहनों हाथी, भैंसा आदि को भी वस्त्र से ढक दें। भक्त कुशों की मालाओं को उस स्थान पर चारों ओर बाँध दे। १४-१८।। उसके बाद भक्त धूप,

वेदाध्ययनसंपन्नो नृत्यगीतादिमंगलैः। किंकिणीरवकोपेतं तालवीणारवैरपि॥२०॥  
 ईक्षयेत्कालमव्यग्रो यजमानः समाहितः। उत्थाप्य स्वस्तिकं ध्यायेन्मंडपे लक्षणान्विते॥२१॥  
 संस्कृते वेदिसंयुक्ते नवकुंडेन संवृते। पूर्वोक्तविधिना युक्ते सर्वलक्षणसंयुते॥२२॥  
 अष्टमंडलसंयुक्ते दिग्ध्वजाष्टकसंयुते। पूर्वोक्तलक्षणोपेतैः कुंडैः प्रागादितः क्रमात्॥२३॥  
 प्रधानं कुंडमीशान्यां चतुरस्त्रं विधीयते। अथवा पंचकुंडैकं स्थंडिलं चैकमेव च॥२४॥  
 यज्ञोपकरणैः सर्वैः शिवार्चायां हि भूषणैः। वेदिमध्ये महाशश्यां पंचतूलीप्रकल्पिताम्॥२५॥  
 कल्पयेत्कांचनोपेतां सितवस्त्रावगुंठिताम्। प्रकल्प्यैवं शिवं चैव स्थापयेत्परमेश्वरम्॥२६॥  
 प्राकशिरस्कं न्यसेलिलंगमीशानेन यथाविधि। रत्नन्यासे कृते पूर्वं केवलं कलशं न्यसेत्॥२७॥  
 लिंगमाच्छाद्य वस्त्राभ्यां कूर्चेन च समंततः। रत्नन्यासे प्रसक्तेऽथ वामाद्या नव शक्तयः॥२८॥  
 नवरत्नं हिरण्याद्यैः पंचगव्येन संयुतैः। सर्वधान्यसमोपेतं शिलायामपि विन्यसेत्॥२९॥  
 स्थापयेद्ब्रह्मलिंगं हि शिवगायत्रिसंयुतम्। केवलं प्रणवेनापि स्थापयेच्छवमव्ययम्॥३०॥  
 ब्रह्मज्ञानमंत्रेण ब्रह्मभागं प्रभोस्तथा। विष्णुगायत्रिया भागं वैष्णवं त्वथ विन्यसेत्॥३१॥  
 सूत्रे तत्त्वत्रयोपेते प्रणवेन प्रविन्यसेत्। सर्वं नमः शिवायेति नमो हंसः शिवाय च॥३२॥

दीप से युक्त जल में पाँच दिन या तीन दिन या एक रात्रि बास देना चाहिये ॥१९॥ भक्त को इस काल में वेदों का अध्ययन करना चाहिये। भक्त को नित्य धार्मिक भजन वीणा आदि वाद्य मन्त्रों के साथ गाना चाहिये। उसमें किंकिणी की शब्द ध्वनि भी होती रहे। यजमान शान्त चित्त होकर यह काल बिताये। इसको करने के बाद वह स्वस्तिक पर ध्यान करे। तब लिंग को मण्डप में रखे। वहाँ पर नवकुण्ड खोदे हुये हों, उनमें उनके अपने-अपने चिह्नों से युक्त हों, आठ पवित्र सामग्री जिसको अष्टमंगल कहते हैं, वहाँ पर फैला दिया जाय। वहाँ दिगपालों के लिए आठ मण्डल हों जो अपनी-अपनी ध्वजा से युक्त हों। ये कुण्ड पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके क्रमशः स्थापित हों। प्रधान कुण्ड ईशान कोण में हो। वह आकार में चार हाथ हो या पाँच कुण्ड एक ओर हो और उसके पास खाली भूमि छोड़ दी जाय। सब यज्ञ के उपकरणों और भूषणों को शिव की पूजा में वेदी के मध्य में एक पास खाली भूमि छोड़ दी जाय। सब यज्ञ के उपकरणों वाला दीपक उसके पास रखा जाय। उसके बाद शश्या का विस्तर सफेद वस्त्र से ढका हो। ये सब व्यवस्था करने के बाद परमेश्वर शिव को वहाँ स्थापित करना चाहिये ॥२०-२६॥ भक्त लिंग शिरोभाग को पूर्व की ओर स्थापित करे। स्थापना कार्य ईशान मन्त्रों द्वारा किया जाय। रत्नन्यास (रत्नों को जड़ना) धार्मिक कृत्य करने के बाद कलश को ऊपर रखे ॥२७॥ तब लिंग को दो वस्त्रों द्वारा कुश सहित चारों ओर से लपेट दे। रत्नन्यास करने के बाद नव शक्तियाँ वामा आदि को रखे। स्वर्ण वस्त्रों द्वारा कुश सहित चारों ओर से लपेट दे। रत्नन्यास करने के बाद नव शक्तियाँ वामा आदि को रखे। २८-२९॥ भक्त, ब्रह्मलिंग को के साथ नव कीमती रत्नों, पंचगव्य और सब प्रकार के धान्य शिला पर रख दे ॥२८-२९॥ भक्त, ब्रह्मलिंग को शिव गायत्री मन्त्र को पढ़ते हुये स्थापित करे। केवल प्रणव उच्चारण करते हुये अव्यय शिव को स्थापित करे। शिव गायत्री मन्त्र को पढ़ते हुये स्थापित करे। केवल प्रणव उच्चारण करते हुये अव्यय शिव को स्थापित करे। ३०-३१॥ प्रणव ब्रह्मज्ञान मंत्र द्वारा प्रभु के मध्य भाग को, विष्णु गायत्री द्वारा वैष्णव भाग को स्थापित करे ॥३०-३१॥ प्रणव के साथ नमः स्वाहा मन्त्र द्वारा तीन तत्त्वों से निर्मित वेदी में सर्व को स्थापित करे। सर्वं नमः शिवाय नमो हंसः

रुद्राध्यायेन वा सर्वं परिमृज्य च विन्यसेत्। स्थापयेद्ब्रह्मभिश्वैव कलशान्वै समंततः॥३३॥  
 वेदिमध्ये न्यसेत्सर्वान्यूर्वोक्तविधिसंयुतान्। मध्यकुंभे शिवं देवीं दक्षिणे परमेश्वरीम्॥३४॥  
 स्कंदं तयोश्च मध्ये तु स्कंदकुंभे सुचित्रिते। ब्रह्माणं स्कंदकुंभे वा ईशकुम्भे हरिं तथा॥३५॥  
 अथवा शिवकुंभे च ब्रह्मांगानि च विन्यसेत्। शिवो महेश्वरश्वैव रुद्रो विष्णुः पितामहः॥३६॥  
 ब्रह्माण्येवं समासेनहृदयादीनि चांबिका। वेदिमध्ये न्यसेत्सर्वान्यूर्वोक्तविधिसंयुतान्॥३७॥  
 वर्धन्यां स्थापयेदेवीं गंधतोयेन पूर्य च। हिरण्यं रजतं रत्नं शिवकुंभे प्रविन्यसेत्॥३८॥  
 वर्धन्यामपि यत्नेन गायत्र्यंगैश्च सुब्रताः। विद्येश्वरान्दिशां कुंभे ब्रह्मकूर्चेन पूरिते॥३९॥  
 अनंतेशादिदेवांश्च प्रणवादिनमोत्तकम्। नववस्त्रं प्रतिघटमष्टकुंभेषु दापयेत्॥४०॥  
 विद्येश्वराणां कुंभेषु हेमरत्नादि विन्यसेत्। वक्त्रक्रमेण होतव्यं गायत्र्यंग्रकमेण च॥४१॥  
 जयादिस्विष्टपर्यंतं सर्वं पूर्ववदाचरेत्। सेचयेच्छिवकुंभेन वर्धन्या वैष्णवेन च॥४२॥  
 पैतामहेन कुंभेन ब्रह्मभागं विशेषतः। विद्येश्वराणां कुंभैश्च सेचयेत्परमेश्वरम्॥४३॥  
 विन्यसेत्सर्वमंत्राणि पूर्ववत्सुसमाहितः। पूजयेत्स्नपनं कृत्वा सहस्रादिषु संभवैः॥४४॥  
 दक्षिणा च प्रदातव्या सहस्रपणमुत्तमम्। इतरेषां तदर्थं स्यात्तदर्थं वा विधीयते॥४५॥  
 वस्त्राणि च प्रधानस्य क्षेत्रभूषणगोधनम्। उत्सवश्च प्रकर्तव्यो होमयागबलिः क्रमात्॥४६॥

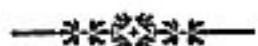
शिवाय या रुद्राध्याय पढ़ते हुये सब साफ करके स्थापित करे। भक्त कलशों को चारों ओर वैदिक मन्त्रों द्वारा स्थापित करे। ३२-३३।। पूर्वोक्त विधि के साथ वेदी के मध्य में उनको स्थापित करे। वह शिव को मध्य में और शिवा देवी को दक्षिण कुंभ पर रखे। स्कन्द को उन दोनों के बीच में रखे। अथवा शिवकुंभ पर ब्रह्मांग को रखे। सुचित्रित स्कन्द कुम्भ पर रखे। या ब्रह्मा को स्कन्द कुम्भ पर रखे और ईश कुम्भ पर विष्णु को रखे। यह ब्रह्मांग शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु और पितामह हैं। ये हृदय आदि और अम्बिका माँ को वेदी के मध्य में पूर्वोक्त स्थापित करे। ३४-३७।। सुगन्धित जल से वर्धनी पात्र को भर दिया जाय और उसमें देवी को स्थापित किया जाय। शिव कुम्भ में सोना, चाँदी और रत्नों को डाल दिया जाय। ३८।। हे सुब्रत! विद्येश्वरों को वर्धनी पात्र में गायत्री और अंग मन्त्रों द्वारा दिशाओं के कुश से पूरित कुम्भ में स्थापित करे। अनन्त ईश अन्य देवताओं को दिशाओं के गोमूत्र से पूरित कुम्भ पर प्रणव से प्रारम्भ करके नमः के अन्त करते हुये स्थापित करे। आठ घड़ों में से प्रत्येक को नवीन वस्त्र से ढक दे। ३९-४०।। सोना, इत्यादि विश्वेशराओं के कुम्भों में डाल दें। शिव के सम्मुख गायत्री तथा अंगन्यास मन्त्रों द्वारा हवन किया जाय। ४१।। ‘जय’ से अन्त और ‘स्विष्ट’ से समाप्त करते हुये पूर्ववत् करना चाहिये। शिव कुम्भ, वर्धनी के जल से चारों ओर जल का छिङ्काव करे और परमेश्वर का सेंचन करे। ४२-४३।। पूर्ववत् स्वस्थ चित्त होकर सब मन्त्रों को पढ़ते हुसे, पूर्ववत् स्नान कराकर पूजन करना चाहिये। एक हजार पणों की उत्तम दक्षिणा दी जानी चाहिये। उसकी आधी या उससे भी आधी अन्य लोगों को दक्षिणा देनी चाहिये यदि ऐसा सम्भव हो। ४४-४५।। वस्त्र, भूमि, भूषण, गायें आदि प्रधान पुजारी को—जो शिव का प्रतिनिधित्व करता है—उसको दिया जाय, एक बड़ा उत्सव किया जाय। होम, याग और बलि उचित

नवाहं वापि सप्ताहमेकाहं च त्र्यहं तथा। होमश्च पूर्ववत्प्रोक्तो नित्यमभ्यर्च्य शंकरम्॥४७॥  
देवानां भास्करादीनां होमं पूर्ववदेव तु। अभ्यन्तरे तथा बाह्ये वह्नौ नित्यं समर्चयेत्॥४८॥  
य एवं स्थापयेलिंगं स एव परमेश्वरः। तेन देवगणा रुद्रा ऋषयोऽप्सरसस्तथा॥४९॥

स्थापिताः पूजिताश्चैव त्रैलोक्यं सच्चराचरम्॥५०॥  
इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे लिङ्गस्थायनं नाम  
सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः॥४७॥

क्रम में नव, सात या तीन दिन या केवल एक दिन की जाय। शंकर की पूजा के बाद प्रतिदिन पूर्वोक्त विधि से हवन किया जाय। देवों, भास्करादि की ओर से होम पूर्ववत् किया जाय। आध्यन्तर और बाह्य अग्नि में उनकी दैनिक पूजा की जाय। जो व्यक्ति इस विधि से लिंग का स्थापन करता है वह परमेश्वर का सानिध्य प्राप्त करता है। जिसने इस प्रकार शिवलिंग की स्थापना की उसके द्वारा देवगण, रुद्र, ऋषि, अप्सरा स्थापित और पूजित हुये। वास्तव में मानो उसके द्वारा चर और अचर तीनों लोक की पूजा की गयी॥४६-५०॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में लिंग का स्थापन  
नामक सैंतालीसबाँ अध्याय समाप्त॥४७॥



## अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः गायत्रीभेदाः

सूत उवाच

सर्वेषामपि देवानां प्रतिष्ठामपि विस्तरात्। स्वैर्मत्रैर्यागकुण्डानि विन्यस्यैकैकमेव च॥१॥  
स्थापयेदुत्सवं कृत्वा पूजयेच्च विधानतः। भानोः पंचाग्निना कार्यद्वादशाग्निक्रमेण वा॥२॥  
सर्वकुण्डानि वृत्तानि पद्माकारणि सुव्रताः। अंबाया योनिकुण्डं स्याद्वर्धन्येका विधीयते॥३॥

शक्तीनां सर्वकार्येषु योनिकुण्डं विधीयते।

गायत्रीं कल्पयेच्छंभोः सर्वेषामपि यत्स्तः। सर्वे रुद्रांशजा यस्मात्संक्षेपेण वदामि वः॥४॥

गायत्रीभेदाः

तत्पुरुषाय विद्यहे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तत्रः  
गणांबिकायै विद्यहे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तत्रो  
तत्पुरुषाय विद्यहे महादेवाय धीमहि। तत्रो  
तत्पुरुषाय विद्यहे वक्रतुंडाय धीमहि। तत्रो  
महासेनाय विद्यहे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तत्रः

शिवः	प्रचोदयात्॥५॥
गौरी	प्रचोदयात्॥६॥
रुद्रः	प्रचोदयात्॥७॥
दंतिः	प्रचोदयात्॥८॥
स्कंदः	प्रचोदयात्॥९॥

## अङ्गतालीसवाँ अध्याय गायत्री के विभिन्न प्रकार

सूत बोले

अब मैं सब देवों की प्रतिष्ठा (स्थापना) को विस्तार में वर्णन करूँगा। देवताओं के यज्ञ कुण्डों को उनसे सम्बन्धित मन्त्रों से स्थापित किया जाय और विधान के अनुसार उत्सव के बाद देवताओं की स्थापना और पूजा की जानी चाहिये। सूर्य देव की पूजा पंच अग्नि या द्वादश अग्नि से पूर्ण की जाय। १-२॥ हे सुव्रतो! कुण्ड रूप में गोल होने चाहिये। अम्बा का कुण्ड त्रिकोण होना चाहिये। अम्बा के कुण्ड में केवल एक वर्धनी हो। शक्ति से सम्बन्धित सब कृत्यों में कुण्ड त्रिकोण (योनि कुण्ड) होना चाहिये। शिव की गायत्री यत्नपूर्वक सबकी बनाना चाहिये क्योंकि रुद्र के अंश से वह सब उत्पन्न हुई हैं। इसलिए इन सबको मैं संक्षेप में कहता हूँ। ३-४॥

गायत्री के भेद

हम तत्पुरुष को जानते हैं, हम वाग्शुद्धि का ध्यान करते हैं। शिव हमको मार्ग प्रदर्शित करें। ५॥ हम गणाम्बिका को जानते हैं। हम कर्मसिद्धि का ध्यान करते हैं। गौरी हमको मार्ग प्रदर्शित करें। ६॥ हम तत्पुरुष को जानते हैं। हम महेश्वर का ध्यान करते हैं। रुद्र हमारा मार्ग प्रदर्शित करें। हम तत्पुरुष को जानते हैं। ७॥ हम वक्रतुण्ड का ध्यान करते हैं। दन्ती हमारा मार्ग प्रदर्शित करें। ८॥ हम महासेन को जानते हैं। हम वाग्विशुद्धि का ध्यान करते हैं। स्कन्द हमारा मार्ग प्रदर्शित करें। ९॥ हम तीक्ष्णशृंग को जानते हैं, हम वेदपाद का ध्यान

तीक्ष्णशृंगाय विद्यहे वेदपादाय धीमहि। तन्मो	वृषः	प्रचोदयात्॥१०॥
हरिवक्त्राय विद्यहे रुद्रवक्त्राय धीमहि। तन्मो	नन्दी	प्रचोदयात्॥११॥
नारायणाय विद्यहे वासुदेवाय धीमहि। तन्मो	विष्णुः	प्रचोदयात्॥१२॥
महांबिकायै विद्यहे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्मो	लक्ष्मी	प्रचोदयात्॥१३॥
समुदधृतायै विद्यहे विष्णुनैकेन धीमहि। तन्मो	धरा	प्रचोदयात्॥१४॥
वैनतेयाय विद्यहे सुवर्णपक्षाय धीमहि। तन्मो	गरुडः	प्रचोदयात्॥१५॥
पद्मोद्भवाय विद्यहे वेदवक्त्राय धीमहि। तन्मः	स्त्रष्टा	प्रचोदयात्॥१६॥
शिवास्यजायै विद्यहे देवरूपायै धीमहि। तन्मो	वाचा	प्रचोदयात्॥१७॥
देवराजाय विद्यहे वज्रहस्ताय धीमहि। तन्मः	शक्रः	प्रचोदयात्॥१८॥
रुद्रनेत्राय विद्यहे शक्तिहस्ताय धीमहि। तन्मो	वह्निः	प्रचोदयात्॥१९॥
वैवस्वताय विद्यहे दंडहस्ताय धीमहि। तन्मो	यमः	प्रचादेयात्॥२०॥
निशाचराय विद्यहे खड्गहस्ताय धीमहि। तन्मो	निर्ऋतिः	प्रचोदयात्॥२१॥
शुद्धहस्ताय विद्यहे पाशहस्ताय धीमहि। तन्मो	वरुणः	प्रचोदयात्॥२२॥
सर्वप्राणाय विद्यहे यष्टिहस्ताय धीमहि। तन्मो	वायुः	प्रचोदयात्॥२३॥
यक्षेश्वराय विद्यहे गदाहस्ताय धीमहि। तन्मो	यक्षः	प्रचोदयात्॥२४॥
सर्वेश्वराय विद्यहे शूलहस्ताय धीमहि। तन्मो	रुद्रः	प्रचोदयात्॥२५॥

करते हैं। वृष मेरा मार्ग प्रदर्शित करे।॥१०॥ हम हरिवक्त्र को जानते हैं, हम रुद्रवक्त्र का ध्यान करते हैं। नन्दी करते हैं। वृष मेरा मार्ग प्रदर्शित करे।॥११॥ हम नारायण को जानते हैं, हम वासुदेव का ध्यान करते हैं। विष्णु हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।॥१२॥ हम महाम्बिका को जानते हैं, हम कर्मसिद्धि का ध्यान करते हैं। लक्ष्मी मेरा मार्ग प्रदर्शित करे।॥१३॥ हम समुदधृता को जानते हैं और समुदधृता को ध्यान करते हैं जो केवल विष्णु से पूजित हैं, अतः धरा हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।॥१४॥ हम वैनतेय को जानते हैं, हम सुवर्णपक्ष का ध्यान करते हैं, गरुण हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।॥१५॥ हम पद्मज को जानते हैं, हम वेद वक्त्र का ध्यान करते हैं, विश्व के स्त्रष्टा ब्रह्म हमारा मार्गदर्शन करे।॥१६॥ हम शिवास्यजा को जानते हैं, हम वेदरूपा का ध्यान करते हैं, वाचा हमारा मार्गदर्शन करे।॥१७॥ हम देवताओं के राजा इन्द्र को जानते हैं, हम वज्रहस्त का ध्यान करते हैं, अग्निदेव हमारा मार्गदर्शन करे।॥१८॥ हम रुद्रनेत्र को जानते हैं, हम शक्तिहस्त का ध्यान करते हैं, अतः शक्र हमारा मार्गदर्शन करें।॥१९॥ हम वैवस्वत को जानते हैं, हम दण्डहस्त यम का ध्यान करते हैं, यम हमारा मार्ग दर्शन करें।॥२०॥ हम निशाचर को जानते हैं, हम खड्गहस्त का ध्यान करते हैं। निर्ऋति हमारा मार्ग दर्शन करें।॥२१॥ हम सर्वप्राण शुद्धहस्त को जानते हैं, हम पाशहस्त का ध्यान करते हैं। वरुण हमारा मार्ग प्रदर्शित करें।॥२२॥ हम यक्षेश्वर को जानते हैं, हम यष्टिहस्त का ध्यान करते हैं। वायु हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।॥२३॥ हम सर्वेश्वर को जानते हैं, हम शूलहस्त का ध्यान करते हैं। यक्ष हमारा मार्गदर्शन करें।॥२४॥ हम सर्वेश्वर को जानते हैं, हम शूलहस्त

कात्यायन्ये विद्यहे कन्याकुमार्यै धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्॥२६॥  
 एवं प्रभिद्य गायत्रीं तत्तदेवानुरूपतः। पूजयेत् स्थापयेत्तेषामासनं प्रणवं स्मृतम्॥२७॥  
 अथवा विष्णुमतुलं सूक्तेन पुरुषेण वा। विष्णुं चैव महाविष्णुं सदाविष्णुमनुक्रमात्॥२८॥  
 स्थापयेदेवगायत्र्या परिकल्प्य विधानतः। वासुदेवः प्रधानस्तु ततः संकर्षणः स्वयम्॥२९॥  
 प्रद्युम्नो ह्यनिरुद्धश्च मूर्तिभेदास्तु वै प्रभोः। बहूनि विविधानीह तस्य शापोद्धवानि च॥३०॥  
 सर्वावतेषु रूपाणि जगतां च हिताय वै। मत्स्यः कूर्मेऽथ वाराहो नारसिंहोऽथ वामनः॥३१॥  
 रामो रामश्च कृष्णश्च बौद्धः कल्की तथैव च। तथान्यानि न देवस्य हरेः शापोद्धवानि च॥३२॥  
 तेषामपि च गायत्रीं कृत्वा स्थाप्य च पूजयेत्। गुह्यानि देवदेवस्य हरेन्नरायणस्य च॥३३॥  
 विज्ञानानि च यंत्राणि मंत्रोपनिषदानि च। पंच ब्रह्मांगजानीह पंचभूतमयानि च॥३४॥  
 नमो नारायणायेति मंत्रः परमशोभनः। हरेरष्टाक्षराणीह प्रणवेन समाप्तः॥३५॥  
 औंनमो वासुदेवाय नमः संकर्षणाय च। प्रद्युम्नाय प्रधानाय अनिरुद्धाय वै नमः॥३६॥  
 एवमेकेन मंत्रेण स्थापयेत्परमेश्वरम्। बिंबानि यानि देवस्य शिवस्य परमेष्ठिनः॥३७॥  
 प्रतिष्ठा चैव पूजा च लिंगवन्मुनिसत्तमाः। रत्नविन्याससहितं कौतुकानि हरेरपि॥३८॥  
 अचले कारयेत्सर्वं चलेष्येवं विधानतः। तन्नेत्रोन्मीलनं कुर्यान्नेत्रमंत्रेण सुब्रताः॥३९॥  
 क्षेत्रप्रदक्षिणं चैव आरामस्य पुरस्य च। जलाधिवासनं चैव पूर्ववत्परिकीर्तितम्॥४०॥

का ध्यान करते हैं। रुद्र हमारा मार्गदर्शन करें॥२५॥ हम कात्यायनी को जानते हैं, हम कन्याकुमारी का ध्यान करते हैं, दुर्गा हमारा मार्गदर्शन करें॥२६॥ इस प्रकार गायत्री देवताओं के अनुसार अलग-अलग हैं। उनकी प्रतिष्ठा की जाय और पूजा की जाय। उनका आसन प्रणव हो॥२७॥ अथवा भक्त पुरुष सूक्त द्वारा अतुलनीय विष्णु की स्थापना करे। भक्त विष्णु, महाविष्णु और सदा विष्णु को क्रमशः देव गायत्री मन्त्र के उच्चारण द्वारा उनकी स्थापना करे, वासुदेव प्रधान देवता हैं। संकर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध प्रभु के पृथक्-पृथक् रूप (मूर्ति) हैं। भृगु के श्राप के कारण उनके रूप विविध हैं॥२८-३०॥ लोगों के कल्याण के लिए यह सब रूप हैं। वे युगों के प्रत्येक चक्र में होते हैं। जैसे—मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, राम, परशुराम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। भृगु के श्राप के कारण विष्णु के अन्य रूप भी हैं॥३१-३२॥ इनके गायत्री रूपों की स्थापना करके पूजा करनी चाहिये। पूर्णज्ञान, यन्त्र, मन्त्र और उपनिषद् विष्णु के गुह्य हैं। विष्णु, नारायण पंचाग्नि से उत्पन्न उनकी पहचान पंचभूतों से होती है। विष्णु का मन्त्र नमोनारायण प्रणव लगाकर “ॐ नमो नारायणाय” परम पवित्र है। यह अष्टाक्षर मन्त्र है॥३३-३५॥ और मन्त्र ये हैं। जैसे ॐ नमो वासुदेवाय, ॐ नमः संकर्षणाय, ॐ प्रद्युम्नाय, ॐ नमः प्रधानाय, ॐ नमः अनुरुद्धाय॥३६॥ इसी तरह एक मन्त्र से भक्त परमेश्वर की स्थापना करे। परमेष्ठी शिव देवता की मूर्तियों की प्रतिष्ठा करे और लिंग के समान उनकी पूजा करे। हे श्रेष्ठ मुनियों! पवित्र शुभ रत्न जटित सूत्रों से विष्णु की भी पूजा करे॥३७-३८॥ प्रत्येक अचल लिंग में सब पूजा की जाय और चल लिंग में भी विधानपूर्वक पूजा की जाय। हे सुब्रतो! नेत्र मन्त्र द्वारा नेत्रों को खुला रखा जाय॥३९॥ पहले की तरह क्षेत्र की प्रदक्षिणा पार्क और नगर प्रदक्षिणा तथा जल में स्थापन कार्य भी पूर्ववत् किया जाय॥४०॥

कुण्डमंडपनिर्माणं शयनं च विधीयते। हुत्वा नवाग्निभागेन नवकुण्डे यथाविधि॥४१॥  
अथवा पंचकुण्डेषु प्रधाने केवलेऽथ वा। प्रतिष्ठा कथिता दिव्या पारंपर्यक्रमागता॥४२॥

शिलोद्धवानां बिंबानां चित्राभासस्य वा पुनः।

जलाधिवासनं प्रोक्तं वृषेऽद्रस्य प्रकीर्तितम्॥४३॥

प्रासादस्य प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठा परिकीर्तिता। प्रासादांगस्य सर्वस्य यथांगानां तनोरिव॥४४॥

वृषाग्निमातृविघ्नेशकुमारानपि यत्नतः। श्रेष्ठां दुर्गां तथा चंडीं गायत्र्या वै यथाविधि॥४५॥

प्रागाद्यां स्थापयेच्छंभोरष्टावरणमुत्तमम्। लोकपालगणेशाद्यानपि शंभोः प्रविन्यसेत्॥४६॥

उमा चंडी च नन्दी च महाकालो महामुनिः। विघ्नेश्वरो महाभृंगी स्कंदः सौम्यादितः क्रमात्॥४७॥

इंद्रादीन्स्वेषु स्थानेषु ब्रह्माणां च जनार्दनम्। स्थापयेच्छैव यत्नेन क्षेत्रेशं वैशगोचरे॥४८॥

सिंहासने ह्यनन्तादीन् विद्येशामपि च क्रमात्। स्थापयेत्प्रणवेनैव गुह्यांगादीनि पंकजे॥४९॥

एवं संक्षेपतः प्रोक्तं चलस्थापनसुत्तमम्। सर्वेषामपि देवानां देवीनां च विशेषतः॥५०॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागोऽष्टचत्वारिंशोऽध्यायः॥४८॥

कुण्ड और मण्डप का निर्माण और देवता की मूर्ति का शयन भी किया जाय। ये धर्मिक कृत्य निर्धारित हैं। केवल मुख कुण्ड में या पाँच कुण्ड या नौ पवित्र अग्नि के साथ नौ कुण्डों में होम किया जाय। परम्परा के अनुसार यह दिव्य प्रतिष्ठा कही गयी है॥४१-४२॥ जलाधिवासन कृत्य पत्थर की चट्टान से काटकर बनायी गयी मूर्तियों और चित्र की तरह तक्षण की गयी सब मूर्तियों का करे। नन्दी बैल के लिए भी जलाधिवासन करने की संस्तुति की गयी है॥४३॥

प्रासाद (शिवालय) की प्रतिष्ठा में और उनके भागों की प्रतिष्ठा में भी उसी तरह प्रतिष्ठा (स्थापन) की जाय जैसे शरीर के अंगों की। गायत्री मन्त्र के जप के द्वारा यथाविधि वृष, अग्नि, मातृगण, विघ्नेश, कुमार, दुर्गा देवी और चण्डी की प्रतिष्ठा की जाय। पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके आठों दिग्पालों, आठों लोकपालों की प्रतिष्ठा (स्थापना) की जाय। आठों दिशाओं, आठों विदिशाओं गणेश आदि की भी स्थापना शिव के सम्मान में मूर्तियाँ रखी जाय॥४४-४६॥ उत्तर दिशा में क्रम से उमा, चण्डी, नन्दी, महाकाल, महामुनि, विघ्नेश्वर, महाभृंगी, स्कन्द और सौम्य आदि की पूजा की जाय। भक्त इन्द्र और अन्य की मूर्तियों को भी अपने-अपने उचित स्थान में रखे। ब्रह्मा, विष्णु और अपने वेष से देखने में चमकते हुए क्षेत्रेश को, उत्तर पूर्व में स्थापित करे। अनन्त और अन्य और विघ्नेशों को प्रणव के उच्चारण के साथ सिंहासन पर उचित क्रम से स्थापित करे और गुप्त अंगों को कमल में स्थापित करे। इस प्रकार देवताओं और देवियों की चल स्थापना का उत्तम प्रकार आप लोगों को संक्षेप में मैंने बताया॥४७-५०॥

श्रीलिङ्गमहापुराण के उत्तरभाग में गायत्री के विभिन्न प्रकार

नामक अङ्गतालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४८॥

## एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः अघोरेशप्रतिष्ठा

ऋषय ऊचुः

अघोरेशस्य माहात्म्यं भवता कथितं पुरा। पूजां प्रतिष्ठां देवस्य भगवन्वक्तुमर्हसि॥१॥  
सूत उवाच

अघोरेणांगयुक्तेन विधिवच्च विशेषतः। प्रतिष्ठालिंगविधिना नान्यथा मुनिपुंगवाः॥२॥  
तथाग्निपूजां वै कुर्याद्यथा पूजा तथैव च। सहस्रं वा तदर्थं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥३॥  
तिलैर्होमः प्रकर्तव्यो दधिमध्वाज्यसंयुतैः। घृतसक्तुमधूनां च सर्वदुःखप्रमार्जनम्॥४॥  
व्याधीनां नाशनं चैव तिलहोमस्तु भूतिदः। सहस्रेण महाभूतिः शतेन व्याधिनाशनम्॥५॥  
सर्वदुःखविनिर्मुक्तो जपेन च न संशयः। अष्टोत्तरशतेनैव त्रिकाले च यथाविधि॥६॥  
अष्टोत्तरसहस्रेण षण्मासाज्जायते धूवम्। सिद्धयो नैव संदेहो राज्यमंडलिनामपि॥७॥  
सहस्रेण ज्वरो याति क्षीरेण च जुहोति यम्। त्रिकालं मासमेकं तु सहस्रं जुहुयात्पयः॥८॥

उच्चासवाँ अध्यायः

## अघोरेश की प्रतिष्ठा (स्थापना)

ऋषिगण बोले

अघोरेश का माहात्म्य आपने पहले वर्णन किया था। हे भगवन्! उनकी पूजा और प्रतिष्ठा की विधि अब हम लोगों को बताने की कृपा करें।॥१॥

सूत बोले

हे श्रेष्ठ मुनियों! अघोरेश की प्रतिष्ठा लिंग के समान विधिवत् करनी चाहिए। इसके लिए कोई अन्य विधि नहीं है॥२॥ भक्त को पवित्र अग्नि की पूजा करनी चाहिए। उनकी पूजा पहले की भाँति की जाय। एक हजार या उसका आधा या एक सौ आठ बार होम किया जाय। होम तिल के बीज, दही, मधु और धी मिलाकर करने से सब दुःखों का मार्जन हो जाता है॥३-४॥ यह व्याधियों का नाशक है। तिल के बीजों से हवन समृद्धि देता है। एक हजार बार का हवन बहुत ऐश्वर्य देता है और सौ बार के होम से रोगों का नाश होता है॥५॥ विधान के अनुसार एक सौ आठ बार दिन में तीन बार जप करने से व्यक्ति सब दुःखों से छुटकारा पा जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। यदि एक सौ आठ बार जप किया जाय तो छः मास के भीतर व्यक्ति को सिद्धि मिल जाती है। यहाँ तक कि राजाओं, प्रदेशों के शासकों को भी जप करने से सिद्धियाँ मिल जाती हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं॥६-७॥। एक हजार बार जप करने से ज्वर दूर हो जाता है। अगर भक्त प्रतिदिन तीन काल जप करके हजार बार दूध से लगातार हवन करता है तो एक महीने के भीतर उसको महा सौभाग्य प्राप्त होता है। अगर भक्त एक

मासेन सिद्ध्यते तस्य महासौभाग्यमुत्तमम्। सिद्ध्यते चाब्दहोमेन क्षौद्राज्यदधिसंयुतम्॥१॥  
 यवक्षीराज्यहोमेन जातितंडुलकेन वा। प्रीयेत भगवानीशो ह्यघोरः परमेश्वरः॥१०॥  
 दध्ना पुष्टिर्नृपाणां च क्षीरहोमेन शांतिकम्। षण्मासं तु घृतं हुत्वा सर्वव्याधिविनाशनम्॥११॥  
 राजयक्षमा तिलैर्होमान्नश्यते वत्सरेण तु। यवहोमेन चायुष्यं घृतेन च जयस्तदा॥१२॥  
 सर्वकुष्ठक्षयार्थं च मधुनाक्तैश्च तंडुलैः। जुहुयादयुतं नित्यं षण्मासान्नियतः सदा॥१३॥  
 आज्यं क्षीरं मधुश्शैव मधुरत्रयमुच्यते। समस्तं तुष्यते तस्य नाशयेद्वै भगवन्दरम्॥१४॥  
 केवलं घृतहोमेन सर्वरोगक्षयः स्मृतः। सर्वव्याधिहरं ध्यानं स्थापनं विधिनार्चनम्॥१५॥  
 एवं संक्षेपतः प्रोक्तमघोरस्य महात्मनः। प्रतिष्ठा यजनं सर्वं नंदिना कथितं पुरा॥१६॥  
 ब्रह्मपुत्राय शिष्याय तेन व्यासाय सुब्रताः॥१७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकोनपंचाशतमोऽध्यायः॥४१॥**

साल तक मधु, धी और दही एक मे मिलाकर होम करता है तो वह सिद्धियों को प्राप्त करता है। अगर दूध, धी या उत्तम चावल के द्वारा होम किया जाय तो अघोर देवता बहुत प्रसन्न होते हैं॥८-१०॥ दही से होम करने से राजा समृद्धि को प्राप्त करता है। दूध से हवन करने से व्यक्ति को शान्ति मिलती है। छः मास तक धी से होम करने से सब व्यधियाँ दूर हो जाती हैं॥११॥ एक साल तिल से होम करने से राजयक्षमा (टी.वी.) नष्ट हो जाती है। जौ के होम करने वाला दीर्घ आयु प्राप्त करता है और धी से होम करने से जय प्राप्त होती है॥१२॥ सब प्रकार के कोढ़ को दूर करने के लिए मधु से सने हुए चावलों से नित्य छः महीने एक लाख बार होम करने से कोढ़ दूर हो जाता है॥१३॥ केवल धी, दूध और मधु को मधुत्रय कहा जाता है। इन तीनों को सेवन करने से भगवन्दर नाश हो जाता है॥१४॥ केवल धी द्वारा होम करने से सब रोगों का क्षय हो जाता है। ध्यान, स्थापन और विधिपूर्वक पूजन सब व्याधियों को दूर करता है। महान् आत्मा अघोर की प्रतिष्ठा, पूजन ये सब संक्षेप में पहले नन्दी ने कहा था। हे सुब्रत! नन्दी ने सनत्कुमार से कहा था जो कि उनके शिष्य थे। उन्होंने व्यास को यह बताया था॥१५-१७॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में अघोरेश की प्रतिष्ठा (स्थापना)  
 नामक उनचासवाँ अध्याय समाप्त॥४१॥**

—\*—\*—\*

## पंचाशत्तमोऽध्यायः अघोरमन्त्रस्य वैशिष्ट्यम्

ऋषय ऊचुः

निग्रहः कथितस्तेन शिववक्त्रेण शूलिना। कृतापराधिनां तं तु वक्तुमर्हसि सुब्रता॥१॥  
त्वया न विदितं नास्ति लौकिकं वैदिकं तथा। श्रौतं स्मार्तं महाभाग रोमहर्षण सुब्रता॥२॥

सूत उवाच

पुरा भृगुसुतेनोक्तो हिरण्याक्षाय सुब्रताः। निग्रहोऽघोरशिष्येण शुक्रेणाक्षयतेजसा॥३॥  
तस्य प्रसादादैत्येन्द्रो हिरण्याक्षः प्रतापवान्। त्रैलोक्यमखिलं जित्वा सदेवासुरमानुषम्॥४॥  
उत्पाद्य पुत्रं गणपं चांधकं चारुविक्रमम्। राज लोके देवेन वराहेण निषूदितः॥५॥  
स्त्रीबाधां बालबाधां च गवामपि विशेषतः। कुर्वतो नास्ति विजयो मार्गेणानेन भूतले॥६॥  
तेन दैत्येन सा देवी धरा नीता रसातलम्। तेनाघोरेण देवेन निष्फलो निग्रहः कृतः॥७॥  
संवत्सरसहस्रांते वराहेण च सूदितः। तस्मादघोरसिद्ध्यर्थं ब्राह्मणान्नैव बाधयेत्॥८॥  
स्त्रीणामपि विशेषेण गवामपि न कारयेत्। गुह्याद्गुह्यतमं गोप्यमतिगुह्यं वदामि वः॥९॥

पचासवाँ अध्याय

## अघोर मन्त्र की विशेषता

ऋषिगण बोले

शुभ मुख वाले भगवान शंकर द्वारा वर्णन किये गये अपराधियों पर नियन्त्रण और रोक कैसे हो। यह आप हम लोगों को बताएँ। हे रोमहर्षण! हे सुब्रत! लौकिक और वैदिक ऐसा कुछ नहीं है जो आप को ज्ञात न हो। आप पूर्ण रूप से श्रुति और स्मृति में कथित धार्मिक कृत्यों को जानते हैं। १-२॥

सूत बोले

हे सुब्रत! अघोर के शिष्य और भृगु के पुत्र तेजस्वी शुक्र के द्वारा हिरण्याक्ष को निग्रह और रोक की विधि पहले बतायी गयी थी। उनकी कृपा से हिरण्याक्ष दैत्यों का प्रतापी नेता हो गया। उसने देवता असुर और मनुष्यों सहित तीनों लोकों को जीत लिया। उसके एक सुन्दर और पराक्रमी गणों का स्वामी अन्धक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने जगत पर शासन किया। अन्त में वह वराह के द्वारा मारा गया। ३-५॥ जो स्त्रियों की, बालकों की विशेष रूप से गायों की हत्या करता है या बाधा पहुँचाता है, ऐसा करने वाले को पृथ्वी पर इस मार्ग से इस संसार में विजय नहीं मिलती है। ६॥ उस दैत्य ने इस देवी पृथ्वी को रसातल पहुँचा दिया किन्तु अघोर देवता ने उसके इस निग्रह (नियन्त्रण) को निष्फल कर दिया। एक हजार वर्ष बाद वराह द्वारा उसका वध कर दिया गया। अतः अघोर मन्त्र की सिद्धि के लिए किसी व्यक्ति को ब्राह्मणों, स्त्रियों या गायों को बाधा नहीं पहुँचानी चाहिए। यह महान रहस्य की बात नहीं बल्कि रहस्यों की बात मैं तुमसे कह रहा हूँ। ७-९॥ यह अघोर मन्त्र

आततायिनमुद्दिश्य कर्तव्यं नृपसत्तमैः। ब्राह्मणेभ्यो न कर्तव्यं स्वराष्ट्रेशस्य वा पुनः॥१०॥  
 अतीव दुर्जये प्राप्ते बले सर्वे निषूदिते। अधर्मयुद्धे संप्राप्ते कुर्याद्विधिमनुत्तमम्॥११॥  
 अघृणेनैव कर्तव्यो ह्यघृणेनैव कारयेत्। कृतमात्रे न संदेहो निग्रहः संप्रजायते॥१२॥  
 लक्ष्मात्रं पुमाञ्चप्त्वा अघोरं घोररूपिणम्। दशांशं विधिना हुत्वा तिलेन द्विजसत्तमाः॥१३॥  
 संपूज्य लक्ष्मपुष्पेण सितेन विधिपूर्वकम्। बाणलिंगेऽथवा वह्नौ दक्षिणामूर्तिमाश्रितः॥१४॥  
 सिद्धमंत्रोऽन्यथा नास्ति द्रष्टा सिद्ध्यादयः पुनः। सिद्धमंत्रः स्वयं कुर्यात्प्रेतस्थाने विशेषतः॥१५॥  
 मातृस्थानेऽपि वा विद्वान्वेदवेदांगपारगः। केवलं मंत्रसिद्धो वा ब्राह्मणः शिवभावितः॥१६॥  
 कुर्याद्विधिमिमं धीमानात्मनोऽर्थं नृपस्य वा। शूलाष्टकं न्यसेद्विद्वान् पूर्वादीशानकांतकम्॥१७॥  
 त्रिशिखं च त्रिशिखं च त्रिशूलं च चतुर्विंशच्छिखाग्रतः।

अघोरविग्रहं कृत्वा संकलीकृतविग्रहः॥१८॥

सर्वनाशकरं ध्यात्वा सर्वकर्मणि कारयेत्। कालग्निकोटिसंकाशं स्वदेहमपि भावयेत्॥१९॥  
 शूलं कपालं पाशं च दंडं चैव शरासनम्। बाणं डमरुकं खड्गमष्टायुधमनुक्रमात्॥२०॥  
 अष्टहस्तश्च वरदो नीलकंठो दिगंबरः। पंचतत्त्वसमाख्यो ह्यर्धचंद्रधरः प्रभुः॥२१॥

की सिद्धि का धार्मिक कृत्य शक्तिशाली राजाओं द्वारा दुर्जय की स्थिति आने और भारी सामूहिक हत्याओं (कल्लेआम) के विरुद्ध की जानी चाहिये। इस मन्त्र का अभ्यास ब्राह्मणों के या अपने राष्ट्र के स्वामी के विरुद्ध न करना चाहिये। यह सर्वोत्तम अनुष्ठान तब करना चाहिये जब अधर्म युद्ध की स्थिति आ जाय। यह धार्मिक कृत्य तब पूरा किया जबकि निर्दयी व्यक्ति द्वारा दया के पात्र पर अत्याचार किया जाय। न दयालु भक्त यह करे न दयालु व्यक्ति से कराए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिस क्षण यह अनुष्ठान किया जाता है, निग्रह की शक्ति उसी समय प्राप्त हो जाती है। १०-१२।। हे उच्च ब्राह्मणों! इस मन्त्र के साधक को घोर रूप वाले अघोर मन्त्र का सौ हजार बार जप करना चाहिये। इसके दसवें भाग अर्थात् दस हजार बार तिल का होम करना चाहिए। साधक को सौ हजार सफेद फूलों द्वारा बाणलिंग पर या पवित्र अग्नि पर पूजा करनी चाहिये। इससे मन्त्र सिद्ध हो जाता है। नहीं तो वह न द्रष्टा होता है और न उसको सिद्धियाँ ही प्राप्त होती हैं। स्वयं विशेष रूप से प्रेत स्थान में मन्त्र को सिद्ध करना चाहिये। केवल विद्वान् और बुद्धिमान ब्राह्मण को यह अनुष्ठान कृत्य करना चाहिये जिसको कि मन्त्र सिद्ध हो या जो शिव का भक्त हो। बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिये कि यह अपने लिए करे या राजा के लिए करे। बुद्धिमान व्यक्ति पूर्व से आरम्भ करके उत्तर-पूर्व कोण पर समाप्त होने वाले आठों दिशाओं में आठ शूल स्थापित करे। १३-१७।। त्रिशूलों के चौबीस किनारों के सिरों पर तीन शिखा वाले त्रिशूल बनावे। ये अघोर के त्रिशूलधारी रूप हैं। उन सब रूपों को (विग्रहों को) संकलित कर दे या एक स्थान पर इकट्ठा करे। सब नाश करने वाले देवता अघोर का ध्यान करने के बाद इस अनुष्ठान को करे। अपने शरीर को भी करोड़ कालाग्नि के समान अनुभव करना चाहिये। १८-१९।। आठ आयुध शूल, कपाल, पाश, दण्ड, धनुष, बाण, डमरु, खड्ग (तलवार) क्रम से रखे। २०।। नीलकंठ के आठ भुजाएँ होती हैं, वह वरदाता है, वह दिगम्बर

दंष्ट्राकरालवदनो रौद्रदृष्टिर्भयंकरः। हुंफट्कारमहाशब्दशब्दिताखिलदिड्मुखः॥२२॥  
 त्रिनेत्रं नागपाशेन सुबद्धमुकुटं स्वयम्। सर्वाभरणसंपन्नं प्रेतभस्मावगुंठितम्॥२३॥  
 भूतैः प्रेतैः पिशाचैश्च डाकिनीभिश्च राक्षसैः। संवृतं गजकृत्या च सर्पभूषणभूषितम्॥२४॥  
 वृक्षिकाभरणं देवं नीलनीरदनिस्वनम्। नीलांजनाद्रिसंकाशं सिंहचर्मोत्तरीयकम्॥२५॥  
 ध्यायेदेवमधोरेशं घोरघोरतरं शिवम्। षट्किंशदुक्तमात्राभिः प्राणायामेन सुव्रताः॥२६॥  
 महामुद्रासमायुक्तः सर्वकर्माणि कारयेत्। सिद्धमंत्रश्रिताग्नौ वा प्रेतस्थाने यथाविधि॥२७॥  
 स्थापयेन्मध्यदेशे तु ऐंद्रे याप्ये च वारुणे। कौबेर्याविधिवत्कृत्वा होमकुंडानि शास्त्रतः॥२८॥  
 आचार्यो मध्यकुंडे तु साधकाश्च दिशासु वै। परिस्तीर्य विलोमेन पूर्ववच्छूलसंभृतः॥२९॥  
 कालाग्निपीठमध्यस्थः स्वयं शिष्यैश्च तादृशैः। ध्यात्वा घोरमधोरेशं द्वात्रिंशाक्षरसंयुतम्॥३०॥  
 विभीतकेन वै कृत्वा द्वादशांगुलमानतः। पीठे न्यस्य नृपेंद्रस्य शत्रुमंगारकेण तु॥३१॥  
 कुंडस्याधः खनेच्छत्रुं ब्राह्मणः क्रोधमूर्च्छितः। अधोमुखोर्धर्वपादं तु सर्वकुंडेषु यत्नतः॥३२॥  
 श्मशानांगरमानीय तुषेण सह दाहयेत्। तत्राग्निं स्थापयेत्तृष्णीं ब्रह्मचर्यपरायणः॥३३॥  
 मायूरास्त्रेण नाभ्यां तु ज्वलनं दीपयेत्ततः। कंचुकं तुषसंयुक्तैः कार्पासास्थिसमन्वितैः॥३४॥

(नग्न) है, वह पांच तत्त्वों पर सवार है और स्वयं अर्धचन्द्रधारी है। ॥२१॥ उनका मुख कुछ टेढे दाँतों के कारण कराल है, वह भयंकर है, उनकी दृष्टि रौद्र है। वह सम्पूर्ण दिशाओं को हुं फट् की ध्वनि से गुंजित करने वाले हैं। ॥२२॥ भक्त अधोरेश शिव पर इस विधि से ध्यान करे। उनके तीन नेत्र हैं, वह नाग पाश से अपने मुकुट को बांधे हैं, सब आभूषणों से भूषित हैं, वह चिता की भस्म को सारे शरीर में चुपड़े हैं। वह भूतों, प्रेतों, पिशाचों, डाकिनियों और राक्षसों द्वारा धिरे हुए हैं। वह गज चर्म को लपेटे हुए हैं। वह सर्प के भूषण से भूषित हैं। वह बीछियों को आभूषण की तरह धारण किये हैं। नीले बादल की तरह उनकी आवाज है। वह नीले आँजन की पहाड़ की तरह लग रहे हैं। वह सिंह के चमड़े को चादर की तरह लपेटे हुये हैं। वह बहुत भयानक हैं। हे सुव्रत! भक्त अधोर के इस रूप का ध्यान करके पूर्व वर्णित छत्तीस मन्त्रों से प्राणायाम करे। वह महामुद्रा को दिखावे और तब सब पवित्र अनुष्ठान करे। ॥२३-२६॥

सिद्ध मंत्र साधक मूर्ति को चिता की अग्नि या प्रेत स्थान में स्थापित करे। वह पांच होमकुंड बनावे। एक मध्य में और एक प्रत्येक पूर्व, दक्षिण, पश्चिम में और उत्तर में शास्त्र की विधि से बनावे। आचार्य मध्य कुंड के सामने बैठे। साधक लोग दिशाओं के कुंडों के सामने बैठें। वह कुशों को विलोम क्रम में फैलाकर शूल को पकड़ लें। वह स्वयं कालक्रम के बीच के आसन पर बैठे। उनके शिष्य साधक अपने आसन पर बैठें। बत्तीस अक्षरों वाले अधीर मंत्र से घोर रूप अधोर का ध्यान करे। विभीतक (बहेरा) की शाखा की बारह अंगुल नाप के टुकड़े कर लें। अपने राजा के शत्रु का पुतला तैयार करे। कुंड में कोयले के साथ पीठ पर रख दे। उसका चेहरा (मुख) नीचे की ओर और पैर ऊपर की ओर हो। तब वह क्रोध से भरी मुद्रा में कुंड को खोदे और राजा के शत्रु के पुतले को रखे। श्मशान से अग्नि ले आकर धान की भूसी से जला दे। साधक ब्रह्मचर्य से युक्त होकर मौन होकर वहाँ अग्नि को स्थापित करे। ॥२७-३३॥ तब वह कुंड

रक्तवस्त्रसमं मिश्रैहर्षेमद्रव्यैर्विशेषतः। हस्तयंत्रोद्भवैस्तैलैः सह होमं तु कारयेत्॥३५॥  
 अष्टोत्तरसहस्रं तु होमयेदनुपूर्वशः। कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां समारभ्य यथाक्रमम्॥३६॥  
 अष्टम्यंतं तथांगारमंडलस्थानवर्जितः। एवं कृते नृपेंद्रस्य शत्रवः कुलजैः सह॥३७॥  
 सर्वदुःखसमोपेताः प्रयांति यमसादनम्। मंत्रेणानेन चादाय नृकपाले नखं तथा॥३८॥  
 केशं नृणां तथांगारं तुषं कंचुकमेव च। चीरच्छटां राजधूलीं गृहसंमार्जनस्य वा॥३९॥  
 विषसर्पस्य दंतानि वृषदंतानि यानि तु। गवां चैव क्रमेणैव व्याघ्रदंतनखानि च॥४०॥  
 तथा कृष्णमृगाणां च बिडालस्य च पूर्ववत्। नकुलस्य च दंतानि वराहस्य विशेषतः॥४१॥  
 दंष्ट्राणि साधयित्वा तु मंत्रेणानेन सुब्रताः। जपेदष्टोत्तरशतं मंत्रं चाघोरमुत्तमम्॥४२॥  
 तत्कपालं नखं क्षेत्रे गृहे वा नगरेऽपि वा। प्रेतस्थानेऽपि वा राष्ट्रे मृतवस्त्रेण वेष्टयेत्॥४३॥  
 शत्रोरष्टमराशौ वा परिविष्टे दिवाकरे। सोमे वा परिविष्टे तु मंत्रेणानेन सुब्रताः॥४४॥  
 स्थाननाशो भवेत्तस्य शत्रोर्नाशश्च जायते। शत्रुं राज्ञः समालिख्य गमने समवस्थिते॥४५॥  
 भूतले दर्पणप्रख्ये वितानोपरि शोभिते। चतुस्तोरणसंयुक्ते दर्भमालासमावृते॥४६॥  
 वेदाध्ययनसंपन्ने राष्ट्रे वृद्धिप्रकाशके। दक्षिणेन तु पादेन मूर्धिं संताङ्गयेत्स्वयम्॥४७॥

की नाभि में मयूरास्त्र से लाल वस्त्र के कंचुक को बिनौले आदि भूसी से अग्नि को जला दे (प्रज्वलित कर दे)। तब वह हाथ के यन्त्र से निकाले गये तेल को अन्य होम सामग्री मिलाकर होम करे। ३४-३५॥ वह कृष्णपक्ष में चतुर्दशी से आरम्भ करके अष्टमी तक क्रमशः एक हजार आठ बार होम करे। वह जलते कोयले की जगह और उसके मंडप (घेरे) की जगह को न छुए। यदि यह अनुष्ठान पूरा किया तो राजा के शत्रु अपने परिवार सहित सब दुःखों से दुःखित हो मर जायेंगे। ३६-३७॥ अघोर के मंत्र को जपते हुए भक्त ये सामग्री मरे मनुष्य की खोपड़ी में इकट्ठा करे। नाखून, मनुष्य का बाल, कोयला, भूसी, कंचुक, झाड़ू से उड़ी हुई सङ्क की धूलि, जहरीले साँप की केंचुल, बैल का दाँत और गाय के दाँत, बाघ के दाँत और नाखून, काले हिरन और बिल्ली, न्योले और सुअर के दाँत। हे सुब्रत! इन सब चीजों को एकत्र करके उत्तम अघोर मंत्र को एक सौ आठ बार जपे। ३८-४२॥ सब चीजों से भरी खोपड़ी को कफन के कपड़े के टुकड़े से लपेट ले। उन सब चीजों को खेत, घर, शमशान घाट, नगर या शत्रु के देश में गाइ दे। ४३॥ जब सूर्य ग्रहण लगा हो या चन्द्र आठवीं राशि में हो, यह मंत्र को जपना चाहिए। ऐसा करने पर शत्रु अपने स्थान (पद) से भ्रष्ट होगा और उसका नाश होगा। जब गमन समय हो, राजा के शत्रु के चित्र को भूमि पर खींच ले। उसके दर्पण के तल पर उसका चित्र दिखाई पड़े। उस स्थान पर चाँदनी (वितान) तान दिया जाय। चार तोरण कर कुश की माला लटका दे। राजधानी की समृद्धि का सूचक वेद-मंत्रोच्चारण होना चाहिए। भक्त तब अपने दाहिने पैर से शत्रु के सिर पर ठोकर मार दे। जब ऐसा किया जाय तो राजा के शत्रु का नाश हो जाता है। यदि कोई दुष्ट व्यक्ति अपने ही राजा के विरुद्ध यह अभिचार करेगा तो वह स्वयं अपने परिवार सहित मर जायेगा। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने राजा की रक्षा करनी चाहिए जो कि

एवं कृते नृपेन्द्रस्य शत्रुनाशो भविष्यति। स्वराष्ट्रपतिमुद्दिश्य यः कुर्यादाभिचारिकम्॥४८॥  
स आत्मानं निहत्यैव स्वकुलं नाशयेत्कुर्थीः। तस्मात्स्वराष्ट्रगोप्तारं नृपतिं पालयेत्सदा॥४९॥  
मंत्रौषधिक्रियाद्यैश्च सर्वयत्नेन सर्वदा। एतद्रहस्यं कथितं न देयं यस्य कस्यचित्॥५०॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे यंचाशत्तमोऽध्यायः॥५०॥**

अपने प्रजा की मंत्रों, औषधियों और धार्मिक अनुष्ठानों से रक्षा करता है। यह रहस्य जो मैंने आप लोगों को बताया, इस रहस्य को किसी को नहीं देना (बताना) चाहिए॥४४-५०॥

श्रीलिङ्गमहापुराण के उत्तर भाग में अधोर मंत्र की विशेषता  
नामक पचासवाँ अध्याय समाप्त॥५०॥



## एकपंचाशत्तमोऽध्यायः वज्रवाहनिका विद्या

निग्रहोऽघोररूपोऽयं कथितोऽस्माकमुत्तमम्। वज्रवाहनिकां विद्यां वक्तुमर्हसि सत्तम॥१॥  
वज्रवाहनिका नाम सर्वशत्रुभयंकरी। अनया सेचयेद्वज्रं नृपाणां साधयेत्तथा॥२॥  
वज्रं कृत्वा विधानेन तद्वज्रमभिषिच्य च। अनया विद्यया तस्मिन्विन्यसेत्कांचनेन च॥३॥  
ततश्चाक्षरलक्षं च जपेद्विद्वान्समाहितः। वज्री दशांशं जुहुयाद्वज्रकुंडे घृतादिभिः॥४॥  
तद्वज्रं गोपयेन्नित्यं दापयेन्नृपतेस्ततः। तेन वज्रेण वै गच्छञ्चत्रूञ्जीयाद्रणाजिरे॥५॥  
पुरा पितामहेनैव लब्धा विद्या प्रयत्नतः। देवी शक्रोपकारार्थं साक्षाद्वज्रेश्वरी तथा॥६॥  
पुरा त्वष्टा प्रजानाथो हतपुत्रः सुरेश्वरात्। विद्यया हरतः सोममिंद्रवैरेण सुव्रताः॥७॥  
तस्मिन्यज्ञे यथाप्राप्तं विधिनोपकृतं हविः। तदैच्छत महाबाहुर्विश्वरूपविमर्दनः॥८॥  
मत्पुत्रमवधीः शक्र न दास्ये तव शोभनम्। भागं भागार्हता नैव विश्वरूपो हतस्त्वया॥९॥

### इक्यावनवाँ अध्याय वज्रवाहनिका विद्या

ऋषिगण बोले

हे सूत! आप ने हम लोगों को अघोर से सम्बन्धित निग्रह का उत्तम और भयानक रूप बताया। हे महामुनि!  
हमको अब वज्रवाहनिका विद्या के विषय में बतायें॥१॥

सूत बोले

वज्रवाहनिका विद्या सब शत्रुओं के लिए भयंकर है। राजा के उद्देश्य की पूर्ति के लिए वज्र को मन्त्र से इस मन्त्र से सींचना (सेचन करना) चाहिये। तब राजा को उस वज्र को समर्पित करना चाहिये॥२॥ वज्र को तांत्रिक विधानपर्वक बनावे। तब उसको जल से सिंचित करे। इस विद्या से गदा के उस टुकड़े पर मढ़े सोने पर मन्त्र को खोदा जाय।। तब विद्वान भक्त प्रत्येक अक्षर को शुद्ध होकर एक लाख बार जप करे। जिसके पास यह वज्र हो दस हजार बार वज्रेन्द्र कुण्ड में धी आदि से हवन करे। उस वज्र की नित्य रक्षा करनी चाहिये और तब राजा को देना चाहिये। अगर राजा शत्रु के विरुद्ध इस वज्र के साथ जाय तो युद्ध क्षेत्र में उसकी विजय होती है॥३-५॥ पहले यह वज्रेश्वरी विद्या को इन्द्र की सहायता के लिए प्रयत्नपूर्वक ब्रह्मा ने प्राप्त किया था॥६॥ हे सुव्रत! पहले त्वष्टा प्रजापति के पुत्र का इन्द्र ने वध किया था। वह इन्द्र का विरोधी हो गया और उसने एक यज्ञ किया जिससे सोम रस निचोड़ा गया था। इसमें महाबाहु इन्द्र, जिसने विश्वरूप को मारा था, उसने उस यज्ञ में अपना भाग देने की इच्छा की॥७-८॥ “हे इन्द्र तुमने मेरे पुत्र की हत्या की है। मैं तुमको यज्ञ में भाग नहीं दूँगा। तुमने मेरे पुत्र विश्वरूप की हत्या की। इसलिए तुम भविष्य में भाग पाने के योग्य नहीं हो”॥९॥ यह कहकर उन्होंने अपनी माया से पूरे आसन को मोहग्रस्त कर दिया। लेकिन विश्वरूप के विमर्दन इन्द्र ने माया लिंगमपुरो-५४

इत्युक्त्वा चाश्रमं सर्वं मोहयामास मायया। ततो मायां विनिर्भिद्य विश्वरूपविमर्दनः॥१०॥  
 प्रसह्य सोमपिबत्सगणैश्च शचीपतिः। ततस्तच्छेषमादाय क्रोधाविष्टः प्रजापतिः॥११॥  
 इंद्रस्य शत्रो वर्धस्व स्वाहेत्यग्नौ जुहाव ह। ततःकालग्निसंकाशो वर्तनाद्वृत्रसंज्ञितः॥१२॥  
 प्रादुरासीत्सुरेशार्दुद्राव च वृषांतकः। ततः किरीटी भगवान्परित्यज्य दिवं क्षणात्॥१३॥  
 सहस्रनेत्रः सगणो दुद्राव भयविह्वलः। तदा तमाह स विभुर्हष्टो ब्रह्मा च विश्वसूट्॥१४॥  
 त्यक्त्वा वज्रं तमेतेन जहीत्यरिमरिंदमः। सोऽपि सन्नह्य देवेंद्रो देवैः सार्धं महाभुजः॥१५॥  
 निहत्य चाप्रयत्नेन गतवान्विगतज्वरः। तस्माद्वज्रेश्वरीविद्या सर्वशत्रुभयंकरी॥१६॥  
 मंदेहा राक्षसा नित्यं विजिता विद्ययैव तु। तां विद्यां संप्रवक्ष्यामि सर्वपापप्रमोचनीम्॥१७॥  
 ॐ भूर्भुवस्वः तत्सवितुवरिण्यं भर्गो देवस्य धीमहि॥  
 धियो यो नः प्रचोदयात्॥  
 ॐ फट् जहि हुं फट् छिंधि भिंधि जहि हनहन स्वाहा॥  
 विद्या वज्रेश्वरीत्येषा सर्वशत्रुभयंकरी। अनया संहृतिः शंभोर्विद्याया मुनिपुंगवाः॥१८॥  
 इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकवर्णचाशत्तमोऽध्यायः॥५९॥

को भेद कर अपने गणों के सहित जबरदस्ती सोम रस को अपने कब्जे में कर लिया और उसको पी लिया। तब क्रोधित ब्रह्मा ने बचे खुचे सोमरस को लेकर अग्नि में यह कहते हुये होम कर दिया। “हे इन्द्र के शत्रुओं बढ़ो स्वाहा” तब वहाँ वृत्र नाम का एक राक्षस दिखायी दिया। वह कालाग्नि के समान था। उसको वृत्र कहा गया क्योंकि वह अपने धनुषों से धिरा हुआ था। इन्द्र वहाँ से भाग गये। उन्होंने स्वर्ग में तुरन्त शरण ली। भयभीत होकर वह अपने गणों के साथ भाग गये। तब विश्व के स्रष्टा भगवान ब्रह्मा प्रसन्न हो गये और उससे कहा॥१०-१४॥ “हे शत्रु नाशक! यह वज्र ले लो और इसको मारो” तब देवताओं के स्वामी शक्तिशाली भुजाओं वाले इन्द्र देवताओं सहित तैयार हो गये और उन्होंने बिना किसी विशेष प्रयत्न के उसको मार डाला। वह सब विपत्तियों से मुक्त हो गये। अतः वज्रेश्वरी विद्या सब प्रकार के शत्रुओं के लिए भयंकर है। इस विद्या के द्वारा मन्देह कहलाने वाले दैत्य प्रतिदिन जीते जाते रहे। मैं उस विद्या का वर्णन करूँगा जो कि सब पापों से छुटकारा देती है। “ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरिण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ फट् जहि हुं फट् छिंधि भिंधि जहि हन हन स्वाहा” ॐ भूर्भुवः स्वः हम लोग भगवान सूर्य के तेज को ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ॐ फट्, जहि (मारो) हुं फट् छिंधि (फाड़ो) भिंधि (छेदो) जहि, हन हन (मारो) स्वाहा। यह वज्रेश्वरी विद्या है। यह सब शत्रुओं के लिए भयंकर है। हे श्रेष्ठ मुनियों! इस विद्या के द्वारा शिव संसार का संहार करते हैं॥१५-१८॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में वज्रवाहनिका विद्या  
 नामक इक्यावनवाँ अध्याय समाप्ता॥५१॥



## द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः वज्रवाहनिकाविद्याविनियोगः

ऋषय ऊचुः

श्रुता वज्रेश्वरी विद्या ब्राह्मी शक्रोपकारिणी। अनया सर्वकार्याणि नृपाणामिति नः श्रुतम्॥१॥  
विनियोगं वदस्वास्या विद्याया रोमहर्षण।

सूत उवाच

वशमाकर्षणं चैव विद्वेषणमतः परम्॥२॥

उच्चाटनं स्तंभनं च मोहनं ताडनं तथा। उत्सादनं तथा छेदं मारणं प्रतिबंधनम्॥३॥  
सेनास्तंभनकादीनि सावित्र्या सर्वमाचरेत्। आगच्छ वरदे देवि भूम्यां पर्वतमूर्धनि॥४॥  
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम्। उद्वास्यानेन मंत्रेण गंतव्यं नान्यथा द्विजाः॥५॥

प्रतिकार्यं तथा ब्राह्मं कृत्वा वश्यादिकां क्रियाम्।  
उद्वास्य वह्निमाधाय पुनरन्यं यथाविधि॥६॥

देवीमावाह्य च पुनर्जपेत्संपूजयेत्पुनः। होमं च विधिना वह्नौ पुनरेव समाचरेत्॥७॥  
सर्वकार्याणि विधिना साधयेद्विद्यया पुनः। जातीपुष्पैश्च वश्यार्थी जुहुयादयुतत्रयम्॥८॥

बावनवाँ अध्याय

## वज्रवाहनिका विद्या का विनियोग

ऋषिगण बोले

हम लोगों ने इन्द्र की सहायता देने वाली ब्रह्मा की वज्रेश्वरी विद्या को सुना। इससे राजाओं के सब कार्य सिद्ध होते हैं। हे लोमहर्षण! अब इस विद्या का विभिन्न उद्देश्यों का विनियोग (उपयोग विधि) बतायें।

सूत बोले

सावित्री मंत्र के विभिन्न उपयोग वश्य, आकर्षण, विद्वेषण, उच्चाटन, स्तंभन, मोहन, ताडन, उत्सादन, छेद, मारण, प्रतिबंधन, सेनास्तंभन आदि तथा अन्य क्रियाकलाप होते हैं।

मन्त्र

‘हे वर देने वाली देवि! पृथ्वी पर पर्वत के शिखर पर आओ। हे देवी! ब्राह्मणों द्वारा आज्ञा पाकर सुखपूर्वक जाओ।’ हे ब्राह्मणों! केवल यही मंत्र है जिससे छुट्टी लेकर पृथ्वी से बाहर जाओ अन्यथा नहीं॥१-५॥ सब बाहरी प्रारंभिक कृत्यों को पूरा करने के बाद वश्य आदि कृत्यों को करने के बाद साधक देवी को विसर्जित करे। फिर विधिपूर्वक दूसरी अग्नि की स्थापना करके देवी का आवाहन करके फिर जप और पूजा करना चाहिए। फिर अग्नि में विधि से होम करना चाहिए॥६-७॥ तब उसी मंत्र से साधक पवित्र कृत्य को पूरा करे जो दूसरों को

घृतेन करवीरेण कुर्यादाकर्षणं द्विजाः। विद्वेषणं विशेषेण कुर्याल्लांगलकस्य च॥१॥  
 तैलेनोच्चाटनं प्रोक्तं स्तंभनं मधुना स्मृतम्। तिलेन मोहनं प्रोक्तं ताडनं रुधिरेण च॥१०॥  
 खरस्य च गजस्याथ उष्ट्रस्य च यथाक्रमम्। स्तंभनं सर्षपेणापि पाटनं च कुशेन च॥११॥  
 मारणोच्चाटने चैव रोहीबीजेन सुब्रताः। बंधनं त्वहिपत्रेण सेनास्तंभमतः परम्॥१२॥  
 कुनट्या नियतं विद्यात्पूजयेत्परमेश्वरीम्। घृतेन सर्वसिद्धिः स्यात्पवसा वा विशुद्धयते॥१३॥  
 तिलेन रोगनाशश्च कमलेन धनं भवेत्। कांतिर्मधूकपुष्पेण सावित्र्या ह्ययुतत्रयम्॥१४॥  
 जयादिप्रभृतीन्सर्वान् स्विष्टांतं पूर्ववत्स्मृतम्। एवं संक्षेपतः प्रोक्तो विनियोगोतिविस्तृतः॥१५॥  
 जपेद्वा केवलां विद्यां संपूज्य च विधानतः। सर्वसिद्धिपवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥१६॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्विपञ्चाशत्तमीडृष्ट्यायः॥५२॥

वश में करना चाहे वह जाती फूलों से तीस हजार होम करे॥८॥ हे ब्राह्मण! आकर्षण कृत्य के लिए धी और करवीर (कनइल) के फूलों से होम करे। विद्वेषण (घृणा) के कृत्य में लांगलक फूल से होम करे। उच्चाटन कृत्य के लिए तेल से होम करे। स्तम्भन कृत्य में मधु से होम करे। मोहन कृत्य में तिल से और ताडन कृत्य में गधा, हाथी या ऊँट के खून (रुधिर) से होम करे॥९-१३॥ स्तम्भन कृत्य में सरसों से तथा पाटन कृत्य में कुश से होम करना चाहिए। हे सुब्रतो! मारण और उच्चाटन कृत्य रोही (अहिपत्र और कुन्ती) के बीजों से होम करे। बंधन कृत्य में अहिपत्र से, सेनास्तम्भन कृत्य में कुनटी के पत्र से होम करे। तब साधक धी से परमेश्वरी की सब प्रकार की सिद्धि के लिए पूजा करे। दूध की खीर से होम करने से शुद्धि प्राप्त होती है। तिल के होम से रोगनाश होता है और कमल के होम से धन प्राप्त होता है। महुआ के फूल के होम से कीर्ति प्राप्त होती है। प्रत्येक होम में तीस 'स्विष्ट' से होना चाहिए। यह विनियोग संक्षेप में कहा गया जो कि अति विस्तृत है। विधानपूर्वक पूजा करके केवल सावित्री मंत्र का जाप करे। तभी वह सिद्धियां प्राप्त कर सकता है। इसमें संदेह करने की कोई बात नहीं है॥१४-१६॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में वज्रवाहनिका विद्या का विनियोग  
 नामक बावनवां अध्याय समाप्त॥५२॥

—४३४—

## त्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः मृत्युञ्जयरस्यानुष्ठानविधिः

ऋषय ऊचुः

मृत्युञ्जयविधिं सूत ब्रह्मक्षत्रविशामपि। वक्तुमर्हसि चास्माकं सर्वज्ञोऽसि महामते॥१॥

सूत उवाच

मृत्युञ्जयविधिं वक्ष्ये बहुना किं द्विजोत्तमाः। रुद्राध्यायेन विधिना घृतेन नियुतं क्रमात्॥२॥

सघृतेन तिलेनैव कमलेन प्रयत्नतः। दूर्वया घृतगोक्षीरमिश्रया मधुना तथा॥३॥

चरुणा सघृतेनैव केवलं पयसापि वा। जुहुयात्कालमृत्योर्वा प्रतीकारः प्रकीर्तिः॥४॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५३॥

तिरपनवाँ अध्याय

## मृत्युञ्जय अनुष्ठान विधि

ऋषिगण बोले

हे सूत! ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों से सम्बन्धित मृत्युञ्जय कृत्य विधि को अब बताइये। हे महाज्ञानी मुनि!

आप सर्वज्ञ हैं।

सूत बोले

हे उत्तम ब्राह्मणों! मैं मृत्युञ्जय अनुष्ठान की विधि बताऊँगा। बहुत कहने से क्या लाभ? रुद्राध्याय के सभी मन्त्रों द्वारा धी से एक लाख बार क्रमशः होम करे। हवन के लिए धी मिला तिल, कमल, धी से मिली दूब, गाय का दूध, मधु, धी सहित चरु या केवल दूध ये सामग्री होम के लिए चाहिये। इससे होम करे। यह मृत्यु या मृत्यु के देवता यम का प्रतीकार कहा गया है॥१-५॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में मृत्युञ्जय अनुष्ठान विधि  
नामक तिरपनवाँ अध्याय समाप्त॥५३॥



## चतुर्थं चाशतमोऽध्यायः त्रियंबकमन्त्रेण पूजा

सूत उवाच।

त्रियंबकेण मन्त्रेण देवदेवं त्रियंबकम्। पूजयेद्वाणलिंगे वा स्वयंभूतेऽपि वा पुनः॥१॥  
 आयुर्वेदविदैवापि यथावदनुपूर्वशः। अष्टोत्तरसहस्रेण पुण्डरीकेण शंकरम्॥२॥  
 कमलेन सहस्रेण तथा नीलोत्पलेन वा। संपूज्य पायसं दत्त्वा सघृतं चौदनं पुनः॥३॥  
 मुद्रान्नं मधुना युक्तं भक्ष्याणि सुरभीणि च। अग्नौ होमश्च विपुलो यथावदनुपूर्वशः॥४॥  
 पूर्वोत्तैरपि पुष्पैश्च चरुणा च विशेषतः। जपेद्वै नियुतं सम्यक् समाप्य च यथाक्रमम्॥५॥  
 ब्राह्मणानां सहस्रं च भोजयेद्वै सदक्षिणम्। गवां सहस्रं दत्त्वा तु हिरण्यमपि दापयेत्॥६॥  
 एतद्वः कथितं सर्वं सरहस्यं समाप्ततः। शिवेन देवदेवेन शर्वेणात्युग्रशूलिना॥७॥  
 कथितं मेरुशिखरे स्कंदायामिततेजसे। स्कंदेन देवदेवेन ब्रह्मपुत्राय धीमते॥८॥  
 साक्षात्सनत्कुमारेण सर्वलोकहितैषिणा। पाराशार्याय कथितं पारं पर्यक्रमागतम्॥९॥  
 शुके गते परं धाम् दृष्ट्वा रुद्रं त्रियंबकम्। गतशोको महाभागो व्यासः परं ऋषिः प्रभुः॥१०॥  
 स्कंदस्य संभवं श्रुत्वा स्थिताय च महात्मने। त्रियंबकस्य माहात्म्यं मंत्रस्य च विशेषतः॥११॥

## चौवनवाँ अध्याय त्रियंबक मन्त्र से पूजा

सूत बोले

त्रियंबक मन्त्र से भक्त बाणलिंग में या स्वयंभू लिंग में देवताओं के देवता त्रियंबक की पूजा करनी चाहिये॥१॥  
 वे जो अपनी दीर्घ आयु चाहते हैं और जो वेदों के ज्ञाता हैं उनको चाहिये कि वे शिव जी की पूजा एक सौ आठ  
 सफेद कमलों से या एक हजार लाल कमलों से या एक हजार नीले कमलों से पूजा करें। पूजा करने के बाद  
 पायस, धी से सना भात, उबला हुआ मूँग के दाने और शहद मिला भात, सुगन्धित मिठाई और अन्य खाने योग्य  
 पदार्थ देने चाहिये। भक्त को फूलों से अग्नि में पूर्व वर्णित विधि से विशेष रूप से चरु से होम करना चाहिये।  
 उसको सौ हजार बार जप करना चाहिये। पूर्ण रूप से प्रत्येक काम को उचित क्रम में करना चाहिये और एक  
 हजार ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये और उनको दक्षिणा देनी चाहिये। एक हजार गायों को दान देने के बाद  
 अन्त में सोना भी देना चाहिये॥२-६॥ इस प्रकार प्रत्येक वस्तु रहस्य सहित संक्षेप में मैंने कहा। देवों के देव  
 त्रिशूलधारी शिव के द्वारा मेरु पर्वत की चोटी पर अनुपम तेजस्वी स्कन्द से पहले बताया गया था॥७-८॥ लोकों  
 शुभचिंतक स्कन्दकुमार ने यह व्यास जी को बताया था। इस प्रकार क्रमशः परम्परा से यह आगे आयी॥९॥  
 शुक जी की मृत्यु के बाद महाभाग श्रेष्ठ ऋषि व्यास ने त्रियंबक भगवान रुद्र का दर्शन किया और अपने दुःखों  
 को दूर किया॥१०॥ ऋषि ने स्कन्द के जन्म की कथा को सुना। वह वहाँ ठहरे और उनको त्रियंबक मन्त्रपूर्ण

कथितं बहुधा तस्मै कृष्णद्वैपायनाय वै। तत्सर्वं कथयिष्यामि प्रसादादेव तस्य वै॥१२॥  
देवं संपूज्य विधिना जपेन्मंत्रं त्रियंबकम्। मुच्यते सर्वपापैश्च सप्तजन्मकृतैरपि॥१३॥

संग्रामे विजयं लब्ध्वा सौभाग्यमतुलं भवेत्।  
लक्ष्मोमेन राज्यार्थी राज्यं लब्ध्वा सुखी भवेत्॥१४॥

पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति नियुतेन न संशयः। धनार्थी प्रयुतेनैव जपेदेव न संशयः॥१५॥  
तस्मात्त्रियंबकं देवं तेन नित्यं सर्वमंगलैः। क्रीडते पुत्रपौत्रैश्च मृतः स्वर्गे प्रजायते॥१६॥  
नानेन सदृशो मंत्रो लोके वेदे च सुव्रताः। तस्मात्त्रियंबकं देवं तेन नित्यं प्रपूजयेत्॥१७॥  
अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं भवेत्। त्रयाणमपि लोकानां गुणानामपि यः प्रभुः॥१८॥  
वेदानामपि देवानां ब्रह्मक्षत्रविशामपि। अकारोकारमकाराणां मात्राणामपि वाचकः॥१९॥  
तथा सोमस्य सूर्यस्य वह्नेरग्नित्रयस्य च। अंबा उमा महादेवो ह्यंबकस्तु त्रियंबकः॥२०॥  
सुपुष्पितस्य वृक्षस्य यथा गंधः सुशोभनः। वाति दूरात्था तस्य गंधः शंभोर्महात्मनः॥२१॥  
तस्मात्सुगंधो भगवान्धारयति शंकरः। गांधारश्च महादेवो देवानामपि लीलया॥२२॥  
सुगंधस्तस्य लोकेस्मिन्वायुवर्ति नभस्तले। तस्मात्सुगंधिस्तं देवं सुगंधि पुष्टिवर्धनम्॥२३॥  
यस्य रेतः पुरा शंभोहरेर्योनौ प्रतिष्ठितम्। तस्य वीर्यादभूदंडं हिरण्मयमजोद्भवम्॥२४॥  
चंद्रादित्यौ सनक्षत्रौ भूर्भुवः स्वर्महस्तपः। सत्यलोकमतिक्रम्य पुष्टिवीर्यस्य तस्य वै॥२५॥

रूप से बताया गया। उनकी कृपा से वह सब मैं अब तुम लोगों को बताता हूँ॥११-१२॥ विधिपूर्वक शिव की पूजा करके त्रियंबक मन्त्र जपना चाहिये। ऐसा करने पर वह सात जन्मों में किये हुए भी सब पापों से मुक्त हो जाता है॥१३॥ वह युद्ध में विजय प्राप्त करता है और उसको अतुल सौभाग्य प्राप्त होता है। राज्य को चाहने वाला व्यक्ति एक लाख होम करने पर राज्य पाकर सुखी होता है॥१४॥ इस मन्त्र के एक लाख बार होम करने से पुत्र चाहने वाले को पुत्र प्राप्त होता है। जो धन चाहता है उसको बेहिचक एक करोड़ बार मन्त्र का जप करना चाहिये॥१५॥ वह व्यक्ति पूर्ण रूप से धन-धान्य आदि से और अन्य सब शुभ सामग्री से सम्पन्न होकर इस लोक में पुत्रों और पौत्रों के साथ आनन्द मनाता है और मरने के बाद वह स्वर्ग को जाता है॥१६॥ हे सुव्रतो! इस मन्त्र से बढ़कर संसार में और वेदों में कोई दूसरा मन्त्र नहीं है। इसलिए त्रियंबक देवता की नित्य पूजा करनी चाहिये॥१७॥ ऐसा करने से अग्निष्टोम यज्ञ का आठ गुना फल मिलता है। त्रियंबक शब्द की व्याख्या इस प्रकार की गयी है। वह तीनों लोकों, तीनों गुणों, तीनों वेदों, तीनों देवताओं, तीनों जातियों ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों का स्वामी है। वह “अ, उ, और म” इन तीन अक्षरों द्वारा व्यक्त किया जाता है। वह तीनों अग्नियों का (चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि) का स्वामी है। इसलिए इन तीनों का स्वामी त्रियंबक है। जैसे अच्छे फूल वाले वृक्ष की सुगंध दूर से ही बहुत दूर तक फैलती है उसी प्रकार महान् आत्मा शिव की गंध भी अन्य देवताओं तक पहुँचती है। इसलिए भगवान् सुगंध हैं। और जब वायु बहती है तो इस संसार में उसकी सुगंध फैलती है। अतः सुगंध शब्द शिव का सन्दर्भ बताता है। अब पुष्टिवर्धनम् शब्द की व्याख्या की जाती है॥१८-२३॥ पहले भगवान् शिव का वीर्य विष्णु की योनि में जमा हुआ। उस वीर्य से सोने का अंड बना। ब्रह्मा की उत्पत्ति

पंचभूतान्यहंकारो बुद्धिः प्रकृतिरेव च। पुष्टिर्बीजस्य तस्यैव तस्माद्वै पुष्टिवर्धनः॥२६॥  
 तं पुष्टिवर्धनं देवं घृतेन पयसा तथा। मधुना यवगोधूममाषबिल्वफलेन च॥२७॥  
 कुमुदार्कशमीपत्रगौरसर्षपशालिभिः । हुत्वा लिंगे यथान्यायं भत्त्या देवं यजामहे॥२८॥  
 ऋतेनानेन मां पाशाद्वंधनात्कर्मयोगतः। मृत्योश्च बंधनाच्चैव मुक्षीय भव तेजसा॥२९॥  
 उर्वारुकाणां पक्वानां यथा कालादभूत्पुनः। तथैव कालः संप्राप्तो मनुना तेन यत्लतः॥३०॥  
 एवं मंत्रविधिं ज्ञात्वा शिवलिंगं समर्चयेत्। तस्य पाशक्षयोऽतीव योगिनो मृत्युनिग्रहः॥३१॥  
 त्रियंबकसमो नास्ति देवो वा घृणयान्वितः। प्रसादशीलः प्रीतश्च तथा मंत्रोपि सुव्रताः॥३२॥  
 तस्मात्सर्वं परित्यज्य त्रियंबकमुमापतिम्। त्रियंबकेण मंत्रेण पूजयेत्सुसमाहितः॥३३॥  
 सर्वावस्थां गतो वापि मुक्तोऽयं सर्वपातकैः। शिवध्यानान्न संदेहो यथा रुद्रस्तथा स्वयम्॥३४॥

हत्वा भित्त्वा च भूतानि भुक्त्वा चान्यायतोऽपि वा।

शिवमेकं सकृत्स्मृत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥३५॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे चतुर्थ्यंचाशत्तमोऽछ्यायः॥५४॥**

का वही कारण है। उनके वीर्य का पोषण चन्द्रमा, सूर्य, तारागण, पृथ्वी, भुवन, स्वः, महः, तपः और सत्यम् लोक से आगे बढ़कर पंचभूत, महाभूत, अहंकार, बुद्धि, प्रकृति उनके वीर्य से पुष्टि को प्राप्त हुए। अतः भगवान् शिव पुष्टिवर्धन अर्थात् पुष्टि के बढ़ाने वाले हैं॥२४-२६॥ यामहे (हम पूजा करते हैं) की व्याख्या इस प्रकार है। हम लोग होम करके धी, दूध, मधु, जौ, गेहूं, उड्ड, बेल का फल, लिली, अर्क (धतूरा) के फूल, शमी की पत्तियाँ, सफेद सरसों, शालिधान से हम लोग इन चीजों से श्रद्धापूर्वक विधि से लिंग में पूजा करते हैं॥२७-२८॥ अब मन्त्र के बाद वाले आधे की व्याख्या की जाती है। जो इस प्रकार है। इस ऋत (विधिपूर्वक पूजा) की कृपा से हम लोग कर्मों और उसके अस्तित्व तथा मृत्यु के बन्धन से मुक्त हों। हमारे संसारिक तेज से मुक्ति मिले। जैसे उर्वारुक के पके फल समय पर वृक्ष की डाल से मौसम पर गिर जाते हैं। उसी प्रकार इस मन्त्र की कृपा से समय आने पर मुक्ति प्राप्त हो जाय॥२९-३०॥ इस तरह मन्त्र के अर्थ को समझकर और इसके विनियोग को जानकर शिव के लिंग की पूजा करनी चाहिये। ऐसा करने से वह योगी सब बन्धनों से मुक्त होता है और उसकी मृत्यु का नियह होता है। हे सुप्रतो! त्रियंबक के समान कोई और दूसरा देवता दयालु नहीं है। वह आसानी से प्रसन्न होने वाले और स्तुति किये जाने वाले हैं और यह मन्त्र भी वैसा ही है। अर्थात् आसानी से फल देने वाला है। इसलिए सब छोड़कर त्रियंबक मन्त्र से उमापति त्रियंबक की पूजा करनी चाहिये। पूर्ण शुद्धि के साथ भक्त को उसकी इच्छा चाहे जो भी हो शिव का ध्यान करने से वह निसन्देह सब पापों से मुक्त हो जाता है और स्वयं रुद्र के समान हो जाता है। यदि कोई किसी प्राणी की हत्या करता है और अन्यायपूर्वक खाता और मौज मस्ती करता है तो वह भी केवल एक बार शिव के स्मरण करने से सब पापों से मुक्त हो जाता है॥३१-३५॥

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में त्रियंबक मंत्र से पूजा  
 नामक चौवनवाँ अध्याय समाप्त॥५४॥

## पञ्चपञ्चाशतमोऽध्यायः शिवर्दय ध्यानविधिः

ऋषय ऊचुः

कथं त्रियंबको देवो देवदेवो वृषध्वजः। ध्येयः सर्वार्थसिद्ध्यर्थं योगमार्गेण सुब्रतः॥१॥  
पूर्वमेवापि निखिलं श्रुतं श्रुतिसमं पुनः। विस्तरेण च तत्सर्वं संक्षेपाद्वक्तुमर्हसि॥२॥

सूत उवाच

एवं पैतामहेनैव नन्दी दिनकरप्रभः। मेरुपृष्ठे पुरा पृष्ठो मुनिसंधैः समावृतः॥३॥  
सोऽपि तस्मै कुमाराय ब्रह्मपुत्राय सुब्रताः। मिथुः प्रोवाच भगवान्प्रणनाय समाहितः॥४॥

नन्दिकेश्वर उवाच

एवं पुरा महादेवो भगवान्नीललोहितः। गिरिपुत्र्यांबया देव्या भगवत्यैकशश्याया॥५॥

पृष्ठः	कैलाशशिखरे	हृष्टपुष्टतनूरुहः।
--------	------------	--------------------

श्रीदेव्युवाच

योगः कतिविधः प्रोक्तस्तत्कथं चैव कीदृशम्॥६॥  
ज्ञानं च मोक्षदं दिव्यं मुच्यन्ते येन जंतवः॥

पचपनवाँ अध्याय

## शिव के ध्यान की विधि

ऋषिगण बोले

तीन नेत्र धारी, बैल की ध्वजा वाले, देवों के देव, भगवान् शंकर का योग मार्ग द्वारा सब पापों की सिद्धि के लिए ध्यान कैसे किया जाय? हे सुब्रत! आपसे पहिले विस्तारपूर्वक सब सुन चुके हैं। यह वेद ज्ञान के बराबर है। आप एक बार फिर संक्षेप में कहें॥१-२॥

सूत बोले

हे सुब्रतो! पहिले ऐसा प्रश्न सूर्य के समान प्रभा वाले, मुनियों से धिरे हुये नन्दी से ब्रह्मा के पुत्र ने मेरु पर्वत की चोटी पर पूछा था। सनत्कुमार ने नन्दी को प्रणाम किया। तब नन्दी ने बहुत ध्यानपूर्वक विश्वस्त मुद्रा में कहा॥३-४॥

नन्दिकेश्वर बोले

इसी प्रकार पहिले पर्वत की पुत्री अम्बा पार्वती देवी ने भगवान् नीललोहित महादेव से पूछा था जब कि कैलाश के शिखर पर एक ही शश्या पर हृष्ट-पुष्ट दशा में बैठे थे॥५॥

श्री देवी बोलीं

योग कितने प्रकार का होता है? वे कैसे हैं? वे किस प्रकार हैं? कैसे कार्य करते हैं? वह दिव्य मोक्षदायक ज्ञान कैसा है जिससे प्राणी बन्धन से मुक्त हो जाते हैं?॥६॥

## श्रीभगवानुवाच

प्रथमो मंत्रयोगश्च स्पर्शयोगो द्वितीयकः॥७॥

भावयोगस्तृतीयः स्यादभावश्च चतुर्थकः। सर्वोत्तमो महायोगः पंचमः परिकीर्तिः॥८॥  
 ध्यानयुक्तो जपाभ्यासो मंत्रयोगः प्रकीर्तिः। नाडीशुद्धयधिको यस्तु रेचकादिक्रमान्वितः॥९॥  
 समस्तव्यस्तयोगेन जयो वायोः प्रकीर्तिः। बलस्थिरक्रियायुक्तो धारणाद्यैश्च शोभनैः॥१०॥  
 धारणत्रयसंदीप्तो भेदत्रयविशेषधकः। कुंभकावस्थितोऽभ्यासः स्पर्शयोगः प्रकीर्तिः॥११॥  
 मंत्रस्पर्शविनिर्मुक्तो महादेवं समाश्रितः। बहिरंतर्विभागस्थस्फुरत्संहरणात्मकः॥१२॥  
 भावयोगः समाख्याताश्चित्तशुद्धिप्रदायकः। विलीनावयवं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्॥१३॥  
 शून्यं सर्वं निराभासं स्वरूपं यत्र चित्यते। अभावयोगः संप्रोक्तश्चित्तनिर्वाणकारकः॥१४॥  
 नीरूपः केवलः शुद्धः स्वच्छुंदं च सुशोभनः। अनिर्देश्यः सदालोकः स्वयंवेद्यः समंततः॥१५॥  
 स्वभावो भासते यत्र महायोगः प्रकीर्तिः। नित्योदितः स्वयंज्योतिः सर्वचित्तसमुत्थितः॥१६॥  
 निर्मलः केवलो ह्यात्मा महायोग इति स्मृतः। अणिमादिप्रदाः सर्वे सर्वे ज्ञानस्य दायकाः॥१७॥  
 उत्तरोत्तरवैशिष्ट्यमेषु योगेष्वनुक्रमात्। अहं संगविनिर्मुक्तो महाकाशोपमः परः॥१८॥  
 सर्वावरणनिर्मुक्तो ह्यचित्यः स्वरसेन तु। ज्ञेयमेतत्समाख्यातमग्राह्यमपि दैवतैः॥१९॥

## भगवान् बोले

पहला मंत्र योग है दूसरा स्पर्श है। तीसरा भाव योग है। चौथा अभाव है। पाँचवा महायोग है जो कि सबसे उत्तम है॥७-८॥ ध्यान से युक्त और अभ्यास और ध्यान के साथ मन्त्रों का जप मन्त्र योग है। रक्तवाहिनी नाड़ियों को शुद्ध करने वाले रेचक प्राणायाम द्वारा रक्तवाहिनी नाड़ियों को शुद्ध करना होता है और प्राण वायु को समस्त और व्यस्त योग से अपने वर्षा में करना होता है। जन्म आदि के बल के शानदार क्रिया-कलाओं के कारण दृढ़ और मजबूत कार्य होता है। कुम्भक प्राणायाम (वायु के रोकने का अभ्यास) तीन धारणाओं के द्वारा संदीप्त को स्पर्श योग कहा जाता है। यह तीनों भेदों (विश्व, प्रज्ञा और तैजस्) को शुद्ध करने वाला है॥९-११॥ भाव योग वह दशा है जो मन्त्र और स्पर्श से अलग है किन्तु महादेव की ओर होती है। उसको भाव योग कहते हैं। इसमें बाहर और भीतर सर्वत्र महादेव के प्रयत्न आश्रित स्फुरण और संहरण की अभिव्यक्ति होती है। योग को चित की शुद्धि देने वाला कहा गया है। विश्व के चर और अचर सब प्राणी जिस भाव में लीन हो जाते हैं और शून्य स्वरूप होते हैं। यह चित के निर्वाण करने वाला योग अभाव योग कहलाता है॥१२-१४॥ महायोग वह ध्यान जिसमें शुद्ध रूप बिना किसी रंग के दिखायी देता है जो शुभ है। शुद्ध है, स्वतन्त्र है, और अनिर्देश्य है। जो प्रकाशमय है और स्वयं वेद्य है उसको महायोग कहते हैं। इसमें यह अनुभव होता है केवल आत्मा ही शुद्ध स्वयं ज्योतिर्मय है आत्मा केवल निर्मल है। यह महायोग के नाम से प्रसिद्ध है। यह सम्पूर्ण चित से ऊपर आता है। ये सब योग अणिमा आदि सिद्धि और पूर्ण ज्ञान को देने वाले हैं॥१५-१७॥ इन योगों में प्रथम की अपेक्षा उसके बाद वाले क्रम से उत्तरोत्तर अच्छे हैं। महायोग की दशा अहं के संग से अलग होने की है। यह महा आकाश से तुलना करने योग्य है। यह सब आवरणों से मुक्त है। यद्यपि यह स्वरस से अचिन्त्य है।

प्रविलीनो महान्सम्यक् स्वयंवेद्यः स्वसाक्षिकः।  
चक्रास्त्यानन्दवपुषा तेन ज्ञेयमिदं मतम्॥२०॥

परीक्षिताय शिष्याय ब्राह्मणायाहिताग्नये। धार्मिकायाकृतज्ञाय दातव्यं क्रमपूर्वकम्॥२१॥  
गुरुदैवतभक्ताय अन्यथा नैव दापयेत्। निंदितो व्याधितोल्पायुस्तथा चैव प्रजायते॥२२॥  
दातुरप्येवमनघे तस्माज्ञात्वैव दापयेत्। सर्वसंगविनिर्मुक्तो मद्भक्तो मत्परायणः॥२३॥  
साधको ज्ञानसंयुक्तः श्रौतस्मार्तविशारदः। गुरुभक्तश्च पुण्यात्मा योग्यो योगरतः सदा॥२४॥  
एव देवि समाख्यातो योगमार्गः सनातनः। सर्ववेदागमां भोजमकरंदः सुमध्यमे॥२५॥  
पीत्वा योगामृतं योगी मुच्यते ब्रह्मवित्तमः। एवं पाशुपतं योगं योगैश्वर्यमनुज्ञाप्य॥२६॥  
अत्याश्रममिदं ज्ञेयं मुक्तये केन लभ्यते। तस्मादिष्टैः समाचारैः शिवार्चनरतैः प्रिये॥२७॥  
इत्युक्त्वा भगवान्देवीमनुज्ञाप्य वृषध्वजः। शंकुकर्णं समासाद्य युयोजात्मानमात्मनि॥२८॥

### शैलादिरुवाच

तस्मात्त्वमपि योगीन्द्र योगाभ्यासरतो भव। स्वयंभुव परा मूर्तिर्नूनं ब्रह्मयी वरा॥२९॥  
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन मोक्षार्थी पुरुषोत्तमः। भस्मास्नायी भवेत्रित्यं योगे पाशुपते रतः॥३०॥

फिर भी यह अपनी स्व प्रकृति के द्वारा ज्ञेय है। यह महान् है। यह अगम्य है। यह स्वयं वेद्य है और स्वयं साक्षिक है। यह अपने आनन्दपूर्ण शरीर में चमकता है। इसलिए यह ज्ञेय (जानने योग्य) है। १८-२०।। यह परीक्षा किये गये शिष्य को देना चाहिये और आहिताग्नि (जो सदा पवित्र अग्नि को सुरक्षित रखे) ब्राह्मण को धार्मिक व्यक्ति को, कृतज्ञ व्यक्ति को क्रमशः देना चाहिये। २१।। गुरु और देवता के भक्त को यह देना चाहिये। अन्य को नहीं। देने पर व्यक्ति संसार में निर्दिष्ट रोग से पीड़ित और अल्पआयु होता है। दाता को भी ऐसा ही होता है। हे पवित्र देवी! पूरी तरह जाँच पड़ताल करके तब यह ज्ञान देना चाहिये। मेरा भक्त सब बन्धनों से मुक्त हो जायेगा। वह मुझको सबसे बड़ा स्वामी समझेगा। वह पूर्ण ज्ञान से युक्त होगा। वह वेद और शास्त्र में लिखित धार्मिक कृत्यों के करने में विशेषज्ञ होगा। वह गुरुभक्त होगा। सुयोग्य साधक पुण्यात्मा होगा और सदा योग रत रहेगा। इस प्रकार हे देवी! हे सुन्दर कटि भाग वाली! यह ज्ञान वेद और आगम रूपी कमल का मधु स्वरूप है। २२-२५।। योगी यौगिक अमृत पीने के बाद ब्रह्म के जानने वालों में उत्तम और मुक्त हो जाता है। इस प्रकार पाशुपत योग सबसे उत्तम योग है। यह सब प्रकार सानिध्य और योगों को शक्ति देता है तथा इसको किसी अन्य के सहायता की आवश्यकता नहीं होती है। मुक्ति के लिए यह एक मात्र घोषित साधन है। यह किसके द्वारा प्राप्त हो? हे प्रिये! यह उनको ही प्राप्त होता है जो कि शिव की पूजा में रत हैं और जिनका आचरण प्रेम करने के योग्य है। ऐसा कहकर वृषध्वज शिवजी ने देवी पार्वती से विदा ले ली। उनके बाद फाटक पर शंकुकर्ण (एक विशेष गण) को नियुक्त करके वह समाधि में लीन हो गये। २६-२८।।

### शैलादि बोले

इसलिए हे योगीन्द्र! तुम भी योगाभ्यास में लीन हो जाओ। सर्वोच्च स्वामी निश्चित रूप से ब्रह्मय श्रेष्ठ मूर्ति हैं। अतः सब प्रकार से मुक्ति चाहने वाले बुद्धिमान व्यक्ति को भस्म लपेटे हुए उचित विधि से पाशुपत योग

ध्येया यथाक्रमेणैव वैष्णवी च ततः परा। माहेश्वरी परा पश्चात्सैव ध्येया यथाक्रमम्॥३१॥  
योगेश्वरस्य या निष्ठा सैषा संहृत्य वर्णिता॥३२॥

### सूत उवाच

एवं शिलादपुत्रेण नंदिना कुलनन्दिना। योगः पाशुपतः प्रोक्तो भस्मनिष्ठेन धीमता॥३३॥  
सनत्कुमारो भगवान्व्यासामिततेजसे। तस्मादहमपि श्रुत्वा नियोगात्सत्रिणामपि॥३४॥  
कृतकृत्योऽस्मि विप्रेभ्यो नमो यज्ञेभ्य एव च। नमः शिवाय शांताय व्यासाय मुनये नमः॥३५॥  
ग्रन्थैकादशसाहस्रं पुराणं लैंगमुत्तमम्। अष्टोत्तरशताध्यायमादिमांशमतः परम्॥३६॥  
षष्ठ्यत्वारिंशदध्यायं धर्मकामार्थमोक्षदम्। अथ ते मुनयः सर्वे नैमिषेयाः समाहिताः॥३७॥  
प्रणेमुर्देवमीशानं प्रीतिकंटकितत्वचः। शाखां पौराणिकीमेवं कृत्वैकादशिकां प्रभुः॥३८॥  
ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवानिदं वचनमब्रवीत्। लैंगमाद्यंतमखिलं यः पठेच्छृणुयादपि॥३९॥  
द्विजेभ्यः श्रावयेद्वापि स याति परमां गतिम्। तपसा चैव यज्ञेन दानेनाध्ययनेन च॥४०॥  
या गतिस्तस्य विपुला शास्त्रविद्या च वैदिकी। कर्मणा चापि मिश्रेण केवलं विद्ययापि वा॥४१॥  
निवृत्तिश्वास्य विप्रस्य भवेद्भक्तिश्च शाश्वती। मयि नारायणे देवे श्रद्धा चास्तु महात्मनः॥४२॥  
वंशस्य चाक्षया विद्या चाप्रमादश्च सर्वतः। इत्याज्ञा ब्रह्मणस्तस्मात्तस्य सर्वं महात्मनः॥४३॥

में लीन रहना चाहिये। विष्णु की शक्ति पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिये। उसके बाद महेश्वर की पराशक्ति का ध्यान करना चाहिये॥२९-३१॥ इस प्रकार योगेश्वर शिव के योग का दृढ़ अभ्यास क्रम एक योगी के लिए संक्षेप में मैंने वर्णन किया॥३२॥

### सूत बोले

इस प्रकार शैलादि के पुत्र बुद्धिमान भस्मधारी नन्दी ने पाशुपत योग को बताया। भगवान् सनत्कुमार ने तेजस्वी व्यास को यह पाशुपति योग बताया। मैंने इस योग को व्यास जी से सुना। उनके आदेश से मैंने उन ऋषियों को बताया जो कि सत्र को पूर करते हैं। मैं कृतज्ञ हूँ। ब्राह्मणों को नमस्कार। यज्ञों को नमस्कार। शान्त शिव के लिए नमस्कार और व्यास मुनि के लिए नमस्कार॥३३-३५॥ इस उत्तम लिंग पुराण में ग्यारह हजार श्लोक हैं। इसके प्रथम भाग में एक सौ आठ अध्याय हैं। दूसरे भाग में पचपन अध्याय हैं। यह धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष को देने वाला है। तब नैमिषारण्य के मुनि गण ने पूर्ण एकाग्र चित्त और मानसिक शुद्धि के साथ ईशान भगवान् को प्रसन्नता से रोमांचित होकर प्रणाम किया। पुराण की इस ग्यारहवी शाखा का निर्माण करके स्वयम् ब्रह्मा ने ये शब्द कहे “जो सम्पूर्ण लिंग पुराण को आदि से अन्त तक पढ़ता है, जो ब्राह्मणों को सुनाता है और जो इसको सुनता है, वह परम गति (मोक्ष) प्राप्त करता है। वह उस मोक्ष को प्राप्त करता है जो कि तपस्या के द्वारा, यज्ञ के द्वारा, दान के द्वारा और वेदों के अध्ययन के द्वारा प्राप्त होता है। उसको वैदिक शास्त्र विद्या से जो प्राप्त होता है, ब्रह्मण कर्म से, विद्या से या दोनों के मेल (मिश्रण) से, त्याग के संकाय को प्राप्त करेगा। उसकी भक्ति स्थायी होगी। उस महान आत्मा की मुझमें और भगवान नारायण में श्रद्धा होगी। उसके परिवार में

ऋषयः प्रोचुः

ऋषेः सूतस्य चास्माक्मेतेषामपि चास्य च। नारदस्य च या सिद्धिस्तीर्थयात्रारतस्य च॥४४॥

प्रीतिश्च विपुला यस्मादस्माकं रोमहर्षण॥४५॥

सा सदास्तु विरूपाक्षप्रसादात्तु समन्ततः। एवमुक्तेषु विप्रेषु नारदो भगवानपि॥४६॥

कराभ्यां सुशुभाग्राभ्यां सूतं पस्पर्शिवांस्त्वचि। स्वस्त्यस्तु सूत भद्रं ते महादेवे वृषध्वजे॥४७॥

श्रद्धा तवास्तु चास्माकं नमस्तस्मै शिवाय च॥४८॥

इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे यच्छ्यञ्चशतमोऽध्यायः॥५५॥

समाप्तं चैतल्लैंगोत्तरार्धम्॥

श्रीभवानीशंकरार्पणमस्तु ।

इति सटीकं श्रीलिङ्गमहापुराणं समाप्तम्।

विद्या का अध्ययन जारी रहेगा और चारों ओर वह चैतन्य (प्रमाद रहित) रहेगा। यह ब्रह्मा की आज्ञा है। अतः यह उनकी कृपा से यह सब प्राप्त हुआ है॥३६-४३॥

ऋषिगण बोले

हे रोमहर्षण! सूत ऋषि! हम ऋषियों ने सिद्धि प्राप्त की। नारद जो तीर्थ यात्रा में लगे हैं उन्होंने भी सिद्धि प्राप्त की। हमको अपार प्रसन्नता है। यह प्रसन्नता शिव की कृपा से चारों ओर विराजमान हो। जब ब्राह्मणों ने ऐसा कहा, तब भगवान नारद ने अपने पवित्र हाथों के अग्रभाग से सूत के शरीर का स्पर्श किया अर्थात् उनके शरीर पर हाथ फेरा और कहा “हे सूत! तुम्हारा कल्याण हो। वृषध्वज भगवान महादेव में तुम्हारी श्रद्धा रहे और हम लोगों की भी श्रद्धा रहे। उन शिव जी के लिए नमस्कार॥४४-४७॥”

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव के ध्यान की विधि  
नामक पचपनवाँ अध्याय समाप्त॥५५॥

श्रीलिंगमहापुराण का उत्तर भाग समाप्त हुआ।

यह श्री भवानीशंकर को अर्पण हो।

अनुवाद सहित लिंगमहापुराण समाप्त।

—\*—\*—\*

# कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ

अग्नि	अग्नि ४९ प्रकार के हैं। वे रुद्र के विविध रूप हैं। इनके नामों में मतभेद है।
अधृष्य	क्षति पहुँचाने को अयोग्य, साहसी।
अन्तराय	विघ्न।
अपरा विद्या	श्रौत और गृह्य सूत्रों में वर्णित धार्मिक कृत्यों का ज्ञान।
अरुणोद	यह मेरु के पश्चिम में स्थित है।
अर्धनारीश्वर	आधा भाग पुरुष और आधा भाग नारी का बना शिवजी का रूप।
अर्बुद	१० करोड़ की संख्या।
अवन्ती	आधुनिक उज्जैन।
अविद्या	पाँच पत्तों के विपर्यय का जाप। उसके ६२ उपविभाग होते हैं।
अविमुक्त	काशी, शिव का स्थायी निवास।
अविमुक्तेश्वर	वाराणसी में स्थापित प्रसिद्ध शिवलिंग उसके आस-पास का क्षेत्र अविमुक्तेश्वर क्षेत्र।
अश्वमेध यज्ञ	एक यज्ञ का नाम।
अष्ट लोकपाल	१ इन्द्र (पूर्व दिशा), अग्नि (अग्नि कोण), यम (दक्षिण दिशा) सूर्य (पश्चिम-दक्षिण कोण), वरुण (पश्चिम दिशा), वायु (वायव्य कोण), कुबेर (उत्तर), सोम (ईशान कोण)।
आग्नेय स्नान	भस्म स्नान। गाय के गोबर या लकड़ी की भस्म (राख) से स्नान। शरीर पर चुपड़ लेना।
आग्नीध	प्रियब्रत का ज्येष्ठ पुत्र।
आयाम	लम्बाई, विस्तार, प्रसार।
उत्तरायण	२२ दिसम्बर से २१ जून।
उद्धव	उत्पत्ति, प्रारम्भ।
उल्ल्वण	गाढ़ा, जमा हुआ, अधिक, स्पष्ट।
एकत्व	ब्रह्ममय होना।
एकार्णव	विश्व की उस स्थिति का प्रतीक है जब प्रलय काल में सब इकाईयाँ एक जलमय समूह में विलीन हो जाती हैं।
ओउम्	ब्रह्म का प्रतीक है। बाद में यह 'अ' (विष्णु), 'उ' (शिव) और 'म्' (ब्रह्मा) इन त्रित्व का प्रतिनिधि रूप माना गया। लिंगमहापुराण में 'अ' (ब्रह्मा), 'उ' (विष्णु) और 'म्' (शिव) में मान्य है।
कन्यस मार्ग	सुषुम्ना नाड़ी रूप मार्ग।
कर्णिकार	अमिलतास।
कला	तीस काष्ठा (कालमान)।

कल्प

चार युगों के चार हजार चक्रों का काल (पीरियड) या ब्रह्मा का एक दिन। इसके दो भाग होते हैं। परार्द्ध दो हजार चतुर्युग के। कल्प के पूरा होने पर विनाश अर्थात् प्रलय।

कालकूट

कालिंजर

काष्ठा

कुंड

कुंद

कुंभोदन

कुशस्थल

कूर्च

कृतयुग

कृष्णद्वैपायन व्यास

कौशिकी

क्रव्य

गंगाद्वार ( १ )

( २ )

गुह्यक

गेय

गोकर्ण

गोल

गोलाँगूल

चतुर्मुख

चतुर्व्यूह

चान्द्रायण

जंबू द्वीप

जाती

जीवात्मा

उत्तर प्रदेश में महोबा के पूर्व चित्रकूट के नीचे।

पन्द्रह निमेष (पलक झापकना) का काल।

पति के जीवित रहते उसकी पत्नी से उत्पन्न जारज संतान।

चमेली का एक भेद सफेद और कोमल फूल।

शिव के एक गण का नाम।

आनंदेश की राजधानी गुजरात में।

एक मुड़ी कुश जो रक्षा से बँधा हो।

सतयुग।

सत्यवती से उत्पन्न पराशर के पुत्र। महाभारत और पुराणों के संपादन और वेदों को चार भागों के व्यवस्थापन कर्ता। इनको महर्षि व्यास भी कहते हैं।

आधुनिक कोसी नदी जो हिमालय से निकलकर नेपाल और तिरहुत से बहती हुई पटना के पास गंगा में मिलती है।

पितरों के लिये भेंट।

आधुनिक हरद्वार। अन्य मत के अनुसार दक्षिण में त्र्यंबक के पास नासिक में।

हरद्वार, मोक्षद्वार, मायाद्वार।

एक अर्ध देव वर्ग जो कुबेर के अनुचर और उनके कोष के रक्षक होते हैं।

संगीत विज्ञान।

पश्चिमी घाट पर स्थित शिव का ज्योतिर्लिंग स्थान। दूसरा गोकर्ण नेपाल में वागमैती नदी के तट पर है।

वर्णसंकर।

लंगूर।

ब्रह्मा के पहले पाँच मुख थे। असत्य बोलने पर शिव जी ने इनके एक मुख को काट दिया। तब ब्रह्मा चतुर्मुख हो गये और चतुर्मुख कहे जाने लगे।

सर्वोच्च आत्मा का चार वर्ग। तैजस, विश्व, प्राज्ञ और तुरीय।

एक धार्मिक व्रत या प्रायशिच्छा। इसमें चन्द्रमा के क्षय और वृद्धि के अनुसार पूर्णमासी को १५ कौर और बाद में क्रम से अमावास्या तक १-१ कौर कम करके खाने का विधान है।

इसके ९ खंड हैं। इन्द्र द्वीप, कशेरुमान, ताम्रवर्ष, गभस्तिमान, नाग, सौम्य, गंधर्व, वरुण और भारत।

चमेली।

प्रत्येक शरीर में स्थित व्यक्तिगत आत्मा।

तल	एक विशेष प्रकार की माप। अँगूठा से मध्यमा डँगली तक।
तारा गति	इसको अंग्रेजी से स्टार स्पेस कहते हैं। यह १८०° का होता है।
तालुमुद्रा	खेचरीमुद्रा। २४ मुद्राओं (अँगुलियों की स्थिति) में से एक मुद्रा का नाम।
त्रिमया	ब्रह्मा, विष्णु और शिवमय एक रूप।
देव वर्ग	देवताओं के आठ वर्ग। आदित्य, विश्व, वासव, त्वष्टि, विश्व महर्षिक, साध्य, रुद्र, गणदेवता।
द्वादशाक्षर मंत्र	ॐ नमोभगवते वासुदेवाय।
द्विगुण	प्रकृति और पुरुष के रूप में।
द्वीप	(१) विश्व के विभाजन की सीमा के लिये द्वीप शब्द का पुराणों में प्रयोग किया जाता है, (२) दो नदियों के मध्य स्थित भूमि।
धातकी खेड	गोवी मरुस्थल के पश्चिम जापान में।
धारणा	योग का एक अंग।
नंदा	नंदा, अलखनंदा और भागीरथी ये गंगा की तीन शाखायें गढ़वाल में हैं।
नवब्रह्मा	मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु, दक्ष, अत्रि, वसिष्ठ।
नारद	ब्रह्म के मानस पुत्र और एक दिव्य मुनि।
निष्क	स्वर्ण मुद्रा, १६ मासा के तोल के बराबर, १०८ कर्ष के बराबर सोना।
नैमिष	उत्तर प्रदेश के सीतापुर जिले में स्थित वर्तमान नीमसार। यह गोमती नदी के तट पर स्थित है। प्राचीन काल में ऋषियों की प्रसिद्ध तपोभूमि।
पंचगव्य	गाय का दूध, दही, घी, मूत्र और गोबर का मिश्रण (घोल)
पंचनद	पाँच नदियाँ—जटोदका, त्रिस्रोता, वृषद्वती, स्वर्गोदका और जंबू नदी।
पंचमहायज्ञ	ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और नृयज्ञ (अतिथि पूजन)।
पंचरात्र	वैष्णव सम्प्रदाय के पवित्र ग्रंथ का नाम।
पंचाक्षर मंत्र	ऊँ नमः शिवाय।
पंद्रह मुहूर्त	१ दिन।
पंद्रह मुहूर्त	१ रात्रि।
पराविद्या	ब्रह्मविद्या।
परिधा	लोहे की गदा।
पल	समय मापने का मान।
पुरुष	प्रकृति के कार्य के २६ तत्त्व।
पुष्कर तीर्थ	अजमेर के पास।
प्रजा	सन्तान, जनता, सृष्टि।
प्रत्यान्त	म्लेक्ष देश।
प्रत्याहार	योग का एक अंग।
प्रधान	भौतिक जगत का मूल स्रोत।
प्रभास तीर्थ	काठियावाड़ के दक्षिण सौराष्ट्र में।

प्रभिति	चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय समुद्रगुप्त का पुत्र।
प्राजापात्य	यह एक धार्मिक व्रत या तप है। इसमें ३ दिन प्रातःकाल भोजन करने, तीन दिन सायंकाल भोजन करने और इसके बाद ३ दिन भोजन न करने का विधान है।
प्रियब्रत	स्वयंभुव मनु और शतरूपा का पुत्र।
बाणविग्रह	बाणलिंग (बाण असुर द्वारा पूजित लिंग)।
बालघी	मूर्ख।
ब्रह्मकूर्च	गोमूत्र, पंचगव्य।
भार	एक विशेष प्रकार की तौल जो २० तल के बराबर होती है। २ तल = १ प्रसृत २ प्रसृत = १ कुडव २ कुडव = १ प्रस्थ २ प्रस्थ = १ आढक २ आढक = १ शिव २ शिव = १ द्रोण २ द्रोण = १ खारी ३ खारी = १ भार ९ भार = १ आचित
भारत	(१) ऋषभ के ज्येष्ठ पुत्र और नाभि के पौत्र भरत के नाम पर भारतवर्ष का नाम भारत पड़ा। इसका पूर्व नाम हिमवर्ष या हैमवत वर्ष था, (२) भरत मनु का नाम था। उससे भारत नाम इस देश का पड़ा।
भुशुंडी	एक प्रकार का अस्त्र।
भूतवन	शिव का बन।
भृगुतंग	हिमालय की एक छोटी का नाम।
मधुपर्क	मधु, धी, चीनी और दही का मिश्रण (धोल)।
मधुरा	शिव की माया की शक्ति।
मन्वन्तर	लगभग ७१ महायुगों के बराबर या देवों के बारह हजार वर्ष के बराबर होता है। १४ मन्वन्तर होते हैं।
महाप्राज्ञ	सर्वाधिक बुद्धिमान। व्यास तथा अन्य के लिये प्रयुक्त।
मात्रा	(१) पलक उठने और गिरने (झपकने) तक के काल को मात्रा कहते हैं, (२) शब्द के अक्षर में हस्त, दीर्घ और प्लुत तीन प्रकार की मात्राएँ होती हैं। तीस कला (कालमान)।
मुहूर्त	चतुर्व्यूह मूर्ति (वामदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध)।
मूर्तिभेद	पृथ्वी के मध्य भाग में स्थित चारों ओर फैला हुआ पर्वत का नाम। इसको सुमेरु, हेमाद्रि और रत्नसानु भी कहते हैं।
मेरु	

मैथुन	इसके ८ अंग होते हैं। स्मरण, कीर्तन, केलि, प्रेक्षण, गुह्य भाषण, संकल्प, अध्यवसाय और क्रियानिवृत्ति। इसके विपरीत आचरण ब्रह्मचर्य है।
म्लेच्छ	जंगली बर्बर जाति हूण आदि।
यक्ष	यक्ष के रूप में शिवजी ने अपना दुर्जेय रूप धारण किया था।
यक्ष लोक	कुबेर का लोक जिसकी राजधानी अलका है।
युगांतिक	युग के अन्त होने पर।
योग	जीव द्वारा सब विषयों के ज्ञान की प्राप्ति को योग कहते हैं। पतंजलि के अनुसार चित्तवृत्ति के निरोध का नाम योग है।
योगांग	योग के ८ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि होते हैं।
योनि परित्याग	जन्म और मृत्यु के बन्धन से मुक्ति।
रुद्र	शिव के अर्धनारीश्वर के पुरुष भाग से उत्पन्न ११ रुद्र हैं। उनके नामों में पुराणों में मतभेद हैं।
रुद्र गायत्री	तत्पुरुषाय धीमहि तत्रो रुद्रः प्रचोदयात्।
रुद्रेण	रुद्राध्याय का रुद्रमन्त्र (शतरुद्र)।
रैवतक	द्वारका के पास का एक पर्वत रैवत या रैवतक।
लोमहर्षण/रोमहर्षण	व्यास के पाँच शिष्यों में से एक शिष्य। पौराणिक परम्परा के संरक्षण का दायित्व इन पर था। इनको सूत कहा जाता है किन्तु ये ब्राह्मण थे।
बराह	विष्णु का बराह अवतार। उन्होंने एकार्णव सागर की गहराई में ढूबी पृथ्वी को अपने वक्र दंष्ट्रा पर रखकर ऊपर लाकर उसको पूर्ववत् स्थापित किया था।
वर्धनी	यज्ञ का एक पात्र।
वसु	देवों का एक वर्ग। ये ८ हैं। आप (जल), ध्रुव, सोम, धरा, अनिल, अनल, प्रभास, प्रत्यूष।
वामदेव	शिव के पाँच रूपों में से एक ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात। ये रूप आकाश, वायु, अग्नि, जल और भूमि का प्रतिनिधित्व करते हैं।
वाराणसी	पुरानी काशी। बरना और असी नदियों के बीच स्थित होने के कारण इसका नाम वाराणसी है।
वालखिल्य	एक ऋषि वर्ग। इनकी संख्या साठ हजार कही गई है। ये ब्रह्मा के पुत्र कहे गये हैं।
विज्ञानम्	माया।
वितस्ति	१२ अंगुल की माप।
विश्व	चौदह लोकों का विश्व (जगत) है। इसमें ७ लोक भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यं पृथ्वी के ऊपर हैं। अतल, वितल, सुतल, रसातल, तल, तलातल और पाताल ये नीचे के सात लोक हैं।
विश्वकर्मा	प्रभास नामक वसु से उसकी भार्या योगसिद्धि से उत्पन्न पुत्र। प्रख्यात इंजीनियर (भवनों और नगरों आदि के निर्माता)।

विश्वगौ	प्रकृति या पुरुष का तथा इस जगत के स्रोत रूप ३२ गुणों से युक्त गो रूप में वर्णित।
शंकु	कील (लकड़ी या लोहे की)।
शिव वन	हिमालय पर स्थित वह वन जहाँ शिव जी के पुत्र कातिकिय का जन्म हुआ था।
शिव नाम	शिव के प्रसिद्ध ८ नाम—हर, महेश्वर, शंभु, शूलपाणि, पिनाकधृक्, शिव, पशुपति, महादेव।
श्रद्धा	शिव की प्रथम पत्नी का नाम। सती पत्नी जो बाद में दक्ष की पुत्री हुई। तृतीय जन्म में वह पर्वती (उमा) हुई।
श्रावक	बौद्ध भिक्षु, बौद्धभक्त, श्रोता।
श्री पर्वत/श्री शैव	कृष्णा नदी के पास दक्षिण में।
श्वेत द्वीप	एक द्वीप का नाम (ब्रिटेन)।
षट्ट्रिंसन्मात्रा	मात्रा अर्थात् सोने के ३६ टुकड़े।
षड्ज (१)	संगीत के सात स्वर में एक स्वर। गान्धार, मध्यम, निषाद आदि नाम अन्य स्वरों के हैं।
(२)	स्वर, कल्प, मूर्छना, ताल, वर्ण, लय, अंगना।
सप्ततन्तु	एक प्रकार का यज्ञ।
सकल	(१) सृष्टि, पालक, संहार के समष्टि रूप, (२) लिंग की आकृति में विद्यमान शिव।
सगर्भ	कुंभक प्राणायाम का एक प्रकार।
सप्तधा	सात तत्त्वों (बुद्धि, अहंकार, ५ तन्मात्रा) का समूह।
सप्तर्षि	मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु और वसिष्ठ।
सप्त सागर	लवण, इक्षुरस, सुरा, घृत, दधि, क्षीर और जल।
सप्त द्वीप	शाल्मलि, कुश, जंबू, प्लक्ष, क्रौंच, शक और पुष्कर।
समाधि	योग की अन्तिम स्थिति।
सिद्ध	परम विशुद्ध मानव वर्ग। वे सात हैं—मन्त्रज्ञ, मन्त्रविद आदि।
सुव्रत	पवित्र धार्मिक व्रत (कृत्य) करने वाला।
सुषिर	छिद्र।
सोम	(१) उमा सहित, (२) चन्द्रमा।
स्थानेश्वर	हरियाणा प्रदेश में कुरुक्षेत्र के पास वर्तमान थानेसर।
स्वस्तिक	योग साधना में योगी का एक आसन। यह बैठनेका आसन ८ प्रकार का है—स्वस्तिक, पद्म, अर्धेन्दु, वीर, योग, प्रसाधित, पर्यंक, यथेष्ट।
हलाहल	देवों के लिये भेंट।
हव्य	भारत की उत्तर सीमा पर पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ हिमालय पर्वत।
हिमवत्	ब्रह्मा।
हिरण्यगर्भ	

॥ ॥ ॥

**श्रीलिङ्गमहापुराण  
के  
उलोकों की अनुक्रमणी  
(अनुक्रमणी की उपयोग की विधि सहित)**

॥ ॥ ॥

## अनुक्रमणी की उपयोग की विधि

यह अनुक्रमणिका लिंगमहापुराण के सब श्लोकों के आरम्भ अंश को लेकर संस्कृत के कोश की भाँति अनुवर्ण क्रम से बनाई गई है। यह महापुराण दो भागों में है। पूर्व भाग में १०८ और उत्तर भाग में ५५ अध्याय है। प्रत्येक श्लोक के आरम्भ अंश के सामने दी गई संख्या है। प्रत्येक श्लोक के आरम्भ अंश के सामने दी गई संख्याओं में प्रथम संख्या भाग को, दूसरी संख्या अध्याय को और तीसरी संख्या उस अध्याय के श्लोक क्रमांक को सूचित करती है। जैसे अनुक्रमणी का प्रथम श्लोक 'अंकितं कुसुमादै' के सामने १.७१.१२६ की संख्या सूचित करती है कि यह श्लोक लिंगमहापुराण के पूर्वभाग के ७१वें अध्याय का १२६वाँ श्लोक है।

संस्कृत भाषा के कोश में अ से ह तक वर्ण या अक्षर होते हैं। उनमें क्रमशः अनुस्वार, विसर्ग तथा व्यंजन वर्णों में अ से औ तक मात्राएँ लगाई जाती हैं। जैसे कं कः क कि की कु कू कृ के कै को कौ क्।

हलन्त में फिर व्यंजन जोड़े जाते हैं। जैसे क्क, क्ख आदि। इसी क्रम में क् + ष = क्ष, त् + र = त्र और ज् + झ = झ बनता है। अतः क्ष से प्रारम्भ होने वाले श्लोक को क हलन्त में अर्थात् कौ के बाद, झ को ज अक्षर में और त्र को त अक्षर में हलन्त में तौ के बाद देखना चाहिये। क्ष, त्र और झ संस्कृत भाषा में स्वतन्त्र अक्षर नहीं माने जाते।

इस महापुराण में जो अक्षर मात्रा सहित और संयुक्त अक्षर आरम्भ में आये हैं उनको खोजने की सुविधा के लिये सूची पृष्ठ संख्या सहित नीचे दी गई है।

### अनुवर्ण क्रम से पृष्ठ संख्या

अक्षर	पृष्ठ	अक्षर	पृष्ठ	अक्षर	पृष्ठ
अ	८५१	कि	८६७	ग	८६९
आ	८५७	की	८६७	गा	८६९
इ	८५९	कु	८६७	गि	८६९
ई	८६०	कू	८६७	गी	८६९
उ	८६०	कृ	८६७	गु	८६९
ऊ	८६१	के	८६८	गृ	८७१
ऋ	८६१	कै	८६८	गे	८७१
ए	८६२	को	८६८	गो	८७१
ऐ	८६४	कौ	८६८	गौ	८७१
ओ	८६४	क्र	८६९	ग्र	८७१
औ	८६५	व	८६९	घ	८७१
क	८६५	क्ष	८६९	च	८७१
का	८६६	ख	८६९	चा	८७२

अक्षर	पृष्ठ	अक्षर	पृष्ठ	अक्षर	पृष्ठ
चि	८७२	दी	८८४	पी	८९३
ची	८७२	दु	८८४	पु	८९३
चू	८७२	दू	८८४	पू	८९४
चे	८७२	दृ	८८५	पृ	८९५
चै	८७२	दे	८८५	पै	८९५
छ	८७२	दै	८८६	पौ	८९५
ज	८७२	दो	८८६	प्र	८९५
जा	८७३	दौ	८८६	प्रा	८९७
जि	८७३	द्य	८८६	प्रि-प्रो	८९७
जी	८७३	द्र	८८६	प्ल	८९७
जु	८७४	द्व	८८६	फ	८९८
जै-जै	८७४	ध	८८६	ब	८९८
ज्ञ	८७४	धा	८८७	बा	८९८
ज्य	८७४	धि	८८७	बि	८९८
ज्व	८७४	धु	८८७	बी	८९८
झ	८७४	धू	८८७	बु	८९८
ट	८७४	धृ	८८७	बौ	८९८
त	८७४	धे	८८७	ब्र	८९८
ता	८८०	धै	८८७	भ	८९९
ति	८८१	ध्या	८८७	भा	९००
ती	८८१	ध्र	८८७	भि	९००
तु	८८१	न	८८७	भी	९०१
तृ	८८१	ना	८८९	भु	९०१
तै	८८१	नि	८८९	भू	९०१
तौ	८८२	नी	८९०	भृ	९०१
त्य	८८२	नू	८९०	भे	९०१
त्र	८८२	नृ	८९०	भै	९०१
त्व	८८२	ने	८९१	भो	९०१
द	८८२	न्य	८९१	भ्र	९०१
दा	८८३	प	८९१	म	९०१
दि	८८४	पा	८९१	मा	९०४
	८८४	पि	८९२	मि	९०४
			८९३	मी	९०४

## अनुक्रमणी की उपयोग की विधि

अक्षर	पृष्ठ	अक्षर	पृष्ठ
म	१०४	वि	११२
म	१०५	वी	११४
म	१०५	वृ	११४
म	१०५	वे	११५
म	१०५	वै	११५
म	१०५	वौ	११५
म	१०५	व्य	११६
म	१०५	ब्र	११६
म	१०७	श	११६
म	१०७	शा	११७
म	१०८	शि	११७
म	१०८	शु	११७
म	१०८	शू	११८
म	१०८	शै	११८
म	१०९	शौ	११८
म	१०९	शौ-इम	११८
म	११०	श्य	११८
म	११०	ऋ	११९
म	११०	श्व	११९
म	११०	ष	११९
म	११०	स	१२४
म	११२	सि	१२५
			१२५
			१२६
			१२६
			१२६
			१२६
			१२६
			१२७
			१२७
			१२७
			१२७
			१२७
			१२७
			१२७
			१२८
			१२८
			१२८
			१२९
			१२९
			१२९
			१२९
			१२९
			१२९
			१२९

# श्रीलिङ्गमहापुराण के श्लोकों की अनुक्रमणी

श्लोकारम्भ	भा. अ. श्लो.	अंबरीष इति ख्यातो	२.५.२१	अग्नये रुद्ररूपाय	१.१८.३
अ		अंबरीषश्च मद्भृत्.	२.५.१४३	अग्नयो नैव दीप्यंति	१.१००.१०
अंकितं कुसुमाद्यैश्च	१.७१.१२६	अंबरीषश्च राजासौ	२.५.१५३	अग्निकार्यं च यः कृत्वा	१.३४.४
अंगं प्रविन्यसेच्चैव	२.२२.४२	अंबरीषस्य दायादो	१.६५.४०	अग्निकार्यमध्यः शाय्यां	१.८३.१३
अंगन्यासं ततः पश्चा.	१.८५.५८	अंबरीषस्य पुत्रस्य	२.५.१४६	अग्निज्वालो महाज्वालः	१.६५.१०४
अंगन्यासं न्यसेत्पश्चा.	१.८५.६४	अंबरीषेण वै पुष्टो	२.४.३	अग्निप्रवेशं कुरुते	१.९१.३४
अंगसूत्राणि संगृहा	२.२७.१६	अंबरीषो महातेजाः	२.५.५१	अग्निमाविशाते रात्रौ	१.५९.१५
अंगानां च तथैकैकं	२.२२.७६	अंबायाः परमेशाय	२.१०४.२४	अग्निरिद्रिस्तथा विष्णु	१.८६.७९
अंगारसदृशी नारी	१.८.२३	अंभसां पतये चैव	१.२१.२४	अग्निरित्यादिना भस्म	२.२६.२
अंगिरामुनिरात्रेयो	१.१८.१०८	अंशाकः षट्शतं तस्मात्	१.४.७	अग्निवर्णाय रौद्राय	१.७२.१२६
अंगुलीजपसंख्यान.	१.८५.१०९	अंशुर्भगश्च द्वावेतौ	१.५५.५९	अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य	२.५४.१८
अंगुलीनां च सर्वेषां	१.८५.६८	अंशुर्विवस्वांस्त्वष्टा च	१.५९.३२	अग्निहोत्रं गृहे येषां	२.६.२७
अंगुल्यग्रनिधातेन	१.९.४१	अकंपितो गुणग्राही	१.९८.१४३	अग्निहोत्रं च वेदाश्च	२.२१.७९
अंगुल्यग्रेण वै धीमा.	१.२६.१३	अकस्माच्च भवेत्थूलो	१.९१.६	अग्निहोत्रेपिति तेन	२.१२.५
अंगुष्ठं मोक्षदं विद्या.	१.८५.११४	अकारणजगत्सृष्टि	१.९१.४८	अग्नेरपां च संयोगा	१.८९.६०
अंगुष्ठतर्जन्याग्राभ्यां	१.८५.७८	अकारस्त्वेष भूलोकं	१.९१.५४	अग्नौ च नामाभिर्देवं	१.९८.२६
अंगुष्ठमात्रं सुशुभं	१.३१.१२	अकारोकारमकारं	१.१.२०	अग्नौ न तापयेत्यादौ	१.८५.१५०
अंगुष्ठमात्रौ तु कुशी	२.२५.२१	अकारोकारमकारा	१.८५.४५	अग्न्याभ्यासे जले वापि	१.८.७९
अंगुष्ठेन विना कर्म	१.८५.११६	अकारो हृक्षरो ज्ञेय.	१.९१०५३	अग्रतः पृष्ठतो वापि	१.९१.७
अंजनी मोहिनी माया	२.२७.१५८	अकालिके त्वधर्मे च	१.९८.१७६	अग्रतस्तु तमोमूर्ति	१.७७.७८
अंडं दशगुणेनैव	१.३.३०	अकोमलाः स्थिरा विप्र	२.२५.४८	अग्रे मूले च मध्ये च	२.२८.३२
अंडाज्ज्ञे स एवेशः	१.७०.६२	अक्रूरं हिंसयामास	१.६६.७३	अग्रे सर्सर्जं वै ब्रह्मा	१.७०.१७०
अंडानां कोटयश्चैव	१.३६.६०	अक्रोधो गुरुशुश्रूषां	१.८९.२५	अग्रे सामान्यार्थ्यपात्रं	२.२४.२०
अंडोद्धवत्वं शर्वस्य	१.२.७	अक्षः सहैकचक्रेण	१.५५.७	अग्रे सुराणां च गणेश्वराणां	१.७२.५२
अंतं गंतुं न शक्ताःस्म	१.३२.१६	अक्षत्रियाश्च राजानो	१.४०.१२	अघृणेनैव कर्तव्यो	२.५०.१२
अंतःस्थं च बहिःस्थं चं	२.१२.३०	अक्षपादः कुमारश्च	१.२४.१२३	अघोरं च तथेशानं	१.११.२
अंतःस्थश्च बहिःस्थश्च	२.१२.३३	अक्षयश्चाव्यव्यश्चैव	१.४३.२७	अघोरं त ततो ब्रह्मा	१.१४.८
अंतर्यामीति देवेषु	२.१०.९	अक्षरं च क्षरं चाहं	२.१७.१७	अघोरं दक्षिणे पत्रे	२.२.११०
अंतर्बलिं च कुंडस्य	२.२६.२३	अक्षरप्रातिलोम्येन	१.८५.२१०	अघोरं पञ्चवधा कृत्वा	२.२६.१
अंतर्यामीति देहेषु	२.१०.१३	अक्षरांतरनिष्ठंदाद्	१.२१.७७	अघोरमष्टधा कृत्वा	२.२१.२२
अंतर्यामी परः कैश्चित्	२.१६.१४	अंगंधरसरूपस्तु	१.८८.२६	अघोररूपाय विकटाय	१.९५.५०
अंधकात्काश्यदुहिता	१.६९.३२	अगच्छद्यत्र सोनंतो	१.२०.३५	अघोरहृदयं हृदयं	१.१७.९०
अंधकारस्य कथितो	१.४६.३३	अगस्त्यश्च वसिष्ठश्च	१.८५.६५	अघोराख्यां तृतीया च	२.१४.८
अंधको नाम दैत्येन्द्रो	१.९३.१	अगस्त्याकादियो वापि	२.६.४७	अघोराय नमस्तुभ्यं	१.७२.१४२
अंधा बाह्यासिनी बाला	२.२७.२०९	अगुणं ध्रुवमक्षयं	१.३.३	अघोरेण फडंतेन	२.२१.७०
अंब मंगलविभूषणैर्विना	१.६४.६२	अगृहणाद्वांशकर्तारं	१.६६.१७	अघोरेण यथान्याय.	२.२१.३८
अंबरीषं समासाद्य	२.५.१३४	अग्न आयूषि पवस	२.२८.५९	अघोरेणांगयुक्तेन	२.४९.२

अघोरेभ्यः प्रशांतहृदयाय	२.२६.७	अतस्तत्र पठेद्विद्वा.	१.९६.१२७	अथ ते संप्रवक्ष्यामि	२.२३.१
अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो	२.२६.६	अतस्त्वमुग्रकलया	१.९६.५७	अथ ते संप्रवक्ष्यामि	२.३५.१
अघोरेभ्योऽथ घोरभ्यो	२.२७.२३८	अताडयच्च राजेद्रं	१.३५.२९	अथ दृष्ट्वा कलावर्ण.	१.१७.८९
अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्या	२.४९.१	अतिथिः श्रोत्रियो बापि	२.६.४१	अथ दृष्ट्वा परा नार्यः	१.२९.१५
अघोरेशस्य माहात्म्यं	२.४९.१	अतिसूक्ष्मं महार्थं च	१.८५.३२	अथ देवो महादेवः	१.४३.४९
अघोरोपि महादेव.	२.१४.१३	अतीतानागताः सर्वे	१.६३.४८	अथ दैत्यवधं चक्रे	१.६९.८०
अचले कारयेत्सर्वं	२.४८.३९	अतीतानि च कल्पानि	१.७०.११४	अथ द्वादशवर्षं वा	१.८०.५०
अचेतनां सर्वगता	१.८८.४२	अतीतान्यप्यसंख्यानि	२.१०.४६	अथ नंदं च नंदार्थीं	२.२७.६२
अचेतनाय चित्याय	१.१८.१२	अतीताय भविष्याय	१.२१.३४	अथ नाभ्यंबुजे विष्णो	१.६४.१७
अज हरिं च मां वापि	१.१०५.२७	अतीता वर्तमानाश्च	१.७०.१११	अथ निरीक्ष्य सुरेश्वरमीश्वरं	१.७२.९९
अजः मुत्रो रघोश्चापि	१.६६.३४	अतीतैस्तु सहैतानि	१.६१.१५	अथ प्रसूतिमिच्छन्वै	१.६८.२३
अजवक्त्रो हयवक्त्रो	१.७२.८२	अतीव दुर्जये प्राप्ते	२.५०.११	अथ प्राथमिकस्येह	१.४.१
अजश्चैव महातेजा	१.२३.४५	अतीव भवभक्तानां	१.३०.१३	अथ ब्रह्मादयः सर्वे	१.९६.९९
अजातशत्रुरालोकः	१.९८.४३	अतीव भोगदो देवि	१.८५.६३	अथ ब्रह्मा महादेव.	१.१०३.१
अजामेकां लोहितां		अतीव स्नेहसंयुक्तं	२.३.३३	अथ भीमरथस्यासतीत्	१.६८.४४
शुक्लकृष्णां	१.१६.३५	अतुलमिह महाभयप्रणाशहेतुं	१.३३.१३	अथ महेद्रविरिचिविभावसु.	१.७२.९४
अजाश्वमेषोष्ट्खरान्	१.६३.३२	अतो धूमाग्निवातानां	१.५४.३९	अथ रुद्रस्य देवस्य	१.७२.१
अजाश्वानखरोष्ट्खाणां	१.८५.१५३	अतो मां शरणं प्राप्य	१.९६.३४	अथ रुद्रो महादेवो	२.२०.१
अजितश्चैव शुक्रश्च	१.७९.२८१	अत्यंतघोरं भगवान्	१.९६.२४	अथर्वणोहं मन्त्रोहं	२.१७.१६
अजेशः क्षेमरुद्रश्च	२.२७.१०७	अत्यंतनिर्मले सम्यक्	१.८.८३	अथर्वणोहं मंत्रं	१.१७.८५
अज्ञानाद्यादि विज्ञानां	१.३१.४३	अत्यंतावनतौ दृष्ट्वा	१.२२.१	अथर्वशीर्षः सामास्य	१.६५.११३
अटित्वा विविधाल्लोकान्	१.२०.२३	अत्यंतोत्साहयुक्तस्य	१.९.१३	अथर्वास्त्रं तदा तस्य	१.१०७.४९
अदृहासप्रियाश्चैव	१.२४.९६	अत्याश्रममिदं ज्ञेयं	२.५५.२७	अथवा देवमीशानं	२.२६.१
अणवे महते चैव	१.२१.२९	अत्युग्रं कालकूटाख्यं	१.८६.६	अथवा पञ्च कुण्डेषु	२.४८.४२
अणिमादिगणैश्वर्यं	१.६४.१००	अत्र गच्छन्ति निधनं	१.६०.१०	अथवा पूजयेच्छंभुं	१.८९.१०
अणिमाद्यं तथा व्यक्तं	१.८८.१६	अत्रान्योत्पातभूकंपं	१.९६.१२६	अथवा भास्करं चेष्ट्वा	२.२२.२९
अणिमा लघिमा चैव	१.८८.९	अत्रापि स्वयमेवाहं	१.९२.७०	अथवा मध्यतो द्वीपं	२.३२.५
अणिमाव्यूहमावेष्ट्य	२.२७.९८	अत्रेभायनिसूया वै	१.५.४६	अथवा मिश्रमार्गेण.	२.२८.२६
अणोस्तु विषयत्यागः	१.६.२३	अत्र गाथा महाराजा	१.६७.१५	अथवा योगामार्गेण	२.२०.४३
अत ऊर्ध्वं गृहस्थेषु	१.८९.१५	अथ चेल्लुप्तधर्मा तु	१.८८.४७	अथवारिष्टमालोक्य	१.९१.७३
अत ऊर्ध्वं निबोधध्वं	१.६३.८९	अथ जाम्बूनदमयै	१.८०.१३	अथवा विष्णुमतुलं	२.४८.२८
अत ऊर्ध्वं पुनश्चापि	१.८९.१६	अथ तस्मिन्देवं	१.६४.९२	अथवा शिवकुंभे च	२.४७.३६
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि	१.८८.२	अथ तस्य वचः श्रुत्वा	१.७१.४५	अथवा सक्तचित्तश्चे.	१.८१.५२
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि	१.८९.१	अथ तस्य विमानस्य	१.८०.४४	अथवा ह्येकमासं वा	१.८१.५१
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि	१.९०.१	अथ तस्यास्तदालापं	१.६४.५९	अथ विभाति विभो	
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि	१.९१.१	अथ तस्यैवमनिशं	१.४२.२	विशदं वपु.	१.७२.९०
अतः परं प्रवक्ष्यामि	१.७६.१	अथ तामाह देवेशो	१.१३.१०	अथ विभ्रम्य पक्षाभ्यां	१.९६.७१
अतः परं प्रवक्ष्यामि	१.८५.८३	अथ तामुद्धतां तेन	१.१४.२०	अथ शृणु भगवंस्तव-	
अतः परमिदं क्षेत्रं	१.९२.४५	अथ तेषां प्रसन्नोभूद्	१.१०२.५३	च्छलेन	१.१०४.२८

अथ शैलसुता देवी	१.१०२.२३	अद्विः संप्रोक्ष्य पश्चाद्वि	२.३०.३	अनंतेशादयस्त्वेवं	१.५०.१९
अथ संप्रोक्षयेत्पश्चाद्	१.२७.१८	अद्विर्दशगुणाभिस्तु	१.७०.५४	अनंतेशादिदेवांश्च	२.४७.४०
अथ सज्ज्यं धनुः कृत्वा	१.७२.१०१	अद्विर्विविधमाल्यैश्च	१.३१.३२	अनधाय विरिचाय	१.१०४.८
अथ समरतैः सदा समता.	१.७१.३७	अद्यप्रभृति सर्वेषः	१.२०.५६	अनन्या सा गतिस्तत्र	१.९२.७९
अथ सा तस्य वचनं	१.१०६.१०	अद्यापि च विनिर्मग्नो	२.६.८१	अनपत्यः क्रतुस्तस्मिन्	१.६३.६८
अथ स्नानविधि वक्ष्ये	१.२५.६	अद्यापि न निवर्तते	१.६३.७	अनपावृतमद्वैतं	१.८६.५८
अथांतरिक्षे विपुला	२.४६.१२	अद्राक्षं तं नृपं तत्र	२.३.५०	अनध्यर्च्य महादेवं	२.६.४३
अथांभसा प्लुतां भूमि	१.३८.७	अद्रिराजालयः कांतः	१.९८.६२	अनध्वे विद्युतं पश्ये.	१.९१.१०
अथाजां प्रददौ तेषां.	१.४४.४६	अधः पात्रं सहस्रेण	२.२९.२	अनमित्रसुतो निघो	१.६९.१२
अथातः संप्रवक्ष्यामि	२.३७.१	अधः सप्ततलानां तु	१.५३.४४	अनया देवदेवोसौ	१.७०.३४५
अथादितिदितिः साक्षा.	१.१०३.४	अधरोऽनुत्तरो ज्ञेयो	१.९८.११०	अनयोरेकमुदिश्य	२.५.९६
अथानेनैव कर्मात्मा	१.७५.१२	अधर्म च महातेजा	२.६.५	अनयोर्य वरं भद्रे	२.५.९१
अथान्यं पर्वतं सूक्ष्म.	२.३१.१	अधर्मश्चानिष्टफलो	१.१०.१४	अनागतेषु तद्वच्च	१.४०.९६
अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि	२.३३.१	अधर्मस्तमसो जशे	१.७०.२६५	अनाच्छाद्य द्विजः कुर्या.	१.५४.४३
अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि	२.४४.१	अधर्माभिनिवेशित्वात्	१.४०.४४	अनात्मन्यात्मविज्ञान.	१.९.८
अथान्यो ब्रह्मणः कल्पो	१.१६.१	अधश्च धर्मो देवेश	१.३६.१४	अनादानं परस्वाना.	१.८.१५
अथापरो ब्रह्मवरात्मजो हि	२.५.८७	अधस्तादत्र चैतेषां	१.४५.९	अनादित्वाच्च पूर्वत्वात्	१.७०.१०४
अथापश्यन्महातेजाः	१.१४.४	अधारणे महत्वे च	१.१०.१३	अनादिनिधनो धाता	२.९.१३
अथार्चिततया ख्यात.	२.१४.२८	अधितिष्ठति योनि यो	२.१८.२९	अनादिमध्यनिधनो	१.९८.३७
अथार्धमात्रां कल्पाणी	१.४१.११	अधिष्ठानं महामेरु.	१.७२.७	अनादिरेष संबंधो	२.९.४८
अथाल्पकृष्टाश्चानुपां	१.३९.४०	अधिष्ठिता सा हि महेश्वरेण	१.७०.८३	अनादिमन्त्रबंधः स्यात्	१.८८.६६
अथाशेषासुरांस्तस्य	१.९३.११	अधुना संप्रवक्ष्यामि	२.३०.१	अनादृत्य कृतिं ज्ञात्वा	१.९९.१६
अथाह भगवान् ब्रह्मा	१.७२.१०५	अधृतः स्वधृतः साध्यः	१.९८.१४५	अनाद्यन्तमजं सूक्ष्मं	१.७०.६
अथाह भगवान् रुद्रो	१.७२.३४	अधृष्यं सर्वभूतानां	१.७०.१२६	अनामया ह्यशोकाश्च	१.५२.३४
अथाहार्धेन्दुतिलकः	१.१०३.७३	अधोदृष्ट्या वितस्त्यां तु	१.८६.६२	अनावृष्ट्या हते लोके	१.६३.८१
अथैनमवमन्यते	१.८९.१३	अध्यापनं चाध्ययनं	१.१०५.१७	अनासनः शयानो वा	१.८५.१६१
अथैवं ते तदा दग्धा	१.७१.३९	अध्यापयामास च तां	१.९५.११	अनिरुद्ध्य विचिष्टेद्यः	१.९.५७
अथोधौ चंदनचर्चि.	२.२४.२	अध्यायनीं च कौबेर्या.	२.१९.१६	अनिर्विणो गुणाग्राही	१.९८.१४९
अथोवाच महादेवः	१.१९.१	अध्रुवेण शरीरेण	१.१०८.१८	अनुगम्य च वै स्नात्वा	१.८९.८९
अदितिः सुषुवे पुत्र.	१.६५.२	अनंतः कुलिकश्चैव	१.८२.५४	अनुगृह्य गणत्वं च	१.९२.१८८
अदितिश्च दितिश्चैव	१.६३.२३	अनंतकात्सुतो यज्ञो	१.६८.२७	अनुगृह्य तदा देवी	१.१०२.१२
अदृश्यंतीं पुनः प्राह	१.६४.६५	अनंतदृष्टिरानन्दो	१.९८.५७	अनुगृह्यस्ततस्तुष्टो	१.१५.२
अदृश्यंतीं महाभागां	१.६४.१०१	अनंतपादस्त्वमनंतबाहु.	१.७२.१५७	अनुगृहो ततो दद्या.	१.८५.९५
अदृश्यंतीं वसिष्ठं च	१.६४.७५	अनंताद्या महानागा:	१.७४.५	अनुग्रहो मया ह्येवं	१.९२.१२२
अदृश्यंतीं तदा वाक्यं	१.६४.६४	अनंताय विरूपाय	१.९८.१०	अनुज्ञाप्य च राजानं	२.५.५९
अदृष्टपूर्वर्ण्यैश्च	१.९६.७	अनंतासनसंस्थाय	१.१७.१४५	अनुपृक्तावभूतांता.	१.७०.७३
अदृष्टमस्माभिरनेकमूर्ते	१.७१.११२	अनंतेत्येव सा नित्यं	२.५.१२	अनुमानादसंमूढो	१.७०.१२३
अदेहिनस्त्वहो देह.	१.५३.५१	अनंतेन च संयुक्तं	१.४५.११	अनुम्लोचा घृताची च	१.५५.३३
अद्विः संछादितां भूमि	१.७०.१२७			अनुयांति सुराः सर्वे	१.९६.७५

अनृतं बुवते लुब्धा.	१.४०.४	अपरेण सितोदशच	१.४९.५०	अभिमंत्र्य धेनुमुद्रा.	२.२५.८९
अनेन देवं स्तुत्वा तु	१.८२.१११	अपरौ सुदृढो पिंडौ	२.२८.३९	अभिरामः सुशरणः	१.९८.७९
अनेन निर्मितास्त्वेवं	१.४५.४	अपर्णा चैकपर्णा च	१.७०.३३१	अभिरामः सुशरणो	१.६५.१६६
अनेन विधिना स्नात्वा	१.२५.७	अपर्णा वरदा देवी	१.८२.१५	अभिवाद्याग्रतो धीमान्	१.१.१७
अनेन हरिरूपेण	१.९६.२०	अपवर्गं ततो गच्छेत्	१.८८.३०	अभिषिद्य ततो राज्ये	१.६७.११
अनेनैव मुनिश्रेष्ठा	२.८.२२	अपवित्रकरो शुद्धः	१.८५.१५७	अभिषेकोऽसुरः पूर्व	२.२७.२७५
अनेनैव वराहेण	१.९४.२१	अपश्यंस्तत्पुरं देवाः	१.८०.१०	अभिषेकुकामं च नृपं	१.६६.८१
अनेनोपसदा देवा	१.७१.४४	अपहृत्य च विज्ञानं	२.१७.९	अभीषुहस्तो भगवा.	१.७२.३२
अनौपम्यमानिर्देश्यं	१.१७.३५	अपां च वरुणं देवं	१.५८.३	अभुक्तराशिधान्याना.	१.८९.६४
अन्यकं च महापागं	१.६८.२	अपां निधानं जीमूताः	१.५४.४४	अभोज्यानि यतीनां तु	१.९०.२९
अन्नं प्राणे मनो ज्ञानं	२.१८.५१	अपां निधिराधिष्ठानं	१.९८.७३	अभ्यमन्यत सोऽन्यं वै	१.५.४
अन्नप्रशासनके विद्वान्	२.२९.१२	अपां शिवस्य भगवा.	१.५४.३६	अभ्ययुः शंखवर्णश्च	१.१०३.१३
अन्नभक्षप्रमाणं स्या.	२.२५.५१	अपानाय द्वितीया च	१.८८.८३	अभ्यर्चयंति ये लोका	१.१०५.२६
अन्नमयोसौ भूतात्मा	१.८६.९३	अपापा नैव हंतव्याः	१.७१.४८	अभ्यर्च्यं च यथान्यायं	२.३.३१
अन्नशुद्धो सत्तावशुद्धिः	१.८६.१४०	अपाम सोममृता	२.१८.७	अभ्यर्च्यं देवदेवेशं	१.६४.६९
अन्नादैरलमध्याये	१.२९.५५	अपिध्यायंति तां सिद्धिं	१.३९.२६	अभ्यर्षिंचत्कल्यं ब्रह्मा	१.५८.१
अन्नोदकं मूलफलं	१.६३.८२	अपूजितस्तादा देवैः	१.७२.४५	अभ्यर्षिंचत्पुरुं पुत्रं	१.६६.८०
अन्यं च कथयिष्यामि	१.१०८.१६	अपूतोदकपाने तु	१.८९.९	अभ्यर्षिंचत्सुधर्मणं	१.५८.१४
अन्यं वा गेययोगेन	२.३.२७	अपृच्छन् भगविल्लंगं	१.१७.४	अभ्यस्यंति परं योगं	१.९२.४०
अन्यत्र रमते मूढः	१.८६.१०९	अपृच्छन्सूतमनधं	२.४७.४	अभ्युक्ष्य दापयेदग्नौ	२.२५.२५
अन्यथा जीवितं तासां	१.३९.४७	अप्रतीपेन ज्ञानेन	१.७०.८८	अभ्युक्ष्य सकुशं चापि	१.२५.२७
अन्यथा नरकं गच्छे.	२.३.१११	अप्रमत्तेन वेद्व्यं	१.९१.५०	अमरत्वं मया दत्तं	१.१०७.५६
अन्यथा नास्ति संतर्तुं	१.२९.४५	अप्रमाणाय सर्वाय	१.२१.४९	अमरावती पूर्वभागे	१.४८.९
अन्यथा वापि शुश्रूषां	१.८६.१५१	अप्रमादशच विनयो	१.५.३६	अमरेशः स्थितीशश्च	२.२७.१०३
अन्यभक्तसहस्रेभ्यो	२.४.२०	अप्रमेयं तदस्थूलं	१.८६.५७	अमर्षणो मर्षणात्मा	१.६५.७६
अन्याः सृज त्वं भद्रं ते	१.७०.३१५	अप्रसंख्येयतत्त्वस्य	१.२१.८७	अमस्तु तालुनीतस्य	१.१७.७७
अन्यानि नवतीश्चैव	१.४.२१	अप्राप्य तं निवर्तते	१.१७.५९	अमाक्षिकं महावीर्यं	१.३९.२८
अन्येषि नियतात्मानो	१.१३.२०	अप्सरोभिः प्रनृत्ताभिः	१.१०२.२४	अमानी बुद्धिमात्रांतं	१.८६.१४९
अन्येषि योगिनो दिव्या.	१.९२.६२	अप्सु वा यदि वादशें	१.९१.११	अमानुष्याणि रम्याणि	१.४९.३४
अन्योऽन्यं तारयन्नैव	२.२०.४१	अप्सु शेते यतस्तस्मात्	१.७०.१२०	अमावास्यामहन्येव	२.८.१५
अन्योन्यं सम्मितं प्रेक्ष्य	१.२९.१९	अबुद्धिपूर्वकाः सर्गाः	१.७०.१६७	अमूर्तोपि ध्रुवं भद्रे	१.१०१.४९
अन्योन्यमनुरक्ताश्च	१.५२.२०	अबिंदु च कुशाग्रेण	१.८९.१९	अमृतं चाक्षरं ब्रह्मा	१.८६.९६
अन्योन्यमिथुना ह्वेते	१.७०.८०	अब्रवीद् भगवान् रुद्रो	२.१७.१०	अमृतः शाश्वतः शांतो	१.९८.६६
अन्यव्यः सकलो वत्स	१.६४.१०२	अभक्ष्यभक्षी संपूज्य	१.७९.६	अमृताख्या कला तस्य	२.१२.८
अपमृत्युजयार्थं च	२.२७.११	अभयं च ददौ तेषां	१.९५.५९	अमृतीकरणं चैव	२.२१.६०
अपमृत्युप्रशमनं	१.९६.११९	अभवत्कुंठिताग्रं हि	१.३६.४७	अमृत्युः सर्वदृक्सिंहः	१.९८.१५९
अपञ्जलिनिर्दिष्टं	२.१५.१७	अभवन् वृष्टिसंतत्वा	१.३९.३८	अमोघां कर्णिकाकारां	२.१९.२२
अपराजिता बहुभुजा	१.७०.३३८	अभवे च भवे तुप्यं	१.१६.१०	अमोघार्थप्रसादश्च	१.६५.१४
अपरामृष्टमक्षैव	१.८६.१०२	अभाग्यान्नं समाप्तं तु	१.७१.१४१	अमोघा विघ्निलया	१.७०.३३९

अम्बुसिक्तगृहद्वारां	२.५.८१	अर्चयामास देवेश	१.९२.१८६	अवक्रा निर्विणा: स्निग्धा	२.२५.४९
अम्लानमालानिचितैः.	१.५१.११	अर्चयामास सततं	२.५.९	अवगाह्य पुनस्तस्मिन्	१.२५.२०
अयं इधम आत्मा	२.२८.५७	अर्चयित्वा लिंगमूर्ति	१.७३.९	अवगाह्यापि मलिनो	१.८.३४
अयं स गर्भो देवक्यां	१.६९.५६	अर्चयेदेवदेवेशं	२.३०.१०	अवतीर्णं सुते नंदिन्	१.४२.३२
अयज्वानश्च यज्वानः	१.६.५	अर्चयेद्विष्णुगायत्रा	२.३६.५	अवतीर्णं यथा ह्यण्डात्	१.६४.५३
अयने चार्धमासेन	१.७७.६४	अचितं परमेशानं	१.७९.२५	अवध्यः सर्वदा सर्वैः	१.३६.२३
अयाचत महादेवं	१.९८.१८९	अथदेशादिसंयुक्तं	२.२०.१०	अवध्यत्वमपि श्रुत्वा	१.९७.१२
अयुताघोरमध्यस्य	१.१५.१०	अर्थितव्यः सदाचारः	१.९८.२८	अबध्या वरलाभाते	१.९८.१३
अयुतानि च षट्ट्रिंशत्	२.३.६९	अर्थो विचारतो नास्ति	१.७५.२३	अवध्यो मम विप्रेण	१.३५.१६
अयुतासु सुतस्तस्य	१.६६.२३	अर्धं शिवाय दत्त्वैव	२.२१.३२	अवयवव्याप्तिर्वक्त्रोदघाटनं	२.२५.७४
अयोगी नैव जानाति	२.२०.५२	अर्धक्रोशे तु सर्वे वै	१.५४.५२	अवाप महर्तीं सिद्धि.	१.६२.४१
अयोनिजं मृत्युहीनं.	१.४१.६३	अर्धनारीनरवपु.	१.७०.३२५	अवापुमुनयो योगान्	२.१५.२१
अयोनिज नमस्तुप्यं	१.४२.२८	अर्धनारीशरीराय	१.१८.३०	अविघं यज्ञदानाद्यैः	१.१०.४३
अरक्षितारो हर्तारः	१.४०.११	अर्धनारीश्वरं दृष्ट्वा	१.५.२८	अविद्या मुनेर्ग्रस्तः	१.५.३
अरणीजनितं कांतोद्भवं	२.२५.७३	अर्धनारीश्वरो भूत्वा	१.४१.४३	अविद्यायास्य संबंधो	२.९.३६
अरण्ये पर्वते वापि	१.७०.३४१	अर्धमासांश्च मासांश्च	१.७०.१८०	अविद्या पंचपर्वता	१.७०.३२
अरत्निमात्रमायाभं	२.२५२७	अर्धावशिष्टे तस्मिंस्तु	१.६३.५६	अविद्यामस्मितां रागं	२.९.१४१
अरश्मिवंतमादित्यं	१.९१.३	अर्धेनांशेन सर्वात्मा	१.४१.४४	अविमुक्तेश्वरं प्राप्य	१.२९.२९
अरिष्टनेमिनं वीरो	१.१००.३६	अर्यमा दशभिर्याति	१.५९.३८	अविमुक्तेश्वरं लिंगं	१.९२.१०५
अरिष्टनेमिरक्षश्च	१.६९.३१	अर्वाक्ष्मोतोऽनुग्रहश्च	१.५.६	अविमुक्तेश्वरे नित्यं.	१.९२.१४६
अरिष्टे सूचिते देहे	१.९१.३६	अर्वाविसुरिति ख्यातो	२.१२.१५	अविमुक्ते सुखासीनं	१.१०३.७२
अरुंधतीं कराप्यां तां	१.६४.१६	अलंकृत त्वया ब्रह्मन्	१.९२.१६०	अविशब्देन पापस्तु	१.९२.१४३
अरुंधतीं ध्रुव चैव	१.९१.२	अलंकृतां मणिस्तंभैः	२.५.८३	अविशेषवाचकत्वा	१.७०.३७
अरुंधतीं महाभागां	१.६४.९६	अलंकृत्य यथान्यायं	१.८४.२५	अव्यक्तं चेश्वरात्तस्मा.	१.७०.३
अरुंधत्यां वसिष्ठस्तु	१.६३.८३	अलंकृत्य वितानाद्यैः	१.७७.८३	अव्यक्तलिंगैर्मुनिभिः	१.९२.५५
अरूपाय सुरूपाय	१.३२.२	अलक्षणमनिर्देश्य.	१.८.१०३	अव्यक्ताज्जायते तेषां	१.७०.८९
अरेषु तेषु विप्रेण्ड्राः	१.७२.४	अलक्ष्मी वाय संत्यज्य	२.७.२	अव्यक्तादि विशेषांतं	१.३.१२
अर्केष्टशतं नित्यं	१.८५.१९२	अलक्ष्मीरतुला चेयं	२.६.१७	अव्यक्तादीनि वै दिक्षु	२.२७.२२
अर्धं च दापयेत्तेषां	२.२२.६५	अलदं जलदस्याथ	१.४६.२६	अव्यक्ताय विशेषकाय	१.९६.९०
अर्धं दत्त्वाथ पुष्पाणि	१.२७.५३	अलब्ध्वा स पितुर्धीमा.	१.६२.७	अव्ययं च व्ययं चापि	१.७०.२५१
अर्धं दत्त्वा समध्यर्च्य	१.२६.४	अलातचक्रवद्यांति	१.५७.७	अव्याकृतं प्रधानं हि	२.१६.२४
अर्धस्य सादनं चैव	२.२२.३३	अलिंगो लिंगमूलं तु	१.३.१	अव्याकृतमिदं त्वासी.	१.५९.७
अर्ध्याबुना समध्युक्ष्य	२.२२.३९	अलुब्ध्यः संयमी प्रोक्तः	१.१०.२५	अव्रणत्वं शरीरस्य	१.९.३५
अर्ध्योदकमये हृदा	२.२४.१९	अल्पंभूतं सुखं स्वर्गं	१.२०.८९	अशनिर्भासकश्चैव	१.१०३.३१
अर्चनं गाननृत्याद्यं	२.२.५	अल्पसौख्यं बहुक्लेशं	१.२०.८८	अशीतिमंडलशतं	१.५५.१४
अर्चना च तथा गर्भं	२.२१.६८	अल्पाक्षरं महार्थं च	१.८५.२९	अशीतिश्च सहस्राणि	१.४.२८
अर्चनादधिकं नास्ति	२.२६.२९	अल्पोदका चाल्पफला	१.४०.३१	अशुभा सा तथोत्पन्ना	२.६.७
अर्चयंति मुहुः केचित्	१.७५.३२	अवकाशमशेषाणां	२.१०.२१	अशून्यमरैनित्यं	१.५१.१६
अर्चयामास गेविंदं	२.५.१३	अवकाशस्ततो देव	१.३.२५	अशेषांश्च तदर्थेन	२.२७.२७१

अशौचं चानुपूर्वेण	१.८९.९३	अष्टानां लोकपालानां	१.३५.५	अस्पृश्यः कर्मसंस्कारैः	२.९.४३
अशनाति तद्देरेगस्यं	२.४.१५	अष्टाब्दादेकरात्रेण	१.८९.८५	अस्मद्दितार्थं देवेश	१.७२.११३
अश्मकं जनयामास	१.६६.२८	अष्टावक्रस्य शापेन	१.६९.८७	अस्माकं यान्यमोघानि	१.१०१.२०
अत्रद्वादशनं भ्रांति.	१.९.२	अष्टाश्वश्चाथ भीमस्य	१.५७.३	अस्माभिनारदाद्यैश्च	२.१.४६
अश्वमेघफलं प्राप्य	१.७७.५५	अष्टोतरणतं हुत्वा	२.२७.२४१	अस्मान् पतां दुःखं	१.८६.४०
अश्वमेघसहस्रेण	१.६५.७१	अष्टोत्तरशेतेनापि	२.३६.३	अस्मात्प्रवृत्ता पुण्योदा	१.५२.४
अश्वमेघसहस्रेण	१.९८.१९१	अष्टोत्तरसहस्रं तु	२.५०.३६	अस्मान् मयोद्यमानस्त्वं	१.२०.५३
अष्टविंशत्कलादेहं	२.२६.१५	अष्टोत्तरसहस्रेण	१.८५.२००	अस्मान्महत्तरं भूतं	१.२०.७६
अष्टदिक्षु च कर्तव्या	२.३०.८	अष्टोत्तरसहस्रेण	२.३९.२	अस्मिन्नर्थे महाप्राज्ञैः	१.५९.४
अष्टदिक्षवष्टकुंडेषु	२.३४.३	अष्टोत्तरसहस्रेण	२.४९.७	अस्मिन्नन्वन्तरे चैव	१.६१.१६
अष्टपत्रं लिखेतेषु	२.२७.३६	अष्टौ पुराण्युदीर्णानि	१.५०.२	अस्मिन्सिद्धाः सदा देवि	१.९२.३९
अष्टबाहुं चतुर्वक्त्रं	२.१९.७	अष्टौ प्रकृतयो देव्या	२.११.२२	अस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यं	१.९२.३६
अष्टभिश्च हयैर्युक्तः	१.५७.१	असंख्याताश्च संक्षेपात्	३.४.५४	अस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यं	१.९२.५३
अष्टमंगलसंयुक्तं	२.२८.२४	असंख्याता हि कल्पेषु	१.७.१९	अस्य देवस्य रुद्रस्य	१.१०३.४२
अष्टमंडलसंयुक्ते	२.४७.२३	असंगैश्च हयैर्युक्तो	१.५५.५	अस्य द्वीपस्य मध्ये तु	१.४८.१
अष्टमं नवमं चैव	१.८०.२२	असंगो युयुधानस्य	१.६९.१७	अस्य लिंगादभूद्बीजं	१.१७.६५
अष्टमांगुलसंयुक्तं	२.२७.२६३	असंचयं द्विजानां च	१.८९.७९	अस्याः बुद्धे प्रसादस्तु	१.८.७५
अष्टमूर्तिर्विश्वमूर्तिः	१.९८.३२	असद्वादो न कर्तव्यो	१.९०.११	अस्यात्मना सर्वमिदं	१.६९.२६
अष्टमूर्तेः प्रसादेन	१.४१.३७	असन्निकृष्टे त्वर्थेषि	१.८६.१२	अस्यामुत्पादयामास	१.५२.११
अष्टमूर्तेमहेशस्य	२.१३.३१	असपलः प्रसादश्च	१.६५.१११	अस्या विनिर्गता नद्यः	१.२.४
अष्टमूर्तेमहेशस्य	२.१३.३२	असमंजस्य तनयः	१.६६.१९	अस्यैकादशसाहस्रे	१.८६.९१
अष्टमूर्तेमहेशस्य	२.१३.३३	असमक्षं समक्षं वा	१.८५.१८०	अस्यैवात्रमिदं सर्वं	७.५४.६६
अष्टमूर्तेमहेशस्य	२.१३.२८	असादृश्यमिदं व्यक्तं	१.९.४९	अस्यैवेह प्रसादातु	१.४१.४
अष्टमूर्तेस्तु सायुज्यं	१.४१.३४	असिपत्रवनं चैव	१.८८.५९	अहंकारमनुप्राप्य	१.७६.११
अष्टम्यं तथांगार.	२.५०.३७	असुरा दुर्मदाः पापा	१.७१.४९	अहंकारमहंकारात्	१.३.१९
अष्टम्यां च चतुर्दश्या.	१.८४.२१	असुरा यातुधानाश्च	१.१०४.३	अहंकाराच्छब्दमात्रं	१.९६.४४
अष्टम्यां वा प्रदातव्यं	२.४२.४	असुहृत्सर्वभूतानां	१.६५.१३६	अहंकारावलेपेन	२.१०.१०
अष्टरशिम गृहं वापि	१.६१.२५	असूत मेना मैनाकं	१.६.७	अहंकारोऽतिसंसूते	१.३८.३
अष्टशक्तिसमायुक्तं	१.८८.५	असूत रोहिणी रामं	१.६९.४५	अहं वामांगजोब्रह्म	१.३४.३
अष्टषट्पलेनैव	२.२७.२६८	असूत सा च तनयं	२.८.१६	अहमग्निर्महातेजाः	१.८५.१०
अष्टस्वेतासु सुष्टासु	१.७०.२३५	असूत सा दितिर्विष्णुं	१.६४.४७	अहमेको द्विधाप्यासं	१.१७.२७
अष्टहस्तश्च वरदो	२.५०.२१	असृजच्च महातेजाः	१.७१.७३	अहमेव परं ज्योतिः	१.७०.७१
अष्टहस्तेन वा कार्या	२.२८.१८	असृष्टवैव प्रजासार्ग	१.७०.१७६	अहरंते प्रलीयते	१.५४.२५
अष्टांगप्रणिपातेन	१.८९.३४	अस्तं याति पुनः सूर्यो	१.५९.१९	अहर्भवति तच्चापि	१.४१.६६
अष्टांगुलप्रमाणेन	२.२७.२०	अस्ति चेद् भगवन् भीति.	१.३६.३९	अहस्तत्रोदगयनं	१.७०.६८
अष्टाक्षरस्थितो लोकः	१.२३.३२	अस्तेयं ब्रह्मचर्यं च	१.८९.२४	अहस्तस्य तु या सृष्टिः	१.८.२०
अष्टाक्षरो द्विजश्रेष्ठा	२.८.१	अस्त्रायाग्निशिखाभाय	२.२१.१४	अहिंसाप्येवमैवेषा.	१.२१.३३
अष्टादशपुराणानां	१.२६.२७	अस्त्वात्वा न च भुंजीया.	१.८५.१४३	अहिंसायाः प्रलोभाय	१.८३.५२
अष्टादशविधं चाहु-	२.९.३५	अस्पर्शं तदरूपं च	१.८६.५५	अहिंसा सत्यमस्तेय	

अहिंसा सर्वतः शान्ति.	१.१०.१९	आग्नेयं च ततः सौरं	१.८.९४	आपज्ञानं महादेवो	२.१८.२४
अहिंसा सर्वभूतानां	१.९०.१६	आग्नेयसौरमृतं	१.२८.१	आत्मज्ञानांभसि स्नात्वा	१.८.३६
अहिर्बुद्ध्यो निर्दृष्टिश्च	१.६५.१२५	आग्नेयानां श्वासजानां	१.५४.५६	आत्मत्रयं ततश्चोर्ध्वं	१.२७.२९
अहुताशी सहस्रेण	१.१५.१२	आग्नेयां च तथैशान्यां	२.२२.५१	आत्मत्राणाय शरणं	१.९५.३३
अहोऽनुतं मया दृष्टं	१.६४.३७	आग्नेयां च विधानेन	२.२७.२५०	आत्मनः सदृशान्दिव्यां	१.३६.५७
अहोधिक् तपसो मह्यं	१.२२.२१	आधारावपि चाधाय	२.२५.९८	आत्मनस्तु समान् सर्वान्	१.६.१२
अहो निरीक्ष्य चातंकं	१.३.२५	आचंद्रतारकं ज्ञानं	१.७६.३८	आत्मना च धनेनैव	२.२०.२४
अहो बलं दैवविधे.	१.४३.१२	आचम्य च पुनस्तस्मा.	१.२५.२१	आत्मनो भैरवं रूपं	१.९६.४
अहोऽधिषेकमाहात्म्य.	२.२७.२८०	आचम्य त्रिस्तदा तीर्थे	१.८५.१५९	आत्मनो यद्धि कथित.	१.६४.४०
अहो ममात्र काठिन्यं	१.६४.४९	आचम्य वा जपेच्छेषां	१.२५.२६	आत्मप्रयोजनाभावे	२.९.४९
अहोरात्रं च नक्तं च	१.६५.७१	आचम्याचमनं कुर्यात्	२.२६.३	आत्मबोधपरं गुह्यं	१.८५.२१९
अहोरात्रं रथेनासा.	१.५५.८२	आचामेद् ब्रह्मतीर्थेन	१.८५.१२९	आत्मभूरनिरुद्धोत्रि	१.९८.१०२
अहोरात्रविभागाना.	१.६१.५४	आचारः परमा विद्या	२.२०.२३	आत्मयोनिरनाधांतो	१.९८.९१
अहोरात्रात्तदा तासां	१.४०.७४	आचारपालकं धीरं	१.८५.८८	आत्मवत्सर्वभूतानां	१.८.१२
अहोरात्रार्धमासानां	१.२१.१३	आचार्यं पूजयेच्छिष्यः	२.२८.८७	आत्मा एकश्च चरति	१.८६.८६
अहोरात्रोषितः स्नातः	१.१५.२६	आचार्ये भ्यः प्रदातव्यं	२.५०.२९	आत्माकारेण संवित्ति.	२.१५.२२
अहो विचित्रं तब देवदेव	१.७२.१६३	आचार्यो मध्यकुंडे तु	१.१०.१६	आत्मा च सर्वभूतानां	१.३२.५
अहो विधेर्वलं चेति	१.७१.१४०	आचिनोति च शास्त्रार्था.	२.३७.६	आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिः	२.१३.२९
अहोस्य तपसो वीर्य.	१.२९.६४	आच्छादनोत्तरासंगं	२.५.२६	आत्मानं चांतरात्मानं	१.२६.८
आ					
आकंठं वहितत्त्वं स्या.	१.८६.१३६	आजगाम स विश्वात्मा	१.६८.२८	आत्मानं पुरुषं ध्यायेत्	२.२९.५
आकाशं शब्दमात्रं च	१.७०.४३	आजहाराश्वमेधानां	१.६४.६०	आत्मानं प्रणवं विद्धि	१.८५.४३
आकाशं शब्दमात्रं तु	१.७०.३२	आजया तस्य सा शोकं	१.३०६.१९	आत्रेयवंशप्रभवा.	१.६३.७१
आकाशदेहो दिग्बाहुः	१.८२.३३	आजया दारुकं तस्याः	१.७०.३३४	आत्रेयाणां च चत्वारः	१.६३.७८
आकाशांभोनिधियोसौ	१.५२.३	आज्ञा आवेशनी कृष्णा	१.९८.७८	आदातव्यं च गन्तव्यं	१.८६.७७
आकाशात्मानमीशान.	२.१४.२६	आज्ञाधारस्त्रिशूली च	१.९६.१२	आदाय च कराभ्यां च	१.१०५.१४
आकाशादीनि भूतानि	१.१७.३१	आज्ञापय जगत्स्वामिन्	१.३२.१५	आदावत्राहमागत्य	१.९२.८३
आकाशेनावृतो वायु.	१.७०.५६	आज्ञापय वयं नाथ	१.५३.५४	आदिकर्ता च भूतानां	१.३.३७
आकाशेनावृतो वायु.	१.३.३२	आज्ञाबलात्तस्य धरा	१.८५.८५	आदित्यं परमं भानुं	१.५५.३९
आकृष्येते यदा ते वै	१.५५.१३	आज्ञासिद्धं क्रियासिद्धं	१.८५.८४	आदित्यं भास्करं भानुं	२.१९.२९
आखंडलघ्नुः खंड.	१.९६.९	आज्ञाहीनं क्रियाहीनं	२.४९.१४	आदित्यं भास्करं भानुं	२.२८.६५
आगच्छयत्र वै विष्णु.	१.३७.३७	आज्ञं क्षीरं मधुश्वैव	२.२५.८३	आदित्यमग्रतो पश्यन्	२.१९.१३
आगतो न यथा कुर्यात्	२.५.१०९	आज्यतापनमैशान्यां	१.५४.४७	आदित्यवंशं सोमस्य	१.६५.१
आगतोसि यतस्तत्र	१.९६.२६	आज्यानां काष्ठसंयोगा.	२.२५.९०	आदित्यश्च तथा सूर्य.	१.८२.४३
आगत्य वाथ सृष्टि वै	१.६३.१०	आज्येन सुगवदनेन	१.१०७.५६	आदित्यात्तच्च निष्क्रम्य	१.६१.३१
आगम्य दृष्ट्वा मां नित्यं	२.१.५९	आज्योदनार्णवश्वैव	२.५०.१०	आदित्या वसवो रुद्रा	२.१०.३५
आगमिष्यामि ते राजन्	२.५.७२	आततायिनमुदिश्य	१.२०.८३	आदित्याश्च तथा रुद्राः	१.५०.८
आग्निकः शतकोट्या वै	१.१०३.२०	आताराकेदुनक्षत्रं	१.८९.११	आदित्योपि दिशश्वैव	१.८६.७८
आग्नीष्म ज्येष्ठदायादं	१.४७.१	आतिथ्यश्राद्धयशेषु	१.९६.८	आदित्यो वै तेज ऊर्जो	२.२२.४०

आदिदेवः क्रियानंदः	२.५.३६	आप्यं श्यामं मनोजं च	१.६१.२३	आलोक्य वारुणं धीमान्	२.२८.७५
आदिदेवो महादेवः	१.७७.१०५	आप्यायनीं च संपूज्य	२.२८.६७	आवयोः स्थानमालोक्य	२.६.७८
आदिमध्यांतरहितं	१.२७.५१	आप्यायस्वेति च क्षीरं	१.१५.२०	आवयोर्देवेदेवेश	१.१९.९
आदिसर्गस्त्वया सूत	१.७०.१	आबबंध महातेजा	१.४३.३०	आवयोश्चाभवद्युद्धं	१.१७.३२
आदौ चांते न संपूज्य	२.२४.३६	आभानोर्वं भुवः स्वस्तु	१.५३.३६	आवर्तनातु त्रेतायां	१.३९.३२
आदौ वेदानधीत्यैव	१.२९.७०	आभिमानिकमप्येवं	१.८६.३२	आवहः प्रवहश्चैव	१.५३.३७
आद्यं कृतयुगं विद्धि	१.३९.५	आप्यंतरार्चकाः पूज्या	१.२८.३०	आवहाद्यास्तथा सप्त	१.७२.१९
आद्यंत्योर्जपस्यापि	१.८५.१०३	आप्यंतरार्चकाः सर्वे	१.२८.३१	आवहाप्रतिवाहौ च	१.६९.२८
आद्यंतशून्याय च संस्थिताय	१.७२.१६१	आमया सादिनी भिल्ली	२.२७.२१०	आवाहयेत्ततो देवीं	१.२६.१
आद्यंतहीनो भगवा.	१.५३.५३	आमस्तकतलाद्यस्तु	१.९१.१८	आवाह्य कर्णिकायां तु	२.२१.४
आद्यवर्णमकारं तु	१.१७.५१	आम्नायोथ समाम्नाय	१.९८.११२	आवृणोद्धि तथाकाशं	१.३.२२
आद्ये कृतयुगे धर्म.	१.३९.१३	आयसी त्वभिचारे तु	२.२५.४३	आवृणोद्रसमात्रं वे	१.३.२३
आद्येन संपुटीकृत्य	२.२१.६३	आयामतः स विज्ञेयो	१.४९.१६	आवृत्य मां तथालिंग्य	१.४२.२५
आधारः सकलाधारः	१.९८.१२७	अयामतश्चतुस्त्रिंशत्	१.४९.१५	आवेष्टनस्तथाष्टाभिः	१.१०३.१८
आधारशक्तिमध्ये	२.२७.२४	आयुर्मायुरमायुश्च	१.६६.५८	आशयैरपरामृष्टः	२.९.४२
आधाराधेयभावेन	१.७०.६१	आयुर्वेदविदैवापि	२.५४.२	आशु द्वाराणि सर्वाणि	१.२०.४६
आधिक्यं सर्वमूर्तीनां	१.२.५५	आयुषस्तनया वीराः	१.६६.५९	आशु भक्ता भवत्येव	१.९.१९
आधिदैविकमित्युक्तं	१.९.९	आये व्यये तथा नित्यं	२.३.६१	आशुशब्दपतिर्वेगी	१.९८.१०४
आध्यात्मिकं च यत्निंगं	१.७५.२१	आरण्यानां पशूनां च	१.३२.७	आश्रयं सर्वभूताना.	१.६.२९
आनंदं कुरुतेशक्ष	२.१०.२०	आराधनं कृतं तस्मा.	२.१३.३४	आश्रिताः शंकरं तस्मात्	१.६.२७
आनंदं ब्रह्मणो विद्वान्	१.८.११३	आराधनं तु देवस्य	२.१३.३५	आश्लेषासु समुत्पन्नः	१.६१.४७
आनंद ब्रह्मणो विद्वान्	१.२८.१९	आराधयंति विप्रेद्रा	१.३१.११	आश्विने चैव विप्रेद्वा.	१.८१.२१
आनंदस्तु स विज्ञेये	१.१६.२८	आराध्य जगतामीशं	१.६२.१८	आषाढश्च सुषाढश्च	१.६५.१४३
आनंदा च सुनंदा च	२.२७.१८३	आराध्य भक्ता मुर्किं च	२.१६.२०	आषाढास्विह पूर्वासु	१.६१.४५
आनंदा वसुदुर्गा च	२.२७.२२१	आरार्तिदीपार्दीश्वैव	२.२४.३३	आषाढे मासि चाप्यैवं	१.८३.३५
आनंदोद्भवयोगार्थं आनर्तो		आरुरोह महामेरुं	२.२८.४	आषाढे मौक्तिकं लिंगं	१.८१.२०
नाम शयतिः	१.६६.४७	आरुरोह रथं दिव्यं	१.७२.२७	आसनं कूर्मशिलायां	२.२४.२१
आनीतान् विष्णुना विप्रान्	१.१०३.६१	आरुहा मूर्धानमजा.	१.६४.८	आसनं च तथा दंड.	१.७७.९१
आनीय वसुधां देवी	१.९४.१०	आरोहणोऽधिरोहश्च	१.६५.१४७	आसनं परिकल्प्यैवं	२.२४.१४
आपः पुनंतु मध्याह.	१.२२.१५	आरोहयेद्विधानेन	२.२८.७३	आसनं रुचिरं वद्वा	१.८५.१६२
आपः पूताः सकृत्प्राश्य	१.८८.८२	आर्जवा मार्दवा स्वस्था	२.२०.३०	आसनस्थो जपेत्सम्यक्	१.८५.१६२
आपः पूताः भवत्येता	१.७८.२	आर्यकग्रहभूतैश्च	१.७०.३४३	आसमुद्रायताः केचि.	१.४६.१३
आपूरयन्सुषुम्नेन	१.५६.६	आर्वाकु निषधस्याथ	१.४९.१२	आसाद्य भारतं वर्षं	१.८६.१५२
आपोर्मिं पृथिवीं वायु.	१.७०.१७८	आलस्यं प्रथमं पश्चाद्	१.९.१	आसीत्वैलविलिः श्रीमान्	१.६६.३
आपो नाराश्च सूनव	१.७०.११९	आलिङ्गान्नाय संपूज्य	१.१०२.१६	आसीदंतकसंकाशं	१.९७.३
आपोऽहं भगवानीश.	२.१७.१५	आलिखेदक्षिणे दंडं	२.२८.५१	आसीनान्धावंतश्चैव	१.७०.३०
आपो ह्यग्रे समभवन्	१.७०.११५	आलिखेन्मंडलं पूर्वं	२.२८.४९	आस्तां तावन्ममेच्छया	१.१०७.४३
आप्यं द्रव्यमिति प्रोक्तं	१.८६.१३२	आलिख्य कमलं भद्रं	१.७७.७०	आस्थाय योगपर्यंक	१.८५.११
		आलेपनं यथान्यायं	१.७७.३३	आस्था रूपं यत्सौम्यं	१.१०२.१४

आस्थाय रूपं विप्रस्य	१.३६.३३	इति निशाम्य कृतांजलयस्तदा	२.४७.१	इत्येतन्मंडलं शुक्लं	१.५९.४३
आस्थायैवं हि शक्रस्य	१.१०७.२८	इति यो दशवायूनां	१.८.६७	इत्येतल्लक्षणं प्रोक्तं	१.४०.९४
आस्येन न पिबेत्तोयं	१.८५.१४६	इति वाक्पतिर्बहुविधैः	१.९४.१९	इत्येतानि महान्तीह	१.४७.११
आह बालेंदुतिलकः	१.१०.४१	इति व्यासस्य विपुला	२.४६.९	इत्येते देवचरिता	१.४९.४८
आहुकात्काश्यदुहितुः	१.६९.३८	इति श्रुत्वा वचः	१.७२.३६	इत्येते देवचरिता	१.४९.५२
आहूय कृष्णो भगवान्	२.३.१०३	इति संचितयन् विप्र	२.१.८०	इत्येते प्रकृताश्चैव	१.७०.१६९
आहूय चोत्तमः श्रीमान्	२.५.१४४	इति स्तवेन देवेश	१.१६.१६	इत्येते ब्रह्मणः पुत्रा	१.६३.९३
आहूय पश्चादन्यस्मै	२.५.१३५	इतिहासपुराणानि	१.३९.६१	इत्येते वै मया प्रोक्ता	१.८९.१८
आहूय यजमानं तु	२.३६.७	इतिहासश्च कल्पश्च	१.६५.१००	इत्येवं खेचराः सिद्धा	१.८७.२४
इ		इतीदमखिलं श्रुत्वा	१.९३.९	इत्येवमुक्त्वा ब्रह्माणः	१.२४.१४९
इद्रद्वीपे तथा केचि.	१.५२.२७	इत्यं प्रसन्नं विज्ञानं	१.८६.१०१	इत्येष एकचक्रेण	१.५५.८१
इद्रनारायणाद्यश्च	१.३६.५५	इत्यंभूतं तदा दृष्ट्वा	१.९८.१६६	इत्येष ज्योतिषामेवं	१.६१.५८
इद्रनीलमयं लिंगं	१.७४.२	इत्यं मंत्रमयं देवं	२.२३.२५	इत्येष प्रकृतः सर्गः	१.७०.१६४
इद्रस्य शत्रो वर्धस्व	२.५१.१२	इत्यं रूपधरं ध्यायेत्	२.२२.५७	इत्येष प्रकृतः सर्गो	१.७०.१५९
इद्रस्यापि च देवानां	१.३५.२३	इत्यं शिवेन सायुज्यं	२.१९.४३	इत्येष वै सुतोदर्कः	१.७०.२९८
इद्रस्यापि च धर्मज्ञ	१.२९.२७	इत्यं सर्वं समालोक्य	१.९६.५९	इत्येषानुगतिर्विष्णो	१.२.४८
इंप्राग्नियमवित्तेशः		इत्यहं प्रेरितस्तेन	२.३.२२	इदं तु वैष्णवं स्तोत्रं	१.३६.१९
इंप्राणीं चैव चामुङ्डां	१.७६.५८	इत्याज्ञाप्य महातेजा	२.३.२९	इदं तु शरभाकारं	१.९६.१२३
इंप्रादयस्तथा दंवाः	१.३४.२२	इत्युक्तः स तु मात्रा वै	१.६२.११	इदं पवित्रं परमं	१.८१.५६
इंप्रादिदेवाश्च तथेश्वराश्च	२.१९.३२	इत्युक्तः स मुनिः श्रीमान्	१.६२.१७	इदं पवित्रं परमं	२.५.१५९
इंप्रादिलोकपालांश्च	२.२५.७६	इत्युक्तः स विचक्राम	१.६६.६	इदं मन्ये महाक्षेत्रं	१.९२.९०
इंप्रादीन्त्वेषु स्थानेषु	२.४८.४८	इत्युक्ता सा तदा देवी	१.९४.२४	इदं वेत्युभयस्पृतं	१.९.५
इंप्रियाणि मनश्चित्	१.८८.१३	इत्युक्तो देवदेवेन	१.९८.१८०	इदं हैमवतं वर्ष	१.४९.७
इंप्रियाणि मनश्चैव	१.८८.१२	इत्युक्तो भगवान् विष्णुः	२.६.८४	इदं इदमेकं सुनिष्ठत्रं	२.७.१२
इंप्रियाणि मनो बुद्धिं	१.९१.६०	इत्युक्तो मुनिशादूलः	२.५.५८	इदानीं दहनं सर्वं	१.७१.६
इंप्रियैरजितैर्निर्गनो	१.३४.१४	इत्युक्तो वीरभद्रेण	१.९६.२५	इदानीं श्रोतुभिच्छामि	१.२९.१
इंप्रोधिदैवतं छंदो	१.८५.४९	इत्युक्तो प्रणिपत्यैन्	२.५.१३२	इभाननाश्रितं वरं	१.१०५.९
इंप्रोपेंद्री भुजाम्यां तु	१.७५.१०	इत्युक्तांतर्दधे रुद्रो	१.९८.१८८	इभेद्रदारकं देवं	१.७६.२९
इकारो दक्षिणं नेत्रः	१.१७.७४	इत्युक्त्वा चाश्रमं सर्वं	२.५१.१०	इमं पाशुपतं ध्यायन्	१.३४.२४
इक्षुदंडं च दातव्यं	२.३७.९	इत्युक्त्वा तं प्रणेमुश्च	१.१०३.५१	इयं च प्रकृतिर्देवी	१.१०२.४५
इच्चाकुर्नभगश्चैव	१.६५.१८	इत्युक्त्वा य य य य य य	१.९७.३६	इलावृतात् परं नीलं	१.४९.९
इक्ष्वाकोरश्वमेधेन	१.६५.२२	इत्युक्त्वा दर्शयामास	१.३६.६४	इलवृताय प्रददौ	१.४७.८
इच्छ्या तस्य रूपाणि	१.८८.२२	इत्युक्त्वा न्योन्यमनधं	१.१०४.७	इषुणा तेन कल्पाते	१.७२.११६
इच्छा कपालिनी चैव	२.२७.२१६	इत्युक्त्वा पूर्वमध्यर्च्यं	१.७३.२८	इस्तिस्तुष्टिः प्रतिज्ञा च	२.२७.१७३
इच्छा कामावसायित्वं	१.३४.२१	इत्युक्त्वा भगवान्देवं	१.९२.१४५	इष्टो मम सदा चैव	१.४३.२८
इज्यायुद्धवणिज्याभिः	१.५२.३०	इत्युक्त्वा भगवान्देवी	२.५५.२८	इष्टै वरं जुह्यादग्नौ	१.२९.७५
इज्यावेदात्मकं श्रौतं	१.१०.१७	इत्युक्त्वा भगवान् रुद्रः	१.९२.१४४	इह वैखानसानां च	१.८.१७
इति तेन समादिष्टः	१.८५.१४	इत्युक्त्वा मुनिशादूलौ	२.५.६४	इह षड्विंशको ध्येयो	१.२८.७
इति ते सर्वमाख्यातं	१.८५.२३०	इत्युक्त्वा स्वोटजं विप्रः	१.३६.७६	इह स्वर्गापवर्गार्थं	१.५२.३२

इहास्मान् पाहि भगवन् ।	१.९६.१०७	उक्ताकाले शुचिर्भूत्वा	१.८९.१२०	उत्तानपादे ह्यवरो.	१.५९.१७
ई		उक्तमक्षरमव्यक्तं	२.१५.७	उत्तारको दुष्कृतिहा	१.९८.८५
ईक्षयेत्कालमव्यग्रो	२.४७.२१	उक्ता नदी भवस्वेति	१.४३.३३	उत्तिष्ठति पुनः सूर्ये	१.५९.१८
ईक्षयेद् भास्करं देवं	१.८९.१०८	उक्तानि च तदन्यानि	२.१६.२७	उत्थाय प्रांजलिर्भूत्वा	१.२९.४०
ईदृशान्तेवताराणि	१.९६.१०४	उक्तानि पञ्च ब्रह्माणि	२.२३.१३	उत्पत्तिर्निर्दिनाम्ना तु	१.२.२५
ईपिसतं यच्छ सकलं	१.६४.८५	उक्तोऽसौ गायमानोपि	२.३.१०१	उत्पत्त्यादित्रिभेदेन	१.८५.५७
ईपिसतं वरयशानं	१.६४.१०३	उग्र वायुं मे गोपाय	२.०५.४२	उत्पत्त्यादित्रिभेदेन	१.८५.६९
ईश रजो मे गोपाय	२.४५.५०	उग्र वायुं मे गोपाय	२.४५.४३	उत्पत्त्यामि तदा ब्रह्मन्	१.२४.११
ईश रजो मे गोपाय	२.४५.५१	उग्र वायुं मे गोपाय	२.४५.४४	उत्पद्यंते तदा ते वै	१.४०.४१
ईश रजो मे गोपाय	२.४५.५२	उग्र वायुं में गोपाय	२.४५.४५	उत्पद्यंते मुनिश्रेष्ठा	१.९.६१
ईश रजो मे गोपाय	२.४५.५३	उग्राहयस्य देवस्य	२.१३.१८	उत्पन्नाः कलिशिष्टासु	१.४०.७६
ईशानं पञ्चधा कृत्वा	२.२१.२३	उग्रैस्तपोभिर्विधैः	१.८६.४७	उत्पन्नाः पितृकन्यायां	१.६६.६१
ईशानं प्राणिनां देवं	१.१४.२१	उग्रो नाम महातेजाः	१.२४.५३	उत्पन्नाः प्रतिभात्मानो	१.२०.८७
ईशानं वरदं देव	२.१९.१८	उग्रो भीमो महादेवः	१.८२.३९	उत्पाद्य पुत्रं गणपं	२.५०.५
ईशानं विश्वरूपाख्यो	१.१०.४६	उग्रोसि सर्वदुष्टानां	१.९५.५५	उत्संगतलसंसुप्तो	१.१०२.२९
ईशानः परमो देवः	२.१४.११	उग्रोसि सर्वभूतानां	१.९५.३६	उत्संगश्च महांगश्च	१.६५.१०६
ईशानः सर्वविद्यानां	२.१८.२३	उच्चत्वाद् दृश्यते शीघ्रं	१.५७.२३	उत्साद्य पार्थिवान् सर्वान्	१.४०.६२
ईशानः सर्वविद्यानां	१.२७.३१	उच्चाटनं स्तंभनं च	२.५२.३	उत्सीदंति तदा यज्ञा	१.४०.३९
ईशानकल्पवृत्तांतः	१.२.१	उच्चायोच्चारयित्वा तु	१.८५.९६	उत्सीदति नराश्चैव	१.४०.६
ईशानमस्य जगतः	२.१८.२२	उच्चावचानि भूतानि	१.७०.२४८	उत्सर्गं कुरुते पायु	२.१०.१९
ईशानमुकुटं देव	२.२१.१९	उच्चैःश्रवसकं मत्वा	२.३९.५	उत्सृष्टा सा तनुस्तेन	१.७०.२०६
ईशानमूर्तये तत्	२.२५.९१	उच्छिष्टः पूजयन्याति	१.७९.५	उत्सेधस्तु तदर्थं स्यात्	२.२५.३०
ईशानमूर्तये तत्	२.२५.९२	उच्छुष्णा चैव गांधारी	२.२७.२०८	उद्गायतो महाशैलो	१.४९.१४
ईशानमूर्तेरेकस्य	२.१२.३९	उच्यते योगशास्त्रज्ञैः	२.१५.१२	उदडमुखोः प्राडमुखो वा	१.९१.३८
ईशानाद्यैर्यथान्यायं	२.२९.७	उड्हीयोड्हीय भगवान्	१.९६.७४	उदतिष्ठत पर्यंकाद्	१.२०.१३
ईशानाय कद्गुदाय	२.२७.२५४	उत्कलस्योत्कलं राष्ट्रं	१.६५.२७	उदयार्थं तु शौचानां	१.८९.३
ईशानाय शमशानाय	१.१८.५	उत्तमं मार्गमास्थाय	१.६०.१६	उदयास्तमयात्पूर्वं	१.८५.१३५
ईशानेन च भन्नेण	२.२१.४१	उत्तमश्चाधमे योज्यो	२.२०.२७	उदयास्तमये कुर्वन्	२.१०.३३
ईशानो निर्झर्तिर्यक्षो	१.४२.२२	उत्तमाद्यं तथांत्येन	२.२१.६९	उदानो व्याननामा च	२.२७.८२
ईशान्यां पञ्चमेनाथ	२.२१.५२	उत्तरप्रवहां पुण्यां	१.९२.१२६	उदारकीर्तिरुद्योगी	१.९८.९५
ईशान्यां पूर्वरात्रस्तु	१.५४.५०	उत्तरात्रं पुरस्ताद्धि	२.२५.११	उदुंबरं वा पनसं	२.६.५१
ईशान्यामीश्वरक्षेत्रे	१.४८.२६	उत्तराषाढिका चैव	१.८२.८०	उदुंबरे कर्दमस्य	१.४९.६१
ईशित्वे च वशित्वे च	१.२३.४७	उत्तरासु च वीथीषु	१.५७.२७	उदुत्यं च तथा चित्रं	१.२६.६
ईशो भवति सर्वत्र	१.८८.२१	उत्तरेतात्मनः पुण्यां	१.२७.२१	उदेति सूर्यो भीतश्च	१.८६.१४०
ईश्वरस्तु परो देवो	१.७०.८१	उत्तरे देवदेवेश	१.७९.३५	उदैक्षत महाबाहुः	१.३७.३४
ईश्वरस्तु सुषुप्ते तु	१.८६.६८	उत्तरे देवदेवेश	१.८४.५७	उद्गतस्त्रिक्रमो वैद्यो	१.६५.१६३
ईषणारागदोषेण	१.८६.११	उत्तरे नैगमे यस्य	१.४९.४०	उद्गिरेच्च वचिद्वेदान्	१.९.५६
उ		उत्तरे यमुनातीरे	१.६६.५६	उद्देशमात्रं कथितं	२.२७.२८४
उछवृत्त्यार्जितान्वीजान्	१.१०७.८	उत्तरोत्तरवैशिष्ठ्यं	२.५५.१८	उद्धृता च तथा माता	२.८.३१

उद्धृतानुष्णफेनाभि:	१.८९.५०	उपसर्गः प्रवर्तन्ते	१.९.१४	उलूको विद्युतश्चैव	१.७.५०
उद्धृतासीतिमन्त्रेण	१.२५.१५	उपसर्गेषु सर्वेषु	१.९६.१०३	उल्मुकव्यग्रहस्तश्च	१.३१.२९
उद्धृत्य पृथ्वीछायां	१.५७.१२	उपस्थात्मतया देवः	२.१४.२०	उल्लेखनेनांजनेन	१.८९.६६
उद्धृत्य पृथिवीछायां	१.६१.३०	उपस्थेद्रियबंधश्च	२.१०.६	उल्लेखा च पताका च	२.२७.१९३
उद्धिजः स्वेदजश्चैव	१.८६.१९	उपस्पृश्य शुचिर्भूत्वा	२.२१.३३	उवाच च महादेवः	१.४३.२५
उद्धिदं प्रथमं पुष्टं	१.४६.३६	उपहस्ता ज्वरं भीमो	१.९६.५८	उवाच च हृषीकेशः	२.३.१०५
उद्धिदो वेणुमांश्चैव	१.४६.३५	उपहाराणि पुण्यानि	१.८१.४०	उवाच तान्सुरादेवो	१.९६.१११
उद्भूतास्तूर्णमाकाशो	१.२०.३६	उपहिंसंति चान्योन्यं	१.४०.६४	उवाच प्रांजलिर्भूत्वा	१.६२.१२
उद्यानं दर्शितं देव	१.९२.३५	उपांशु यच्चतुर्था वै	१.१५.१६	उवाच बालधीर्मृतः	१.३०.२६
उद्धृदेहकन्यकां कृत्वा	३.२९.११	उपासितः पुराणार्थ	१.१.१२	उवाच भगवानीशः	१.१६.१८
उद्धाहः शंकरस्याथ	१.२.२२	उपासितव्यं यत्नेन	२.१८.२७	उवाच ब्रूहि किं तेऽय	१.४३.३२
उद्धाहः शंकरस्येति	१.१०३.८	उपास्यमानः सर्वस्य	१.८६.८९	उवाच भगवान् ब्रह्मा	१.४१.५४
उद्धाहश्च कृतस्तत्र	१.४४.३९	उपास्यमानो वेदश्च	१.८६.९०	उवाच भगवान् रुद्रं	१.१६.१९
उद्धाहार्थं महेशस्य	१.१०३.३	उपास्य रजनीं कृत्स्नां	१.७०.७५	उवाच भद्रो भगवान्	१.१००.१२
उन्मत्तवेषः प्रच्छन्नः	१.६५.५८	उपेंद्रप्रुखैश्चान्यैः	१.५१.१९	उवाच वाक्यमीशानः	१.१६.२७
उन्मत्तवेषशक्षुष्यो	१.९८.६	उपेंद्रांभोजगर्भेद्र	२.४६.१५	उवाचाष्टभुजा देवी	१.६९.५९
उन्मीलयेत्त्वयि ब्रह्मन्	१.९५.५७	उपोषितः शुचिः स्नातः	२.१८.४६	उशिकः कुशिकश्चैव	१.४.४६
उपगमय गुरुं विप्रं	१.८५.८६	उभयोः पक्षयोर्देवि	१.९२.१२४	उष्टा वा रासभा वाभि	१.९१.२९
उपचारस्तु क्रियते	१.७०.६९	उभयोरंतरं चैव	२.२८.२८	उष्णीषी च सुवक्तश्च	१.६५.६८
उपदिश्य महायोगं	१.१३.१९	उभयोश्चित्तमालोक्य	२.४०.४	उष्णोदकेन हरिद्राद्येन	२.२४.२७
उपदिश्य मुनीनां च	१.८०.५६	उभाभ्यां सपुष्याभ्यां	२.२४.२२	उष्यता वायुभक्षण	१.६९.६८
उपद्रवांस्तथान्योन्यं	१.४०.४३	उभे ते शिवरूपे हि	२.१५.५	ऊ	
उपपातकदुष्टानां	१.८५.२१८	उभौ देवविषिद्धौ ता.	२.५.८९	ऊचतुश्च महात्मानौ	१.४३.९
उपपातकमध्येवं	१.१५.४	उभौ भवंतौ कन्यां मे	२.५.६१	ऊचुर्दाता गृहीता च	१.१०३.५०
उपमन्युः सुतस्तस्य	१.६३.९९	उमा चंडी च नंदी च	२.४८.४७	ऊर्जा वसिष्ठो भगवान्	१.५.२६
उपमन्युमुवाच सस्मितो	१.१०७.५३	उमादेहसमुद्धूता	१.६९.४९	ऊर्जामाहुरुमां वृद्धां	२.११.१८
उपमन्युरिति ख्यातो	१.१०७.३	उमापतिविरूपाक्षो	१.२२.२	ऊर्जतश्च करं त्यक्त्वा	१.५४.२३
उपमन्युस्तथान्ये च	१.८२.६६	उमापतिविरूपाक्षो	२.१८.३२	ऊर्ध्वबाहुर्निरालंबः	१.६९.७६
उपयाति कुयोनित्वं	१.८५.१३१	उमामहेशप्रतिमां	१.८४.३	ऊर्ध्वमुत्रामयत्येव	२.१८.१५
उपयेमे उदाकृतिं	१.५.१८	उमामहेश्वरं वक्ष्ये	१.८४.१	ऊर्ध्वरितसमीशानं	२.२१.२६
उपयेमे भृगुर्धीमान्	१.५.२४	उमा संकीर्तिं देवी	२.१३.६	ऊर्ध्वरिता महातेजा	१.६३.८०
उपरिष्टात्रयस्तेषां	१.५७.१९	उमा हैमवती जज्ञे	१.१०१.२६	ऊर्ध्वरितोर्ध्वलिंगी च	१.६५.७०
उपवासात्परं भैक्ष्यं	१.८३.१०	उरगो वासुकिश्चैव	१.५५.४६	ऊर्ध्वस्त्रोतःसु सृष्टेषु	१.७०.१५१
उपलिष्य विधानेन	२.४५.१०	उरोदेशमघोरेण	१.२६.३८	ऊर्ध्वस्त्रोतास्तृतीयस्तु	१.७०.१४७
उपशांतं शिवं चैव	१.९२.१०७	उर्वशी मेनका चैव	१.८२.७१	ऊर्ध्वा च दृष्टिनं च	
उपसंहृतवान्सत्रं	१.६४.११३	उर्वारुकमिव बन्धना.	२.२७.२४३	संप्रतिष्ठा	१.९१.३२
उपसंहृत्य रुद्राणि	२.१८.५२	उर्वारुकाणां पक्वानां	२.५४.३०	ऊर्ध्वा: पितरो जेया	१.३४.६
उपसंहृत्येवं सद्यषष्ठेन	२.२४.११	उलूकं गच्छ देवर्षे	२.३.२१	ऋ	
उपसर्गप्रशमनं	२.३५.२	उलूकं पश्यगत्वा चं	३.३.७	ऋकारो दक्षिणं तस्य	१.१७.७५

ऋक्षवानरयुक्तेन	१.९१.१५	एककालसमुत्पन्नं	१.७०.५३	एतच्छुत्वा तु मुनयः	१.५९.१
ऋक्षाणां प्रभवे तुम्यं	१.२१.८	एकत्र समतां याति	२.२१.७२	एतज्जगद्वितं दिव्य.	२.१८.६
ऋक्षाणि च तदा तस्य	१.७५.२	एकविंशत्तमः कल्पः	१.१३.१	एतज्ञात्वा पुराणस्य	१.२.५६
ऋचो यजूषि सामानि	१.९१.६७	एकत्वमपि नास्त्येव	१.८६.९६	एतत्कालव्यये ज्ञात्वा	२.९.५४
ऋणत्रयविनिर्मुक्तः	१.८६.१५०	एकद्वित्रिचतुःपञ्च.	१.९६.९३	एतत्कालांतरं ज्ञेय.	१.७०.६७
ऋतुर्ऋतुकरसालो	१.६५.९५	एकधा सा द्विधा चैव	१.७०.९३	एतते कथितं सर्व.	१.४१.१४
ऋतूनां शिशिरश्चापि	१.६१.५३	एकपर्णा इवाज्ञेया	२.४५.८८	एतते प्रार्थितं प्राप्तं	२.३.१०६
ऋतेनानेन मा पाश.	२.५४.२९	एकमस्त्विति तान्देवः	१.७१.१८	एतत्पाशुपतं दिव्यं	१.१८.५३
ऋत्विजौ द्वौ प्रकर्तव्यौ	२.४४.६	एकमात्रममात्रं हि	२.१८.४४	एतत्सर्वं विशेषण	१.२०.२
ऋद्धिद्विद्धिधृतिः कांति	२.२७.१९४	एकमोमोमिति प्रोक्त.	१.१७.७०	एतत्स्तोत्रवरं पुण्यं	१.१८.४०
ऋद्धिशोकविशोकाय	१.१८.१६	एकरात्रिं सुराः सर्वे	१.५६.१०	एतत्स्वांगभवायैव	१.७१.७५
ऋषु सनत्कुमारं च	१.५.१३	एकरूपप्रधानस्य	१.६१.६०	एतदेव तु सर्वेषां	१.४०.८८
ऋषु सनत्कुमारं च	१.२०.९०	एकरूपमथौतस्याः	१७०.३३३	एतद्विव्यमहोरात्र.	१.४.१५
ऋषमं पार्थिवश्रेष्ठं	१.४७.२०	एकवक्रं चतुर्भुजं	२.२५.७१	एतद्वि कथितं सर्वं	२.५.१५७
ऋषमश्च मुनिर्धीमा.	१.७.३२	एकविंशमथर्वाणं	१.७०.२४६	एतद्यः कुरुते भक्त्या	२.३९.९
ऋषभो वृषभो भंगो	१.६५.१५०	एकशाय्यासनगतो	२.८.२३	एतद्यः कुरुते भक्त्या	२.४१.१०
ऋषयः कृत्स्नशास्त्रत्र	१.१०३.३६	एकशृंगो महाशूलो	१.४९.४७	एतद्वः कथितं सम्यक्	२.५४.७
ऋषयश्च तदा सर्वे	१.१०१.५	एकहस्तप्रमाणेन	१.२१.२	एतद्वः कथितं सर्वं	१.८०.५९
ऋषयस्तुष्टुवुश्चैव	१.४४.३६	एकहस्तप्रमाणेन	२.२२.६८	एतद्वः कथितं सर्वं	१.१०८.१८
ऋषयो देवगंधर्व.	१.५५.७२	एकाक्षरादुकाराख्यो	१.१७.६१	एतद्वः कथितं सर्वं	१.१०५.३०
ऋषयो मनवश्चैव	१.४०.९८	एकाक्षराय रुद्राय	१.१८.१	एतद्वः कथितं सर्वं	१.८.३५
ऋषयो मुनिशार्दूल	१.४२.२०	एकाक्षाय नमस्तुष्य.	१.७२.१४४	एतद्वः कथितं सर्वं	२.८.३५
ऋषिं दृष्ट्वा त्वंगिरसं	१.६९.७४	एकादशे द्वापरे तु	१.२४.५२	एतद्वः कथितं सर्वं	२.४५.९४
ऋषिः सर्वगतत्वाच्च	१.७०.९७	एकारमोष्मुदर्ध्वश्च	१.१७.७६	एतद्वः संप्रवक्ष्यामि	१.३४.१
ऋषिपुत्रैः पुनर्भेदा	१.३९.५८	एकार्णवि तदा तस्मिन्	१.७०.११	एतद्वेदितुमिच्छामि	१.१६.२०
ऋषिभिः स्तूयमानश्च	१.७२.२८	एकार्णवि तदा वृत्ते	१.१४.२	एतद्वो विस्तरेणैव	१.५८.१७
ऋषिरैरविलो यस्यां	१.६३.५९	एकार्णवि महाघोरे	१.१७.१०	एतद् ब्रतं पाशुपतं	२.१८.४५
ऋषिब्रह्माणविज्ज्ञु.	१.९८.८९	एकार्णवास्तथा चान्ये	१.६३.९३	एतन्मम पुरं दिव्यं	१.९२.४४
ऋषिशापादिकं दुःखं	२.५.४४	एकाहं यः पुमान् सम्यक्	१.२४.१३८	एतन्मे संशयं ब्रूहि	१.२०.३८
ऋषिशापो न चैवासी.	२.५.१४५	एकाहाद्यज्ञयाजीनां	१.८९.८०	एतमर्थ मया पृष्टो	१.६२.२
ऋषीणां च वसिष्ठस्त्वं	१.३२.६	एकीभावं गते चैव	१.७२.१०३	एतस्मात्कारणाद्ब्रह्मा	१.६२.१४
ऋषे: सूतस्य चास्माक्.	२.५५.४४	एकेनाशेन देवेशं	१.१०६.११	एतस्मिन्नंतरे ताभ्या.	१.२०.३३
	ए	एकेनैव तु गंतव्यं	१.८८.६२	एतस्मिन्नंतरे तेषां	१.७१.१३८
एकं तमाहुर्वं रुद्रं	२.१८.४१	एकेनैव हृतं विश्वं	१.३.७	एतस्मिन्नंतरे देवाः	१.१०४.२
एकं वा योगनिरतं	२.४५.८३	एकैकं योजनशतं	१.७१.२०	एतस्मिन्नंतरे रुदः	१.३७.३६
एकं स्थूलं सूक्ष्ममेकं	१.७२.१६४	एकैकातिक्रमे तेषां	१.९०.७	उतस्मिन्नंतरे लिंग.	१.१७.३३
एक दव तदा विष्णुः	१.९६.११२	एको न गच्छेदध्वानं	१.८५.१४८	एतस्मिन्नेव काले तु	१.१०१.८
एक एव हि सर्वज्ञः	१.८६.८८	एको वेदश्चतुष्पाद.	१.३९.५७	एतानि चैव सर्वाणि	२.२८.८९
एककालं द्विकालं वा	२०२१.८१	एत एव त्रयो देवा	१.७०.७८	एतावत्तत्त्वमित्युक्तं	१.९.५०

एतावदुक्त्वा भगवान्	१.९६.११४	एलापत्रमहापद्म	१.६३.३६	एवं मुनिवरं भद्रे	२.३.९६
एतावद्ब्रह्मविद्या च	१.८५.३९	एलापत्रस्तथा सर्पः	१.५५.५३	एवं यतीनामावासे	१.७७.३६
एतावद्विंसंस्कार.	२.२५.६५	एवं कल्पास्तु संख्याता	१.४.४९	एवं युगाद्युगस्येह	१.४०.८३
एता वै मातरः सर्वाः	१.८२.९७	एवं कालीमुपालभ्य	१.१०७.२	एवं रश्मसहस्रं तत्	१.५९.४२
एतास्तु मात्रा विज्ञेया	१.९१.५९	एवं कृते नृपेद्रस्य	२.५०.४८	एवं लब्ध्वा परं मंत्रं	१.८५.९७
एते इक्ष्वाकुदायादा	१.६६.४३	एवं कृत्वा कृतज्ञोऽपि	१.१५.२७	एवं लब्ध्वा शिवं ज्ञानं	१.८५.१२६
एते किन्नरसंघा वे	२.३.५६	एवं कृत्वा रथं दिव्यं	१.७२.२६	एवं लिखित्वा पश्चाच्च	२.२८.५३
एते चान्ये च बहवो	१.२९.३५	एवं कृत्वा सुदुष्टात्मा	१.९०.१४	एवं वः कथितं सर्वं	१.७७.८१
एते जनपदाः सप्त	१.४६.३४	एवं क्रमागतं ज्ञानं	१.७.१०	एवं वाराणसी पुण्या	१.९२.१
एते ज्योतीषि प्रोक्तानि	१.८५.१६०	एवं क्रमेण जुहुया.	२.४५.७९	एवं विज्ञापयन्त्रीतः	१.९६.९७
एते तपन्ति वर्षन्ति	१.५५.७३	एवं क्षांतातीतादिनिवृत्ति.	२.२४.१२	एवंविधैस्तटाकैश्च	१.४८.१४
एते तारा ग्रहाश्चापि	१.६१.४९	एवं च दक्षतिर्थातु	१.७०.२२८	एवं विन्यस्य मेधावी	१.८५.८२
एते देवा भविष्यन्ति	१.७०.३१८	एवं चेदनया देव्या	१.८७.२	एवं वृत्तसमोपेता	२.२०.३२
एते देवा वसंत्यके	१.५५.६६	एवं चोपोषितं शिष्यं	२.२१.३९	एवं व्यवसिते विप्रे	१.१०७.४८
एते देवा वसंत्यके	१.५५.८०	एवं जीवास्तु तैः पापैः	१.८८.६१	एवं शिलादपुत्रेण	२.५५.३३
एतेन क्रमयोगेन	१.५९.२०	एवं ज्ञात्वा महायोग.	१.२०.९७	एवं शिवाय होतव्यं	२.४५.६४
एतेनैव तु मार्गेण	२.३७.१२	एवं तत्र शयानेन	१.२०.७	एवं श्रुत्वापि तद्वाक्यं	१.३६.४४
एते पर्वतराजानः	१.४९.६	एवं तिलनगः प्रोक्तः	२.२०.१३	एवं घोडशा दानानि	२.४५.१
एते पापं व्यपोहन्तु	१.८२.४७	एवं तुष्टो गुरुः शिष्यं	१.८५.९२	एवं संक्षिप्त कथितं	१.२७.५४
एते ये वै मया सृष्टा	१.७०.३१७	एवं देवि समाख्यातो	२.५५.२५	एवं संक्षिप्त कथितं	१.५७.३७
एते रुद्राः समाख्याता	१.६३.२२	एवं दीक्षा प्रकर्तव्या	२.२१.७८	एवं संक्षेपतः प्रोक्तं	१.१०६.२८
एते वसंति वै सूर्ये	१.५५.७८	एवं धूमविशेषेण	१.५४.४२	एवं संक्षेपतः प्रोक्तः	१.१७.१
एते वसंति वै सूर्ये	१.५५.७८	एवं ध्यानसमायुक्तः	१.९१.७२	एवं संक्षेपतः प्रोक्तं	२.४८.५०
एते विप्राश्च देवत्वं	२.१.६४	एवं न्यासमिमं प्रोक्तं	१.८५.८०	एवं संक्षेपतः प्रोक्तं	२.२६.२६
एते वै चारणाः शंभोः	१.८२.५०	एवं परार्थे विप्रेद्र	१.४१.२	एवं संक्षेपतः प्रोक्तं	२.४९.१६
एते वै संस्थिता रुद्रा	१.४१.५७	एवं पाशुपतं कृत्वा	१.७३.१९	एवं संक्षेपतः प्रोक्ता	१.४९.२१
एतेषां पुत्रपौत्रादि	१.६३.४२	एवं पाशुपतं योगं	१.८८.८	एवं संक्षेपतः प्रोक्तं	१.४९.६९
एतेष शैलमुख्याना	१.४९.५८	एवं पुत्रमुपामन्त्र्य	१.६४.१०४	एवं संक्षेपतः प्रोक्तो	२.२१.८३
एतेषामेव देवानां	१.५५.७०	एवं पुरा महादेवो	२.५५.५	एवं संक्षेपतः काले	१.४०.५०
एतेष्वेव ग्रहाः सर्वे	१.६१.४०	एवं पूज्य प्रविश्यान्तः	१.२७.२२	एवं संपीड्य वै देवा	१.९३.७
एते संबोधयामस्त्वा	१.६६.८३	एवं पृथक्पृथग्भुत्वा	२.५५.३	एवं संपूजयेयुर्वं	१.७९.३४
एते समासतः प्रोक्ता	१.६६.५४	एवं पैतामहेनैव	२.४८.२७	एवं संपूजयेनित्यं	२.२०.४
एते हिरण्यवण्ठा	१.८२.६४	एवं प्रभिद्य गायत्री	१.७१.२३	एवं संपूज्य विधिना	२.२७.६३
एते हांगिरसः पक्षे	१.६५.४१	एवं बभूवुर्देत्याना	१.२०.१७	एवं संपूज्य विधिवं	१.८५.९१
एते हांगिरसः पक्षे	१.६५.४३	एवं ब्रुवतं वैकुण्ठं	१.७०.३२२	एवं समासतः प्रोक्तं	२.२७.२७२
एतैरूच्यैर्यथालाभं	१.८१.१३	एवं भवतु भद्रं ते	२.५४.३१	एवं सम्यग्बुधैज्ञत्वा	२.९.५६
एतैरावरणैरंडे	१.७०.५९	एवं मंत्रविधि ज्ञात्वा	१.५२.४४	एवं सर्वं च मामेच	२.१७.२०
एरकालाभतोन्योन्यं	१.२.४८	एवं मया समाख्याता	१.३८.१६	एवं सर्वेषु पात्रेषु	१.२७.१४
एरकास्वबलेनैव	१.२.४९	एवं मुख्यादिकान् सृष्ट्या		एवं सहस्रकलशं	१.२७.२३४

एवं सुस्नाप्यार्थं च	२.२४.३१	एवमुक्त्वा तु तं देव	१.१०७.४५	ऐतरेयस्य सा माता	२.७.२१
एवं स्तुत्वा तु मुनयः	१.३१.४४	एवमुक्त्वा तु तं विष्णु	१.१९.४	ऐरावतः सुप्रतीको	१.४४.२८
एवं स्तुत्वा महादेवं	१.७१.९८	एवमुक्त्वा तु भगवान्	१.२२.१३	ऐरावतगजारुदः	१.८२.९४
एवं स्नात्वा यथान्यायं	१.२७.२	एवमुक्त्वाथ धर्मज्ञा	१.६४.१३	ऐरावतादयो नागाः	१.९७.२९
एवं स्नुषामुपालभ्य	१.६४.३३	एवमुक्त्वाथ संतप्ता	१.२९.४९	ऐलः पुरुषवा नाम	१.६६.५५
एवं स्मृत्वा हरिः प्राह	१.३६.२७	एवमुक्त्वाब्रवीद्यूयः	१.२०.२६	ऐश्वर्यः कथितो व्यूहो	२.२७.१२२
एवं हि चाभिषिच्याथ	१.२५.२५	एवमुक्त्वा महादेवः	१.१६.३६	ऐश्वर्याष्टदलं श्वेतं	१.८६.६४
एवं हि मोहितास्तेन	१.२९.३६	एवमुक्त्वा महादेव	१.१०७.५९	ओ	
एवं हि योगसंयुक्तः	१.९१.६५	एवमुक्त्वा मुनिं प्रेक्ष्य	१.४२.१३	ओं अभिव्यक्तायै वायव्य.	२.२५.६३
एवं हुत्वा विधानेन	२.४३.८	एवमुक्त्वा मुनिर्द्वष्टः	२.५.७५	ओं ई वागीश्वराय नमः	२.२५.७२
एवमज्जानदोषेण	१.८६.२१	एवमुक्त्वा स्थितं वीक्ष्य	१.१०७.३१	ओं ईशानः सर्वविद्यानां	२.२३.१४
एवमज्जानदोषेण	२.५.४३	एवमुक्त्वा स्थितेष्वेव	२.४६.११	ओं ऋतं पुरुषाय नमः	२.४५.२६
एवमादीनि वाक्यानि	१.६२.२७	एवमुक्त्वा हरिश्चेष्टवा	१.७१.५७	ओं ऋतं पुरुषाय नमः	२.४५.२७
एवमाराध्य देवेशं	१.३५.२८	एवमेकेन मन्त्रेण	२.४८.३७	ओं कनकायै कनकनिभायै	२.२५.५९
एवमाराध्य संप्राप्ता	२.३.१७	एवमेतेन योगेन	१.१४.१३	ओं कारामात्रमोकार.	२.२१.२४
एवमालिख्य यो भक्त्या	१.७७.९४	एवमेव हरे ब्रह्मन्	१.१७.७१	ओं कारामूर्ते देवेश	१.१६.९
एवमाहर्महादेव.	१.३८.५	एष आपः परं ज्योति.	१.८८.७७	ओं कारवाच्यं परमं	१.८.९९
एवमाहुस्तथान्ये च	१.७५.२९	एष चक्री च वज्री च	१.३१.३	आंकारस्तु त्रयो लोकाः	१.९१.५५
एवमुक्तः प्रहस्येशः	१.८७.३	एष त्रिमात्रो विजेयो	१.९१.४६	ओं काराराय नमस्तुभ्यं	१.७२.१३२
एवमुक्तस्तदा तेन	१.१०१.३१	एष देवो महादेवो	१.३१.३	ओं कारे त्रिविधं रूप.	१.१०४.२२
एवमुक्तस्तदा तेन	१.१०७.३३	एष नंदी यतो जातो	१.४२.३८	ओं कारेशः कृतिवासा.	१.१०३.७८
एवमुक्तस्तदा तेन	१.१०७.६४	एष बीजी भवान् बीज.	१.२०.७३	ओं कारो यः स एवेह	२.१८.१३
एवमुक्तस्तदा दक्षो	१.५.३३	एष वः कथितः सर्वो	१.६४.१२३	ओं कृष्णायै नैऋतजिह्वायै	२.२५.६१
एवमुक्तस्तदां ब्रह्मा	१.७०.३२१	एषा कलियुगावस्था	१.४०.४८	ओं जनः प्रकृतये नमः	२.४५.२२
उवमुक्तस्तु विज्ञाय	१.२२.११	एषा चैव विशेषेण	१.९१.६४	ओं जनः प्रकृतये स्वाहा	२.४५.२३
एवमुक्तस्तु शक्रेण	१.१०१.२३	एषा रजस्तमोयुक्ता	१.३९.६९	ओं तपः मुद्गलाय नमः	२.४५.२४
एवमुक्ता तु सा कन्या	२.५.९२	एषो हि देवः प्रदिशो	२.१८.२६	ओं तपः मुद्गलाय स्वाहा	२.४५.२५
एवमुक्ता भगवता	१.४४.१८	एहोहि मम पुत्रेति	१.१०७.९	ओं नमो वासुदेवाय	२.४८.३६
एवमुक्तास्तदा तेन	१.३०.१	एहोहि श्वेत चानेन	१.३०.७	ओं पशुपते पाशं मे गोपाय	२.४५.६०
एवुक्तास्तदा तेन	१.३०.३०	एहोहीति महादेवि	१.१३.९	ओं पशुपते पाशं मे गोपाय	२.४५.६१
एवमुक्तास्तदा तेन	१.९५.१३	ऐ		ओं प्राणे निविष्टोऽमृतं	२.४५.७३
एवमुक्तास्तदा भृत्या	२.१.३१	ऐद्रमासाद्य चैद्रत्वं	१.७६.७	ओं बहुरूपायै मध्यजिह्वायै	२.२५.५७
एवमुक्ते मुनिः प्राह	२.५.१०४	ऐद्रमैश्वर्यमित्युक्तं	१.९.४४	ओं ब्रह्मणे बृहणाय	२.२३.१६
एवमुक्तो नमस्कृत्य	१.१०१.३८	ऐद्रिकेशानयोर्मध्ये	२.२८.२०	ओं ब्रह्माधिपतये कालाग्निः	२.२३.१५
एवमुक्तोऽब्रवीदेनं	१.७०.३१६	ऐद्री होताशनी याम्या	२.२७.७०	ओं भव जलं मे गोपाय	२.४५.३४
एवमुक्तो मनुस्तत्र	२.३.१०७	ऐद्रे चैद्राग्नमावहा	२.२५.१२	ओं भव जलं मे गोपाय	२.४५.३५
उवमुक्तो महादेवः	१.९७.३२	ऐद्रेशेशानयोर्मध्ये	२.२७.५९	ओं भव जलं मे गोपाय	२.४५.३६
एव मुक्त्वा घृणी विप्रः	१.६४.२३	ऐक्षवाकीमवहच्चांशुः	२.६८.४९	ओं भव जलं मे गोपाय	२.४५.३७
एवमुक्त्वा च मां देव	१.४३.२९	ऐक्षवाकुरंबरीषो वै	२.५.१	ओं भवः विष्णवे नमः	२.४५.१६

ओं भुवः विष्णवे स्वाहा	२.४५.१७	औं	कथं भवप्रसादेन	१.३१.९
ओं भुवः स्वाहा	२.४५.७६		कथं लब्धं तदा ज्ञानं	१.१०८.२
ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः	२.२२.८		कथं वा देवमुख्यैश्च	२.१७.३
ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः	२.२३.२०		कथं विनायको जातो	१.१०४.१
ओं भूः ब्रह्मणे नमः	२.४५.१४		कथं विमुक्तिविप्राणां	१.९४.३२
ओं भूः ब्रह्मणे स्वाहा	२.४५.१५		कथं विष्णोः प्रसादाद्वै	१.६२.१
ओं भूः ब्रह्मणे हृदयाय नमः	२.२३.२४	क	कथं वै दृष्टवान्ब्रह्मा	१.११.१
ओं भूः ब्रह्महृदयाय	२.२२.१२		कथं शरीरी भगवान्	२.१७.२
ओं भूः स्वाहा	२.४५.७५		कथं शुक्रस्य नपारं	१.६६.८२
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुः	२.२२.९		कथं हिमवतः पुत्री	१.१०१.९
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुः	२.२३.२१		कथं हि रक्षसा शक्ति	१.६४.१
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुः	२.५१.१८		कथमस्य पिता दैत्यो	१.९४.१
ओं महः ईश्वराय नमः	२.४५.२०		कथितं तथ्यमेवात्र	१.७९.१
ओं महः ईश्वराय स्वाहा	२.४५.२१		कथितं प्रथमव्यूहं	२.२७.३
ओं रक्तायै रक्तवर्णायै	२.२५.६०		कथितं बहुधा तस्मै	२.५४.१६८
ओं वहये तेजस्विने स्वाहा	२.२५.६४		कथितं मेरुशिखे	२.५४.१२
ओं शर्वं धरां मे गोपाय	२.४५.३०		कथितं सर्ववेदार्थं	१.६५.५२
ओं शर्वं धरां मे गोपाय	२.४५.३१		कथितः कनकव्यूहो	२.२७.७७
ओं शर्वं धरां मे गोपाय	२.४५.३२		कथितः सुमतिव्यूहः	२.२७.१९९
ओं शर्वं धरां मे गोपाय	२.४५.३३		कथितश्चांबिकाव्यूहः	२.२७.८१
ओं शर्वं धरां मे गोपाय	२.४५.६७		कथितश्चाणिमाव्यूहो	२.२७.१०२
ओं शर्वं धरां मे छिंधि	२.४५.६२		कथितस्तव संक्षेपाद्	१.३६.७८
ओं शिवाय नमः	२.४५.६३		कथितानि मम क्षेत्रे	१.९२.९९
ओं शिवाय सत्यं स्वाहा	२.४५.२८		कथितानि शिवांगानि	२.२३.१८
ओं सत्यं शिवाय नमः	२.४५.२८		कथितो महिमाव्यूहः	२.२७.१०९
ओं सत्यं शिवाय स्वाहा	२.४५.२९		कदंबः खादिरं वापि	२.६.५०
ओं सद्योजाताय भवे भवे	२.२३.१७		कदाचित्क्षीरमल्पं च	१.१०७.७४
ओं सुप्रभायै पश्चिमजिह्वायै	२.२५.६२		कद्मः सहस्रशिरसां	१.६३.३४
ओं स्वः रुद्राय नमः	२.४५.१८		कद्मस्त्विषा दनुस्तद्वत्	१.६३.२४
ओं स्वः रुद्राय स्वाहा	२.४५.१९		कनकांगदहाराय	१.१८.३८
ओं हिरण्यायै चामीकराभायै	२.२५.६८		कनकाभे तथांगारं	१.८.९८
ओं हीं वागीश्वरीं श्यामवर्णां	२.२५.६८		कनिष्ठा रक्षणीया सा	१.८५.११५
ओमित्येकाक्षरं मंत्रं	१.८५.३३		कन्यां तां रममाणां वै	२.५.५५
ओमित्येतत्रयो लोका.	१.९१.५१		कन्यां वा गोगृहे वापि	२.६.७२
ओषधीनां तथात्माभो	१.७०.१७९		कन्यादानं प्रवक्ष्यामि	२.४०.१
ओषधीषु बलं धत्ते	१.५९.४१		कन्याभावाच्च सुद्युम्नो	१.६५.२९
ओषध्यः फलमूलिन्यः	१.७०.२३९		कन्यार्थी लभते कन्यां	१.८२.११३
ओषध्यश्च रजोदोषाः	१.८९.९९		कन्या वै मालिका वापि	१.६३.६५
ओष्ठं च द्वयङ्गुलोत्सेधः	२.२७.४३		कन्यासिद्धिरहो प्राप्ता	२.५.१३९

कन्ये द्वे च महाभोग	१.७०.२७६	कर्मणा मनसा वाचा	१.८८.६५	कश्यपोऽप्युशनाशचैव	१.७.४५
कपालमेकं द्योर्यज्ञे	१.२०.८३	कर्मयज्ञरताः स्थूलाः	१.७५.२०	कस्त्वं वदेति हस्तेन	१.१७.१५
कपालहस्तं देवेशं	१.७६.२८	कर्मयज्ञसहस्रेभ्यः	१.७५.१३	कस्यां वा युगसंभूत्यां	२.२४.४
कपालिने करालाय	१.९६.८८	कर्मस्था विषमं ब्रूयुः	१.७०.२५७	कस्याद्य व्यसनं घोरं	१.४४.१३
कपालीशश्च विज्ञेयो	१.८२.४१	कर्मेद्रियाणि पंचैव	१.७७.७९	कस्याधिकारः पूजायां	२.१९.३
कपिलश्चासुरिश्चैव	१.७.४१	कर्मेद्रियाणि मात्रं हि	२.२०.५०	का	
कपिलाहृदमित्येवं	१.९२.६९	कर्मेद्रियाणि संशोध्य	१.७३.१६	कांचनं दिवि तत्रासी.	१.७१.१९
कमलं चालिखेत्तत्र	२.२७.१९	कलंतिका चतुर्भेदा	२.२७.२०२	कांचनेन विमानेन	१.७६.१८
कमलेन सहस्रेण	२.५४.३	कलशान् विन्यसेत् पंच	२.२१.३६	काकः कपोतो गृण्डो वा	१.९१.८
कमलोत्पलपुष्पाढ्यै	१.९२.४१	कलशानां सहस्रं तु	१.४४.२४	काकपक्षधरं मूर्धा	१.७६.३०
करणं कारणं कर्ता	१.९८.७५	कलशानां सहस्राणि	२.२७.४०	काकपादोपरः षष्ठ्या	१.१०३.२२
करणश्चैव विशत्या	१.१०३.२६	कलाः काष्ठा निमेषाश्च	२.१०.३९	काकोलूककपोतानां	१.८९.४६
करवीरैः सितैश्चैव	१.२७.३६	कला काष्ठा लवो मात्रा	१.६५.१५७	काचित्तदा तां न	१.२९.१७
करयोरुभयोश्चैव	१.८५.६५	कला संशोषमायाति	१.८६.१७	कात्यायन्यै विदाहे	२.४८.२६
करवीरे गणाध्यक्षे	१.८१.३६	कलिजैः सहते सर्वे	१.४०.७८	कामं भुञ्जन्त्वपन् क्रीडन्	१.९२.५०
करसंमितमध्यांगी	२.५.८५	कलिदोषान् विनिर्जित्य	१.४०.२२	कामः क्रोधश्च लोभश्च	१.३२.९
करस्थाली कपाली च	१.६५.१५३	कलौ प्रमादको रोगः	१.४०.२	कामः क्रोधण्च लोभश्च	१.३२.१२
कराप्यां सुशुभाग्राप्यां	२.५५.४७	कल्पकद्रुमजैः पुष्टैः	१.७१.१२४	कामतोषि कृतं पापं	१.८४.१३
कराप्यां सुशुभाप्यां च	१.२२.१४	कल्पकोटिशतेनापि	२.२७.२८१	कामदा शुभदा सौम्या	२.२७.१७४
कराप्यां सुशुभाप्यां च	१.४३.२४	कल्पत्वं चैव कल्पानां	१.२.१५	कामदेवः कामपालः	१.९८.४८
करालैर्हरिकेशैश्च	१.५१.१४	कल्पद्रुमसमाकीर्ण	१.७१.२५	कामना शोभिनी दग्धा	२.२७.१८२
करुणादिगुणोपेताः	१.७.३	कल्पयामास वै क्षेत्रं	१.९२.१८७	कामवानपि भावोयं	२.५.१२४
करुषश्च पृष्ठप्रश्च	१.६५.१९	कल्पयामास वै वक्त्रं	१.१००.४७	कामा तृष्णा क्षुधा मोहा	२.२७.१८०
करोति पाणिरादानं	२.१०.१७	कल्पयेच्चासनं पद्म	१.८८.३	कामो दर्पोऽथ नियमः	१.५.३५
कर्णपूले मम कथं	२.५.१२५	कल्पयेत्कांचनोपेतां	२.४७.२६	कायांतस्थामृताधारः	१.१०४.९
कर्णिकायां न्यसेल्लिंगं	१.८१.११	कल्पादीनां तु सर्वेषां	१.२६.२९	कायावतार इत्येव	१.२४.१३०
कर्तव्यं च कृतं चैव	१.२०.१४	कल्पादौ संप्रवृत्तानि	१.६१.१३	कायिकानि सुमिश्राणि	१.१५.५
कर्तव्यं नास्ति विप्रेद्रा	१.८६.१०६	कल्पार्धसंख्या दिव्या वै	१.४.४२	कायिकं भजनं सन्दिः	२.९.२५
कर्तव्यः सर्वयत्नेन	१.७७.३०	कल्पावसानिकांस्त्यक्त्वा	१.४.४०	कारुण्यात्सर्वभूतेभ्यः	१.१०.२२
कर्तव्याभ्यासंमुत्सृज्य	१.८६.१०८	कल्पेतीते तु वै विप्राः	१.४.३९	कार्त्तिके च तथा मासे	१.८३.४६
कर्ता नेता च हर्ता च	१.१७.२६	कल्पे शोषाणि भूतानि	१.२०.९३	कार्त्तिके मासि यो दद्या	१.७९.३१
कर्ता यदि महादेव	१.२८.१२	कल्पेश्वरोऽथ भगवान्	१.२४.९	कार्त्तिक्यामपि या नारी	१.८४.६६
कर्तास्मि वचनं सर्वं	१.१०३.५८	कल्पोदयनिबंधानां	१.२१.१६	कार्यमध्युक्षणं नित्यं	१.७८.१३
कर्तुर्महर्थ यत्नेन	१.७१.१६२	कल्याणं वा कथं तस्य	१.९९.३	कार्यार्थं दक्षिणं तस्याः	१.७०.३२८
कर्तुरप्यधिकं पुण्यं	१.७७.२६	कल्याणप्रकृतिः कल्पः	१.९८.५९	कालं गते द्विजे भूमौ	२.४५.९०
कर्म कुर्यादि सुखं	१.७७.२८	कल्लोला चेति क्रमशः	२.२७.१५९	कालंधुरस्तु कथित	१.७.२६
कर्मणा चोत्तरेणैव	२.४५.९१	कवची पट्टिशी खड्गी	१.२१.८१	कालं नयति तपसा	१.३०.२६
कर्मणा तस्य चैवेह	१.२८.१५	कब्यं पितृगणानां च	२.१२.३६	कालः करोति सकलं	१.२८.१४
कर्मणा मनसा वाचा	१.३१.३४	कव्याशिनां गणाः सप्त	२.१०.३८	कालकंठाय मुख्याय	१.१०४.११
कर्मणा मनसा वाचा	१.६७.१९	कश्यपो गोत्रकामस्तु	१.६३.४९	कालकालाय कालाय	१.९६.७८

कालदूतश्च कथितो	२.२७.११७	किं न जानासि विश्वेशं	१.९६.३७	कुंडाप्रभं च परमं	१.९२.१४८
कालभैरवमासाद्य	१.९२.१३२	किंनामगोत्रा कस्येयं	१.९६.२२	कुतः प्राप्तं कृतं केन	१.९६.५२
कालयोगी महानादो	१.९८.६८	किं नु रूपमहं कृत्वा	१.७०.१२५	कुतः सस्यविनिष्पत्ति.	१.६०.१३
कालरात्रिर्महामाया	१.७०.३३५	किं पश्यसि च मे ब्रूहि	२.५.१०६	कुतोप्यपरिमेयात्मा	१.२०.३४
कालसंख्याविवृत्तस्य	१.७०.१०८	किं प्रवृत्तं वने तस्मिन्	१.२९.३	कुनट्या नियतं विद्यात्	२.५२.१३
कालांतरवशाद्योगाद्	१.८.५४	किं रथेन ध्वजेनेश	१.७२.१०८	कुबेरोऽत्र मम क्षेत्रे	१.९२.५७
कालाग्निपीठमध्यस्थ	२.५०.३०	किं लिंगं कस्तथा लिंगी	१.१७.३	कुमारं जनयामास	१.६६.११
कालाग्निरुद्ररूपाय	१.१०४.१०	किं लिंगं कस्तथा लिंगी	१.१७.५	कुमारौ ब्रह्मणस्तुल्यौ	१.५.१४
कालाग्निरुद्रसंकाशान्	१.७१.५९	किं वदामि च ते भूयो	२.२.९	कुमुदार्कशमीपत्र.	२.५४.२८
कालाग्निस्तच्छरस्यैव	१.७२.२५	किं सागराद्वशेष्यामो	१.४४.११	कुमुदे किन्नरावास.	१.५०.१२
कालाप्रयत्नतो ज्ञात्वा	१.६५.१३	किन्नरैरुरगाश्चैव	१.४९.६७	कुरुवंशादनुस्तस्मात्	१.६८.४८
कालात्मा कालनाभस्तु	१.१७.१३	किन्नर्यः किन्नराश्चैव	१.८०.३९	कुर्याद्वृष्टक्रमेणैव	१.८३.५४
कालात्मा सोम एवेह	१.८६.९४	किमत्र भगवान्द्य	१.२०.४१	कुर्याद्विधिमिमं धीमा.	२.५०.१७
कालादित्यसमाभासं	१.१७.४२	किमनेन द्विजश्रेष्ठा	१.८६.८	कुर्वन्यतत्यधो गत्वा	१.८५.१८१
कालादृते न नियमो	१.६०.१२	किमप्यचित्यं योगात्मा	१.२०.५	कुर्वत्यनुग्रहं तुष्टा	१.८५.१७४
कालध्वरं महाभाग	२.२०.४७	किमर्थं भाष्मे मोहाद्	१.१७.२२	कुलांतिकानला चैव	२.२७.२२२
कालाभ्रभोजनाः सर्वे	१.५२.१४	किमश्नामि महाभाग	२.६.७९	कुलालचक्रनाभिस्तु	१.५४.२८
कालाय कालरूपाय	१.९५.४१	किमिच्छसि वरं भद्रे	२.५.१६	कुलालचक्रपर्यंतो	१.५४.१७
कालावच्छेदयुक्तानां	२.९.४७	किमिदं त्विति संचित्य	१.१७.५०	कुलालचक्रमध्यं तु	१.५४.२०
काली तदा कालनिश्चाप्रकाशं	१.७२.६६	किमिदं त्विति संचित्य	१.१०७.२२	कुलालचक्रवच्छक्त्या	१.९६.४६
कालेन कललं चापि	१.८८.४९	किरणैः सर्वतस्तोयं	१.५४.३०	कुलालचक्रवद्भ्रांतं	१.८८.६९
कालेषु त्रिषु संबंध.	२.९.३७	किरीटी पद्यहस्तश्च	१.३६.२	कुलिशेन यथा छिन्नो	१.९७.३९
कालोस्प्यहं कालविनाशहेतु.	१.९६.३५	की		कुरुवर्णे च कुरवः	१.५२.१९
काश्चिच्छज्जगुस्तं ननृतु.	१.२९.१८	कीटपक्षिमृगाणां च	१.८६.४३	कुशापुंजेन वाष्प्युक्ष्य	२.२२.१९
काश्चिच्चत्तदा तं विपिने	१.२९.१६	कीर्तनीयमिदं सर्वं	१.१०३.७०	कुशापुष्पयवत्रीहि.	१.२७.१५
काष्ठकूटचतुःषष्ठ्या	१.१०३.२७	कीर्तिमांश्च महातेजाः	१.६९.९	कुशामुष्टि तदादाय	१.३६.५३
काष्ठाशंकुभिरन्योन्यं	२.१.३२	कीर्त्यते विषयाशचेति	२.९.२७	कुशलदेशः कुशलो	१.४६.३२
काष्ठेष्टकादिभिर्मर्त्यः	१.७७.२९	कु		कुशलाकुशलं कर्म	१.१०.१२
कि		कुंठितं हि दधीचेन	१.९८.१४	कुशलाकुशलानां तु	१.१०.२८
कि करिष्यति मे मृत्यु.	१.३०.६	कुंडं च पश्चिमे कुर्या.	२.२२.६७	कुशलाकुशलैस्तस्य	२.९.३९
कि कार्यं मम युधि देव.	१.९७.३४	कुंडमंडपनिर्माणं	२०.४८.४१	कुशस्थलात्समाप्ना	२.१.२१
कि कार्यं हि मया ब्रह्मन्	२.३.१३	कुंडमध्ये तु नाभिः स्या	२.२५.५	कुशाग्रमक्षतांश्चैव	१.२७.१५
कि कि धैर्यं कृतं तेन	१.९६.२	कुंडले कुंडले कार्यं	२.२८.४३	कुशानग्नौ तु प्रज्वाल्य	२.२५.२०
कि कृत्यमिति संतप्तः	१.७१.६५	कुंडले च शुभे दिव्ये	१.४३.४३	कुशासने तु संस्थाप्य	२.२१.४६
किंचित्कर्णातरं विद्या.	१.८५.१२१	कुंडले चामले दिव्ये	१.४४.२९	कुशिकश्चैव गर्भश्च	१.७.५१
किंचिदुत्तमितिशिरा	१.८.८९	कुंडसंस्कारानंतरं	२.२५.६७	कुसुमोत्तरस्य वै वर्ष	१.४६.२८
किंचिद्विद्विस्तवस्त्राश्च	१.८०.२१	कुंडस्याधः खनेच्छनुं	२.५०.३२	कु	
कि चेत्याह तदा देवान्	१.७२.११९	कुंडी द्वादशमिर्वारं	१.१०३.१९	कृकलः क्षुद्रकायैव	१.८.६६
कि जपन्मुच्यते जंतुः	२.७.१	कुंभीनसीं तथा कन्यां	१.६३.६४	कृच्छ्रातिकृच्छ्र कुर्वीत	१.९०.१७
किंतु किंत्विति चान्योन्यं	१.७१.१३६	कुकुरस्य सुतो वृष्णि.	१.६९.३३		

कृच्छ्रात् सभार्यो भगवान् १.६४.४४	कृत्वा विमुच्यते सद्यो १.१५.३१	केशवं प्रणवेनाथ २.२१.४२
कृतं वा न कृतं वापि १.९२.१८१	कृत्वा शिरसि तत्पात्रं २.२२.२७	केशवो भगवान् रुद्र २.२७.१००
कृतकृत्योऽस्मि विप्रेभ्यो २.५५.३५	कृत्वा षोडशमार्गेण २.२९.९	केशो विगतवासाश्च १.७२.७६
कृतव्रेतादियुक्तानां १.४.३३	कृत्वा हैमं शुभं पदं १.८१.१०	कै
कृतमास्याः प्रसादार्थ १.१०६.२५	कृत्वैव लिंगं विधिना २.४७.६	कैः पाशैस्ते निबध्यन्ते २.९.१०
कृतमेतद्वहत्यग्नि १.३४.२	कृत्वौकारं प्रदीपं २.९.५५	कैकसी चाप्यजनयद् १.६३.६२
कृतस्तस्य सुधर्माभूत् १.६६.५१	कृत्स्नं च विदते ज्ञानं १.७०.२४	कैकसी मालिनः कन्या १.६३.६१
कृतस्यृद्धस्य विप्रेद्रा १.४.२६	कृष्णं गोमिथुनं दद्यात् १.८३.२२	कैतवं वित्तशाठ्यं च १.८९.३७
कृतस्थलाऽप्सराश्चैव १.५५.४७	कृष्णः श्यामस्तथा धूम्रः १.७.८५	कैलासपतिः कामारिः १.९८.८३
कृतांजलिपुटा: सर्वे २.१९.२६	कृष्णत्वे द्वारकायां तु १.२.४६	कैलासवर्णनं चैव १.२.२०
कृतांजलिपुटो भूत्वा १.४१.५८	कृष्णपक्षस्त्वहस्तेषां १.४.११	कैलासस्थो गुहावासी १.६५.१३१
कृतांजलिपुटो भूत्वा २.२८.६	कृष्णपुत्राः समाख्याताः १.६९.६५	कैलासाख्यं च यः कुर्यात् १.७७.८
कृतास्त्रा बलिनः शूरा १.६८.११	कृष्णरूपा च देवेश १.२३.२१	कैलासो गंधमादश्च १.४९.२२
कृते सकृद्युगवशा १.८९.९४	कृष्णवर्णेन बाह्यस्थं २.२२.२१	कैलासो यक्षराजस्य १.५१.२०
कृतो रथश्चेषु वर १.७२.१५५	कृष्णश्च पांडुरश्चैव १.४९.५१	कैवर्तायि किराताय १.९६.८२
कृतौजाश्च चतुर्थोऽभूत् १.६८.९	कृष्णसुष्टुप्तिः केनेह २.१.१	कैवल्यं चैव निर्वाणं १.८.१०४
कृत्यांगन्यासमेवं हि १.८५.७३	कृष्णस्य तासु सर्वासु १.६९.६७	को
कृत्वा कनीयसं लिंगं १.८१.९	कृष्णांबरधरा श्यामा १.९१.१६	कोटयो नरकाणां तु १.६.२८
कृत्वा करं विशेष्याग्रे २.२६.९	कृष्णांबरधरोष्णीवं १.१४.५	कोटिकोटिशतैश्चैव १.८२.८३
कृत्वा च गुरुतत्पं च १.१५.१८	कृष्णागरुसमुद्भूतं १.८१.३२	कोटिकोटिसहस्राणां १.१०३.२४
कृत्वा च नगरी राजा २.५.८२	कृष्णाष्टम्यां च रुद्रस्य २.६.३५	कोटिकोटिसहस्राणि १.३७.१०
कृत्वा च मैथुनं स्पृष्ट्वा १.८९.७४	कृष्णाष्टम्यां तु नाकेन १.८३.७	कोटिकोटिसहस्राणि १.७०.१०९
कृत्वा द्वांद्वोपधातांस्तान् १.३९.३५	कृष्णोन च नृपश्रेष्ठ २.३.१०९	कोटिभास्करसंकाशं १.७१.१०९
कृत्वा धनां प्रयत्नेन १.४.६२	कृष्णैश्न विकटैश्चैव १.९१.२०	कोटिभास्करसंकाशं १.९८.१६४
कृत्वा नृपेन्द्रस्तां कन्यां २.५.८४	के	कोटीनां द्वे सहस्रे तु १.४.४१
कृत्वा पाणितले धीमा १.२६.३०	केचिदाहुर्महादेव २.१५.१६	कोटीश्वरं महातीर्थ १९२.१५७
कृत्वा पापसहस्राणि १.९२.५१	केदारं मध्यमं श्रेष्ठं १.९२.१०३	कोणस्तथास्त्रहंकारो १.७२.१२
कृत्वा पापसहस्राणि २.११.३९	केदारे चैव यल्लिंगं १.९२.१३४	को भवानष्टमूर्तिर्वं १.४१.५५
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.२५	केदारे वा महाक्षेत्रे १.७७.३९	को भवानिति चाहुस्तं १.२९.२०
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.३७	केन गच्छति नरकं १.६.३१	कोयमन्त्रेति संमन्त्र १.१०२.३०
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.४४	केन योगेन वै सूत १.८८.१	कोहं ब्रह्माथवा देवा १.७१.५०
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.४७	केन वा तपसा देव १.३०.३१	को ह्यासौ शंकरो नाम १.२०.६८
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.४९	केनाहं हि हरेयास्ये २.१.७८	कोतूहलान्महायोगी १.२०.२०
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.६२	केयं राजन्महाभागा २.५.५६	कौ
कृत्वा भक्त्या यथान्यायं १.७६.६३	के वयमेव धातुक्ये १.९६.१०२	कौबेर्या तु गदा लेख्या २.२८.५२
कृत्वा यत्कलमानोति १.७७.२०	केवलं घृतहोमेन २.४९.१५	कौ भवन्तौ महात्मानौ १.२२.४
कृत्वार्णवांभसि सितं १.९७.१७	केवलं चापि शुद्धान्त्र १.७८.२०	कौशिकस्य इमे विप्राः २.१.५२
कृत्वा लयं हि कौबेरं १.८४.३२	केवलं द्वादशाहेन १.८९.९१	कौशिकस्यास्य गानेन २.१.६०
कृत्वा वित्तानुसारेण १.७७.१७	केशं नृणां तथांगार २.५०.३९	कौशिकादीस्ततो दृष्ट्वा २.१.४०
कृत्वा विन्यस्य तन्मध्ये १.४४.२२	केशरं नागरं वापि १.७७.७	कौशिकाद्यगणैः सार्थ २.१.२४

क्र	व्वचित्रफुल्लांबुजरेणु। व्वचिदंजनचूणधैः। व्वचिदशेषसुरद्वुमसंकुलं। व्वचिदंडकबंधं तु। व्वचित्रत्यति शृंगार। व्व वा भूयश्च गंतव्यं। व्व शर्वस्तव भक्तिश्च।	१.९२.१४ १.९२.३० १.८०.८ १.९.५९ १.३१.३० १.२०.१६ १.३०.१७	क्षेत्रज्ञः प्रकृतिर्वर्कं। क्षेत्रज्ञः प्रथमा मूर्तिः। क्षेत्रपालोथ वा यत्र। क्षेत्रं प्रदक्षिणं चैव। क्षेत्रस्यास्य च माहात्म्य। क्षेत्रस्यास्य च माहात्म्य। क्षेत्राणि च धनं धान्यं। क्षेत्राण्यासाद्य चाभ्यर्थ्य। क्षेत्राण्येतानि सर्वाणि। क्षोभयामास योगेन। क्षोभिणी मोहिनी नित्यं। क्षमांभोगिनवायुव्योमांतं। क्षमायां सृष्टि विसृजते। क्षमा सा पंचगुणा तस्मा।	२.१६.३ २.१४.६ २.६.५४ २.४८.४० १.९२.२२ १.९२.११ २.४०.६ १.१.१४ १.६१.१ १.७०.७६ १.८२.२१ २.२४.५ १.५४.३३ १.३.२४
क्ष	क्षंतव्यमिति विप्रेद्रं। क्षणश्चापि निमेषादिः। क्षत्रियाणां विशेषेण। क्षमा च शिखरा देवी। क्षमा च सुषुवे पुत्रान्। क्षमा धृतिरहिंसा च। क्षमा युधि न कार्यं वै। क्षमा सत्यं दयादानं। क्षमाहिंसादिनियमैः। क्षयं जघान पादेन। क्षराक्षरात्मकं प्राहुः। क्षारोदेक्षुरसोदश्च। क्षालनं प्रोक्षणं चैव। क्षितिवर्युः पुमानंभः। क्षितौ शर्वः स्मृतो देवो। क्षीरं तत्र कुतोऽस्माकं। क्षीरधारासहस्रं च। क्षीरघट्टिकभक्तेन। क्षीरस्नानं ततो विप्राः। क्षीरस्य मधुनो दधः। क्षीराणवामृतमिव। क्षीराणविमृतमये। क्षीरार्थमदहत्सर्व। क्षीरोदश्च समुद्रोसौ। क्षुतृट् च वर्तते देव। क्षुद्रनद्यस्त्वसंख्याता। क्षुद्रार्त्तेन भयार्त्तेन। क्षुपो दुःखातुरो भूत्वा। क्षुरा कर्त्तरिका चापि। क्षेत्रं गोमिथुनं चैव। क्षेत्रं पुरुषं प्राहुः। क्षेत्रज्ञः क्षेत्रविज्ञान।	२.२१.७३ १.६१.५५ २.२१.४५ २.२७.७९ १.५.४१ १.३४.१५ १.९८.१७५ १.८४.२२ १.८४.१९ १.३०.३६ २.१५.६ १.४६.४ १.२७.९ १.४१.३६ १.८६.१२९ १.१०७.१५ १.१०७.५१ १.८३.३८ १.७७.५० २.२५.५२ १.४६.६ १.३७.३२ १.१०७.२४ १.२९.२९ २.३.३८ १.५२.१२ २.३.६६ १.३६.६९ १.१०८.१३ १.८४.४४ २.१६.४ १.७०.१०३	खर्गेद्रमारुह्य नर्गेद्रकल्पं। खट्वांगधारिणी दिव्या। खड्गचक्रेति विधिना। खरजोगरुडश्चैव। खरस्य च गजस्याथ। खात्मेन्दुवहिसूर्याभो। खित्रस्य धारणायोगा। खुरांश्च रजतेनैव। खेचरी वसुचरी च। ख्यातः कल्माषपादो वै। ख्यातमासीतदा तस्य। ख्यातिः प्रज्ञामहाभागा। ख्यातिः प्रत्युपभोगश्च। ख्यातिशीलस्तथा चांद्रं। ख्यायते तदगणैर्वापि। ख्यायते यत्त्विति ख्याति।	१.७२.५४ १.८२.१६ २.२७.२२४ २.२७.१२५ २.५२.११ २.१२.४ १.९१.४४ २.३८.३ १.८२.४९ १.६६.२७ २.१.२३ १.७०.३३२ १.७०.१९ १.७९.१९ १.७०.२० १.८.७३
व्व	व्वचिच्च केकारुतनादितं। व्वचिच्च दंतक्षतचारु। व्वचित्वचिद्गंधकदंबकै।	१.९२.१५ १.९२.२० १.९२.१८	गंगया सहितं चैव। गंगाकाशान्त्रिपतिता। गंगादिभिः कृत्तिकाद्यैः। गंगा निरुद्धा बाहुभ्यां। गंगा माता जगन्माता। गंगायमुनयोर्मध्ये। गंगास्नानसमं पुण्यं। गंतु चक्रे मर्ति यस्य।	१.७६.५६ १.७१.१४७ १.७१.१२८ १.९७.२७ १.८२.८८ १.४०.६१ १.७७.५६ १.१००.५

गंतुमर्हसि नाशाय	१.७१.७८	गणो मुनिज्योतिषां तु	१.५४.२९	गाननृत्यादिकं चैक	२.२.७
गंधद्वारां दुराधर्षा.	१.२५.१६	गतं दृष्ट्वाथ पितरं	१.६४.१०५	गानबंधुं मुनिः प्राह	२.३.७१
गंधद्वारेति तस्या चै	१.१५.१९	गतवान् गणपो देवः	१.२२.१६	गानबंधुं समासाद्य	२.३.७८
गंधपुष्पं तथा धूपं	१.२७.४७	गतागतं मनुष्येण	१.६१.६१	गानयोगसमायुक्ता	२.३.५५
गंधपुष्पैस्तथा धूपै	१.२७.२३	गतानि तावच्छेपाणि	१.४.५०	गानयोगेन ये नित्यं	२.१.३७
गंधमाली च भगवा.	१.६५.१५२	गतासु र्भगवानासीत्	१.७०.२६६	गानयोगेन सर्वत्र	२.३.२८
गंधवीविद्याधरकिन्नरणा.	१.५८.११	गतिर्नः सर्वदास्माभि.	१.७१.१०९	गानविद्यां प्रति तदा	२.३.५३
गंधवीणां च पतये	१.२१.२१	गते पितामहे देवो	१.१०२.९	गानेनाराधितो विष्णुः	२.२.३
गंधवी देवसंघाश्च	२.१०.३६	गते पुण्ये च वरदे	१.४२.१	गामालभ्य च गायत्र्या	२.३५.११
गंधवीप्सश्चैव	१.५५.६८	गते महेश्वरे देवे	१.३८.१	गायंतश्च द्रवंतश्च	१.४४.४
गंधवीप्सरसां संधैः	२.३.८६	गते महेश्वरे देवे	१.७३.१	गायत्रं च ऋचं चैव	१.७०.२४३
गंधवीरप्सरोभिश्च	१.५४.२२	गते महेश्वरे सांबे	१.६४.१०७	गायत्री तु ततो रौद्रीं	१.१३.१३
गंधवीरप्सत्साक्ष्यो	१.६५.१२०	गते मुनिवरे तस्मिन्	२.५.७६	गायत्रीप्रभवं मंत्रं	१.१७.८४
गंधवर्णरसैर्दुष्ट.	१.८९.५१	गत्वा तदाश्रमे शंभोः	१.१०१.३९	गायत्र्या चैव गोमूर्तं	२.२८.९०
गंधवर्णरसैर्हीनं	१.७०.४	गत्वा विज्ञापयामासुः	१.२९.३८	गायत्र्या देवमध्यर्च्यं	१.७९.८
गंधादिपेषणं चैव	२.५.१०	गत्वा शिवपुरं दिव्यं	१.७७.२१	गायन् शृण्वंस्तमाप्नोति	२.३.११२
गंधैः स्नग्धूपदीपैश्च	२.४७.१२	गत्वा शिवपुरं रस्यं	१.७७.११	गावश्चाराध्य यत्नेन	२.३८.६
गंधो रसस्तथा रूपं	१.९.२७	गदामुदधृत्य हत्वा च	१.९७.२१	गि	
गंधीरोषो गंभीरो	१.६५.७८	गमिष्यन्ति महात्मानो	१.२४.३९	गिरिजां पूर्ववच्छंभो.	१.१०६.१२
गगनं स्पर्शनं तेजो	१.८२.४४	गरुडोपि मया बद्धो	१.९७.३०	गिरिक्षस्तथोपेक्षः	१.६९.२७
गगनव्यापि दुर्धर्षं	१.९६.६२	गर्भवासो वसूनां च	१.२९.२८	गिरिद्रो मंदरः श्रीमान्	१.९७.२६
गच्छच्चं शरणं शीघ्रं	१.१०२.५०	गर्भाधानादिकार्येषु	१.२५.९४	गिरेः पृष्ठे परं शार्वं	१.८०.९
गच्छ शीघ्रं च पश्यैनं	२.३.८	गर्भे दुःखान्यनेकानि	१.८६.२२	गिरेरुपरि विप्रेन्द्राः	१.४८.२१
गच्छेन्द्र मा कृथास्त्वत्र	२.५.३०	गलादधो वितत्या य.	१.८.२	गीतैरेनमुपासन्ते	१.५५.४२
गच्छेद्वायसपंक्तीभिः	१.९१.९	गले मध्ये तथांगुष्ठे	१.८५.७९	गु	
गच्छोपशममीशेति	१.९२.७२	गवां कोट्यबुदे चैव	२.३.२५	गुंजागिरिवरतटा	१.९६.१०५
गजं सुलक्षणेपेतं	२.४२.२	गव्यं क्षीरमतिस्वादु	१.१०७.६	गुणत्रयं क्रमेणैव	१.८.९५
गजदानं प्रवक्ष्यामि	२.४२.१	गव्यं घृतं ततः श्रेष्ठं	२.२५.५०	गुणत्रयं चतुर्धाख्यं	१.७३.१५
गजोष्ठासदृशाकारं	२.२५.३९	गहराय घटेशाय	१.२१.५	गुणात्मिका च तदवृत्ति	१.४.५६
गणत्वं लभते दृष्ट्वा	१.९२.१०१	गा		गुणान् देवावृधस्याथ	१.६९.६
गणपाश्च महाभागाः	१.१०३.१२	गांगा गंगाम्बुसंभूता	१.५४.५८	गुणे तु ख्यापिते तस्य	१.८५.१७९
गणमातांविका चैव	२.२७.८४	गां गोभिर्ब्रह्मिणान् सर्वान्	२.१७.२१	गुणोत्तरमथैश्वर्ये	१.८८.२९
गणांविकायै विद्यहे	२.२७.५०	गांधारश्च सुरापश्च	१.६५.१३९	गुरुः कान्तो निजः सर्गः	१.६५.१६५
गणांविकायै विद्यहे	२.४८.६	गांधारी चैव माद्री च	१.६९.१०	गुरुतः शास्त्रतश्चैव	२.२०.१९
गणेशायतनैर्दिव्यैः	१.८०.२६	गांधारी दुंदुभी दुर्गा	२.२७.१४९	गुरुदैवतभक्ताय	२.५५.२२
गणेशेशं प्रवक्ष्यामि	२.३४.१	गाणपत्यं च दैत्याय	१.९३.२६	गुरुप्रसादजं दिव्यं	२.२०.१६
गणेश्वराश्चा तुष्टुः	१.१०५.८	गाणपत्यं ततः सम्भोः	१.७२.११७	गुरुप्रियकरो मंत्रं	१.८५.१८३
गणेश्वराश्च संक्रुद्धा	१.१००.१४	गाणपत्यं ददौ तस्मै	१.१००.४९	गुरुरेको हि वै श्रीमान्	२.४४.८
गणेश्वरैदेवगणैश्च	१.७२.७५	गाणपत्यं दृढं प्राप्तः	१.६६.२	गुरुर्देवो यतः साक्षा-	१.८५.१६९
गणेश्वर्यमनुप्राप्तो	१.६५.४७	गानकीर्तिं वयं तस्य	२.१.२९	गुरुश्च शास्त्रवित्त्राजः	२.२०.३४

गुरुस्तुष्टो दहत्येवं	१.८५.१७३	गोमयेन समालिप्य	२.१.२०	घृणी ददौ पुनः प्राणान्	१.४१.४९
गुरुपदेशयुक्तानां	१.८९.३३	गोमुखी व त्रिभागैका	१.३१.१४	घृतस्नानेन चानंतं	१.७७.५१
गुरोरपि हिते युक्तः	१.८९.५	गोमेदकेन वैकंपं	२.३३.५	घृतेन करवीरेण	२.५२.९
गुर्वज्ञापालकः सम्यक्	१.८५.१६७	गोरूपं सुखुरं दिव्यं	२.३५.४	घृतेन च पृथक्यात्रे	२.४५.१३
गुह्याद् गुह्यातरं साक्षा.	१.८५.४०	गोलोकं समनुप्राप्य	१.८४.४५	घृतेनाष्टशतं हुत्वा	१.८५.२०३
गुह्यालयैर्गुह्यागृहै.	१.८०.२७	गोष्ठशायी मुनिश्रेष्ठाः	१.८३.२८	प्राणेद्रियात्मकत्वेन	२.१४.१५
<b>गृ</b>					
गृणंतश्च महात्मानो	१.१२.१२	गोसहस्रप्रदानं च	२.३८.१	चंडः सर्वगणेशानो	१.८२.२५
गृष्मीगृध्रान् कपोतांश्च	१.६३.३१	<b>गौ</b>		चंडयक्षो गणपति.	२.२७.११०
गृष्मोलूकमुखैश्चान्यैः	१.५१.१३	गौणं गणेश्वराणां च	१.८६.३३	चंडब्यूहः समाख्यात.	२.२७.१४४
गृहद्वारं गतो धीमां.	१.२९.५८	गौतमस्तु तदा व्यासो	१.२४.९५	चंडा चंडमुखी चैव	२.२७.६७
गृहमेधिनः पुराणास्ते	१.७०.१९०	गौतमी कौशिकी चार्या	१.७०.३३६	चंडायाः कथितो व्यूहो	२.२७.१४८
गृहस्थैश्च न निद्यास्तु	१.२९.४३	गौतमोत्रिः सुकेशश्च	१.३३.२१	चंडिका चपला चेति	२.२७.१५३
गृहस्थोपि पुरा जेतुं	१.२९.४६	गौरजः पुरुषो मेषो	१.७०.२४०	चंडिकेश्वरकं देवि	१.९२.१६६
गृहस्थो ब्रह्मचारी च	१.१०.११	गौरहं गहरश्चाहं	२.१७.१४	चंद्रः सूर्यः शनिः केतु.	१.९८.६१
गृहिणी प्रकृतिर्दिव्या	१.५३.५२	गौरी माया च विद्या च	१.१६.३४	चंद्रऋष्टग्रहाः सर्वे	१.५९.४४
गृहीतो दम्यमानस्तु	१.८.५२	गौरीरूपाणि सर्वाणि	२.११.२४	चंद्रघ्राणा बला चैव	२.२७.१४६
गृहीत्वा गणपाः सर्वान्	१.१००.१५	<b>ग्र</b>		चंद्रविंबस्थितायैव	१.७२.१३९
गृहे क्षेत्रे तथावासे	२.७.११	ग्रंथकोटिप्रमाणं तु	१.२.२	चंद्रभानामतः सर्वाः	१.५९.२७
गृहे जपः समं विद्या.	१.८५.१०६	ग्रंथैकादशसाहस्रं	२.५५.३६	चंद्रमंडलसंकाश	२.२१.१२
गृहोपकरणैश्चैव	१.८४.४०	ग्रथितैः स्वैर्वचोभिस्त	१.५५.१९	चंद्रस्य षोडशो भागो	१.५७.१३
गृह्या नारायणी मोहा	१.२७.२१३	ग्रसामि त्वां प्रसादेन	१.३७.३३	चंद्रांशुसन्निधैः शस्त्रैः	१.९७.१६
<b>गे</b>		ग्रहणांतं हि वा विद्वा.	१.२९.७१	चंद्राञ्छ्यकिरणास्तस्य	२.१२.९
गेयनादरतैर्दिव्यैः	१.८०.३२	ग्रहणादिषु कालेषु	१.२.२४	चंद्रादित्यौ सनक्षत्रो	२.५४.२५
<b>गो</b>		ग्रहणादिषु कालेषु	२.२८.१६	चंद्रार्घशेखरश्चंद्रो	२.११.११
गोचर्मात्रमालिख्य	१.७७.८२	ग्रहनक्षत्रताराश्च	२.१०.३७	चंद्रांशुजालशबलैः	१.९२.२९
गोचर्मेश्वरमीशानं	१.९२.१५२	ग्रहनक्षत्रतारासु	२.५७.३३	चंपकाशोकपुंनाग	१.५१.३
गोत्रतो वै चंद्रमसः	१.४०.५८	ग्रहणि ऋषयः सप्त	१.५३.३९	चकार सर्वं भगवा.	१.४४.३४
गोत्रेस्मिन्वैचंद्रमसो	१.४०.५१	ग्रहाधिपत्ये भगवा.	१.५८.२	चक्रपक्षे निबद्धास्तु	१.५५.६
गोपयमास कमलं	१.९८.१६१	ग्रहाधिपत्ये भगवान्	१.५७.३८	चक्रपाणिरहं नित्यं	२.५.१३१
गोपव्यूहं वदाम्यत्र	२.२७.२०३	ग्रहान्त्रिः सृत्य सूर्यातु	१.५४.६८	चक्रः पादप्रतिष्ठार्थं	१.४४.२३
गोपव्यूहः समाख्यातो	२.२७.२०७	ग्रहैश्च संवृतं वापि	१.७७.७६	चक्रुद्देवास्ततस्तस्य	१.३६.५२
गोपायी कथितो व्यूहो	२.२७.२११	ग्रामणीयक्षभूतानि	१.५५.२०	चक्रे कथां विचित्रार्थं	१.१.७
गोपुरैर्गोपते: शंभो.	१.८०.२५	ग्रामण्यो यातुधानाश्च	२.२२.६३	चक्षुः पूतं चरेन्मार्गं	१.८९.७
गोपुरैविविधाकारै.	१.४८.१०	ग्रीवां तु पद्मरागेण	२.४१.४	चक्षुःश्रोत्रे च ज्ञायेते	१.६७.२२
गोप्रेक्षकमथागम्य	१.९२.६८	<b>घ</b>		चक्षुषी चाज्यभागौ तु	२.२५.९९
गोप्रेक्षकमिदं क्षेत्रं	१.९२.६७	घंटा सरस्वती देवी	१.७२.२४	चतुःशृंगी चतुर्वक्त्रा	१.१६.२१
गोप्रिमहीं संपत्ते	१.८८.३८	घंटेश्वरी महाघोरा	२.२७.१३९	चतुःषष्ठिप्रकाराय	१.७२.१३०
गोमंडलेश्वरं चैव	१.९२.१६२	घनतोयात्मकं तत्र	१.६१.७	चतुःषष्ठ्यात्मतत्त्वाय	१.७२.१३६
गोमयालिप्तभूमौ तु	२.३१.२	घनतोयात्मिका ज्ञेयाः	१.६१.२७	चतुःषष्ठ्या विशाखश्च	१.१०३.१४
		घर्षयामास भगवान्	१.१००.१८		

चतुरंगुलमध्ये तु	२.२५.४७	चत्वारि च सहस्राणि	१.३९.८	चेष्टिं तत्क्षणे राजन्	२.१.३६
चतुरंगुलहीनं तु	२.३०.६	चत्वार्येतानि रूपाणि	२.१६.२२	चै	
चतुरस्त्रं बहिश्चांतं.	१.३१.८	चरणौ चैव पातालं	१.७५.८	चैत्रेयि रुद्रमध्यर्च्य	१.८३.२७
चतुरशीतिसाहस्रं.	१.४८.२	चराचराणां भूतानां	२.१३.३	चैत्रे मासि भवेदंशु.	१.५९.३३
चतुरशीतिसाहस्रो	१.०३.८	चराचराणां भूतानां	२.१२.४१	छ	
चतुर्गुणं बुद्धिपूर्वे	१.१५.८	चराचराणि भूतानि	२.१०.२८	छंदो क्रष्णिर्भरद्वाजः	१.८५.५३
चतुर्थी वामदेवाख्या	२.१४.९	चराचरविभागं च	१.२८.२८	छंदो देवो च गायत्री	१.८५.४७
चतुर्थैव विभजे.	२.२२.३	चराचरशरीरेषु	२.१२.४४	छंदोऽनुष्टुप्क्रष्णिश्चात्री	१.८५.५०
चतुर्थ्या स्त्री न गम्या तु	१.८९.१०९	चरुणा च यथावद्धि	२.२५.१०२	छगली मोदिनी साक्षा.	२.२७.२१८
चतुर्दशविधेष्वेव	१.८६.८७	चरुणा सघृतेनैव	२.५३.४	छत्रं शतशलाकं च	१.४४.२६
चतुर्दशसु लोकेषु	२.१०.४३	चरुश्च वहिर्यज्ञश्च	१.१७.७	छाया च तस्मात्सुषुवे	१.६५.५
चतुर्दशानां स्थानानां	१.८८.७२	चरेद्धि शुद्धः समलोष्ठ.	१.९०.२४	छाया च विष्णुषो विप्रा	१.८९.७१
चतुर्द्वैष्णवदेव.	१.९२.१७६	चरेद्धि भवेत्रारी	१.८९.११९	छायाविहीननिष्पत्ति.	१.९.४२
चतुर्द्वारसमोपेतं	२.२८.२३	चर्वन्तमाज्यपूर्वं च	२.४५.६६	छायाशपात्पदं चैकं	१.६५.८
चतुर्द्वारसमोपेते	२.२८.४२			छाया स्वपुत्राभ्यधिकं	१.६५.६
चतुर्धा च चतुर्धा च	१.७२.१२९			छिद्रं वा स्वस्य कंठस्य	१.९१.१७
चतुर्भगैकहीनं तु	१.३९.१			छिन्नं च निपपाताशु	१.१००.३२
चतुर्भिस्तनुभिर्नित्यं	१.८२.३७			छिन्नं तमेनाभिसंघं	१.९६.५०
चतुर्मुखस्तु ब्रह्मत्वे	१.७०.९०				
चतुर्युग्मसहस्रांते	१.४.५			ज	
चतुर्युग्मस्य च तथा	१.४.३६			जंघे शिशनमुपस्थं च	२.१८.४९
चतुर्युग्मानां सर्वेषाः	१.४०.८६			जंतवो दिवि भूमौ च	१.७५.२६
चतुर्लक्षणं संप्राप्त	१.२.५			जंबूः प्लक्षः शाल्मलिश्च	१.४६.२
चतुर्वक्त्रो विशालाक्षः	१.२०.१०			जंबू द्वीपे तत्रापि	१.५२.२४
चतुर्वर्णः ससौवर्णो	१.४९.१९			जंबूद्वीपेश्वरं चक्रे	१.४६.१९
चतुर्विशतिकां देवीं	२.२९.४			जंबूफलरसं पीत्वा	१.५२.४२
चतुर्विशतृतीये तु	१.९.२६			जंबू फलरसाहारा	१.५२.४०
वतुर्विशत्वकारेण	१.८६.२९			जंभः कुंभश्च मायावी	१.८२.६१
चतुर्विशात्मकं ह्येतत्	१.९.३९			जगतां हिताय भवता	१.९४.१८
चतुर्विधानां भूतानां	१.६१.५७			जगत्रयं सर्वमिवापरं तत्	१.७२.१००
चतुर्वृहः समाख्यातः	१.२८.२४			जगत्रयेऽत्र सर्वत्र	१.१०५.२१
चतुर्वृहेण मार्गेण	१.२८.२३			जगत्रतापनमृते	१.६०.१४
चतुष्कोणं तु वा चूर्णं	१.७७.१००			जगत्यस्मिन्हि देहस्थं	१.९.२२
चतुष्पदां चतुर्वक्त्रां	१.१३.६			जगत्संहारकारेण	१.९६.११३
चत्वारस्तु महात्मानः	१.१४.१०			जगदावासहृदयं	१.३२.३७
चत्वारस्तु महात्मानो	१.२४.१५			जगदद्वैधमिदं चक्रे	२.६.३
चत्वारस्तु महाभागा	१.२४.२९			जगद्योनि महाभूतं	१.३.४
चत्वारिंशत् समावृत्ति	१.८५.१०४			जगद्योनि महाभूत	१.७०.५
चत्सारिंशत्सहस्राणि	१.४.२७			जगर्जुरुच्चैः पापिष्ठा	१.९७.१०
चत्वारि च सहस्राणि	१.३९.९			जगाम देवताभिर्वं	१.८०.४
				जगाम देवदेवेशं	१.९७.५

जगाम नैमिषं धीमान् ।	१.१.८	जपाच्छेष्ठतमं प्राहुः ।	१.८६.१	जले निवसनं यद्वद् ।	१.९.३२
जगाम भगवान् ब्रह्मा ।	१.९५.६०	जपादेव न संदेहो ।	१.८५.२	जले वा मैथुनं कुर्यात् ।	२.६.७१
जगाम मदनं लब्ध्वा ।	१.१०१.४६	जपान्यनियमाश्चैव ।	१.८५.१७६	जहौ प्राणंश्च भगवान् ।	१.४१.४२
जगाम रंहसा तत्र ।	१.९६.१६	जपित्वा तु महादेवी ।	१.१३.१४	जा ।	
जगाम शौनकमृषि ।	१.६६.७५	जपित्वैवं महाबीजं ।	१.९२.१८२	जांबवत्या वचः श्रुत्वा ।	१.६९.७२
जगाम स रथो नाशं ।	१.६६.७२	जपेत्स याति विप्रेद्रा ।	२.७.१४	जांबूनदमयैः पद्मैः ।	१.५१.२३
जगाम स स्वयं ब्रह्मा ।	१.१०२.३	जपेदक्षरलक्षं वै ।	१.८५.९९	जांबूनदसमप्रख्या ।	१.४८.३३
जगामेष्टं तदा दिव्यं ।	१.१०२.१५	जपेदत्रे यथान्वायं ।	२.३८.७	जागरं कारयेद्यस्तु ।	१.९२.१७९
जगुतदा च पितरो ।	१.६४.५०	जपेदष्टोत्रशतं ।	१.८५.१९१	जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिश्च ।	१.८६.७२
जगौ कलपदं हृष्टो ।	२.१.७४	जपेद्वा केवलां विद्यां ।	२.५२.१६	जातकर्मादिकं कृत्वा ।	२.८.२०
जग्मतुः प्रणिपत्यैन् ।	१.९८.१९४	जपेन पापं शमयेदशेषं ।	१.८५.१२५	जातकर्मादिकाः सर्वाः ।	१.१०१.३
जग्मुर्यथागतं देवा ।	२.२०.६	जपेत्रामानां सहस्रं च ।	१.९८.१९५	जातमात्रं सुतं दृष्ट्वा ।	१.१०५.१३
जघान च सुतं प्रेक्ष्य ।	१.९५.१६	जपेल्लक्षमधोराख्यं ।	१.१५.२३	जातां तदार्नीं सुरसिद्धसंघा ।	१.१०६.१६
जघान भगवान् रुद्रः ।	१.१००.२३	जप्त्वा सर्वाणि मंत्राणि ।	१.८५.१९७	जातानि न तदन्यानि ।	२.१६.२९
जघान मूर्ध्नि पादेन ।	१.१००.३७	जप्त्वा हुत्वाभिमत्रैवं ।	१.२५.२४	जातानि भूतवृदानि ।	२.१०.४२
जजाप भगवान् रुदः ।	२.६.९०	जयधोषो महानासी ।	१.३५.२६	जाता यदा कालिमकालकंठी ।	१.१०६.१५
जजाप मंत्रमनिश ।	१.६२.२३	जयध्वजश्च राजासी ।	२.१.५१	जाताय बहुधा लोके ।	१.९५.४०
जज्ञे च रुक्मकवचात् ।	१.६८.३२	जयमंगलशब्दादि ।	१.६८.१२	जाता शिवान्र संदेहः ।	२.१६.३०
जज्ञे चित्ररथस्तस्य ।	१.६८.२४	जयशब्दरवैर्दिव्यैः ।	२.२८.७७	जातिकंकोलकर्पूर ।	१.२७.१३
जज्ञेरे मानसा ह्येते ।	१.६३.७९	जयस्तंभे विशिष्टं भो ।	२.२७.२५८	जातूकण्यो यदा व्यासो ।	१.२४.१२६
जटिनो मुंडिनश्चैव ।	१.३४.३१	जयादिप्रभृतीन सर्वान् ।	१.९८.१२१	जातूकण्यो हरिः साक्षात् ।	१.७.१८
जटी मुंडी शिखंडी च ।	१.१६.३७	जयादिस्विष्टपर्यात् ।	२.५२.१५	जाते रामेऽथ निहते ।	१.६९.४६
जठरो देवकूटश्च ।	१.४९.४	जयादिस्विष्टपर्यात् ।	२.२१.५५	जानातेज्ञनमित्याहु ।	१.७०.२६
जननी ब्रह्मदत्तस्य ।	१.६३.८७	जया निद्राभयालस्या ।	२.२७.१८१	जानुभ्यामवर्नी गत्वा ।	१.१९.८
जनयत्यंगना यस्मा ।	१.८९.११७	जयाभिषेकं देवस्य ।	२.२७.९	जाने तथैनां भगवान् ।	१.३६.३८
जनलोको महलोकात् ।	१.५३.४२	जयाभिषेक ईशेन ।	२.२७.२	जाने वोर्ति सुरेंद्राणां ।	१.१०१.२५
जनानुरागसंपत्रो ।	२.२७.८३	जयाभिषेकमखिलं ।	२.२७.१०	जायस्व शीघ्रं भद्रं ते ।	१.६९.२२
जनार्दनसुतः प्राह ।	१.३७.२१	जयामग्निशिखाकारां ।	१.१९.२१	जि ।	
जनार्दनोपि भगवान् ।	१.७२.१७३	जरामरणगर्भेभ्यो ।	१.८९.२०	जितेद्रियान्कुलोद्भूतान् ।	२.४३.५
जनासक्ता बभूवस्ता ।	१.७१.८५	जरामरणनिरुक्तान् ।	१.६.१४	जिह्वा प्रसादिता स्पष्टा ।	२.३.५४
जन्तुभिर्मिश्रिता ह्यापः ।	१.७८.४	जराव्याधिक्षुधाविष्टा ।	१.४०.७२	जिह्वाबंधो न तस्याभूद् ।	२.१०.५
जन्मप्रभृति देवेशं ।	१.९५.३	जरासिद्ध नमस्तुभ्य ।	१.२१.३६	जिह्वामेकां तुलामध्ये ।	२.२८.३५
जन्मांतरसहस्रेषु ।	१.९२.६६	जलंधरं जटामौलौ ।	१.९७.१	जिह्वेद्रियात्मकत्वेन ।	२.१४.१४
जन्मांतरे पि देवेन ।	१.९३.१६	जलंधरेशयोस्तेन ।	१.९७.६		
जन्माधिपो महादेवः ।	१.९८.८८	जलंधं च कुमारं च ।	१.४६.२५		
जपः शिवप्रणीधानं ।	१.८.३१	जलमध्ये हुतवहं ।	१.९.३७		
जप नित्यं महाप्राज्ञ ।	१.६२.१९	जलस्य नाशे वृद्धिर्वा ।	१.५४.६७		
जपन् स वासुदेवेति ।	१.६२.३१	जलानामोषधीनां च ।	२.१२.२५		
जपयज्ञसहस्रेभ्यो ।	१.७५.१४	जलाय जलभूताय ।	१.१८.८		
जपहोमादिकं नास्ति ।	२.६.३४	जलेन केवलेनैव ।	१.९२.१७४		
जपहोमार्चनादाना ।	२.३२.१				

जीमूतस्य च जीमूतो	१.४६.४०	ज्ञानेन निर्देहित्यापं	१.८.६	तं ज्ञात्वा होमयेद्दक्त्या	२.२५.१०८
जीवकाश्च तथा क्षीणा	१.५४.५१	ज्ञानेन निर्वृतिः सिद्धा	२.२८.१०	तं डुलानां तदर्थं स्या.	२.२७.३७
जीवन्मुक्तो यतस्तस्मा.	१.८६.१०७	ज्ञानेनैव भवेन्मुक्तिः	१.७५.५	तं डुलैश्च तिलैर्वापि	२.२७.३५
जीविताश धनाशा च	१.६७.२३	ज्ञेयं च तत्त्वविद्धिर्वै	२.१३.२१	तं तुष्टुवुः सुरश्रेष्ठा	१.९५.२१
जु		ज्य		तंत्री च घंटां विपुलं	२.२६.२०
जुहुयाद्विरजो विद्वान्	२.१८.४७	ज्यामधस्य मया प्रोक्ता	१.६८.५०	तं दृष्ट्वा ध्यानसंयुक्तो	१.१३.४
जे		ज्यामधस्याभवद्वार्या	१.६८.३७	तं दृष्ट्वा नंदिनं सर्वे	१.८०.४५
जेता क्षत्रस्य सर्वत्र	१.६६.१३	ज्येष्ठः पुत्रशतस्यासीद्	१.६५.३२	तं दृष्ट्वा परमेशानं	१.१०७.२९
जेतुभिच्छामि तं विप्रं	१.३६.२५	ज्येष्ठः सर्वेश्वरः सौम्यो	१.८२.९३	तं दृष्ट्वा पुरुषं श्रीमान्	१.११.४
जै		ज्येष्ठस्तु यतिर्मोक्षार्थी	१.६६.६३	तं दृष्ट्वा बालमीशानं	१.१०६.२२
जैगीषव्यो विष्णुः ख्यातः	१.२४.३७	ज्येष्ठा तेन समाख्याता	२.६.६	तं दृष्ट्वा शैलजा प्राह	१.९२.११९
ज्ञ		ज्येष्ठान्येपि च ते सर्वे	१.८९.३५	तं दृष्ट्वा संस्थितं देव.	१.९९.१११
ज्ञातं प्रसादादुद्रस्य	१.३६.३७	ज्येष्ठाय चैव श्रेष्ठाय	१.१६.१५	तं देवदेवं सुरसिद्धसंघा	१.७२.५१
ज्ञातं मयेदमधुना	१.९८.१७०	ज्येष्ठाय रुद्ररूपाय	१.७२.२७	तं देवमीशं त्रिपुरं	१.७२.७१
ज्ञात्वा च विविधोत्पत्तिं	१.२०.७५	ज्येष्ठा वरिष्ठा वरदा	१.८२.१०४	तं पुष्टिवर्धनं देवं	२.५४.२७
ज्ञात्वा चेश्वरसद्वावं	१.२०.९५	ज्येष्ठा ह्यपर्णा ह्यनुजा	१.१०१.६	तं प्रणम्य महात्मानं	२.३.८९
ज्ञात्वा न हिंसते राजा	१.४०.१५	ज्येष्ठे मासि महादेवं	१.८४.३५	तं प्रभुं प्रीतमनसं	२.१९.१
ज्ञात्वा प्रयोगं विधिना	१.८५.१७	ज्येष्ठे मासे च देवेशं	१.८३.३१	तं प्राह च महादेवं	१.३०.११
ज्ञात्वा शक्तिसुतस्यास्य	१.६४.७१	ज्येष्ठो नाभिरिति ख्यातः	१.४७.४	तं विष्णुलोकं परमं	१.५७.३२
ज्ञात्वा सोपि दधीचस्य	१.३६.३६	ज्योतिरग्निस्तथा सायं	१.२६.३६	तं शशांकं पुनर्द्रष्टुं	१.९२.११६
ज्ञात्वा स्वनेत्रमुद्धृत्य	१.९८.१६२	ज्योतिरुत्पद्यते वायो.	१.७०.३३	तं सर्वदेवाः सुरलोकनाथं	१.७२.५५
ज्ञानं गुरोहि संपर्का.	१.८६.११५	ज्योतिर्गणप्रचारं वै	१.५४.१	तं सिद्धगंधर्वसुरेन्द्रवीराः	१.७२.५८
ज्ञानं च मोक्षदं दिव्यं	२.५५.७	ज्योतिर्मयो निराकारो	१.९८.१३३	तक्षकश्च तथा नाग	१.५५.२८
ज्ञानं च हीयते तस्मात्	१.८५.२१३	ज्योतिरश्चापि विकुर्वाणं	१.७०.३४	तच्चांडालसमं ज्ञेयं	१.८५.१५५
ज्ञानं धर्मोद्धर्वं साक्षा.	१.८६.१४४	ज्योतिरश्चाहं तमश्चाहं	२.१७.१९	तच्छारीरसमुत्पन्नैः	१.७०.१९६
ज्ञानं यथा तथा ध्यानं	१.८६.११९	ज्योतिषं चापरा विद्या	१.८६.५३	तच्छास्त्रमुपदिश्यैव	१.७१.७७
ज्ञानं विचारितं लब्ध्वा	१.७६.५५	ज्योतिषां गतियोगेन	१.५७.२६	तच्छृणुष्व मुनिश्रेष्ठ	२.३.५८
ज्ञानं विचारतो लब्ध्वा	१.७६.३५	ज्योतिषामयनं सिद्धिः	१.६५.८१	तच्छुत्त्वा कौशिकः प्राह	२.१.२५
ज्ञानतत्त्वं प्रयत्नेन	२.९.५२	ज्योतिषान् द्युतिमान	१.४६.१८	तच्छुत्त्वा भगवान् विष्णु	२.५.७८
ज्ञानेमेवाध्यसेतस्मा.	१.८६.१०४	ज्योत्स्ना रात्र्यहनी संध्या	१.७०.२२१	तच्छुत्त्वा मंत्रमाहात्म्यं	१.८५.२५
ज्ञानयोगं समासाद्य	१.७७.१६	ज्व		तटनी रत्नपूर्णस्ते	१.१०७.१२
ज्ञानयोगेश्वरैः सिद्धैः	२.१.४४	ज्वलितः स गृसिंहाग्निः	१.९६.१३	तडागैर्दीर्घिकाभिश्च	१.८०.२९
ज्ञानवैराग्ययुक्तस्य	१.८६.१४५	ज्वालाकेशो द्वादशभिः	१.१०३.१५	ततः कपर्दी नंदीशो	१.७१.१४२
ज्ञानस्कंधो महाज्ञानी	१.९८.१४	ज्वाला माला करालं च	२.६.२४	ततः कार्यविरोधाद्धि	१.८९.७६
ज्ञानस्यैवेह माहात्म्यं	१.८६.१५५	ज्वालामालासहस्राद्धं	१.१७.३४	ततः कालेन महता	२.३.९०
ज्ञानात्परतरं नास्ति	१.८६.११७	झ		ततः कालेन संप्राप्य	२.३.४७
ज्ञानादीनि च रूपाणि	१.७०.२२	झङ्गरैः शंखपटहैः	१.५१.१७	ततः कालेन सा देवी	२.५.१९
ज्ञानाय ज्ञानगम्याय	१.१८.२९	ट		ततः कृतयुगे तस्मिन्	१.३९.१०
ज्ञानिनः सर्वपापानि	१.८६.११८	टादिपादाय रुद्राय	१.१०.४.१७	ततः कोलाहलमधू	२.१.४१
ज्ञानिनां सूक्ष्मममलं	१.७५.२२	त		ततः क्षणत् प्रविश्यैव	१.१००.११
ज्ञानेन ज्ञेयमालोक्य	१.७७.१८	तं जित्वा सर्वमीशानं	१.९७.८	ततः पंचदशे प्राप्ते	१.२४.६७

ततः पंचदशे भागे	१.५६.१४	ततः सा कन्यका भूयः	२.५.११४	ततस्ते सहिता दैत्याः	१.७१.१४
ततः परममेयात्मा	१.२०.४९	ततः सासूत तनयं	१.६४.४६	ततस्तैर्गतैः सैष देवो नसिंहः	१.९५.२०
ततः पाशुपताः सिद्धा	१.९२.११०	ततः सूर्ये पुनश्चान्या	१.५५.५२	ततस्त्रिंशतमः कल्पो	१.१२.१
ततः पुनरपि ब्रह्मा	१.९२.७७	ततः सृष्टि विशेषेण	१.६३.६	ततस्त्रैलोक्यसंप्लावो	२.३.७३
ततः पुनरभूतासां	१.३९.४२	ततः सृष्टिरभूतस्मात्	१.४१.६	ततस्त्वदृष्टमाकारं	१.९२.११५
ततः पृथुर्मुनिश्रेष्ठो	१.६५.३३	ततः स्फटिकसंकाशं	१.२७.४९	तताप च महाघोरं	२.३.५
ततः प्रक्षालयेत् पादं	१.२६.३९	तत एव प्रवृत्ते तु	१.१०३.३७	ततो गंधर्वसंघाशच	२.३.७०
ततः प्रणम्य तं मायी	१.७१.७९	तत एवं प्रसन्ने तु	१.१०२.५४	ततो गणाधिपाः सर्वे	१.४४.३८
ततः प्रणम्य देवेशं	१.४२.८	ततश्च प्रतिसंध्यात्मा	१.२०.८२	ततोऽतिशयमापनः	२.३.१०४
ततः प्रणम्य देवेशं	१.३७.४	ततश्चाक्षरलक्ष्मं च	२.५१.४	ततोथ नारीगजवाजिसंकुलं	१.८०.१२
ततः प्रणम्य देवेशं	१.७१.६१	ततश्चोकारमुच्चार्य	१.७३.१४	ततो दीर्घेण कालेन	१.२२.१८
ततः प्रणम्य देवेशं	१.७२.१७०	ततश्चोर्ध्वं चरेदेवं	१.२९.७८	ततो दुःस्वप्नशमनं	१.९६.१२०
ततः प्रणम्य मुदितो	२.५.४५	ततस्तं चासृजद् ब्रह्मा	१.३७.३५	ततो देवः प्रसन्नात्मा	१.३१.४५
ततः प्रणम्य शिरसा	१.६४.२४	ततस्तत्परमं ब्रह्मा	१.८८.७३	ततो देवगणाः सर्वे	१.७२.१०४
ततः प्रत्यागतप्राणः	१.४१.५३	ततस्तत्र विभुद्धृत्वा	१.९८.१६३	ततो देवाः सगंधर्वाः	१.६२.३९
ततः प्रभूति देवेशो	१.७०.३२३	ततस्तदा निशम्य वै	१.१०५.७	ततो देवा निरातंकाः	१.९६.११६
ततः प्रमुदिता विप्राः	१.३३.१४	ततस्तदा महेश्वरे	१.७२.१७८	ततो देवाश्च सेंद्राश्च	१.४४.३१
ततः प्रसीदताद् भवान्	१.१०५.६	ततस्तमाह भगवान्	१.६.१८	ततो देवसुरपितृन्	१.७०.१९७
ततः प्रहस्य गोविन्दः	२.५.६७	ततस्तस्मिन् गते कल्पे	१.१४.१	ततो द्वादशवर्षते	१.८०.५८
ततः प्रहृष्टमनसा	१.१९.५	ततस्तस्मिन् गते कल्पे	१.१५.१	ततो द्वाराणि सर्वाणि	१.२०.३०
ततः प्रीतो गणध्यक्षः	१.७१.१६१	ततस्तस्य महादेवो	१.१३.१५	ततो द्वितीयाप्रभृति	१.५६.८
ततः शक्रस्य वचनं	१.१०७.३७	ततस्तस्य मुनेः श्रुत्वा	१.३६.४६	ततोधिवासयेत्तोयं	२.४७.१९
ततः षष्ठिसहस्राणि	१.६६.१८	ततस्तस्य वसिष्ठस्य	१.६४.७४	ततो ध्यानगतस्तत्र	१.१३.५
ततः षोडशाधा चैव	१.८८.४	ततस्तां ध्यानयोगेन	१.१३.१२	ततो नादः समभवत्	२.५.११७
ततः षोडशसाहस्रं	१.४८.६	ततस्तां युंजत स्तस्य	१.७०.२०३	तती नारायणशिचत्य	२.५.१४२
ततः संचित्य भगवान्	१.७१.४६	ततस्तां पर्यगृहणंत	१.३९.४३	ततो नारायणो देव.	२.२.१
ततः संत्रस्तसर्वांगो	२.५.१३८	ततस्तान्स मुनीन्नीतः	१.३३.१९	ततो निशम्य कुपित.	१.३०.१४
ततः संप्रेक्ष्य मदनं	१.१०१.४०	ततस्तु गर्भसंयुक्तः	१.८८.५५	ततो निशम्य भगवान्	१.६४.१८
ततः सदाशिवः स्वयं	१.३०.१९	ततस्तुतोष भगवा.	१.३३.१	ततो निशम्य वचनं	१.१०७.३४
ततः स नन्दी सहषण्मुखेन	१.७१.१३४	ततस्तुतोष भगवान्	१.८५.१९	ततो निहत्य तं दैत्यं	१.९५.१७
ततः सत्रिहितो विप्र.	१.८९.८७	ततस्तु नष्टास्ते सर्वे	१.७१.६२	ततो बहुविधं प्रोक्तं	१.२८.३
ततः स परमं ज्ञानं	१.६२.३२	ततस्तु युंजतस्तस्य	१.७०.१९८	ततो मदतरं नाभ्यां	१.५४.२६
ततः सप्तदशे चैव	१.२४.७६	ततस्तुष्टो महादेवो	१.६४.१०६	ततो मत्परमं भावं	१.९६.१४
ततः सब्रह्मका देवा:	१.९४.५	ततस्तेष्योऽश्रुविदुष्यो	२.२२.१९	ततो मनुष्याधिपति	१.६३.४४
ततः स भगवान्वार्षः	१.४३.५३	ततस्ते मुनयः सर्वे	१.३३.२०	ततो महात्मा भगवान्	१.७०.१२४
ततः स भगवान् देवः	१.२२.३	ततस्तेषां प्रसादार्थं	१.३१.२७	ततो महालयात्स्मात्	१.९२.१०२
ततः समस्तसंपत्रो	२.३.६८	ततस्तेषु विकीर्णेषु	१.७०.१३६	ततो यज्ञः स्मृतस्तेन	१.७१.४२
ततः समेत्य तौ देवौ	१.३७.३८	ततस्तेषु विद्युपि नष्टेषु	१.६३.११	ततो राजा द्विजश्रेष्ठं	२.३.३५
ततः स विदधे बुद्धि.	१.७०.२६२	ततस्ते समस्ताः सुरेन्द्राः	१.९३.८	ततो राजा प्रणम्यासौ	२.५.१११

ततो राजा सुसंक्रुद्धः	२.१.३४	तत्पुरुषाय विद्वहे	२.४८.५	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.५०
ततो रैवतके कृष्णां	२.३.९४	तत्पुरुषाय विद्वहे	२.४८.७	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.६१
ततोर्वाक्स्नोतसां सर्गः	१.७०.१६५	तत्पुरुषाय विद्वहे	२.४८.८	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.५७
ततो वर्षसहस्रं तु	१.१४.११	तत्पूर्वाभिमुखं वश्यं	१.८५.८	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.६५
ततो वर्षसहस्रांते	१.१७.६७	तत्प्रमाणेन कुंडस्य	२.२२.७०	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.७०
ततो वर्षसहस्रात्	१.२०.४५	तत्फलं कोटिगुणितं	१.७६.२६	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.७४
ततो वाणी समुद्भूता	२.७.२५	तत्फलं कोटिगुणितं	१.७८.१०	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.११६
ततो विलोक्य भगवान्	२.१.५०	तत्फलं लभते दत्त्वा	२.२२.२८	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.११९
ततो विवेश भगवा.	१.३०.२७	तत्फलं समवाप्नोति	१.९२.१८३	तत्रापि मम ते पुत्राः	१.२४.१३१
ततो विष्णुस्ततः शक्रो	१.४४.३५	तत्पञ्च महादेवं	१.७१.८१	तत्रापि मम ते शिष्या	१.२४.११०
ततो विश्वजिदंतैश्च	१.७७.९६	तत्त्वं तु विदितं तेन	२.२०.४०	तत्रापि मम ते शिष्या	१.२४.११३
ततो विस्मयनार्थाय	१.३६.५८	तत्पगतमात्मानं	२.२४.४	तत्रापि सगणः साम्बः	१.५१.२८
ततो विस्मयमापनः	१.२२.२८	तत्प्रायं भवानेव	१.३६.६	तत्रायांतं महात्मानं	२.६.१४
ततोश्वांश्चोदयामास	१.७२.३३	तत्पशुद्धिः षष्ठेन	२.२४.६	तत्रावाह्य महादेवं	१.७७.७१
ततोऽस्माकं सृजच्च संकल्पं	१.७०.१८४	तत्पानामग्रजो यस्मा	१.७०.१४	तत्राष्ट्रगुणमैश्वर्य	१.८८.८
ततोऽस्माकं सुरश्रेष्ठाः	१.१०४.५	तत्र कालं जरिष्यामि	१.२४.१०९	तत्रेऽपदोऽद्विष्णु.	१.९३.१०
ततोऽस्य जघनात्पूर्व.	१.७०.१९९	तत्र चैषा तु या मात्रा	१.९१.६३	तत्रैनं गायमानं च	२.१.१३
ततोऽस्य नेत्रजो वह्निः	१.१०१.४१	तत्र जाम्बूनदं नाम	१.५२.४३	तत्रैव ददृशुर्देवा	१.८०.३६
ततोऽस्य पार्श्वतो दिव्याः	१.१३.१६	तत्र तत्प्रतिकृतं तदा	१.९५.१४	तत्रैव पादुके दिव्ये	१.९२.१५४
ततोऽस्य मातुराहारात्	१.८८.५६	तत्र तत्र चतुर्वक्त्रा	१.३.३४	तत्समा ह्युरुदेहत्वा.	१.७०.१३१
ततो हत्वा जरासंधं	१.६६.७९	तत्र तत्र विभोः शिष्या	१.७.९	तत्सर्वं ते प्रदास्यामि	२.५.३८
ततो ह्यांतिसूत्रेण स्तुक्.	२.२५.८०	तत्र तत्पुरुषत्वेन	१.२३.१६	तत्सर्वं दहते भस्म	१.३४.१७
ततो ह्यनुजां प्राप्यैवं	१.६५.१७०	तत्र ताम्यां समासाद्य	२.३.८८	तत्सर्वं श्रुतवान्व्यासः	२.९.८
ततो ह्यन्यां पुनर्ब्रह्मा	१.७०.२१२	तत्र ते मुनयः सर्वे	१.११.९	तत्सर्वंहमेवेति	१.८६.७३
तत्कथं षोडशविधं	२.२७.३	तत्र ते स्तंभितास्तेन	१.१०२.५२	तथांतः संस्थितं देवं	१.८८.७९
तत्कपालं नखं क्षेत्रे	२.५०.४३	तत्र पित्रा सुशैलेन	१.९२.१६५	तथाकनकणीतां स	१.५.४२
तत्कर्मणा विनाप्येष	१.९०.३	तत्र प्रशेमुः सर्वत्र	१.६२.२८	तथा कनकसंयुक्ता	२.२७.२३६
तत्कृत्वा न च पापीया.	१.७२.४४	तत्र भुक्त्वा महाभोगान्	१.७६.१६	तथा किंनरगंधर्वा.	१.६३.४०
तत्कौतुकसमाविष्टा	२.५.११	तत्र भुक्त्वा महाभोगान्	१.७७.१०३	तथा कुमुदखंडैश्च	१.५१.२४
तत्क्षयाद्धिं भवेन्मुक्ति.	१.८६.१०३	तत्र यत्कृतवान् विष्णु.	२.१.८२	तथा कृष्णमृगाणां च	५०.४१
तत्प्रसान्वितं तस्य	१.९.३४	तत्र शिष्याः शिखायुक्ता	१.२४.१४	तथा गुगुलुधूपं च	१.८१.१७
तत्प्रदगुणवते देयं	१.१०.२१	तत्र श्रुतिसमूहानां	१.२४.१४०	तथा गोमिथुनं च	१.८३.१८
तत्प्रदवर्णस्तथा चूर्णाः	१.७७.८७	तत्र सब्रह्मका देवा	१.१०६.२७	तथाग्निपूजां वै कुर्या.	२.४९.३
तत्प्रद्विद्धिं चतुर्वक्त्र	१.१७.२८	तत्र साक्षाद् वृषांकस्तु.	१.५३.१०	तथा चान्येषु भवति	१.४०.९०
तत्प्रस्य भवति प्राप्यं	१.८८.१७	तत्रापि च महासत्त्व	१.२३.१५	तथा जांबवती चैव	१.६९.७८
तत्प्रयं शांकरं रूपं	२.१५.२६	तत्रापि जगृहुः सर्वे	१.३९.४८	तथा तपत्यसौ सूर्य.	१.५५.७९
तत्प्रद्विद्धिं कामध्ये	१.४१.२२	तत्रापि तीर्थं तीर्थज्ञे	१.९२.१६१	तथान्याः सर्वलोकेषु	१.८२.७२
तत्पुण्यं कोटिगुणितं	१.८२.११८	तत्रापि दहं गग्न.	२.१८.३७	तथान्यानि च पापानि	१.१५.३०
तत्पुरुषाय विद्वहे	२.२७.२४५	तत्रापि देवदेवस्य	१.५१.२१	तथान्या बहवः सृष्टा.	१.४१.४७

तथान्ये च ततोऽनंतो	२.१८.१७	तदर्चनं परं प्राहु.	२.१३.३६	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.७७
तथान्येषां च देवानां	२.४६.६	तदर्चनादि सकलं	२.३.३४	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.१०४
तथान्यैर्मणिमुख्यैश्च	१.५१.२	तदर्थं कंठनालं स्यात्	२.२५२८	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.११२
तथा पापं विलीयेत	१.८५.१७२	तदर्थं केवले पापे	१.१५.१७	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.११८
तथापि तस्मै दातव्यं	१.०३.४३	तदर्थं स्विष्टकृत्रोक्तं	२.२५.५३	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.१२७
तथापि देवा धर्मिष्ठाः	१.७२.१०७	तदर्थांशं तु दातव्यं	२.३६.९	तदाप्रभृति तं कृष्णं	१.१०८.१०
तथापि न च कर्तव्यं	१.९०.१०	तदर्थाधिन वा कुर्यात्	२.४२.३	तदाप्रभृति लोकेषु	१.१९.१५
तथापि भक्ताः परमेश्वरस्य	१.७७.४	तदर्थाधिन वा धीमां	२.४१.२	तदाप्रभृति लोकेषु	१.३४.९
तथापि भर्तृरहिता	१.६४.५	तदर्थेन पुरस्तात्	२.२२.६९	तदाप्रभृति लोकेऽस्मिन्	१.१०५.२९
तथाप्ययुतमात्रेण	१.१५.१	तदर्थेनापि वा सम्यक्	२.३५.३	तदा प्रभृति वै मोक्ष	१.८७.११
तथा भूतमहं दृष्ट्वा	१.१७.१४	तदा ऋतंजयो नाम	१.२४.८६	तदा प्रभृति शक्राद्याः	१.७३.२९
तथा मरकतैश्चैव	१.७७.६९	तदाकाशं च विज्ञानं	१.८६.१३३	तदा प्राह महादेवः	१.९८.१६९
तथा वर्षसहस्रेषु	१.७१.१६	तदा चतुर्युगावस्थे	१.२४.१०	तदा मनसि संजातं	१.९.११
तथा शिवतरायेति	२.८.३	तदा चलत्वादचलाः	१.७०.१३५	तदामरपतिः श्रीमान्	१.१०१.१७
तथाष्ट्रचत्वारिंशत्च	१.९.२८	तदा चापि भविष्यामि	१.२४.२८	तदा मुक्तिः क्षणादेव	१.८७.१५
तथाष्ट्रचत्वारिंशत्च	१.८६.३०	तदा जगौ हरेस्तस्य	२.३.१०८	तदा रुद्रैर्जगत्राथः	१.४१.६०
तथा सोमस्य सूर्यस्य	२.५४.२०	तदा तं कल्पमाहुर्वं	१.३७.२०	तदा वृषध्वजो देवः	१.६४.९४
तथा सौराणि सूक्तानि	१.२६.७	तदा तदावतीर्णस्त्वं	१.९६.२२	तदा षष्ठेन चांशेन	१.२४.१२६
तथा ह्याचमनीयार्थं	१.२७.१०	तदा तयोर्विनिर्गतिः	१.१०५.११	तदाष्टुषा महादेवः	१.४१.३५
तथेऽद्रपदोद्धवविष्णुः	१.७२.७३	तदा तस्य सुतो यश्च	१.१०१.४५	तदा समभवत्तव	१.१७.४९
तथेति चाक्रुवन्देवाः	१.७२.४२	तदा तस्य स्नुषा प्राह	१.६४.१०	तदा सस्मार वै यज्ञं	१.७१.४१
तथेत्युक्त्वा च सा देवी	२.५.१२१	तदा तस्यैव तु गतं	१.६९.८४	तदास्य वक्त्रान्त्रिष्कम्य	१.२०.२४
तथेत्युक्त्वा स गोविंदः	२.५.७४	तदा तिष्ठति सायुज्यं	१.८७.२५	तदा स्वयं वृत्ररिपुः	१.५३.५७
तथेत्युक्त्वा स सत्यभामां	२.३.९९	तदा तु सर्वभूतानां	१.३९.५४	तदाह पौत्रं धर्मज्ञो	१.६४.१०८
तथोत्युवाच तस्या वै	१.६९.२४	तदा तेजांसि सर्वाणि	१.९६.६४	तदा हरं प्रणम्याशु	१.६४.९७
तथैकदंष्ट्राग्रमुखाग्रः	१.९४.१४	तदाथ गर्वभिन्नस्य	१.९५.१५	तदा ह्यादृश्यं गत एव यक्षः	१.५३.५८
तथैनां पुत्रकामस्य	१.१३.११	तदा देवीं भवं दृष्ट्वा	१.४४.४५	तदा ह्यहल्योपपतिः	१.७२.५९
तथैव केसरीत्युक्तो	१.५३.१९	तदा द्रक्ष्यसि मां चैवं	१.१९.१४	तदेन सेतुमात्मानः	१.८८.७८
तथैव गुरुसंपर्कात्	१.८५.१७१	तदानीं मां समासाद्य	२.३.८०	तदेव तीर्थमभवत्	१.३६.७७
तथैव जातं नयनं ललाटे	१.१०६.५७	तदा पाश्वे स्थितो नंदी	१.२५.३	तदेव लभ्यं नान्यतु	१.१०७.१६
तथैव भगवान् विष्णुः	१.१७.४६	तदाप्यहं त्वया ज्ञातः	१.२३.२३	तद् दृष्ट्वा महदाश्चर्यं	१.२०.३७
तथैव यज्ञपात्राणां	१.८९.६२	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.२१	तद्वाहो च विनिद्रं तु	२.२५.३४
तथैव वाह्निः सूर्यो	१.५५.१५	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.२४	तद्वाविताजः प्रपद्यन्ते	१.७०.२५३
तथैवाभिनिवेशेन	२.९.३८	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.३२	तद्रोमवर्षसंख्यानि	२.३८.९
तथैकारमयो योगी	१.९१.४५	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.४४	तद्वक्त्रशेषमात्रांतं	१.९६.९८
तथैकारमयो योगी	१.९१.४९	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.५६	तद्वज्ञं गोपयेत्रित्यं	२.५१.५
तदंगणदहं शंभोः	१.४२.१५	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.६०	तद्वत्सहस्रकिरणे	१.६०.१८
तदयहणमेवेह	२.१८.२८	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.६८	तद्वदाचारहीनानां	१.८५.१३०
तदचक्षुस्तदश्रोत्रं	१.८६.५४	तदाप्यहं भविष्यामि	१.२४.७३	तद्वदाचार्यसंगेन	१.८५.१७०

तद्वाक्याद्यनिर्मुक्तो	२.६.३१	तमिं मम संदेशा.	१.४४.१७	तवान्योन्यावतारणि	१.९६.३८
तन्नादश्रवणात्रेदु.	१.९३.१३	तमुद्दिश्य तदा ब्रह्मा	१.२४.१५०	तवापराधो नास्त्यत्र	१.१७.२५
तन्मध्ये सुरभिं स्थाप्य	२.३५.८	तमृते परमात्मानं	२.९.१५	तवावतारो दैत्यानां	१.१०५.१५
तन्महेशाय विद्यहे	२.२७.२६५	तमेकमाहुद्विगुणं	१.७५.३७	तवास्तीति सकृच्छोक्त्वा	२.२८.३
तन्मात्राणां द्वितीयस्तु	१.७०.१६३	तमेवमुक्त्वा भगवान्	१.२०.१५	तवाहं दक्षिणाद्वस्तात्	१.१०२.४४
तन्मात्रान्तुतसर्गश्च	१.३.२०	तमौते च तमःपारे	१.५३.५०	तस्युरात्मानमास्थाय	१.९२.११२
तन्माहात्म्यात्तदा लोकान्	१.८५.२६	तमोभिभूते लोकेस्मिन्	१.६३.७२	तस्युस्तदाग्रतः शंभोः	१.८०.५४
तन्मूले स्थापेलिंगं	२.३३.७	तमोमात्रात्मिका रात्रिः	१.७०.२१७	तस्थौ श्रिया वृतो मध्ये	१.१००.३९
तप उत्रं समास्थाय	१.७१.१०	तमो मोहो महामोह.	२.९.३०	तस्माच्चतुर्युगावस्थं	१.२३.३०
तपतस्तस्य तपसा	१.३७.३	तमो मोहो महामोहा.	१.५.२	तस्माच्च द्विपदाः सर्वे	१.२३.४३
तपतस्तस्य तपसा	१.४२.६	तमोविद्यापदच्छत्रं	१.८६.१४६	तस्माच्च रूपमात्रं तु	१.३.२१
तपत्येष द्विजत्रेष्ठा.	१.६०.१५	तमोवीर्यमयो राहुः	१.६१.४८	तस्माच्च सततं युक्तो	१.८८.७६
तपसा च महादेव्याः	१.१०१.७	तमोहरो महायोगी	१.९६.३५	तस्माच्च सर्वकार्येषु	२.१८.६३
तपसा च महादेव्याः	१.१०२.१	तमो ह्यग्नी रजो ब्रह्मा	१.३१.९	तस्माच्चतगुणं पुण्यं	१.७७.४९
तपसा च विनीताय	२.२७.५	तया च पूजयेद्यस्तु	१.७४.२१	तस्माच्चतगुणोपांशुः	१.८५.११९
तपसा तस्य संतुष्टो	१.६९.७७	तया स रमते येन	१.१०१.३६	तस्माच्छ्वेश्वरश्चोर्ध्वं	१.५७.३१
तपसा तोषितः पूर्व	१.५३.११	तया सह वनं गत्वा	२.६.१२	तस्माच्छांतभयाच्चैव	१.४६.४३
तपसा त्वेकवर्षान्ते	१.१०८.९	तयोः परः शिवः शांतः	२.१५.८	तस्माच्छूतेन संयुक्तो	२.३.५७
तपसा प्राप्य सर्वज्ञं	१.७१.९६	तयोः श्रुत्वा महादेवं	१.७२.१७६	तस्माज्ज्येद्द्विजो नित्यं	१.१५.३२
तपसाराध्य देवेशं	१.६२.३७	तयोः संपूजनादेव	२.४७.९	तस्माज्ज्येद्धि यो नित्यं	२.८.३४
तपसा विद्यया वापि	१.१०.४०	तयोः समभवद्युद्धं	१.१०१.१२	तस्मात्तत्त्वविदो ये तु	२.२०.३९
तपस्तेषे तया सार्धं	१.१०१.४	तयोरये हुताशं च	१.८४.६८	तस्मात्तव महाभाग	१.३६.२९
तपस्युपरमश्चैव	१.८.१०	तयोमध्ये च विजेयं	१.४९.१३	तस्मात्तु परिहर्तव्या	१.७८.८
तपांसि तेषां सर्वेषां	१.२९.२४	तरक्षुश्चारुणिर्धीमां	१.७.१६	तस्मात्तु पशवः सर्वे	१.२३.३९
तमः प्रच्छाद्य रजसा	१.८.९०	तर्क्यातिकर्यशरीराय	१.२१.५१	तस्मात्तु भारतं वर्षं	१.४७.२४
तमपूज्य जगत्सर्वं	१.७१.५४	तर्पयेद्विधिना पश्चात्	१.२६.१०	तस्मात्तु वैष्णवं चापि	२.४.२१
तमध्ययुर्महात्मानं	१.६२.२४	तलाः कपोताः कापोताः	१.७२.२२	तस्मात्तेन निहंतव्या	१.९८.१६
तमश्च व्यनुदत्पश्चा.	१.७०.२६४	तलानां चैव सर्वेषां	१.४५.१४	तस्मात्ते भोगिनो दैत्या	१.७१.७१
तमसा कालरुद्राख्यं	१.१.२२	तलानां चैव सर्वेषाः	१.४५.२३	तस्मात्यागः सदा कार्यं	१.८.२६
तमसा कालरुद्राख्यं	१.६.३०	तले च तर्जन्यंगुष्ठं	२.२२.१७	तस्मात्विः प्रवणं योगी	१.९१.७१
तमसा कालरुद्राख्यं	२.५.८	तलेषु तेषु सर्वेषु	१.४५.२२	तस्मात्वं मम मदनारि	१.९७.३५
तमसोऽष्टविद्या भेदा	२.९.३४	तल्ललाटादभूच्छंभोः	१.९६.४२	तस्मात्वमपि योगीद्रि	२.५५.२९
तमादिपुरुषं भक्त्या	१.९५.४	तलिंगं पूजितं तेन	१.८१.४८	तस्मात्पंचगुणं भूमिः	१.७०.४७
तमालगुल्मैनिचितं	१.९२.१३	तव देहात्समुत्पन्नं	१.३१.४२	तस्मात्पंचदशैवैते	१.५.३८
तमाह अहसन् विष्णु.	१.६२.३५	तव पुत्रो भविष्यामि	१.४२.१२	तस्मात्परिहरेद्राजा	२.२४.३०
तमाह भगवाञ्छक्रः	१.१०१.३५	तव भृत्यैस्तदा तुप्तं	२.३.४३	तस्मात्पाशुपतैर्योगैः	१.९१.६६
तमाह माता सुशर्भं	१.१०७.१९	तव रोपिण सकलामरेश्वरा	१.९४.१७	तस्मात्वकृष्णं भूमिं तु	१.५४.१८
तमाह शंकरो देवं	१.१०३.५७	तवांतिकं गमिष्यामि	१.६४.२७	तस्मात्संपूजयेदेवं	१.८१.४३
तमाहुर्वरदं देवं	१.८०.४७	तवात्मजं शक्तिसुतं	१.६४.३२	तस्मात्संपूजयेद् भक्त्या	२.४.१९

तस्मात्संपूजयेत्तिर्लिंगं	१.७३.७	तस्मादेव तमोद्रिक्ता.	१.७०.३०	तस्मिन्याते द्विजानां तु	२.७.२४
तस्मात्संपूजयेत् विधिवत्	१.१०३.६९	तस्माद् ग्रहार्चना कार्यं	१.५७.३९	तस्मिन्वा यस्त्यजेत्राणां	१.७७.३८
तस्मात्संसिद्धिमन्विच्छन्	१.८५.१३२	तस्मादीर्घेण कालेन	१.५४.२१	तस्मिन्विश्वत्वमापत्रं	१.२३.२४
तस्मात्संसेवनीयं हि	१.९२.५२	तस्माद् दृष्टानुश्रविकं	१.८६.१३	तस्मिन्वेदाश्च शास्त्राणि	१.८५.९
तस्मात्सदा पूजनीयो	१.७३.६	तस्मादेवं यजेष्वक्त्या	१.८१.४५	तस्मिन् शक्रस्य विपुलं	१.४८.२४
तस्मात्सदाभ्यसेज्ञानं	१.८६.१०५	तस्मादेवासुराः सर्वे	१.७०.२११	तस्मिन्संचयनं कार्यं	२.३०.५
तस्मात्सनत्कुमारेति	१.७०.१९५	तस्मादैत्या न वध्यास्ते	१.७१.६७	तस्मै कन्यां प्रयच्छापि	२.५.६३
तस्मात्सनत्कुमारेति	१.७०.१७४	तस्माद् द्विजाः सर्वमजस्य	१.५३.६२	तस्मै सनत्कुमाराय	२.२०.१४
तस्मात्समेत्य विप्रेंद्र	१.३६.३१	तस्माद्द्वि मुनयो लब्ध्वा	१.४४.४७	तस्य कन्या त्विलविला	१.६३.५८
तस्मात्सर्वं परित्यज्य	२.४६.२१	तस्माद्द्व्यानरतिर्नित्यं	१.९१.५७	तस्य कृष्णस्य तनयाः	१.६९.६४
तस्मात्सर्वं परित्यज्य	२.५४.३३	तस्माद्द्वयेण तथा ध्यानं	१.२८.४	तस्य क्रोधेन दह्यन्ते	१.८५.१७५
तस्मात्सर्वंगतो मेध्यः	१.२३.४६	तस्माद्द्वंहति यस्माद्दि	२.१८.२१	तस्य क्रोधोद्भवो योसौ	१.७०.२३१
तस्मात्सर्वप्रकारेण	१.४४.४९	तस्माद् ब्रह्मा महादेव्या.	१.४१.१३	तस्य गोत्रद्वये जाता.	१.६३.७७
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	२.१८.५९	तस्माद् भक्त्योपचारेण	२.४७.१३	तस्य चासीद् दृढरथः	१.६८.४५
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	१.७७.६	तस्माद् भविष्यते पुण्यं	१.२४.१०१	तस्य चिंतयमानस्य	१.१४.३
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	१.७८.७	तस्माद् भस्म महाभागा	१.३४.८	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.१९.१०
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	१.८६.४८	तस्माद्योगं प्रशंसति	१.९०.५	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.२३.१
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	१.८९.१००	तस्माद्यो वासुदेवाय	१.६२.४२	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.२९.४
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	२.५५.३०	तस्माद्वंशात्परिग्रह्णी	१.६६.७८	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.२९.६६
तस्मात्सर्वाणि भूतानि	१.७०.७०	तस्माद्वद्दस्व सूताद्य	१.८६.२	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.३०.१०
तस्मात्सर्वे पूजनीयाः	१.२९.५१	तस्माद्विचारतोवास्ति	१.८६.२५	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.३५.२७
तस्मात्सर्वेदिकं लिंगं	२.४७.१०	तस्माद्विद्वान् हि विश्वत्वं	१.२३.५१	तस्य तद् वचनं श्रुत्वा	१.३६.५१
तस्मात्सुगंधो भगवान्	२.५४.२२	तस्माद्विरागः कर्तव्यो	१.८.२८	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.१.५
तस्मात्सेवा बुधैः प्रोक्ता	२.९.२०	तस्माद्विश्वेश्वरं देवं	१.११.१०	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	१.३७.१२
तस्मात्सोमपयं चैव	१.२३.४१	तस्माद्वेदार्थतत्त्वं	२.२०.२१	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	१.३९.४
तस्मात्स्थानात् पुनः श्रेष्ठो	१.८८.३३	तस्माद्वै सर्वकार्याणि	१.७८.३	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	१.४३.५१
तस्मादंडोद्भवे जडे	१.१७.६९	तस्मान्नंदय मां नंदिन्	१.४२.३०	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	१.९७.१९
तस्मादनेन दानेन	१.१०८.१६	तस्मान्निंद्याः पूज्याश्च	१.३४.२७	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	१.९८.७
तस्मादप्यभिजित्पुत्र	१.६९.३५	तस्मान्मृत्युं जयं चैव	१.३०.२८	तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	१.१०३.२
तस्मादयोनिजे पुत्रे	१.३७.११	तस्मिंस्तत्परमं ध्यानं	१.११.३	तस्य तां परमां मूर्तिं	१.९२.११४
तस्मादवध्यतां प्राप्ता	१.७१.६९	तस्मिन्स्थिते महादेवे	१.७२.१०२	तस्य तीव्राभवन्मूर्च्छा	१.२२.२२
तस्मादष्टाक्षरान्मत्रा	२.८.३३	तस्मिन्कल्पे मुनेः शापा.	२.८.१३	तस्य दक्षिणपाशवे तु	१.४८.३१
तस्मादहं च देवेश	१.२३.५	तस्मिन्कालेऽथ भगवान्	२.१.४९	तस्य देवस्य रुद्रस्य	१.४५.६
तस्मादापः पिबन्स्युर्यो	१.५९.१२	तस्मिन्काले मुनिः श्रीमान्	२.५.५३	तस्य द्वादशधा भिन्नं	२.१२.७
तस्मादायुर्बलं रूपं	१.४०.४५	तस्मिन् क्षणे समापत्रा	२.१.६८	तस्य पादास्तु चत्वारं	१.४९.२६
तस्मादुत्तरमार्गस्थो	१.५७.२५	तस्मिन्द्वीपे स्मृतौ तौ तु	१.५३.२५	तस्य पुण्यं मया वक्तुं	१.७४.२९
तस्मादेकोनपंचाशत्	२.२७.१८	तस्मिन्नंडे इमे लोका	१.७०.६५	तस्य पुत्रा बभूवुस्ते	१.४७.३
तस्मादेतत्नमया लब्धं	१.९३.१७	तस्मिन्नमहाभुजः शर्वः	१.४८.२२	तस्य पुत्रास्त्रयश्चापि	१.१०१.९
तस्मादैर्यथालाभं	१.८१.३७	तस्मिन्यज्ञे यथाप्राप्तं	२.५१.८	तस्य पुत्रोभवद्विप्रो	१.६८.५

तस्य पुत्रोभवद्वीरो	१.६६.४०	तस्याभिषिक्तस्य तदा	१.४३.४५	तान्हित्वा ब्रज चान्यन्	२.६.२९
तस्य पुत्रो महादेवो	१.४१.१०	तस्यावलोकनादेव	१.१०८.६	ताभिरेव नरः श्रीमान्	१.६७.१६
तस्य पुत्राः सप्त भवन्	१.६६.५७	तस्याश्चैवांशजाः सर्वाः	१.५.२९	ताभिर्विमानमारुह्य	२.८.३२
तस्य पूर्वदलं साक्षा.	१.२७.२५	तस्याश्चोत्तरपाश्वेतु	१.५१.२६	तामजां लोहितां शुक्लां	१.३.१३
तस्य पूर्वमुखं प्रीतं	२.१९.९	तस्यासीतुंबुरुसखो	१.६९.३४	तामाजां संप्रविश्याहं	१.८७.१०
तस्य प्रसादादैत्येद्रो	२.५०.४	तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा	१.२९.५०	तामुवाच सुरश्रेष्ठं	१.९२.१२०
तस्य प्रसादाद्वर्मश्च	१.९.६६	तस्यास्तु दक्षिणे भागे	२.३६.४	तामेवाजामजोन्यस्तु	१.३.१४
तस्य बभुरिति ख्यातः	१.६९.५	तस्याहमग्रजः पुत्रो	२.५.१४७	तामैच्छत्सोपि भगव.	२.५.७०
तस्य भार्याद्वयमभूत्	१.६२.४	तस्यैवं क्रीडमानस्य	१.२०.९	ताप्रकुंभेन वा विप्रः	२.२२.१३
तस्य मध्येतिग्रस्य	१.६९.३६	तस्यैवं तप्यमानस्य	१.४१.२९	ताप्रजानि यथान्यायं	२.२७.४१
तस्य मूर्ध्नि शिवं कुर्यात्	१.८४.५६	तस्यैवं ध्यायमानस्य	१.६३.५०	ताप्रपत्राणि सौराणि	२.२२.३५
तस्य रक्तेन रौद्रेण	१.९७.४०	तस्यैवेह च माहात्म्यं	२.७.१६	ताप्रा च जनयामास	१.६३.२९
तस्य रश्मिसहस्रं त.	१.५९.२४	तस्योपरि न्यसेद्दर्भा.	२.२५.१४	ताप्रादैर्विधिवत्कृत्वा	१.८४.३१
तस्य रामस्तदा त्वासी.	१.६८.१०	तस्योपरि महादेवं	१.२८.२	तामेशा च प्रकर्तव्यं	२.२८.३३
तस्य रूपं प्रवक्ष्यामि	१.८८.१५			ताप्रेण पद्मपत्रेण	१.२७.३८
तस्य रूपं समाश्रित्य	१.२७.४			ताप्रेवा पद्मपत्रेण वा	१.१५.२२
तस्य रोगा न बाधते	१.८२.११६	तां कन्यां जगृहे रक्षन्	१.६९.५१	तारकाक्षोपि दितिज;	१.७३.३
तस्य वंशास्तु पंचैते	१.६७.२६	तां च ज्ञात्वा तथाभूतां	१.१०६.१४	तारकाग्रहसोमार्का	१.४५.३
तस्य शृंगं महेशस्य	१.९४.२	तांडवैः सरसैः सर्वा.	१.५५.४३	तारणश्चरणो धाता	१.६५.१४१
तस्य सत्यव्रतो नाम	१.६६.३	तां शक्रमुख्या बहुशोभमाना.	१.५३.५९	ताराग्रहाणां प्रवर.	१.६१.४३
तस्य सत्राजितः सूर्यः	१.६९.१३	तां सिद्धगंधर्वपिशाचयक्ष.	१.७२.६	ताराग्रहाणां शुक्रस्तु	१.६१.५१
तस्य सर्वं प्रकर्तव्यं	२.४५.८७	तांस्तथा वादिनः	१.४४.१४	तारानक्षत्ररूपाणि	१.५७.१७
तस्य सर्वाश्रियं दिव्यं	१.४४.१९	तांस्तु संक्षेपतो वक्ष्ये	१.४९.४१	तारानक्षत्ररूपाणि	१.६१.३५
तस्य सिद्धिश्च मुक्तिश्च	२.२०.४८	तांस्तु संक्षंपतो वक्ष्ये	१.५३.७	तारो वराञ्छतगुणं	१.१०१.१४
तस्य सोमात्मकं रूपं	२.१२.१९	ताडीवान्मुनिशार्दूलाः	२.९.३१	तार्क्ष्यश्चारिष्टेनेमिश्च	१.५५.६१
तस्यांडस्य शुभं हैमं	१.१७.६८	ताडनं कथितं द्वारं	२.२१.६२	तालकेतुः षडास्यश्च	१.१०३.२८
तस्यांशमेकं संपूज्य	१.७१.५३	ताडयन्ति द्विजेन्द्राश्च	१.४०.१३	तावंत्यस्तारकाः कोट्यो	१.५७.२१
तस्यां सिद्धौप्रणाणाया.	१.३९.२०	ताडयामास देवेश	१.३६.२४	तावच्छती च वै संध्या	१.४.६
तस्यां हरिं च ब्रह्माणं	१.४१.१२	तानि तस्मादनन्यानि	२.१६.२८	तावत्काल महादेव.	१.८८.५२
तस्याः परेण शैलस्तु	१.५३.३२	तानि तेषां तु नामानि	१.४६.४४	तावद्विरभितो वीरै.	१.९६.६
तस्याः पुत्र स्मृतोऽक्रूरः	१.६९.२५	तानि भाग्यान्यशुद्धानि	१.८६.२८	तावद्वर्षसहस्राणि	२.४०.७
तस्या; स्वास्थ्येन ध्यानं च	१.८.४३	तानि व्यासादुपश्रुत्य	१.८३.३	तावांश्च विस्तरस्तस्य	१.५३.३४
तस्याग्रे मध्यतो भूमौ	२.३७.२	तानि सर्वाण्यशेषाणि	१.९२.१३९	तावागतौ समीक्ष्याथ	२.५.८८
तस्याग्रे श्वेतवर्णाभिः	१.११.८	तानि स्वोतांसि त्रीण्यस्याः	१.४३.३९	तावागतौ समीक्ष्याह	२.५.१२०
तस्याज्ञाया समस्तार्थः	२.१०.१४	तानुवाच महाभागान्	१.३१.३	तावुभावागतौ दृष्ट्वा	२.५.५४
तस्यापि पुत्रमिथुनं	१.६९.३७	तान् दृष्ट्वा तनयान् वीरान्	१.६९.७०	तावुभौ प्रणितत्वाग्रे	२.५.९०
तस्यापि शिरसो बालः	१.१०२.३७	तान्पञ्च वदनैर्गृहणन्	१.८५.१५	तावुभौ मुनिशार्दूलौ	२.५.११९
तस्याप्रभितवीर्यस्य	१.२२.२३	तान्येव प्रतिपद्यन्ते	१.७०.२५२	तावुचतुर्महात्मानौ	१.२२.५
तस्याभिष्यायतश्चैव	१.७०.१४५	तान्समीक्ष्याथ भगवान्	१.९८.५	ता वै निष्कामचारिण्यो	१.३९.१८
		तान्सर्वान् शीघ्रमाजोति	१.८२.११५		

तास्तथा प्रत्यापद्यंत	१.७०.२८८	तुष्टाव हृदये ब्रह्मा	१.७२.१२१	तेन सृष्टा: क्षुधात्मानो	१.७०.२२५
तास्त्वभ्यर्च्य यथाशास्त्र.	२.८.२	तुष्टि: पुष्टि: क्रिया चैव	१.१६.३१	तेनाग्निना तदा लोका	१.३२.११
ति		तुष्टुवुर्णपेशानं	१.७१.१५४	तेनाधीतं यथान्यायं	२.८.२१
तिलपुष्टं तु कृत्वाथ	२.३७.३	तुष्टुवुर्देवदेवेशं	१.७१.६३	तेनैवाधिष्ठितं तस्मा.	१.८६.१४२
तिलमध्ये न्यसेत्पद्मं	२.३१.४	तुष्टुवुर्देवदेवेशं	१.१००.५१	तेनासौ प्राप्तवांल्लोकं	२.१.६६
तिलानामाढकं मध्ये	२.२७.३८	तुष्टोब्रवीन्महादेवः	१.४३.१९	तेनाहं हरिमित्रं वै	२.३.५२
तिलेन रोगनाशश्च	२.५२.१४	तुष्टो रुद्रो जगत्राथ.	१.२९.६	ते नित्यं यमविषयेषु	१.८८.६४
तिले यथा भवेत्तैलं	१.७०.७४	तुष्टोस्मि ते वरं ब्रूहि	१.१०७.३२	तेनेह लभते जंतु.	१.९२.१४०
तिलैहोमः प्रकर्तव्यो	२.४९.४	तुष्टोस्मि वत्स भद्रं ते	१.९३.२२	तेनैव ऋषिणा विष्णु.	१.१७.५८
तिष्ठति शाश्वता धर्मा	१.८५.२८	तुष्टोस्मीत्याह देवेभ्यः	२.१८.६७	तेनैव चावृतः सम्य.	१.३.१८
तिष्ये मायामसूयां च	१.४०.१			तेनैव सृष्टमखिलं	१.४६.८०
तिस्रोऽवस्था जगत्स्थिती	२.१६.१९			ते परिग्राहिणः सर्वे	१.७०.१६१
तीक्ष्णदंष्ट्रं गदाहस्तं	१.७६.३१	तृणकाष्ठादिवस्तूनां	१.८९.६१	तेषि तेनैव मार्गेण	१.२४.७५
तीक्ष्णशृंगाय विद्यहे	२.४८.१०	तृतीयं धातुजं लिंग.	१.७४.१५	तेषि तेनैव मार्गेण	१.२४.४७
तीक्ष्णोपायश्च हर्यश्वः	१.६५.७९	तृतीयरूपमीशस्य	२.१५.२३	तेषि तेनैव मार्गेण	१.२४.११४
तीर्णस्तारयते जंतु.	१.२४.८४	तृतीयां त्रिगुणां चैव	१.९१.४७	तेषि दारुवनात्तस्मात्	१.२९.३७
तीर्थतत्त्वाय साराय	१.१०४.२१	तृतीयाय मकाराय	१.१८.२	तेषि लब्ध्वा वरान्विप्रो.	१.८५.२०
तु		तृतीयावरणे चैव	२.२७.३२	ते प्रणम्य महादेव.	१.३३.२२
तुंगाग्रैर्नीलपुष्टैः	१.९२.२३	तृतीयो द्युतिमात्राम	१.५३.८	तेष्यः प्रधानदेवानां	१.३.६
तुंबरुनरदो हाहा	१.१०३.३५	तृतीयो नारदो नाम	१.५३.३	तेष्यश्चाहं प्रवक्ष्यामि	१.९२.५६
तुंबरोर्न विशिष्टोसि	२.३.७७	तृष्णाक्षयसुखस्यैतत्	१.६७.२४	तेष्योधस्तातु चत्वारः	१.५७.२०
तुंबरोश्च समं नैव	२.३.८१	तृष्णा रागवती मोहा	२.२७.८०	ते लब्ध्वा मंत्ररत्नं तु	१.८५.१८
तुंबरोश्च समानत्वं	२.३.२			ते शीर्णश्चोत्थिताः द्यूर्ध्वं	१.७०.२२९
तुंबवीणो महाकोष	१.६५.१२१	ते गणेशा महासत्त्वाः	१.४४.९	तेषां चतुष्टयं बुद्धेः	२.१६.८
तुरीयस्य शिवस्यास्य	२.१६.१८	ते च प्रकाशबहुला.	१.७०.१५४	तेषां तद्वचनं श्रुत्वा	१.८६.३
तुरीयातीतमृतं	१.१७.५४	तेजसा तस्य देवास्ते	१.१०२.५५	तेषां तद्वचनं श्रुत्वा	१.८६.७
तुला ते कथिता ह्येषा	२.२९.१	तेजस्विनी नाम पुरी	१.४८.१५	तेषां तु दशसाहस्रं	१.८५.१८९
तुलामध्ये वितानेन	२.२८.३७	तेजो दशगुणेनैव	१.३.३१	तेषां देवावृथो राजा	१.६९.४
तुलारोहसुवर्णं च	२.२८.८५	तेजो दशगुणेनैव	१.७०.५५	तेषां धनं गृहं क्षेत्र.	२.६.८९
तुलास्तंभस्य विष्कंभो	२.२८.२७	तेजोपहारी बलवान्	१.६५.७७	तेषां पंच गणा ह्येते	१.६८.१६
तुल्यमायुः सुखं रूपं	१.३९.१६	तेजोमयो द्युतिधरो	१.९८.१३२	तेषां पितामहः प्रीतो	१.७१.११
तुल्यानेवात्मनः सर्वान्	१.७०.३०५	तेजोरूपाणि सर्वाणि	१.९.६२	तेषां ब्रह्मात्मकानां वै	१.७०.१८३
तुल्याभिमानिनः सर्वे	१.४०.९७	तेजोसीत्याज्यमीशानं	२.२८.९१	तेषां भक्तिमहं दृष्ट्वा	१.८५.२३
तुल्याभिमानिनश्चैव	१.४६.१६	ते देवा मुनयः सर्वे	२.२०.५	तेषां भावं ततो ज्ञात्वा	१.७२.३७
तुष्टाव च पुनः शंभु	१.९८.२७	ते देवाः शक्तिमुसलैः	१.९८.३	तेषां भावं समालोक्य	२.१९.५
तुष्टाव देवदेवेशं	१.१००.४८	तेन ग्रहां गृहाण्येव	१.९१.९	तेषां यावच्च यद्यच्च	१.७०.५०
तुष्टाव परमेशानं	१.९६.७६	तेन चात्मानमत्यर्थं	२.५.१३६	तेषां वा किं करोत्येष	२.४.२
तुष्टाव पुनरिष्टाभि.	१.१७.९२	तेन तान् पूजयित्वाथ	२.४३.९	तेषां विरुद्धं यत्त्वाज्यं	२.१८.६१
तुष्टाव वाग्भिरिष्टाभि:	१.२४.१४२	तेन ते कर्मणा यक्षा	१.७०.२२७	तेषां शतहस्रं तु	१.२४.८०
तुष्टाव वाग्भिरिष्टाभि:	१.३६.४	तेन दैत्येन सा देवी	२.५०.७	तेषां शृंगेषु हृष्टाश्च	१.८०.३८
		तेन धारयित्वा वै	१.९०.१८	तेषां श्रेष्ठो महातेजा	१.६६.३६
		तेन प्रणीतो रुद्रेण	१.७.५५		

तेषां सृष्टिप्रसिद्धयर्थं	१.८५.१३	त्रयं चैव सुरेंद्राणां	१.१००.२२	त्रिभिश्च धर्षितं शाङ्कं	१.१००.३१
तेषां स्वभावतः सिद्धिः	१.४७.१४	त्रयश्च त्रिसहस्रं च	१.१०२.२२	त्रिभिश्च प्रणवैदेवाः	१.७३.१३
तेषां स्वसारः सप्तासन्	१.६९.४०	त्रयस्त्रिशत्सहस्राणि	१.५६.१२	त्रिमूर्तिर्यः समाख्यातः	१.६३.९०
तेषां हिताय रुद्रेण	१.४७.१७	त्रयस्त्रिशत्सुरानेवं	१.१००.२१	त्रियंबकं यजामहे	१.३५.१८
तेषामधोरः शांतश्च	१.२३.२२	त्रयस्त्रिशत्सुराशैवं	१.७२.८५	त्रियंबकसमो नास्ति	२.५४.३२
तेषामपि च गायत्री	२.४८.३३	त्रयोग्नयस्वयो लोका	१.६६.३३	त्रियंबकेण मंत्रेण	२.५४.१
तेषामपि तथात्रायं	२.१.१७	त्रयोदशकलायुक्तं	१.१७.८७	त्रिरात्रमुपवासाश्च	१.९०.१९
तेषामृद्धिश्च शांतिश्च	१.८५.२०७	त्रयोदशसहस्राणि	१.५२.२१	त्रिलोकधारणे शक्ता	१.६३.९४
तेषु तेषु पृथक्त्वेन	२.२७.३४	त्रयोदशसहस्राणि	१.५२.४१	त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः	१.९८.१३४
तेषु वस्त्रेषु निःक्षिप्य	२.३७.८	त्रयोदशांगुलायाम्	२.२५.३७	त्रिविक्रमः महाजिह्वो	२.२७.१११
तेषु शैलेषु दिव्येषु	१.४९.५७	त्रयोदशार्धमृक्षाणां	१.५४.१९	त्रिविधं स्नानमाख्यातं	१.२५.८
तेषु सर्वेषु विधिना	२.२७.३९	त्रयोदशो पुनः प्राप्ते	१.२४.५९	त्रिशंकोर्दयिता भार्या	२.५.६
ते सत्त्वस्य च योगेन	१.७०.१४९	त्रयोर्विशतिभिस्तत्त्वैः	१.८२.१९	त्रिशती द्विशती संध्या	१.३९.१२
ते सर्वे पापनिर्मुक्ता	१.११.११	त्राहि त्राहीति गोविंदं	२.५.१४०	त्रिशिखं च त्रिशूलं च	२.५०.१८
ते सर्वे पापनिर्मुक्ता	१.१२.१५	त्रिंशत्कोट्यस्तु वर्षाणां	१.४.३४	त्रिशृंगोजारुचिशैवं	१.४९.२४
ते सर्वे पापनिर्मुक्तः	१.१०८.१५	त्रिंशदन्यानि वर्षाणि	१.४.२०	त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप् च	२.१७.१३
ते सुखप्रीतिबहुला	१.७०.१४८	त्रिंशद्यानि तु वर्षाणि	१.४.१७	त्रिस्रोतसं नदीं दृष्ट्वा	१.४३.४०
तैः पाशैर्मोचयत्वेकः	२.९.१६	त्रिंशन्मुहूर्तैरेवाहुः	१.५४.२७	त्रेताद्वापरतिष्याणां	१.४.८
तैरियं पृथिवी सर्वा	१.६३.४५	त्रिंशांशकं तु मेदिन्यां	१.५४.११	त्रेतायां वार्षिको धर्मो	१.४०.४७
तैरेव पठितव्यं च	१.९६.१२४	त्रिकोणं च तथागेयं	१.८.९३	त्रैलोक्यमखिलं भुक्त्वा	१.९३.५
तैलेनोच्चाटनं प्रोक्तं	२.५२.१०	त्रिगुणाद्रजसोद्रित्ता,	१.७०.२९	त्रैलोहिकं गुह्यकाश्च	१.७४.६
तैस्तु सञ्छादितं सर्वं	१.६.१३	त्रिगुणाय निशूलाय	१.९६.८६	त्र्यंबकं यजामहे	२.२८.६२
तो तोयात्मक महादेवं	२.१४.२९	त्रिगुणाय नमस्तुभ्यं	१.१८.२२	त्र्यंबकं त्रिनेत्राय	१.३१.३९
तोषयेत्तं प्रयत्नेन	१.८५.८७	त्रिणाभिना तु चक्रेण	१.५५.३	त्र्यक्षं त्र्यक्षराय	१.९६.८४
तोषितस्तेन विप्रेद्रः	१.६६.६७	त्रितत्त्वस्य त्रिवह्नेश्च	१.३५.१९	त्र्यक्षं दशभुजं शांतं	१.४३.१८
तौ तौ चोष्वरितसौ दिव्यौ	१.३८.१५	त्रिधा देवदेवस्य	१.६६.१	त्र्यक्षो दशभुजशैवं	१.४३.३१
तौ तं तुष्टवतुशैवं	१.३७.३९	त्रिधा भिन्नो ह्यहं विष्णो	१.१९.१२	त्वं च पर्वत मे वाक्यं	२.५.६२
तौ वराहे तु भूलोके	१.७०.१७२	त्रिधामा सौभगः शर्वः	१.९८.४५	त्वं च लोकहितार्थाय	१.३२.१४
तौ वालुकाभिः संपूर्य	२.२८.४५	त्रिधा यद्वत्ति लोके	१.७०.९५	त्वं भक्तान् सर्वयलेन	१.१०५.२०
त्य त्यक्त्वा च मानुषं रूपं	१.६९.८६	त्रिधा विभज्य सर्वं च	२.२२.४	त्वल्कोधसंभवो रुद्रः	१.३६.७
त्यक्त्वा देवं महादेवं	१.७३.४	त्रिधा संवृत्य लोकान्वै	१.७२.१४०	त्वत्रसादात्स्वयं विष्णुः	१.३६.८
त्यक्त्वा प्रसादाद्ब्रुद्रस्य	२.९.५	त्रिनेत्रं नागपाशेन	२.५०.२३	त्वत्संहारे नियुक्तोस्मि	१.९६.४३
त्यक्त्वा मायापिमांतस्मा-	१.३६.६६	त्रिनेत्रा वरदा देवी	१.८२.१०८	त्वदीयं प्रणवं किंचि.	१.८५.४४
त्यक्त्वा वज्रं तमेतेन	२.५१.१५	त्रिनेत्राश्च महात्मानः	१.४४.२	त्वदीयं प्रणवं विद्धि	१.८५.४६
त्यजेदेहं विहायात्रं	१.७७.५२	त्रिपादं सप्तसहस्रं च	१.७६.१५	त्वदीयैषा विवाहार्थ	१.१०३.४८
त्यागेन वा किं विधिना	१.२९.८८	त्रिपादहीनस्तिष्ये तु	१.३९.१४	त्वदीयो नृपतिः श्रीमा.	२.५.६८
त्यागेनैवामृतत्वं	१.८.२७	त्रिपुङ्गधारिणस्तेषां	१.७६.४२	त्वमष्टमूर्तिस्त्वमनंतमूर्ति.	१.९४.१३
		त्रिपुरारोरिमं पुण्यं	१.७२.१८०	त्वमादिस्त्वमनादिस्त्व.	२.५.३४
		त्रिभागैकं भवेदद्यं	२.२५.३१	त्वमेव देवदेवेश	१.९८.९
		त्रिभिर्गुणमयैः पाशैः	२.९.२१	त्वमेव भर्ता हर्ता च	१.९८.१०

त्वमेव मोहं कुरुषे	२.५.११३	दंभोऽदंभो महादंभः	१.९८.१२४	दत्तोर्ण वेदबाहुं च	१.५.४३
त्वमेव सर्वभूतानां	१.९६.२१	दंष्ट्राकरालं तव दिव्यवक्त्रं	२.१९.३७	दत्तो ह्यत्रिवरो ज्येष्ठो	१.६३.७६
त्वमादौ च तथाभूतो	२.१८.४	दंष्ट्राकरालं दुर्धर्षं	१.२१.७५	दत्त्वा गोमिथुनं चैव	१.८३.२९
त्वया किं काल नो नाथ.	१.३०.१२	दंष्ट्राकरालमत्युग्रं	२.१९.१०	दत्त्वा गोमिथुनं चैव	१.८३.४८
त्वया तत्क्षम्यतां वत्स	१.४२.३४	दंष्ट्राकरालवदना	१.४४.३	दत्त्वा गोमिथुनं चैव	१.८३.५१
त्वया तत्पात्समस्तानि	१.६४.११६	दंष्ट्राकरालवदनो	२.५०.२२	दत्त्वा च राजा विप्रेभ्यो	२.३.२६
त्वया तस्मान्महाभाग	१.६४.११७	दंष्ट्राप्रकोट्या हत्वैनं	१.९४.९	दत्त्वा तस्मै ब्रह्मणे	१.७२.१७७
त्वया दत्तं च नेष्यामि	२.५.२९	दंष्ट्राणि साधयित्वा तु	२.५०.४२	दत्त्वा पञ्चविधं धूपं	१.७९.१८
त्वया धर्मश्च वेदाश्च	१.९६.२३	दंष्ट्रिणी रंगिणी चैव	२.२७.७६	दत्त्वैनं नयनं चक्रं	१.९८.१७८
त्वया न विदितं नास्ति	२.५०.२	दक्षः पुत्रसहस्राणि	१.६३.४	दत्त्वैनं नंदगोपस्य	१.६९.५३
त्वया मे संविदं तत्र	२.५.७९	दक्षमत्रिं वसिष्ठं च	१.३८.१३	दत्त्वैनं सर्वपापेभ्यो	२.३४.५
त्वया सृष्टं जगत्सर्वं	१.१०२.५	दक्षमत्रिं वसिष्ठं च	१.७०.१८२	ददर्श चाग्रे ब्रह्माणं	२.१७.५
त्वया हिताय जगतां	१.९२.१६४	दक्षयज्ञे शिरशिष्ठं	१.९६.४९	ददामि दृष्टिं मद्रूपं	१.६४.८७
त्वया हि सुमहत्पापं	२.९.३९	दक्षस्य च मुनीन्द्रस्य	१.१००.४५	ददावंबापतिः शर्वों	१.१०२.५७
त्वयि भक्तिः प्रसीदेति	१.१०३.५५	दक्षस्य पतनं भूमौ	१.२.१९	ददाह तेजस्तच्छंभोः	१.९८.१६८
त्वयि योगं च सांख्यं च	१.१६.२९	दक्षस्य विपुलं यज्ञं	१.९९.१८	ददुः पुष्पवर्षं हि सिद्धा	१.१०५.१०
त्वयि स्नात्वा नरः कश्चित्	१.४३.३६	दक्षिणं तु महाभाग	२.२५.१०१	ददौ निरीक्षणं क्षणा.	१.१०५.२
त्वयैव कथितं सर्वं	१.१०७.३९	दक्षिणप्रक्रमे भानुः	१.५४.५	दद्याद् गोमिथुनं गौरं	१.८३.३७
त्वयैव देवेश विभो कृतश्च	१.९४.१६	दक्षिणस्यापि शैलस्य	१.४९.३०	दध्याति भूमिराकाशं	१.८६.१४१
त्वयोद्धृता देव धराधरेश	१.९४.१५	दक्षिणां च शतं सार्धं	२.२८.८३	दधार च महादेव	१.९४.२९
त्वय्यैव जीवितं चास्य	१.६४.३४	दक्षिणा च प्रदातव्या	२.३७.१६	दधिभक्षाः पयोभक्षा	१.८९.२१
त्वरन् विनिर्गतिः परः	१.३०.२०	दक्षिणा च प्रदातव्या	२.४३.११	दधीच ऋष्यतां देव	१.३६.७०
त्वरमाणोथ संगम्य	१.३७.२५	दक्षिणा च प्रदातव्या	२.४७.४५	दधीचिशच्चावनिश्चोग्रो	१.३५.९
त्वरितेनैव रुद्रेण	१.२७.४४	दक्षिणायनमार्गस्थो	१.५७.२८	दधीचो भगवान् विप्रः	१.३६.५९
त्वष्टा विष्णुः पुलस्त्यश्च	१.५५.२६	दक्षिणायामथो राजा	१.६७.१२	दध्ना च स्नापयेद्गूर्द्रं	१.७९.१४
त्वष्टा विष्णुर्जमदग्निः	१.५५.६३	दक्षिणा विधिना कार्या	२.३०.९	दध्ना पुष्टिर्नृपाणां च	२.४९.११
त्वां गंधपुष्पधूपाद्यैः	१.१०५.२५	दक्षिणासहितं यज्ञं	१.५.१९	दनुः पुत्रशतं लेखे	१.६३.२८
त्वां प्रसाद्य पुरास्माभिः	१.२१.८२	दक्षिणे च पंथानं	१.३४.२०	दमः शमः सत्यमकल्पत्वं	१.८९.२८
त्वां बोधयितुकामेन	१.२०.५१	दक्षिणे विश्वकर्मा च	१.६०.२३	दमस्य तस्य दायादः	१.६३.५७
त्वामनभ्यर्च्य कल्याणं	१.१०५.२३	दग्धं क्षणेन सकलं	१.९७.२३	दयादर्शितपंथानो	१.७८.११
त्विषा तु यक्षरक्षांसि	१.६३.४१	दग्धुं तृणं वापि समक्षमस्य	१.५३.५६	दयावतां द्विजश्रेष्ठाः	१.१०.२
द		दग्धुं वै प्रेषितश्चासौ	१.१००.८	दयिता रोहिणी प्रोक्ता	२.१३.१६
दंडं षडंगुलं नालं	२.२५.३६	दग्धुं संप्रेषितश्चाहं	१.१००.१३	ददुर्विस्तलघातैश्च	१.४४.८
दंडिनी मुंडिनी वापि	२.६.५२	दग्धुं समर्थो मनसा क्षणेन	१.७२.९५	दर्पहा दर्पितो दृप्तः	१.९८.१४०
दंतधावनपूर्वं च	२.२२.३०	दग्धुं स्वदेहमानेयी	१.१०७.४७	दर्भद्वयं गृहीत्वाग्निः	२.२५.८६
दंतस्थाने प्रकर्तव्यः	२.३५.६	दग्धुमहर्षिः शीघ्रं त्वं	१.७२.११०	दर्भद्वयं गृहीत्वाग्निः	२.२५.८४
दंतुरा रौद्रभागा च	२.२७.१६०	दग्धोग्निना च शूलेन	१.९३.१५	दर्भेण गृहीत्वा तेनाग्रः	२.२५.८७
दंतोलूखलिनस्त्वन्ये	१.३१.२५	दग्धवा भित्वा च भुक्त्वा च	१.७२.६०	दर्भीराच्छादयेच्चैव	१.२७.११
दंदहमानेषु चराचरेषु	१.५४.३८	दग्धोद्धृतं सर्वमिदं त्वयाद्य	१.७२.५२	दर्शनादिव्यरूपाणां	१.९.२०

दर्शयामास च तदा	१.९२.१०	दि	दी
दर्शयामास चोद्यानं	१.१०३.७९	दिग्वारणानां मधिपं	२.२७.६१
दत्तं दलात्रं सुश्चेतं	२.२२.४३	दिग्विदिक्षु प्रकर्तव्यं	२.३९.८
दत्तेषु सिद्धयः प्रोक्तः	२.२१.५	दितिः पुत्रद्वयं लेखे	२.२२.५०
दश चैव तथाहानि	१.४.१८	दिलीपस्तस्य पुत्रोभूत्	२.१.१९
दशधाभिप्रजायते	१.९.३	दिवं गता महात्मानः	२.१.६५
दशघेनु सवस्त्रं च	२.२७.२६९	दिवः पृष्ठे यथा चंद्रो	२.२०.४६
दशनिष्केण कर्तव्यं	२.४३.१०	दिवाकरात्मनस्तस्य	२.२८.६९
दशबाहुस्त्रिशूलांको	१.२०.६०	दिवा वा यदि वा रात्रौ	२.२२.४४
दशभिश्चाकृशैरश्वैः	१.५७.२	दिवा विकृतयः सर्वे,	१.५१.१५
दशमे द्वापरे व्यासः	१.२४.४८	दिवावृतः परश्चापि	१.२१.७६
दशयोजनविस्तीर्ण	१.१७.४९	दिवा सृष्टिं विकुरुते	१.४९.११
दशयोजनसाहस्र.	१.४९.२७	दिवा स्वप्नं विशेषेण	दु
दशवर्षसहस्राणि	१.४१.२०	दिव्यं निशूलमभवत्	१.८६.३७
दशवर्षसहस्राणि	१.५२.१६	दिव्यं पाशुपतं ज्ञानं	१.६४.१४
दशवर्षसहस्राणि	१.५२.३३	दिव्यं वर्षसहस्रं तु	१.१०७.७
दशवर्षसहस्राणि	१.५२.३७	दिव्यं शब्दमयं रूपं	१.१०७.११
दशवर्षसहस्राणि	१.६६.३७	दिव्यं स्थानं महात्मानः	१.४०.३८
दशवर्षसहस्राणि	१.१०१.२१	दिव्यः क्व देवेश	१.२४.१९
दश वै द्वयधिका मासाः	१.४.१४	भवत्रभावो	२.६.७७
दशार्हस्य सुतो व्याप्तो	१.६८.४३	दिव्यः संवत्सरो ह्येष	२.६.८
दशाहं सूतिताशौचं	१.८९.८४	दिव्यमाल्यैस्तथा शुभ्रैः	२.२१.४०
दह्यंते प्राणिनस्ते तु	१.३२.१३	दिव्यरूपधरः श्रीमान्	१.३९.४५
दा		दिव्यवर्षसहस्रं तु	१.९८.१६७
दांतो दयाकरो दक्षः	१.९८.४०	दिव्यवर्षसहस्रं वै	१.७१.१३९
दाक्षव्यूहः समाख्यात्	२.२७.१४०	दिव्यवर्षसहस्रांते	१.९८.५०
दाक्षायणी महादेवी	१.८२.१४	दिव्यस्त्रीभिः सुसंपूर्ण	१.८२.६९
दाक्षायणी सा दक्षोपि	१.३७.१५	दिव्यस्य भौतिकस्याग्रे	१.७२.७०
दातुमप्यैकमनधे	२.५५.२३	दिव्यां मेरुगुहां पुण्यां	१.४६.५
दातुमध्ययनं सर्वं	१.१०.३३	दिव्यक्षहदयज्ञो वै	१.४६.५०
दानमानार्चनैर्नित्यं	२.५.१४	दिव्याध्ययनसंपत्रान्	१.७४.१०
दानयज्ञादिकं सर्वं	२.३.४१	दिव्यानां पार्थिवानां च	१.९७.३८
दानिनां चैव दांतानां	१.१०.३	दिव्या हैमवती विष्णो	१.९७.३७
दारवं तालपर्णं वा	१.८५.१६३	दिव्ये च शाश्वतस्थाने	१.४१.८
दारण्येतानि वै. तस्य	१.७०.२८६	दिव्येनैव प्रमाणेन	१.८२.३
दारिद्र्यार्णवामग्नं च	१.८९.११०	दिव्यैराभरणैः शुक्लैः	२.५.५७
दारुकेण तदा देवा.	१.१०६.३	दिशः पादा रथस्यास्य	दू
दारुकोऽसुरसंभूतः	१.१०६.२	दिशमासाद्य कालेन	२.६.२८
दारुजं नैऋतिर्भक्त्या	१.७४.७	दिशो दश स्मृता देव्यः	१.९९.४३
दारुणो भगवान्दारुः	१.१०६.७	दिष्टपुत्रस्तु नाभागं	२.२२.२६

द दृग्दशवस्य प्रमोदस्तु दृश्यते दिवि ताः सर्वाः दृश्यते श्रूयते यद्यत् दृश्यवस्तु प्रजारूपं दृश्यादृश्यगिरियावत् दृष्टं श्रुतं चानुमितं दृष्टं श्रुतं स्थितं सर्वं दृष्टः परमया भक्त्या दृष्टः पूज्यस्तया देव्या दृष्टोऽसौ वासुदेवेन दृष्ट्वा काश्चिद्ब्रह्म नार्यो दृष्ट्वा च तनयं बाला दृष्ट्वा च तस्युः सुर. दृष्ट्वा च तत्कुठिताग्रं हि दृष्ट्वा तमतिविश्वस्तं दृष्ट्वा तामबलां प्राह दृष्ट्वा तु तं मुनिश्रष्टं दृष्ट्वा तुष्टाव वरदं दृष्ट्वा न जायते मर्त्यः १.९२.१०८ दृष्ट्वा यक्षं लक्षणैर्हीनमीशं १.५३.५५ दृष्ट्वा देवं प्रणाम्यैवं १.१०७.२३ दृष्ट्वा देवं यथान्यायं १.७९.११ दृष्ट्वा नारीकुल विप्रा. दृष्ट्वा नार्यस्तदा विष्णुं दृष्ट्वा परावरं धीरा: दृष्ट्वाप्यवध्यत्वमदीनतां च १.३५.३१ दृष्ट्वा भावं महादेवो १.३७.१९ दृष्ट्वा यमोऽपि वै भक्तं दृष्ट्वा शंभोः पुरं बाह्यं १.८०.१४ दृष्ट्वा श्रुत्वा भवस्तासां १.२९.२२ दृष्ट्वा संपूजितं यांतं २.१.७६ दृष्ट्वा सुरासुरप्रहोरग. दृष्ट्वा हृदि महादेव. दृष्ट्वैनं नियतः सद्यो दृष्ट्वैनमपि देवेशं	देवं संपूज्य विधिना २.५४.१३ देवः पुराकृतोद्घाः १.९२.५ देवः प्रदत्तवान् देवाः १.१९.७ देवः शाखो विशाखश्च १.१०१.२९ देवकस्य सुता पल्नी १.६९.४३ देवकस्य सुता राज्ञो १.६९.३९ देवकार्योपयुक्तानां १.८९.५४ देवकार्यं करिष्यामि १.७१.६६ देवक्ष्याः स भयात्कंसो १.६९.६१ देवक्षत्रसुतः श्रीमान् १.६८.४७ देवकूटे गिरौ मध्ये १.५१.१ देवगंधर्वसंघैश्च २.५.३२ देवतापरमार्थं च १.६४.११८ देवतापरमार्थं तु १.२.३० देवतापरमार्थज्ञा १.९६.३० देवता शिव इत्याह १.८५.४२ देवताश्च सहेद्रेण १.१०१.१६ देवत्वं वा पितृत्वं वा १.८१.५३ देवदानवगंधैः १.५१.२५ देवदानवयक्षेद्र. १.२४.९७ देवदारुवनं प्राप्तः १.३१.२८ देवदारुवने शंभोः १.२.३८ देवदुंदुभयो नेदु. १.१०२.६० देवदुंदुभयो नेदु. १.१०३.५२ देवदेवं समासाद्य १.७२.११५ देवदेवं समासाद्य १.९२.६५ देवदेवं समासाद्य १.७२.७ देवदेवं जगन्नाथ २.२७.७ देवद्रोहं गुरुद्रोहं १.८९.४१ देवद्रोहं गुरुद्रोहात् १.८९.४२ देवमिष्ट्वा त्रिसंध्यं च १.६५.७५ देवयज्ञं च मानुष्यं १.२६.१५ देवमानीमुशनसः १.६६.६४ देवराजस्तथा शक्रा १.९२.६१ देवराजाय विद्यहे २.४८.१८ देवरातादभूद्राजा १.६८.४६ देवर्षिर्दिवसंकाशः २.३.८३ देववानुपदेवश्च १.६९.२९ देवसेनापतिः श्रीमान् १.८२.३८ देवस्य त्वेति मंत्रेण १.१५.२९	देवाज्जित्वाथ दैत्येन्द्रो १.९४.४ देवादयः पिशाचांता: १.७५.४४ देवादिदेवो देवर्षि. १.९८.११८ देवाद्यास्तु इमाः सृष्टा १.१०२.४७ देवानां च ऋषीणां च १.७.७ देवानां च ऋषीणां च १.३१.४ देवानां चैव चैत्याना. १.८६.४५ देवानां चैव सर्वेषां १.७२.१७२ देवानां जातयश्चाष्टौ २.१०.४१ देवानां दानवानां च १.६३.१ देवानां पुष्टतोयेन १.२६.११ देवानामक्षयः कोश. १.२१.८४ देवानामसुरेण्ड्राणा० १.९८.२ देवानृषीश्च महतो १.७०.१८१ देवान्यात्यसुरान्हंति २.१०.३० देवान् पितृश्च पुष्णाति २.१२.२२ देवापिभीतास्तं यांति २.४.१७ देवाश्च दुदुकुः सर्वे १.३६.५६ देवाश्च दुदुकुर्भूयो १.३६.६७ देवाश्च मुनयः सर्वे १.१०३.४६ देवाश्च सर्वे ते देवं १.७१.९९ देवाश्चैव तथा नित्यं १.५५.१६ देवासुरगणाध्यक्षो १.६५.६१ देवासुरगुरुर्देवो १.६५.६० देवासुरगुरुर्देवो १.९८.११७ देवासुरेश्वरो विष्णु. १.६५.१६२ देवी नंदीश्वरं देव. १.४३.५० देवी गायत्रिकां जप्त्वा २.२९.८ देवी तनयमालोक्य १.१०७.६० देवी मनोरथा वेगा० २.२७.१८८ देवीमावह्नि च पुन० २.५२.७ देवेन्द्रप्रमुखज्जित्वा १.१०१.१५ देवैः पीतं क्षये सोम. १.५६.५ देवैः पुरा कृतं दिव्यं २.९.१ देवैः समंतादेतानि १.९२.८४ देवैर्दृशां तैर्यद्वूपं १.९८.१७४ देवैर्भूक्तं तु पूर्वाहणे १.८३.११ देवैवृतो ययौ देवः १.४१.६४ देवैश्च पूज्या राजेन्द्र १.३६.४५ देवैश्च लोकाः सर्वे ते १.४४.३२
द दैवं च तेन मन्त्रेण दैवं नामां सहस्रेण दैवं नामां सहस्रेण	देवं च तेन मन्त्रेण २.२६.४ दैवं नामां सहस्रेण १.९८.२४ दैवं नामां सहस्रेण १.९८.२५	देवाज्जित्वाथ दैत्येन्द्रो १.९४.४ देवादयः पिशाचांता: १.७५.४४ देवादिदेवो देवर्षि. १.९८.११८ देवाद्यास्तु इमाः सृष्टा १.१०२.४७ देवानां च ऋषीणां च १.७.७ देवानां च ऋषीणां च १.३१.४ देवानां चैव चैत्याना. १.८६.४५ देवानां चैव सर्वेषां १.७२.१७२ देवानां जातयश्चाष्टौ २.१०.४१ देवानां दानवानां च १.६३.१ देवानां पुष्टतोयेन १.२६.११ देवानामक्षयः कोश. १.२१.८४ देवानामसुरेण्ड्राणा० १.९८.२ देवानृषीश्च महतो १.७०.१८१ देवान्यात्यसुरान्हंति २.१०.३० देवान् पितृश्च पुष्णाति २.१२.२२ देवापिभीतास्तं यांति २.४.१७ देवाश्च दुदुकुः सर्वे १.३६.५६ देवाश्च दुदुकुर्भूयो १.३६.६७ देवाश्च मुनयः सर्वे १.१०३.४६ देवाश्च सर्वे ते देवं १.७१.९९ देवाश्चैव तथा नित्यं १.५५.१६ देवासुरगणाध्यक्षो १.६५.६१ देवासुरगुरुर्देवो १.६५.६० देवासुरगुरुर्देवो १.९८.११७ देवासुरेश्वरो विष्णु. १.६५.१६२ देवी नंदीश्वरं देव. १.४३.५० देवी गायत्रिकां जप्त्वा २.२९.८ देवी तनयमालोक्य १.१०७.६० देवी मनोरथा वेगा० २.२७.१८८ देवीमावह्नि च पुन० २.५२.७ देवेन्द्रप्रमुखज्जित्वा १.१०१.१५ देवैः पीतं क्षये सोम. १.५६.५ देवैः पुरा कृत

देवैस्तुल्याः सर्वयज्ञः ०	१.८९.२७	द्रव्याणि सप्त होतव्य	२.२१.५३	द्विजेष्यः श्रावयेद्वापि	२.५५.४०
देवोद्याने वसेत्तत्र	१.९२.९	द्रव्याभावात्स्वयं पार्थो	१.६९.९२	द्वितीयावरणं प्रोक्तं	२.२७.१३०
देवो हिरण्मयो मृष्टः	२.१२.२६	द्रष्टव्यं चैव श्रोतव्यं	१.८६.७५	द्वितीयावरणे चैव	२.२७.६९
देव्यः शिवार्चनरता	१.८२.७३	द्रष्टुभिच्छामि भगवान्	१.६४.८०	द्वितीयावरणे चैव	२.२७.९३
देव्या पृष्ठो महादेवः	१.२५.२	द्राविडं नगरं वापि	१.७७.२३	द्वितीयावरणे चैव	२.२७.१३१
देव्यास्तद्वचनं श्रुत्वा	१.९२.३७	द्रुमक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं	१.९२.१२९	द्वितीयावरणे प्रोक्ताः	२.२७.१३५
देव्यै देवेन मधुरं	१.१०.३८	द्रुमचंडेश्वरं नाम	१.९२.१३६	द्वितीयावरणे रुद्राः	२.२७.१०६
देहमध्ये शिवं देवं	१.८.१०९	द्रुहां चानुं च पूरुं च	१.६६.६६	द्वितीयेऽहनि विप्रा हि	१.८९.१०१
देहशुरुद्धि च कृत्यैव	१.२७.५	द्रोणः कंकश्च महिषः	१.५३.६	द्विदले षोडशारे वा	१.८.९७
देहादग्निविनिर्माणं	१.९.३६			द्विदेवकुलसंज्ञं च	१.९२.१५८
देहार्णवं च सर्वेषां	२.२८.९५	द्वन्द्वरूपेण पात्राणि	२.२५.१३	द्विधा कृत्वा स्वकं देहो	१.७०.२६७
देहे देहे तु देहेशो	२.१३.२०	द्वन्द्वैः संपीड्यमानाश्च	१.३९.३३	द्विधाभ्यस्य च योगींद्रो	१.८६.१२१
	दे	द्वयोर्मासस्य पंचम्यो	१.८३.६	द्विधासौ रूपमास्थाय	१.८७.१४
दैत्यानां दानवानां च	१.५२.४७	द्वात्रिंशदंगुलायामा.	२.२५.४६	द्विविधं चैवग्रात्मानं	१.२०.७७
दैत्यानां देवकार्यार्थं	१.७१.७२	द्वात्रिंशदगुणसंयुक्ता०	१.१३.७	द्विशिखस्त्रिशिखश्चै०	१.७२.८०
दैत्यानां विघ्नरूपार्थं	१.१०३.८०	द्वात्रिंशद्रेचयेद्वीमान्	१.८.१११	द्विसप्ततिसहस्राणि	१.८६.६६
दैत्यानामतुलबलै०	१.९७.३३	द्वादशसंभसंयुक्ता०	२.२८.१९	द्वीपस्यानंतरो यस्तु	१.५३.२९
दैत्याश्च वैष्णवैब्रह्मै०	१.९८.१७	द्वादशांते ध्रुवोर्मध्ये	२.२१.२८	द्वीपस्यार्थं परिक्षिप्तः	१.५३.२२
दैत्येश्वररैर्महाभागैः	१.७१.३३	द्वादशाध्यात्मामित्येवं	१.९१.४३	द्वै चैव भृगुपुत्राय	१.६३.१३
दैवमित्यपरे विप्राः	१.७०.२५५	द्वादशास्य क्रमेणैव	१.५५.४४	द्वै तनू तव रुद्रस्य	१.९६.१०६
दैवे कर्मणि पित्रे वा	१.८८.९३	द्वादशो परिवर्तें तु	१.२४.५५	द्वै भार्ये सगरस्यापि	१.६६.१५
	दो	द्वादशैव प्रजास्त्वेता	१.३८.१४	द्वै वाथ परमेरिष्टे	१.९१.३०
दोषूयते महापद्मं	१.२०.६५	द्वादशैव महादेवं	१.५५.४१	द्वै विद्ये वेदितव्ये हि	१.८६.५१
दोषं तामिल इत्याहु०	२.९.३३	द्वादशैव स्तवैर्भानुं	१.५५.४०	द्वैपायनो ह्यरण्यां वै	१.६३.८५
दोषं त्वं पश्य एतत्त्वं	१.९६.३९	द्वादश्यां धर्मतत्त्वज्ञं	१.८९.११६		
दोषात्तस्माच्च नशयंति	१.८.५७	द्वापरश्च कलिश्चैव	१.४.२५	धंधुमारस्य तनया	१.६५.३६
	दौ	द्वापरांते भविष्यामि	२.३.७९	धनंजय इरावांश्च	१.५५.५६
दौरात्म्यं तत्त्वपस्यैव	२.५.१३३	द्वापरे चैव कालाग्निं	१.३१.७	धनंजयो महापद्म	१.५५.२९
दौर्बल्यं याति तन्मन्त्रं	१.८५.१८४	द्वापरे तु प्रवर्तते	१.३९.५६	धनं वा तुष्टिपर्यंतं	१.७३.२५
दौर्मनस्यं निरोद्धव्यं	१.९.१०	द्वापरे द्वापरे व्यासाः	१.७.११	धनकस्य तु दायादा०	१.६८.८
	द्य	द्वापरे प्रथमे ब्रह्मान्	१.२४.१२	धनधान्यादिभिः सर्वैः	२.५४.१६
द्युतिमंतं च राजानं	१.४६.२१	द्वापरे व्याकुलीभूत्वा	१.३९.७०	धनहीनश्च धर्मात्मा	१.६५.४८
द्युतिमानृषिपुत्रस्तु	१.६१.१७	द्वापरे षष्ठ्यपि वर्तते	१.३९.५३	धनी प्रजावानायुष्मान्	१.६७.२७
द्युतिर्द्युतिमतां कृत्स्नं	१.६०.७	द्वारस्य पाश्वे ते तस्युं	१.७१.१३५	धनुश्च मकरश्चैव	१.८२.७६
द्यूतवादक्रियामूढाः	२.६.६७	द्विगुणः सूर्यविस्तारा०	१.५७.११	धनुष्मान् पुरुषः कोत्र	२.५.१२९
द्यौर्मूर्धा तु विभोस्तस्य	१.७५.७	द्विगुणः सूर्यविस्ताराद्	१.६१.२९	धनेशत्वमवाप्तोसौ	२.१.६७
द्यौर्मूर्धा ते विभे नाभिः	१.३६.१६	द्विजक्षापच्छलेनैवं	१.९५.२६	धन्यं यशस्यमायुष्य०	१.९६.११८
	द्र	द्विजश्रेष्ठा भविष्यति	१.२४.२५	धन्या धर्मं चरिष्यन्ति	१.४०.४६
द्रक्षयंति तद्विजा युक्ता	१.२३.३७	द्विजाः कनकनंदाया०	१.५१.२७	धन्वंतरिर्धूमकेतुः	१.६५.१२६
दक्षयंति मां कलौ तस्मिन्	१.२४.१०५	द्विजाः परिवहश्चेति	१.५३.३८	धन्विने शूलिने तुभ्यं	१.९५.४८
द्रविणी द्राविणी चैव	२.२७.१६३	द्विजानां तु हितायैव	१.२६.४१	धन्विनो निशितैर्बाणै०	१.६८.३१

धयतीत्येष वै धातुः	१.७०.२३४	धि	न
धरणि त्वं महाभागे	१.९४.२२	धिंग्युष्मान् प्राप्तनिधनाम्	२.२७.२१५
धरणी जनयामास	१.६.८	धु-धु	१.४२.२४
धरणी धारणी चेला	१.१०३.७	धुंधुमूकः पुरासक्तो	२.२७.२२०
धराधरात् पतितं	१.६४.९	धूपदीपसमोपेतं	२.९.७
धरापृष्ठा द्विजाः क्षमायां	१.५४.५३	धूपाचमनीयदीपः	१.५२.४९
धरा प्रतिष्ठिता ह्येवं	१.९४.३०	धूमवंतो ज्वलतंश्च	१.७६.१९
धरायां सोचितनोत्सर्वान्	१.३८.९	धृ	१.९८.१२२
धर्म धर्मेण सर्वाश्च	१.१७.२२	धृतराष्ट्रः सगंधर्वः	१.८१.३
धर्म पितृणामधिपं	१.५८.५	धृतिमान्मतिमांस्यक्षः	१.७१.१५१
धर्मकर्माक्षमः क्षेत्रं	१.९८.३९	धृतिरेषा मयानिष्ठा	१.४२.३७
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं	२.२०.७	धृत्यास्तु नियमः पुत्रः	१.८०.५२
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं	२.२८.१५	धृष्टश्च धृष्टकेतुश्च	१.४९.६८
धर्मकामार्थमोक्षार्थं	१.८३.१४	धे	१.४४.१६
धर्मनिष्ठाश्च ते सर्वे	१.७१.५५	धेनुमुद्रां दर्शयित्वा	२.६.१३
धर्मवृक्षाय धर्माय	१.२१.११	धे	२.५.१५२
धर्मश्चातिवलः सर्पे	२.२७.१२८	धैर्यग्रिघंधुर्यो धात्रीशः	२.१५.१५
धर्मश्चैव तथा शप्तो	१.२९.३३	ध्या	१.४०.२९
धर्मस्य पत्न्यः श्रद्धाद्याः	१.५.३४	ध्यानं द्वादशकं यावत्	१.१०.६
धर्मस्योपनिपत्सत्यं	१.५.३७	ध्यानं ध्येयं दमः शांतिः	१.६१.२०
धर्मदियः प्रथमजाः	१.९२.४९	ध्यानं परं कृतयुगे	१.३६.१७.
धर्मदियो विदिक्षेते	१.७७.१८९	ध्यानमार्गं समासाद्य	१.५७.८
धर्मदीनि च रूपाणि	१.२७.२८	ध्यानयुक्तो जंपाभ्यासे	१.६१.५२
धर्मदैश्वर्यमित्येषा	१.७०.११	ध्यायंतस्तत्र मां नित्यं	१.६१.१२
धर्मधर्मी च तेष्वास्तां	१.७१.६८	ध्यायंति ये महादेवं	१.५७.३०
धर्मर्थकामसंयुक्तो	१.४७.१५	ध्यायतः पुत्रकामस्य	१.८८.२५
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यः	१.५२.३१	ध्यायते जृंभते चैव	२.३.६३
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यः	१.६.२५	ध्यायन्विष्णुमथाध्यास्ते	२.३.४४
धर्मो द्विजोत्तमो भूत्वा	२.२७.२१	ध्यायन्सनातनं विष्णु	१.६५.११६
धर्मोपदेशमखिलं	१.२९.५३	ध्यायेदेवमधोरेशं	१.३४.१३
धर्मो विरागो दंडोस्य	१.१२.१३	ध्येया यथाक्रमेणैव	१.८६.१२७
धा.	१.७२.१०	ध्येयाय ध्येयगम्याय	१.८६.१२६
धारणात्रयसंदीप्तोः	२.५५.११	ध्येयो महेश्वरो ध्यानं	१.७०.२५६
धातकी चैव द्वावेतौ	१.४६.२३	ध्येयो लिंगे त्वया दृष्टे	१.९५.३०
धातारं च विधातारं	१.५.३९	ध्रुवेण प्रगृहीतो वै	१.८५.१५१
धाताऽर्यमाऽथ मित्रश्च	१.५५.२५	ध्रुवेणाधिष्ठिताश्चैव	१.८६.२४
धता विधाता लोकानां	२.१५.१९	ध्रुवो नाम महाप्राज्ञः	१.८.२५
धातुशून्यबिलक्षेत्रः	१.८९.३६	ध्वांक्षशत्रो महाप्रज्ञः	१.८८.२४
धारणाभ्यासयुक्तानां	१.७२.१४९	ध्वांतोदरे शशांकस्य	१.८६.१३८
धावनी क्रोष्टुका मुङ्डा	२.२७.१६९	ध्रुवेण प्रगृहीतो वै	१.६४.०

न तत्क्षमति देवेशो	२.१८.६०	नमः सर्वात्मने तुभ्यं	१.७१.१००	नमो भवाय भव्याय	१.३१.३७
न तत्र सूर्यस्तपति	१.५२.३८	नमः सिद्धाय मेध्याय	१.२१.३९	नमो भूताय भव्याय	१.२१.२८
न तथा तापसोग्रेण	१.९१.६२	नमः सेनाधिपतये	१.७१.१५९	नमो योगस्य प्रभवे	१.२१.७
न तद्विरण्मयं सौम्यं	१.९६.६३	नमः सोमाय सूर्याय	१.१८.३१	नमो रसानां प्रभवे	१.२१.१२
न तस्य शक्यते वर्कुं	१.७७.२४	नमः स्थूलाय सूक्ष्माय	१.२१.४१	नमो राजाधिराजाय	१.१८.३५
न तीर्थफलभोगेन	१२४.७	नमः स्थैर्याय वपुषे	१.२१.२६	नमो रुद्राय हरये	१.१.१
न तु च्यावयितुं शक्यो	१.८८.३६	नमः उग्राय भौमाय	१.९६.७७	नमो विकरणायैव	१.१६.१२
न तु शक्रसहस्रत्वं	१.१०३.७७	नमश्चंद्राग्निसूर्याय	१.९६.८७	नमो विकृतवेषाय	१.२१.६९
न तृप्त्यत्यनवद्यांगी	२.१०३.५४	नमश्चकार तं दृष्ट्वा	१.१०८.५	नमो वै पदावण्यि	१.२९.४७
न तेऽन्यथावगंतव्यं	१.२०.५२	नमश्चेद्रियपत्राणां	१.२१.३७	नमोऽस्तु ते महादेव	१.६.१७
न त्यज्यं तव विप्रेन्द्र	१.६४.१२	नमस्कारविहीनस्तु	१.४४.४८	नमोऽस्तु नृत्यशीलाय	१.२१.६३
नत्वा संपूज्य विधिना	२.२७.६	नमस्कारसमायुक्तं	१.६२.३८	नमोस्तु वामदेवाय	२.२७.२८
न दानेन मुनिश्रेष्ठाऽ	१.३०.३२	नमस्कारादिकं सर्वं	१.८९.५३	नमोस्तु सर्वविद्यानां	१.१६.७
न दास्यन्ति सुतं तेत्र	१.३७.७	नमस्कारेण सततं	१.२८.२१	नमोस्त्वजाय पतये	१.१८.२६
नदीनदससुद्रांश्च	१.३८.८	नमस्कृत्य महादेवं	१.१.२८	नमोस्त्विष्टाय पूर्ताय	१.२१.३२
नदीनाममृतं साक्षं	२.१२.३१	नमस्तुभ्यं महादेव	१.१०२.४६	नमो हस्ताय दीर्घाय	१.९५.४६
न दुर्लभो न संदेहो	१.१०.३६	नमस्ते कालकालाय	१.९५.३५	न यज्ञार्थं स्त्रियो ग्राह्याः	१.७८.१९
न दुर्लभो मृत्युहीनं	१.४१.६२	नमस्ते प्राणपालाय	१.२१.६१	नयनं चैवमीशस्य	१.५९.४५
न दृष्टमेवमाशर्वयं	१.४३.१०	नमस्ते भगवन् रुद्रं	१.४१.२९	न ययौ तृप्तिमीशानः	१.७१.१२९
न देयं यस्य कस्यापि	१.८६.१५६	नमस्ते वक्रकेशाय	१.२१.४२	नरः कृत्वा ब्रतं चैव	१.८४.७२
नद्यर्शं बहवः प्रोक्ताः	१.५२.१	नमस्ते वै महादेव	१.२४.५	नरकं च जगामान्या	१.७१.८९
नद्येषा वरुणा देवि	१.९२.८७	नमस्ते सविशेषाय	१.२१.४५	नरकं चैव नाप्नोति	२.२५.१०६
ननाद चोर्ध्वमुच्चधीं	१.३०.२२	नमस्त्रिंशत्रकाशाय	१.७२.१४३	नरकाणां स्वरूपं च	१.२.३५
ननाद तनुवेगेन	१.९६.६१	न मिथ्या संप्रवर्तते	१.१०.२६	नरकारीशरीराय	१.२१.६२
ननाद भगवान् ब्रह्मा	१.१०३.६३	नमोऽविकाधिपतये	१.१८.३२	नरावतारे तच्छिष्ये	१.७७.३७
ननु स्वभावः सर्वेषां	१.३३.५	नमोऽकृत्याय कृत्याय	१.२१.६८	नदते कूर्दते चैव	१.२१.६६
ननृतुर्मुनयः सर्वे	१.८६.१५	नमो गुण्याय गुह्याय	१.२१.७१	नर्मदातीरमेकाकी	१.६८.३६
न पठेच्छृणुयाद्वापि	१.७२.७४	नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय	१.२१.४	नर्गदायां समुत्पत्रः	१.६५.४२
न पुनर्दुर्गतिं याति	१.८६.१५७	नमो दिग्वाससे नित्यं	१.३२.१	न लब्ध्वा दिवि भूमौ च	१.९७.२५
न प्रामाण्यं श्रुतेरस्ति	१.९२.८१	नमो देवाधिदेवाय	१.३३.१६	नलस्तु निषधाज्जातो	१.६६.३९
न भावयत्यतीतानि	१.४०.३	नमो धूम्राय रवेताय	१.२१.४४	न वदेत्सर्वयलेन	१.८९.३९
नमो नमस्ययोरेष	१.८६.३५	नमोनंताय सूक्ष्माय	३.९६.८०	नवधा संथापयेद्विंशि	२.२७.१३
न ग्रश्यन्ति यतोऽप्नि	१.५५.५५	नमो नदीनां प्रभवे	१.२१.१०	नव प्रकृतयो देवा	१.६३.५५
नमः केयूरभूषाय	१.५४.४६	नमो नमः सर्वविदे शिवाय	१.७२.१५८	नवमः केतुमालस्तु	१.४७.६
नमः क्षेत्राधिपतये	१.१८.३६	नमो नारायणयेति	२.७.१३	नवमासात्परिक्लिष्टः	१.८८.५७
नमः क्षेत्राय वृद्धाय	२.२१.३	त्वमो नारायणयेति	२.४८.३५	नवमासोषितश्चापि	१.८८.५८
नमः पाशाय वृद्धाय	१.२१.४६	नमो नृसिंहसंहर्ते	१.९६.८३	नवम्यां दारिकायार्थी	१.८९.११५
नमः शिवाय देवाय	१.२१.३१	नमोऽपौरीमितं कृत्वा	१.९६.९४	नवयोजनसाहस्रो	१.५५.४
नमः शिवाय रुद्राय	२.१९.४१	नमो भगवते तुभ्यं	१.१८.२४	नवयोजनसाहस्रो	१.५७.१०
	२.१९.२७	नमो भवाय देवाय	१.२१.३०	नवयोजनसाहस्रो	१.६१.२८

नवरत्नं हिरण्यादैः	२.४७.२९	नात्यर्थं धार्मिका ये च	१.४०.५५	नारदोभ्यर्च्च शैलेशे	१.१.२
नवरश्मि तु भौमस्य	१.६१.२४	नादाक्षी नादरूपा च	२.२७.२०५	नारसिंहश्च विजय०	२.२७.१२१
नववषान्वितश्चैव	१.४८.३४	नादेयीश्चैव सामुद्रीः	१.५९.२३	नारस्य च तथोत्पत्तिः	१.२.४४
नवाक्षरेण मंत्रेण	२.२२.४७	नादैस्तस्य नृसिंहस्य	१.९५.१८	नारायणं जपेत्रित्यं	२.७.६
नवात्मतत्त्वरूपाय	१.७२.१३५	नादोपरि शिवं ध्याये०	२.२७.२५	नारायणं तथा लोके	१.३४.३०
नवाहं वापि सप्ताह०	२.४६.४७	नाधिकात्र च हीनांस्तान्	१.७०.३०४	नारायणं पुनर्ब्रह्मा	१.४१.१८
न विदुस्त्वां महात्मानं	१.६२.३४	नानाकृतिक्रियारूप०	१.७०.९४	नारायणं बुधं प्राहु०	१.६०.३
न विषं कालकूटाख्यं	१.८६.९	नानादेवार्चने युक्ता	१.५२.२६	नारायणपदं श्रुत्वा	२.७.१०
नवैते ब्रह्मणः पुत्रा	१.५.११	नानापुष्पसमाकीर्णे	१.८८४	नारायणपरो नित्यं	२.४.१३
नवोग्रसेनस्य सुता०	१.६९.४२	नानाप्रभावसंयुक्ता	१.८०.४०	नारायणमुखोद्गीर्णं	१.२०.४
न व्यवर्धते लोकेऽस्मिन्	१.४१.७	नानाविधानि दानानि	१.२.३६	नारायणश्च भगवान्	१.१००.५०
न शक्यं भानवैर्द्रष्टुः	१.२४.८	नानासिद्धियुतं दिव्यं	१.८५.३०	नारायण हृषीकेश	२.६०.१९
न शक्यो विस्तरो वक्तुं	१.९.६७	नानातःप्रज्ञो बहिःप्रज्ञो	१.८६.९७	नारायणाय सर्वाय	१.९४.१२
वश्यंत्यभ्यासतस्तेऽपि	१.८.११६	नान्यमिच्छामि भक्ताना०	१.९६.१८१	नारायणानां दिव्यानां	२.१.४
नष्टं कुलमिति श्रुत्वा	१.६४.६	नान्या गतिस्त्वदन्या मे	२.५.३७	नारायणाय विद्यहे	२.१८.६१
नष्टा चैव स्मृतिर्दिव्या०	१.४३.३	नानेन सदृशो मंत्रो	२.५४.१७	नारायणाय विद्यहे	२.४८.१२
नष्टानां जीवितं चैव	१.१००.४६	नापश्यंत ततो देवं	२.१७.२३	नारायणाय शर्वाय	१.७१.९७
न सितं वासितं पीतं	१.८६.१२३	नापश्यदल्पमप्यस्य	१.१७.४४	नारायणेन कथितं	२.३.९५
न स्तोष्यामीति नियतः	२.१.६२	नापेक्षितं महाभाग	१.२९.६७	नारुद्रस्तु स्पृशेद्गुद्रं	२.२१.८२
न स्यष्टव्या न द्रष्टव्या	१.७८.२२	नाभागस्तस्य दायादो	१.६६.२१	नार्यश्चरंति संत्यज्य	१.७१.८५
न हंतव्याः सदा पूज्याः	१.७८.१७	नाभागादंबरीषस्तु	१.६६.५०	नालमेकस्य तत्सर्वं	१.६७.१८
न हसेत्राप्रियं ब्रूया.	१.३३.१०	नाभागेनांबरीषेण	१.६६.२२	नावमंतव्य एवेह	१.३५.८
नहि विष्णुसमा काचिद्	१.२४.१४३	नाभिनंदिकरो हम्यंः	१.६५.११५	नाशातिशयतां ज्ञात्वा	१.९.५३
नहुषः प्रथमस्तेषां	१.६६.६०	नाभूत्राशाय तद्वज्ञं	१.३५.३०	नाश्लीलं कीर्तयेदेवं	१.८.१४
न ह्येनं प्रस्थितं कश्चि.	१.८८.६३	नाभेरधस्ताद्वा विद्वान्	१.८७.१९	नासास्या नानृणा भूमि०	२.५.५०
न ह्येषा प्रकृतिर्जीवी	१.८७.८	नाभेर्निसर्गं वक्ष्यामि	१.८७.१६	नास्तिकाश्च शठा यत्र	२.६.५८
ना		नाभौ वाथ गले वापि	१.८५.४९	नास्ति क्रिया च लोकेषु	१.७५.१७
नांदीश्राद्धविधानं च	१.२.३२	नामघोषो हरेश्चैव	१.२१.२	नास्ति मृत्योर्भयं शंभो०	१.३५.१७
नागः कूर्मस्तु कृकलो	१.८.६२	नामभिश्छांदसैश्चैव	१.४६.२४	नास्ति विज्ञानिनां शौचं	१.७५.१६
नाग इत्येव कथिता	१.८६.८४	नामा तु धातकेश्चैव	१.६५.५१	नास्ति सत्यसमं यस्मा०	१.२६.३७
नागद्वीपं तथा सौम्यं	१.५२.२८	नामां सहस्रं जप्त्वा वै	१.६५.४९	नास्ति सर्वामरत्वं वै	१.७१.१३
नागशत्रुहिरण्यांगो	१.८२.६३	नामां सहस्रं रुद्रस्य	१.९८.१९२	नास्त्येव दैविकं दिष्टं	१.४३.२९
नागाद्यैपंचभिर्भेदैः	२.१०.२४	नामां सहस्रेणानेन	१.९६.९५	नास्य प्रकृतिबंधोऽभृद०	२.१०.३
नागानां सिद्धसंधानां	१.४९.६२	नामामष्टशतेनैव	१.८६.१८	नि	
नागश्च ननृतुः सर्वे	१.७१.१३२	नारकी पापकृत्स्वर्गी	२.२.२	निःशेषं पूर्येद॒विद्वान्	२.२८.४६
नागश्च पर्वताः सर्वे	१.१०२.२१	नारदं मुनिशार्दूल०	२.५.१५६	निकृत्य केशान् सशिखा०	१.२९.७७
नागेद्रवक्त्रो यः साक्षा०	१.८२.३५	नारदः पर्वतश्चैव	१.६३.५	निकृत्या तु द्वयं जज्ञे	१.७०.२९९
नाचरेद्देहबाधायां	१.८८.८१	नारदः प्राह हर्यश्वान्	१.९९.१५	निग्रहः कथितस्तेन	२.५०.१
नाडी राशिशुका चैव	१.८६.८१	नारदस्यैव दक्षोपि	१.६३.९	निग्रहो घोररूपोऽयं	२.५१.१
नाड्यां प्राणे च विज्ञाने	१.८६.८५	नारदोनुगान् प्राह		निगृह्य मनसा सर्वं	१.९१.४१

नित्यं समारभेद्धर्म	१.८८.७५	निवारितं हरेश्चक्रं	२.५.१५०	नी
नित्यनैमित्तिकादीनि	२.४५.८५	निवृत्तं वर्तमानं च	१.७०.१६०	नीचस्येव तदा वाक्यं
नित्यप्रियो नित्यनृत्यो	१.६५.७४	निवृत्तः संवृत्तः शिल्पो	१.९८.१५५	१.४०.१४
नित्यमुक्त इति प्रोक्तो	२.१०.७	निवृत्तः सर्वसंगेष्यो	१.१०.१४	१.८.४७
नित्यमृक्षेषु युज्यते	१.५७.३४	निवृत्तिलक्षणो धर्मः	१.८६.१६	१.९८.४२
नित्यहोमादिकुंडं च	२.२५.३	निवृत्तिलक्षणज्ञान०	१.२९.८	१.६५.१२८
नित्यांता ह्याणवो बद्धाः	१.१७.२९	निवृत्तिश्चास्य विप्रस्य	२.५५.४२	१.८१.१४
नित्यो धाता सहायश्च	१.६५.१४२	निवृत्त्या रुद्रपर्यंतं	२.२१.४७	२.५५.१५
नित्यो नियतकल्याणः	१.९८.८४	निवृत्त्यै धनदेवाय	२.२१.१८	१.४९.५५
नित्योऽनित्योऽहमनधो	२.१७.१२	निवेदनः सुधाजातः	१.६५.१५१	१.३२.४
नित्यो विशुद्धो बुद्धश्च	१.२८.१३	निवेदयामास तदा	१.६९.५७	१.५०.३
नित्यो ह्यनीशः शुद्धात्मा	१.६५.१०२	निवेदीत शर्वाय	१.८४.४७	१.१८.३३
निद्रापरवशः शेषे	१.९६.५३	निवेदेच्च रुद्राय	१.८१.४१	१.७०.३१२
निन्दंति वेदविद्यां च	१.४०.२०	निवेदेयेततो भक्त्या	१.८१.३८	१.९६.१०
निपेतुर्विह्लात्यर्थ	१.४३.१३	निवेदेयेद् द्वुभ्यं शंभो०	२.३३.९	१.६४.७७
निमित्तस्थो निमित्तं च	१.६५.१७	निवेदितं किलात्मानं	१.२९.५७	२.१८.१९
निमेषाश्चानुकर्षित्वा	१.७२.९	निवेद्य देवदेवाय	१.७७.७३	१.४९.२०
नियुतं मानसं जप्त्वा	१.१५.१३	निशम्य तद्यक्षमुमांबिकाह	१.५३.६०	१.८३.४२
नियुतान्येकनियुतं	१.५३.४०	निशम्य ते महाप्राज्ञाः	१.८७.१	१.६५.१०५
नियुतान्येव षट्ट्रिंश०	१.४.३१	निशम्यवचनं तस्य	१.२४.१४५	१.४९.३
नियोगादेव तत्कार्य	१.८४.१६	निशम्य वचनं तस्य	१.३६.६८	२.२३.९
नियोगाद्ब्रह्मणः साध्वी	१.९८.१८६	निशम्य वचनं देवी	१.९२.१८५	१.८१.३९
नियोगाद्ब्रह्मणः सर्वे	१.७१.१४८	निशम्यवं महातेजा	१.२४.१४१	१.७१.३६
निरवद्यपदोपायो	१.९८.१५७	निशांते सृजते लोकान्	१.४.३७	१.७९.१६
निराशस्त्यक्तसंदेहः	१.४७.२३	निशाकरणत्रिक्षवते	१.५४.३२	१.१०३.२३
निरीक्षणं प्रोक्षणं ताडनं च	२.२५.६६	निशाचरः प्रेतचारि०	१.९८.६९	१.६३.८८
निरीक्षणादेव विभोसि		निशाचरः प्रेतचारी	१.६५.७३	
दग्धुं	१.७२.१५४	निशाचराय विद्वाहे	२.४८.२१	
निर्गतां शोकसंतप्तौ	२.५.१५१	निशायाभिव खद्योतः	१.७०.१२२	
निर्जिता समरे सर्वे	१.९७.४	निषधं नाम यः कुर्यात्	१.७७.१४	
निर्देशाद्वेदवेदस्य	२.१०.२३	निषधः पारियात्रश्च	१.४९.२३	
निर्देशेन शिवस्यैव	२.१०.२२	निषेवितं चारुसुगंधिं०	१.९२.१६	
निर्द्वंद्वा वीतरागाश्च	१.६.१६	निष्कंटकः कृतानंदो	१.९८.१४२	
निर्ममे भगवांस्त्वष्टा	१.६५.१६	निष्कलं प्रथमं चैकं	१.७५.३१	
निर्मायादि निराक्रान्ता	१.४०.६७	निष्कलस्यात्मनः शंभो	१.६.२१	
निर्मलः केवलो ह्यात्मा	२.५५.१७	निष्कलो निर्मलो नित्यः	१.७५.१	
निर्मासरुषिरत्वग्वै	१.४२.४	निहता सा च पापेन	१.८.२५	
निर्लोज्जा निर्धृणा मंदा	२.२७.१७८	निहते तारके दैत्ये	१.७१.८	
निर्लोपो निष्ठपंचात्मा	१.९८.१५६	निहतो हिमवत्युत्रि	१.९२.९६	
निवाणं हृदयश्चेव	१.६५.१५९	निहत्य गदया विष्णु	१.१००.२७	
				नृसिंहेन पुरा दैत्यो
				२.२७.२७६

नृसिंहेन हतः पूर्व नृपचिह्नानि नान्येषां ने	१.९५.१ २.२७.२६१	पंचदश्यां च धर्मिष्ठां पंचधा पंचकैवल्यं पंचनिष्ठेण कर्तव्यं पंचप्रकारविधिना पंचपूर्वातिक्रमेण पंचबुद्धिद्रियाण्यस्य पंच ब्रह्माणि मे नन्दिन् पंचब्रह्मात्मकं सर्वं पंचभिश्च कपालीशः पंचभूतानि शेषाणि पंचभूतानि संयम्य पंचभूतान्यहंकारो पंचमन्त्रसहितेन पंचमं धृतिमत्खष्टं पंचमः स्वरितश्चैव पंचमस्तु जनसतत्र पंचमाय महापंचं पंचमोनुग्रहः सर्गा० पंचरात्रं तथा स्पृश्या० पंचवक्रं दशभुजं पंचवक्रं दशभुजं पंच वायुजयं भद्रे पंचविंशतिकं साक्षात् पंचविंशति तत्त्वज्ञः पंचविंशतितत्त्वात्मा पंचविंशतितत्त्वात्मा पंचविंशतितत्त्वालां पंचविंशतिमोक्षार्थं पंचविंशत्कुशेनैव पंचविंशत्परिमिता पंचाक्षरस्य माहात्म्यं पंचामृतपंचगव्यादीनि पंचार्थज्ञानसंपत्तिः पंचार्थयोगसंपत्तो पंचाशत्कोटिविस्तीर्णा पंचाशद्वीपमालाभिः० पंचास्यरुद्रुद्राय पंचेन्द्रियाणां विजयो पंचैते वैकृताः सर्गाः पंचैते हेतवो ज्ञेया	पकारमुदरं तस्य पक्वेष्टकाभिर्विधिव० पक्षजाः पुष्काराद्याश्च पक्षजाः कल्पजाः सर्वे पक्षद्वादशकं वापि पक्षयोरुपवासं च पक्षिणी मातुलानां च पठतां शृणवतां नित्यं पठेत्रितिष्ठाकालेषु पण्यं प्रसारितं चैव पतंति चात्मभोगार्थं पतये हैमवत्याश्च पतितेन च विप्रेण पतिव्रताभिः सर्वत्र पदे पदेश्वमेधस्य पदभ्यां चाश्वान् समातंगान् पदभ्यां तलनिपातेन पद्मकिंजलकसंकाशैः पद्मगर्भो महागर्भो पद्मप्रभाः पद्ममुखाः पद्ममष्टदलं कुर्यात् पद्मसूत्रानुसारेण पद्मस्योत्तरदिग्भागे पद्महस्तोमृतास्यश्च पद्माक्षप्रभृतीनां च पद्माक्षमाह भगवान् पद्माक्षैर्दशलक्षं तु पद्माश्रितो महादेवः पद्मासनस्थः सोमेशः पदोत्पलवनोपेता पदोद्भवाय विद्वहे पपात च तदा भूमौ पपात ताडयंतीव पयसा वाथ दध्ना च पयोष्णी वारुणी शांता परं ध्यानं समाश्रित्य परं ब्रह्म स ईशान परः स पुरुषो ज्ञेयः परदारता मर्त्या	१.१७.७९ १.८४.३९ १.५४.५५ १.५४.५४ १.२९.७४ १.८३.५३ १.८९.९० २.७.३० १.९६.१२५ १.८९.७० १.१०.३५ १.१०४.१३ २.९.२ १.७१.३२ १.७७.६६ १.७०.२३८ १.२०.६३ १.८०.४१ १.९८.११६ १.५२.३९ २.३१.३ १.२०.३१ २.३७.५ २.२२.५६ २.२.४ २.१.५८ १.८५.१११ १.८१.३० १.८२.५ १.४३.३४ २.४८.१६ १.१००.२८ १.६४.२८ २.२८.८९ २.२७.८७ १.१२.४ २.१८.१४ १.७०.८२ २.६.६९
नैकसंस्तंभमयं चापि नैकधा तु शतैश्चत्रे नैगमेशश्च भगवां० नैतानि शस्तरूपाणि नैषुवस्य तु सा पत्नी नैषिषेयास्तदा दृष्ट्वा नैषिषेयास्तु शिष्याय नैकृहंते कृष्णवर्णा० च नैवमात्मविदामस्ति नैवाशीचं यतीनां च नैषधं हेमकूटात् नैषां भार्यास्तु पुत्रश्च नैषिकं ब्रतमास्थाय	१.४४.२० १.५१.४ २.४६.१८ २.३.६५ १.६३.५३ १.११.५ १.११.९ १.४८.१७ १.८९.४८ १.८९.७७ १.४९.८ १.७०.३०२ १.२४.१०३	पंचविंशतिकं साक्षात् पंचविंशति तत्त्वज्ञः पंचविंशतितत्त्वात्मा पंचविंशतितत्त्वालां पंचविंशतिमोक्षार्थं पंचविंशत्कुशेनैव पंचविंशत्परिमिता पंचाक्षरस्य माहात्म्यं पंचामृतपंचगव्यादीनि पंचार्थज्ञानसंपत्तिः पंचार्थयोगसंपत्तो पंचाशत्कोटिविस्तीर्णा पंचाशद्वीपमालाभिः० पंचास्यरुद्रुद्राय पंचेन्द्रियाणां विजयो पंचैते वैकृताः सर्गाः पंचैते हेतवो ज्ञेया	१.१०४.१४ २.१९.१०३ १.८६.४९ १.६१.६३	
न्यगूर्ध्वाधिः प्रचारोऽस्य न्यग्रोधबीजे न्यग्रोध० न्यग्रोधे विपुलस्कंधो न्यसेत्पंचाक्षरं चैव न्यसेन्मन्त्राणि तत्त्वो न्यस्ते मन्त्रेण सुभगे न्यस्ते यत्तदुत्पत्तिः० न्यायतः सेव्यमानस्तु न्यायनिर्वाहिको न्यायो न्यासं षडंगं दिव्यं धं न्यासित्वेन ब्रह्मात्मा	१.६०.२२ १.२७.७ १.४९.३३ १.२७.१७ १.२७.३७ १.८५.८१ १.८५.६२ १.८५.५३ १.९८.११३ १.८५.२४ २.२६.१२	पंचविंशतितत्त्वात्मा पंचविंशतितत्त्वालां पंचविंशतिमोक्षार्थं पंचविंशत्कुशेनैव पंचविंशत्परिमिता पंचाक्षरस्य माहात्म्यं पंचामृतपंचगव्यादीनि पंचार्थज्ञानसंपत्तिः पंचार्थयोगसंपत्तो पंचाशत्कोटिविस्तीर्णा पंचाशद्वीपमालाभिः० पंचास्यरुद्रुद्राय पंचेन्द्रियाणां विजयो पंचैते वैकृताः सर्गाः पंचैते हेतवो ज्ञेया	१.८५.२२५ १.८५.११२ २.२५.४० १.४०.९१ १.८५.६ २.२४.१७ १.८६.४९ १.८६.५० १.४९.२ १.७७.८६ १.७२.१२३ १.८५.२२१ १.७०.१६६ १.६१.६३	
पंचकल्याणसंपत्रं पंचकेनेशमूर्तीनां पंचकलेशमयैः पाशैः	२.३९.३ २.१२.४२ २.९.२८			

परदारान् परद्वयं	१.८५.१३८	परेण तस्य महती	१.५३.३१	पश्यत्यचक्षुः स	१.८८.४९
परमात्मानमीशानं	१.३७.३०	परेण पृष्करस्याय	१.५३.३०	शृणोत्यकर्णो	१.९२.९६
परमात्मा परं ज्योति०	२.१५.१३	पर्णवृत्त्या पयोवृत्त्या	१.२९.७९	पश्य पुण्यानि लिगानि	१.६४.८२
परमात्मा मुनिर्ब्रह्मा	१.३.१०	पर्यग्निं च पुनः कुर्यात्	२.२५.२२	पश्यबालं महाभागे	१.७०.१४६
परमात्मा शिवः प्रोक्तः	२.११.३	पर्यटित्वा तु देवस्य	१.२०.२९	पश्वादयस्ते विख्याता	१.९८.१८२
परमात्मा शिवः शंभुः	२.१६.१६	पर्यपृच्छेत्पतंगोपि	१.५४.१४	पस्पर्श च ददौ तस्मै	१.९८.१८२
परमात्मा शिवादन्यो	२.१६.२६	पर्यायवाचकैः शब्दैः	१.७०.२७	पा	
परमात्मा ह्यणुर्जीवः	२.२७.१०१	पर्वतस्य मया विद्वन्	२.५.१२६	पाणिग्रहणमत्रेषु	१.६६.४
परमार्थः परमयः	१.९८.८१	पर्वतानि महाभार०	१.९.४०	पाणींद्रियात्मकत्वेन	२.१४.१७
परमार्थविदः केचिं०	१.७५.२	पर्वताश्च व्यशीर्यत	१.१००.९	पातकं धारणाभिस्तु	१.८.७६
परमेशो जगत्राथः	१.३८.२	पर्वते वा नदीतीरे	२.४५.५	पापकर्मरता मूढा	२.६.४४
परस्परनिमित्तेन	१.४०.६०	पर्वतोदधिवासिन्यो	१.३९.१७	पातकी च तदर्थेन	१.८९.४३
परस्परानुप्रवेशा.	१.५९.१७	पर्वतोऽपि तथा प्राह	२.५.१२७	पातालतलसंस्थाश्च	१.९.६४
परस्परानुप्रवेशा.	१.७०.४८	पर्वतोऽपि यथान्यायं	२.५.११०	पातालानि समस्तानि	२.१०.४४
परस्परात्रिता ह्येते	१.७०.७९	पलानां द्वे सहस्रे तु	१.९२.१७१	पाति यस्मात्रजाः सर्वाः	१.७०.१०१
परस्परास्थिता ह्येते	१.५७.३६	पलाशोदुंबराश्वत्य.	२.२७.२६२	पादयोः स्थापयामास	१.१०२.६२
पराजितास्तदा देवा	१.९८.४	पवनात्मा बुधैर्देव	२.२३.९	पादयोरुभयोश्चैव	१.८५.७१
परात्परतरं ब्रह्म	१.९५.२२	पवनो यस्तु लोकेस्मिन्	१.५९.१०	पादांगुष्ठेन सोमांग.	१.८२.१०२
परात्पराय विश्वाय	१.९६.८१	पवनो हि यथा ग्राहो	१.८८.४६	पादांतं विष्णुलोकं वै	१.२३.३८
परानंदात्मकं लिंगं	१.७५.१८	पवमानः पावकश्च	१.६.१	पादादिमूर्धपर्यंतं	१.८५.५९
परापरेति कथिते	१.८६.५९	पवित्रं त्रिमधुमंत्रः	१.६५.१५६	पादेन निर्मितं दैत्य.	१.९७.१६
पराधें तु तमो नित्यं	१.५३.३५	पवित्रपाणिः पापारि०	१.९८.९६	पादेन पार्थिवस्याने.	१.५९.१६
पराशरमुवाचेदं	१.६४.११५	पवित्रश्च महाश्चैव	१.६५.६०	पादौ पायुरुपस्थश्च	१.७०.४२
पराशरश्च गर्गश्च	१.७.४२	पवित्री चैव गांधारी	२.२७.१४२	पादौ प्रक्षाल्य देवस्य	१.१०३.४७
पराशरश्च गर्गश्च	१.२४.४५	पशवः परिकीर्त्यते	२.९.१२	पादौ स्पृशंति ये चापि	१.८९.७३
पराशरसुतः श्रीमान्	१.२४.१२५	पशवश्च वयं तस्य	१.७३.१०	पाद्यमाचमनं चार्ध्यं	१.७९.१३
पराशरसुतो योगी	१.९२.५९	पशवो नैव जायते	१.७३.२०	पाद्यमाचमनीयं च	१.२६.२
पराशरस्यावतारो	१.२.२९	पशवो मानुषा वृक्षाः	१.१७.९	पाद्यमाचमनीयं च	२.२२.३८
परियहविनिर्मुक्ता.	२.२०.३८	पशुत्वादिति सत्यं च	१.७२.३९	पापं व्यपोहंतु मम	१.८२.४५
परियहविनिर्मुक्तो	१.८६.१२४	पशुपते पाशं मे गोपाय	२.४५.५८	पापं हि त्रिविधं ज्ञेयं	१.९०.२
परिणेतुमनास्त्र	२.५.६९	पशुपते पाशं मे गोपाय	२.४५.५९	पापकंचुकमुत्सृज्य	१.७७.५७
परिवर्तत्यहरहो	१.५२.६	पशूनां च पतिर्यस्मात्०	१.८०.५७	पापशुद्धितः सम्यग्	१.८५.२१२
परिषेचनपूर्णं च	२.२५.९७	पशूनां पतये चैव	१.४१.३१	पापाचारोऽपि यो मर्त्यः	१.२१.९०
परिसंमोहने कुर्यात्	२.२५.१०	पश्चादक्षं विनिद्यैषा	१.६.११	पापिनस्तेषु पच्यन्ते	१.५३.४५
परिस्तीर्य स्वशाखोक्तं	२.४५.११	पश्चिमे सद्यमन्त्रेण	१.८१.१५	पापिनां यत्र मुक्तिः स्याऽ	१.१०३.७५
परीक्षिताय शिष्याय	२.४५.२१	पश्यति युक्त्या	१.८८.४०	पापैरपि न लिप्येत	२.२६.२८
परीक्ष्य निषुणं बुद्ध्या	१.६१.६२	ह्यचलप्रकाशं	१.९६.६६	पापैर्विमुच्यते सद्यो	२.१८.५७
परीक्ष्य भूमिं विधिव.	२.२१.१	पश्यतां सर्वदेवानां	१.९.६३	पापैश्च मुच्यते जंतुः	१.७२.१८३
परीक्ष्य भूमिं विधिव.	२.४५.८	पश्यति ब्रह्मविष्णवीद्र.		पार्थिवद्रियात्मकत्वेन	२.१४.१९

पारावतध्वनिविकूजित०	१.९२.२१	पिपीलिकागतिस्पर्शा०	१.९१.४८	पुत्रानुत्पादयामास	२.७.२०
पार्थिवं च तथार्थं च	१.८६.३१	पिष्पलायतनश्चैव	१.७२.८१	पुत्रार्थं चैव नारीणां	१.१०४.६
पार्थिवांशं विना नित्यं	१.९.३१	पिबंति द्विकलं काल	१.५६.१५	पुत्रार्थं भगवांस्तत्र	१.१०८.४
पार्वतो हि तथा प्राह	२.५.६०	पिशाचांतः स विजेयः	१.८८.७१	पुत्रार्थों पुत्रमाप्नोति	२.५४.१५
पाश्वर्तो देवदेवस्य	१.२७.१९	पी		पुत्रीकृता सती या सा	१.५.२७
पालयामास पृथिवीं	२.५.४८	पीठाकृतिरुमा देवी	२.११.३१	पुत्रेण लंघितामाजां	१.९५.१२
पालयामास हृष्टात्मा	२.५.४७	पीतं नृत्तामृतं शंभो०	१.१०६.२६	पुत्रेषु दारेषु गृहेषु नृणां	१.७८.२६
पालयिष्यामि पृथिवीं	२.५.४९	पीतं रक्तं सितं विद्युत्	१.८६.१२२	पुत्रो मे त्वं भव ब्रह्मन्	१.२०.५७
पालाशसमिधैर्देवि	१.८५.२०८	पीतगंधानुलिपांगः	१.१३.३	पुत्रोसि जगतां यस्मात्	१.४२.२७
पाली भुजंगनामा च	२.२७.१०८	पीतांभोष्णीषशिरसः	१.१३.१७	पुत्रौ विदर्भराजस्य	१.६८.३९
पावितश्चाश्रमश्चायां	१.१०७.३०	पीत्वा च कृत्रिमं क्षीरं	१.१०७.१०	पुनः कुशेन गृहीत्वा	२.२५.८८
पाषंडाचारनिरताः	२.६.५७	पीत्वा योगामृतं योगी	२.५५.२६	पुनः पशुपतेः पल्नी	२.४५.६५
पाषंडे ख्यापिते तेन	१.७१.९४	पीत्वार्धमासं गच्छति	१.५६.१३	पुनः पुनः प्रवक्ष्यामि	२.१६.२
पाहि नान्या गतिः शंभो	१.७१.११३	पीत्वा स्थितं यथाकामं	१.१०७.५	पुनः प्राग्वासनायोगा.	२.२२.८५
पि		पु		पुनः शरवणं प्राप्य	१.६५.२१
पिंडं च पूर्ववद्यात्	२.४५.८२	पुंडरीकाजिनं दोधर्या०	१.७६.३२	पुनः सनकुमाराय	२.४५.९२
पिंडजातिस्वरूपी तु	२.१६.९	पुंडरीकात्परश्चापि	१.५३.१६	पुनः ससर्ज भगवान्	१.४१.१
पिंडिका मुंडिनी मुद्रा	२.२७.१५४	पुंलिंगं पुरुषो विप्रा	१.३३.४	पुनः स्नात्वा परित्यज्य	१.२५.१७
पितरं सोब्रवीत्यक्तः	१.६६.५	पुंलिंगशब्दवाच्या ये	२.११.१९	पुनरर्थ्यप्रदानेन	२.२२.४९
पितरः पितामहाश्चैव	१.८२.६७	पुंविशेषपरो देवो	२.९.४४	पुनरष्टाभिरीशानं	१.७७.७२
पितरो मुनयः सर्वे	२.४६.१९	पुंसां पशुपतिर्देव	१.८६.१३१	पुनराज्यसंस्कारः	२.२५.८२
पितरोऽमृतपाः प्रोक्ता.	१.६.९	पुच्छेनैव समावद्य	१.९६.१९	पुनराश्रममागत्य	१.९०.९
पितरो ह्यपपक्षाभ्यां	१.७०.२०८	पुच्छद्वयसमायुक्तं	२.२५.२९	पुनराह महादेवः	१.१३.८
पिता तव महादेवः	१.१०७.५७	पुण्यमाचमानं कुर्याद्	१.२६.२४	पुनरेव महाबुद्धेः	२.१६.१
पितामहस्तथा चैषां	१.१०१.१०	पुण्यवृक्षक्षयातद्व०	१.८६.३९	पुनर्दर्भान् गृहीत्वा	२.२५.८५
पितामहस्याथ परः	१.४.५७	पुण्यस्थानस्थितां पुण्या	१.९२.१२७	पुनर्भवान्याः पादौ च	१.६४.९०
पितामहाश्च भो नदिन्	१.४२.३१	पुण्यानामितिहासानां	१.२६.२८	पुनर्वागीश्वरावाहनम्	२.२५.७०
पितामहाया व्यूहं च	२.२७.२२५	पुण्यानुरूपं सर्वेषां	२.१०.३२	पुनस्तस्मादिहागत्य	२.२२.८४
पितामहेनोपदिष्टो	१.८९.३२	पुण्यैर्द्रव्यैर्महादेवं	१.२७.३४	पुत्रागेषु द्विजशतविरुतं	१.९२.३१
पिता माता च पुत्राश्च	१.६४.३९	पुत्रं दास्यामि विप्रेषं	१.३७.६	पुमिति नरकस्याख्या	१.८९.११३
पिता विगतसंज्ञश्च	१.४३.१५	पुत्रं पुत्रवतां श्रेष्ठ	१.७१.१२२	पुरं प्रवेशयामास	१.१०३.३८
पितुरंके समासीनं	१.६२.१३	पुत्रत्रयमभूतस्य	१.६५.२६	पुरं रुद्रपुरी नाम	१.५१.२९
पितृंश्चैवासृजतन्वा	१.७०.२२३	पुत्र पाहि महाबाहो	१.४२.३३	पुरत्रयं विरुपाक्ष	१.७२.१११
पितृंस्तु तपयेद्विद्वान्	१.२६.१४	पुत्रपौत्रादिमित्रैश्च	२.२२.८२	पुरत्रयस्यास्य समीपवर्ती	१.७२.९८
पितृणां मानवानां च	१.७०.२२०	पुत्रप्रेम्णाभ्यषिच्च	१.४३.३८	पुरत्रये तदा जाते	१.७१.२४
पितृनुदिश्य यद्दत्तं	१.२६.१९	पुत्रमेकं तयोत्पाद्य	२.७.१७	पुरश्चरणजापी वा	१.८५.१००
पित्रा ते शैलराजेन	१.९२.८५	पुत्रसंक्रामितश्रीस्तु	१.६७.१४	पुरस्तादसृजद्वेवः	१.५.९
पित्रा त्यक्तोऽवसद्वीरः	१.६६.७	पुत्रस्तवासौ दुर्बुद्धि०	२.८.१९	पुरस्ताद् बृहते चैव	१.२१.५०
पित्र्यं पितृणां संभूतिं०	१.२.१०	पुत्रस्तु रुक्मकवचो	१.६८.३०	पुरांतगो यदा भानुः	१.५४.६
पिधायकर्णीं संयाति	२.६.११	पुत्रस्तेऽयमिति प्रोच्य	१.४३.३७	पुरांधक इति ख्यात०	१.९३.४

पुरांधकाग्निदक्षाणां	१.२.५०	पुरेषु राक्षासानां च	१.६४.५२	पूजासंप्रोक्षणं विद्धि	२.२१.६७
पुरा कश्चिदद्विजः शक्तो	२.८.८	पुरोपमन्युना सूत	१.१०७.१	पूजा होमादिकं सर्वं	२.२२.७८
पुराकृतं विश्वसृजा स्तवं च	१.८१.५८	पुलस्त्यः पुलहोगस्त्यो	१.९८.१०१	पूजितं यत्पुरा वत्स	१.४३.२२
पुरा कैलासशिखरे	१.८०.२	पुलस्त्यः शशभून्मौलि:	२.११.१६	पूजितं वा महादेवं	१.७९.२६
पुरा जंबुकरूपेण	१.९२.१५	पुलस्त्येन यदुक्तं ते	१.६४.१२०	पूजितश्च ततो देवो	२.२७.८
पुरा जलंधरं हन्तु	१.९८.१५	पुलस्त्योत्रिवैसिष्ठश्च	१.७०२८९.	पूजितो वै महादेवः	१.५१.१८
पुराणन्यायमीमांसा	१.७२.१४	पुष्करं च पवित्रं च	२.१७.१८	पूज्यो भवति रुद्रस्य	१.९८.१९३
पुराणसंहितां दिव्यां	१.१.१३	पुष्करां चांतरिक्षं वै	१.७२.६	पूज्यो लिंगे न संदेहः	१.१०.५२
पुराणसंहितां पुण्यां	१.१.११	पुष्कराधिपतिं चक्रे	१.४६.२२	पूर्येदगंधतोयेन	२.२२.२५
पुराणानां तु सहस्राणि	१.५०.१४	पुष्करावर्तकाद्यास्तु	१.७५.११	पूरितं पूरकेणैव	१.४१.२१
पुराणैः सामसंगीतैः	१.१०२.४२	पुष्ट्यात्योषधिजातानि	२.१२.२३	पूर्णं युगसहस्रं वै	१.७०.११२
पुरा तदर्थमनिशं	२.५.११८	पुष्ट्यांजलि दृत्वा पुनः	२.२४.२६	पूर्णभद्रेश्वरो माली	१.८२.५३
पुरा त्रेतायुगे कश्चित्	२.१.९	पुष्ट्याण्यौषधिजातानि	२.१०.३४	पूर्णमासं तु मारीचं	१.५.४०
पुरा त्वष्टा प्रजानाथो	२.५१.७	पुष्ट्येषु गंधवत्सूक्ष्मः	१.३५.२१	पूर्णं शतसहस्राणा.	१.५४.१२
पुरा देवेन रुद्रेण	१.८५.४	पुष्टैरन्यैः शुभशुभतमैः	१.९२.३३	पूर्णहुतिविधानेन	२.२३.२९
पुरा पितामहेनैव	२.५१.६	पुष्टोऽुपवहाभिश्च	१.५१.६	पूर्णेदुवदनं सौम्यं	२.२६.१८
पुरा पितामहेनोक्तं	२.७.३	पुष्टोत्कटा ह्यजनयत्	१.६३.६३	पूर्णेदुवर्णेन च पुष्पगंधः	२.१९.४०
पुरा पुस्त्रयं दग्धुं	१.८०.४८	पुष्टोत्करानिलविधूर्णितः	१.९२.२८	पूर्वं निकामचारास्ता	१.३९.३४
पुरा पृष्ठो महातेजा	२.१.२	पुष्ट्यमासे तु वै शूलं	१.८४.२६	पूर्वकल्पसमुद्धू ता०	१.८५.२७
पुरा भूग्रसुतेनोक्तो	२.५०.३	पुष्ट्योगे त्वनुप्राप्ते	१.७२.१०९	पूर्वतः पद्मरागाभो	१.४८.६
पुरा ममाज्ञा मद्वक्त्रात्	१.८७.९			पूर्वतो होमयेदग्नौ	२.४३.७
पुरा महेन्द्रदायादा०	१.३७.१४			पूर्वदेवामराणां च	१.७६.४१
पुरा मात्रा तु कथितं	१.१०७.४४			पूर्वद्वारसमीपस्थं	१.९२.१५०
पुरा मानेन चोष्टृत्व०	२.२८.१२			पूर्वमाराधितः प्राह	१.४२.१०
पुरा वः कथितं सर्वं	१.४५.७			पूर्वमाराधितो विप्र	१.४२.११
पुरा शापाद्विनिर्मुक्तो	२.९.४			पूर्वमेवापि निखिलं	२.५५.२
पुरुणा च कृतं वाक्यं	१.६७.५			पूर्ववत्कारयेद्यस्तु	१.७७.२५
पुरुषं परमात्मानं	१.१७.२४			पूर्ववत्पुरुषं दृष्ट्वा	२.५.११६
पुरुषं शंकरं प्राहु०	२.११.४			पूर्ववत्प्रणवेनैव	२.२७.४५
पुरुषस्त्वं जगत्राथो	१.३६.५			पूर्ववत्स्थापयामास	१.४.६१
पुरुषाख्यो मनुः शंभुः	२.११.१३			पूर्ववदक्षिणे भागे	२.३७.१३
पुरुषादि विरिच्यंत०	२.२०.५१			पूर्वह्या शिवशक्तिसमवायेन	२.२४.२३
पुरुषाधिष्ठितत्वाच्च	१.७०.५२			पूर्वाग्रिमुत्तराग्रं च	२.२५.२
पुरुषार्थप्रदानाय	१.९५.५१			पूर्वे किरातास्तस्यांते	१.५२.२९
पुरुषेण मुनिश्रेष्ठा	१.८१.१६			पूर्वेण मंदरस्येते	१.४९.४४
पुरुषो वै महादेवो	१.२८.२२			पूर्वोक्तदेशकाले तु	२.३२.२
पुरुषोसि पुरे शेषे	१.८८.८८			पूर्वोक्तदेशकाले तु	२.४३.३
पुरेशयो गुहावासी	१.२१.७८			पूर्वोक्तभूषणं सर्वं	२.२८.८२
पुरे शेषे पुरं देहं	१.२८.५			पूर्वोक्तमखिलं कृत्वा	१.८४.१०

पूर्वोक्तमखिलं पुण्यं	१.७७.७४	पौर्णमास्याममावास्यां	१.८४.२	प्रणयत्कुङ्डमध्ये च	२.४४.२
पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तं	२.२७.२३२	पौष्णं च देव्यः सततं	१.८४.१५	प्रणवं हृदयं विद्या.	१.८५.७५
पूर्वोक्तहेममानेन	२.३१.६	पौष्णं च देव्यः सततं	१.८२.८१	प्रणवप्रणवेशाय	१.२१.५६
पूर्वोक्तेनांबुना सार्थं	२.२२.३६	प्र		प्रणवादिनमोत्तानि	१.७७.८९
पूर्वोक्तैरपि पुष्टैश्च	२.५४.५	प्रकाशते प्रतिष्ठार्थं	१.४०.२१	प्रणवेन क्षिपेतेषु	१.२७.१२
पूर्वोत्पन्नो परं तेष्यः	१.७०.१९२	प्रकाशाद्वहिरंतश्च	१.७०.१५०	प्रणवेनाथ साम्ना तु	१.२०.९६
पूर्वोत्पन्नो परं तेष्यः	१.७०.१७१	प्रकाशो दीप्तिरित्युक्तः	१.८.६०	प्रणवेनैव गव्यैस्तु	१.२७.३३
पूर्वोत्सृष्टं स्वदेहं तं	२.३.४५	प्रकीणकिशाः सर्पस्ते	१.२२.२०	प्रणवेनैव मंत्रेण	१.२७.५२
पूषदन्तविनाशाय	१.२१.५८	प्रकुदः ककुदंतश्च	१.७२.७८	प्रणवो वाचकस्तस्य	२.९.५०
पूषा दंतान्दशन्दतैः	१.१०२.३८	प्रकृतिं भूतदार्तीं तां	१.७०.२६८	प्रणश्यन्ति ततः सर्वे	१.३९.२५
पृ		प्रकृतिः पुरुषः साक्षात्	१.७१.१०२	प्रणामपूर्वं क्षान्त्या वै	२.४.१०
पृथक् पशुत्वं देवानां	१.७२.३५	प्रकृतिर्विहिता ब्रह्मं	१.१६.३२	प्रणिपत्य यथान्यायं	२.३.१२
पृथक्पृथडमूलेनार्थ्यं	२.२४.१८	प्रकृतिस्तस्य पल्नी च	१.७५.९	प्रणिपत्य यथान्यायं	२.३.३२
पथगादाय हस्ताभ्यां	२.२५.२४	प्रकृतिस्त्वं पुमान् रुद्रं	१.९६.४०	प्रणिपत्याग्रतस्तस्थौ	२.३९.८
पृथिवीं पादमूलात्	१.७६.१२	प्रक्षाल्याचम्य पादौ च	१.२५.१४	प्रणीतापात्रमादाय	२.२५.१७
पृथिवीं भाजनं कृत्वा	१.८३.५	प्रक्षिपेद्विधिना वहि.	२.२५.९	प्रणेमुदेवमीशानं	२.५५.३८
पृथिवीं चांतरिक्षं च	१.४५.८	प्रक्षीयन्ते परस्यांतः	१.५६.११	प्रणेमुस्तुष्टुवुश्चैव	१.८०.५३
पृथिव्यां पृथुमीशानं	१.५८.१५	प्रगृहीतायुधैर्विप्रैः	१.४०.५३	प्रतिकार्यं तथा बाह्यं	२.५२.६
पृथिव्यां यानि पुण्यानि	१.९२.१३३	प्रजया कर्मणा मुक्ति.	१.८६.२०	प्रतिद्विपे मुनिश्रेष्ठाः	१.५१.३१
पृथिव्यां सर्वरत्नाना-	१.६९.१४	प्रजां धर्मं च कामं च	१.७०.१७३	प्रतिपत्रं जनानंदं	२.२०.२२
पृथिव्याः प्रविभागाय	१.७०.१३२	प्रजां धर्मं च कामं च	१.७०.१९४	प्रतिमां च हरेन्तिं	२.४.१२
पृथिव्यामेव तु विद्या.	१.७०.५९	प्रजाः सृजेति व्यादिष्टो	१.७०.३०३	प्रतिमां च हरेश्चैव	२.३.३६
पृष्टश्वो नभोयोनिः	१.९८.१०६	प्रजाः संष्टुमनाश्चके	१.२२.१७	प्रतिष्ठां लिंगमूर्तेवं	२.४७.५
पृष्टितो हिंसयित्वा गां	१.६६.५२	प्रजाकामः शिलादोभूत्	१.३७.२	प्रतिष्ठा च निवृतिश्च	२.२१.६५
पृष्टः कैलासशिखरे	२.५५.६	प्रजापतिर्यदा व्यासः	१.२४.१७	प्रतिष्ठा चैव पूजा च	२.४८.३८
पृष्टो नंदीश्वरो देवः	२.२०.१३	प्रजापतिसुतावुक्तौ	१.६०.५	प्रतिष्ठाधर्मराजस्य	१.६५.३०
पृष्टः पाश्वर्तश्चैव	१.१७.४८	प्रजापतीनां दक्षं च	१.५८.४	प्रतिष्ठाप्य ततः स्नाप्य	१.८४.५८
पै		प्रजापतीनां पतये	१.२१.२०	प्रतिष्ठाप्य यथान्यायं	१.३१.१७
पैतामहेन कुभेन	२.४७.४३	प्रजापतीनां सर्गश्च	१.२.८	प्रतिष्ठाप्य यथान्यायं	१.८४.८
पैशाचे राक्षसे दुःखं	१.८६.२६	प्रजापतेर्मखे पुण्ये	१.३६.७४	प्रतिष्ठाप्य यथान्यायं	१.८४.३७
पौ		प्रजापतेर्श्च रुद्रस्य	१.४६.४९	प्रतिष्ठितासु सर्वासु	१.६३.४३
पौङ्गास्तु वृष्ट्यः सर्वा	१.५४.५७	प्रजास्ता वै ततः सर्वाः	१.४०.६५	प्रतिसर्गं प्रसूतानां	२.९.४६
पौरजानपदैस्त्यक्तो	१.६६.७४	प्रजासृप्ता सदा सर्वाः	१.३९.१५	प्रतीतहृदयः शर्व०	१.१२.६
पौरुषेयो वधश्चैव	१.५५.५१	प्रजीवत्येति वै स्वर्गं	१.६८.५१	प्रतोदो ब्रह्मणस्तस्य	१.७२.२०
पौर्णमास्यां घृताद्यैस्तु	१.८३.३६	प्रणाम्य नंदिनं मूर्धा	१.७१.१४४	प्रत्यंडं द्विजशार्दूला	१.५३.४९
पौर्णमास्यां च पूर्वोक्तं	१.८३.५०	प्रणाम्य प्रयतो भूत्वा	१.२३.४९	प्रत्यंतानुपसेवते	१.४०.६९
पौर्णमास्यां च विधिवत्	१.८३.४७	प्रणाम्य भगवान् विष्णुः	१.१७.८२	प्रत्यग् भवति तच्छक्तिः	१.८५.२०९
पौर्णमास्यां तु संपूज्य	१.८३.३३	प्रणाम्य विष्णुं तत्रस्यं	२.३६.८	प्रत्यङ्गुमुखस्य देवस्य	२.२५.१००
पौर्णमास्यां भवं स्नाप्य	१.८३.३०	प्रणाम्य संस्थितोऽपश्यद्	१.२२.२७	प्रत्यार्थं हि जगता०	१.७५.२५
पौर्णमास्यां महादेवं	१.८३.२५	प्रणाम्याहुस्तु तत्सर्वे	१.१०७.२१	प्रत्याहारः पंचमो वै	१.८.९

प्रत्याहारतानां च	१.७२.१४८	प्रधानावयवं व्याप्य	१.१.२३	प्रविश्य तत्पुरं तेन	१.७१.८२
प्रत्युवाचांबुजाभासं	१.२०.४३	प्रनष्टचेष्टनाः पुंसो	१.४०.३३	प्रविश्य लोकान् पश्यता०	१.२०.२७
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च	१.६३.२०	प्रनष्टा मधुना सार्धं	१.३९.३१	प्रविश्य सुमहातेर्जा०	१.२०.२१
प्रत्येकं पंचकान्याहु०	१.५३.४६	प्रपञ्चजातमखिलं	२.१५.२०	प्रविष्टाः पावकं विप्राः	१.६९.९०
प्रत्येकमश्वमेधेन	२.१.७	प्रफुल्लनानाविधगुल्म०	१.९२.१२	प्रवृत्तचक्रो बलवान्	१.४०.५६
प्रथमं तस्य वै जज्ञे	१.५.५	प्रफुल्लांबुजवृन्दाद्य०	१.८०.३३	प्रवृत्तनृत्तानुगताप्सरोगणं	१.९२.१७
प्रथमः संप्रयोगात्मा	१.७०.२७३	प्रबुद्धस्तु द्विजो यस्तु	२.२०.३७	प्रवृत्तिलक्षणं ज्ञानं	१.२.२६
प्रथमः सांप्रतस्तेषां	१.७०.११०	प्रबुद्धोहीयशयनात्	१.१७.१६	प्रवृत्तिलक्षणंज्ञानं	१.२९.७
प्रथमाख्यं प्रवक्ष्यामि	२.२७.१६४	प्रभवे चापरार्धस्य	१.२१.१४	प्रसंगाच्चैव संपूज्य	१.७९.४
प्रथमायाः समाख्यातो	२.२७.१७२	प्रभावर्तीं ततः शक्तिं	२.२२.७२	प्रसंगाद्वेदवदेवेशो	२.६.८२
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.३१	प्रभावात्मा जगत्कालः	१.६५.१३४	प्रसंगाद्वापि यो मर्त्यः	१.७८.२३
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.७१	प्रभावाद्वेदेवस्य	१.३६.४५	प्रसंगाद्वारमेकं तु	१.७७.५९
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.१३७	प्रभावो नन्दिनश्चैव	२.२७.१	प्रसन्नं च यदेकाग्रं	१.८६.१००
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.१५७	प्रभासो विलयश्चैव	१.६९.९३	प्रसन्नं वामदेवाख्यं	२.१९.११
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.१६१	प्रभासः पर्वतो वायुः	१.६५.१२७	प्रसन्ना विपुलान् भोगान्	१.८५.१२४
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.१८४	प्रभासतीर्थमासाद्य	१.२४.१२२	प्रसन्ने विमला मुक्ति.	१.९.५६
प्रथमावरणं प्रोक्तं	२.२७.२१७	प्रभासे पुष्करेऽवंत्यां	१.७७.४०	प्रसर्गकाले स्थित्वा तु	१.७०.६०
प्रथमावरणं चाष्टै	२.२७.९५	प्रभुं तत्पुरुषं देवं	२.१४.२७	प्रसह्य सोममपिबत्	२.५१.११
प्रथमावरणे चैव	२.२७.५१	प्रभुलोकहितार्थाय	१.७०.१२९	प्रसह्यास्मांस्तु गायेत	२.१.३३
प्रथमावरणे चैव	२.२७.९१	प्रभूतं विमलं सारा०	२.२२.४१	प्रशस्ता तव कांतेयं	१.५.३२
प्रथमावरणे ग्रोक्ता	२.२७.११९	प्रभूते विमले सारे	२.१९.१८	प्रशांतः स वनस्थोऽपि	१.६८.३५
प्रथमावरणे ग्रोक्ता	२.२७.१३३	प्रमदाः केशशूलिन्यो	१.४०.२६	प्रसाद इति संप्रोक्तः	१.८.६१
प्रथमाश्रमिणे भक्त्या	१.८४.४३	प्रमाणभूतो दुर्जेयः	१.९८.५६	प्रसादस्य स्वरूपं यत्	१.८.४
प्रदक्षिणं ततः कुर्याद्	१.२५.२८	प्रमोदाय समोदाय	१.२१.५५	प्रसादाच्चैव देवस्य	१.६९.५४
प्रदक्षिणक्रमपादेन	२.२४.३९	प्रम्लोचा चैव विख्यातां	१.५५.५४	प्रसादाज्जायते ज्ञानं	१.७.४
प्रदक्षिणात्रयं कुर्याद्	१.७७.६५	प्रयत्नाद्वा तयोस्तुल्यं	१.८.११५	प्रसादात्तस्य देवस्य	२.४५.९३
प्रदक्षिणीकृत्य च तं	१.४३.१७	प्रयागे वा भवेन्मोक्ष०	१.९२.४८	प्रसादाद्वेदवदेवस्य	१.८७.१८
प्रदक्षिणीकृत्य च तां	१.१०२.४	प्रयाणं कुरुते तस्माद्	१.८.६३	प्रसादाद्वृहसूनोर्वे	१.६५.४६
प्रददौ चेपितं सर्वं	१.२९.६२	प्रलयस्थितिसगणां	१.१९.११	प्रसादाद्वगवज्ञंभो०	१.५८.१६
प्रददौ दर्शनं तस्मै	१.६३.३	प्रलये समनुप्राप्ते	१.८५.७	प्रसादाद्यादि विज्ञानं	१.७.५
प्रददौ दर्शनं देवो	१.१४.९	प्रलुप्तश्मश्रुकेशश्च	१.६९.७५	प्रसादाद्वैष्णवं चक्रे	१.६४.१२१
प्रदीपितमहाशालं	१.१००.३४	प्रवक्ष्यामि धरेशान् वो	१.४६.१५	प्रसादात्रांदिनस्तस्य	२.२८.१३
प्रद्युम्नो ह्यनिरुद्धश्च	२.४८.३०	प्रवर्तकं जगत्यस्मिन्	१.७१.११०	प्रसादामृतपूर्णेन	१.९.६५
प्रधानं कुंडमीशान्यां	२.४७.२४	प्रवालं कारयेद्विद्वान्	२.३३.३	प्रसादेन क्षणान्मुक्तिः	१.८७.१६
प्रधानं पूर्ववद्द्रव्यै	२.२७.२५५	प्रविलीनो महान्सम्यक्	२.५५.२०	प्रसादेनैव सा भक्तिं	१.३०.३३
प्रधानं प्रकृतिश्चेति	१.३.२	प्रविवेश तदा चैव	१.१००.३३	प्रसीद क्षम्यतां सर्वं	१.१००.४१
प्रधानगुणवैषम्यात्	१.७०.८४	प्रविवेश समीपं वै	२.१.७३	प्रसीदति न संदेहो	१.१०.३०
प्रधानव्यक्तयोः कालः	२.१६.५	प्रविशांति महादेवं	१.१३.२१	प्रसीदति न संदेहो	१.१.३२
प्रधानसहितं देवं	२.२१.२५	प्रविशामि तथा तत्र	२.६.१६	प्रसीद त्वं जगत्राथ	१.३६.११

प्रसीद देवदेवेश	१.६२.३३	प्राणः प्राणेशजीवेशौ	१.८२.४८	प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.११७
प्रसीद देवदेवेश	१.७२.१२२	प्राणः स्वदेहजो वायु.	१.८.४५	प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.१२०
प्रसीद देवदेवेश	१.१०७.६३	प्राणरूपी तथा हंसः	२.२७.९९	प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.१२४
प्रसीद देहि मे सर्वं	१.३७.२४	प्राणांस्तस्य ददौ भूय.	१.२२.२६	प्राप्य योगगति सूक्ष्मां	१.२४.२६
प्रसीद परमेशाने	१.३६.७१	प्राणः प्राणवतां ज्ञेयाः	१.२२.२५	प्राप्यानुज्ञां ततश्चैव	१.८९.६
प्रसीद लोकनाथेश	२.५.३३	प्राणाद्ब्रह्मासृजदक्षं	१.७०.१८६	प्रायशश्चंद्रयोगीनि	१.६१.३६
प्रसूति: सुषुवे दक्षा.	१.५.२०	प्राणादैश्चैव संयुक्ता	१.८६.६५	प्रायशिचतं प्रवक्ष्यामि	१.८५.२११
प्रस्कंदोप्यविभावश्च	१.६५.८७	प्राणाधिपतये रुद्राय	१.४५.७४	प्रायशिचत्तमघोरेण	२.२५.१०४
प्रस्थानादिकमायासं	१.२९.८०	प्राणानां ग्रंथिरस्यात्मा	१.८८.८५	प्रायशिचत्तमघोरेण	२.२७.२५७
प्रहसंती यथायोगं	२.३.९७	प्राणापाननिरोधस्तु	१.८.४६	प्रार्थनायोनिजस्याथ	१.२.१३
प्रहिणोति स्म तस्यैव	२.१८.३३	प्राणायामत्रयं कृत्वा	२.२३.३	प्रार्थितश्च महादेवो	१.५३.१२
प्रहष्टोऽभूतो रुद्रः	१.४१.५०	प्राणायामपरः श्रीमान्	१.१४.७	प्रावर्तत नदी पुण्या	१.४३.४७
प्रहादजीविते वाञ्छा	१.९५.९	प्राणायामसमायुक्तं	१.९०.८	प्रासादश्रृंगेष्वयं पौरनार्यः	१.८०.१८
प्रहाद वीर दुष्पुत्र	१.९५.७	प्राणायामाद्वेक्षिप्रं	१.८५.१०५	प्रासादस्य प्रतिष्ठायां	१.४८.४४
प्रहादः पूजयामास	१.९५.१०	प्राणायामेन शुद्धात्मा	१.९०.२०	प्रासादैर्गोपुरैर्दिव्यैः	१.७१.२७
प्रा					
प्राकामान् विषयान् भुक्ते	१.८८.२०	प्राणायामैः समायुक्तैः	१.७३.१२	प्राह गंभीरया वाचा	१.७१.११७
प्राकारागारविध्वंसा	२.६.४५	प्राणा वै जगतामापो	१.५४.३५	प्राह देववृषं ब्रह्मा	१.१६.२३
प्राकारैर्विविधाकारैः	१.८०.२६	प्राणे निविष्टो वै रुद्रो	१.८८.८६	प्राहिणोति स्म तस्यैव	१.९९.९
प्राकृतः कथितस्त्वेष	१.३.३९	प्राणेभ्यो निशि जन्मानो	१.७०.२१९	प्राहुः क्षेत्रज्ञशब्देन	२.१५.१४
प्राक्षिरस्कं न्यसेत्लिंग.	२.४७.२७	प्राणेषो बंधकीवृक्षो	१.६५.१३२	प्राहुस्तत्पुरुषं देवं	२.१४.२२
प्राक्सर्गे दह्यमाने तु	१.७०.१३३	प्राणेष्वंतर्मनसो लिंगमाहुः	१.१८.४०	प्रि-प्रो	
प्रागाद्यं दक्षिणाद्यं च	२.२७.१७	प्रातर्मध्याहसावाहे	२.२२.२३	प्रियं भवद्भ्याम् कृतवान्	२.५.१२८
प्रागाद्यं देवकुण्डे वा	२.२७.२४०	प्रादात्स दशकं धर्मे	१.६३.१२	प्रियं हि कृतवानद्य	२.५.१२२
प्रागाद्यं वर्णसूत्रं च	२.२७.१४	प्रादुरासंस्तदा तासां	१.३९.२२	प्रियदर्शनास्तु यतयो	१.२०.८४
प्रागाद्यं विधिना स्थाप्य	२.२७.६४	प्रादुरासीत्तदा व्यक्ता.	१.७०.१५३	प्रियदुःखमहं प्राप्ता	१.६४.३६
प्रागाद्यं स्थापयेच्छंभोः	२.४८.४६	प्रादुरासीत्सुरेशारि.	२.५१.१३	प्रियव्रतात्मजा वीरा.	१.४६.१७
प्रागायता: सुपर्वाणाः	१.४९.१७	प्रादुर्बर्भूव स महान्	१.३.१५	प्रीता बभूवुर्मुक्ताश्च	१.८७.१३
प्रागायतेन विप्रेंद	२.२५.७	प्रादुर्भूतानि चैतानि	१.३९.४१	प्रीतिं पुलस्त्यः पुण्यात्मा	१.५.२५
प्रागुक्ता तु महादेवी	१.७०.३२७	प्रादुर्भूता महानादा	१.१६.३	प्रीतितापविषादेभ्यो	१.१०.२७
प्रागुदकप्रवणे देशे	१.९१.४०	प्रादेशं वा चतुर्मत्रिं	२.२८.४४	प्रीतिश्च विपुला यस्मां	२.५५.४५
प्राङ्मुखो दक्षिणास्यात्	१.५२.२	प्राप्तिस्तथोतरं पत्रं	१.२७.२६	प्रीतो भवति यो दृष्ट्वा	२.४.७
प्राङ्मुखोदङ्मुखो वापि	१.८५.६६	प्राप्तिव्यूहः समाख्यातः	२.२७.११३	प्रीतोऽहमनया भक्त्या	१.२२.८
प्राङ्मुखो नियतो भूत्वा	१.६२.२२	प्राप्तो वनमिदं ब्रह्मन्	१.६२.१६	प्रीत्या प्रणन्य पुण्यात्मा	१.४२.२६
प्राचीं वा यदि वोदीचीं	१.९१.३७	प्राप्तुयात्परमं स्वर्गं	१.७१.८७	प्रोक्षणी द्वयंगुलोत्सेधा	२.२५.४४
प्राच्यालोक्याभिवद्येशां	१.२६.५	प्राप्नोति परमं स्थानं	२.७.३२	प्रोक्षणीपात्रमादाय	२.२५.१५
प्राजापत्यं पवित्रं च	२.१८.९	प्राप्नोति विष्णुसायुज्यं	२.२.८	प्रोवाच को भवाङ्छेते	१.२०.१२
प्राजापत्याद् ब्रह्मलोकः	१.५३.४३	प्राप्यतेऽभिमतान्देशा.	१.८९.३०	प्रोवाचेदं दितेः पुत्रान्	१.९७.७
प्राजापत्यं तथा ब्राह्मे	१.८६.२७	प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.९०	प्ल	
प्राजापत्ये त्वंकारं	१.९.२५	प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.९४	प्लक्षद्वीपादिद्वीपेषु	१.५३.१
प्राजापत्येन कृच्छ्रेण	१.९०.२२	प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.९९	प्लक्षद्वीपादिवर्षेषु	१.४६.४६
		प्राप्य माहेश्वरं योगं	१.२४.११	प्लक्षद्वीपे तु वक्ष्यामि	१.५३.२

प्लक्षो दार्भायणिश्चैव	१.२४.१०२	बहुमानेन वै रुद्रं	२.८.१०	बुद्धि
प्लावयेच्च कुशाग्रं तु	२.२५.१६	बहुमालो महामालः	१.६५.१	लज्जां वपुः शांतिः
फ		बहुयाजनको लोके	१.४०.३	सूते नियोगेन
फडंतं संहृतिः प्रोक्ता	२.२१.६१	बहुलश्चंद्र इत्येष	१.६१.४	बुद्धिपूर्वं भगवता
फलपुष्पसमाकीर्ण	२.२८.४८	बहुला कदली यत्र	२.६.५	बुद्धिमोहं तथाभूतं
फलहारी जीवहारी	२.२७.१४३	बहुश्रुतो बहुमयो	१.९८.७०	बुद्धिर्लज्जा वपुः शांतिः
फलार्णवं च बालस्य	१.१०७.५२			बुद्धिर्विवेचना वेद्यं
फाल्युनीषु समुत्पन्नः	१.६१.४४	बा		बुद्धिस्त्वं सर्वलोकाना.
फुल्लातिमुक्तकलता	१.९२.२७	बाणस्य च तदा तेन	१.६९.७९	बुद्धेरेते द्विजाः संज्ञा
फुल्लोत्पलांबुजवितान०	१.९२.२२	बाधितास्ताडिता बद्धा	१.९३.६	बुद्ध्याश्च समकाले वै
		बाधितास्तेन ते सर्वे	१.१०६.५	बुद्ध्यैद्वैद्रं सह देवैश्च
ब		बालक्रीडनकैदेव	१.२०.७१	बुधेन तानि तुल्यानि
बंधनं परिपूर्णेन	२.२१.६४	बालभावे च भगवान्	१.९७.२२	बुधेनांतरमासाद्य
बंधनस्तु सुरेणाणां	१.६५.८६	बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये	२.१८.३४	बुधैरीशेति सा तस्य
बंधमोक्षकरो यस्मा०	१.३५.२५	बालानां प्रेक्षमाणानां	२.६.४२	बुध्यते पुरुषश्चात्र
बंधमोक्षी न चैवेह	१.८७.४	बालेंदुमुकुटं चैव	१.२७.२०	
बद्धपद्मासनासीनं	२.२३.८	बालेंदुशेखरो वायुः	२.११.१०	
बद्धा पद्मासनं तीर्थे	२.२२.३१	बालोपि मातरं प्राह	१.१०७.१७	
बधू तस्मिस्तद्राज्यं	१.४७.२५	बाल्यातु लोष्टेन शिवं	१.७७.५	
बधू पार्वती देवी	१.९९.१७	बाष्कलश्च महायोगी	१.२४.४२	
बधुः श्रेष्ठो मनुष्याणां	१.६९.७	बाष्कलेनैव मंत्रेण	२.२२.७३	
बहिर्घजा शूलघरा	१.७०.३३७	बाहुद्रुद्यं च पश्यामी.	२.५.१०५	
बलं तेजश्च योगं च	१.१०२.३९	बाहुस्वनिदितः सर्वः	१.६५.१२४	
बलप्रमथनायैव	१.१६.१३	बाह्यं चाभ्यन्तरं प्रोक्त०	१.५४.१६	
बलभद्रोपि संत्यज्य	१.६९.८८	बाह्यशौचेन युक्तः सं०	१.८.३२	
बलवांश्चोपशांतश्च	१.६५.१२९	बाह्ये चास्यांतरे चैव	१.७३.२१	
बलविकरिणी देवीं	१.४१.४६			
बलाद्विष्णुस्तदा यज्ञ०	१.३९.५२	बि		
बला प्रमथिनी देवी	२.२७.२७	बिभर्ति क्षेत्रां देवी	२.११.३४	
बलाबलसमूहाय	१.२१.२५	बिभर्ति मानं मनुते	१.७०.१५	
बलाबला च विप्रेद्रा	१.६३.७०	बिभीषणोतिशुद्धात्मा	१.६३.६६	
बलिना दैत्यमुख्येन	१.९४.६	बिभेमीति सकृद्भुक्तं	१.३६.४३	
बलिमिः पुष्पधूपैश्च	२.६.८०	बिप्रतो वामहस्तेन	१.७६.४३	
बहवः शतशोभ्येत्य	१.९२.१११	बिलं सुवर्तितं कुर्यां०	२.२५.३३	
बहिरेव गृहात्पादौ	१.२६.३४	बिल्वपत्रे स्थिता लक्ष्मी०	१.८१.२९	
बहुधा लिंगभेदाश्च	१.७४.१९	बिल्वाश्वत्यपलाशाद्याः	२.२८.२५	
बहुना किं प्रलापेन	१.३०.२९			
बहुना किं प्रलापेन	१.३४.२८	बीजं योनिश्च निर्बीजं	१.३.९	
बहुनात्र किमुक्तेन	१.२९.६५	बीजं शक्ति स्वरं वर्णं	१.८५.४१	
बहुनात्र किमुक्तेन	१.७४.१२	बीजपूरवने पुण्ये	१.४९.६३	
बहुनात्र किमुक्तेन	१.१०७.४०	बीजयोनिगुणा वस्तु०	१.८९.२६	

ब्रह्मणस्तूदरे दृष्ट्वा	१.२०.२२	ब्रह्मादयः सुराः सर्वे	२.११.३७	भ
ब्रह्मणा कथितं पूर्वं	१.८९.२	ब्रह्मादीस्तर्जयंतस्ते	२.१.७१	भक्तोसौ नास्ति यस्तस्मा.
ब्रह्मणा चापि संगृह्य	१.९२.७३	ब्रह्मादीनां च देवानां	१.३१.३५	१.२८.२७
ब्रह्मणा मुनिभिः सार्थं	१.१०३.५३	ब्रह्मा दृष्ट्वाऽब्रवीदेनं	१.७०.३१४	भक्त्या एव मुनीनां च
ब्रह्मणे ब्रह्मरूपाय	१.९५.५२	ब्रह्माद्यं स्थावरांतं च	१.९.६०	१.१०.३७
ब्रह्मणे जनकं विष्णोः	२.१८.४२	ब्रह्माद्याधोरणैर्दिव्यैः	१.८२.३४	भक्त्या च तृष्ण्याद्वद्
ब्रह्मणोऽधिपते तुष्यं	१.१६.८	ब्रह्माद्यास्तुष्टुवुः सर्वे	१.४२.१९	दर्शनाय
ब्रह्मणे वासुदेवाख्यां	२.३.११०	ब्रह्माधिदैवतं छन्दो	१.८५.५२	१.७२.१५३
ब्रह्मण्या ब्रह्मणस्तुल्या	१.१२.१०	ब्रह्मा परमसंविग्नो	१.१०२.४०	भक्त्या च योगेन
ब्रह्मत्वे सृजते लोकान्	१.७०.९१	ब्रह्मा ब्रह्मत्वमापन्नो	२.२७.२७३	शुभेन युक्ता
ब्रह्मपुत्राय शिष्याय	२.४९.१७	ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवा०	२.५५.३९	१.७५.३८
ब्रह्मपुत्रो महातेजा	१.३५.३	ब्रह्मा हरिश्च रुद्रश्च	१.४२.२१	भक्त्या परमया नित्यं
ब्रह्मब्रह्मणवृद्धाय	२.४४.४	ब्रह्मा हरोपि सावित्री	२.११.७	भक्षितः स इति श्रुत्वा
ब्रह्मयज्ञादाय स्नानं	१.२६.३३	ब्रह्मोद्रविष्णुरुद्राणां	१.५०.१६	१.६४.६८
ब्रह्मयज्ञेन तुष्यन्ति	१.२६.२९	ब्रह्मोद्रविष्णुरुद्राद्यैः	१.२७.५०	भक्ष्यं चान्यतथा पेयं
ब्रह्मर्षिं ब्रह्मसंकाशः	२.६.७१	ब्रह्मोद्रविष्णुरुद्राद्यैः	१.६४.८८	१.८५.१९५
ब्रह्मर्वचनात्तस्य	१.६३.७३	ब्रह्मोद्रविष्णुसोमाद्यैः	१.७६.२४	भक्ष्यभोज्यादिभिश्चैव
ब्रह्मलोके पुरासौ हि	१.३५.१०	ब्रह्मैकस्त्वं द्वित्रिधार्थ०	२.१८.५	१.७२.४८
ब्रह्मविष्णुमहेशानां	१.४८.१९	ब्रह्मोपेतश्च रक्षेन्द्रो	१.५५.३७	भगद्रावं करोत्यस्मात्
ब्रह्मविष्णुविवादश्च	१.२.१२	ब्रह्माणं कल्पसूत्राणि	१.३९.६०	१.१०१.१८
ब्रह्मविष्णवीद्रचंद्रादि	१.९६.१०८	ब्रह्माणं क्षत्रियं वैश्य	२.२०.४५	भगवञ्चाक सर्वज्ञ
ब्रह्मसिद्धिमवाप्नोति	१.८५.२२६	ब्राह्मणप्रमुखा वर्णाः	१.६७.१	१.३९.२
ब्रह्मस्थानमिदं चापि	१.१६.२५	ब्राह्मणादीश्च वर्णाश्च	२.५.४६	भगवन् केन मार्गेण
ब्रह्मस्वहा तथा गोध्नो	१.१५.२९	ब्राह्मणानां सहस्रं च	१.८४.४२	२.१९.२
ब्रह्महत्यादिकान् घोरां०	१.१५.३	ब्राह्मणानां सहस्रं च	२.५४.६	भगवन्देवतारिण
ब्रह्महत्यादिभिः पापै०	१.७७.५४	ब्राह्मणान् भोजयित्वा च	१.८३.३४	१.३७.५
ब्रह्महत्याविशुद्ध्यर्थं	१.८५.२१७	ब्राह्मणान् भोजयित्वा च	१.८३.३९	भगवन्देवदेवेश
ब्रह्महत्यासमं पाप०	१.७८.१८	ब्राह्मणान् भोजयित्वा च	१.८४.४	१.४२.९
ब्रह्मांगविग्रहं देवं	२.२३.१२	ब्राह्मणान् भोजयित्वा च	१.८४.४८	भगवन्देवदेवेश
ब्रह्मांडधारका रुद्राः	१.८२.१०९	ब्राह्मणान् भोजयित्वा च	१.८४.६४	१.४४.१०
ब्रह्मांडानि भविष्यति	२.१०.४७	ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु	१.८३.२६	१.७२.१७१
ब्रह्मा कर्मलगर्भाभो	१.७०.९२	ब्राह्मणान् भोजयेच्चैव	१.८३.२९	भगवन् भ्रातृणः कश्चिद्
ब्रह्मा च इन्द्रो विष्णुश्च	१.९६.१०९	ब्राह्मणान् भोजयेतत्र	१.७७.९०	१.६४.११
ब्रह्माणं दक्षिणे तस्य	१.७६.६१	ब्राह्मणान् नरा मूढा	२.६.३७	भगवन् भ्रातृणश्रेष्ठ
ब्रह्माणं दक्षिणे भागे	२.१९.१७	ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता	२.५२.५	१.३६.४९
ब्रह्माणं दक्षिणे वामे	२.२८.६४	ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः	१.१०५.२४	१.६४.७९
ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा	१.२१.१	ब्राह्मणैः पूज्यमाना वै	२.७.२२	१.७१.४३
ब्रह्माणी चैव माहेशी	१.८२.९६	ब्राह्मणैः सहितां स्थाप्य	१.८४.३८	१.२०.२५
ब्रह्माण्येव समासेन	२.४७.३७	ब्राह्मणो विष्णुभक्तश्च	२.३.३०	१.७०.९८
ब्रह्मादयः सुराः सर्वे	२.३.१६	ब्रूहि मंत्रमिमं दिव्यं	१.६२.२०	१.६५.९८

भद्रश्रेष्ठस्य दायादो	१.६८.७	भवानुदधर्व प्रयत्नेन	१.१७.३७	भस्मस्नानरतो विप्रो	२.१८.५८
भद्रहा विश्वहारी च	२.२७.९६	भवानेव जगत्सर्वं	१.९५.२८	भस्मस्नानविशुद्धात्मा	१.३४.१०
भद्राभद्रपदा देवी	१.८२.८९	भवान्कथमनुप्राप्तो	१.३७.१	भस्मस्नानेन दिग्धांगो	१.३४.१६
भद्रामानेयचक्रे तु	२.२७.५३	भवान्न नूनमात्मानं	१.२०.६७	भस्मस्नायी भवेत्रित्यं	१.८८.९२
भद्रायां जनयामास	१.६३.७४	भवान्याशचैव सायुज्यं	१.८४.४६	भस्मांगारांश्च केशांश्च	१.९१.१९
भ्रदाश्वस्य घृताच्यां वै	१.६३.६९	भवान् योनिरहं बीजं	१.२०.७४	भस्मा कांता तथा वृष्टि.	२.२७.२२७
भद्रो नाम गणस्तेन	१.१००.३	भवान् विष्णुर्भवान् रुद्रो	१.९५.२७	भस्माधारान्महातेजा	१.१०७.४६
भयं दधीच सर्वत्र	१.३६.४२	भवान् विप्रस्य रुपेण	१.३६.३६	भस्मीभूतविनिर्माणं	१.९.३८
भयात्समान्महाभाग	१.१०१.१९	भवान् सर्वस्य लोकस्य	१.२२.१२	भा	
भयादेवं निरीक्ष्यैव	१.७२.११८	भवान् सर्वार्थितत्त्वज्ञो	२.४६.७	भागीरथीं समेष्यति	१.९२.१३१
भर्ता एव न संदेह.	१.७१.८६	भवितो तस्य शापेन	१.३६.३०	भाग्यवंतश्च दैत्येन्द्रा	१.७१.१३७
भर्ता गतो महाबाहो	२.६.८३	भविष्यं नारदीयं च	१.३९.६२	भाति मध्ये गणानां च	१.७२.८७
भर्ता हर्ता भवानंगा०	१.१७.२३	भविष्यति महात्मानो	१.२४.७९	भातिर्दीप्तो निगदितः	१.७०.२२२
भ्रता न्यमीलयन्नेत्रे	१.२९.५६	भविष्यति महाभागा०	१.२४.३३	भार्तीद्रधनुषाकाशं	१.७२.९१
भल्लाकी मधुपिंगश्च	१.२४.१०६	भविष्यति महायोगा	१.२४.४१	भानुं दक्षिणतो देवं	२.१९.१४
भल्लाकी मधुपिंगश्च	१.७.४८	भविष्यति महावीर्यं	१.२४.६९	भानुना शशिना लोक.	१.२८.१७
भवतं तत्त्वमित्यार्थं	१.७१.१०५	भविष्यसि विमूढस्त्वं	१.२०.९२	भानुसोमाग्निनेत्राय	१.१०४.२०
भवतंमवहद्विष्णु.	१.३७.२३	भविष्यसि कलौ तस्मिन्	१.२४.१८	भानोर्गतिविशेषण	१.६१.५६
भवति दुःखिताः सर्वे	१.७८.२४	भविष्यामि च लोकेऽस्मिन्	२.१७.११	भानोस्तु भानवः प्रोक्ता	१.६३.१७
भवतोऽप्यनुजानंतु	१.६७.८३	भविष्यामि शिखायुक्तः	१.२४.१३	भारद्वाजो गौतमश्च	१.५५.२७
भवः सुधामृतोपमै.	१.१०.५	भवे भक्तिर्न संदेह०	१.१०.३१	भार्गवात्पादहीनस्तु	१.५७.१४
भवइत्युच्यते देवो	२.१३.५	भवे भवे नातिभवे	२.२७.२४९	भार्या त्वनया सार्धं	१.२९.५९
भवक्षेत्रे सुगुप्ते वा	१.८.८२	भवेद्यज्ञविशेषण	१.८५.१२३	भार्यामार्यामुमां प्राह	१.६४.८८
भवतीं प्रार्थयाम्यद्य	१.१६०.९	भवेद्योगोऽप्रमत्स्य	१.९०.४	भार्येयं भगवन्महां	२.६.१५
भवतीह कलौ तस्मि.	१.४०.७	भवोद्भवस्तपश्चैव	१.४.४५	भावं भावेन देवेशि	१.१०.५१
भवत्यद्भुत दृष्ट्वा	१.२०.५९	भवोपि बालरूपेण	१.१०६.२१	भावदुष्टोभसि स्नात्वा	१.२५.१०
भवत्यस्माज्जगत्कृत्स्नं	१.६०.६	भवोपि भगवान्देव०	१.३७.४०	भावयोगः समाख्यात.	२.५५.१३
भवनशतसहस्रै.	१.८०.७	भवोप्यनेकैः कुसुमैर्णेशं	१.७२.४९	भावयोगस्तृतीयः स्या.	२.५५.६
भवप्रसादजं सर्वं	१.१०७.१४	भसितं च मृणालेन	२.२७.२४२	भावाभावो हि लोकाना.	१.६०.९
भवप्रसादादागत्य	१.६५.१०	भस्मैश्छत्रैः स्वयंछत्रो	२.१८.६४	भाविनी च प्रजा विद्या	२.२७.१९२
भवभक्तो भवांश्चैव	१.१.१५	भस्मदिग्धशरीरस्य	१.१८.१३	भाविनोर्थस्य च बलात्	१.४०.७५
भवभक्त्याद्य दृष्टोहं	१.१०.५०	भस्मना कुरुते स्नानं	१.३४.१८	भाषसे पुरुषश्रेष्ठ	१.२०.४२
भवंस्परणोद्युक्ता	१.७३.२४	भस्मना शुध्यते कांस्यं	१.८९.५८	भासतेत्येव यद्दस्म	१.३४.५
भवस्य दर्शनं चैव	१.२.१४	भस्मनोद्भूलनं कृत्वा	१.१०८.७	भास्करं च तथा सोमं	१.७६.५७
भवस्यैतच्छुभं चक्रं	१.३६.५०	भस्मपांडुरदिग्धांगा	१.३४.२६	भास्करादीनां देवानां	२.४७.४८
भवात्मकं जगत्सर्वं	१.५४.३७	भस्ममिश्रांस्तथांगारान्	२.२५.१९	भास्कराभिमुखाः सर्वा	२.२२.४५
भवान्ग्रे समुत्पन्नो	१.१०३.३९	भस्मव्रताश्च मुंडाश्च	१.३३.९	भि	
भवानहं च स्तोत्रेण	१.२०.६६	भस्मशायी भवेत्रित्यं	१.८९.२२	भिक्षुश्च भिक्षुरूपी च	१.६५.६९
भवानी च तमालोक्य	१.८७.१२	भस्मशायी भस्मगोपा	१.६५.११७	भिन्दनुरसि बाहुभ्यां	१.९६.७२
भवानीशोऽनादिमांस्त्वं	१.२१.८५	भस्मसाद्विहितं सर्वं	१.३४.३	भिन्नभांडे च रथ्यायां	१.८५.१४४

भिषक्तमाय मुडाय	१.९६.८९	भूतानां मातरः सर्वा	१.८२.७०	भृगुशापच्छलेनैव	१.६९.४८
भी		भूतानामिह पंचानां	१.८५.२२३	भृगोरपि च शापेन	१.२९.२६
भीमः सुषिरनाकेसौ	१.८६.१३०	भूतानि च तथा सूर्यः	२.१८.१८२	भृगवाद्या मुनयः सर्वे	१.१०३.६५
भीमश्चावनिमध्यस्थो	१.७०.५८	भूतानि ब्रह्मभिर्वापि	२.२१.५६	भृगवाद्यैर्भूतसंघैश्च	१.७६.२३
भीम सुषिरं मे गोपाय	२.४५.४६	भूतालयो भूतपति०	१.६५.१३५	भे	
भीम सुषिरं मे गापाय	२.४५.४७	भूतेभ्यश्च पितृभ्यश्च	२.२२.२२	भेदा एकोनपंचाश.	२.१२.३५
भीम सुषिरं मे गोपाय	२.४५.४८	भूतौः प्रेतैः पिशाचैश्च	१.८२.९५	भेरीमुरजसंनादै.	१.४४.७
भीम सुषिरं मे गोपाय	२.४५.४९	भूतौः प्रेतैः पिशाचैश्च	२.५०.२४	भेरीमृदंगकाद्यैश्च	१.४४.६
भीम सुषिरं मे गोपाय	२.१३.२४	भूत्वा यज्ञवराहोसौ	१.९४.८	भेरीमृदंगमुरज.	१.९२.१७८
भीमस्य सा तनुज्ञेया		भूभारनिग्रहार्थं च	१.६९.५५		
भीमा भीमतरा भीमा	२.२७.१७०	भूभृतां त्वथ पक्षैस्तु	१.५४.४८	भैक्ष्यं यवागूस्तक्रं वा	१.८९.१७
भीमाय भीमरूपाय	१.९५.४७	भूमिरेखावृतः सूर्यः	१.५७.२४	भैक्ष्यं चरेद्वनस्थलेषु	१.८९.१४
भीमास्या जालिनी चोषा	२.२७.८३	भूमिशश्यां च मासांते	१.८३.१६	भैरवेश्वरमीशानं	१.९२.१३७
भु		भूमिस्थमुदकं शुद्धं	१.८९.६७	भो	
भुंक्ष्व चैनां यथाकामं	१.२९.६१	भूमौ रुद्रस्य लोकं च	१.२.५४	भोगदं योगदं चैव	१.८१.५
भुंक्ष्व भोगान्यथाकामं	१.१०७.५४	भूय एव ममाचक्षव	२.१०.१	भोगार्थी भोगमाप्नोति	२.२४.४०
भुजन्नारायणं विप्रा.	२.७.७	भूयो जज्ञेथ वे माया	१.७०.३००	भोगेन तृप्तिनैवास्ति	१.८.२४
भुक्तमाहारजातं यत्	२.१०.२६	भूयो देवगणश्रेष्ठ	२.१७.१	भोजनासनशाश्वासु	२.१.१०
भुक्तिमुक्तिप्रदा दिव्या	१.८२.२४	भूयोऽपि वद मे नंदिन्	२.१३.१	भोजयेच्च विधानेन	२.२८.९६
भुक्त्वा च सूकराणां तु	१.२६.३२	भूयोऽपि शिवमाहात्म्यं	२.१५.१	भोजराजस्य दौरात्म्यं	१.२.४३
भुक्त्वा तु विपुलांस्तत्र	१.७६.४०	भूयो भूयस्वसेद्यस्तु	१.९१.२३	भोज्यं पेयं च लेहां च	२.७.८
भुवः स्वाहा	२.४५.६८	भूयो मृत्युवशं याति	१.८८.३५	भोज्याभोज्यविधानं च	१.२.३४
भुवनानलसंकाशः	१.२०.८५	भूराद्यांश्चतुरो लोकान्	१.४.६३	भो दधीच महाभाग	१.३५.१५
भुवनानां प्रमाणं तु	१.२.३१	भूरापोनिर्मलद् व्योम	२.१२.३	भो भो दधीच ब्रह्मेष	१.३६.३४
भुवनेश इति ख्यातो	२.३.२४	भूरिश्रिवा प्रभुः शंभुः	१.६३.८६	भो भो देवा महाभागः	१.८०.४६
भुवनेशाय देवाय	१.१८.३७	भूर्भुवः स्वः स्वाहा	२.४५.७०	भो वत्स वत्स विप्रेद्र	१.६४.२०
भुवनेशो नृपो ह्यस्मिन्	२.३.४९	भूर्भुवः स्वर्महलोकान्	२.४५.७८	भो वत्स वत्स विप्रेद्र	१.६४.९९
भुवि रुद्रालयानां तु	१.२.१८	भूर्भुवः स्वर्महश्चैव	१.७४.२४		
भु		भूर्भुवः स्वर्महस्तैव	१.४५.२	भ्रमतोभिद्रवंतश्च	१.७०.३१३
भूतं भव्यं भविष्यं च	२.१८.३	भूर्भुवः स्वर्महस्तैव	१.८७.१९	भ्रमणं स्वेदनं न्यासा०	१.८.५०
भूतकोटिसहस्रेण	१.१०३.२५	भूर्भुवः स्वर्महस्तैव	१.४.५८	भ्रमतो मंडलानि स्युः	१.५५.९
भूतग्रामश्च चत्वार.	१.२३.२९	भूर्भुवः स्वर्महस्तत्र	१.२३.३३	ग्राजिष्ठुभोजनं भोक्ता	१.९८.६७
भूततन्मात्रपाशैश्च	२.९.१८	भूलोकः प्रथमः पादो	१.२३.३१	ग्रातृभिः सह पुण्यात्मा	१.६४.४९
भूततन्मात्रसर्गोयं	१.७०.३८	भूलोकाऽथ भुवलोकः	१.९८.१४७	ग्राम्यतस्तस्य रश्मी तु	१.५५.१२
भूतत्वाते स्मृता भूताः	१.७१.२३३	भूशयो भूतिकृदभूति.	१.८५.८९	भ्रुकुटी चंडभूश्चैव	२.२७.१४५
भूतभव्यभवन्नाथः	१.९८.१४१	भूषणानि च वासांसि	२.४०.३	भ्रूवोर्मध्ये न्यसेदिव्यं	२.३५.५
भूतभावनिकारेण	२.१५.४	भूषणैर्भूषयित्वाथ	१.८०.४२	भ्रूणहत्या वीरहत्या	१.४०.८
भूतले दर्पणप्रख्ये	२.५०.४६	भूषिता भुषितैश्चान्यैः			
भूताः पिशाचाः सर्पाश्च	१.६३.६७			म	
भूताः प्रेताः पिशाचाश्च	१.८२.११०	भृंगीशः पिंगलाक्षोसौ	१.८२.३६	मंगला चर्चिका चैव	२.२७.११८
भूतात्मानं महात्मानं	१.८८.४५	भृगुतुंगे तपस्तप्त्वा	१.६७.२५	मंडलं कल्पयेद्वान्	२.३०.४
भूतादिस्तु विकुर्वणः	१.७०.३९	भृगुर्भगाभिहा देवः	२.११.१४	मंडले चाग्रतो पश्यन्	२.१९.६

मंतव्यं चैव बोद्धव्य.	१.८६.७६	मखेशाय वरेण्याय	१.९६.८५	मध्याहे च महादेवं	१.७७.६१
मंतव्यवस्तुतां धत्ते	२.११.२९	मत्कीर्तिश्रवणे युक्ता	२.१.५३	मध्ये गगनरूपाय	१.७२.१२८
मंत्रं मुखसुखोच्चार्य.	१.८५.३१	मत्कृतेन च वर्णेन	१.२३.८	मध्ये चैकार्णवे तस्मि.	१.२०.३
मंत्रः षडक्षरो विप्राः	२.८.२	मत्कृतेन च वर्णेन	१.२३.१९	मध्ये चोर्ध्वमुखं कार्य.	२.२८.३४
मंत्रः स्थितः सदा मुख्यो	१.८५.३६	मत उत्पद्यते तिष्ठन्	१.८६.६०	मध्ये भवेन संयुक्तं	१.८४.३६
मंत्रज्ञो मंत्रवित्ताज्ञो	१.८२.५१	मत्तेभगामी मदलोलनेत्रा	१.७२.६७	मनः सुदर्शो बृंहश्च	१.४.४८
मंत्रमाह सकृद्वा यः	१.७६.४५	मत्पुत्रमवधीः शक्र	२.५१.९	मनश्च पञ्चभूतानि	१.२८.९
मंत्रमुच्चारयेद्वाचा	१.८५.१२०	मत्रसादादसंदिग्ध	१.६४.११९	मनसा कर्मणा वाचा	१.९४.२३
मंत्रवित्परमो मंत्रः	१.६५.६६	मत्रसादेन सकलं	१.९६.२८	मनसा चिंतयंतौ तौ	२.५.१०८
मंत्रस्नानं ततः कुर्या.	१.२६.४०	मत्रसूता च देवेशी	१.२३.४	मनसाध्याहितं मे स्या.	२.३.७४
मंत्रस्पर्शाविनिर्मुक्तो	२.५५.१२	मत्रियः सततं श्रीमान्	१.८५.२१	मनसा सर्वकार्याणि	२.२३.२६
मंत्रा घटाः स्मृतास्तेषां	१.७२.१५	मत्रियार्थमिदं कार्य	१.९२.१८४	मनस्येवं महादेवं	१.८.१०८
मंत्राणां प्रभवे तु त्थ्यं	१.२१.१८	मत्समस्तव पौत्रोसौ	१.६४.२१	मनुः स्वायंभुवस्त्वाद्य.	१.७.२२
मंत्राण्यां विधिनोक्ताभ्यां	२.४४.३	मत्समीपं गमिष्यति	१.२३.७	मनुते मन्यते यस्मा.	१.८.७४
मंत्रिष्वाधाय राज्यं च	२.५.२२	मत्समीपं गमिष्यति	१.२४.१६	मनुते सर्वभूतानां	१.७०.१३
मंत्रेण संस्पृशेद्देहं	१.८५.७०	मत्समीपं गमिष्यति	१.२४.३५	मनुष्यानौषधेनेह	१.५९.२९
मंत्रेणानेन दिव्येन	२.२७.२५१	मत्समीपं गमिष्यति	१.२४.४३	मनोत्सेधा मनोध्यक्ष	२.२७.६८
मंत्रेणानेन यो बिष्ट्	१.९४.२५	मत्समीपमुपेष्यति	१.२३.४८	मनोनिलज्वो भूत्वा	१.१७.४०
मंत्रेणानेन राजानं	२.२७.२३९	मत्समीपमुपेष्यति	१.२४.३१	मनोन्मनाय देवाय	१.१६.१४
मंत्रेणानेन रुद्रस्य	२.२७.४९	मत्समीपे तथान्यत्र	२.१.५४	मनोन्मनी महादेवी	१.८२.२०
मंत्रेणानेन विधिना	२.२७.२६६	मत्स्यगृह्यस्य यत्पापं	१.८९.८	मनो बुद्धिरहंकारः	१.९८.१०९
मंत्रेणानेन संपूज्य	२.४१.८	मदंशस्यास्य शैलस्य	१.१०३.४५	मनोबुद्धिरहंकार.	१.८६.७४
मंत्रैः पादैः स्तवं कुर्या.	१.२१.६६	मद्वाणैर्भिन्नसर्वांगो	१.९७.१४	मनो महास्तु विजेय.	१.७०.१०
मंत्रैरतैर्द्विजश्रेष्ठा	२.८.५	मद्भक्तश्चाभ्यसेद्द्यानं	१.८६.१२५	मनोमहान्महिर्ब्रह्म	१.७.१२
मंत्रैरतैर्यथान्यायं	२.२७.३३	मद्भक्तार्त्रिदयस्तत्र	२.६.८६	मनोवाक्कायजान् दोषान्	१.८.५६
मंत्रैर्महेश्वरं देवं	१.१७.७२	मद्भक्तो भव विप्रेण	१.१०७.३६	मनोवेगो निशाचरः	१.६५.९०
मंत्रो मया पुराभ्यस्तः	२.७.१५	मधुपकं तथा गां च	१.१०३.६४	मनोहरा महानादाः	२.२७.१३२
मंत्रैषधिक्रियाद्यश्च	२.५०.५०	मधुमासैर्मूलफलै०	१.४०.७०	मत्राभिपंकजाज्ञातः	१.९६.३९
मंदं मंदगतिं चैव	२.१९.२४	मधुश्च माधवश्चैव	१.५५.२२	मन्मथः कथितो व्यूहो	२.२७.१७५
मंदमंदस्मिता देवी	२.१.६९	मधोः पुत्रशतं चासीद्	१.६८.१५	मन्मथायिक उक्तस्ते	२.२७.१७९
मंदगर्भा महाभासा	२.२७.१८५	मध्यतो वरदां देवीं	२.२२.२४६	मन्मूर्तिस्तुहिनाद्रीशो	१.१०३.४०
मंदरं वा प्रकुर्वीत	१.७७.९	मध्यतो हस्तमात्रेण	२.४५.९	मन्ये शक्रस्य रूपेण	१.१०७.३८
मंदरस्य गिरे: श्रृंगे	१.४९.२९	मध्यदेशे च देवेशीं	१.७७.७७	मन्वंतराणां प्रभवे	१.२१.१५
पंदराद्रिप्रतीकाशै.	१.७०.१०	मध्यपद्मस्य मध्ये तु	२.२७.४६	मन्वंतराणां सर्वेषाः	१.४०.९२
मंदस्मितं च भगवान्	१.२९.१०	मध्यमेश्वरमित्युक्तं	१.९२.१५१	मन्वंतराणि वाराहे	१.७.२१
मंदाक्षेपा महादेवी	२.२७.१६५	मध्यमेश्वरमित्येव	१.९२.११	मन्वंतराधिका रेषु	१.४०.८१
मंदेहा राक्षसा नित्यं	२.५१.१७	मध्यमेश्वरसंज्ञं च	१.९२.१३५	मन्वंतरेण चैकेन	१.४०.९५
मकारं हृदयं शम्पो.	१.१७.८०	मध्यरात्रे च शिवयोः	१.८५.२२७	मन्वंतरेण चैकेन	१.७०.११३
मकाराख्यो विभुवीजी	१.१७.६३				

मन्वंतरेषु ये देवा	१.७०.३२०	मर्यादाया: प्रतिष्ठार्थ	१.३९.४९	महादेव सत्यं मे गोपाय	२.४५.५७
मन्वंतरेषु वै संख्या	१.४.३८	मलदंता गृहस्थाश्च	२.६.६५	महादेवस्य देवस्य	१.५१.८
मन्वंतरेषु वै संख्या	१.४.३८	मलिना रूपवत्यश्च	१.७८.२०	महादेवस्य सा मूर्ति.	२.१३.२६
मन्वंतरेषु सर्वेषु	१.६१.१४	मलिनाश्चैव विष्णेन्द्रा	१.३४.२९	महादेवाय महते	१.९६.७९
मन्वंतरेषु सर्वेषु	१.७०.२९३	मलिका वा गृहे येषां	२.६.४८	महादेवाय सोमाय	१.४१.३२
मन्वंतरेषु सर्वेषु	१.६३.४७	महतस्तु तथा वृत्तिः	१.३.१७	महादेवी कले द्वे तु	१.७०.३४४
मन्वंतरेषु सर्वेषु	१.७२.९७	महती देवता या सा	१.३५.७	महादेवेतरं त्यक्त्वा	१.७१.३४
मन्वाम नूनं भगवान् पिनाकी	१.९२.४६	महतो यो महीयांश्च	२.१८.३५	महाद्वृमस्य नामा तु	१.४६.२९
मम क्षेत्रमिदं तस्मा.	१.२०.७२	महत्प्रजापतेः स्थान.	१.५०.७	महाध्वजाष्टसंयुक्तं	१.८४.५५
मम चैतानि नामानि	१.६७.२	महदादिविशेषांतः	१.३५.२२	महानंदं परानंदं	१.८.१०५
मम ज्येष्ठेन यदुना	१.६९.७१	महदादिविशेषांता	१.३.२८	महानद्यां द्विलक्षं च	१.८५.१८८
मम त्वं पुण्डरीकाक्ष	१.६२.९	महर्षिः कपिलाचार्यो	१.९८.४४	महानपि तथा व्यक्तं	१.४१.५
मम त्वं मंदभाग्याया	१.२४.८३	महांतं तदगृहं तं च	१.८६.५६	महानिरयसंस्थस्त्वं	२.३.४६
मम त्वमेकः पुत्रोसि	२.२४.८५	महांबिकायै विद्वहे	२.४८.१३	महान्सृष्टि विकुर्षते	१.७०.२८
मम प्रसादाद्यास्यंति	१.२०.७९	महांस्तथा च भूतादि.	१.३६.९	महापादो महाहस्तो	१.६५.१०७
मम प्रसादाद्यास्यंति	२.३.१४	महांस्तथा त्वंकारं	२.२८.८	महापूजा प्रकर्तव्या	२.२८.९४
मम योनौ समायुक्तं	२.७.२३	महाकर्णः प्रभातश्च	१.८२.८२	महाप्रमाणा लिंगं च	१.९२.१५९
मम वृत्तं प्रवक्ष्यामि	२.८.७	महाकायो मुनिः शूली	१.७.३४	महाबला महाशांतिः	२.२७.१७१
ममात्र निधनं श्रेयो	१.९५.३७	महाकायो महातेजा	१.८२.३०	महाबलास्वयसिंशः	१.५२.४६
मयस्कराय रुद्राय	१.२९.६३	महाकेतुर्धराधीता	१.६५.१४०	महाबलो महातेजा	१.६५.१०९
मयस्कराय विश्वाय	१.९२.७४	महाग्रहो द्विजश्रेष्ठा	१.६०.४	महाभद्रस्य सरस.	१.४९.५३
मया चैषां न संदेहः	१.१०७.५५	महाचरु निवेद्यैवं	१.७७.९२	महाभागवते तच्च	२.४.१६
मयानीतमिदं लिंगं	१.५४.८	महाचरुनिविद्यः स्या	१.८१.१८	महाभूतानि भूतानि	२.१६.२५
मया पुत्रीकृतोस्यद्य	१.३०.१६	महाजयस्तथांगारो	२.२७.१३३	महाभूतान्यशेषण	२.१०.११
मया प्रोक्तोमरावत्यां	१.६४.३५	महाजया विरूपाक्षी	२.२७.९४	महाभूतान्यशेषण	२.१०.१२
मया बद्धोसि विप्रेषं	१.३७.२२	महातपा दीर्घतपाः	१.९८.६३	महाभोगपतेभोगं	१.२०.६
मया यदि मुनिश्रेष्ठो	१.४३.१	महातलं हेमतलं	१.४५.१०	महामुद्रासमायुक्तः	२.५०.२७
मया सह जगत्सर्वं	१.३६.६३	महात्मने नमस्तुभ्यं	१.१८.२८	महामेरुमनुप्राप्य	१.८४.६५
मया सह पिता हृष्टः	१.९८.१८३	महात्मा सर्वभूतश्च	१.६५.५९	महामोहा महाभागा	१.८२.१०५
मयि पश्य जगत्सर्वं	१.५२.५१	महादंतो महादंष्ट्रो	१.६५.११०	महामोहा महामाया	२.२७.२२८
मयि भक्तश्च वंद्यश्च	१.८०.३०	महादंष्ट्रः करालश्च	२.२७.११२	महायोगबलोपेता	१.२४.६२
मयूरबहर्वर्णस्तु	१.४३.२०	महादेवः शिवो रुद्रः	१.८२.४०	महारजतसंकाशा	१.५२.३५
मयूरश्चैव कारंडः	१.७०.२९०	महादेव जगत्राथ	१.३६.१०	महारौरवमासाद्य	१.९७.४१
मयैव प्रेषितौ विप्रौ	१.५.१०	महादेवपरा नित्य	१.३३.७	महावशा मदग्राहा	२.२७.१६६
मरीचये च संभूति	१.६८.२९	महादेवमनिर्देश्यं	१.७१.१०८	महावीतं तु तद्वर्षं	१.५३.२६
मरीचिभृग्वंगिरसः	१.४.९	महादेव महादेव	२.६.२१	महावीते सुवीते च	१.८९.९६
मरुतस्तस्य तनयो	२.२७.८६	महादेव सत्यं मे गोपाय	२.४५.५४	महाशरो महापाशो	१.६५.७५
मर्त्यस्य चाक्षणोस्तस्याश्च	१.४९.२५	महादेव सत्यं मे गोपाय	२.४५.५५	महासंध्याग्रवर्णाय	१.२१.४८
मर्त्यातीता महामाया		महादेव सत्यं मे गोपाय	२.४५.५६	महासंहरणे प्राप्ते	१.३२.१०
मर्यादा पर्वतानेता.					

महासेनाय विदाहे	२.४८.९	मात्रा त्वं सहितस्तत्र	१.६२.३६	मार्गशीर्षे च मासेऽपि	१.८३.४९
महासेनो विशाखश्च	१.६५.१४	मात्रापादो रुद्रलोको	१.९१.५६	मार्गशीर्षे भवेन्मित्रः	१.५९.३५
महास्कंधो महाकर्णो	१.६५.१०८	मात्रास्तिस्तस्त्वर्धमात्र	१.१७.५६	मार्गेणाधर्यपवित्रेण	२.२२.३२
महित्वं चापि लोकेस्मिं	१.८८.१९	माद्री लेभे च तं पुत्रं	१.६९.११	माजारिस्य गृहे यस्य	१.८५.१५४
महिषा गवयाक्षाश्च	१.७०.२४२	माद्र्याः सुतस्य संजडे	१.६९.१८	मालवं मालतीं चैव	२.१.५६
महीयसे नमस्तुभ्यं	१.९५.४२	माध्वी पीता तया सार्थं	२.८.२४	मालां गृह्य जया तस्थै	१.१०.२७
महेन्द्रो दुर्भरः सेनी	१.९८.१०	मानवस्य तु सोशेन	१.४०.५७	मालां प्रगृह्य देव्यां तु	१.१०२.२८
महेश्वरं हृदि ध्याये	१.८.१०१	मानवानां तु कुक्षिस्थो	१.५९.१३	मालिनी गिरिपुत्रास्तु	१.१०२.२६
महेश्वरांगजश्चैव	१.३७.९	मानवानां शुभं ह्येते	१.५५.७४	माल्यं च शयनस्थानं	१.८९.४०
महेश्वरांगजो मध्ये	२.५.३५	मानवेयो महाभागः	१.६५.३१	मासतृप्तिमवाप्याग्र्यां	१.५६.१६
महेश्वरात्मयो देवा	१.७०.७७	मानसानसृजद्ब्रह्मा	१.७०.१७७	मासमेकं पुमान्वीरः	१.६५.२३
महेश्वरो महादेवः	१.७०.२	मानसैर्वाचिकैः पापैः	१.७७.६२	मासा संवत्सराश्चैव	१.६०.११
महेश्वासो महीभर्ता	१.९८.१५४	मानसोत्तरशैले तु	१.५४.१५	मासेन सिध्यते तस्य	२.४९.९
महोदधीनां प्रभवे	१.२१.९	मानसोत्तरशैले तु	२.३.९	मासे मासेऽश्वमेधेन	१.९१.६१
महोदया चोत्तरे च	१.४८.१८	मानसोपरि माहेन्द्री	१.५४.२	मासोपवासैश्चान्यैर्वा	१.१०३.३४
मांगल्यैर्विधैः सर्वा-	२.५.८०	मानसो विस्तरेणैव	१.८.४०	माहात्म्यमनुभावं च	२.५.४
मां च नारायणं वापि	१.१०५.२२	मानार्थमंबरीषस्य	२.५.१५४	मि-मी	
मां तथाप्यचितं व्योम्नि	१.४३.४४	मानावमानौ द्वावेतौ	१.८९.४	मित्रावरुणनामानौ	१.४३.६
मां दिव्येन च भावेन	१.९८.१८७	मानी मान्यो महाकालः	१.९८.१३०	मित्रावरुणनामानौ	२.८.१६
मां दृष्ट्वा कालसूर्यभिं	१.४२.१७	मानुषं भजते नित्यं	१.८८.७४	मिथ्या न कारयेदेवि	१.८५.१७६
मांधातुः पुरुष्टसोभू	१.६५.३९	मानुषेणैव मानेन	१.४.१३	मीढुषोतिकपालांश्च	१.७०.३०९
मां न जानासि देवर्षे	१.१०७.३५	मानुष्यात्पशुभावश्च	१.८८.६७	मु	
मां विनिर्धूय संहष्टः	२.३.१५	मा भैर्देव महाभाग	१.४१.५१	मुंडो विरूपो विकृतो	१.६५.१५४
माघमासे तु संपूज्य	१.८३.२०	मामग्रे संस्थितं भासा०	१.१७.१७	मुंडो विरूपो विकृतो	१.९८.११४
माघमासे रथं कृत्वा	१.८४.२७	मामाहुक्र्षिष्यः प्रेक्ष्य	१.३७.४	मुकुटं च शुभं छत्रं	१.२७.४६
मातरं च महाभागां	१.६४.९८	मामिहांतः स्मितं कृत्वा	१.१७.२०	मुक्तकेशो हसंश्चैव	१.९१.२७
मातरं पूजयित्वा तु	२.७.२९	मा मैवं वद कल्याण	१.२०.६९	मुक्ताफलमयैहरैः	१.७१.१२
मातरः सर्वलोकानां	१.७२.८६	मायया तस्य ते दैत्याः	१.७१.८०	मुक्ताफलमयैहरै०	२.१९.१२
मातरः सुखवारिसूदनाः	१.७२.६९	मायया देवदेवस्य	१.७१.९०	मुक्ताफलमयैश्चूर्ण०	१.७७.६८
मातर्मातिः कथं त्यक्त्वा	१.६४.६३	मायया मोहितं देव.	१.२०.१८	मुक्त्वा हस्तसमायोगं	१.१०३.६२
माता च तस्य दुर्बुद्धे:	२.८.२६	मायया ह्यनया किं वा	१.३६.६५	मुखतोजाः ससज्जथ	१.७०.२३७
मातापित्रोर्वचनकृत्	१.६७.३	मायां कृत्वा तथारूपां	१.३१.३१	मुखानिलः सुनिष्पन्नः	१.९८.१०७
मातापित्रोस्तु संवादं	१.४०.२	मायां त्यज महाबाहो	१.३६.६२	मुखोपरि समभ्यर्च्य	२.२२.७५
मातुः पितृस्तथारिष्टं	१.८.१७	मायावित्वं श्रुतं विष्णो.	२.६.१	मुख्यसर्गं तथाभूतं	१.७०.१४४
मातृदेवोत्थितान्येव	१.१५.६	मायाविनो महात्मानो	२.५.१३०	मुख्यस्तु यस्त्रिरुद्धातं:	१.८.४६
मातृस्थानोऽपि वा विद्वान्	२.५०.१६	मायी च मायया बद्धः	१.८७.५	मुच्यते नात्र संदेहः	२.४५.६९
मातृहा नियुतं जप्त्वा	१.६५.१७४	मायूरास्त्रेण नाभ्यां तु	२.५०.३४	मुच्यते पशवः सर्वे	१.८०.५१
मातृहा पितृहा चैव	१.६५.१७४	मारणोच्चाटने चैव	२.५२.१२	मुच्यते पातकैः सर्वैः	१.७१.७०
मातृणां रक्षको नित्यं	१.८२.१००	माकंडेय महाप्राज्ञ	२.३.१	मुच्यते तेन दोषेण	१.६१.५०
मात्रा चार्धं च तिस्रसु	१.९१.५२	मार्गशीर्षकमासादि,	१.८४.७१	मुच्यते नात्र संदेह०	१.९५.११

मुच्यते नात्र संदेहो	१.९२.१६९	मुष्टिनां चैव यावच्च	२.२१.७१	मेनापतिमतिक्रम्य	१.५४.६०
मुद्गात्रं मधुना युक्तं	२.५४.४	मूलं च नालरलेन	२.३३.४	मेनाया नंदिनी देवी	१.८२.१७
मुद्रा च पद्ममुद्राख्या	२.२२.४८	मूलं मूलेन विधिना	२.२५.४१	मेरुपर्वतसंकाशं	१.९८.२२
मुनयः संशितात्मानः	१.८६.५	मूलकस्थापि धर्मात्मा	१.६६.३०	मेरुपृष्ठे मुनिवरः	२.९.६
मुनयश्च तथा सर्वे	२.५.१५५	मूलमंत्रं सकृज्जप्त्वा	२.२५.९६	मेरुमंदरकैलासः	१.८२.३१
मुनयश्च महादेवं	१.१०२.५९	मूलमंत्रमिति प्रोक्तं	२.२३.२२	मेरुमासाद्य देवानां	१.७६.८
मुनयश्च सदालिंगं	१.२४.१४७	मूलमंत्रमिमं प्रोक्तं	२.२२.१०	मेरोः पश्चिमतश्चैव	१.४९.५.
मुनयस्ते तथा वाग्भिः	१.३१.३३	मूलस्थाय नमस्तुभ्यं	१.७२.१३७	मेरोः शिखरमासाद्य	१.१०१.३२
मुनयो दारुगहने	१.२९.५	मूलायामप्रमाणं तु	१.४८.७	मेरोः समंताद्विस्तीर्णं	१.४८.३२
मुनिभिश्च महाभागैः	१.८१.४	मूलेन नमस्कारं विजाप्या	२.२४.३४	मेषो वृषोथ मिथुनः	१.८२.७५
मुनिरात्मा मुनिलोकः	१.६५.९१	मूले ब्रह्मा वसति भगवान्	२.४७.११	मैथुनस्याप्रवृत्तिहिं	१.८.१६
मुनिश्च दुंदुभिश्चैव	१.४६.३१	मृच्छकृतिलपुष्टं च	१.२५.१३	मैथुनात्कामतो विप्रा	१.८९.९८
मुनिश्रेष्ठं न पश्यामि	२.५.९७	मृणालतंतुभागैकः	१.४१.२३	मो	
मुनिश्रेष्ठौ च हित्वा त्वं	२.५.१४९	मृतधूमोद्भवं त्वभ्रः	१.५४.४१	मोक्षाय मोक्षरूपाय	१.१८.२३
मुनीनां च न संदेहः	१.७३.२२	मृतोद्भवा महालक्ष्मी	२.२७.१५०	मोक्षो धर्मस्तथार्थश्च	१.२३.२८
मुनीनां वंशविस्तारो	१.२.२७	मृत्युंजयविधि वक्ष्ये	२.५३.२	मोक्षयंति ते न संदेहः	१.७२.४०
मुनीन् पितृन् यथान्यायं	१.२६.९	मृत्युंजयविधि सूत	२.५३.१	मोचकः शिव एकैको	२.९.२६
मुनीश्वरांश्च संप्रेक्ष्य	१.४२.३६	मृत्युरेवं न संदेहः	१.६९.५८	मोचयत्येव तान्सद्यः	२.९.२२
मुने कल्पांतरे रुद्रो	१.४१.१७	मृत्युहीनः पुमान् विद्धि	१.४१.६१	मोहहेतुस्तथा ज्ञानं	१.८६.११०
मुनेर्विजयदा चैव	१.३०.३५	मृत्योर्भीतोहमचिरा	१.४३.१६	मोहितं प्राह मामत्र	१.१७.३६
मुने समस्तधर्माणां	२.१.३	मृत्योर्व्याधिजराशोकः	१.७०.३०१	मौ	
मुमुहुर्गणपाः सर्वे	१.१०२.६१	मृदंगमुरजैर्जुष्टं	१.८०.१७	मौहूर्तिकी गतिर्हेषा	१.५४.१३
मुमोच बाणं विप्रेद्रा	१.७२.११४	मृदादिरलपर्यंतैः	१.७७.२	य	
मुमोच पूर्ववदसौ	१.७०.१३०	मृदुस्त्वमन्त्रमस्मभ्यः	१.८८.९०	यं दृष्ट्वा सर्वमज्ञानः	१.३१.२१
मुहूर्तपंचदशिका	१.४.१०	मृन्मयं क्षणिकं वापि	१.७४.२२	यः कुयद्विदेवेशां	१.७६.५२
मुहूर्तबंधुरास्तस्य	१.७२.८	मृन्मयं चैव विप्रेद्राः	१.७४.१८	यः कुर्यान्मेरुनामानं	१.७७.१२
मू		मृन्मयं पंचमं लिंगं	१.७४.१६	यः पंचानदमासाद्य	१.४३.४८
मूकाः सशब्ददुष्टाशा.	१.५४.५०	मे		यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.३३.२
मूढाःस्य देवताः सर्वा.	१.१०२.४९	मेद्रेणोर्ध्वेन महता	१.२०.६१	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.४१.३३
मूढा ह्यभाग्या मद्भक्ता	२.६.८७	मेघवाहनकल्पस्य	१.२.१६	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.६५.१७२
मूर्छनास्वरयोगेन	२.१.१२	मेघवाहनकल्पेव	२.८.९	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.७०.३४७
मूर्तयः पंच विख्याताः	२.१४.५	मेघवाहनकृष्णाय	१.३३.१७	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.९२.१८९
मूर्तयोष्टौ च तस्यापि	१.१०६.२४	मेघानां च पृथग्भूतं	१.५४.५९	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.९५.६३
मूर्तयोष्टौ ममाचक्षव	२.१२.१	मेघेभ्यास्तनयिलुभ्यः	१.३९.२१	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.९८.१९०
मूर्तयोष्टौ शिवस्याहु	२.१२.४३	मेदिनीं कारयेद्विव्यां	२.३२.३	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.१८.१९०
मूर्तिं तमोरजःप्रायां	१.७०.२२४	मेधातिथेस्तु पुत्रैस्तैः	१.४६.४५	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.१०३.६७
मूर्तिः पशुपतिर्ज्ञेयः	२.१३.२२	मेध्यास्वनारीसंभोगं	१.८.१९	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	२.६.९२
मूर्तिरुग्रस्य सा ज्ञेया	२.१३.२७	मेनका सहजन्या च	१.५५.५०	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	१.६९.९४
मूर्त्यादीनं च वा देयं	२.३७.१५	मेनां तु मानसीं तेषां	१.६.६	यः पठेच्छृणुयाद्वापि	२.५.१५८
मूर्धि पुष्टं निधायैवं	२.२४.२८	मेनाजत्वं महादेव्या	१.९९.२	यः पठेतु स्तवं भक्त्या	१.१०४.२९

यः पुनस्तत्त्ववेत्ता च	१.८९.४७	यज्ञानं निर्मलं शुद्धं	१.७५.४	यथा देवगृहाणी	१.५९.५
यः पुरश्चरणं कृत्वा	१.८५.१०१	यज्ञधूमोद्भवं चापि	१.५४.४०	यथा देवा भवं दृष्ट्वा	१.७१.१४९
यः पूर्यति यस्माच्च	१.७०.१७	यज्ञप्रवर्तनं चैव	१.३९.५१	यथा प्रधानं भगवां	१.६५.१६९
यः प्रातर्देवदेवेशं	१.७७.६०	यज्ञभुग्यज्ञमूर्तिस्तं	१.९५.२४	यथा प्रभाकरो दीपो	१.६०.१७
यः शिवं पूजयेदेवं	२.२४.३७	यज्ञयाजी जितक्रोधः	१.६६.७०	यथा ममोदरे लोकाः	१.२०.४४
यः शिवं मंडले देवं	२.१९.४२	यज्ञवाटस्तथा तस्य	१.१००.७	यथा मृगो मृत्युभयस्य भीतो	१.८६.४२
यः श्रावयेच्छुचिर्विष्णा.	१.८०.६०	यज्ञश्च दक्षिणा चैव	१.७०.२७९	यथा मोक्षमवाप्नोति	१.९२.४३
यः सकृद्गा यजेदेवं	२.२२.८०	यज्ञश्च दक्षिणाहीनं	१.१०५.१६	यथा युगानां परिवर्तनानि	१.४०.९३
यः सत्त्वनिष्ठो मद्भूतो	१.८६.१४७	यज्ञस्य च शिरश्चेत्ता	१.८२.१०१	यथा वज्रधरः श्रीमान्	१.३५.१२
यः सप्तविंशको नित्यः	१.७१.५१	यज्ञानां पतिभावेन	२.१२.२४	यथावत्कथिताऽचैव	१.३८
यः सं याति न संदेहः	१.७७.२७	यज्ञार्थं पशुहिंसा च	१.७८.१५	यथावसरमेवं हि	२.२५.१०५
य इदं कीर्तयेदिव्यं	१.३६.७९	यज्ञोपकिरणैः सर्वैः	२.४७.२५	यथाविभवविस्तारं	२.३८.५
य इदं कीर्त्यं संग्रामं	१.३६.८०	यज्ञोपवीती देवानां	१.२६.१२	यथावृक्षात्कलं पक्वं	१.९१.६९
य इदं पराख्यानं	१.९६.११७	यतः सृष्टस्त्वमे लोकाऽ	१.९२.१०४	यथा शिवस्तथा देवी	१.७५.३४
य इदं प्रातरुत्थाय	१.७१.११५	यतमानो यतिः साधुः	१.१०.१०	यथा श्रुतं तथा प्राह	१.७१.७
य इमं शृणुयाद्विजोत्तमा	१.७२.१६७	यतयश्च भविष्यन्ति	१.४०.१९	यथा श्रुतं मया सर्वं	१.१०३.८१
य एवं सर्वमासेषु	१.८१.४९	यतस्तस्मान् हंतव्या	१.१८.१६	यथाष्टादशहस्तेन	२.२८.१७
य एवं स्थापयेल्लिंगं	२.४७.४९	यतीनां संहृतिन्यासः	१.८५.५६	यथा ह्यापस्तु संछिन्नाः	१.८८.६०
य एष भगवान् रुद्रो	२.१८.१	यतो बिभर्षि सकलं	१.९६.११०	यथेतरेषां रोगाणाऽ	१.८६.३६
यक्षलोकमनुप्राप्य	१.८३.४३	यतोस्य दीव्यतो जाता.	१.७०.२०४	यथैष पर्वते मेरु०	१.२०.९४
यक्षाः सिद्धास्तथा साध्या	१.१०२.२०	यत्किंचित्प्रार्थयेदेवि	१.८५.२०४	यदव्यक्तं परं व्योम	१.९६.१०१
यक्षान् पिशाचान् गंधर्वाऽ	१.७०.२५०	यत्क्षणं वा मुहूर्तं वा	१.७३.२३	यदागतोहमुटजं	१.४३.२
यक्षा विद्याधराः सिद्धाः	१.७३.८	यत्तेजस्तु नृसिंहाख्यं	१.९६.३	यदाचरेत्पश्चायां	१.२४.१३७
यक्षेश्वराय विद्वाहे	२.४८.२४	यत्पुण्यं चैव तीर्थानां	१.८२.११७	यदा तदा शक्तिसून्	१.६४.४८
यजंति देहे बाह्ये च	१.७५.३५	यत्रमाणगुहा प्रज्ञा	१.८.७१	यदा तु सृजतस्तस्य	१.६३.३
यजंति सततं तत्र	१.४६.१२	यत्र कंटकिनो वृक्षा	२.६.४६	यदा न निंदेन द्वेष्टि	१.६७.२०
यजंते चाश्वमेधेन	१.४०.४२	यत्र क्रीडांति मुनयः	१.४९.३८	यदापराहणस्त्वाग्नेव्यां	१.५४.९
यजमानात्मको देवो	२.१३.१७	यत्र तिष्ठांति तद्ब्रह्म	१.३१.१०	यदाप्नोति यदादत्ते	१.७०.९६
यजमानाह्या मूर्तिः	२.१२.२८	यत्र मंदाकिनी नाम	२.५१.२२	यदा प्रबुद्धो भगवान्	१.४६.७
यजमानाह्या मूर्तिः	२.१२.४५	यत्र रुद्रनमस्कारः	१.९१.७०	यदा यदा भविष्यामि	१.२४.४०
यजमानाह्या या सा	२.१२.२९	यत्रासीनौ महात्मानौ	२.५.९३	यदा यदा ममाज्ञान०	१.९६.९६
यजमानेन कर्तव्यं	२.३७.१४	यत्रेच्छांति जगत्यस्मिं	१.९.३३	यदा विष्णुश्च भविता	१.१०१.४४
यजमानो जपेन्मन्त्रं	२.२८.७४	यत्सत्यं ब्रह्म इत्याहुं	१.८५.१३७	यदा व्यवस्थितस्त्वेतैः	१.८६.७०
यजुर्वेदमहाग्रीव	१.१.२१	यथाक्रमं स धर्मात्मा	१.४७.१२	यदा व्यासस्तरक्षुस्तु	१.२४.६३
यजुर्वेदसमायुक्तं	१.१७.८६	यथा तरंगा लहरीसमूहः	१.७१.११४	यदा सती दक्षपुत्री	१.९८.१८४
यजुषां परिमृज्यैवं	१.२६.२५	यथा त्वं देवदेवस्य	२.५.४०	यदा समरसे निष्ठो	१.७५.१५
यजूषि त्रैष्टुभं छंदो	१.७०.२४४	यथा त्वयाद्य वै पृष्ठे	१.१०.४४	यदा स्थिताः सुरेश्वराः	१.१०५.१
यजेदेकं विरूपाक्षं	१.७३.२७	यथा दारुवने रुद्रं	१.२८.३२	यदा स्पृष्टो मुनिस्तेन	१.४२.५
यज्जप्त्वा तु मुनिश्रेष्ठा	१.६५.५४	यथादिष्टप्रवादस्तु	१.१०.१८	यदास्य ताः प्रजाः सुष्टा	१.७०.२६१

यदा स्तु मति चक्रे	१.५.९	यशसस्तपश्चैव	१.६४.१११	या गतिसत्स्य विपुला	२.५५.४१
यदाहं पुनरेवेह	१.२३.१३	यशचाभिमानी भगवान्	१.५.५०	यागोपकरणं दिव्य.	२.२८.८४
यदि प्रीतिः समुत्पत्रा	१.१९.६	यशचार्यं मंडली शुक्ली	१.५९.१४	यागोपयोगद्रव्याणि	१.७७.९३
यदि योनि विमुचामि	१.८८.५१	यश्चासौ तपते सूर्यः	१.५९.२१	याचितो देवदेवेन	१.३६.३५
यदि सिंहं महेशानं	१.९६.४५	यस्तत्प्रतिकृतो यत्नो	१.६९.६२	याजयामास चेन्द्रेति.	१.६६.७६
यदुं च तुर्वसुं चैव	१.६६.६५	यस्तु गर्भगृहं भक्त्या	१.७७.१०१	यानवाहनसंपत्रो	२.२२.८३
यदुनाहमवज्ञातः	१.६७.४	यस्तु दारुवने तस्मि.	१.२९.४२	या नार्येवं चरेदब्दं	१.८४.९
यदृच्छ्या भवः पश्यन्	१.९४.२८	यस्तु प्रावरणं शुक्लं	१.९१.३५	यानि चान्यानि पुण्यानि	१.९२.१३८
यदेतदुक्तं भवता	१.५९.२	यस्तेनानिर्जितो युद्धे	१.१०१.२२	यान्यांश्चिंतयते कामा.	१.८१.५५
यदेतद्द्रविणं नाम	१.९०.१३	यस्त्यजेद् दुस्तरान्त्राणान्	१.७७.३४	यान्यांश्चिंतयते कामा.	२.२४.४१
यदैवं मयि विद्वान् य.	१.८७.६	यस्त्वेतान्यूजयेत्रित्यं	१.३३.११	यामा इति समाख्याता	१.७०.२८०
यदोः पुत्रा बभूवुर्हि	१.६८.२	यस्माच्च विश्वरूपो वै	१.२३.२५	याम्यपावकयोर्मध्ये	२.२७.५६
यदोर्वेशं प्रवक्ष्यामि	१.६८.१	यस्माच्च सर्ववर्णत्वं	१.२३.२७	याम्यमासाद्य वै लोकं	१.८३.२३
यदत्तं यद्युतं चैव	२.३.१८	यस्माच्चैव क्रिया भूत्वा	१.२३.४२	या लक्ष्मीस्तपसा तेषां	१.७१.९१
यद्यद्धिभूतिमत्सत्त्वं	१.९६.२९	यस्माज्जटोदकादेव	१.४३.३५	यावंत्यश्चैव ताराश्च	१.५७.६
यद्यूपं भवता दृष्टं	१.९८.१७१	यस्मात्स्य तु दीव्यंतो	१.७०.२०५	यावकं चौदनं दत्त्वा	१.८३.१७
यमं च यमुनां चैव	१.६५.४	यस्मातेषां दिवा जन्म	१.७०.२१८	यावज्जीवं जपेत्रित्यं	१.८५.९८
यमदंष्ट्रा महादंष्ट्रा	२.२७.१५५	यस्मातेषां वृत्ता बुद्धिः	१.७०.१४३	यावतु क्षीयते तस्य	१.५६.१७
यमपावकवित्तेशा	१.७२.६०	यस्मादहर्देवतानां	१.७०.२१०	यावत्वदृष्टमभव.	१.२६.१७
यमपुष्पादिभिः पूज्यं	१.४१.२४	यस्मादाचारहीनस्य	१.८५.१२८	यावद्ग्रहणमोक्षं तु	१.८५.१९९
यममिद्रमनुप्राप्य	१.१०६.४	यस्मादुक्तः स्थितोऽस्मीति	१.७०.३२४	यावन्नरेंद्रप्रवरः	१.६६.७९
यमस्तु प्रथमः प्रोक्तो	१.८८.	यस्माद् ब्रह्मा ततः सर्व	२.१.८	या वै दृष्टा महासत्त्वा	१.२३.४४
यमस्त्रियं बको देव.	२.११.९	यस्माद् भवन्ति संदृष्टा	१.७०.२१५	याश्च सर्वेषु द्वीपेषु	१.१०३.११
यमस्य दंडं निन्द्रिते:	१.८४.६१	यस्मिन्मन्त्रे पतेत्पुष्यं	२.२१.४३	यु	
यमस्य दंडं भगवान्	१.१००.२०	यस्य कृष्णा खरा जिह्वा	१.९१.२६	युक्तं मनोजवैरश्चै०	१.६६.६८
यमाः संक्षेपतः प्रोक्ता	१.८.२९	यस्य नास्ति सुतप्तस्य	१.२८.२९	युक्तो योगेन चेशानं	१.८८.४४
यमगिनवायुरुद्रांबुं	१.१०४.२६	यस्य भक्तोपि लोकेस्मिन्	१.७७.३	युगधर्मान् कथं चक्रे	१.३९.३
यमापस्तं बसंवर्ता:	१.३९.६५	यस्य भीषा दहत्यग्नि.	१.९६.१००	युगमन्वंतराण्यस्य	२.१०.४०
यमाय राक्षसेशाय	२.२८.५४	यस्य मायाविधिजस्य	१.२०.७८	युगरूपो महारूपो	१.६५.१४८
यमोपि दंडं खड्गं च	१.१०२.३३	यस्य यद्विहितं कर्म	१.८५.१३४	युगस्वभावश्च तथा	१.४०.९९
यमां हि विविधैर्द्रव्यै.	२.२७.२५३	यस्य राष्ट्रे तु लिंगस्य	२.२४.२९	युगस्वभावाः संध्यास्तु	१.४०.४९
ययातिर्युधि दुर्धर्षों	१.६६.६९	यस्य रेतः पुरा शंभो.	२.५४.२४	युगांतकोटी तौ तस्य	१.७२.११
यया सृष्टा सुराः सर्वे	१.७०.२००	यस्य वा स्नातमात्रस्य	१.९१.२२	युगांतेषु भविष्यति	१.४०.२५
यया सृष्टास्तु पितर.	१.७०.२०९	यस्य वै स्नातमात्रस्य	१.९१.१३	युगाक्षकोटिसंबद्धौ	१.५५.८
ययुश्च दुःखवर्जिता	१.७२.१७९	यस्य श्वेतधनाभासा	१.९१.२८	युगाक्षकोटिस्वेतस्य	१.५५.११
ययौ प्रांते नृसिंहस्य	१.९५.६१	यस्यैवं हृदि संस्थोयं	१.८५.३७	युगादिकृद्युगावर्तों	१.९८.७२
यवक्षीराज्यहोमेन	२.४९.१०	या		युगानां परिमाणं ते	१.४०.१००
यवमात्रांतरं सम्यक्	२.२७.४४	यांतं तदानीं तु शिलादपुत्र.	१.७२.५३	युगे युगे महायोगी	१.३३.१२
यवैश्च ब्रीहिभिश्चैव	१.१५.२४	याः स्त्रियस्त्रां सदाकालां	१.१०५.१९	युद्धा प्रबुद्धा चंद्रा च	२.२७.७५
यशः कीर्तिसुतश्चापि	१.७०.२९७	याक्षे तु तेजसं प्रोक्तं	१.९.२४	युयोध भगवांस्तेन	१.१००.२४

युवां प्रसूतौ गात्राभ्यां	१.१९.२	योगसिद्धिप्रदं सम्यक्	१.९६.१२१	योहं हरेः सन्त्रिकाशं	२.१७.७९
युवाभ्यां किं ददाभ्यद्य	१.२२.९	योगाचारः स्वयं तेन	१.८८.९१	रंगे करालवक्त्राय	१.२१.५९
युष्माभिर्वै कुमाराय	१.९९.५	योगात्मानस्तपोहादाः	१.१३.१८	रंभा चांभोजवदना	१.५५.३४
यूपं चांडालकाद्यांश्च	१.८९.७५	योगात्मानो महात्मानः	१.२४.३४	रंस्यते सोपि पद्माक्षि	१.९२.६०
ये		योगात्मानो महात्मानः	१.२४.५१	रक्तकुंकुमलिपांगा	१.१२.११
ये कीर्त्यमानास्तान्सर्वान्	१.४९.४६	योगात्मानो महात्मानः	१.२४.६६	रक्तपद्मासनासीनं	२.२३.२७
ये चानिरुद्धं पुरुषं	१.४६.१०	योगात्मानो महात्मानः	१.२४.७१	रक्तपुष्पाणि संगृह्य	२.२२.३४
ये चान्येषि महात्मानः	१.२४.८२	योगात्मानो महात्मानः	१.२४.९८	रक्तभागास्त्रयस्त्रिंशं	१.८८.५४
ये चापि वाष्पदेव त्वां	१.२३.१२	योगात्मानो महात्मानो	१.२४.१३२	रक्तमाल्यांबरधरो	१.१२.३
ये तत्र पश्यन्ति शिवं त्रिस्ते	१.७५.३९	योगादभ्यस्यते यस्तु	१.८.५५	रक्तवस्त्रपरीधानः	२.२२.१४
येन केनापि वा देहं	१.९१.७४	योगादेत्य दधीचस्य	१.३५.१४	रक्तवस्त्रसमं मिश्रै	२.५०.३५
येन केनापि वा मर्त्यं	१.७७.९९	योगाभ्यासरताश्चैव	१.२४.८१	रक्तशाल्यत्रमध्या च	१.८३.३२
येन भागीरथी गंगा	१.६६.२०	योगाश्च त्वां ध्यायिनो	१.२१.८६	रक्तांबरधराः सर्वा	२.२२.५५
येषि चान्ये द्विजश्रेष्ठा	१.१२.१४	योगिनः सर्वतत्त्वाः	१.७.२	रक्ता कराली चंडाक्षी	२.२७.८८
ये पुत्रपौत्रवत्स्तेहा०	१.७८.१२	योगिनां चैव सर्वेषां	१.८९.२३	रक्ताधिक्याद्वेत्रारी	१.८९.११९
ये पुनर्निर्ममा धीराः	१.९२.६४	योगिनां निष्कलो देवो	१.२०.४२	रक्ताय रक्तनेत्राय	१.७१.१५६
ये पुनस्तदपां स्तोकाः	१.३९.३९	योगिनां निष्कलो देवो	१.७५.३०	रक्षति जंतवः सर्वे	१.७८.९
ये ब्रह्मवादिनो भूमौ	१.६४.५१	योगिनां मोक्षलिप्सूनां	१.९२.९२	रक्षमाणस्य देहस्य	१.६९.६०
ये भक्ता देवदेवस्य	१.७८.२५	योगिनां हृदि संस्थाय	१.७२.१४७	रक्षसा भक्षिते शक्तौ	१.६३.८४
ये मां रुद्रं च रुद्राणीं	१.२३.१७	योगी योग्ये महारेताः	१.९८.६५	रक्षार्थमंबुधौ महां	१.१७.६
येऽमृतत्वमनुप्राप्ता	१.६९.८	योगीश्वरान् सशिष्यांश्च	१.८.८६	रक्षार्थमागतस्त्वद्य	१.६४.११
ये यजंति विनिद्यैव	२.६.८८	योगीश्वराय नित्याय	१.९६.९२	रक्षोगणं क्रोधवशा	१.६३.३८
ये ये पदार्थं लिंगांका.	२.११.३२	यो गुरुः स शिवः प्रोक्तो	१.८५.१६४	रक्षोध्नाय विषघ्नाय	१.२१.५४
ये योग्याः शिवधर्मिष्ठाः	२.२०.२८	योगेन पश्येत्र च चक्षुषा		रक्षो हेतिः प्रहेतिश्च	१.५५.३६
ये रुद्रमनधं शर्वं	२.६.८५	पुनः	१.८८.३९	रक्षो हेति प्रहेतिश्च	१.५५.४८
ये शंकराश्रिताः सर्वे	१.६.२६	योगेन योगसंपत्राः	१.१४.१२	रजः प्रियांस्ततः सोथ	१.७०.२१३
येषां वदति नो वाणी	२.६.५६	योगे पाशुपते सम्यक्	१.९२.८	रजः सत्त्वं परित्यज्य	१.७०.२६३
ये हि मां भस्मनिरता	१.३३.६	योगेश्वरस्य या निष्ठा	२.५५.३२	रजतेन तु कर्तव्याः	२.३७.१०
यैः समिद्भिर्हुतं प्रोक्तं	२.२५.४५	योगो निरोधो वृत्तेषु	१.८.७	रजसाधिष्ठितः स्तष्टा	१.९६.३२
यैर्येयोगा इहाभ्यस्ता.	१.९२.१२१	योग्यं कर्मण्युपरते	१.४०.३६	रजसाबद्धवैरश्च	१.१७.१९
यैलिंगं सकृदप्येवं	१.२७.४०	योजनं विद्धि चार्वागि	१.९२.१००	रजस्वलानां वृत्तिश्च	१.२.३३
यैस्तु व्याप्तास्त्रयो लोकाः	१.६३.९५	योजनानां महामेरुः	१.५२.७	रजेश्वरं च पर्याये	१.९२.१५६
यो		योजनानां सहस्राणि	१.५३.२१	रणधृष्टस्य च सुतो	१.६८.४२
योगध्यानैकनिष्ठाश्च	१.८९.४९	योजनानां सहस्राणि	१.५३.२३	रतिप्रियः सुरेशान	२.२७.११५
-योगनिद्रासमारूढं	२.५.७	योजनान्यर्धमात्राणि	१.६१.३८	रतोत्सवरत्तैश्चैव	१.८०.३४
योगभूमिः क्वचित्सिम्न्	१.४८.२८	योद्बद्मेकं प्रकुर्वति	१.८३.८	रत्नचूर्णादिभिरचूर्णं	१.७७.७५
योगमार्गा अनेकाश्च	१.२४.१३६	यो वाचोत्पाटयेज्जिह्वां	१.१०७.४२	रत्नद्वीपा च सुद्वीपा	२.२७.१९७
योगशब्देन निर्वाणं	१.८.५	यो विद्वान्वै जपेत्सम्यक्	१.८५.३८	रत्नधारे गिरिवरे	१.५०.६
		योसौ प्राणांतिको रोगं	१.६७.२१		

रत्नभूतोऽथ रत्नांगः	१.६५.१४६	राजतं वा यथान्यायं	२.२५.२६	रुद्रप्रसादजाशचेति	२.६.६०
रत्नानामप्यलाभे तु	१.८१.२४	राजतश्च गिरिः श्रीमा.	१.५३.१८	रुद्रप्रसादाद्विष्णोश्च	१.२.४१
रत्नाः प्रलापमाकर्ण्य	१.१०१.२	राजतेनापि ताप्नेण	१.८४.२९	रुद्रभक्तश्च गर्भस्थो	१.६४.२२
रत्ना समं समागम्य	१.१०१.३३	राजप्रतिग्रहैर्दग्धान्	१.८५.१४१	रुद्रभक्तस्य शांतस्य	२.९.११
रथं चक्रः सुसंरब्ध	१.७१.१६३	राजप्रतिग्रहो घोरो	१.८५.१४२	रुद्रभक्ता महात्मानो	२.६.१८
रथं च सप्ताश्वमनूरुवीरं	२.१९.३४	राजयक्षमा तिलैहोमा.	२.४९.१२	रुद्रभक्तार्तिनाशाय	१.७१.१५५
रथ आपोमयैरश्वै.	१.५७.४	राजवृत्तिस्थिराश्चौरा:	१.४०.९	रुद्रभक्ताश्च पूज्यते	१.६.३०
रथजित्सत्यजिच्चैव	१.५५.६५	राजसं तामसं वापि	१.८८.३२	रुद्रभक्तिविहीना ये	२.६.७३
रथश्च हेमच्छ्रवं च	१.४४.४३	राजा राज्योदयः कर्ता	१.६५.६२	रुद्ररुद्रेति रुद्रेति	२.६.२०
रथांगं दक्षिणं सूर्यो	१.७२.३	राजा क्षणादहोनष्टं	२.८.२७	रुद्रलोकं गमिष्यति	१.२३.१८
रथिनश्चर्मिणश्चैव	१.७०.३०७	राजा निरस्तः क्रूरेण	२.१.६१	रुद्रलोकं गमिष्यति	१.२४.२३
रथेन किं चेषुवरेण तस्य	१.७२.९६	राजी सुदर्शना चैव	१.८६.८०	रुद्रलोकं गमिष्यति	१.२४.२०
रथेनानेन देवैश्च	१.५६.३	राज्यं पुनं धनं भव्य.	१.१०८.१७	रुद्रलोकं गमिष्यति	१.२४.२७
रथे सुसंस्थितं देवं	१.७६.५३	राज्यं स्वर्गं च मोक्षं च	१.१०७.१३	रुद्रलोकं गमिष्यति	१.२४.१३३
रथैर्नार्गैर्हयैश्चैव	१.४४.५	राज्येऽभिषिद्य तं पित्रे	१.६६.९	रुद्रलोकं स्मृतस्तस्मात्	१.२३.३६
रथैश्च विविधाकारै०	१.७१.३०	राज्यैश्वर्यं च विज्ञानं	१.८५.८६	रुद्रलोकमनुप्राप्य	१..३३.८
रथो रथी देववरो हरिश्च	१.७२.१५६	रात्रौ चेन्द्रधनुः पश्ये.	१.९१.२४	रुद्रलोकमनुप्राप्य	१.७७.१९
रथ्यं ह्यविरलच्छाय	१.५१.७	रात्रौ रात्रौ गृहे यस्मिन्	२.६.३९	रुद्रलोके स्थितो नित्यं	१.८२.८६
रथ्यस्तु पंचमस्त्र	१.४७.५	रात्रौ सर्वे प्रलीयते	१.४.४	रुद्रव्यूहस्य मध्ये तु	२.२७.५५
राज देवी देवस्य	१.७२.८८	रामस्य च तथान्येषां	१.६९.९१	रुद्रसाधारणं चैव	१.९६.६५
राज भगवान् सोमः	१.१०७.२७	रामेश्वरं च परमं	१.९२.१४९	रुद्रस्य क्रोधजेनैव	१.९९.२०
राज मध्ये भगवान् सुराणां	१.७२.५६	रामो दशरथाद्वीरो	१.६६.३५	रुद्रस्यापि तनुर्जेया	२.१३.२५
रविर्विरोचनः स्कंधः	१.९८.८२	रामो रामश्च कृष्णश्च	२.४८.३२	रुद्राग्नि मे गोपाय	२.४५.३८
रवे रश्मिसहस्रं यत्	१.६०.१९	रावणेन हतो योसौ	१.६५.४४	रुद्राग्नि मे गोपाय	२.४५.३९
रसजातमुमारूपं	२.११.२८			रुद्राग्नि मे गोपाय	२.४५.४०
रसतन्मात्ररूपत्वात्	२.१४.२४	रुक्मवर्णं द्रुमं पश्ये.	१.९१.५	रुद्राग्नि मे गोपाय	२.४५.४१
रसमात्रास्तु ता ह्यापो	१.७०.३५	रुक्मिणी सत्यभामा च	२.२७.७२	रुद्राणां देवदेवेशं	१.५८.७
रसो रसज्ञः सर्वाः	१.९८.१५९	रुक्मेषुः पृथुरुक्मश्च	१.६८.३३	रुद्राणी रुद्रमाहेदं	१.१०.३९
रसोल्लासा कृते वृत्ति.	१.८९.९७	रुक्मेषुरभवद्राजा	१.६८.३४	रुद्रादित्यवसूनां	२.४६.२
रहस्यं वः प्रवक्ष्यामि	१.७.१	रुचकश्च वृक्षः पुत्र.	१.६६.१४	रुद्राध्यायेन ते देवा	२.१७.८
		रुचिकेश्वरकं चैव	१.९२.१६७	रुद्राध्यायेन पुण्येन	१.३०.३
रा		रुचेः प्रजापतेः सोथ	१.७०.२७८	रुद्राध्यायेन वा सर्वं	२.२८.९२
राक्षसघ्नोऽथ कामारि.	१.६५.१२३	रुदंतं पुत्रमाहेदं	१.६२.८	रुद्राध्यायेन वा सर्वं	२.४७.३३
राक्षसा नापराध्यंति	१.६४.१०९	रुद्रः पशुपतिश्चासीत्	१.७०.३४६	रुद्राध्यायेन विधिना	२.२७.२५९
राक्षसा नाम ते यस्मात्	१.७०.२२६	रुद्रः पशुपतिश्चैव	१.७२.४३	रुद्राध्यायेन सर्वेश	२.१८.६६
राक्षसानामभावाय	१.६४.७३	रुद्र इत्युच्यते देवैः	२.१३.१३	रुद्राय कालरूपाय	२.२७.२९
राक्षसो रुधिरो नाम	१.६४.२	रुद्रकोपाग्निना देवाः	१.३६.७३	रुद्राय मूर्धनिकृतनाय	१.७२.१६२
रागलोभात्मको भाव.	१.३९.२४	रुद्रक्षेत्राणि दिव्यानि	१.४९.४५	रुद्राय रुद्रपतये	१.७१.१६०
रागा रंगवती श्रेष्ठ	२.२७.२०१	रुद्रक्षेत्राणि दिव्यानि	१.४९.४९	रुद्रार्चनरता नित्यं	१.४६.४८
राघवः सानुजश्चापि	१.२९.३४	रुद्रक्षेत्रे मृताश्चैव	१.४७.१६	रुद्रश्च शूलमादित्या	१.१०२.३५
राजतं कमलं चैव	१.८४.१२	रुद्रनेत्राय विद्वहे	२.४८.१९	रुद्रेण नीलरुद्रेण	१.२७.४१
राजतं वापि कमलं	१.८१.२७				

रुद्रेण पवमानेन	१.२५.२३	लक्ष्मीवृक्षमयं लक्ष्मी.	१.७४.८	लिंगानि कल्पयित्वैवं	१.७४.१
रुद्रे देवे मयात्यंतं	१.९२.७५	लक्ष्म्या देव्या ह्यभूदेव	१.७०.६४	लिंगार्चकश्च षण्मासा.	२.२४.३८
रुद्रेभ्यो मातृगणेभ्यो	२.२६.२४	लक्ष्म्याद्यानां बिल्ववने	१.४९.६०	लिंगार्चनं यस्य नास्ति	२.६.४०
रुद्रे रुद्रं तमीशाने	२.२१.५८	लज्जायां विनयः पुत्रो	१.७०.९६	लिंगार्चनरता नित्यं	१.२४.१३४
रुद्रैकादशमंत्रस्तु	२.३७.११	लब्धं शशिप्रभं छत्रं	१.४४.४०	लिंगार्चनं विना निष्ठा	१.२४.१४८
रुद्रोपरि महादेवः	१.७४.२०	लब्धदृष्ट्या तया दृष्ट्वा	१.३१.४६	लिंगार्चनविधौ सक्तं	१.६४.८४
रुधिराज्यार्द्र्नैऋत्यै	२.२७.२५२	लब्धुपत्रः पिता रुद्रात्	१.४२.१४	लिंगेस्मिन् संस्थितः श्वेत.	१.३०.१८
रु		लब्धवान् गाणपत्यं च	१.६५.५०	लिखितो भास्करः पश्चात्	१.६५.१५
रुपं तथैव विशतः	१.७०.४४	लब्धवान् देवदेवस्य	१.६५.११	ली	
रुपं त्वाष्ट्री स्वदेहात्	१.६५.१२	लब्धवान् परमेशाना.	२.८.१२	लीलयैव महासेनः	१.१०१.३०
रुपं वाहेयमित्युक्तं	१.८६.१३४	लब्धवान् भगवांशचक्रं	१.६५.१७	लीलांबुजेन चाहत्य	१.७१.१२१
रुपकथ्यानं कृत्वा	२.२४.२५	लब्धायामपि भूमौ च	१.९.६	ले-लौ	
रुपतन्मात्रकं देवं	२.१४.२३	लब्धे नाभिप्रदेशेन	१.२०.४७	लेभे स पुरुषः पल्नी	१.७०.२७२
रुपा चतुर्थायोगा च	२.२७.२२६	लब्धो हारश्च परमो	१.४४.४२	लैंगमेकादशविधं	१.३९.६४
रुपे ते गदिते शंभो	२.१५.११	लब्ध्वा पंचाक्षरं चैव	२.८.२९	लोकं चचार हृष्टात्मा	२.६.९
रुपोपादानचिंता च	२.९.२४	लब्ध्वाभिषेकं संप्राप्तो	२.२८.८	लोककर्ता पशुपति.	१.६५.१०१
रे-रौ		लब्ध्वा रथांगं तेनैव	१.९८.१९	लोककर्ता भूतपति:	१.९८.४९
रेखांकितकटिग्रीवं	२.५.९९	लब्ध्वासनानि विधिवद्	१.८.७८	लोकनाथ परानंद	२.५.३९
रेवती प्रथमा घोरा	२.२७.९२	लब्ध्वा ससर्ज सकलं	१.६.१९	लोकपालांस्तथास्त्रेण	२.२१.३१
रेवती यस्य सा कन्या	१.६६.४९	लभते नात्र संदेहः	१.८४.१८	लोकपालादिदैवत्यैः	२.४७.१५
रैथस्य रैथ्या विजेया	१.६३.५२	लयनाल्लिंगमित्युक्तं	१.१९.१६	लोकपालाष्टकदिव्यं	२.४३.१
रोगैनानाविधैर्ग्रस्ता	१.८६.३८	लयश्चैव तथान्योन्यं	१.३.३५	लोकपालैस्तथा सिद्धैः	१.८४.६९
रोचते मे सदा वासो	१.९२.४२	ललाटमध्यं निर्भिद्य	१.४०.९	लोकपालोत्तर्हितात्मा	१.९८.६०
रोचनाद्यैश्च संपूज्य	१.७९.१५	ललाटमस्य निर्भिद्य	१.४१.२५	लोकपालोपरिष्टातु	१.५४.४
रोचमानस्य रेवोऽभू-	१.६६.४८	ललाटाक्षो विश्वदेहः	१.९८.८०	लोकबंधुलोकनाथः	१.९८.१३१
रोदनात् खलु रुद्रत्वं	१.२२.२४	ललाटे कारयेत्पुङ्ड.	२.४१.३	लोकान्तकश्च दीप्तास्यो	१.१०३.२९
रोधिनी क्षोभिणी बाला	२.२७.१८९	ललाटे देवदेवेशं	२.२३.३०	लोकान् प्रकल्पयित्वाथ	१.७०.१३८
रोहिणी च महाभागा	१.६९.४४	लवश्च सुमहाभागः	१.६६.३८	लोका येनैव तिष्ठति	२.१६.१३
रौद्रे गोप्रक्षके चैव	१.१.३	ला		लोकालोकद्वयं किंचि.	१.७०.६६
ल		लावण्ययुक्तं वृणुया.	२.५.७१	२.९.४५	
लंघने समयानां तु	१.८९.४५	लि		लोके सातिशयत्वेन	१.९८.१२५
लंपटा पत्रगा देवी	२.२७.२२३	लिंगं तु द्विविधं प्राहु-	१.७५.१९	लोकोत्तरस्कुटालोक	१.२३.९
लंबोदरश्च लंबश्च	१.७.४३	लिंगप्रतिष्ठापुण्यं च	१.७७.१	लोहिताक्षी स्तनवती	२.२५.४४
लंबोदरश्च लंबाक्षो	१.२४.५४	लिंगमाच्छाद्य वस्त्राभ्यां	२.४७.२८	लौकिकाम्नौ महाभाग	
लक्ष्मी जप्त्वा ह्यधोरेभ्यो	१.१५.७	लिंगमूर्ति महाज्वाला.	१.७६.५९	व	
लक्ष्मी सप्तसहस्रं हि	१.४५.१५	लिंगवेदिसमायोगा.	१.९९.८	वंदिभिः स्तूयमाना च	१.१०२.२५
लक्ष्मात्रं पुमाञ्जप्त्वा	२.५०.१३	लिंगस्तु भगवान् द्वाभ्यां	१.९९.७	वंशस्य चाक्षया विद्या	२.५५.४३
लक्ष्मीः सर्वगुणोपेता	१.८२.१०६	लिंगस्थापनसन्मार्गः.	१.७४.२५	वंशाच्च बृहदश्वोभूत्	१.६५.३५
लक्ष्मीः साक्षाच्छ्वची ज्येष्ठा	१.४२.२३	लिंगस्थापनसन्मार्गः.	१.४६.१४	वंशे त्रिगिरसां श्रेष्ठे	१.२४.६४
लक्ष्मीदानं प्रवक्ष्यामि	२.३६.१	लिंगस्याराधनं स्नानं	१.२.१७	वकुं मया सुरेशानि	१.१०३.७४
लक्ष्मीर्धतिःस्मृतिः प्रजा	२.४६.१७	लिंगाध्यक्षः सुराध्यक्षः	१.६५.९९	वकुमर्हसि चास्माकं	१.८१.२
				वकुमर्हसि चास्माकं	१.९३.२

वक्तुमर्हसि चास्माकं	१.९७.२	वदंत्यव्यक्तशब्देन	२.१५.२५	वर्णाच्युतानां नारीणां	१.१०५.१८
वक्तुमर्हसि चास्माकं	२.६.२	वदंति प्रियमत्यर्थ	१.२०.४०	वर्णश्रिमगुरुर्वर्णी	१.९८.५५
वक्तुमर्हसि देवेश	१.२९.६९	वदामि न मृषा तस्मा०	१.३६.४०	वर्णश्रिमपरिभ्रष्टाः	१.४०.७१
वक्त्रमानय कृतिं च	१.९६.१५	वदामि पृथगध्याय०	१.६.१०	वर्णश्रिमप्रतिष्ठां च	१.३९.५०
वक्षः स्थलेस्य पश्यामि	२.५.१०७	वदेयदि महामोहा०	१.८५.१७७	वर्णश्रिमप्रतिष्ठा नो	१.४०.१०
वक्ष्यंति सततं हृष्टा	२.६.२३	वधं प्राप्तो सहायश्च	१.६९.१५	वर्णश्रिमविधानोक्तं	१.८५.१३३
वक्ष्यामि ते महेशस्य	२.१३.२	वनानां प्रथमं वृष्ण्या	१.४०.८२	वर्णश्रिमविनिर्मुक्ता	१.२८.३३
वक्ष्यामि वो हितं पुण्यं	१.३३.३	वनानि वै चतुर्दिक्षु	१.४९.३५	वर्णश्रिमव्यवस्था च	१.३९.१९
वक्ष्यामि शृणु संक्षेपा०	१.२७.१	वने तं पुरुषं दृष्ट्वा	१.२९.१२	वर्णश्रिमव्यवस्था च	१.८९.९५
वक्ष्ये संक्षेपतः सम्यक्	१.९२.३	वनोटजद्वारगताश्च नार्यो	१.२९.१२	वर्णश्रिमव्यवस्थाश्च	२.१७.६
वचनं कुरुते वाक्यं	२.१०.१६	वमेत्मूर्त्रं पुरीषं च	१.९१.४	वर्णश्रिमाचारयुतं	१.४०.७९
वचनाद्वा० महाभागाः	१.९९.६	वयं पुराणि त्रीण्येव	१.७१.१५	वर्तते त्वस्कृद्वृत्तिः	१.१०.२०
वज्रं कृत्वा विधानेन	२.५१.३	वरं प्राणपरित्याग०	२.२१.७७	वर्तते नात्र संदेहः	१.१०२.८
वज्रं क्षेप्तुं न शशाक	१.१०२.३२	वरदं दक्षिणं हस्तं	२.२२.५४	वर्तमानव्यतीतानि	१.७०.२३
वज्रं शक्तिं च दण्डं च	२.२७.७४	वरदानाय हस्तं च	२.२६.२१	वर्तमानस्तदा तस्य	१.८६.६९
वज्रकोटिप्रभे स्थाने	१.८.१००	वरदानेन शुक्रस्य	१.६७.१०	वर्तमानानि दुःखानि	१.८६.३४
वज्रपाणिर्महादेवः	२.११.८	वरदाभयहस्तं च	१.७६.३६	वर्तमानानि सवाणि	२.१०.४५
वज्रवाहनिका नाम	२.५१.२	वरदाभयहस्तं वा	२.२३.११	वर्तयंति स्म तेष्यस्ता.	१.३९.२३
वज्रवैदूर्यमाणिक्य०	१.८०.१६	वरदाय वरेण्याय	१.२१.३५	वर्तितं तु तदर्थेन	२.२७.४२
वज्रादिकायुधोपेतैः	२.४७.१६	वरदायैकपादाय	१.९६.९१	वर्तुलं चतुरस्तं वा	१.३१.१६
वज्रादीनां च होतव्यं	२.२८.६०	वरदो वाङ्मयो वाच्यो	१.७१.१०३	वर्धन्यां स्थायेदेवीं	२.४७.३८
वज्रावर्तपर्यता०	२.२५.७७	वरदोहं वरश्रेष्ठ	१.९८.१७९	वर्धन्यामपि यत्नेन	२.४७.३९
वज्राशनिरिव स्थाणो	१.९६.६०	वरयामास च तदा	१.१०७.६२	वर्धन्यामपि यत्नेन	२.४९.३७
वज्रास्थित्वं कथं लेभे	१.३५.२	वरलाभमशेषं च	१.९३.३	वर्येश्वरं पश्चिमे तु	१.५५.७६
वज्रिणं वज्रदंष्ट्रं च	१.४२.१८	वरशीलो वरतुलो	१.९८.१३५	वर्षतश्च तपंतश्च	१.४७.१०
वज्रिणे वज्रदंष्ट्राय	१.७१.१५७	वरार्थमीश वीक्ष्य ते	१.१०५.४	वर्ष माल्यवतं चापि	१.२६.३०
वडवा च तदा त्वाष्ट्री	१.६५.१४	वराहपर्वतश्चैव	१.४९.५६	वर्षकोटिशतेनापि	२.२६.३०
वडवानलशत्रुयो	१.८२.८५	वराहायाप्रमेयाय	१.२१.२३	वर्षत्रियं प्रतिदिनं	१.६९.२३
वडवाया मुखं भग्नं	१.९७.२८	वरीयान् वरदो वंद्यः	१.९८.२९	वर्षमेकं तु भुजानो	१.८३.४
वत्सः शुचिः प्रस्तवणे	१.८९.६८	वरुणः सलिलैलोकान्	२.१०.३१	वर्षमेकं तु भुजानो	१.८४.७
वत्सपुत्रो महापुत्रो	२.२७.११६	वरुणश्च तथैवान्यः	१.५५.३५	वर्षते सर्वगंधाढ्यां	१.८४.१७
वत्सरश्चासितश्चैव	१.६३.५१	वरुणश्चैव वायुश्च	१.३५.६	वर्षाणां तच्छतं ज्ञेयं	१.४.२२
वत्स वत्स महाभाग	१.४२.२९	वरुणासुरयोर्मध्ये	२.२७.५७	वर्षाणां तत्र जीवंति	१.५२.१८
वत्साः किमिति वै देवा०	१.९८.६	वरुणो वायुसोमौ च	१.८२.४६	वर्षाणामष्टसाहस्रं	१.४.४३
वदंति केचिदाचार्याः	२.१५.१०	वर्जयेत्सर्वयत्नेन	१.८९.३८	वर्षे तु भारते मृत्याः	१.५२.२५
वदंति मुनयः केचित्	१.७५.६	वर्जयेत्सर्वयत्नेन	१.८९.५५	वल्कलानां तु सर्वेषां	१.८९.५७
वदंति मूढाः खद्योतं	२.६.६१	वर्जयेत्सर्वयत्नेन	१.८९.१०६	वल्मीकेनावृतांगश्च	१.४२.३
वदंति वाचः सर्वज्ञं	२.१८.२९	वर्णजातिसमापेतं	२.२८.५०	वर्वंदिरे नंदिनमिंदुभूषणं	१.७२.१२०
वदंति वेदशास्त्रज्ञा०	२.१२.३७	वर्णः षडधिकाः षष्ठि.	१.१७.८८	वर्वंदे देवमीशानं	१.१६.६

ववर्षुसदा पुष्करावर्तकाद्या	१.४२.१६	वाच्यवाचकभावेन	१.८५.३४	वायुना प्रेर्य तद्दस्म	२.२६.१०
ववृषुश्च सुगंधाद्यं	१.७१.१५०	वाच्यवाचकभावेन	१.८५.३५	वायुर्भस्मेति च व्योम	१.७३.१७
वशित्वं कथितो व्यूहः	२.२७.१२६	वार्णी दिव्यां महाघोष.	२.३.६	वायोः सोमस्य यक्षस्य	२.४६.४
वशित्वमथ सर्वत्र	१.८८.१०	वातवेगरवा घोरा	२.२७.१३८	वायर्यष्टि कुबेरस्य	१.८४.६२
वसंति ग्रीष्मकौ मासौ	१.५५.४९	वानराननवद्वाति	२.५.७३	वायोश्चैव तु रुद्रस्य	१.४८.२५
वसंति देवा मुनयः	१.४९.५९	वापीकूपतडागाश्च	१.७७.५३	वाराणसी कुरुक्षेत्र.	१.९२.७
वसंति सर्वदेवाश्च	१.६१.८	वापीकूपतडागैश्च	१.७१.२९	वाराणसीमनुप्राप्य	१.९२.६
वसंते कपिलः सूर्ये	१.५९.३९	वामतपुरुषाघोर	१.१०.४७	वाराणस्यां कृतं पापं	१.१०३.७६
वसंते चैव ग्रीष्मे च	१.५९.३०	वामत्वाच्चैव देवस्य	१.२३.१०	वाराणस्यां मृतो जन्तु.	१.७७.४१
वसंते तु वै सूर्ये	१.५५.५८	वामदेवं ततो ब्रह्मा	१.१२.५	वाराहः सांप्रतं ज्ञेयः	१.७.२९
वसवस्ते समाख्याताः	१.६३.१९	वामदेव नमस्तुभ्यं	१.१६.११	वाराहमसितं रूप.	१.१७.४३
वसिष्ठकोपात् पुण्यात्मा	१.६६.८	वामदेवश्च भगवान्	१.८२.६	वाराहमहमप्याशु	१.१७.३८
वसिष्ठयाज्यं विप्रेद्रा.	१.६४.३	वामदेवादिभिः सार्थ	२.२१.८	वाराहरूपमनधं	१.९४.४८
वसिष्ठाय च शिष्टाय	२.४५.३	वामदेवाय ज्येष्ठाय नमो	२.२७.२४७	वाराहविग्रहस्तेष्य	१.९४.२७
वसिष्ठाश्चेत्यमाश्रित्य	१.६४.४२	वामदेवेन भस्मांगी	२.२१.३४	वाराही चैव तां सैंही	१.९५.२५
वसुत्रवाः कव्यवाहः	१.९८.१०५	वामदेवेन मंत्रेण	१.२७.३०	वारुणं पुरतः कृत्वा	१.२५.९
वस्त्रपूतेन तोयेन	१.७८.१	वामदेवो महादेवं	१.९८.३३	वारुणेन च ज्येष्ठेन	१.२७.४३
वस्त्रयुग्ममयोष्णीषं	२.२८.८०	वामनाख्यं ततः कूर्म	१.३९.६३	वार्ता कृष्णं समायाता	१.३९.४६
वस्त्राणि च प्रधानस्य	२.४७.४६	वामनासापुटेनैव	२.२२.२०	वार्ता च दिव्यगंधानां	१.९.२९
वस्त्रणि ते प्रसूयंते	१.३९.२७	वामप्रियाय वामाय	१.२१.७०	वार्ता तृतीया विप्रेद्रा.	१.९.१५
वस्त्रैरामरणैर्दिव्यै.	२.४३.६	वामां रौद्रीं महामायां	१.४१.४५	वार्तायाः साधिकाऽप्यन्या	१.३९.३७
वह्निः समीरणश्चैव	१.४१.३	वामा ज्येष्ठा च रौद्री च	२.२१.६	वालखिल्यगणं चैव	२.२२.६४
वह्निनी वह्निनाभा च	१.२७.७८	वामादयः क्रमेणैव	२.२७.२६	वालखिल्या नयंत्यस्तं	१.५५.२९
वह्नेहस्तद्वयं छित्वा	१.१००.१९	वामादिभिश्च सहिते	२.२६.१४	वासन्तिकस्तथा ग्रैष्मः	१.५५.२४
वहेश्चैव तु संयोगात्	१.४१.२६	वामाद्याः पुष्पलिंगं तु	१.७४.९	वासवत्वं च युष्माकं	१.९७.९
वहौ विधूमेऽत्यगारे	१.८९.१२	वामाय वामदेवाय	१.१८.४	वसिष्ठस्तुं यदा व्यासः	१.२४.११५
वह्यात्मा भगवान् देवः	२.१.३७	वामेतरं सुविन्यस्य	१.७६.५०	वासुदेवनियुक्तोऽसौ	२.३.१००
वा					
वाकारो नेत्रमस्वं तु	१.८५.७६	वामेन तीर्थं सव्येन	२.२२.५	वासुदेव हृषीकेश	२.५.१४१
वागीश्वरवागीश्वरी	२.२५.७८	वामे पाश्वें च मे विष्णु.	१.१९.३	वासुदेवेति नियत	२.७.१९
वागीश्वरीं पूजयामि	२.२५.६९	वामे पाशं भवान्याश्च	१.८४.५९	वासोयुगं तथादिव्यं	१.४४.२५
वाग्वृषाय नमस्तुभ्यं	१.२१.१९	वायवे वायुवेगाय	१.१८.७	वाहनत्वं तवेशान	१.७२.१७४
वाह्मनःकर्मजैर्दुर्खैः	१.३९.६७	वायवो नाडिमध्यस्था	१.८६.८२	वाहेय-तृतीयेन	२.२४.८
वचःश्रवा मुनिः साक्षात्	१.७.१७	वायव्यं च तथेशानं	२.३.८५	वाहेये कालरुद्राख्ये	१.८६.१२८
वाचःश्रवा ऋचीकश्च	१.२४.८९	वायव्यचतुर्थेन	२.२४.९	वि	
वाचःश्रवा: सुधीकश्च	१.७.४६	वायव्यां सगणैः सार्थ	१.७२.६३	विंशतिश्च सहस्राणि	१.४.२९
वाचःश्रवा: स्मृतो व्यासो	१.२४.१०	वायव्यैश्च तथाग्नेयैः	१.९८.१२	विंशतिश्च सहस्राणि	१.४.३२
वाचस्पतिमुखानाह	१.९८.१७	वायुः संभवते खातु	१.८८.५३	विंशतिश्च सहस्राणि	१.४.३५
वाच्यःपंचाक्षरैर्देवि	१.८५.१६	वायुः सोमस्तथोशानः	१.९५.८	विकराली कराली च	२.२७.१५६
		वायुः सोमस्तथेशानो	१.१०२.१९	विकरो मणिशैलश्च	१.४९.४२

विकर्तनो विवस्वांशच	१.८२.४२	वित्तशाठ्यं न कुर्वाति	१.८५.९०	विपर्ययेण चौषध्यः	१.३९.४४
विकारस्य शिवस्याज्ञा	१.४.५१	वित्तेशानिलयोर्मध्ये	२.२७.५८	विपर्ययेण भूतादि.	१.७०.१६२
विकीर्यं गंधकुसुमै०	१.७७.१०२	विदग्धश्च विचित्रश्च	२.२७.१२०	विषाक्ते: कर्मणां वापि	२.९.४०
विकृतं रूपमास्थाय	१.२९.९	विदितं नास्ति वेदं च	१.८६.९८	विपुलः पश्चिमे पाश्वे	१.४९.२८
विकोशश्च विकेशश्च	१.२४.२२	विदुर्भवार्णीं रुचिरां	२.११.१५	विप्राणां कर्मदोषेण	१.४०.५
विग्रहं देवदेवस्य	१.८७.२०	विद्यहे पुरुषायैव	२.२७.४८	विबुद्धो विबुधः श्रीमान्	१.८२.५८
विघ्नं गणेशोऽप्यसुरेश्वराणां	१.७२.६५	विद्यते तत्परं शैवं	१.९.५१	विबुधाग्रवरः श्रेष्ठः	१.९८.१२०
विघ्नं हरिष्ये देवेशः	१.७२.४७	विद्यतेपि च सर्वत्र	१.७०.२५	विबुधाग्र्यः सुरः श्रेष्ठः	१.६५.१६४
विघ्नेशो मातरो दुर्गा	१.८५.७७	विद्यातयेति यस्तस्मा०	२.१८.२०	विमुक्तत्रिवलीव्यक्तं	२.२५.१००
विचारणाच्च वैराग्यं	१.३९.६८	विद्याधराणां विप्रेद्रा	१.५०.१३	विभजस्वेति विश्वेशं	१.९९.१२
विचारतः सतां दुःखं	१.८६.२३	विद्यानां प्रभवे चैव	१.२१.१७	विभज्यमानसलिला	१.५२.९
विचारमुग्ध तव गर्भमंडलं	१.६४.३१	विद्यानासा खग्रासिनी	२.२७.२१२	विभीतकार्कारंज०	१.८५.१४७
विचित्रवस्त्रभूषणै०	१.१०५.१२	विद्यार्थीं लभते विद्यां	१.८१.५४	विभीतकेन वै कृत्वा	२.५०.३१
विचित्रैर्नृत्यगेयैश्च	१.८४.५४	विद्युज्जिह्वाव महाजिह्वा	२.२७.१९०	विभुनामा महातेजाः	१.२४.३६
विजातिश्चेति षडिमे	१.६६.६२	विद्युतोऽशनिमेघांशच	१.७०.२४७	विभुश्चानुग्रहं तत्र	१.३८.११
विजातात्मा विधेयात्मा	१.९८.४७	विद्युत्कोटिनिमे स्थाने	१.८.९९	विभूतयश्च रुद्रस्य	१.२८.२०
विजित्य विष्णुं समरे	१.९९.९१	विद्युत्कोटिप्रतीकाश०	१.७२.१२५	विभूतिर्भोगदा क्रांतिः	२.२७.१४१
विजित्य विष्णुना सार्धं	१.१००.१	विद्युद्वलयसंकाशं	२.२१.२९	विभूतीः शिवयोर्महां	२.११.१
विज्ञप्ति ब्रह्मणः श्रुत्वा	१.१०६.८	विद्युन्महाबलश्चैव	२.२७.१२७	विभूषिता गौरवर्णा	२.२७.२३१
विज्ञातः स्वेन योगेन	१.२३.११	विद्युन्माली तारकाक्षः	१.७१.९	विभो रुद्र महामाय	१.२२.६
विज्ञातोऽहंत्वया ब्रह्मन्	१.२३.२०	विद्युन्मालेश्चायसं वै	१.७१.२१	विभोर्यतध्वमाक्रृष्टुं	१.१०१.२७
विज्ञानानि च यन्त्राणि	१.४८.३४	विद्येश्वराणां कुंभेषु	२.४७.४१	विमलस्वादुपानीये	१.५१.५
विज्ञानेन तनुं कृत्वा	२.२३.४	विधाता सर्वलोकानां	२.१५.२४	विमला ब्रह्मभूयिष्ठा	१.७.५२
विज्ञानेन निवृत्तास्ते	१.७०.१७५	विधिना चैव कृत्वा तु	१.७४.२७	विमला ब्रह्मभूयिष्ठा	१.२४.१०७
विज्ञाप्यामास कथं	२.२८.९	विधिना शास्त्रदृष्टेन	१.९.१५	विमलासनसंस्थाय	१.७२.१४६
विज्ञाप्य शितिकंठाय	२.८.११	विधिवद्ब्रह्मयज्ञं चे	१.२६.३१	विमाने च स्थिता दिव्ये	१.५५.७५
विज्ञाप्यैवं तदा ब्रह्मा	१.१०२.४८	विनाकाशं जगत्रैव	१.२८.१६	विमानेनार्कवर्णेन	२.३.५१
विज्ञाप्यैवं विसृज्याथ	२.२६.२५	विनाधिपत्यं समतां	१.१७.८	विमाने विमले चित्रे	२.१.४८
विज्ञेयस्तामसो नाम	१.८८.७०	विना यथा हि पितरं	१.२८.११	विमानैर्विश्वतो भद्रै०	१.१००.६
विज्ञेयास्तारकाः सर्वा०	१.६१.२६	विनियो यत्र भगवान्	२.६.३३	विमुक्तिर्विधिनानेन	२.१८.५५
विटपनिचयलीनं नील-		विनिधनसर्वभूतानि	१.४०.५९	विमुख्यो विगुणत्यागो	१.१६.२४
कंठाभिरामं	१.९२.१९	विनियोगं च भूतानां	१.७०.२५४	विमोचनस्तु शरणी	१.६५.८३
विह्वराहैश्च चांडालै०	१.८५.२१६	विनियोगं वदस्वास्या	२.५२.२	विमोहावां स्वयं बुद्ध्या	२.५.१२३
विष्मूत्रोत्सर्गकालेषु	१.८.२२	विनियोगः स विजेयः	१.८५.१८५	विरजा च घृतेनैव	२.४५.७२
वितलं चात्र विख्यातं	१.४५.२०	विनिवृते तु संहारे	१.१६.२	विराजारविंदस्थः	१.२०.३२
वितलं दानवाद्यैश्च	१.४५१९	विनेदुरुच्चमीश्वराः	१.३०.२३	विराजेतामुभौ लोके	१.७०.१९३
वित्स्तिमात्रमायामं	२.३३.६	विन्यसेत्सर्वमंत्राणि	२.४७.४४	विराङ् हिरण्यगर्भात्मा	२.१६.११
वितानध्वजवस्त्राद्यै०	१.८४.४९	विपरीता निपेतुर्वं	१.२९.२१	विरामा या च वागीशी	२.२७.२१४
वितानेनोपरिच्छाद्य	२.२८.३६			विरिचोच्छ्वासजाः सर्वे	१.५४.४९

विरूपाक्षय लिंगाय	१.२१.४३	विश्वामित्रस्य कण्वस्य	१.६९.८५	विष्णोर्नामिविहीना ये	२.६.३६
विरूपाक्षेण स्कंदेन	१.२७.४५	विश्वेदेवाश्च साध्याश्च	२.४६.२०	विष्णोर्मार्याबलं चैव	१.७१.११८
विरोचनः सुरगणो	१.९८.७४	विश्वेदेवास्तथा रौप्यं	१.७४.३	विष्णोर्महात्म्ययुक्तस्य	२.३.१९
विरोचन-हिरण्याक्ष०	१.४५.१७	विश्वेदेवास्तु विश्वायाः	१.६३.१६	विष्णोर्योगबलात्तस्य	१.१००.२५
विललापातिदुःखार्तः	१.४३४	विश्वेश्वर महादेव	१.३१.३६	विष्णोर्वरायुधावापि०	१.२.५२
विलोक्य संस्थितेः पश्चात् ०	१.९२.१०९	विश्वेश्वरांतं वै विद्या	२.२१.४८	विसृज्य सप्तकं चादौ	१.६.३
विवस्वान् दशभिर्याति	१.५९.३७	विश्वेश्वरान् यथाशास्त्रं	२.३४.२	विस्तरानुग्रहः सर्गः	१.७०.१६८
विवस्वान् श्रावणे मासि	१.५९.३४	विश्वोष्णीष विश्वगंधा	१.१६.४	विस्तरेण मया वक्तुं	१.९२.४
विवस्वान् सविता पूषा	१.६३.२६	विषमश्च तदा बाह्यो	१.७२.२१	विस्वरस्तु महान् प्रजा	१.८.६८
विवादव्याकुलास्ता वै	१.३९.३६	विषमाक्षः कलाध्यक्षो	१.९८.१३९	विस्वरो विस्वरो भावो	१.८.७०
विविशुर्द्वदयं सर्वे	१.९२.११७	विषयाणां च पंचानां	१.८५.२२२	विस्वरो मंडले पूर्वे	२.१९.१५
विवृत्तास्यांजलि कृत्वा	२.२२.६०	विषयान् विषवत्यक्त्वा	१.७७.२२	विस्तरान्मंडलाच्चैव	१.४८.३५
विश भूम्य गृहं तेषां	२.६.६२	विषयासक्तचित्तोपि	१.९२.६३	विस्तरान्मंडलाच्चैव	१.५३.२८
विशाखासु समुत्पत्रो	१.६१.४१	विषयेषु विचित्रेषु	१.९९.१२	विस्तरान्मंडलाच्चैव	१.५७.१५
विशालजघनाः सद्यो	१.८०.२०	विषयेषु समासेन	१.८.४२	विस्तारामुत्तरां देवीं	२.१९.३०
विशालशाखस्ताञ्छोषो	१.६५.११९	विषसर्पस्य दंतानि	२.५०.४०	विस्तीर्ण परिणाहश्च	१.२१.२९
विशिष्टः काश्यपो भानु०	१.९८.८७	विषादो विषदश्चैव	१.१०३.३०	विस्तीर्ण मंडलं कृत्वा	१.५७.२९
विशिष्टा बलवंतश्च	१.६९.६६	विष्कंभान्मंडलाच्चैव	१.६१.३३	विस्तीर्ण परिणाहश्च	१.२१.७४
विशिष्टान् हरिकेशांश्च	१.७०.३०६	विष्कंभमष्टमात्रं तु	२.२८.३१	विस्फुलिंगा यथा ताव.	२.११.२३
विशेष एव कथित	२.४५.८४	विष्टंभोष्टाभिरेवेह	१.१०३.१७	विस्फुलिंगा विलिंगा च	२.२७.२००
विशेषादेवदेवस्य	२.६.७६	विष्णुचिह्नसमाप्त्रै.	२.१.४५	विहारं कुरुते पादो	२.१०.१६
विशेषादुदभक्ताना०	१.३६.२८	विष्णुना कथितैर्वापि	२.२८.९३	विहिताकरणाच्चैव	१.८६.४१
विशेषाश्चेद्रिवयग्राहा	१.७०.४९	विष्णुना जिष्णुना साक्षा.	१.८१.४२	वी	
विशोकरच विकेशश्च	१.७.३८	विष्णुना रावणं हत्वा	२.११.३८	वीणाजः किन्नरश्चैव	१.८२.५६
विशोध्य तेषां देवानां	१.८०.५५	विष्णुनोत्पादितैर्भूतै.	१.७१.५	वीणी च पणवी ताली	१.६५.८४
विशोध्य सर्वद्रव्यैस्तु	१.९२.१७२	विष्णुभक्तमथायांतं	२.४.८	वीतदोषोऽक्षयगुणो	१.९८.१२६
विशोध्य स्थापयेदभक्त्या	२.४७.८	विष्णुभक्तस्य च सदा	२.४.१४	वीतरागो विनीतात्मा	१.९८.५६
विश्वं चैव तथा विश्वं	२.१८.६	विष्णुभक्तैर्न संदेहः	२.६.९१	वीतिहोत्रसुतश्चापि	१.६८.२०
विश्वंभरात्मकं देवं	२.१४.३०	विष्णुमायानिरसनं	१.९६.१२२	वीतिहोत्राश्च हर्यता	१.६८.१७
विश्वंभरात्मनस्तस्य	२.१३.४	विष्णुमाह जगन्नाथं	१.३६.६१	वीथ्याश्रयाणि चरति	१.५६.१
विश्वं भूतं तथा जातं	१.८७.२३	विष्णुरेव हि सर्वत्र	२.४.५	वीरभद्रः समाधाय	१.१००.३५
विश्वकर्माह्यस्तस्य	२.१२.१२	विष्णुर्ग्रहपतिः कृष्णः	१.९८.९७	वीरभद्रोपि भगवान्	१.९६.११
विश्वगोपा विश्वभर्ता	१.९८.८६	विष्णुलोकं ततो गत्वा	२.५.६५	वीरभद्रो महातेजा	१.८२.९८
विश्वतः पादवदनं	१.१७.९१	विष्णुलोकं ययौ शीघ्रं	२.१.४३	वीरभद्रो रणे भद्रो	१.७२.६१
विश्वपादगिरोग्रीवं	१.८८.३७	विष्णुलोकः स्मृतं स्थानं	१.२३.३५	वीरसेनसुतश्चान्यो	१.६६.२५
विश्वरूपः स्वयंश्रेष्ठो	१.६५.६५	विष्णुस्थले हरि तत्र	२.१.८	वीराणां चीरभद्रं च	१.५८.६
विश्वरूप महाभाग	१.२४.३	विष्णोः शक्रस्य देवस्य	२.४६.३	वीरेश्वरो वीरभद्रो	१.९८.७७
विश्वव्यच इतिख्यातः	२.१२.१३	विष्णोः स्थलं समासाद्य	२.१.११		
विश्वात्मानं हि सर्वं त्वां	१.२३.५०	विष्णो तवासनं दिव्यं	१.२६.१३	वृद्दशस्तं समावृत्य	१.७२.८३
विश्वाधिकः स्वतन्त्रश्च	१.९६.३३	विष्णोराजां पुस्कृत्य	१.६२.४०	वृक्षस्य मूलसेकेन	२.१२.६
विश्वामित्र ऋषिस्त्रिषुप्	१.८५.५१	विष्णोरैत्तानपादेन	१.५४.३१	वृक्षास्तान्पर्यगृहणाति	१.३९.३०

वृक्षाः पुष्टादिपत्रादैः।	१.७९.२३	वेदशब्देभ्य एवेशं	१.१७.५७	वैमनिकानामप्येव	१.८६.४४
वृक्षाणां चैव चाशवत्यं	१.५८.१०	वेदशाखाप्रणयनं	१.३९.५५	वैरंभश्च तथा मुख्यो	१.८६.८३
वृतं शिष्यप्रशिष्यैश्च	१.७६.३९	वेदशास्वार्थतत्त्वज्ञः।	१.८२.९२	वैराग्यं ब्रह्मणो वक्ष्ये	१.४१.१५
वृता सहस्रकोटीभिः०	२.१.७०	वेदशीर्षश्च गोकर्णो	२.७.३३	वैराग्यैश्वर्यसंपत्ते	१.७९.१२
वृतो नंदादिभिर्नित्यं	१.८२.८७	वेदाः सर्वे दधिमयं	१.७४.११	वैराग्यैश्वर्यसंयुक्ते	२.१९.१९
वृतं तस्य निवेद्याग्रे	२.५.७७	वेदांतवेद्याय सुनिर्मलाय	१.७२.१६०	वैराजात्पुरुषाद्वीरा०	१.७०.२७५
वृत्तिभिश्चानुरूपाभिः०	१.२९.७२	वेदांतसारसंदोहः।	१.९८.३१	वैराजो वै निषादश्च	१.४.४७
वृत्रेद्र्योर्महायुद्धं	१.२.३७	वेदात् षडंगादुदृत्य	२.२०.९	वैवर्तेन तु ज्ञानेन	१.२०.९१
वृद्धिक्षयौ वै पक्षादौ	१.५६.१८	वेदाध्ययनशालाभिः०	१.७१.३१	वैवस्वतश्च सावर्णी०	१.७.२३
वृद्धो वा मुच्यते जंतु	१.८७.१७	वेदाध्ययनसंपत्ते	२.५.४७	वैवस्वतस्य सोमस्य	१.५०.१५
वृश्चिकाभरणं देवं	२.५०.२५	वेदाध्ययनसंपत्तो	२.४७.२०	वैवस्वतांतरे कल्पे	१.७.२०
वृषको वृषकेतुश्च	१.६५.११२	वेदाभ्यासरता नित्यं	२.६.२६	वैवस्वतांतरे ते वै	१.६३.२५
वृषध्वनिरिति ख्याता	१.४३.४१	वेदानां च पुराणानां	१.७.१३	वैवस्वताय विद्यहे	२.४८.२०
वृषप्रभृतयश्चान्ये	१.६८.१४	वेदानां प्रभवे चैव	१.२१.६	वैवस्वती दक्षिणे तु	१.४८.१६
वृषभं नीलवण्ठभिः०	१.८३.४५	वेदानामपि देवानां	२.५४.१९	वैवस्वतेतरे सम्यक्	१.७.३५
वृषभः पूज्य दातव्यो	२.४१.९	वेदाश्च पितरः सर्वे	१.२६.२२	वैशाखे वै चरेदेवं	१.८४.३४
वृषभारुद्धा सुश्वेतं	१.७१.१४३	वेदिकामध्यतो रंघं	२.२५.३५	वैश्यः पंचदशाहेन	१.८९.९२
वृषांकं कारयेत्तत्र	२.४१.५	वेदिमध्ये तथा कृत्वा	२.२५.३८	वैश्यानां नैव शूद्राणां	२.२०.२
वृषाग्निमातृविघ्नेश०	२.४८.४५	वेदिमध्ये न्यसेत्सर्वान्	२.४७.३४	वैश्यानामपि योग्यानां	२.१८.५४
वृषारुढं तु यः कुर्यात्	१.७६.१७	वेदिरष्टांगुलायामा	२.२५.३२	वैष्णवा इति ये प्रोक्ता	२.४.१
वृषारुढाय सर्वस्य	१.१८.३४	वेद्याय विद्याधाराय	२.२१.१७	वैष्णवान् पालयिष्यामि	२.५.४२
वृषेद्रं पूज्य गायत्र्या	२.४१.७	वेद्यो वेदार्थविद्गोप्ता	१.९८.१५२	वौ	
वृषेद्रं स्थापयेत्तत्र	२.४१.६	वेद्या धाता विधाता च	१.९८.१३६	वौषडंतं तथा मूलं	२.२२.१६
वृषेद्रूपी चोत्थाय	१.७२.३१	वेशम्भूतोऽस्य विश्वस्य	२.१८.३६	व्य	
वृष्टयः कथिता ह्यद्य	१.५४.६१	वेष्टयित्वा नवैर्वस्त्रैः।	२.३०.७	व्यक्ताव्यक्तं सदा नित्य०	१.७७.१०६
वृष्यंधकविनाशाय	१.२.४७	वै		व्यपगतमदमोहमुक्तराग०	१.३४.२३
वै		वैकारिकः ससर्गस्तु	१.७०.३९	व्यपोहंतु भयं घोर०	१.८२.६२
वैणुमांश्च समेधश्च	१.४९.४३	वैकारिकः सात्त्विको वै	१.३.२६	व्यपोहंतु भयं पापं	१.८२.६८
वैतालो रौरवश्चेति	२.२७.१२९	वैकुंठेन विशुद्धेन	१.१६.२६	व्यमोहंतु भयं पापं	१.८२.७७
वैत्स्यते मां प्रसंख्यातं	१.१२.८	वैकुंठे गरुडः श्रीमान्	१.५०.५	व्यपोहंतु मलं घोरं	१.८२.५९
वैदकारः सूत्रकारो	१.६५.१०३	वैद्वूर्यनिर्मितं लिंगं	१.८१.२२	व्यपोहंतु मलं सर्वे	१.८२.५२
वैदगर्भाय गर्भाय	१.१८.३९	वैणवी प्रणवी कालः	१.६५.८२	व्यपोहनस्तवं वक्ष्ये	१.८२.१२२
वैदघोषस्तथा विप्रः	२.६.१०	वैतृष्ण्यं पुरुषे ख्यातं	१.९.८४	व्यपोहनस्तवं दिव्यं	१.८२.१
वैदघोषो न यत्रास्ति	२.६.३८	वैद्युतोब्जस्तु विशेय०	१.५९.११	व्यपोह्य सर्वपापानि	१.८२.१२०
वैदबाह्यरताचाराः	१.७८.२१	वैद्युतो मानसश्चैव	१.४६.३९	व्यवसायो व्यवस्थानः	१.९८.७६
वैदमन्त्रप्रधानाय	१.३१.४१	वैनतेयाय विद्यहे	१.४८.१५	व्यष्टंभयददीनात्मा	१.१००.१६
वैदमाता हिरण्याक्षी	२.२७.७३	वैनायकादिभिश्चैव	१.४५.१८	व्यष्टंभयददीनात्मा	१.१००.३०
वैदविक्रियणाश्चान्ये	१.४०.४०	वैन्येन पृथुना भूमेः।	१.२.४५	व्यस्तेष्टादशाधा चैव	१.२.३
वैदशब्देभ्य एवादौ	१.७०.२५८	वैश्राजं पश्चिमे विद्या०	१.४९.३६		

व्याख्यां पूजाविधानस्य	१.२४.१	शंकरस्य परस्यैव	२.१५.१८	शतशृंगे पुरशतं	१.५०.७९
व्याप्रकुंभीनचोरेभ्यो	१.७०.३४२	शंकराय वृषांकाय	१.३१.४०	शताक्षश्चैव पंचाक्षः	१.७२.७९
व्याप्रचर्मधरो व्याली	१.९८.५३	शंकरोऽपि तदा रुद्रै०	१.६.२०	शतानि त्रीणि मासानां	१.४.१२
व्याप्ररूपं समास्थाय	१.९२.८०	शंकिनी हालिनी चैव	२.२७.९०	शतानि दशवर्षणां०	१.२०.८०
व्याधयो धातुवैषम्यात्	१.९.४	शंकुकर्णेन संभिन्नं	१.४५.२१	शतानि पंच चत्वारि	१.६१.३७
व्याधितो मुच्यते राजा	२.२७.२८२	शंखकूटो महाशैलो	१.४९.५४	शतारैश्च त्रिभिरश्चक्रै०	१.५६.२
व्याधीनां नाशनं चैव	२.४९.५	शंखचक्रगदापद्मं	१.३७.२८	शताष्टकेन वा कुर्यात्	२.२८.४०
व्याध्यागमे शुचिर्भूत्वा	१.८५.२०६	शंखचक्रगदाहस्ता	१.६९.५२	शतुष्णो नाम सव्यशच	२.५.१४८
व्यानो व्यानामयत्यंगं	१.८.६४	शंखचक्रगदाहस्ता	१.१००.२६	शत्रोरष्टमराशौ वा	२.५०.४४
व्यापकस्त्वपवर्गच्च	१.८८.२८	शंखपा द्वैरजश्चैव	१.७.४०	शनैश्चरं तथा राहुं	२.२२.५९
व्याप्य सर्वा दिशो द्यां च	१.२०.६२	शंखपालाय शंखाय	१.१८.२०	शनैश्चरं तथा स्थानं	१.६१.११
व्यालकल्पो महाकल्पो	१.९८.१०३	शंखलोमा च नहुषो	१.६३.३७	शनैश्चरं पुनश्चापि	१.६०.२५
व्यालरूपी विलावासी	१.६५.८५	शंखहारांगगैरेण	१.४४.२७	शनैश्चरदिने स्पृष्ट्वा	१.८५.१९०
व्यालात्मानः स्मृता बाला	१.७०.२३०	शभवे हैमवत्याश्च	१.९५.४४	शनैश्चरो विरूपस्तु	१.६१.१९
व्यासशिष्य महाभाग	२.२०.८	शंभोः प्रभववाच्यस्य	२.९.५१	शप्तश्च सर्वगः शूली	१.२९.६८
व्यासस्तु भविता नामा	१.२४.९१	शंभोश्चत्वारि रूपाणि	२.१६.२१	शब्दः स्पर्शं च रूपं च	२.१८.५०
व्यासाय कथितं तस्मा०	१.८२.२	शंभोः षोडशधा भिन्ना	२.१२.२१	शब्दः स्पर्शस्तथा रूपं	२.२०.४९
व्यासावताराणि तथा	१.७.८	शक्तयः षोडशैवात्र	२.२७.५२	शब्दः स्पर्शो रसो गन्धो	१.८८.२३
व्यासाश्चैव मुनिश्रेष्ठा	१.७.३६	शक्तयश्च तथा सर्वा	१.८८.६	शब्दब्रह्मतनुं साक्षा०	१.१.१९
व्यासेन कथितः पूर्व	१.७९.३७	शक्तयस्तु चतुस्त्रिंशत्	२.२७.६०	शब्दस्पर्शं च रूपं	१.७०.४६
व्यासो युगे षोडशे तु	१.२४.७२	शक्ति च परमान्मानं	१.८५.६७	शब्दस्पर्शस्वरूपाय	१.१८.९
व्यासो हि भविता ब्रह्म०	१.२४.१०८	शक्तिका शक्तिगर्भा च	२.२७.६६	शब्दादिविषयं ज्ञानं	१.७५.३
व्युत्थाने सिद्धयश्चैता	१.९.५२	शक्तिमानभितस्त्वं च	१.९६.५४	शब्दार्थं चिंतयेद्यूः	१.८५.१२२
व्योमचारी व्योमरूपा	२.२७.१५१	शक्तिरूपं सुवर्णेन	२.३१.५	शमं जगाम शनैकैः	१.१००.४२
व्योमांगणस्योऽथ हरिः	१.६४.१९	शक्तिर्बीजेन कर्तव्या	२.२९.१३	शमीपिप्लसंभूता०	२.२५.६
व्योमात्मा भगवान्देवो	२.१३.११	शक्तीनां सर्वकार्येषु	२.४८.४	शमीपुष्पं च विधिना	१.९२.१७५
व्योमादीनि च भूतानि	१.८६.१३९	शक्ते स्वयं च सुतं बाल०	१.६४.९५	शमीपुष्पैर्बृहत्पुष्पै०	१.७९.१७
व्योमैकमपि दृष्टं हि	१.७५.२४	शक्ते स्वयं च सुतं पश्य	१.६४.५८	शयनं देवदेवस्य	१.४९.६६
व्योम्नि कुर्यात्तथा लिंगं	१.७६.६०	शक्ररूपं समास्थाय	१.१०७.२५	शयनं बाहनं शव्यां	२.२७.२७०
ब्र					
ब्रतं कृत्वा च विधिना	२.८.३०	शक्रश्च भगवान् वहिं०	१.१०२.१८	शरणं प्राप्य तिष्ठति	१.९३.१९
ब्रतं पाशुपतं प्रोक्तं	१.८०.४९	शक्राद्यैः सहितो भूत्वा	१.९४.११	शरणागतधारी च	१.८२.११९
ब्रतं पाशुपतं योगं	१.३४.११	शतं पुत्रास्तु तस्येह	१.६८.१३	शरावत्संस्थितत्वा०	१.४८.३
ब्रतं सुविपुलं पुण्यं	१.८४.२४	शतं वै शंखमणिभिः	१.८५.११०	शरीरस्थं च भूतानां	२.१२.३८
ब्रतमैतत्वया प्रोक्तं	१.८१.१	शतं शतसहस्राणां०	१.१६.२७	शरीरस्थं च भूतानां	२.१२.४०
ब्रताधिपः परं ब्रह्म	१.१५.१६८	शतद्रोणसमं पुण्य०	१.९२.१७७	शरीरस्था च भूतानां	२.१२.३४
ब्रतानि वः प्रवक्ष्यामि	१.८३.२	शतनिष्काधिकं श्रेष्ठं	२.२८.७९	शरीरिणामशेषाणां	२.१२.२०
ब्रतोपवासं मौनं च	१.८.३०	शतमष्टोत्रं तेष्यः	२.४४.७	शरीरिणां शरीरेषु	२.१३.१९
श					
शंकरश्चाप्रयत्नेन	१.६.२२	शतमेकं सहस्राणां	१.४९.१	शरीरे सति वै क्लेशः	१.८६.११२
		शतयोजनविस्तीर्णं	१.२०.८	शरी शतघ्नी खड्गी च	१.६५.६७
		शतरुद्राः समात्मानो	१.७०.३१९	शरे व्यवस्थिताः सर्वे	१.७२.११२

शर्ववर्ति प्रकुरुते	१.७०.१२१	शास्वं शास्ता च सर्वेषां	१.७१.७४	शिवस्य सत्रिधाने च	१.८५.१०८
शर्ववर्ति प्रदृश्यते	१.७०.२६०	शास्वमित्युच्यते भागं	१.८६.१४	शिवस्यैव विकारोऽयं	२.१६.२३
शर्ववर्ति प्रसूतानां	१.७०.२५९	शि		शिवस्यैव स्वरूपाणि	२.१४.२
शर्वश्चांडकपालस्थो	१.७०.५७	शिक्षयस्व यथान्यायो	२.३.८२	शिवाग्निकार्यं वक्ष्यामि	२.२५.१
शर्वादीनां च विप्राणां	२.४५.८०	शिक्षयामास बहुशः	२.३.९२	शिवाग्निरिति विप्रेद्राः	२.२५.५६
शर्वाय क्षितिरूपाय	१.४१.३०	शिक्षाक्रमेण संयुक्तः	२.३.५९	शिवाग्नौ कल्पयेद्विष्यं	२.२५.९५
शर्वाय च नमस्तुभ्यं	१.१८.२७	शिक्षितोसौ तदा देव्या	२.३.१०२	शिवा देवी बुधैरुक्ता	२.१३.१०
शवगंधि भवेद् गात्रं	१.९१.१२	शिखंडिनो वनं चापि	१.२४.८८	शिवामृतेन संपूतं	२.२३.५
शशबिंदुस्तु वै राजा	१.६८.२५	शिखंडी कवची शूली	१.९८.१५०	शिवाय दद्याद्विषेभ्यो	२.३८.४
शशबिंदोस्तु पुत्राणां	१.६८.२६	शिखायै च नमश्चेति	२.२१.१३	शिवाय दीपं यो दद्याऽ	१.७९.३०
शा		शितांतशिखरे शक्रः	१.५०.१	शिवाय रुद्ररूपाय	२.२१.१६
शांडिल्यानां वरः श्रीमान्	१.६३.५४	शिविकां वैजयंतीं च	२.२७.२६०	शिवाय शिवतत्त्वाय	१.७२.१२४
शांतं रणाजिरे विष्णो	१.९८.१७२	शिरश्चोत्तरतश्चैव	१.१९.१२	शिवार्चनप्रकारेण	२.२८.१४
शांतस्य समरे चास्वं	१.९८.१७३	शिरसोंगिरसश्चैव	१.७०.१८७	शिवार्चनरतः श्रीमान्	१.८२.१३
शांतात्मरूपिणे साक्षात्	१.१०४.१८	शिरस्यंजलिमादाय	१.४४.३७	शिवार्चनरतः साक्षात्	१.८२.१२
शांतिः प्रशांतिर्दीपिश्च	१.८.५८	शिरोभिः पतिता भूमिं	१.७२.३०	शिवार्चना च कर्तव्या	२.३०.११
शांतिधर्मेण चैकेन	१.२५.२४	शिरो विमर्शनः सर्व०	१.६५.१४	शिवार्चना च कर्तव्या	२.४४.९
शांत्यतीतं मुनिश्रेष्ठ	२.२१.५१	शिलोद्धवानां विम्बानां	२.४८.४४३	शिवार्चना तेन हस्तेन	२.२४.३
शांत्यतीतादिनिवृत्तिः	२.२४.१३	शिवं च शंकरं रुद्रं	२.८.६	शिवालये निहत्यैक०	१.७८.१४
शांत्या बीजांकुरानंतः	२.२६.१३	शिवं सदाशिवं देवं	२.२१.१५	शिवाविशेह मामीश	१.८८.८७
शांबरी बंधुरा ग्रंथिः	२.२७.१९८	शिवः समाप्य देवोक्तं	१.१०३.६६	शिवास्यजायै विद्वहे	२.४८.१७
शाकद्विपे च गिरयः	१.५३.१७	शिवक्षेत्रे मुनिश्रेष्ठाः	१.७७.४७	शिवेन कथितं शास्वं	२.२०.११
शाकुनं कथयाम्यद्य	२.२७.१८७	शिवगायत्र्याशेषं	२.२४.१६	शिवेन दृष्टा प्रकृतिः	१.३.११
शाकुनः कथितो व्यूहः	२.२७.१९१	शिवज्ञानं गुरोर्धक्तिं	१.८.४१	शिवेनैकादशेनाद्धिः	१.८५.२१४
शाकमूलफलादीनां	१.८९.६५	शिवध्यानैकसंपत्रः	१.८२.७	शिवोऽग्निं जनयित्वैवं	२.२५.९३
शाखानां विविधं कृत्वा	२.३३.२	शिवध्यानैकसंपत्रः	१.८२.१०	शिवो नो भव सर्वत्	१.२१.८८
शाखामृगामनं दृष्ट्वा	२.५.९४	शिवध्यानैकसंपत्रः	१.८२.११	शिशुर्गिरिस्तः सप्ताद्	१.९८.९२
शाखो विशाखो गोशाखः	१.९८.४६	शिवध्यानैकसंपत्रो	१.८२.८४	शिष्टाचारविरुद्धश्च	१.९०.२३
शातातपो वसिष्ठश्च	१.३९.६६	शिवपूजां ततः कुर्यां०	२.२२.७९	शिष्टाश्च नियतात्मानः	१.१६.३९
शापः सत्याकृतो देवान्	१.२.२३	शिवप्रणामसंपत्राः	१.८२.५५	शिष्यं च वासयेद् भक्तं	२.२१.३७
शापव्याजेन विप्राणां०	१.६९.८३	शिवप्रणामसंपत्राः	१.८२.५७	शिष्यमूर्धनिविन्यस्य	२.२१.४४
शाबस्तिश्च महातेजा	१.६५.३४	शिवभक्तो न यो राजा	२.११.३६	शिष्याः प्रशिष्याश्चैतेषां	१.७.५३
शार्ङ्गचक्रगदापाणिः	२.५.३१	शिवमाहात्म्यमेकाग्रः	२.१५.२	शी	
शालंकायनपुत्रस्तु	१.८२.२६	शिवमुद्दिश्य दातव्यं	२.४२.५	शीघ्रत्वं सर्वभूतेषु	१.८८.१८
शालंकायनपुत्रो वै	१.४३.५	शिववत् क्रीडते योगी	१.७६.५	शीतरशिमः समुत्पत्रः	१.६१.४२
शालके वा त्यजेत्राणां०	१.७७.४२	शिवविद्यागुरोस्तस्मा०	१.८५.१६५	शीतांशुमंडलप्रख्यं	१.१७.५३
शालिहोत्रोग्निवेशश्च	१.७.४९	शिवलिंगं समुत्सृज्य	२.११.३५	शु	
शालिमध्ये क्षिपेत्रीत्वा	२.२९.६	शिवसायुज्यमानोति	१.७७.५८	शुकी शुकानुलूकांश्च	१.६३.३०
शाल्मलस्येश्वराः सप्त	१.४६.३८	शिवस्नानं पुरा कृत्वा	२.२३.२	शुक्रं च वृत्तं विश्वेश	१.९३.५६
शाल्मलेश्च वपुष्मंतं	१.४६.२०	शिवस्य महती पूजां	१.८४.६३	शुक्रः शनैश्चरश्चैव	१.८२.७४

शुक्रा तारा तथाज्ञानाऽ	२.२७.२१९	शूलटंकगदाचक्रो	१.९८.१६५	शौ-शम	१.६१.१०
शुक्रं गते परं धाम	२.५४.१०	शूलशक्तिगदाहस्तान्	१.७१.५८	शौक्रं शुक्रोऽविशत्स्थानं	२.२०.३१
शुक्रेण च वरो दत्तः	१.६७.७	शूलेन शूलिना प्रोतं	१.९३.१२	शौचाचारगुणोपेता	१.६५.५७
शुक्रेण मे समादिष्टा	१.६७.६	शृ		शमशानवासी भगवान्	२.५०.३३
शुक्लः स्त्रीरूपसंपत्रः	१.६५.११९	शृंगारकेशवरं नाम	१.९२.१५५	शमशानांगरमानीय	२.२४.१२८
शुक्लदंतजिनाक्षाश्च	१.४०.३४	शृंगेण पर्णपुटकैः	१.२५.२२	शमशाने मृतमुत्सृष्टं	१.८३.२४
शुक्लाख्या रथमयस्तस्य	२.१२.१०	शृंगेण पर्णपुटकैः	२.२२.६	श्य	
शुक्लास्ता नामतः सर्वाऽ	१.५९.२८	शृंगैश्चतुर्भिः संयुक्तं	१.८४.५३	श्यामाकान्त्रघृतक्षीरै०	१.८३.२४
शुक्लो विशालः कमलो	२.२७.११४	शृगालरूपः सर्वार्थो	१.६५.६९	श्र	
शुचिः सौरस्तु विज्ञेयः	१.६.२	शृणुध्वं देवमातृणां	१.६३.१४	श्रद्धया च कृतं दिव्यं	१.३६.१८
शुचौ देशे गृहे वापि	१.८५.९४	शृणुध्वं यत्कृते यूय०	१.४४.१५	श्रद्धया परया युक्तो	१.२९.३१
शुद्धजांबूनदनिमं	२.५.२४	शृणु नारद यदवृत्तं	२.३.२३	श्रद्धया सकृदेवापि	१.७९.९
शुद्धदीपशिखाकारं	२.२३.३१	शृणु भूप यथान्यायं	२.१.६	श्रद्धा च गतिरस्यैव	१.७२.१३
शुद्धस्फटिकसंकाशं	१.१६.५	शृणु राजन् यथान्यायं	२.४.४	श्रद्धा तवास्तु चास्माकं	२.५५.४८
शुद्धस्फटिकसंकाशं	१.१७.८३	शृणुष्वेतत् परं गुह्याऽ	१.१६.२४	श्रद्धाद्याश्चैव कीर्त्यता०	१.५.२३
शुद्धस्फटिकसंकाशः	१.८२.४	शृण्वंते कल्पे वाराहे	१.७.१२	श्रद्धासाध्योथ रुद्रस्तु	१.२.३९
शुद्धस्य सिद्धयो दुष्टा	१.८.३७	शृण्वंतु वचनं सर्वे	२.७.४	श्रद्धा स्वर्गश्च मोक्षश्च	१.१०.५३
शुद्धहस्ताय विद्यहे	२.४८.२२	शृण्वत्रास्ते स पद्माख्यः	२.१.१५	श्रद्धा ह्यस्य शुभा पल्ली	१.९९.१३
शुद्धान्त्रं चैव मुद्गान्त्रं	१.७९.१९	शै		श्रमार्थमाश्रमश्चापि	१.८६.४६
शुद्धान्त्रं वापि मुद्गान्त्र०	१.८१.३९	शेषमेव शुभं कोष्ठं	२.२७.१५	श्राद्धमार्गक्रिमं साक्षा०	२.४५.४
शुद्धान्त्रं स्निग्धमशनीयात्	१.८५.१४५	शेषवासुकिकर्णोट०	१.६३.३५	श्राद्धे वा दैविके कार्ये	१.२१.९१
शुद्धिं कृत्वा यथान्यायं	१.२७.३५	शेषाः पञ्च ग्रहा ज्येष्ठा	१.६०.१	श्रावकास्ते तथा प्रोचुः	२.१.२८
शुद्धिर्बुद्धिर्द्युतिः कांति०	२.२७.१७७	शेषाणां प्रकृतिं सम्यग्	१.६०.२	श्रावयेच्च द्विजाज्ञुद्धान्	१.८५.२३१
शुद्धो विनयसंपत्रो	२.२०.३३	शेषाभिवाज्ञामादाय	१.२९.५२	श्रावयेद्वा द्विजाज्ञाद्वा	१.१६.१७
शुभलक्षणसंपत्रं	२.५.२०	शेषाश्चाश्रमिणः सर्वे	१.३४.१२	श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या	१.३६.२०
शुभशचन्द्रावलोकश्च	१.६६.४१	शै		श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या	१.३६.३५
शुभांगो लोकसारंगो	१.९८.५१	शैत्यादेकार्णवे तस्मिन्	१.७०.१३४	श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या	१.४२.३५
शुभानना शुभश्रोणि०	१.५५.३२	शैलं रसातलं विप्राः	१.४५.१२	श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या	१.७२.१८१
शुभावती तदा देवी	१.७२.८९	शैलं वा दारुजं वापि	१.८१.२५	श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या	१.२१.८९
शुश्रूषां कारयेद्यस्तु	१.७२.४१	शैलजं प्रथमं प्रोक्तं	१.७४.१४	श्रावयेद्वा द्विजान् विद्वान्	१.९२.१९०
शुभावत्याः सखी शांता	१.८२.१८	शैलजं रत्नजं वापि	१.७४.२६	श्रावयेद्वा द्विजान् सर्वान्	१.९५.३१
शू		शैलादिनः शुभं चास्ति	१.४८.२९	श्रावयेद्वा यथान्यायं	१.९७.४३
शूद्रानभ्यर्च्चयंत्यल्प्य०	१.४०.१६	शैलेन्द्रः कार्मुकं चैव	१.७२.२३	श्रावयेद्वा यथान्यायं	१.८९.१२२
शूद्रान्त्रं यातयामान्त्रं	१.८५.१३९	शैलेशं संगमेशं च	१.९२.१०६	श्राव्यं सर्वमुमारूपं	२.११.२५
शूद्रान्त्रभोजिनो वापि	२.६.६८	शैलेश्वरमिति ख्यातं	१.९२.८६	श्रियं पदां तथा श्रेष्ठां	२.६.४
शून्यं सर्वं निराभासं	२.५५.१४	शैवं संक्षिप्य वेदोक्तं	२.२०.१५	श्रीकंठस्याधिपत्यं वै	१.५०.१८
शूरश्च शूरवीरश्च	१.६८.१८	शैवालशोभनाः केचित्	१.३१.२४	श्रीकंठाधिष्ठितं विश्वं	१.५०.२१
शूलं कपालं पाशं च	२.५०.२०	शौ		श्रीकंठाधिष्ठितान्यत्र	१.५०.२०
शूलं च विधिना कृत्वा	१.८४.११	शोकाविष्टेन मनसा	२.१.७७	श्रीदेवा शांतिदेवा च	१.६९.४१
शूलं परशुखड्गं च	२.२३.१०	शोकाविष्टेन मनसा	२.१.७७	श्रीदेवीं वारुणे भागे	२.२७.५४

श्रीदेवीमतुलां कृत्वा	२.३६.२	श्रूयतां मुनिशार्दूला.	२.५.५	षडंगसहितान् वेदान्	१.८१.६
श्रीपतेरुदरं भूयः	१.२०.२८	श्रूयते ऋषिशापेन	१.२९.२५	षडंगानि न्यसेत्पश्चा०	१.८५.७
श्रीपर्वतमनुप्राप्य	१.९२.१४७	श्रेयोपि शैलराजेन	१.१०३.४४	षडर्घशुद्धिविहिता	१.२०.४४
श्रीप्रदं रत्नजं लिंगं	१.७१.७४	श्रेयोर्थिभिनैर्नित्यं	२.१२.४६	षडश्वं सप्तमातंगं	२.६.५३
श्रीफलैरंशुपट्टानां	१.८९.५६	श्रोतव्यं च सदा नित्यं	२.२.६	षडसं सर्वतो वापि	२.२८.२२
श्रीमती नाम विष्ण्याता	२.५.५२	श्रोतव्यमस्ति भगवन्	२.५.६६	षडास्यो द्वादशभुजः	१.१०१.२८
श्रीमत्सिद्धवटे चैव	१.९२.१५३	श्रोत्रं जिह्वा ततः प्राण०	२.१८.४८	षड्ढस्तमंतरं ज्येयं	२.२८.२९
श्रीमद्वेवहृदप्रांते	१.९२.१६३	श्रोत्रत्वक्चक्षुषी जिह्वा	१.७०.४१	षडभिः सहस्रैः पूषा तु	१.५९.३६
श्रीमन्मृगशिरश्चार्द्रा	१.८२.७८	श्रोत्रं शृणोति तच्छक्त्या	२.१०.१५	षडविधं लिंगमित्याहु०	१.७४.१३
श्रीवत्सलक्षणं देवं	१.३७.२९	श्रोत्रच्छिद्रमथाहत्य	२.१.६३	षण्मुखस्विपुरध्वंसी	२.११.१२
श्रीवत्सवक्षसं देवं	२.५.२५	श्रोत्रियोऽश्रोत्रियो वापि	२.४५.७	षण्मुखोपि सहसिद्धचारणैः	१.७२.६४
श्रीव्यूहः कथितो भद्रं	२.२७.८५	श्रोत्रे मनसि बुद्धौ च	१.९१.४२	षण्मुखो भगवान् देवो	२.१३.८
श्रुतमेतन्महाबुद्धे	२.५.२	श्रोत्रैरेतैर्महामंत्रै०	१.१०३.६०	षष्ठिश्चैव सहस्राणि	१.४.२३
श्रुतयः श्रुतिसारं त्वां	१.७१.१११	श्रौत्रस्मार्तकृतानां च	१.४०.८०	षष्ठिश्चैव सहस्राणि	१.४.३०
श्रुतायुरभवत्स्मात्	१.६६.४२	श्रौत्रस्मार्तप्रवृत्त्यर्थं	१.१०३.४१	षष्ठसहितेन सद्येन	२.२४.७
श्रुता वज्रेश्वरी विद्या	२.५२.१	श्रौत्रस्मार्तविरुद्धं च	१.७१.७६	षष्ठेन भेदयेदात्म०	२.२१.५७
श्रुतिप्रकाशः श्रुतिमा०	१.९८.१४६	श्रौत्रस्मार्तविरुद्धानां	१.१०.४	षष्ठेन मृगमादाय	२.२२.२
श्रुतिमद्दिश्च विप्रेद्रैः	१.९२.१२३	श्रौत्रस्मार्तस्य धर्मस्य	१.१०.८	षष्ठेन सस्येन	२.२४.१०
श्रुतो मयायमर्थो वै	२.३.३			षष्ठेनोल्लेखनं कुर्यात्	२.२२.७१
श्रुत्वा च भक्त्या चतुराननेन	१.७२.१६८			षष्ठेनोल्लेखनं प्रोक्तं	२.२५.६
श्रुत्वा तु वचनं तेषां	१.५९.३	श्वनीचदर्शनं निद्रा	१.८५.१५८	षष्ठ्यां गम्या महाभागा	१.८९.११२
श्रुत्वा निदां भवस्याथ	१.१०७.४१	श्वफल्कः काशिराजस्य	१.६९.२०	षोडशस्वरवज्रांग०	१.१०४.१६
श्रुत्वानुगृह्य तं विप्रो	१.३६.७२	श्वफल्कश्च महाराजो	१.६९.१९	षोडशात्मस्वरूपाय	१.७०.१३१
श्रुत्वानुमोदयेच्चापि	१.७९.२७	श्वभ्रे यो निपतेत्स्वप्ने	१.९१.३१	षोडशैव तु अश्यर्च्य	२.२७.६५
श्रुत्वा प्रतिमकर्मा हि	१.२०.३९	श्वापदो द्विखुरो हस्ती	१.७०.२४१	षोडशैव समाख्याताः	२.२७.८९
श्रुत्वा प्रभोस्तदा वाक्यं	१.७१.१२०	श्वेतं यदुत्तरं तस्मात्	१.४७.९		
श्रुत्वा भवोपि वचन०	१.९३.२५	श्वेतः श्वेतशिखंडी च	१.७.३७	स	
श्रुत्वा रुरोद सा वाक्यं	१.६४.६६	श्वेतकल्पो यदा ह्यासी०	१.२३.२	संकर्षण महाभाग	१.३६.१२
श्रुत्वा वचस्ततस्तस्य	१.४१.५२	श्वेतद्वीपे हृषीकेशं	२.३.७६	संकर्षणस्य चोत्पत्तिः	१.२.४२
श्रुत्वा वसिष्ठोऽपि पपात् भूमौ	१.६४.६७	श्वेतागरूद्ध्रवं चैव	१.८१.३४	संकल्पं चैव संकल्पात्	१.७.१८५
श्रुत्वा वाक्यं क्षुपः प्राह	१.३६.३२	श्वेतार्ककुसुमे साक्षा०	१.८१.३५	संकल्पं चैव धर्मश्च	१.५.१२
श्रुत्वा वाक्यं तदा शंभो०	१.९३.२३	श्वेतार्ककुसुमे साक्षा०	१.८१.३५	संकल्पा च मुहूर्ता च	१.६३.१५
श्रुत्वा वाक्यं दधीचस्य	१.३६.४१	श्वेतोस्थिः श्वेतरोमा च	१.२३.३	संकल्पादर्शनात्पर्शात्	१.६३.२
श्रुत्वा विगतमात्सर्यं	१.२०.५०	श्वेतानापि गतेनास्यं	१.३०.३७	संकल्पायास्तु संकल्पो	१.६३.१८
श्रुत्वा शक्रेण कथितं	१.३९.१	श्वेतेनैवं जितो मृत्यु०	१.२९.८३	संकीर्णं तु दिवः पृष्ठं	१.७१.१५२
श्रुत्वैवं मुनयः सर्वे	२.४७.२	श्वेतोदरे मुनिश्रेष्ठाः	१.५०.११	संक्रमे देवमीशानं	१.७७.६३
श्रुत्वैवमखिलं ब्रह्मा	२.२४.१	श्वेतो नाम मुनिः श्रीमान्	१.३०.२	संक्षेपतः प्रवक्ष्यामि	१.८.१
श्रूयतां परमं गुह्यं	२.२८.४७			संक्षेपाद्विस्तराच्चैव	१.५५.७९
श्रूयतां पशुभावस्य	१.७२.३८			संगमे देवनद्या हि	१.९२.८९
		षट्चत्वारिंशदध्यायं	२.५५.३७	संगमे विजयं लब्ध्वा	२.५४.१४
		षट्प्रकारं समध्यस्य	१.८६.१२०	संघट्ये च तथोत्थाने	२.३.६४
		षट्साहस्रमितं सर्वं	१.६४.१२२		

संघातो जायते तस्मा०	१.७०.३६	संप्रेक्ष्य चांधकं पाश्वे	१.७६.५१	संसारविषतपानां	१.८६.१४३
संजयस्य तु दायादो	१.६८.६	संप्रेक्ष्य नारीवृदं वै	१.२९.११	संसारान्मोक्षमीशान	१.४१.५९
संजातः शिखरेश्वत्यः	१.४९.३२	संप्रेक्ष्य भगवान्नंदी	२.२०.१८	संसारो द्विविधः प्रोक्तः	१.८६.१०
संजीवयन्त्यशेषाणि	२.१०.२७	संप्रेक्ष्य सर्वकालेषु	१.७.३०	संसिद्धः कार्यकरणे	१.७०.८५
संजीविनी समस्तानां	२.१२.३२	संप्रोक्तं रुद्रगायत्र्या	१.७९.३३	संसिद्धः कार्यकरणे	१.७०.५७
संज्ञा राज्ञी प्रभा छाया	१.६५.३	संबभूवुर्महात्मानो	१.१२.९	संसृष्टैः क्वचिदुपलिप्त-	
संतप्तप्रदयो भूत्वा	१.६२.१०	संभवं च महादेव्या	१.९९.४	कीर्णपुष्टैः	१.९२.२६
संतप्यमानो भगवान्	२.३.४	संभवः सूचितो देव्या.	१.९९.१	संस्कृते वेदिसंयुक्ते	२.४७.२२
संताङ्गामास रुषा	१.६५.७	संभाराणि तथान्यानि	१.४४.३०	संस्तुता जननी तेषां	१.८२.२३
संतोषस्तस्य सततः	१.८.३८	संभाविता सा सकलामर्देहैः	१.५३.६१	संस्थितायांभसां मध्ये	१.१८.१९
संत्यज्य देवदेवेशं	१.७३.२	संभिन्नो मारुतो यस्य	१.९१.१४	संहतानां महाभागा	१.८९.६३
संत्यज्यापूजयन्साध्यो	१.७१.८८	संभृतं त्वर्धमासेन	१.५६.९	संहरत्येश भगवान्	१.३१.५
संत्यागं चैव वस्त्राणां	१.८९.१०७	संभ्रांतमानसां तत्र	२.५.१०३	संहर्तुर्न हि संहारः	१.९६.२७
संत्याज्यं सर्वथा सर्वं	१.९.२३	संभ्रांतमानसा तत्र	२.५.१५	संहर्त्रे च पिशांगाय	१.३१.३८
संत्यायतनमुख्यानि	१.५०.१७	संमार्जनादिभिर्वापि	१.७७.३१	संहिता क्रह्यजुःसामानं	१.३९.५९
संध्यां शक्रप्रमाणं च	१.२.२१	संमार्जने तथा नृणां	१.७८.५	संहितामंत्रितं कृत्वा	२.२२.३७
संध्या च ऋतवश्चैव	१.९२.१३०	संमोहं त्यज भो विष्णो	१.१९.१३	संहितामंत्रितेनैव	२.२१.७५
संध्यातिक्रमणाद्विप्रो	१.८५.१३६	संयद्वसुरिति ख्यातो	२.१२.१४	संहृत्य कालकूटाख्यं	१.८६.४
संध्यायां मैथुनं येषां	२.६.७०	संयुज्य चार्मिनि काष्ठेन	२.२५.२३	स आत्मानं निहत्यैव	२.५०.४९
संध्यायामश्नुते ये वै	२.६.६६	संयुतं सर्वभूतेन्द्रैः	१.५१.१२	स एव जगतां कालः	१.४९.६५
संध्यालोपे कृते विप्रः	१.८९.४४	संयोग एव त्रिविधः	१.८८.१४	स एव तेजस्त्वोजस्तु	१.५४.६३
संनिहत्य कुरुक्षेत्रं	१.९२.१२८	संयोगी योगविद् ब्रह्मा	१.९८.१३८	स एव द्वीपपश्चार्धे	१.५३.२४
संपूजयेद् गां गायत्र्या	२.३५.९	संरंभातिप्रसंगाद्वै	१.१०६.२०	स एव परमात्मासौ	१.६९.४७
संपूजितस्तथा तां तु	१.२९.५४	संलापालापकुशलैः	१.८०.३१	स एव परमेशानः	१.१०२.७
संपूज्य चै त्रिदशेश्वराद्यैः	१.३६.२१	संलापालापकुशलै	१.४८.११	स एव भगवान् रुद्रो	१.३.२९
संपूज्य देवदेवेशं	१.७६.४६	संवत्सरः कृतो मंत्रः	१.६५.६३	स एव भगवान् रुद्रो	२.९.१७
संपूज्य पूज्यं त्रिदशेश्वराणां	१.९२.३४	संवत्सरकरो मंत्र	१.९८.६४	स एव मुक्तः संसारा	१.८६.११४
संपूज्य पूज्यं विधिनैवमीशां	१.८१.५७	संवत्सरत्रयं वाथ	२.२०.२६	स एव मोचकस्तेषां	२.९.१४
संपूज्य पूज्यं सहदेवसंघैः	१.७२.५०	संवत्सरसहस्रांते	२.५०.८	स एव वैभवः प्रोक्तो	१.५३.४
संपूज्य लक्ष्मुष्णेण	२.१०.१४	संवत्सरसहस्रैश्च	१.७९.२	स एव सर्वदेवेशः	१.७१.५२
संपूज्य वरदं देवं	१.१०२.११	संवत्सरांते गोदानं	१.८१.४७	स एव सुखवत्यां तु	१.५४.७
संपूज्य विन्यसेदग्रे	२.२७.२३३	संवत्सरांते विप्रेन्द्रान्	१.८३.९	स एवैकादशार्धेन	१.७०.३२६
संपूज्य शिवसूक्तेन	१.६४.७६	संवर्तो भविता यश्च	१.९२.५८	स एष स महारुद्रो	२.१८.३०
संपूज्य स्थंडिले वह्नौ	२.४५.१२	संवृतस्तमसा चैव	१.७०.१४२	सकलं मुनयः केचित्	१.७५.३३
संपूर्णैश्च गृहं वस्त्रैः	१.८४.४१	संवृता बहिरंतश्च	१.७०.१५५	सकलदुरितहीनं सर्वदं	
संप्रस्थिता वनौकास्ते	१.३१.२२	संवृतास्योपबद्धाक्ष	१.८.८८	भोगमुख्यं	१.८०.६
संप्राप्तश्च तदा सत्रं	१.६४.११४	संशोध्य च शुभं लिंग	१.७९.१०	सकलदेवपतिर्भगवानजो	२.४७.२
संप्राप्य तुष्टुवुः सर्वं	१.५.३२	संसारकालकूटाख्याऽ	१.८६.१५४	सकलध्यानं निष्कलस्मरणं	२.२४.३५
संप्राप्य तुष्टुवुः सर्वे	१.१०६.६	संसारदर्शनं चैव	१.९.४६	सकलभुवनभर्ता	१.९२.३२
संप्राप्य सांप्रतं सर्वं	१.९८.१८	संसारबंधच्छेदार्थं	१.२४.१३५	सकुटुंबो महातेजा	२.१.१४

सकूर्चेन सपुष्पेण	१.२७.३९	सदा जयति यज्ञेन	२.२१.८०	सनत्कुमारो भगवान्	१.२८.११
सकूर्चेन सवस्त्रेण	२.२७.७४	सदा तु चन्द्रकांतानां	१.५२.२३	सनत्कुमारो भगवान्	१.५५.३४
सकेतुर्दक्षिणे द्वीपे	१.४९.३१	सदारतनयाः श्रांता	१.३०.३४	सनातनं सतां श्रेष्ठं	१.३८.१२
सगणं शिवभीशानं	१.९३.२०	सदारान् सर्वतत्त्वज्ञान्	१.२६.१८	सनातनमजं विष्णुं	१.१७.२१
सगणः सर्वदः शर्वः	१.१००.४३	सदावगाह्यः सलिले	१.८.३५	सनारायणका देवाः	१.१७.२४
सगणश्चाम्बया सार्थं	२.१८.६५	सदाशिवं स्मरेदेवं	२.२१.३०	सत्रतिं चानसूयां च	१.५.२२
संगणो गणसेनानीं	१.७१.१४५	सदाशिवाय शांताय	१.७२.१४१	सत्रद्वश्च तु यो रश्मिः	१.६०.२४
सगणो नंदिना सार्थं	१.१०३.७१	सदाशिवो भवो विष्णुं	१.३.३८	सत्रद्वैः सह सत्रह्य	१.९७.११
सगर्भो गर्भ इत्युक्तः	१.८.५१	सदुकूला शिवे रक्ता	१.७२.९३	सत्रामश्च शतेनैव	१.१०३.२१
सगुणे निर्गुणो वापि	१.८५.१६६	स देहन्यास इत्युक्तः	१.८५.६१	सपिंडता च पुरुषे	१.८९.८६
सघृतं शंकरं पूज्य	१.८३.४४	स देवदेवो भगवां	१.२४.१४४	स पौर्णमास्यां दृश्येत	१.५५.७
सघृतं सगुडं चैव	१.८४.२०	सद्भाववचनं ब्रूहि	१.२०.५५	सप्त जिह्वा प्रकल्प्यैव	२.२५.५५
सघृतेन तिलेनैव	२.५३.३	सद्भिः सह विनिश्चित्य	१.९०.२३	सप्ततंतुर्महादेवो	२.३२.४
स तं दृष्ट्वा महात्मानं	१.१४.६	सद्यं पश्चिमपत्रे तु	२.२१.११	सप्तद्वीपसमुद्राद्यैः	१.६७.१३
स तां गतिमवाप्नोति	१.७९.२८	सद्यमष्टप्रकारेण	२.२१.२१	सप्तद्वीपां यथातिस्तु	१.४६.१
स तां जितात्मनां साक्षाद्	१.१०.१	सद्यमूर्तिं स्मरेदेवं	२.२१.२०	सप्तद्वीपां तथा पृथ्वी	१.४६.३
सतारकाक्षेण मायेन गुप्त	१.७१.५६	सद्याय सद्यरूपाय	१.९५.४९	सप्तद्वीपेषु सर्वेषु	१.३.५
सती ख्यात्यथ संभूतिः	१.७०.२८७	सद्येन गंधं वामेन	२.२४.१५	सप्तधा चाष्टधा चैव	१.८२.३२
सती संज्ञा तदा सा वै	१.९९.१४	सद्येन पश्चिमे होमः	२.२७.२४८	सप्तपातालपादश्च	१.३६.१५
सत्त्वं कृतं रजस्वेता	१.३९.६	सद्योजातं जपंश्चापि	१.७९.२२	सप्तभागैकभागेन	२.३२.६
सत्त्वमात्रात्मिकामेव	१.७०.२०७	सद्योजातं ततो ब्रह्मा	१.११.५	सप्तमस्तस्य वक्ष्मामि	१.७.२८
सत्त्वेन सर्वभूतानां	१.३७.३१	सद्योजातं ततो ब्रह्मा	१.११.६	सत्य मेधातियेः पुत्राः	१.४६.४२
सत्त्वोद्रेकात्प्रबुद्धस्तु	१.७०.११८	सद्योजातं तथा रक्ते	१.१०.४५	सप्तमो मंदरः श्रीमान्	१.५३.९
सत्यं ऋतं तथा वायुं	१.५४.६४	सद्योजातं महादेवं	२.१४.२५	सप्तमो मानुषे विप्रा	१.५.८
सत्यं ब्रह्मा महादेवं	२.१८.३८	सद्यो जाताह्या शंभो	२.१४.१०	सप्तम्यां चैव कन्यार्थी	१.८९.११४
सत्यं शौचं दया शांतिः	१.८१.४६	सद्यो जातेति ब्रह्मैतद्	१.२३.६	सप्त राजन्यवैश्यानां	२.१.१६
सत्यनेत्रो मुनिर्भव्यो	१.५.४७	सद्योपि लभते मुक्तिं	१.२९.८१	सप्तलोकाय पाताल०	१.७२.१३३
सत्यमस्तेयमपरं	१.८.११	सद्यो रात्र्यहनी चैव	१.७०.२१६	सप्तवर्षा ततश्चावक्ति	१.८९.८३
सत्यमानंदममृतं	१.१७.६०	सनंदनश्च भगवान्	१.४६.११	सप्तविप्रान् समध्यर्च्य	२.३४.४
सत्यवाक् सत्यसंपत्रः	१.६९.१६	सनंदी सगणः सोमः	१.५३.१३	सप्त वै शाल्मलिद्वीपे	१.५३.५
सत्यवादी जितक्रोधः	१.८३.१५	सनकः सनंदनश्चैव	१.२४.३०	सप्त सप्त गणांश्चैव	२.२२.६२
सत्यव्रतो महात्यागी	१.९८.१४८	सनकश्च सनंदनश्च	१.२०.८६	सप्तसप्तर्षिभिश्चैव	१.४०.७७
सत्रं ते विरमत्वेतत्	१.६४.११२	सनत्कुमारं वरद०	१.७.३९	सप्तस्वरांगनाः पश्यन्	२.३.९३
सत्वरं सर्वयत्नेन	१.१७.४५	सनत्कुमारः प्राहेदं	२.२८.५	सप्तांडावरणन्याहुः	१.३.३३
सदसद्गुप्तिमत्याहुः	२.१५.३	सनत्कुमारः सिद्धेस्तु	२.२८.७	सप्ताक्षरोयं रुद्रस्य	२.८.४
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं	१.६५.१५८	सनत्कुमार संक्षेपात्	२.१०.२२	सप्ताश्वस्यैव सूर्यस्य	१.५७.२२
सदसद्व्यक्तिहीनाय	१.९५.३९	सनत्कुमार सारंगं	१.१८.१९	सफलं साधितं सर्वं	१.१.१६
सदाचाररताः शांताः	१.८९.३१	सनत्कुमाराय शुभं	१.२५.४	सबांधवान् क्षणादेव	१.९८.२०
सदाचारी जपनित्यं	१.८५.१२७				

स बाहुरुद्धमस्तस्य	१.१०२.३१	समिदाज्याहुतीर्हुत्वा	२.२३.२८	स रुद्रत्वं समासाद्य	१.९६.१२८
स बाह्याभ्यन्तरं चैव	१.१७.५५	समिद्धुत्वा विधानेन	२.३६.६	सर्ग विसृज्य चात्मान.	१.४१.१९
स विश्वत्परमां मूर्ति	१.९२.११३	समीपस्थोप्यनुज्ञाप्य	१.८५.१८२	सर्गः प्राधानिकः पश्चात्	१.२.६
सबीजसंपुटं मंत्रं	१.८५.२२९	समीरो दमनकारो	१.६५.९२	सर्गकर्ता त्वकाराख्यो	१.१७.६२
स बुद्ध्वा देवमीशानं	१.१०२.४१	समुत्थाप्य स्तुषां बाला.	१.६४.३०	सर्गकाले प्रधानस्य	१.७०.८
सब्रह्माकाः सशक्राश्च	१.१०२.५८	समुद्धृतायै विद्यहे	२.४८.१४	सर्गस्तुतीयशचैद्रिय.	१.५५.७
सभा च सा भूमिपते: समृद्धा	२.५.८६	समुद्रतीरे देवहदे	१.८५.१०७	सर्गे च रजसा युक्तः	१.३.३६
सभार्यस्त्वं गृहं तस्य	२.६.३२	समुद्रास्तस्य चत्वारो	१.७२.१७	सर्पन् सृष्ट्वा ततः क्रुद्धः	१.७०.२३२
स भुक्ते विषयांश्चैव	१.८८.२७	समुद्रेषु च सर्वेषु	१.८७.२१	सर्पा वहन्ति वै सूर्य	१.५५.६९
समं कुपित वृत्ताग्नि.	१.९६.६९	समुद्रेष्विह सर्वेषु	१.४६.५	सर्वं प्रकृतिमापत्रं	१.८५.८
समं चाघोरपूजायां	२.२६.८	समुद्रो भगवानरुद्रो	२.११.६	सर्वं मम कृतं देव	१.२२.१०
समंतात्समतिक्रम्य	१.५२.१०	स मृगार्धशरीरेण	१.९६.६७	सर्वं लिंगमयं लोकं	२.४६.१३
समं नयति गात्राणि	१.८.६५	सम्यग् विजयमाप्नोति	१.८५.२२४	सर्वं व्याप्नोति यस्तस्मान्	२.१८१६
समं कायशिरोश्रीवो	१.९१.३९	सम्यग्विनीता ऋजव.	१.१०.१५	सर्वं एव स्वयं साक्षा.	१.२९.४८
समक्षं यदि तत्सर्वं	१.८५.१६८	सप्राटृ च शतरूपा वै	१.७०.२७४	सर्वकर्मणि भोगार्थं	१.८.७२
समजानुस्तथा धीमा.	१.८.८७	सयमाश्च सरुद्राश्च	१.१०२.५६	सर्वकार्यविधि कर्तुं	१.४४.३३
समर्चनाय तत्त्वस्य	२.२१.४९	स याति दिव्यमतुलं	२.७.३१	सर्वकार्याणि विधिना	२.५२.८
समर्च्य स्थापयेल्लिंगं	२.४७.१४	सयाति ब्रह्मणो लोके	१.७८.४१	सर्वकार्येण हेतुत्वात्	२.९.२३
समस्तव्यक्तरूपं तु	२.१५.९	स याति ब्रह्मणो लोकं	१.७९.३२	सर्वकुण्डानि वृत्तानि	२.४८.३
समस्तव्यस्तयोगेन	२.५५.१०	स याति ब्रह्मलोकं तु	२.८.३६	सर्वकुछक्षयार्थं च	२.४९.१३
समाः सविंशतिः पूर्णा	१.४०.५२	स याति ब्रह्मसयुज्यं	१.१७.२	सर्वगः सर्वदः शांतः	१.८२.९
समागतं विलोक्याथ	१.६२.३०	स याति मम सायुज्यं	१.९२.१७०	सर्वगः सर्वदृक् शर्वः	१.८२.२७
समागतानि चैतानि	१.७१.१७	स याति मुनिशार्दूल	१.८३.१९	सर्वगत्वाच्च देवानां	१.७०.१०२
समागतो मया सार्धं	१.१७.४७	स याति वायुसायुज्यं	१.८३.४०	सर्वगत्वात्रधानस्य	१.५३.४८
समागमे च भेदे च	१.५७.३५	स याति शिवतां चैव	१.७७.४८	सर्वगुह्यपिशाचानां	१.२१.२२
समाधानाभिगम्याय	१.७२.१५१	स याति शिवतां योगी	१.७७.४४	सर्वज्ञं सर्वं देवं	१.७६.१४
समाधिना यतिश्रेष्ठाः	१.८.७७	स याति शिवतां विप्रो	१.१९.१७	सर्वज्ञः समबुद्धिश्च	१.२४.५८
समानजो वसिष्ठश्च	१.७०.१८८	स याति शिवसायुज्यं	१.९३.१८	सर्वज्ञः सर्वदेवादि	१.९८.३०
समायुक्तो निवृत्तात्मा	१.९८.४९	स याति शिवसायुज्यं	१.७९.३६	सर्वज्ञः सर्वविज्ञानात्	१.७०.९९
समालिंग्य च दुःखार्तो	१.४३.११	स याति शिवसायुज्यं	१.८४.६	सर्वज्ञत्वं तथैशान्यं	१.२७.२६
समालोक्य च तुष्टात्मा	१.४३.२६	स याति शिवसायुज्यं	१.९१.७५	सर्वज्ञाः सर्वगा दीर्घा	१.६.१५
समावृत्य महादेवं	१.७२.८४	स योगी सर्वतत्वज्ञो	१.७३.१८	सर्वतः पाणिपादं तत्	१.८८.४३
समासतो मुनिश्रेष्ठाः	१.५.१५	सरथं विष्णुमादाय	१.१०१.१३	सर्वतः पाणिपादं त्वां	१.७१.१०७
समासनस्थे योगांगा.	१.८.८५	स रथोधिष्ठितो देवै.	१.५५.१७	सर्वतः पाणिपादाय	१.२१.३८
समासाद्वा प्रवक्ष्यामि.	१.८४.२३	सरस्वत्या महादेव्या	१.८२.१०३	सर्वतीर्थफलं तच्च	१.८५.२१५
समासाद्विस्तराच्चैव	१.७१.१	सरस्वत्याश्च नासाग्रं	१.१००.३८	सर्वत्र प्राणिनामन्त्रं	१.८६.९२
समासीनास्तु परितो	२.३.१०	स राजा सर्वलोकेषु	२.३.३७	सर्वत्र सर्वदा ज्ञानं	१.९.१८
समाहितो ब्रह्मपरो प्रमादी	१.८९.२९	सरित्सरस्तडागेषु	१.२५.११	सर्वत्राभिभवशचैव	१.९.४५
समिदाज्यविधानेन	२.३५.१०	सरीसृपत्वादगच्छेद्वै	१.८८.६८	सर्वथा वर्तमानोपि	१.३२.८

सर्वदा क्षुधितैश्चैव	१.७१.३५	सर्वमासेषु सामान्यं	१.८१.१९	सर्वायुधसमोपेतं	२.३९.४
सर्वदाय शरण्याय	१.७१.१५६	सर्वयज्ञतपोदानं	१.७७.१३	सर्वार्थज्ञाननिष्ठति.	१.८.३
सर्वदुःखविनिर्मुक्तो	२.४९.६	सर्वयज्ञफलैस्तुल्यं.	१.९२.१४१	सर्वावरणदेवानां	२.२५.१०३
सर्वदुःखसमोपेताः	२.५०.३८	सर्वरत्नसमायुक्तं	१.८४.३३	सर्वावरणनिर्मुक्तो	२.५५.१९
सर्वदेवमयो चित्यो	१.९८.११९	सर्वरूपा तथा चेमे	१.२३.२६	सर्वावर्तेषु रूपाणि	२.४८.३१
सर्वदेवमयो भूत्वा	१.९१.६८	सर्वरोगक्षयं चैव	१.८१.३३	सर्वावसुः पुनश्चान्यः	१.६०.२१
सर्वदेवेश्चरः श्रीमान्	१.१०२.६	सर्वरोगैर्न बाध्येत	१.७२.१८४	सर्वावस्थां गतो वापि	२.५४.३४
सर्वदेवैः परिवृतः	१.६२.२९	सर्वलक्षणसम्पन्नः	२.२०.३५	सर्वाशयः सर्वचारी	१.६५.१३०
सर्वद्रव्याभिषेकं च	२.२७.२४४	सर्वलोकहितायैनं	१.९५.५८	सर्वाश्च द्विभुजा देव्यो	२.२७.२२९
सर्वद्वांद्वसहा धीरा	२.२०.२९	सर्वलोकाधिपत्यं च	१.४३.५२	सर्वाश्च ब्रह्मवादिन्यः	१.७०.२८४
सर्वद्वांद्वसहो धीरः	१.८६.१४८	सर्वलोकेश्वरोऽहं त्वां	२.५.२८	सर्वा सती विश्वरूपा	२.२७.१३६
सर्वधान्यसमायुक्तं	१.८४.५२	सर्वलोकैकसंहर्ता	२.१४.३	सर्वास्ताश्च महाभागा:	१.७०.२८३
सर्वनाशकरं ध्यात्वा	२.५०.१९	सर्वविग्रहिणां देहे	२.१४.१८	सर्वे तपस्विनस्त्वेते	१.६.४
सर्वपर्वसु पुण्येषु	१.९२.१२५	सर्वविज्ञाननिक्रम्य	१.७६.३४	सर्वे ते जपयज्ञस्य	१.८५.११८
सर्वपापविनिर्मुक्तः	१.६७.२८	सर्ववेदान्सदस्याह	२.७.२७	सर्वे ध्रुवनिबद्धा वै	१.५७.५
सर्वपापविनिर्मुक्तः	२.७.९	सर्ववेलामतिक्रम्य	१.८३.१२	सर्वे पाशुपते ज्ञान०	१.६६.४४
सर्वपापविनिर्मुक्तः	२.२२.८१	सर्वव्याधिहरं चैव	१.८१.८	सर्वे प्रांजलयो भूत्वा	१.३१.२०
सर्वपापविशुद्धात्मा	१.३४.२५	सर्वव्रतेषु संपूज्य	१.८५.१	सर्वे भवांशजा नूनं	१.८७.२२
सर्वपापविशुद्धयर्थं	१.१८.४२	सर्वसंकल्पशून्याय	१.१०४.२५	सर्वे लिंगमया लोकाः	२.११.४०
सर्वपापविशुद्धर्यं	१.२५.१८	सर्वस्यं जगतश्चैव	१.८८.८९	सर्वे वणिगजनाश्चापि	१.४०.२७
सर्वपापहरं चैव	१.८५.५४	सर्वाग्रिरूपी मायावी	१.६५.१२२	सर्वे वयं हि निर्याताः	२.१.७२
सर्वपापहरं दिव्यं	१.९२.११८	सर्वाल्लोकान् क्रमेणैव	२.१८.२५	सर्वे विज्ञापयामासु.	१.९४.७
सर्वपापहरं शुद्धं	२.७.५	सर्वास्तानग्रजान् दृष्ट्वा	१.४१.४१	सर्वे विद्युत्प्रभाः शांता.	२.२२.५३
सर्वप्रणतदेहाय	१.३२.३	सर्वाकारौ स्थितावेतौ	२.११.४१	सर्वे शृणवन्तु वचनं	२.९.९
सर्वप्रणयसंवादी	१.९८.३४	सर्वातिशयसंयुक्तै०	१.८४.५	सर्वे श्वराय विद्यहे	२.४८.२५
सर्वप्रतिष्ठासंहार.	१.१.२४	सर्वात्मिको महादेवो	१.८१.४४	सर्वेषां कलशं प्रोक्तं	२.२७.२३५
सर्वप्राणाय विद्यहे	२.४८.२३	सर्वात्मिनश्च तस्याग्रे	१.४१.४८	सर्वेषां ब्राह्मणानां तु	१.२५.२९
सर्वभक्षरता नित्यं	२.६.६४	सर्वात्मनात्मनि स्थाप्य	१.४७.२२	सर्वेषां मृणु यज्ञानां	१.२६.२०
सर्वभव्या च वेगाख्या	२.२७.९७	सर्वात्मानं महात्मानं	१.४५.५	सर्वेषां सिद्धियोगाना.	१.२१.७२
सर्वभूतप्रसादश्च	१.९४.७	सर्वात्मा सर्वविज्ञातः	१.६५.५५	सर्वेषामपि देवानां	२.४८.१
सर्वभूतमयश्चैव	१.७२.२	सर्वान्कामानवान्नोति	१.८५.२०५	सर्वेषामपि भूतानां	१.२६.१७
सर्वभूतस्य दमनी	२.२१.७	सर्वभियप्रदानं च	२.१३.३७	सर्वेषामेव भूतानां	१.८९.१२१
सर्वभूतात्मभूतस्य	१.६५.५३	सर्वभिरणसंपन्न.	२.५.९८	सर्वेषामेव भूतानां	१.१०४.१९
सर्वभूतात्मभूताय	१.२१.५७	सर्वभिरणसंपूर्णा	२.२७.२३०	सर्वेषामेव भूताना.	२.१६.१५
सर्वभूतेषु सर्वत्र	१.३५.२०	सर्वभिरणसंयुक्तं	२.१९.८	सर्वेषामेव मर्त्यानां	१.७४.३०
सर्वमंगलदं पुण्यं	१.८१.७	सर्वभिरणसंयुक्तं	२.२६.१७	सर्वेषामेव लोकानां	२.१४.४
सर्वमहति कल्याणं	१.६७.९	सर्वभिरणसंयुक्तं	२.५.११५	सर्वेषु सर्वदा सर्वं	१.१०४.२७
सर्वमात्मनि संपश्येत्	१.८६.६१	सर्वाय च नमस्तुप्यं	१.१८.२५	सर्वेष्व शरीरेषु	२.१४.१६
सर्वमासेषु कमलं	१.८१.२३	सर्वायतनमुख्यानि	१.९२.१४२	सर्वे सहस्रहस्ताश्च	१.१०३.३२

सर्वोपरि निकृष्टानि	१.५७.१८	स हत्वा सर्वशश्चैव	१.४०.५४	साक्षात् सनत्कुमारेण	२.५४.९
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं	१.८.१०७	सह देवा नमश्चक्रुः	१.१०२.६३	साक्षात्समरसेनैव	१.८.११२
स लब्ध्वा गाणपत्यं च	१.१०३.६८	सहसैव भयाद्विष्णुं	१.९६.७३	साक्षात्सर्व विजानाति	१.७०.२१
सलोहगंधानिर्मुक्तं.	१.६६.७७	सहस्रं वा तदर्थं वा	१.२६.३	साक्षादधीतवेदाय	२.४०.५
सवनं ब्रह्मणश्चैव	१.२.९	सहस्रं वा तदर्थं वा	२.२२.६६	सागरा गिरयो मेघा	१.१०३.९
सवने स्यंदनेऽर्थं च	१.६१.४	सहस्रं वा तदर्थं वा	२.२८.५८	सा गर्भं पालयामास	१.६४.४५
सवनानां सहस्रं तु	१.४.४४	सहस्रकमलालाभे	१.८१.२८	सा च दृष्ट्वा महादेवं	१.१०२.१०
सविस्मयं वचः श्रुत्वा	१.२०.१९	सहस्रकलशाद्यैश्च	२.३२.७	सा च दृष्ट्वा महादेवी	१.६४.८३
स वै भक्त इति ज्ञेयः	२.४.९	सहस्रकलशैस्तत्र	२.२८.८८	सा च देव्या महाभागा	१.८४.२८
स वै शरीरी प्रथमः	१.७०.६३	सहस्रकिरणः श्रीमा.	१.५४.६५	सा च सार्थं महादेव्या	१.८४.३०
स वै शरीरी प्रथमः	१.७०.८६	सहस्रजित् सुतस्तद्वा.	१.६८.३	सा च सूर्याशुसंकाशा	१.८४.५०
स वै स्वायंभुवः पूर्वं	१.७०.२७१	सहस्रनेत्रः प्रथमः सुराणां	१.७२.५७	स चैव प्रकृतिः साक्षात्	१.६९.५०
सशब्दस्पर्शरूपं च	१.७०.४५	सहस्रनेत्रः सगणो	२.५१.१४	सा ज्योतीष्वनुवर्तती	१.५२.५
सशब्दे समये वापि	१.८.८०	सहस्रपादसौ वह्नि.	१.५९.२२	साङ्घासैर्गणीवैरैः	१.९६.५
सशरीरं तदा तं वै	१.६६.१०	सहस्राबाहुः सर्वज्ञः	१.८२.९९	सा तथोक्ता द्विधा भूता	१.७०.३२९
सशैवालं तथान्यैर्वा	१.८९.५२	सहस्राबाहुः सर्वेशः	१.९८.११५	सा तमोबहुला यस्मात्	१.७०.२०१
ससंघ्यांशेषु हीयते	१.४०.८५	सहस्रमूर्धा देवेद्रः	१.६५.१५५	सात्त्वतः सत्यसंपन्नः	१.६९.१
ससमुद्रामिमां पृथ्वीं	१.७०.१३७	सहस्रयुगपर्यंतं	१.४१.३८	सा देवी नियुतं तप्त्वा	१.७०.२७०
ससर्ज च तदाविघ्नं	१.१०५.२८	सहस्रशिरसे तुश्यं	१.७२.१३४	साधकानीद्रियाणि स्युं	१.७०.४०
ससर्ज जीवितं क्षणाद्	१.३०.२१	सहस्रशीर्षा पुरुषो	१.७०.११७	साधको ज्ञानसंयुक्तः	२.५५.२४
ससर्ज सकलं तस्मात्	१.४१.१६	सहस्रशीर्षा विश्वात्मा	१.१७.११	साधयंतो हि कार्याणि	२.१.२२
ससर्ज सकलं ध्यात्वा	१.३७.१७	सहस्रसूर्यप्रतिमं महातं	१.८०.११	साध्येण्यावतिष्ठेते	१.४.५२
ससर्ज सर्गमन्यं हि	१.७०.१५२	सहस्रहस्तचरणं	२.२१.२७	साध्येण्यावतिष्ठेते	१.७०.७२
ससर्ज सृष्टि तद्रूपां	१.७०.१३९	सहस्राक्षो विशालाक्षः	१.६५.६१	साधारणं स्मरत्येन	२.६.५९
ससर्जः पुष्पवर्षाणि	२.७.२८	सहस्रेण ज्वरो याति	२.४९.८	साधूनां विनिवृत्तिश्च	१.४०.२३
ससर्जुरस्य मूर्धिं वै	१.३०.२४	सहानिं विविशुः सर्वाः	१.६९.८९	साध्ये चित्तस्य हि गुरौ.	१.९.७
स सर्वकारणोपेतः	२.१७.४	सहिता वरयामासुः	१.७१.१२	सा निशम्य वचनं तदा शुभं	१.६४.७०
ससूत्रं सपिधानं च	२.२१.३५	सहिरण्यं सबीजं च	१.३१.१८	सान्वयं च गृहीत्वेश	१.४४.४४
ससृजुः पुष्पवर्षाणि	१.७१.१३३	स हि रामभयाद्राजा	१.६६.२९	सा पराशरमहो महामतिं	१.६४.५६
ससृजुः पुष्पवर्षाणि	१.९३.१४	सहे चैव सहस्रे च	१.५५.६२	सा प्रविष्टा तनुं तस्य	१.१०६.१३
सस्मार च तदा तत्र	१.३५.१३	सहैव चारुह्यं तदा द्विपं तं	१.१०७.२६	सा प्रबुद्धा फलं दृष्ट्वा	२.५.१८
सस्मितं प्राह संप्रेक्ष्य	१.३३.२४	सहैव ननृतुश्चान्ये	१.७१.१३१	सा भवान्यास्तनुं गत्वा	१.८४.७०
सस्यचौरा भविष्यति	१.४०.३५	सहैव मरणं तेषां	१.५२.२२	सामग्रेयः प्रियकरः	१.९८.१२८
स स्वेच्छया शिवः साक्षाद्	१.७५.३६	स होवाच परं ब्रूहि	१.२०.५४	सामवेदस्तथाऽर्थों	१.८६.५२
सहंसेन यथान्यायं	२.२१.५४	स होवाचैव याज्ञवल्क्यो	२.९.५३	सामशाखा सहस्रं च	१.४३.६
सहःसहस्रौ च तथा	१.५५.२३	सा		सामर्थ्यं च सदा मह्यं	१.७२.७५
सहजागंतुकं पापं.	१.८६.११६	सांगान्वेदान् यथान्याय.	१.७७.९५	सामर्थ्यात्परमेशानाः	१.४६.१४
सहजागंतुकानां च	१.८.५९	सांबः सनंदी सगणः	१.९७.१३	सा मातुरुदरस्था वै	१.६९.२९
				सामानि जगतीच्छद.	१.७०.२४५

सामान्यं यजनं सर्वं	२.२६.५	सिंहासनैर्मणिमयैः	१.५१.१०	सुदर्शनेन मुनिना	१.२९.४४
सामान्यं सर्वमार्गेषु	२.२२.७७	सितं च अतलं तच्च	१.४५.१३	सुदासस्तस्य तनयो	१.६६.२६
सामान्यदेवः कोदण्डी	१.९८.३८	सितपंकजमध्यस्थं	२.१९.२०	सुदृढं च तुलामध्ये	२.२८.३८
सामान्यानि समस्तानि	२.१६.१०	सितमृत्यात्रकैश्चैव	१.७७.८५	सुद्युम इति विख्याता	१.६५.२०
सामुद्रा वै समुद्रेषु	१.७०.१२८	सितरक्तहिरण्याभ०	२.२७.२३	सुधामां काश्यपश्चैव	१.७.४४
सा मेनातनुमाश्रित्य	१.१०१.२	सितातपत्रं रत्नांशु	१.७२.९२	सुधृतिस्तनयस्तस्य	१.६८.४०
साम्नायेथ महाम्नाय	१.६५.१४५	सितातपत्रं शैलादेऽ	१.७१.१४६	सुनंदो नदनश्चैव	१.११.७
साम्यावस्थात्मको बोधः	१.४०.७३	सितैः सहस्रकमलैः	१.८१.१२	सुनासं पदाहृदयं	२.५.१०९
साम्ये लयो गुणानां तु	१.४.५३	सितैर्विकसितैः पदैः	१.७७.८४	सुनिष्ठेत्यत्र कथिता	१.२८.२५
सायुज्यं चैवमान्नोति	१.८४.१४	सितोदं पश्चिमसरो	१.४९.३९	सुनीतिरस्य या माता	१.६२.२५
सायुज्यं ब्रह्मणा याति	१.१०.५	सिद्धक्षेत्रं महापुण्यं	१.२४.७८	सुनीले रक्षसां वासाः	१.५०.९
सायुधा द्वादशैवैते	१.५५.४५	सिद्धक्षेत्रे महापुण्ये	१.२४.८७	सुपुष्टितस्य वृक्षस्य	२.५४.२१
सारंगैः क्वचिदुपशोभितप्रदेशं	१.९२.२५	सिद्धमत्रोऽन्यथा नास्ति	२.५०.१५	सुप्त्वा भुक्त्वा च वै विप्राः	१.८९.७२
सारं पश्चिमभागे च	२.२८.६८	सिद्धविद्याधराहीन्द्रै०	१.७४.२३	सुप्रजाय सुमेधाय	१.२१.४०
सारस्वतश्च मेघश्च	१.२४.३८	सिद्धसंघानुगीताय	१.२१.६५	सुप्रभः सुप्रभस्यापि	१.४६.४१
सारस्वतस्तथा चित्र०	२.१.२७	सिद्धांतकारी सिद्धार्थ	१.६५.१३३	सुप्रसन्ने महाभागे	२.२०.२५
सारस्वतस्त्रिधामा च	१.७.१५	सिद्धात्मानो मनुष्यास्ते	१.७०.१५६	सुप्रीतमनसं देवं	१.४१.२८
सारस्वती भवेदेवी	१.८५.२०१	सिद्धियोगापहारी च	१.६५.८३	सुभिक्षं क्षेममारोग्यं	१.४०.३७
सार्धं दिव्यांबरा दिव्या	१.१०६.१८	सिद्धिर्माया क्रिया दुर्गा	१.१०३.८३	सुमंतुजैमिनिश्चैव	२.४६.८
सार्धं प्रदक्षिणं कृत्वा	१.९२.१८०	सिद्धदैवेश्च पितृभिं०	१.५२.५०	सुमंतुर्बर्बरी विद्वान्	१.७.४७
सार्धं ममैव देवेशं	१.१०२.५१	सिद्धदैवेश्च संपूर्णं	१.४८.२०	सुमतिर्दुर्मतिर्मेधा	२.२७.१७६
सार्धत्रितालविस्तारः	२.२८.४१	सिद्धदैश्च यज्ञगंधर्व०	१.८२.२८	सुमेधसे कुलालाय	१.२१.५२
सार्वभौमो महातेजाः	१.६२.३	सिसृक्षमाणो लोकान्वै	१.८५.१२	सुयशायाः सुनेत्रायाः	१.४८.२९
सार्वभौमो महातेजाः	२.५.१७	सिसृक्षया चोद्यमानः	१.३.१६	सुयोगा च वियोगा च	२.२७.२०६
सावद्यं निरवद्यं च	१.८८.११			सुरचितसुविचित्रकुण्डलाय	१.३३.१८
सावित्री च तथा लक्ष्मी०	२.२७.२७४			सुरतांतस्तु विप्रेद्र	१.२९.६०
सा सदास्तु विरूपाक्ष०	२.५५.४६			सुरभिः सर्वतोभद्रा	१.८२.९०
सा सा विश्वेश्वरी देवी	२.११.२१			सुरभिर्जनयामास	१.६३.३९
साहंकारमिदं श्रुत्वा	१.९६.३६			सुरश्रेष्ठस्तदा श्रेष्ठं	१.९८.२१
				सुराणां संस्थितिर्यस्यां	१.६५.२८
				सुरुचिसं विनिर्धूय	१.६२.६
सिंदूरवर्णाय समंडलाय	२.१९.३३			सुरेंद्रबुद्ध्या संपूज्य	२.३९.६
सिंहं मृगाणां वृषभं गवां च	१.५८.१३			सुरेतरादिभिः सदा	१.१०५.५
सिंहनादं महत्कृत्वा	१.३०.३५			सुरेशः शारणं सर्वः	१.९८.१५३
सिंहनादं महत्कृत्वा	१.९७.४२			सुरेश्वरमुवाचेदं	१.९७.१५
सिंहशार्दूलरूपाणा.	१.६५.७२			सुवर्चला स्मृता देवी	२.१३.१४
सिंहाजिनांबरधर.	२.२६.१६			सुवर्चसे च वीर्याय	१.२१.२७
सिंहात्तो नरो भूत्वा	१.९५.६२			सुवर्णकृतसोपानान्	१.८०.३८
सिंहारूढा महादेवी	१.८२.१०७			सुवर्णदिशनिष्केण	२.३५.७
सिंहासनं च परमं	१.४४.४१			सुवर्णपुष्टं पटहं	२.२८.८६
सिंहासने ह्यनंतादीन्	२.४८.४९				

सुवर्णिता: सर्वज्ञः	१.६५.६४	सूर्यमंडलसंकाशै०	१.७६.२०	सोपवासं चतुर्दश्यां	१.८३.२१
सुवर्णवस्वसंयुक्तं	१.८४.५१	सूर्यमाप्याययन्तेते	१.५५.६७	सोपि गोकर्णमाश्रित्य	१.६५.९
सुवर्णश्वं प्रदत्त्वा तु	२.३९.७	सूर्यसोमाग्निसंबंधात्	२.२१.९	सोऽपि तस्मै कुमाराय	२.५५.४
सुवर्णेन मुनिश्रेष्ठाऽ	१.४५.१६	सूर्यग्निजलदेवानां	१.८५.१४९	सोपि तस्य मुखाच्छुत्वा	१.१०.२४
सुवाहाय विवाहाय	१.१८.२१	सूर्यचन्द्रमसोदिव्ये	१.६.१६	सोपि तस्यामरेशस्य	१.३८.६
सुवृत्तं कल्पयेद् भूमौ	२.२२.२४	सूर्यात्मकस्य देवस्य	२.१२.१७	सोपि तारो महातेजाऽ	१.१०१.११
सुवृत्तं मंडलं दिव्यं	१.३१.१३	सूर्ये वह्नौ च सर्वेषां	१.२८.२६	सोपि तुष्टो महादेव	१.१०१.३७
सुवृत्तं सुतरां शुभ्रं	१.८०.२३	सूर्योदये प्रत्युषसि	१.९१.२१	सोपि देवः स्वयं ब्रह्मा	१.३७.८
सुव्रते सुभ्रु सुभगे	१.२९.४७	सूर्योऽहमिति संचित्य	२.२२.१८	सोपि दृष्ट्वा महादेव०	१.६४.८९
सुशीला शीलसंपत्ता	१.८२.९१			सोपि नारायणः श्रीमान्	१.७१.४०
सुशोभमानो वरदः	१.७२.२९	सृंजय्यां भजनाच्चैव	१.६९.३	सोपि पाशुपतो विप्रो	२.१८.५६
सुश्वेताय सुवक्राय	१.१८.१४	सृजते ग्रसते चैव	१.७०.१००	सोपि याति शिवं स्थानं	१.७७.६७
सुषुप्तं हृदयस्यं तु	१.८६.६७	सृष्टा बुद्धिर्मया तस्यां	१.७०.३०	सोपि लब्ध्वा वरं तस्याः	१.१०७.६१
सुषुप्तः करणीर्भिन्न०	१.८६.७१	सृष्ट्यंतरे पुनः प्राप्ते	१.७६.२७	सोपि विष्णोस्तथाभूतं	१.९५.५
सुषुप्तिस्वप्नजाग्रत०	२.१६.१७	सृष्ट्यर्थं संस्थितं वहि	१.८८.८०	सोऽपि शिष्यः शिवस्याग्रे	२.२१.७६
सुषुम्नो हरिकेशश्च	१.६०.२०	सृष्ट्यर्थेन जगत्पूर्वं	१.९६.४१	सोपि संचिन्त्य मनसा	१.२९.३९
सुषेणा इति विख्याता	१.४६.९	सृष्ट्वा चतुष्टयं पूर्वं	१.७०.२४९	सोपि हृष्टो मुनिवरै०	१.१.६
सुष्वापांभसि यस्तस्या०	१.४.५९	सृष्ट्वा पुनः प्रजाशचापि	१.७०.२१४	सोभिषिच्याथ ऋषभो	१.४७.२१
सुसमे भूतले रम्ये	२.३०.२	सृष्ट्वा सुरांसताः सो वै	१.७०.२०२	सोमं सुतं भूमिजमग्निवर्णं	२.१९.३८
सुहोत्रः कंकणश्चैव	१.७.३१	सृष्ट्वा स्थितं हरि वामे	१.७६.९	सोममंगारकं चैव	२.२२.५८
सुहोत्राय हविप्याय	१.१८.१७			सोममंगारकं चैव	२.२८.७०
सू					
सूक्ष्मं वदंति ऋषयो	१.२८.१८	सेचयित्वाथ भगवान्	१.२९.३२	सोममंगारकं देवं	२.१९.२३
सूक्ष्मेण महता चाय	१.७०.९	सेचयेदर्चनस्थानं	२.१७.८	सोमधृक् सूर्यवाचश्च	१.७२.७७
सूक्ष्मो भूत्वा शरीराणि	२.१८.१८	सेंद्राः संगम्य देवेश०	१.७१.६४	सोमर्क्षग्रहसूर्येषु	१.६१.२१
सूतकं च न संदेहः	२.४५.८६	सेंद्रा देवा द्विजश्रेष्ठा	१.७१.३८	सोमवंशाग्रजो धीमान्	१.६५.२५
सूतकं प्रेतकं नास्ति	१.८९.८१	सेनाजिच्च सुषेणश्च	१.५५.५७	सोमश्च मंत्रसंयुक्तो	१.२३.४०
सूत सुव्यक्तमखिलं	१.४५.१	सेनासतंभनकादीनि	२.५२.४	सोमात्मको बुधैर्देवो	२.१३.१५
सूतिकाशौचसंयुक्तः	१.८९.७६	सेवते ब्राह्मणास्तत्र	१.४०.१८	सोमादिवृदं च यथा क्रमेण	२.१९.३१
सूत्यामेव च पुत्राणां	१.६३.८	सेवमानोथ मध्ये वै	२.१.४७	सोमो गदां धनेशश्च	१.१०२.३४
सूत्राव्याकृतरूपं तं	२.१६.१२	सेवां चक्रे पुरं हन्तुं	१.७२.६२	सोसूजद्वीरभद्रश्च	१.१००.४
सूत्रे तत्त्वत्रयोपेते	२.४७.३२	सेवावसरमालोक्य	१.४०.१७	सोहमेवं जगत्सर्वं	१.८६.९५
सूत्रे नमः शिवायेति	१.२७.६	सेवितं गणगंधैः	१.९५.३४		
सूर्य नित्यमुपस्थाप्य	१.८५.१९६	सेवेत सततं धीमान्	१.९१.७६		
सूर्य एवं त्रिलोकेशो	१.६०.८	सेव्यासेव्यत्वमेवं च	१.३३.२३		
सूर्यकोटिप्रतीकाशा	१.१०३.३४				
सूर्यकोटिप्रतीकाशै०	१.७६.४				
सूर्यकोटिप्रतीकाशै०	१.८१.५०				
सूर्यमंडलवद् दृष्ट्वा	१.१७.५२				
सूर्यमंडलसंकाशे	१.६४.९३				
सूर्यमंडलसंकाशै०	१.७१.२६				

सौराणि च प्रवक्ष्यामि	२.२३.१९	स्वीलिंगमखिलं सा वै	१.५.३०	स्थूलैः सूक्ष्मैः सुसूक्ष्मैश्च १.७२.१८२०	
सौरोंगिराश्च वक्रश्च	१.६१.३९	स्त्रीवध्यौ दर्पितौ दृष्ट्वा	१.९२.८२	स्ना	
सौवर्णि पिंडिकं चापि	१.१०८.१२	स्त्रीशूद्राणां कथं वापि	२.१९.४	स्नात्वा देवं नमस्कृत्य २.२८.१	
सौवर्णि राजतं सापि	१.१०८.१४	स्त्रीशूद्राणां द्विजेन्द्रैश्च	२.२०.३	स्नात्वार्धमासात्संशुद्धा १.८९.१०२	
सौवर्णि राजतं शैलं	१.३१.१५	स्त्रीसंगमे तथा गीते	२.३.६०	स्नानं विधानतः सम्यक् १.८.३३	
सौवर्णिमध्यवच्चांड०	१.१७.६६	स्त्रीसंघैर्देवदेवस्य	१.८०.३५	स्नानमंगलहीनाश्च २.६.६३	
सौवर्णि राजती वापि	२.२५.४२	स्त्रीसहस्रैः समाकीर्णा	१.४८.१२	स्नानमात्रेण वै शुद्धिं १.८९.८२	
स्क					
स्कंद तयोश्च मध्ये तु	२.४७.३५	स्थंडिलात्कोटिगुणितं	२.२६.२७	स्नानयागादिकर्मणि २.२२.१	
स्कंदमालिंग्य चाप्राय	१.७१.१३०	स्थंडिलेषु विचित्रेषु	१.३१.२३	स्नानयोगादयो वापि २.२०.१२	
स्कंदस्य संभवं श्रुत्वा	२.५४.११	स्थलपद्मवनांतस्य०	१.४९.६४	स्नानयोगेन विधिना २.२७.२७८	
स्कंदोमासहितं देवं	१.७६.३	स्थाणुर्हरश्च दंडेशो	२.२७.१०४	स्नानयोगोपचारं च १.२५.५	
स्कंदोमासहितं देव०	१.७६.२	स्थाणोस्तत्पुरुषाख्या च	२.१४.७	स्नानात्संवेदनाद्वापि १.९२.४७	
स्कंधः स्कंधधरो धुर्यः	१.९८.१४४	स्थाननाशो भवेतस्य	२.५०.४५	स्नाने च संध्ययोश्चैव १.८५.१८७	
स्कंधे विपंचीमासाद्य	२.३.८४	स्थानपञ्चकसंस्थाय	१.१०४.२३	स्नाने शौचं तथा गानं १.८९.१०४	
स्त					
स्तंभयोस्तु प्रमाणेन	२.२८.३०	स्थानाभिमानिनामेत्	१.५५.७७	स्नापयंति महाकुंभ० १.३२.१५	
स्तंभिता देवदेवेन	१.१०२.३६	स्थनाभिमाननो ह्येते	१.५५.३८	स्नापयामास च विभुः १.९८.१६०	
स्तंभिनी घोररक्ताक्षी	२.२७.१६७	स्थानार्थं कथितं मात्रा	१.१०.४३	स्नापयित्वा तु शिष्याय १.८५.९३	
स्तंभैश्च वैदूर्यमयैः	१.४४.२१	स्थाने तव महादेव	१.७२.१०६	स्नापयेद्वदेवेश १.२७.४६	
स्तनजेन तदा सार्धं	१.१०६.२३	स्थाने पौत्रं मुनिश्रेष्ठ	१.६४.७२	स्नापयेद्विधिना रुद्रं १.२७.३२	
स्तनितं चेह वायव्यं	१.५४.४५	स्थाने संशयितुं विप्र	१.३७.१६	स्नाप्य संपूज्य गंधाद्य० १.९८.२३	
स्तवेनानेन तुष्टोस्मि	१.७२.१६९	स्थापयेदुत्सवं कृत्वा	२.४८.२	स्नाप्यैव सर्वभूपैश्च २.२७.२७९	
स्तुतस्त्वेन सुरैर्विष्णो०	१.७१.११६	स्थापयेद्वगायत्र्या	२.४८.२९	स्निधकंठस्वरास्तत्र २.३.११	
स्तुतेस्त्रैलोक्यनाथस्तु	१.८२.२९	स्थापयेद्वद्वलिंगं हि	२.४७.३०	स्नुषावाक्यं ततः श्रुत्वा १.६४.१५	
स्तुत्वा च देवमीशानं	१.७९.२१	स्थापयेन्मध्यदेशे तु	२.५०.२८	स्नुषावाक्यं निशम्यैव १.६४.४३	
स्तुवतं प्राह देवारिः	१.९५.६	स्थापितं ब्रह्मणा चापि	१.९२.८८	स्प	
स्तेयादध्यधिकः कश्चिं	१.९०१२	स्थापितं लिंगमेतत्	१.९२.९३	स्पृशन्कराभ्यां ब्रह्माणं १.४१.५६	
स्तेयी सुवर्णस्तेयी च	१.१५.२८	स्थापिताः पूजिताचैव	२.४७.६०	स्पृशेदथर्वेदानां १.२६.२६	
स्तोष्यामस्त्वां कथं भासि	१.९५.२९	स्थाप्यात्मानममुं जीवं	२.२१.५९	स्पृष्ट्वा प्रेतं त्रिरात्रेण १.८९.८८	
स्त्र					
स्त्रियः सदा परित्याज्या:	१.८.२१	स्थावराणां पतिश्चैव	१.६५.१६७	स्फ	
स्त्रियश्चोत्पलवर्णाभा	१.५२.१३	स्थावरेषु विपर्यासिः	१.७०.१५८	स्फाटिकं वरुणो राजा १.७४.४	
स्त्रीणां कुंडानि विप्रेन्द्रा	२.२८.२१	स्थितस्तत्पुरुषो देवः	२.१४.१२	स्फाटिकैर्मदैप्यैः शुभ्रै० १.८०.२४	
स्त्रीणां देवीमुमादेवीं	१.५८.८	स्थिता स्वल्पावशिष्टासु	१.४०.६३	स्म	
स्त्रीणामपि विशेषेण	२.५०.९	स्थितिकाले तदा पूर्णे	१.१७.७	स्मयन्नाह महादेवो १.२४.६	
स्त्रीधर्मं चाकरोत्स्वीणां	१.७१.८३	स्थित्यर्थेन च युक्तोसि	१.९६.१८	स्मरणादेव रुद्रस्य १.४४.१	
स्त्रीधर्मं निखिले नष्टे	१.७१.९५	स्थित्वा स्वर्गे चिरं कालं	२.४२.६	स्मरामि बिंबानि यथाक्रमेण २.१९.३६	
स्त्रीपुंभावो विरिचस्य	१.२.११	स्थूलं सूक्ष्मं सुसूक्ष्मं च	१.९५.२३	स्मरामि सव्यमभयं २.१९.३६	
स्त्रीपुंसोः संप्रयोगे हि	१.८८.४८	स्थूलता हस्तता वाल्य	१.९.३०	स्मृतिश्च तुषुवे पल्ली १.५.४५	
स्त्रीबाधां बालबाधां च	२.५०.६	स्थूलशीर्षानष्टदंष्ट्रान्	१.७०.३०८	स्मृतो यद् भवता जीव १.१०१.३४	
स्त्र					
स्त्रैव्यं वस्तुजातं तु					
स्त्रष्टा भानुर्महातेजा					
		स्थूला ये हि प्रपश्यन्ति	१.९६.५५	१.५४.६२	

स्नानुं च भगवांश्चक्रे	१.३८.१०
स्नानुं तदा पर्ति चक्रे	१.४.६०
स्नान्ते नमः सर्वसुरासुराणां	१.७२.१५९
सुक्ष्मुवसंस्कारमयो	२.२५.७९
स्व	
स्वं देवश्चाद्गुं दिव्यं	१.४३.४२
स्वः स्वाहा	२.४५.७७
स्वः स्वाहा	२.४५.६९
स्वर्कर्मणं परं स्थानं	१.६२.१५
स्वच्छंदतः स्वच्छंदांसि	१.७०.२३६
स्वदारे विधिवत्कृत्वा	१.८.१८
स्वदेशरक्षणं दिव्यं	२.४३.२
स्वदेहपिंडं जुहुयाद्यः	१.७७.४६
स्वधनं सकलं चैव	१.२९.७६
स्वधां चैव पितृभ्यस्तु	१.७०.२९२
स्वपर्ति चाभिषिच्चैव	२.२७.१२
स्वपुत्रं च स्मरन् दुःखात्	१.६४.२६
स्वप्ने च विपुलान् भोगान्	१.७५.२८
स्वप्ने दृष्टं यत्पदार्थं ह्यलक्षं	१.७२.१६५
स्वभावो भासते यत्र	२.५५.१६
स्वभृत्यान् ब्राह्मणा ह्येते	२.१.३०
स्वमेवं चन्द्रदिग्भागे	२.२८.७८
स्वयं ज्योतिरनुज्योति	१.९८.९३
स्वयंभुवोपि वृत्तस्य	१.७०.१०७
स्वयंभूते तथा देवे	१.७७.४५
स्वयंभूर्भगवांस्तत्र	१.५०.८
स्वयंवरं तदा देव्या	१.१०२.१७
स्वयं वा जुहुयादग्नौ	२.२७.२५६
स्वयंवेद्यमवद्यं ता०	१.८.१०६
स्वयं शक्र इवासीन०	२.५.२७
स्वयमाचरते यस्तु	२.२०.२०
स्वरकल्पास्तु तत्रस्थाः	२.३.९१
स्वराडिति समाख्यातः	२.१२.१६
स्वरात्मनः समाख्याता०	१.७.२७
स्वरूपमेव भगवा०	१.१०७.५०
स्वर्गपाताललोकांता०	२.११.३३
स्वर्गापर्वगफलदं	१.८८.३९
स्वर्णोदकेन तामाह	१.४३.४६
स्वर्णानुं नुदते यस्मात्	१.६१.३२
स्वर्णीनेश्वर इत्येव	१.९२.७८
स्वल्पषट्सिद्धिसंत्यागात्	१.९.१६

स्ववशः सवशः स्वर्गः	१.९८.१२३	हंस हंसेति यो ब्रूयात्	१.१७.३९
स्वशाखाध्ययनं विप्रा	१.२६.१६	हंसाख्यं च ततो ब्रह्म	१.८६.१३७
स्वशिष्यैस्त्वं महाप्राज्ञा	२.१.५५	हंसानां पक्षवातप्रचलित-	
स्वसंवेद्ये परे तत्वे	२.२०.३६	कमल०	१.९२.२४
स्वस्ति तेऽस्तु महाप्राज्ञ	२.३.७५	हकार आत्मरूपं वै	१.१७.८१
स्वस्तिरित्यादिभिर्वाचादा०	२.२८.७६	हतानां च तदा तेषां	१.१००.४४
स्वस्त्यस्तु ते गमिष्यामि	१.२२.१५	हत्वा दग्ध्वा च भूतानि	१.७१.४७
स्वस्त्यावेया इति ख्याता	१.६३.७५	हत्वा भित्त्वा च भूतानि	१.७३.२६
स्वस्थौ भवन्तो तिष्ठेतां	२.५.११२	हत्वा हत्वा च भूतानि	२.५४.३५
स्वागतं स्वागतं वत्स	१.१७.१८	हत्वा हन्त्वा तु संप्रप्तान्	१.५४.२४
स्वातेः पथ इवाभाति	१.२१.७३	हन्यते तात कः केन	१.६४.१०
स्वात्मानमपि देवाय	१.१०३.४९	हयशीर्षा पयो धाता	१.२१.७९
स्वदूदकेनोदधिना	१.५३.२७	हयाननानां मुख्यानां	१.५०.४
स्वाध्यायनिरतः पश्चा०	१.४७.१३	हरं यजंति सर्वेशं	१.५२.३६
स्वाध्यायस्तु जपः प्रोक्तः	१.८.३९	हरयश्चाप्यसंख्याता०	१.४.५५
स्वाध्यायेन च योगेन	१.३५.२४	हरव्यूहः समाख्यातो	२.२७.१५२
स्वान्नाणाननपेक्षांतो	१.४०.६६	हरश्च बहुरूपश्च	१.६३.२१
स्वायंभुवः प्रसूतिं च	१.७०.२७७	हरहारलतामध्ये	१.९६.४७
स्वायंभुव शृणु व्यूहं	२.२७.१९५	हरिकेशाय देवाय	१.९५.४३
स्वायंभुवसुतायां तु	१.७०.२८२	हरितो लोहितस्याथ	१.६६.१२
स्वायंभुवात् वै राजी	१.५.१६	हरिमित्रं समाहूय	२.३.४२
स्वायंभुवेतरे पूर्वे:	१.६३.४६	हरिमित्रो कृतं पापं	२.३.४०
स्वायंभुवे तदर्थं स्यात्	१.७७.३५	हरिमित्रो विमानेन	२.३.४८
स्वाहांतं पुरुषेणेह	२.२७.२४६	हरिवक्त्राय विद्वहे	२.४८.११
स्वाहांतं प्रणवेनैव	२.२८.५५	हरिश्च हरिणाक्षश्च	१.६५.५६
स्वाहाकारैः पृथग् हुत्वा	१.८८.८४	हरिस्तदर्शनादेव	१.९६.७०
स्वाहाकारो वषट्कारो	२.६.२५	हरे: पितामहस्याथ	१.२.५३
स्वाहा स्वधा मतिर्बुद्धिं०	१.१०३.६	हरे: सर्वमितीत्येवं	२.४.११
स्वाहा स्वधा महाविद्या	१.७०.३३०	हरेरये महाभागा	२.५.१५
स्विष्टांतं सर्वकर्माणि	२.२८.५६	हरेरन्यमपीद्रं वा	२.१.२६
स्वेच्छया ह्यवतीर्णोपि	१.१०८.३	हरेस्तदर्थं विस्तीर्ण	१.४८.२३
स्वेच्छयैव नरो भूत्वा	१.३५.११	हर्तारः परवित्तानां	१.४०.३२
स्वेषु स्वेषु च पक्षेषु	२.४६.१६	हर्म्यप्रासादसंबाधं	१.८०.१५
स्वैः स्वैर्भवैः स्वनाम्ना च	२.२२.६१	हर्यश्वात् दृष्टद्वत्या	१.६५.४५
स्वोदरं दुःखिता भूमौ	१.६४.२९	हलाहलस्य दैत्यस्य	१.२.५१
स्वोपभोग्यानि कन्यायां	१.६९.८२	हलैश्च फालैर्मुसलैर्मुशुडै०	१.७२.७२
ह		हविर्जुहोमि वह्नौ तु	१.१०३.५६
हंत ते कथयिष्यामि	२.११.२	हविषाकृष्णवत्मेव	१.६७.१७
हंत ते कथयिष्यामि	२.१२.२	हव्यं वहति देवानां	२.१०.२५
हंतीति श्रूयते लोके	२.५.३	हसंतं मा समालोक्य	२.५.१०२
हंतुं चराचरं सर्वं	१.९७.२१	हस्तं देवस्य देव्याश्च	१.१०४.५९

हस्तमात्रं भवेत्कुङ्दं	२.२५.४	हिरण्यगर्भं रुद्रोसौ	१.२८.१०	हृदये मे सदा गावो	२.३८.८
हस्तविक्षेपभावेन	२.३.६२	हिरण्यगर्भं इत्येव	१.९२.७६	हृदिस्थं चितयेदग्निं०	२.२५.१०७
हस्तशिचत्रा तथा स्वाती	१.८२.७९	हिरण्यगर्भः कर्तास्य	२.१६.७	हृदिस्था देवता॒ः सर्वा॑	२.१८.११
हस्ताभ्यां क्रियमाणस्तु	१.८८.५०	हिरण्यगर्भसर्गश्च	१.५३.४७	हृष्टपुष्टास्तया सिद्ध्या	१.३९.२९
हस्ताभ्यां नासिकं पात्र.	१.८९.६९	हिरण्यगर्भे चंद्रेशे	१.१.४	हे	
हस्ताभ्यां नासिकं पात्र०	२.२५.१८	हिरण्यगर्भे नंदीशे	१.७७.४३	हेतुरस्याथ जगतः	१.२०.७०
हस्तिनां चरितं चैव	१.४३.७	हिरण्यगर्भे भगवां	२.१.४२	हेमंते ताप्रवर्णश्च	१.५९.४०
हस्ते खड्गं खेटकं पाशमेक	२.२६.१९	हिरण्यगर्भे रजसा	१.१७.१२	हेमंते शिशिरे चैव	१.५९.३१
हा		हिरण्यगर्भे हरिणः	१.९८.१३७	हेमकूटं च तद्वर्षं	१.४७.७
हा पुत्र पुत्र पुत्रेति	१.६४.५	हिरण्यनाभः कौशल्यो	१.२४.९३	हेमकूटे तु गंधर्वा	१.५२.४५
हा पुत्र पुत्र पुत्रेति	१.६४.२५	हिरण्यनेत्रतनयं	१.९३.२१	हेमताप्रादिभिश्चैव	१.८४.६७
हारकुङ्डलकेयूर०	१.१०३.३३	हिरण्यबाहवे तुभ्यं	२.६.२२	हेमतोरणकुंभैश्च	२.२७.२६४
हा रुद्र रुद्र रुद्रेति	१.६४.८१	हिरण्यबाहवे साक्षा०	१.९५.३८	हेमप्राकारसंयुक्तं	१.५१.९
हा वसिष्ठ सुत कुत्रचिद्‌गतः	१.६४.५७	हिरण्यबाहुर्भगवान्	२.१८.३१	हेमरत्नचिते दिव्ये	१.३७.२६
हाहाहूहूनिश्रेष्ठा	१.५५.३०	हिरण्यबाहुश्च तथा	१.६५.१३८	हेमरत्नमयं वापि	२.४७.७
हाहाहूहूश्च गंधर्वाँ	२.३.८७	हिरण्यरेतसे चैव	१.१०४.१२	हेमलिंगाय हेमाय	१.१८.६
हि		हिरण्यरेतास्तरणि०	१.९८.५२	हेमसोपानसंयुक्त०	१.४८.१३
हिंसया ते प्रवर्तते	१.८५.११७	हिरण्यवर्णो ज्योतिष्मान	१.९८.९९	हेमांगुलीयकं दत्त्वा	२.३७.७
हिंसा सदा गृहस्थानां	१.७८.६	हिरण्यवृषदानं च	२.४१.१	है	
हिताय चाश्रमाणां च	१.१०२.२	हिरण्याक्षी सुवर्णक्षी	२.२७.१९६	हैमं च राजतं दिव्यं	१.७१.३
हिताय सर्वजन्तुनां	१.५४.३४	हिरण्याय महेशाय	१.९५.४५	हैमं च राजतं धेनुं	२.४५.८१
हिताय सर्वदेवानां	१.८०.३	हिरण्याश्वप्रदानं च	२.३९.१	हैमंतिके महादेवं	१.८१.२६
हित्वा पुत्रांश्च दारांश्च	१.४०.६८	हु		हैममन्दिः शुभं पात्रं	१.८९.५९
हिमघ्नाय च तीक्ष्णाय	१.२१.६०	हुंकारः प्रणवश्चैव	१.१०३.१०	हैममेवं शुभं कुर्यात्	२.२९.३
हिमप्रायस्तु हिमवान्	१.४९.१८	हुतशोषं च विप्रेद्रान्	१.८३.४१	हैमीकृतो महेशस्य	१.४८.४
हिमवंतं गिरीणां तु	१.५८.९	हुताशनसहायश्च	१.६५.८०	हैमेन चित्ररत्नेन	२.२७.४७
हिमवच्छिखरे रम्ये	१.२४.४९	हुत्वाधोरेण देवेशां	१.१५.२५	हैमो हेमकरो यज्ञः	१.६५.८८
हिमवच्छिखरे रम्ये	१.२४.९२	हुत्वा च तावत्पालाश०	१.८५.१९८	हैरण्मया महाभागा	१.५२.१७
हिमवत्पर्वतं प्राप्य	१.१०७.२०	हुत्वा चाष्टसहस्रं तु	१.८५.२०२	हैरण्ये राजते चैवं	१.७१.२२
हिमवान् यक्षमुख्यानां	१.५२.४८	हुत्वा तिलाद्यैर्विधैस्तथाग्नौ	२.१९.३५	हैहयश्च हयश्चैव	१.६८.४
हिमशैले कृते भक्त्या	१.७७.१८	हुत्वा त्रियंबकेनैव	१.४३.१४	हो	
हिमोद्धाश्च ता नाद्यो	१.५९.२६	हुत्वा दशसहस्रं तु	१.८५.१९३	होतारं लिंगसूक्तं च	१.६४.७८
हिरण्यमयस्य गर्भोऽभू०	१.७०.१०६	हुत्वा पंचाहुतीः सम्यक्	१.८८.८१	होतारेणाथ शिरसा	१.२७.४२
हिरण्यमया इवात्यर्थं	१.५२.१५	हु		होमयेदंगमत्रेण	२.२१.५०
हिरण्यमात् परं चापि	१.४९.१०	हृत्पुंडरीकमध्यस्थं	२.५.२३	होमश्च पूर्ववत्सर्वो	२.२६.२२
हिरण्यकशिष्यं हत्वा	१.९५.५३	हृत्पुंडरीकसुषिरे	१.७०.१०४	हु	
हिरण्यकशिष्यौः पुत्रः	१.९५.२	हृदयं तद्विजानीया०	२.२३.६	हस्वदीर्घप्लुतादीनां	१.९.१९
हिरण्यकशिष्योऽप्राति-	१.९४.३	हृदयस्यास्य मध्ये तु	१.८६.६३	हस्वा तु प्रथमा मात्रा	१.९१.५८
हिरण्यगर्भं तं देवो	१.९९.१०	हृदयांतर्विहर्वापि	१.८५.२२८		
हिरण्यगर्भं पुरुषं	२.१६.६	हृदये गुह्यके चैव	१.८५.७२		

श्रीलिङ्गमहापुराणम् श्लोकानुक्रमणी समाप्तम्।

# विषयानुक्रमणिका

( श्रीलिङ्गमहापुराण में वर्णित विषयों की अनुक्रमणिका पृष्ठ संख्या निर्देश सहित )

अ		इ		ऋ
अंधक कथानक	५३०	इन्द्र वाक्य	१८३	ऋषि वाक्य १४७
अखण्ड ब्रह्माण्ड	९	इलावर्त	२१२	ऐ
अग्नि		ई		एतरेय कथा ६५६
—कार्य	७३६	ईशान माहात्म्य	६२	क
—भेद	२५२	उमापति माहात्म्य	६६७	कन्यादान ७९४
अघोर		उत्पत्ति		कल्प ९९
—अर्चन	७४६	—अघोर	५७	काम दाह ५८१
—आराधना	८२०	—अघोरेश	५७	कालमान ९,१३
—उत्पत्ति	५७	—ईशान	६२	कृष्ण ३१३
—जप	८२०	—कल्पि	१७५	—दीक्षा ६१२
—पूजा	७४६	—कृष्ण	३१३	—पाशुपत व्रत ज्ञान ६१२
—प्रतिष्ठा	८१८	—गंगा	२२२	कैलास वैभव ४१६
—मन्त्र	८२०	—नन्दिकेश्वर	१८९	कौशिक वृत्त ६१५
—होम	८२०	—पराशर	२७५	क्षुप १५३
अघोरेशमाहात्म्य	५९	—पार्वती	५८१	—पराजय १५६
अणिमादि	४८४	—ब्रह्मा	८८	ग
अभिषेक विधि	७४९	—रुद्र	१९६, १०३	गणेश ५९७, ६००
अम्बरीषचरित	६३५	—वराह	५३३	—उत्पत्ति ६००
अरिष्ट कथन—	५०६	—विनायक	५९७, ६००	—वर प्राप्ति ७८६
अलक्ष्मी का कथानक	६४८	—शिलाद	१८९	गणेशोश दान ६२२
अष्टलोकपाल दान	७९८	—शिवलिंग	६६	गान काल ६२३
अष्टसिद्धि	४०	—शिवा	५७५	—उपदेश ५५
अष्टांग योग	३०	—सद्योजात	९९	—उपाख्यान ८१४
अष्टाक्षर मंत्र	६५९	उपमन्युचरित	६०६	—प्रकार ८१४
आ		उमा तपस्या	५८५	—मंत्र ६२, ९९
आचमन विधि	११४	उमा महेश्वर व्रत	४४२	—महिमा
आवास		उमा स्वयंवर	५८५	
—शिव के	२१९			
—शक्रादि	२१७			

गोसहस्र दान	७९२	—कन्या	७९४	—स्थानप्राप्ति	२६४
ग्रह-ऋक्ष		—कल्प पादप	७८५	न	
—गति	२४७	—गज	७९७	नरक वर्णन	२२७
—संचार	२४७	—गणेशोशा	७८६	नन्दिकेश्वर	
—संख्या	२५९	—तिलधेनु	७९०	—अभिषेक	१९७
—स्थान	२५९	—तिल पर्वत	७८१	—उत्पत्ति	१८९
—स्थिति	२५९	—तुला पुरुष	७७०	—वाक्य	३५९
च		—लक्ष्मी	७८९	नारद	
चक्र सुदर्शन	५६०, ५५५	—विष्णु	८००	—गान विद्या प्राप्ति	६२२
चतुर्युग		—सहस्रधेनु	७९२	—मोह	६३५
—धर्म	१६९	—सुवर्ण धेनु	७८७	नारसिंह	५३७
—परिमाण	१७५	—सुवर्णमेदिनी	७८४	निवास/आवास	
—लोकवृत्ति	१६९, १७५	—स्वर्ण वृषभ	७९५	—देवों का	२१७
ज		—स्वर्ण अश्व	७९३	नृसिंह	
जम्बू द्वीप	४७	—सूक्ष्म पर्वत	७८३	—दमन	५३७
जय अभिषेक	७४९	—हिरण्यगर्भ	७७९	प	
जलंधर वध	५५५	दारुक	६०३	पंचब्रह्म कथन	६८२
जीवत्म्राद्ध विधि	८०१	दारुवन कथा	१३०	पंच यज्ञ विधान	११७
ज्योतिष्वक्र	२३२	दीक्षा विधि	७१०	पंचाक्षर मन्त्र	४४८
त		देवताओं की स्थापना	८१४	पर्वत	२०९
तत्पुरुषमाहात्म्य	५५	देव निवास	२१७	पर्वत मुनि	३५९
तत्त्वों का समर्पण	७१७	देव वसिष्ठांत सृष्टि वर्णन	२६८	—मोह भंग	६३५
तिलधेनुदान	७९०	देव स्तुति	५९७	पशु मोचन संस्कार	४२२
तिल पर्वत दान	७८१	देवी संभव	५७५	पाताल वर्णन	२०१
तुला पुरुष दान	७७०	देवों के निवास	२१७	पार्वती तपस्या	५८५
त्रिअंबक		द्वादशाक्षर मंत्र	६५६	पार्वती विवाह	५९०
—ध्यान के प्रकार	८३०	द्वीप द्वीपेश्वर	२०३	पाशुपत व्रत	४२६, ६९५
—महामन्त्र विधि	८३१	ध		—माहात्म्य	६१२
त्रिपुरदाह	३५१	ध्यान यज्ञ	४६८	—संस्कार	६६२
दक्ष		ध्रुव		पाशविमोचन व्रत	४२२
—यज्ञ विध्वंस	५७७	—कथा	२३२	प्रायश्चित्त	
दान		—संक्रमण	२३२	—यतियों का	
—आठ लोकपाल	७९८	—संस्थान	२६४		९०

<b>प्रार्थना</b>		<b>माहात्म्य</b>		<b>योगाचार्य</b>	
—शुद्धि के लिये	४२७	—तत्पुरुष	५५	योगी प्रशंसा	२५
—व्यमोहन स्तव	४२७	—द्वादशाक्षर	६५६	र	१५०
प्लक्ष द्वीप	२२७	—ध्यान यज्ञ	४६८	रुद्र	
ब		—पंचाक्षर	४४८	—उत्पत्ति	९६
ब्रह्म प्रबोधन	८०	—पाशुपत ब्रत	४१६, ६१२	—सहस्रनाम	२८६
ब्रह्मा विष्णु महेश मूर्त्तिदान	८००	—प्रणव	५०६	रैवतक	६२३
ब्रह्मस्तव (पुरदाह)	३६७	—लिंग पूजा	१२१, १२६	ल	
ब्रह्मा		—वस्त्रपूत जल	४०९	लक्ष्मीदान	७८९
—उत्पत्ति	८८	—वामदेव	५३	लिंग	३८४, ४२
—वर प्रदान	१६३	—वाराणसी	५१३	—अर्चन विधि	१२१
—विष्णु स्तुति	८८	—विष्णु	६२२	—उद्दव	६६
भ		—वैष्णव	६३२	—पूजा	१२१, १२६
—भक्ति भाव कथन	४६, ४०१	—शक्ति	५९०	—भेद	३८७
भस्म स्नान	१५०	—शिव	२२७, ६८५	—श्रेष्ठता	८०७
भरतवर्ष वर्णन	२०७	—श्रीशैल	५१३	—स्थापन	८०७, ८०९
भूलोकादि	२२७	—सद्योजात	५१	वंश	३८७
म		—सूर्य	२५६	—आग्नीश्वर	२०३
मन्त्र		मुनिमोहशमन	४८१	—ज्यायमघ	३०९
—अष्टाक्षर	६५९	मृत्युंजय अनुष्ठान	८२१	—भरत	२०७
—द्वादशाक्षर	६५६	मृत्युंजय जप विधि	८२९	—यदु	३१३
—पंचाक्षर	४४८	मृत्यु पर विजय	१२६	—सात्वत	३०९
मदन दाह	५८१	मेघ वृष्टि भेद	२३२	—सूर्य	२९९
मनु		मेरु पर्वत	२०९	—सोम	२९९, ३१३
—मन्वन्तर	१७५	य		व	
माया शमन	४८१	यति प्रायश्चित्त	५०३	वज्र वाहनिका विद्या	८२५
माहात्म्य		ययाति कथा	२९९	—विनियोग	८२७
—अघोर	५७	ययाति चरित	३०६	—वज्रेश्वरी विद्या	८२६
—अघोरेश	५९	युगधर्म	१६९	वरदान	
—अष्टाक्षर	६५९	युग परिणाम	१७५	—उपमन्त्यु	६०६
—अहिंसा	४०९	योग	४०	—गणेश	६००
—ईशान	६२	—विष्ण	४०	—जलन्थर	५५५
—उमापत्ति	६६७	—स्वरूप	४०	—पुलस्त्य	२७५

—ब्रह्मा	९६, १६३	—नक्त (रात्रि) द्वादश मास	४२२	शिव स्तुति	५३७
वरदान		शरभ प्रादुर्भाव	५४३	—नृसिंह कृत	३७७
—विद्युन्माली	३५१	शिव	२५	—ब्रह्मा कृत	८८
—विष्णु	९९	—अग्निहोत्र	७३६	—ब्रह्मा विष्णु कृत	१४१, १४५
—शिलाद	१८९	—अद्वैत आराधना, पूजा	३९०	—मुनिगण कृत	७४
वराह अवतार	५३३	—अर्चनाविधि	१२६, ४१२	—विष्णु कृत	१८९
वसिष्ठ कथा	६४	—का ब्रह्माण्ड रूप	३९४, ५१३	—शिलाद कृत	
वामदेव माहात्म्य	५३	६७९, १२६, ३९८, ७००		शिवालय	४००
वासिष्ठ कथन	२७५	—की पूजा विधि	७००, ७२५, ७२९	—उपलेपन	४००
विनायक		—की महत्ता	६९१	—निर्माण	४०९
—उत्पत्ति	६००	—की अष्टमूर्ति का वर्णन	६७५	—पूजा	
विवाह		—की महिमा	६७९	श्रीकृष्ण	३१३
—नन्दिकेश्वर	१९७	—की विभूतियाँ	६७१	—जीवन	३१३
—पार्वती	५९०	—के अवतार	१०३	—वंश	६३५
—शिव	५९०	—के क्षेत्र	४००	श्रीमती की कथा	५१३
विश्व का भूगोल	२२२-२३७	—के ध्यान विधि	८३३	श्रीशैल माहात्म्य	
विष्णु		—के मन्दिर	४००	स	
—अष्टाक्षर मन्त्र	६५९	—के रूप	६८८	संध्या आदि नित्य कर्म	११७
—आराधना	१५६	—के पूजा के साधन	७०५	संसार विष कथन	४६८
—द्वादशाक्षर मन्त्र	६५६	—ताण्डव	६०३	सदाचार कथन	४९२
—प्रवोधन	७८	—त्रियंबक मंत्र से पूजा	८३०	सद्योजात माहात्म्य	५१
—भक्त वर्णन	६३३	—द्वारा दर्शन उपमन्यु को	६०६	सप्तद्वीप वर्णन	२०३
—माहात्म्य	६२२	—पशुपाश विमोचन	६६३	नाग मास, मुनि आदि	२३८
—स्तोत्र	१५६	—प्रतिष्ठापन	३९४	सिद्ध पद	४८९
वीरभद्र	६४३	—प्रार्थना	१४५	सुखावह	३०६
वैष्णव कथन	१६२	—बन्धन मुक्त	६६७	सुवर्णधेनु दान	७८७
—गीत कथन	६२३	—भक्ति महिमा	३९४	सुवर्णमेदिनी दान	७८४
—भक्त	६३३	—मूर्ति प्रतिष्ठा	३९४	सूर्य	
व्यपोहनस्तव	४२७	—लिंग भेद	३८७	—अभिषेक	२५०
व्यास	२५	—व्रत	४३६	—किरण स्वरूप	२५२
व्रत		—रात्रि	४३६	—गति	२३२
—उमा महेश्वर	४४२	—सहस्रनाम (रुद्र)	२८६	—मंडल	२५६
		—सहस्रनाम	५६०	—माहात्म्य	२५६



## COLLECTION OF VARIOUS

- HINDUISM SCRIPTURES
- HINDU COMICS
- AYURVEDA
- MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

[creator of  
hinduism  
server]



## COLLECTION OF VARIOUS

- HINDUISM SCRIPTURES
- HINDU COMICS
- AYURVEDA
- MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

[creator of  
hinduism  
server]

<b>सूर्य</b>					
—स्वभाव	२५६	—प्राकृत	१, १३	स्नान विधि	११४
सूर्य ग्रहादिवर्णन	२५६	सृष्टि		स्तुति	
सूर्य रथ	२३८	—विस्तार	३२०	—विष्णु	७४
सृष्टि		सोम (चन्द्र)		—ब्रह्मा	३६७
—प्रजा की	१८	—क्षय-वृद्धि	२४५	—ब्रह्मा विष्णु	८८
—ऋषि देवादि	१८	—स्पन्दन	२४५	—सहस्रनाम	२८६, ५६०
—देवों की पितृ की	२६८	—वर्णन	२४५	ह	
—प्रारम्भिक ब्रह्मादि	९	सोमवंश	३१३	हिरण्यकशिपु	५३७
		स्नान की क्रिया	११७	हिरण्यअश्वदान	७९३
				हिरण्यगर्भदान	७७९